तिरि भनवंत भूववारे भडारच प्रभीको

TE TE

[ महाधवल लिखान्त-शास्त्र ]

विविद्यो हिविबंधाहिकारी [हितीय स्थितिबन्धाधिकार]

युस्तक इ



भारतीय झानगीं व

# सिरि भगवंत भूदबलि भडारय पणीदो

# महाबंधो

[ महाधवल सिद्धान्त-शास्त्र ]

# विदियो ड्रिदिबंधाहियारो

[ द्वितीय स्थितिबन्धाधिकार ]

हिन्दी अनुवाद सहित

पुस्तक ३

सम्पादन-अनुवाद

पं. फूलचन्द्र सिद्धान्तशास्त्री



भारतीय ज्ञानपीठ

द्वितीय संस्करण : १६६६ □ मूल्य : १४०.०० रुपये

## भारतीय ज्ञानपीठ

(स्थापना : फाल्गुन कृष्ण ६, वीर नि. सं. २४७०, विक्रम सं. २०००, १८ फरवरी, १६४४)

स्व० पुण्यश्लोका माता मूर्तिदेवी की पवित्र स्मृति में स्व० साहू शान्तिप्रसाद जैन द्वारा संस्थापित एवं उनकी धर्मपत्नी स्व० श्रीमती रमा जैन द्वारा संपोषित

# मूर्तिदेवी जैन ग्रन्थमाला

इस ग्रन्थमाला के अन्तर्गत प्राकृत, संस्कृत, अपभ्रंश, हिन्दी, कन्नड़, तिमल आदि प्राचीन भाषाओं में उपलब्ध आगमिक, दार्शनिक, पौराणिक, साहित्यिक, ऐतिहासिक आदि विविध-विषयक जैन-साहित्य का अनुसन्धानपूर्ण सम्पादन तथा उनका मूल और यथासम्भव अनुवाद आदि के साथ प्रकाशन हो रहा है। जैन-भण्डारों की सूचियाँ, शिलालेख-संग्रह, कला एवं स्थापत्य पर विशिष्ट विद्वानों के अध्ययन-ग्रन्थ और लोकहितकारी जैन-साहित्य ग्रन्थ भी इसी ग्रन्थमाला में प्रकाशित हो रहे हैं।

> ग्रन्थमाला सम्पादक (प्रथम संस्करण) डॉ. हीरालाल जैन एवं डॉ. आ. ने. उपाध्ये

#### प्रकाशक भारतीय ज्ञानपीठ

१८, इन्स्टीट्यूशनल एरिया, लोदी रोड, नयी दिल्ली-११० ००३

मुद्रक : आर.के. ऑफसेट, दिल्ली-११० ०३२

भारतीय ज्ञानपीठ द्वारा सर्वाधिकार सुरक्षित

# **MAHĀBANDHO**

[ Second Part : Sthiti-bandhādhikāra ]

of

## Bhagvān Bhutabali

Vol. III

Edited and Translated by
Pt. Phoolchandra Siddhantashastri



## **BHARATIYA JNANPITH**

Second Edition: 1999 ☐ Price: Rs. 140.00

#### BHARATIYA JNANPITH

Founded on Phalguna Krishna 9, Vira N. Sam. 2470 ● Vikrama Sam. 2000 ● 18th Feb. 1944

#### MOORTIDEVI JAIN GRANTHAMALA

Founded by
Late Sahu Shanti Prasad Jain
In memory of his late Mother Smt. Moortidevi
and
promoted by his benevolent wife
late Smt. Rama Jain

In this Granthamala Critically edited Jain agamic, philosophical, puranic, literary, historical and other original texts available in Prakrit, Sanskrit, Apabhramsha, Hindi, Kannada, Tamil etc., are being published in the respective languages with their translations in modern languages.

Also

being published are catalogues of Jain bhandaras, inscriptions, studies, art and architecture by competent scholars, and also popular Jain literature.

General Editors (First Edition)

Dr. Hiralal Jain & Dr. A.N. Upadhye

Published by
Bharatiya Jnanpith
18, Institutional Area, Lodi Road, New Delhi-110003

Printed at R.K.: Offset, Naveen Shahdara, Delhi 110 032

All Rights Reserved by Bharatiya Jnanpith

#### **Editorial Note**

In the great realm of knowledge that has come down from Tīrthankara Mahāvīra and preached by Gautama Gaṇadhara, Bhagawant Bhūtabalī explained the philosohical subject-matter of *Karma-bandha* in Śaurasenī Prākrit language in seven volumes. It is an established fact that **Mahābandho** known as **Mahādhavala** is the sixth khaṇḍa of Śaṭkhaṇdāgama, and that is the integral part of Āgamas. This is the third volume of luminous Siddhānta text.

It is a great pleasure to put forth this classic, well edited and translated in Hindi by Pt. Phoolchandra Siddhantashastri. It is my duty and pious work to point out that a few changes have been made in this volume.

In this edition there is a word कादव्यं (Kādavvain) that occurs in several places. The translation is given as 'would say' or 'will be said'. In the text we find some usages, such as णादव्यं, कादव्याओ, जाणिदव्यो, भाणिदव्यो etc. These convey the simple meaning 'would say'. Here we quote one sentence as follows:

"णवरि सव्याणं तिरिक्खध्विगाणं कादव्वं" (Vol. III, P. 141). The word कादव्वं (Kādavvain) in the text should be कहिदव्वं, after that it will convey the proper meaning. Therefore, in many places the reading should be shown by giving it in square brackets as the counterpart of the proper reading [ कहिदव्वं ] for clear understanding. The translation in several places is correct and conveys the meaning 'would say', but the discrepancy is in the text reading.

The other change is related to Prakrit phonology. It has been observed that the Vocalic ě and ŏ in the pronunciation are reduced and softened respectively. It was pointed out by some to Patañjali that the followers of the Satyamugri and Ranayaniya schools among Sāmavedins uttered ě and ŭ, and hence they deserved to be accepted as the short counterparts of ě and ŏ respectively; they were again more homorganic (Sansthäntara) than i and u which were enjoyed by Patañjali (1.1.48). Although Patañjali answered by saying that it was merely a stylistic peculiarity on the part of the reciters and that an e or an o was not to be expected either in the Vedic or in the secular speech. Yet it appears that there was this tendency in the pronunciation of a section of speakers at the time. This was a peculiarity of the Prakrit Phonology, (Prākrit Prakāśa of Vararuci 1.5, Siddhhem. 8.1.78), of proceedings of the seminar on Prakrit studies 1973, p. 93)

As pointed out by Bhāmaha in the commentary of Prākrit Prakāśa that the pronunciation of Deva long is 'daiva', but when it becomes double, then the pronunciation will also change, and it will be pronounced 'e' (देव्य..., dĕvva) for instance, as Vararuci also describes in Prākrit Prakāśa (3.52)

According to Ramsharman in Prākrit Kalpataru (1.1.12) the u of the words of Puskara group i.e. puskara, pustaka, lubdhaka, mukuta, kuthima, tunda and muṇḍa becomes o; others add kuṇḍa and muṇḍa to this group.

In this edition, for the first time, the punctuation mark to show the reduced is used (as khětta, ěkka, pŏggala etc.) for the correct pronunciation. It is hoped that this will be followed in the publication of Prakrit texts in future also.

### सम्पादकीय

(प्रथम संस्करण 1954 से)

आज से लगभग सवा वर्ष पूर्व स्थितिबन्ध का पूर्व भाग सम्पादित होकर प्रकाश में आया था। यह उसका शेष भाग है। भारतीय ज्ञानपीठ की ओर से सब तरह की सुविधाएँ प्राप्त होने पर भी इसके सम्पादन में अपने वैयक्तिक कारणों से हमें पर्याप्त समय लगा है इसके लिए हम क्षमाप्रार्थी हैं।

श्रीयुत बन्धु रतनचन्द्र जी मुख्तार व बन्धुवर नेमिचन्द्र जी वकील सहारनपुर 'षट्खण्डागम' और 'कषाय-प्राभृत' के विशेष अभ्यासी हैं। श्री रतनचन्द्र जी ने तो एक तरह से गार्हस्थिक झंझटों से अपने को मुक्त ही कर लिया है और आजीविका को तिलांजिल दे दी है। थोड़े बहुत साधन जो उनके पास बच रहे हैं उन्हीं से वे अपनी आजीविका चलाते हैं। जीवन में सादगी और निष्कपट सरल व्यवहार उनके जीवन की सबसे बड़ी विशेषता है। इस वर्ष दस लक्षण पर्व के दिनों में हम सहारनपुर आमन्त्रित किये गये थे, इसलिए निकट से हमें उनके जीवन का अध्ययन करने का अवसर मिला है। इस आधार से हम कह सकते हैं कि वे घर में रहते हुए भी साधु जीवन बिता रहे हैं। योगायोग की बात है कि इन्हें पत्नी भी ऐसी मिली हुई है जो इनके धार्मिक कार्यों में पूरी साधक है। यों तो दोनों बन्धु मिलकर इन महान् ग्रन्थों का स्वाध्याय करते हैं परन्तु श्री रतनचन्द्र जी का अध्यास तगड़ा है और इन ग्रन्थों के सम्पादन में उनके परामर्श की आवश्यकता अनुभव में आती है। वे यह इच्छा तो रखते हैं कि इन ग्रन्थों के प्रकाशन के पहले हमें उनके स्वाध्याय का अवसर मिल जाय तो उत्तम हो और ऐसा करने में लाभ भी है, पर कई कारणों से इस व्यवस्था के जमाने में कठिनाई जाती है। स्थितिबन्ध का अन्तिम कुछ भाग अवश्य ही उन्होंने देखा है और उनके सुझावों से लाभ भी उठाया गया है। आशा है भविष्य में इस सुविधा के प्राप्त करने में सुधार होगा और उनका आवश्यक सहयोग मिलता रहेगा।

श्री रतनचन्द्र जी ने प्रकृतिबन्ध और स्थितिबन्ध के पूर्वभाग का शुद्धि-पत्रक तैयार करके हमारे पास भेजा है। उसमें आवश्यक संशोधन करके मुद्रित कर देने में लाभ भी है। िकन्तु इधर हमारे मित्र श्रीयुत लाला राजकृष्ण जी देहली के निरन्तर प्रयत्न करने के फलस्वरूप मूडिबद्री से कनड़ी मूल ताडपत्रीय प्रतियों के फोटो देहली वीरसेवा मन्दिर में आ गये हैं। श्री लाला राजकृष्ण जी ने दौड़-धूप करके यह काम तो बनाया ही है और इसमें उन्हें श्रीयुत बाबू छोटेलाल जी कलकत्ता वालों का भी पूरा सहयोग मिला है। िकन्तु सबसे अधिक उल्लेखनीय बात यह है कि लाला राजकृष्ण जी की पत्नी का इन ग्रन्थों के उद्धार कार्य में विशेष हाथ रहा है। वे स्वयं इन महानुभावों के साथ मूडिबद्री गयीं और हर तरह की कमी की पूर्ति में साधक बनीं तभी यह काम हो सका है। अतएव इस भाग के साथ हमने पूर्व भागों का, शुद्धिपत्रक नहीं जोड़ा है, क्योंकि इन ग्रन्थों के उत्तर-भारत में सुलभ हो जाने से हमारा विचार है कि एक बार प्रकाशित और अप्रकाशित भाग का शान्ति से इन मूल ग्रन्थों के साथ मिलान कर लिया जाय और तब जाकर प्रकाशित भागों में जो कमी रह गयी हो उसे प्रकाश में लाया जाय। हमें विश्वस है कि हमारे साथी हमारे इन विचारों का समर्थन करेंगे।

हमें भारतीय ज्ञानपीठ के सुयोग्य मन्त्री श्रीयुत अयोध्याप्रसाद जी गोयलीय ने जितनी तत्परता से यह कार्य करने के लिए सींपा था उतनी तत्परता हम इस काम में दिखा नहीं सके। आशा है वे हमारी इस कमजोरी की ओर विशेष ध्यान नहीं देंगे और जिस तरह अभी तक सहयोग देते आये हैं देते रहेंगे।

अन्त में हमें समाज से इतना ही निवेदन करना है कि दिगम्बर परम्परा में इन महान् ग्रन्थों का बड़ा

महत्त्व है। द्वादशांग वाणी से इनका सीधा सम्बन्ध है। एक समय था जब हमारे पूर्वज ऐसे महान् ग्रन्थों की लिपि कराकर उनकी रक्षा करते थे किन्तु वर्तमान काल में हम उन्हें स्थल्प निछावर देकर भी अपने यहाँ स्थापित करने में सकुचाते हैं। यह शंका की जाती है कि हम उन्हें समझते नहीं तो बुलाकर भी क्या करेंगे। किन्तु उनकी ऐसी शंका करना निर्मूल है। ऐसा कौन नगर या गाँव है जहाँ के जैन गृहस्थ तात्कालिक उत्सव में कुछ-न-कुछ खर्च न करते हों। जहाँ उनकी यह प्रवृत्ति है वहाँ जैनधर्म के मूल साहित्य की रक्षा करना भी उनका परम कर्तव्य है। कहते हैं कि एक बार धार रियासत के दीवान को वहाँ के जैन बन्धुओं ने जैन मन्दिर के दर्शन करने के लिए बुलाया था। जिस दिन वे आने वाले थे उस दिन मन्दिरजी में विविध उपकरणों से खूब सजावट की गयी थी। जिन उपकरणों की धार में कमी थी वे इन्दौर से बुलाये गये थे। दीवान साहब आये और उन्होंने श्री मन्दिरजी को देखकर यह अभिप्राय व्यक्त किया कि जैनियों के पास पैसा बहुत है। अन्त में उन्हें वहाँ का शास्त्रभण्डार भी दिखलाया गया। शास्त्रभण्डार को देखकर दीवान साहब ने पूछा कि ये सब ग्रन्थ किस धर्म के हैं। जैनियों की ओर से यह उत्तर मिलने पर कि ये सब जैनधर्म के ग्रन्थ हैं दीवान साहब ने कहा कि यह जैनधर्म है।

इससे स्पष्ट है कि साहित्य ही धर्म की अमूल्य निधि है। महान् से महान् कीमत देकर भी यदि इसकी रक्षा करनी पड़े तो करनी चाहिए। मृहस्थों का यह परम कर्तव्य है। हम यह शिकायत तो करते हैं कि मुसलिम बादशाहों ने हमारे ग्रन्थों को ईधन बनाकर उनसे पानी गरम किया किन्तु जब हम उनकी रक्षा करने में तत्पर नहीं होते और उन्हें भण्डार में सड़ने देते हैं या उनके प्रकाशित होने पर उन्हें लाकर अपने यहाँ स्थापित नहीं करते तब हमें क्या कहा जाय? क्या हमारी यह प्रवृत्ति उनकी रक्षा करने की कही जा सकती है? स्पष्ट है कि यदि हमारी यही प्रवृत्ति चालू रही तो हम भी अपने को उस दोष से नहीं बचा सकते जिसका आरोप हम मुसलिम बादशाहों पर करते हैं। शास्त्रकारों ने देव और शास्त्र में कुछ भी अन्तर नहीं माना है। अतएव हम गृहस्थों का कर्तव्य है कि जिस तरह हम देव की प्रतिष्ठा में धन व्यय करते हैं उसी प्रकार साहित्य की रक्षा में भी हमें अपने धन का व्यय करने में कोई न्यूनता नहीं करनी चाहिए। आशा है समाज अपने इस कर्तव्य की ओर सावधान होकर पूरा ध्यान देगी।

हमने इस भाग में सम्पादन आदि में पूरी सावधानी बरती है फिर भी गार्हस्थिक झंझटों के कारण त्रुटि रह जाना स्वाभाविक है। आशा है स्वाध्यायप्रेमी जहाँ जो कमी दिखाई दे उसकी सूचना हमें देने की कृपा करेंगे ताकि भविष्य में उन दोषों को दूर करने में हमें प्रेरणा मिलती रहे।

-फुलचन्द्र सिद्धान्तशास्त्री

#### प्रशस्ति

स्थितिबन्धके अन्तर्मे एक प्रशस्ति आती है जो इस प्रकार है— यो दुर्जयस्मरमदोस्कटकुंभिकुंभ-

संचोदनोत्सुकतरोप्रसृगाधिराजः ।

शस्यत्रयाद्पगतस्त्रयगारवारिः

संजातवान्स भुवने गुणभद्रस्रिः॥ 1 ॥

दुर्वारमारमदसिन्धुरसिन्धुरारिः

शस्यत्रयाधिकरियुद्धयगुप्तियुक्तः ।

सिद्धान्तवार्धिपरिवर्धनशीतर्विमः

श्रीमाघमंदिमुनिपोऽजनि भूतछेऽस्मिन् ॥ २ ॥

वरसम्यक्तद देशसंयमद सम्यग्बोधदत्यन्तभा-

सुरहारत्रिकसौक्यहेतुवेनिसिर्दादानदौदार्यदे-।

छतरदिंगीतने जन्मभूमियेनुतं सानंददिं कूर्तुंभू-

भरमेलुं पोगलुसमिर्पुद्भिमानाबीननं सेननं ॥ ३ ॥

सुजनते सत्यमोकपु गुणोश्वति पेंपु जैनमा-

र्गजगुणमें ब सद्गुणविन्यधिकं सनगोप्पनूत्नध-

र्मजनिवर्नेदु किसे सुमदीधरे मेदिनिगोप्पिसोडबे चि-

राजसमरूपनं नेगस्द सेनननुद्गुणप्रधाननं ॥ ४ ॥

अ**नुप**मगुणगणदसिब-

मैन शीक्रनिदानमेसेक जिनपदसःको-।

कनदिशिखीमुखि येने मां-

तनदिदं मिक्किकवे ककनारत्नं ॥ ५ ॥

जो दुर्जय स्मररूपी मदोन्मत हाथीके गण्डस्थलके विदारण करनेमें उत्सुक सिंहके समान हैं, जिन्होंने तीन शल्योंको दूर कर दिया है श्रीर जो तीन गारवोंके राजु हैं वे गुणभदसूरि इस लोकमें प्रसिद्धिको प्राप्त हुए ॥१॥

जो दुर्वार माररूगे मदिवहल हाथीके समान हैं तथा जो तीन शल्योंके लिए शञ्जके समान हैं, जो तीन गुप्तियोंके भारक हैं श्रीर जो सिद्धान्तरूपी समुद्रकी बृद्धिके लिए चन्द्रमाके समान हैं वे श्रीमाधनन्दि श्राचार्य इस भृतलपर हुए ॥ २ ॥

सबरित्र, संयमी, सम्यग्जानवान्, सबको सुख देनेवाले, दानी, उदार श्रौर श्रमिमानी सेनकी बहुत ही त्र्यानन्दसे सभी लोग प्रशंसा करते थे॥ ३॥

सौजन्य, सत्य सद्गुणोंकी उन्नति श्रीर जैनमार्गमें रहना इन सद्गुणों से युक्त, स्मरके समान सुन्दर गुण प्रधान सेन नवीन धर्मात्मञ कहलाता था ॥ ४ ॥

श्रनुपम गुणगण्युक्त, सुशील, जिनपदभक्त, स्त्रीरन मिल्लकःवा उसकी पत्नी थीं ॥ ५ ॥

#### महाचन्ध

मा वनितारसद पें-

पावंगं पोगळळरिद्व जिनप्जेयना-।

ना विधद दानदमलिन-

भावदोला महिकब्बेयं पोस्ववरार् ॥ ६ ॥

श्रीपंचमियं नोतु-

धापनमं मादि बरसि राज्ञान्तमना ।

रूपवती सेनवधू जित-

कोपं श्रीमाधनंदि-यतिपतिगित्तल् ॥ ७ ॥

उस वनितारत्नकी जिनपूजाके बारेमें प्रशंसा कौन कर सकता है, उस मिल्लाकवाके समान भक्त कोई थी ही नहीं ॥ ६॥

जिन सिद्धान्तको माननेवाली रूपवती उस सेनपत्नीने श्रीपञ्चमीका उद्यापनकर जितकोष माधनन्दि यतीश्वरको लिखवाकर यह (सिद्धान्त मन्थकी मिति ) दी है ॥ ७ ॥

इस प्रशस्तिमें चार व्यक्तियोंका नामोल्लेख सहित गुणकीर्तन किया गया है—गुणभद्रस्रि, श्राचार्य मायनन्दि, सेन श्रीर उसकी पत्नी मिल्लकव्या ।

मिल्लिक ना सेनकी पती थी। पं॰ सुमेक्चन्द्रजी दिवाकरने भी प्रथम भागकी भूमिकामें यह प्रशस्ति उद्धृत की है। उन्होंने सत्कर्मपिक्षिका के आधारसे 'सेन' का पूरा नाम शान्तिषेण निर्दिष्ट किया है। यह तो स्पष्ट है कि मिल्लिक ना सेनकी पत्नी थीं। परन्तु गुणघर मुनि और माधनन्दि आचायेका परस्पर और इनके साथ क्या सन्बन्ध था यह इससे कुछ भी जात नहीं होता है। मात्र प्रशस्तिके ऋन्तिम श्लोकसे यह जात होता है कि मिल्लिक नाने श्रीपञ्चमीत्रतके उद्यापनके फलस्वरूप सिद्धान्तग्रन्थकी प्रतिलिपि कराकर वह श्री माधनन्दि आचार्यको मेंट की।

ऐतिहासिक दृष्टिसे इस प्रशस्तिका बहुत महत्त्व है अतएव इसकी छानबीनकी विशेष आवश्यकता है।



# विषय-सूची

विश्वय	<b>देव</b>	विषय	নৃষ্ট
१५ वन्धसत्रिकर्ष	१-२०२	श्रन्तरके दो मेद	२५६
बम्बसन्निकष्के भेद	१	उत्कृष्ट श्रन्तर	२४६-२५८
उत्ह्रप्ट संशिकर्ष	૧-૧૧૫	अवन्य ग्रन्तर	२५६-२६०
- स्वस्थान	8-40	२३ भावप्ररूपणा	<b>२</b> ६१
परस्थान	५७-११५	भावके दो भेद	२६ १
जवन्य सन्निकर्ष	११५-२०२	उस्कृष्ट भाव	२६१
श्चर्यपद	११५-११=	जघन्य भाव	२६१
स्वस्थान	११८-१६४	२४ ऋरपबहुत्व	२६ १
परस्थान	१६४-२०२	श्रत्पबहुत्वके दो मेद	२६१
१६ नाना जीवोंकी ऋषेक्षा भंगविचय	२०२-२०४	जीव श्राल्पबहुत्व	<b>२</b> ६१
मंगविचयके दो भेद	२०२	जीव श्रह्यबहुत्वके तीन मेद	२६१
उत्कृष्ट भंगविचय	२०२-२०३	उत्कृष्ट जीव श्रल्पबहुत्व	२६१-२६२
जधस्य भंगविचय	२०३-२०४	जघन्य जीव <b>श्रह्य</b> बहुत्व	२६ २-२६३
१७ भागाभागप्ररूपणा	२०४-२०६	जधन्योत्कृष्ट जीव <b>ऋत्यबहु</b> त्व	२६३-२७०
भागाभागके दो भेद	२०४	श्थिति श्राल्पबहुत्व	२७०
उत्कृष्ट भागाभाग	208-204	स्थिति श्रल्पबहुत्वके तीन भेद	२७०-२७२
जघन्य भागाभाग	२०५-२०६	उत् <b>रुष्ट स्थिति श्राल्पबहु</b> त्व	२७०
<b>१⊏ परिमाणत्र</b> हरणा	२०६-२१३	जवन्य स्थिति श्र <b>ल्पबहु</b> ल	२७०
परिमाणके दो मेद	२०६	जबन्योत्कृष्ट स्थिति <b>ऋल्पबहु</b> त्व	२७०-२७२
उत् <b>रुष्ट परिमा</b> ण	२०६-२०६	भूयःस्थिति श्र <b>रपनदु</b> त्व	२७२
जधस्य परिमाण	२०६-२१३	भूय:स्थिति श्रह्पवहुत्वके दो भेद	२७२
१६ चेत्रप्ररूपणा	२१३-२१७	स्वस्थान ऋत्पबहुत्व	२७२-२६२
चेत्रके दो मेद	<b>२१</b> ३	उत्कृष्ट	२७२-२८२
उत्कृष्ट चेत्र	२१३- <b>२१</b> ५	अधन्य	२=३-२६२
जवन्य चेत्र	२१५-२१७	परस्थान श्रह्पत्रहुत्व	२६३-३ <b>२३</b>
२० स्पर्शनप्ररूपणा	२१७-२४३	परस्थान ऋल्पबहुत्वके दो मेद	२६ ३
स्पर्शनके दो मेद	२१७	उत्कृष्ट परस्थान <b>श्राल्पबहु</b> त्व	२६३-३०२
उत्कृष्ट स्पर्शन	२१७-२३३	जधन्य परस्थान श्राल्पबहुत्व	<b>३०२-३</b> २३
जबन्य स्पर्शन	<b>२३३-२४३</b>	भुजगरचन्ध	३२४
<b>२१ कालप्ररूणा</b>	<b>૨</b> ૪ <b>३-૨</b> ૫ <b>६</b>	भुजगारबन्धके १३ ऋनुयोगद्वार	३२४-३६३
काल के दो मेद	<b>२</b> ४३	समुत्कीर्तनानुगम	₹ <b>२४-३</b> ₹⊏
उत्कृष्ट काख	384-686	स्वामित्वानुगम	<b>३२</b> ३३३
जघन्य काल	२४६-२५६	कालानुगम	378-786
२२ ऋन्तरप्ररूपणा	२५६-२६०	श्चन्तरानुगम	३३६-१६१

#### महाधन्धः

विषय	ភិនិ	विषय	â8
नाना जीवोंकी श्रपेवा		स्थामिल	४०६-४१६
भंगविचयानुगम	३६१-३६३	काल	४१७-४१=
भागाभागानुगम	३६०-३६४	ग्रन्तर	<i>ኢፃ≂-</i> ጸ8 <i>ጺ</i>
परिमाणा <u>न</u> ुगम	<b>३६४-३६</b> ५	नाना जीवोंकी ऋषेद्धा भंगविचय	४४५-४४६
<b>बेत्रानुगम</b>	३६५-१६७	<b>भागाभाग</b>	<b>ጻ</b> ጻ፪-४४¤
स्पर्शनातुगम	३६७	परिमाण	४४६-४५२
कालानुगम	३्द०	चेत्र	४५३-४५५
श्चन्तरा <u>न</u> ुंगम	३८०-३५५	स्पर्शन	४५.४७३
भावानुगम	3=4	काल	•••••
त्राल्पबहुत्वा <u>न</u> ुगम	३ <b>८५</b> ३६३	ग्रन्तर	*****
पदिन <b>च्चेप</b>	४३६	। ! भाव	
पद्विच्चेपके तीन ध्रतुयोगद्वार	154	ग्रस्यबहुत्व	४७३-४८५
समुत्कीर्तना	¥3\$	श्राध्यवसान समुदाहार	8= <b>4</b>
स्वामित्व	३६५-४०३	अध्यवसान समुदाहारके तीन भेद	85.4
स्वामित्वके दो भेद	₹€.₩	प्रकृति समुदाहार	⊀≓દ
उत्कृष्ट स्वामित्व	३६५-३६८	प्रकृति समुदाहारके दो भेद	<b>४</b> इ. ६
जधन्य स्वामित्व	३६=-४०२	प्रमाणानुगम	४०६
जघन्योत्कृष्ट स्वामित्व	405-A03	<b>ग्र</b> ाल्प बहुत्व	ጻ¤६- <b>४१</b> ४
श्चलप्रसहत्व श्चलप्रसहत्व	*05-40*	जीवोंके दो मेद	¥= €
अरुपबहुत्वके दो <b>भे</b> द	803	श्रल्पबहुत्वके दो मेद	¥स६
उत्कृष्ट ग्रहाबहुत्व उत्कृष्ट ग्रहाबहुत्व	४∙ई-४०४	स्वस्थान ग्राल्यबहुत्व	४८६-४६२
जवन्य त्राल्पबहुत्व जवन्य त्राल्पबहुत्व	¥08	परस्थान ऋत्यबहुत्व	8E 5-8E &
वृद्धिकस्थ वृद्धिकस्थ	808		
वृद्धिवन्धके १३ ऋतुयोगद्वार	XOX	*******	
हाद्धमन्द्रमा १२ अधुनानद्वार समुक्तीतना	४०५-४०६	जीवसमुदाहार	4E4.8E4
ल <b>इ</b> त्कालमा	40 1-000	-41.0.9 (15)	



## सिरिभगवंतभूदब**लिभडारयप**णीदो

# महाषंधो

## विदियो द्विदिबंधाहियारो

## बंधसिंग्गयासपरूवगा

१. सिएण्यासं दुविधं — जहएण्यं उक्कस्सयं च । उक्कस्सं दुविधं — सत्थाणं पर-तथाणं च । सत्थाणे पगदं । दुवि० — अधि० आदे० । ओघे० आभिण्विधिगणाणा-वरणीयस्स उक्कस्सिद्धिवंधंतो चदुएणं णाणावरणीयाणं णियमा वंधगो । तं तु० 'उक्कस्सा वा । उक्कस्सादो अणुक्कस्सा समयूणमादिं काद्ण याव पलिदोवमस्स असंस्वेजिदिभागहीणं वंधदि । एवं चदुएणं णाणावरणीयाणं णवएणं दंसणावरणीयाणमएणमएणं । तं तु० ।

### बन्धसन्निकर्षप्ररूपणा

१, सिन्नकर्ष दो प्रकारका है-जधन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्ट सिन्नकर्ष दो प्रकारका है—खस्थान और परस्थान । खस्थान सिन्नकर्षका प्रकरण है । वह दो प्रकारका है—जोध और आदेश । जोधसे आभिनियोधिक झानावरणीय कर्मकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव चार झानावरणीय कर्मोंका नियमसे बन्ध करनेवाला होता है । किन्तु वह उत्कृष्ट भी करता है । यदि अनुत्कृष्ट करता है, तो उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट स्थितिबन्ध एक समय न्यूनसे लेकर पश्यका असंख्यातवाँ भाग हीन तक करता है । इसी प्रकार चार झानावरणीय और नो दर्शनावरणीय कर्मोंका परस्पर सिन्नकर्ष जानना चाहिए । किन्तु वह उत्कृष्ट भी करता है और अनुत्कृष्ट भी करता है । यदि अनुत्कृष्ट करता है, तो उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक बाँधता है ।

मूखप्रती उक्कस्स वा अगुक्कस्स वा इति पाठः ।

- २. सादस्स उक्कस्सहिदिवंधंतो श्रसादस्स श्रवंधगो' । श्रसाद्० उक्क०हिदि-वंधंतो सादस्स श्रवंधगो ।
- ३. मिच्छत्त० उकस्सिटिद्वंधंतो सोलसक०-एाबुंस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं० िएयमा वंधगो । तं तु० । एवमएणमएणस्स । तं तु० । इत्थिवे० उक्कस्सिट्टिद्वंधंतो मिच्छत्त-सोलसकसाय-अरदि-सोग-भय-दुगुं० िएयमा वंधगो । िएयमा अणु॰ चदुभागूणं वंधि । पुरिस॰ उक्क०िटिवंधंतो मिच्छत्त-सोलसक०-भय-दुगुं० िए० वं० । िएय० अणु॰ दुभागूणं वंधि । हस्स-रिद॰ सिया वंधि सिया अवंधि । यदि वंधि तं तु० समयूणमादिं कादूण याव पिलदो० असं०। अरदि-सोग० सिया वंधि सिया अवंध०। यदि वंधि णियमा अणु॰ दुभागूणं वंधि। हस्स० उक्कस्स० वंधि मिच्छत्त-सोलसक०-भय-दुगुं० िएय० वं० । िएय० अणु॰ दुभागूणं वंधि । इत्थिवे० सिया वं० सिया अवं०। यदि वंध० िएय० अणु॰ दुभागूणं वंधि । इत्थिवे० सिया वं० सिया अवं०। यदि वंध० िएय० अणु॰ दुभागूणं वंधि । इत्थिवे० सिया वं० सिया अवं०। यदि वंध० िएय० अणु० दुभागूणं
- २. सातावेदनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव श्रसातावेदनीयका श्रबन्धक होता है। श्रसातावेदनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव सातावेद-नीयका श्रबन्धक होता है।
- ३. मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका धन्य करनेवाला जीव सोलह कषाय, नपुंसकवेद, श्ररति, शोक, भय श्रौर जुगुप्साका नियमसे बन्ध करनेवाला होता है। किन्तु वह उत्कृष्ट भी करता है श्रीर अनुत्कृष्ट भी करता है। यदि श्रमुत्कृष्ट करता है, तो उसे एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक वाँघता है। इसी प्रकार सोलइ कषाय त्रादि प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका श्राश्रय करके परस्पर सम्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु वह उत्कृष्ट भी करता है श्रीर श्रनुत्कृष्ट भी करता है। यदि श्रनुत्कृष्ट करता है, तो उत्कृष्टेसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका ग्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक बाँघता है। स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव मिथ्यात्व, सोलह कपाय, श्चरति, शोक, भय श्रौर जुगुष्साका नियमसे बन्ध करनेवाला होता है । जो नियमसे श्रनुत्कृष्ट चार भाग न्यून बाँधता है। पुरुषवेदकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय श्रौर जुगुप्साका नियमसे बन्ध करनेवाला होता है। जो नियमसे <del>श्रतुत्कृष्ट</del> दो भाग न्यून काँधता है। हास्य श्रौर रतिका कदाचित् बन्ध करता है श्रौर कदाचित् नहीं बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है,तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्ध करता है श्रीर अनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्ध करता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करता है, तो उसे एक समय न्युनसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक बाँधता है। अरित त्रीर शोकका कदाचित् बन्ध करता है स्रीर कदाचित् नहीं बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है,तो नियमसे अनुत्कृष्ट दो भाग न्यून स्थितिका बन्ध करता है। हास्यकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय श्रीर जुगुष्साका नियमसे बन्ध करने वाला होता है। जो नियमसे अनुत्कृष्ट दो भाग न्यून स्थितिका बन्ध करता है। स्त्रीवेदका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है,तो नियम से त्रानुत्कृष्ट तीन भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है । पुरुषवेदका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृप्र स्थितिका भी बन्धक

१. मूलमतौ हस्स रिद उक्कस्स ॰ इति पाठः ।

बंधित । पुरिस० सिया बं० सिया अवं० । यदि वं० तं तु० । एवुंस० सिया वं० सिया अवं० । यदि वं० एिय० अणु० दुभागूणं वंधित । रदि एिय० । तं तु० । एवं रदीए वि ।

४. णिरयायु० उक्क॰ द्विदिबंधंतो तिरिएण आयूणं अवंधगो । एवमएण-

मएणस्स ऋबंधगो ।

४. सिरयग॰ उक्त०द्विदिवं॰ पंचिदि०-वेउन्वि०-तेजा०-क॰-हु'इसंठा०-वेउन्वि०-ग्रंगो०-वस्ता०४-सिरयाणु०--त्रागुरू०४-श्रप्पसत्थ०-तस०४-'श्रथिरादिछक-सिर्णिन० सिय॰ वं०। तं तु०। एवं वेउन्वि०-वेउन्वि०ग्रंगो०-सिरयाणु०।

६. तिरिक्खग० उक्क०द्विदिवंघं० स्रोरालि॰-तेजा॰-क०-हुंडसं०-वएण०४-तिरिक्खाणु॰-त्रगु॰४-बादर-पज्जत्त-पत्तेय०-स्रथिरादिपंच०-शिम० शिय० । तं तु॰ । एइंदि॰-पंचिदि॰-स्रोरालि०स्रंगो०-स्रसंपत्त०-स्रादाउज्जो०-स्रप्पसत्थ०-तस-

होता है और अनुस्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुस्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है,तो वह नियमसे उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पश्यका असंख्यातयाँ भाग न्यून तक बाँधता है। नपुंसकवेदका कदाचित बन्धक होता है श्रीर कदाचित अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है,तो नियमसे अनुत्कृष्ट दो भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। रितका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है, तो नियमसे उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पश्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार रितके आश्रयसे सिक्षकर्ष जानना चाहिए।

**४. नरकायुकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध क्**रनेवाला जीव तीन श्रायुश्रोंका अबन्धक

होता है। इसी प्रकार परस्परमें अवन्धक होता है।

४. नरकगितकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चिन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुएड संस्थान, वैक्रियिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, नरक-गत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघुचतुष्क, श्रप्रशस्त विद्वायोगित, यस चतुष्क, श्रस्थिर श्रादि छह और निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है, वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रगुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है, तो वह उत्कृष्टस्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रगुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है, तो वह उत्कृष्टसे श्रगुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक बाँधता है। इसी प्रकार वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक श्राङ्गोपाङ्ग श्रीर नरकगत्या-न्यूवीकी श्रपेक्षा सिक्षकर्ष जानमा चाहिए।

६. तिर्यञ्चगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव श्रौदारिक श्रार, तैजल श्रीर, कार्मण श्रीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, धावर, पर्याप्त, प्रत्येकशरीर, श्रस्थिर श्रादि पाँच श्रौर निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है,तो नियमसे उत्कृष्टले श्रनुत्कृष्ट प्याप्तका बन्धक होता है,तो नियमसे उत्कृष्टले श्रनुत्कृष्ट प्याप्तका बन्धक होता है,तो नियमसे उत्कृष्टले श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक बाँधता है। पकेन्द्रिय जाति, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक श्राक्षोपाक्क, श्रसम्प्राप्तास्पादिका संहनन, श्रातप, उद्योत,

१. मूलप्रतौ श्रथिरादिपंच णिमि० इति पाठः ।

थावर-दुस्सर० सिया बंध० सिया अवंध०। यदि बंध० । तं तु०। एवं ब्रोरालि०-तिरिक्खाणु०-उज्जो०।

- ७. मणुसगदि० उक्कस्सिटिदिबं० पंचिदि०-श्रोरालि०-तेजा०-क० श्रोरा०श्रंगो०-वाणा०४-श्रगु०-उप०-तस-बादर-पत्तेय०-श्रिथरादिपंच०-णिमि० णिय० वं० । णिय० श्रणु० चढुभागूणं बंधदि । दोसंठा०-दोसंघ०-श्रपज्ञ० सिया वं० सिया श्रवं०। यदि वं० संखेंज्जदिभागूणं बंधदि । हुंडसं०-श्रसंपत्त०-पर०-उस्सा०-श्रप्प-सत्थ०-पज्ज०-दुस्स० सिया वं० सिया श्रवं०। यदि वं० णिय० श्रणु० चढु-भागूणं बंधदि । मणुसाणुपु० णिय० वं० । तं तु०। एवं मणुसाणु०।
- ८. देवगदि उक्क॰ द्विदिबंधं० पंचिदि०-वेउन्वि०-तेजा०-क०-वेउन्वि०श्चंगो०-वर्णा०४-ऋगु०४-तस०४-णिमि० णिय० बं० । णिय० ऋणु० दुभागूणं वंधदि । समचदु०-देवाणु०-पसत्थ०-सुभग-सुस्सर-ऋादेँ० णि० बं० । तं तु० । थिर-सुभ-जस०

श्रप्रशस्त विहायोगित, त्रस, स्थावर श्रीर दुखरका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है, तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रवत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रवत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है, तो वह उत्कृष्टसे श्रवत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक बाँधता है। इसी प्रकार श्रीदारिक शरीर, तियंश्चगत्यानुपूर्वी श्रीर उद्योत इन प्रकृतियों के श्राश्रयसे सिक्ष-कर्ष जानना चाहिए।

- ७. मनुष्यगितको उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघु, उपधात, श्रस, बादर, प्रत्येकशरीर, श्रस्थिर श्रादि पाँच श्रौर निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है, वह नियमसे श्रमुत्कृष्ट चार भाग न्यून बाँधता है। दो संस्थान, दो संहनन श्रौर श्रपर्याप्त इन प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है,तो नियमसे संख्यातवाँ भाग न्यून बाँधता है। दुण्डसंस्थान, श्रसम्प्राप्तास्थादिकासंहनन, परघात, उच्छुास, श्रप्रशस्त विहायोगित, पर्याप्त श्रौर दुस्वर इन प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है, तो नियमसे श्रमुत्कृष्ट चार भाग न्यूनका बन्धक होता है। मनुष्यगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। इसी प्रकार मनुष्य-समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यूनतक बाँधता है। इसी प्रकार मनुष्य-गत्यानुपूर्वीके श्राश्रयसे सिन्नकर्ष जानना चाहिए।
- दे. देवगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, वैकियिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, वैकियिक आक्षोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, अस-चतुष्क और निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। वह नियमसे अनुत्कृष्ट दो भाग न्यूनका बन्धक होता है। समचतुरस्र संस्थान, देवगत्यानुपूर्वी, प्रशस्त विहायोगित, सुभग, सुस्वर और आदेय इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृप्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पर्यका

सिया वं॰ सिया अवं० । यदि वं० तं तु० । अधिर-असुभ-अजस० सिया वं॰ सिया अवं॰ । यदि वं० णिय० अणु॰ दुभागूणं वंधदि । एवं देवाणुपु० ।

- ६. एइंदियस्स उक्क०डिदिवंधं० तिरिक्खग०-श्रोरालि०-तेजा०-क०-हुंडसं० वरण्०४-तिरिक्खाणु०-श्रगु०४-थावर—वादर--पज्जत्त--पत्ते०--श्रथिरादिपंच०--णिमि० णिय० वं० | तं तु० | श्रादाउज्जो० सिया वं० सिया श्रवं० | यदि वं० | तं तु० | एवं श्रादाव-थावर० |
- १०. बीइंदि॰ उक्क॰ दिदिवं॰ तिरिक्खग०-ऋोरालि॰-तेजा॰-क०-हुंड०ऋोरालि॰ऋंगो०-ऋसंपत्त०-वर्गण०४-तिरिक्खाणु०-ऋगु०-उप०-तस०-वाद्र-पत्ते०ऋथिरादिपंच०-िणमि० णिय० वं० । ऋणु॰ संखेंज्जदिभागूणं वंधदि । पर०उस्सा॰-उज्जो०-ऋप्पसत्थ०-पज्ज'॰-ऋपज्ज०-दुस्सर सिया वं० । तं तु०' ।
  ऋसंख्यातवाँ भाग न्यूनतक बाँचता है। स्थिर, द्रुभ श्रौर यशःकीति इन प्रकृतियोका
  कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् ऋवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है, तो वह
  उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है श्रौर अनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि
  ऋनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है, तो नियमसे उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एकसमय न्यूनसे
  लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यूनतक बाँधता है। श्रस्थिर, अशुभ श्रौर श्रयशःकीति इन प्रकृतियोंका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि
  बन्धक होता है, तो नियमसे श्रमुत्कृष्ट दो भाग न्यूनको बन्धक होता है। इसी प्रकार
  देवगत्यानुवृर्विके श्राश्रयसे सिक्किष जानना चाहिए।

्र एकेन्द्रिय जातिकी उत्हृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यश्चगति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मणशरीर, हुएडसंस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यश्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलधुचतुष्क, स्थावर, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक शरीर, श्रस्थिर आदि पौँच श्रौर निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है, तो वह नियमसे उत्कृष्टसे श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक बाँधता है। श्रातप श्रौर उद्योत इन प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है,तो वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है,तो वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है,तो वह नियमसे उत्कृष्टसे श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यूनतक बाँधता है। इसी प्रकार श्रातप श्रौर स्थावर प्रकृतियोंक श्राश्चयसे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१०. होन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगित, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्डसंस्थान, औदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, श्रसम्प्राप्तास्पाटिका संहनन, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु, उपघात, त्रस, बादर, प्रत्येक, श्रस्थिर श्रादि पाँच श्रौर निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। वह श्रनुत्रुष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। परघात, उच्छुास, उद्योत, श्रपशस्तवि-हायोगित, पर्याप्त, श्रपर्याप्त श्रौर दुःस्वर, इन प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। किन्तु यदि बन्धक होता है, तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्रुष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्रुष्ट स्थितिका

म्बप्रती पज० दुस्सर श्रपजा० साधार० सिया इति पाठः।
 म्बप्रती तं तु णा० दं० सिया

### एवं तीइं०-चदुरिं०।

- ११. पंचिदि उक्कः हिदिबं तेजा०-४०-हुंडसं वरण् ०४-श्रगु०४-श्रप्प-सत्थ०-तस०४-श्रिथिरादिछ०-णिमि० णिय०। तं तु०। णिरय-तिरिक्खगदि-श्रोरालि०-वेडव्वि०-श्रोरालि०-वेडव्वि०श्रंगो०-श्रसंपत्त०-दो-श्राणु०-उज्जो० सिया वं० सिया श्रवं०। यदि वं० तं तु०। एवं तस०।
- १२. ब्राहार० उक्क दिदिवं० देवगदि-पंचिदि०-वेडिव्व०-तेजा०-क०-समचदु०-वेडिव्वि० ब्रांगो०-वएए० ४-देवाणु०-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-थिरादिळ०-एि० वं० । णि० अणु० संखें ज्ञगुणहीएां वंपदि। आहार ब्लंगो० एिप० । तं तु०। तित्थय० सिया वं० सिया अवं०। यदि वं० एि० अणु० संखें ज्ञगुणहीएां वंपदि। एवं आहार अंगोवं०।

बन्धक होता है,तो वह उत्कृष्टसे अनुतृष्टष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवीँ भाग न्यूनतक बाँधता है। इसो प्रकार शीन्द्रिय जाति और चतुरिन्द्रिय जातिके आश्रयसे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

- ११. पञ्चेन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिका यन्ध करनेवाला जीव तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्डसंस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलंधुचतुष्क, अप्रशस्त विद्यायोगित, त्रसचतुष्क, अस्थिर आदि छह और निर्माण प्रकृतियोंका नियमसे वन्धक होता है। वह उत्कृष्ट भी बाँधता है और अनुत्कृष्ट भी बाँधता है। यदि अनुत्कृष्ट बाँधता है, तो उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर प्रत्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक बाँधता है। नरकगित, तिर्यक्षगित, औदारिक शरीर, वैकियिक शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्क, वैकियिक आङ्गोपाङ्क, असम्प्राप्तास्पादिकासहन, दो आनुपूर्वी और उद्योतका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि यन्धक होता है, तो उत्कृष्ट भी बाँधता है और अनुत्कृष्ट भी बाँधता है। यदि अनुत्कृष्ट बाँधता है, तो उत्कृष्ट भी बाँधता है और अनुत्कृष्ट भी बाँधता है। यदि अनुत्कृष्ट वाँधता है, तो उत्कृष्ट भी बाँधता है और अनुत्कृष्ट भी बाँधता है। वाँधता है। इसी प्रकार जस काय प्रकृतिके सन्बन्धसे सिक्षकर्य जानना चाहिए।
- १२. ग्राहारक शरीरकी उत्छए स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव देवगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, वैकियिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरम्न संस्थान, वैकियिक ग्राङ्गी-पाङ्ग, वर्णमतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, ग्रागुरुलघुचतुष्क, प्रशस्तविहायोगिति, त्रसचतुष्क, स्थिर ग्रादि छह ग्रीर निर्माण प्रकृतियोका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातगुणहीन स्थितिका बन्धक होता है। ग्राहारक ग्राङ्गोपाङ्गका नियमसे वन्धक होता है।वह उत्कृष्ट भो वाँधता है ग्रीर उनुत्कृष्ट भी वाँधता है। यदि श्रनुत्कृष्ट वाँधता है,तो उत्कृष्टसे ग्रानुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका ग्रासंख्यातवाँ भाग न्यून तक वाँधता है। तोर्थङ्गर प्रकृतिका कदाचित् वन्धक होता है ग्रीर कदाचित् ग्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है, तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातगुण होन वाँधता है। इसी प्रकार ग्राहारक ग्राङ्गोपाङ्गके ग्राथ्यसे सम्निकर्ष जानना चाहिए।

बं॰ सिया श्रवं॰ यदि वं॰ णिय॰ श्रपु॰ संखेजदिभागू॰। श्रपज्ञ॰ सिया वं॰ सिथा श्रवं॰ यदि वं॰ तं तु । एवं तीष्ट्रंदि॰ इति पाठः ।

- १३. तेजा'० उक्क०िदिवं० कम्मइ०-हुंडसं०-त्राण् ०४-अगु०४-बादर-पज्जत्त-पत्ते०-अथिरादिपंच०-िण्मि० िण्य०। तं तु०। िण्र्यगदि-तिरिक्खग०-एइंदि०-पंचिदि०-दोसरीर-दोअंगो०-असंपत्त०-दोआणु०-आदाउज्जो०-अप्पसत्थ०-तस-थावर-दुस्सर० िसया बं० िसया अवं०। यदि वं०। तं तु०। तेजइगभंगो कम्मइ०-हुंडसं०-वएण्०४-अगु०४-वादर-पज्जत्त-पत्ते०-अथिरादिपंच०-िण्मि० ति।
- १४. समचदु० उक्त० द्विदिबं० पंचिदि०-तेजा०-क०-वएए०४-अगु०४-तस०४-णि० िएय० । अणु० दुभागूर्ण० । तिरिक्खग०-दोसरी०-दोश्रंगो०-असंप०-तिरि-क्खाणु०-उज्जो०-अप्पसत्थ०-अथिरादिछ० सिया बं० सिया अवं० । यदि वं० णियमा अणु० वं० दुभागूर्ण० । मणुसगदिदुगं सिया वं० सिया अवं० । यदि वं० िए० अणु० तिभागूर्णं बं० । देवगदि वज्ज० देवाणु०-पसत्थ०-थिरादिछक्क०
- १२. तैजसश्रीर की उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव कार्मण्शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, श्रस्थिर श्रादि पाँच श्रीर निर्माण प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। वह उत्कृष्ट भी बाँधता है। श्रीर अनुत्कृष्ट भी बाँधता है। यदि अनुत्कृष्ट बाँधता है, तो नियम से उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यूनतक बाँधता है। नरकगति, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रियजाति, पञ्चेन्द्रियजाति, दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, असंप्राप्तास्पाटिका संहनन, दो आनुपूर्वी, श्रातप, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगित, अस, स्थावर, श्रीर दुःखर प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है, यदि बन्धक होता है तो जित्कृष्ट भी बाँधता है। यदि अनुत्कृष्ट बाँधता है, तो नियमसे उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यूनतक बाँधता है। इसी प्रकार तैजसशरीरके समान कार्मण्शरीर, हुण्डसंस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, वादर, पर्याप्त, प्रत्येक, श्रम्थिर आदि पाँच श्रीर निर्माण प्रकृतियोंके आश्रयसे सिन्नकर्ष जानना चाहिए।
- १४. समचतुरस्न प्रकृति की उत्कृष्ट स्थितिका बन्धकरनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति तेजसश्रीर, कार्मणश्रीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलधुचतुष्क, असचतुष्क और निर्माण प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। बहु अनुत्कृष्ट दो भाग न्यून स्थितिका बन्ध करता है। तिर्यञ्चगति, दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासुपाटिका संहनन, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगित और अस्थिर आदि उह प्रकृतियोंका कराचित् बन्धक होता है और कराचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है, तो नियमसे अगुत्कृष्ट दो भाग न्यूनका वन्धक होता है। मनुष्यगति द्विकका कराचित् वन्धक होता है अगेर कराचित् अवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है, तो नियमसे अगुत्कृष्ट तीन भाग न्यून स्थितिका वन्ध करता है। यदि वन्धक होता है और कराचित् अवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है, तो उत्कृष्टका भी बन्धक होता है और अगुत्कृष्टका भी बन्धक होता है। यदि अगुत्कृष्टका बन्धक होता है, तो उत्कृष्टका भी बन्धक होता है। यदि अगुत्कृष्टका बन्धक होता है, तो उत्कृष्टका भी बन्धक होता है। यदि अगुत्कृष्टका बन्धक होता है, तो स्थमसे एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है, तो नियमसे अगुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है, तो नियमसे अगुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है, तो नियमसे अगुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है, तो नियमसे अगुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक

मृत्तप्रतो तेजाक० उक्क० द्वति पाटः । २. मृलप्रतो िष्मि० सन्धि इति पाठः ।

सिया बं० सिया अबं० । यदि बं॰ तं तु० । चदुसंघ० सिया बं० सिया अवं॰ । यदि बं॰ णि० अणु॰ संखेजादिभागूणं बं॰ । एवं पसत्थवि॰-सुभग-सुस्सर-आर्देजा०।

१५. एग्गोद० उक्क०द्विदंबं पंचिदि०-श्रोरालि०-तेजा०-क०-श्रोरालि०-श्रंगो०-वरण्०४-श्रगु०४-श्रप्पसत्थ०-तस०४-श्रथिरादिश्र०-िएमि० एिय० वं०। एए० श्रणु० संखें ज्ञदिभागूर्णं०। तिरिक्ख-पणुसग०-चदुसंघ०-दोश्राणु०-उज्जो० सिया बं० सिया श्रवं०। यदि वं० एिय० श्रणु० संखें ज्ञदिभागूर्णं वं०। वज्ज-एगरा० सिया वं० सिया श्रवं०। यदि वं० तं तु०। एवं वज्जणारायण्०। एविर दो गदि-चदुसंठा०-दोश्राणु०-उज्जो० सिया वं० सिया श्रवं०। यदि वं० एिय० श्रणु० संखें ज्ञदिभागू०। सादि० एवं चेव। एविर एगरायणं सिया०। तं तु०। एवं णारायणं।

१६. खुज्जसंठाणं उक्त०द्विदिबं० तिरिक्खग०-पंचिदि०-स्रोरात्ति०-तेजा०-क०-स्रोरात्ति०स्रंगो०-वएरा०४-तिरिक्खाणु०-स्रग्नु०४-स्रप्यस्थ०-तस०४-स्रथिरादिछ०-

होता है। इसी प्रकार प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुखर त्रौर त्रादेय प्रकृतियोंके त्राश्रयसे सन्निकर्ष जानमा चाहिए।

१४. न्यत्रोध परिमण्डल संस्थानकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रीदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, अप्रशस्त विद्वायोगति, जसचतुष्क, अस्थिर आदि छह और निर्माण प्रभ-तियोंका नियमसे बन्धक होता है,वह नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यन स्थितिका बन्धक होता है । तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति, चार संहनन, दो त्रानुपूर्वी, त्रौर उद्योत प्रकृत तियोंका कद।चित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है, तो नियमसे ऋतुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्युन स्थितिका बन्धक होता है। वज्रनाराचसंहननका कदाचित् बन्धक होता और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है, तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है,तो नियमसे एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातर्वा भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार वज्रनाराचसंहननके ग्राश्रयसे सन्निकर्ष जानना च।हिए । इतनी विशेषता है कि दो गति, चार संस्थान, दो त्रानुपूर्वी स्रौर उद्योतका कदाचित् बन्धकहोता है श्रोर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है,तो नियमसे श्रमुत्कृष्ट संख्यातवाँ माग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार खाति संस्थानके श्राश्रयसे सन्निकर्प जानना चाहिए । इतनी विशेषता हैं कि वह नाराचसंहननका कर्दांचित बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है, तो उत्कृष्ट बन्धक भी होता है श्रीर अनुत्रुष्ट बन्धक भी होता है। यदि श्रनुत्रुष्ट स्थितिका बन्धक होता है,तो एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका ऋसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार नाराचसंहननके ग्राध्रयसे समिकर्ष जानना चाहिए।

१६. कुष्जक संस्थानकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, पञ्चे-न्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघुचतुष्क, श्रप्रशस्त विहायोगति, श्रसचतुष्क, श्रस्थिर श्रादि छह और निर्माण प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। बहं नियमसे श्रमुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग णिमि० शिय० संखेँ०भागू० | दोसंघ०-उज्जो० सिया वं० सिया अवं० | [ यदि वं० शिय०] संखेँज्ञ०भागू० | अद्धणारा० सिया० | तं तु० | एवं अद्धणारा० | एवं वामण० | शविर असंपत्त० सिया० संखेंज्ञ०भागू० | खीलिय० सिया वं० | तं तु० | एवं० खीलिय० |

१७. श्रोरालि०श्रंगो० उ०द्वि०वं० तिरिक्खग०-पंचिदि०-श्रोरालि०-तेजा०-क०-हुंडसं०-श्रसंप०-वएरा०४-तिरिक्खाणु०-श्रगु०४-पसत्थ०-तस०४-श्रथिरादिछ०--णिमि० शिय० वं | तं तु० | उज्जो० सिया० | तं तु० | एवं श्रसंप० |

१८. वज्जरि॰ उक्क॰द्विदिवं० पंचिंदि०-स्रोरालि॰-तेजा०-क०-स्रोरालि० श्रंगो०-वर्षा०४-श्रगु०४-तस०४-णिमि० णिय० वं० । णि० श्रणु० तिरिक्खगदि-हुंड०-तिरिक्खाग्रु०-उज्जो०-ऋपसत्थ०-ऋथिरादिछ० सिया बं० सिया न्यन स्थितिका बन्धक होता है। दो संहनन और उद्योत प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। श्रर्धनाराचसंहननका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है,तो उत्कृष्ट बन्धक भी होता है और अनु-त्कृष्ट बन्धक भी होता है। यदि अनुत्कृष्ट बन्धक होता है, तो नियमसे एक समय न्यूनसे **लेक**र पल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून शतक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार श्रर्थ-नाराचसंहननके श्राश्रयसे सन्निकर्प जानना चाहिए। तथा इसी प्रकार वामन संस्थानके आश्रयसे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विद्योषता है कि यह ग्रसम्प्राप्तासुपाटिका संहमनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है,तो नियमसे श्रमुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। कीलक संहननका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् अवन्धक होता है। यदि वन्धक है, तो उत्कृष्ट भी बाँधता है और अनुत्कृष्ट भी बाँघता है। यदि अनुत्कृष्ट बाँधता है,तो एक समय न्यूनसे लेकर पत्य-का श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार कीलक संहननके

१७. श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्गकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, पञ्चेन्द्रियजाति, श्रौदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मण शरीर, हुण्डसंस्थान, श्रसम्प्राप्ता-स्पादिकासंहनन, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्तविद्दायोगति, त्रसचतुष्क, श्रस्थिर श्रादि छह श्रौर निर्माण प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है।वह उत्कृष्ट भी बाँधता है। यदि श्रमुत्कृष्ट बाँधता है,तो एक समय न्यूनसे लेकर पत्थका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। उद्योत प्रकृतिका कदानित् बन्धक होता है श्रौर अनुत्कृष्ट भी बाँधता है। यदि श्रमुत्कृष्ट बाँधता है,तो एक समय न्यूनसे लेकर पत्थका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार श्रसम्प्राप्तस्पादिकासंहननके श्राश्चयसे सन्निकर्ष जानन। चाहिए।

१८. वजर्षभनाराचको उत्कृष्टस्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदा-रिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मण शरीर, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघुचतुष्क, असचतुष्क श्रौर निर्माण प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है।वह नियमसे श्रनुत्कृष्ट दो भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। तिर्यञ्चगित, हुण्डसंस्थान, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वो, उद्योत, श्रप्रशस्तविहायोगित श्रौर श्रस्थिर श्रादि छह प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है श्रोर

त्राश्रयसे सन्निकर्ष जानमा चाहिए।

अवं । यदि वं ० णिय० अणु० दुभागू० । मणुसग०-मणुसाणु० सिया वं० सिया अवं० । यदि वं० णिय० अणु० तिभागू० । समचदृ०-पसत्थ०-थिरादिछ० सिया वं० सिया अवं० । यदि वं० ।तं तु० । चदुसंटा० सिया वं० सिया अवं० । यदि वं० णियमा अणु० संखेंज्ञदिभागू० ।

१६. उज्जो० उक्क० द्वि० वं० तिरिक्खग०-श्रोरात्ति०-तेजा०-क०-हु'ड०-वगण०४-तिरिक्खाणु०-श्रगु०४-वाद्र-पज्जत्त-पत्ते०--श्रथिरादिपंच०--णिमि० णि० वं० । तं तु० । एइंदि०-पंचिदि०-श्रोरात्ति०श्रंगो०-श्रसंप०-श्रप्पसत्थ०--तस०--थावर--दुस्सर० सिया वं० सिया श्रवं० । यदि वं० तं तु० ।

२०. ऋष्पसत्थ० उक्क० द्विदि० वं० पंचिदि०-तेजा०-क०-हुंड०-वएण०४-ऋगु०४-तस०४-ऋथिरादिछ०-िएमि० िएय० वं० । तं तु० । िएरयगदि-तिरिक्ख-

कदाचित् अवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है, तो नियमसे अनुत्कृष्ट दो भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। मनुष्यगित और मनुष्यगत्यानुपूर्वीका कदाचित् वन्धक होता है अौर कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है, तो नियमसे अनुत्कृष्ट तीन भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। यमचनुरस्रसंस्थान, प्रशस्तविद्दायोगित और स्थिर आदि छह प्रकृतियोंका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है, तो उत्कृष्ट भी बाँधता है और अनुत्कृष्ट भी बाँधता है। यदि अनुत्कृष्ट बाँधता है, तो एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंस्थातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। चार संस्थानोंका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। चित्र बन्धक होता है। चार संस्थानोंका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है।

१९. उद्योत प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, श्रौदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, हुएडसंस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु चतुष्क, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, अस्थिर श्रादि पाँच और निर्माण प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट भी बाँधता है श्रौर श्रमुत्कृष्ट भी बाँधता है। यदि श्रमुत्कृष्ट बाँधता है, तो एकसमय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। एकेन्द्रियजाति, पञ्चेन्द्रियजाति, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, श्रसम्प्राप्तास्पादिका संहनन, श्रप्रशस्त विहायोगित, त्रस, स्थावर श्रौर दुःस्वर प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है, तो उत्कृष्ट भी बाँधता है श्रौर श्रमुत्कृष्ट भी बाँधता है। यदि श्रमुत्कृष्ट बाँधता है, तो श्रमुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्युनतक स्थितिका बन्धक होता है।

२०. अप्रशस्त विहायोगितकी उत्कृष्टिस्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, तेंजस शरीर, कार्मणशरीर, हुण्डसंस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलयुचतुष्क, त्रसचतुष्क, अस्थिर आदि छह और निर्माण प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट भी बाँधता है और अगुत्कृष्ट भी बाँधता है। यदि अनुत्कृष्ट बाँधता है, तो एक समय न्यूनसे लेकर पत्थका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। नरकगित, तिर्यञ्चगित, दो शरीर, दो आक्रोपाङ्ग, अप्रशस्त विहायोगित, दो आगुपूर्वी और उद्योत प्रकृतियोंका कदाचित बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है, तो उत्कृष्ट भी बाँधता

गदि-दोसरी०-दोर्श्वगो०-श्रप्पसत्थ०-दोश्राणु०-उज्जो० सिया वं० सिया श्रवं०। यदि वं०। तं तु०। एवं दुस्स०।

२१. सुहुमे॰ उक्क दिदि०वे० तिरिक्खग॰-एइंदि०-श्रोरालि॰-तेजा०-क०-हु'इसं०-वएएा०४-तिरिक्खाणु०-श्रगु०-उप॰-थावर०-श्रथिरादिपंच०-िएमि॰ एिय० वं॰। श्रणु० संखेँज्जदिभागू०। पर०-उस्सास-पज्जत्त-पत्ते० सिया वं॰ सिया श्रवं०। यदि वं० एि० श्रणु० संखेँज्जदिभागू०। एवं साधारए०।

२२. अपज्जव उक्क बिद्वंव तिरिक्खगदि-स्रोरालिव-तेजाव-कव-हुंडसंव वरणविश्व-तिरिक्खाणुव-स्रगुव-उपव-स्रथिरादिपंचव-णिमिव णियव । अणुव संखें ज्जिदिभागूणं बंधिद । एइंदिव-पंचिदिव-स्रोरालिव संगोव-तस-थावर-बादर-पत्तेव सिया वंव सिया स्रबंव । यदि बंव गियव स्रणुव संखें ज्जिदिभागूणं बंधिद । वीइंदिव-तीइंदिव-चदुरिंव-सुहुय-साधारव सिया बंव सिया स्रबंव । यदि वंव । णिव तंतुव ।

२३. थिरणाम उक्क०द्विदिवं तेजा ०-क०-धएण ०४-ऋगु०-उप०-परघाद-श्रीर श्रपुत्कृष्ट भी बाँधता है। यदि अनुत्कृष्ट बाँधता है, तो एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार दुखर प्रकृतिके श्राश्रयसे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२१. सूच्म प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव तिर्यश्चगति, एकेन्द्रिय जाति, श्रीदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यश्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघात, स्थावर, श्रस्थिर श्रादि पाँच श्रीर निर्माण प्रकृतियोंका नियमसे वन्धक होता है, वह अनुत्कृष्ट संस्थातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। परघात, उच्छुास, पर्याप्त श्रीर प्रत्येक प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है, तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संस्थातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार साधारण प्रकृतिके श्राश्रयसे सिन्नकर्ष जानना चाहिए।

२२. अपर्याप्त प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगित, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुएड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुल्यु, उपघात, श्रस्थिर आदि एाँच श्रौर निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है, वह श्रमुल्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन वाँधता है। एकेन्द्रिय जाति, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक श्राङ्गोणङ्ग, अस, स्थावर, बादर श्रौर प्रत्येक इन प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है। श्रीर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है, तो नियमसे श्रमुल्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन बाँधता है। ब्रीन्द्रिय जाति, त्रीन्द्रिय जाति, चतुरिन्द्रिय जाति, स्थम श्रौर साधारण प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है श्रौर अनुत्कृष्ट भी बाँधता है। यदि श्रमुल्कृष्ट बाँधता है,तो नियमसे उत्कृष्टसे श्रमुल्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक बाँधता है।

२३. स्थिर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, ऋगुरुलघु, उपघात, परघात, उच्छ्नास, पर्याप्त और निर्माण इन प्रकृ- उस्सास-पज्ज०-णिमि० णिय० बं० अण० दुभागूणं बंधि । तिरिक्लगिद-एइंदि० पंचिदि०-स्रोरालि०-वेउव्वि०-हुंडसं०-दोअंगो०--असंप०-तिरिक्लाणु०-आदा-- उज्जो०-अप्पत्तथ०-तस-थावर-बादर-पत्ते०-असभादिपंच० सिया बं० सिया अबं०। यदि बं० णि० अण० दुभागूणं०। मणुसगिद-मणुसाणु० सिया बं० सिया अबं०। यदि बं० णिय० अण० तिभागू०। देवगिद-समचदु०-वज्जिरि० देवाणुपु०-पसत्थ०-सुभादिपंच० सिया बं० सिया अबं०। यदि बं० तं तु०। बेइंदि० तेइं०-चदुर्सं०-चदुरसंघ०-सुहुम-साधार० सिया बं० सिया अबं०। यदि बं० तं तु०। वेइंदि० वं० णिय० अण० संसेज्जिदिभागू०। एवं सुभ०।

२४. जसिंग॰ उक्त०हि॰वं॰ तेजा०-क॰-वर्गण्०४-अगु०४-बाद्र-पज्जत्त-पत्ते॰-णिमि० णि॰ वं॰ । णि० अणु० दुभागू॰ । तिरिक्लगदि-एइंदि॰-पंचिदि॰-ओरालि०-वेउव्वि॰-हुंडसं॰--दोअंगो०--असंपत्त०--तिरिक्लाणु०--अदाउज्जो॰-अप्प-सत्थ०-तस-थावर-अथिरादिपंच॰ सिया वं॰ सिया अवं०। यदि वं० णिय० अणु० दुभागू०। मणुसगदिदुगं सिया वं० सिया अवं०। यदि वं॰ णिय० अणु०

तियोंका नियमसे वन्धक होता है , जो अनुस्कृष्ट दो भाग न्यून बाँधता है । तिर्यञ्जगित, एकेन्द्रिय जाति, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रीदारिक शरीर, वैक्रियिक शरीर, हुएडसंस्थान, दो श्राङ्गो-पाङ्ग, श्रसम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रातप, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगति, त्र<mark>स. स्थावर, बादर, प्रत्येक श्रौर श्रशुभादिक पाँच इन प्रकृतियोंका कदाचित् वन्धक होता</mark> है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है, तो नियमसे श्रमुत्कृष्ट दो भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। मनुष्यगति श्रौर मनुष्यगत्यानुपूर्वीका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है, तो नियमसे श्रवस्कृष्ट तीन भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है । देवगति, समचतुरस्रसंस्थान, वजर्षभनाराचसंहनन, देवगत्यानुपूर्वी, प्रशस्त विहायोगति श्रीर शुभादि पाँच इन प्रकृतियोंका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है, तो उत्कृष्ट भी बाँधता है श्रीर श्रनुत्कृष्ट भी बाँधता है। यदि श्रनुत्कृष्ट बाँधता है, तो नियमसे वह उत्कृष्टसे श्र<u>मुत्कृष्ट एक समय न्यून</u>से लेकर पल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है । द्वीन्द्रिय जाति, त्रीन्द्रिय जाति, चतुरिन्द्रिय जाति, चार संस्थान, चार संहनन, सुक्ष्म श्रीर साधारण इन प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है,तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यूनका बन्धक होता है । इसी प्रकार शुभ प्रकृतिके ग्राश्रयसे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

२४. यशःकीर्ति प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक शरीर और निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे अनुत्कृष्ट दो भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, वैकियिक शरीर, दुण्डसंस्थान, दो आक्नोपाङ्ग, असम्प्राप्तास्तृपाटिका संहनन, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, आतप, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगति, अस, स्थावर और अस्थिर आदि पाँच इन प्रकृतियोंका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है, तो नियमसे अनुत्कृष्ट दो माग न्यूनका बन्धक होता है। मनुष्यगतिद्विकका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित्

तिभागू० । देवगदि-समचदु०-वज्जरिसभ०-देवाणु०-पसत्थ०-थिरादिपंच सिया वं७ सिया ऋबं । यदि वं व तं तु । वीइं ० -तीइं ० -चदुरिं ० -चदुसंठा ७ -चदुसंघ० सिया वं॰ सिया ऋवं॰ । यदि वं० शिय॰ ऋणु॰ संखेंज्जदिभागु॰ ।

२५. तित्थय ० उक्क ० द्वितिबंधं ० देवगदि-पंचिदि ० -वेउव्वि ० -तेजा ० -क ० -समचदु ० -वेउब्वि०ञ्जंगो ७-वएण् ०४-देवाणु ०-त्रगु ०--४-प्रसत्थ ०--तस ०४--त्र्राथर--त्र्राभुभ--सुभग-त्रादे**ँ-अजस०-णिमि० णिय० । अणु० संखेँ**ज्जदिगुणहीणं बं० ।

२६, उचा॰ उक्क॰ द्विदिबंधं० एपिचा॰ अवंधगो । एपिचागो॰ उक्क॰ द्विदिबं॰ उचा० अवंधगो ।

२७. दार्णतरा० उक्क॰ द्विदिवं० चदुराणं श्रंतरा० णिय० । तं तु उक्कस्सा वा त्र्रणुकस्सा वा । उकस्सादो त्र्रणुकस्सा समयूरामादि कादृण पत्तिदोवमस्स असंखेँज्ञ**ः** भागृणं बंधदि । एवं ऋग्णोएणस्स । तं तु० ।

२८. त्रार्देसेण ऐरइएस पंचणा०-एवदंसणा०-सादासा०-भोहणीय०-छब्वीस-

श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट तीन भाग न्यूनका वन्धक होता है। देवगति, समचतुरस्रसंस्थान, वज्रर्वभनाराचसंहनन, देवगत्यानुपूर्वी, प्रशस्त विद्दायोगति और स्थिर आदि पाँच इन प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् श्रयन्थक होता है। यदि बन्धकहोता है तो उत्कृष्टका भी बन्धक होता है श्रौर श्रमुत्कृष्टका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्टका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्युनसे लेकर पर्यका असंख्यातवाँ भाग न्युनतक स्थितिका वन्धक होता है। द्वीन्द्रिय जाति, त्रीन्द्रिय जाति,चतुरिन्द्रिय जाति, चार संस्थान और चार संहनन इन प्रकृतियोंका कद।चित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रयन्थक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रमुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है।

२५. तीर्थंकर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव देवगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, वैकियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वैकियिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, अस्थिर, त्रशुभ, सुभग, त्रादेय, त्रयशःकीर्ति श्रौर निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुणहोन स्थितिका बन्धक होता है।

२६. उद्यगोत्रकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव नीचगोत्रका अबन्धक होता है । नीचगोत्रकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीवं उचगोत्रका अवन्धक होता है ।

२७. दानान्तरायकी उत्क्रप्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव चार श्रन्तराय प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। वह उत्कृष्ट भी बाँधता है और श्रनुत्कृष्ट भी बाँधता है। यदि ब्रानुत्कृष्ट बाँधता है तो नियमसे उत्कृष्टसे ब्रानुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका ब्रासं-ख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार पाँचों ऋतरायोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। यह उत्कृष्ट भो होता है श्रौर श्रनुत्कृष्ट भी होता है यदि श्रनुत्कृष्ट् होता है तो उत्कृष्ट्से अनुस्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक होता है।

२८. श्रादेशसे नारिकयोमें पाँच श्वानावरण, नौ दर्शनावरण, सातावेदनीय, श्रसाता-वेदनीय, छन्दीस मोहनीय, दो त्रायु, दो गोत्र श्रीर पाँच ऋन्तराय इन प्रकृतियोंका भङ्ग

दोश्रायु०-दोगोद०-पंचंत० श्रोघं । तिरिक्खग० उक्क०द्विदि-वं० पंचिदि०-श्रोरालि०-तेजा०-क०-हुंडसं०-श्रोरालि०श्रंगो०-श्रसंपत्त०-वएए०४-तिरिक्खायु०-श्रमु०४-श्रप्पसत्थ०-तस०४-श्रिथरादिछ०-िएमि० ए० वं० । तं तु० । उज्जो० सिया वं० । तं तु० । एवमेदाश्रो सन्वाश्रो एक्केंक्केए सह । तं तु० । सेसं श्रोधेए साधेदन्त्रं । एवं छसु पुढवीसु । सत्तपाए सो चेव भंगो । एविर मणुसगदि-मणु-साणु०-उचा० तित्थयरभंगो । सेसाश्रो तिरिक्खगदिसंजुत्तं कादन्त्रं ।

२६. तिरिक्खेसु पंचणा०-एवदंसणा०-सादासा०-मोहणीय०छव्वीस०-चदुत्रायु०-दोगोद०-पंचंत० श्रोघं । शिरयगदि उद्ग०द्विवं० पंचिदि०<sup>१</sup>-वेउव्विय-तेजा०-क०-हु'इसं०--वेउव्वि०श्रंगो०-वरण०४-शिरयाणु०-श्रगु०४-श्रप्प-सत्थ०-तस०४-श्रथिरादिञ्ञ०-णिमि० शि० वं० । तं तु० । एवमेदाश्रो ऍक-

श्रोधके समान है। तिर्यञ्चगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रीदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, श्रीद।रिक श्राङ्गोपाङ्ग, श्रसम्प्रा-प्रासपाटिका संहत्तन, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, अप्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, अस्थिर आदि छह और निर्माण प्रकृतियोंका नियमसे बन्ध करनेवाला होता है जो उत्कृष्ट भी बाँधता है स्त्रीर स्रमुत्कृष्ट भी बाँधता है। किन्तु उत्कृष्टसे स्रमुतकृष्ट एक समयन्यूनसे लेकर पत्यका ग्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक बाँधता है । उद्योतको कदाचित् बाँधता है श्रीर कदाचित नहीं वाँघता है। जो उत्हार भी बाँघता है और अनुत्हर भी बाँघता है। अनुत्कृष्ट बाँधता है तो उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक याँधता है। इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर एक एक प्रकृतिके साथ सन्निकर्ष होता है। ऐसी श्रवस्थामें इन प्रश्नुतियोंको उत्कृष्ट भी बाँधता है श्रीर अनुत्कृष्ट भी वाँधता है। किन्तु उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असं-ख्यातयाँ भाग न्यून तक बाँधता है। शेष सन्निकर्ष श्रोधके समान साध लेना चाहिए। इसी प्रकार छह पृथिवियोंमें जानना चाहिए। सातवीं पृथिवीमें यही भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि मनुष्यगति मनुष्यगत्यानुपूर्वी श्रीर उच्चगोत्रका भङ्ग तीर्थंकर प्रकृतिके समान है। यहाँ शेष प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका सन्निकर्ष कहते समय तिर्यञ्च-गतिके साथ कहना चाहिए।

2९. तिर्यञ्जों में पाँच ज्ञानावरण, नी दर्शनावरण, सातावेदनीय, असातावेदनीय, छन्वीस मोहनीय, चार आयु, दो गोत्र और पाँच अन्तराय प्रकृतियों का भङ्ग श्रोधके समान है। नरकगितकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, वैकियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वैकियिक आङ्गोपाङ्ग, वर्ण चतुष्क, नरकगत्यानुपूर्वा, अगुरुलष्ट चतुष्क, अप्रशस्त विहायोगित, त्रस चतुष्क, अस्थिर आदि छह और निर्माण प्रकृतियोंका नियमसे वन्धक होता है। जो उत्कृष्ट भी बाँधता है और अनुत्कृष्ट भी वाँधता है। किन्तु उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक बाँधता है। इसी प्रकार परस्पर इन प्रकृतियोंका सन्निकर्ष होता है। जो उत्कृष्ट भी बाँधता है श्रीर अनुत्कृष्ट भी बाँधता है। किन्तु उत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक बाँधता है। तिर्यञ्चगितकी उत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक बाँधता है। तिर्यञ्चगितकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव

मृजप्रतौ पंचिदिपंचिदि वेउ—इति पाठः ।

मेंक्सस्स । तं तु० । तिरिक्खग॰ उक्क०हिदिवं॰ तेजा०-क०-हुं इसं०-वएण०४अगु॰-उप०-अथिरादिपंच॰-िएमि० णि॰ वं० । अणु॰ संखेंज्ञभागूणं० ।
चदुजादि-वामएसंठा॰-ओरालि०अंगो०-खीलियसंघ॰-असंपत्त॰-आदाउज्जो०-थावरसुहुम-अपज्ज०-साधार॰ णियमा वं० । तं तु॰ । पंचिदि॰-हुं इसं०-पर०उस्सा॰-अप्पसत्थ०-तस०४-दुस्सर सिया वं० सिया अवं० । यदि वं० णिय०
अणु० संखेंज्जदिभागूणं० । ओरालि०-तिरिक्खाणु० णियमा० । तं तु॰ । एवं
ओरालि०-तिरिक्खाणु० । सेसं मूलोघं । एवरि किंचि विसेसो, अद्वारिसयाओ
एादन्वाओ । एवं पंचिदियतिरिक्खपज्जत्त-जोशिएगीस्स ।

३०..पंचिंदियतिरिक्खश्रपज्ज० पंचणा०-णवदंसणा०-सादासादा०-दोत्रायु०-दोगोद०-पंचंत० त्र्योघं । मिच्छत्त उक्क०द्विदिवं० सोलसक०-रावुंस०-त्र्रपदि-सोग-इत्थि॰ उक्क०द्विदिवं॰ मिच्छ०-सोत्तसक०-भय-दुगुं॰ णिय० तैज्ञस शरीर, कार्मण शरीर, हुएड संस्थान, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघु, उपघात, ग्रस्थिर श्रादि पाँच श्रौर निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे वन्धक होता है। जो श्रगुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून बाँधता है। चार जाति, वामन संस्थान, श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, कीलक संहनन, श्रसम्प्राप्तासृप टिका संहमम, श्रातप, उद्योत, स्थावर, सूक्ष्म, श्रपर्याप्त श्रौर साधारण इन पकृतियोंको नियमसे बाँधता है। जो उत्कृष्ट भी बाँधता है और अनुत्कृष्ट भी बाँधता है। किन्तु उत्कृष्टसे श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक बाँधता है । पञ्चेन्द्रिय जाति, हुण्डसंस्थान, परघात, उच्छ्वास, श्रप्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क श्रौर दुःस्वर इन प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्क्रप्ट संख्यातवाँ भाग न्यून बाँधता है। श्रीदा-रिकशरीर श्रौर तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट भो बाँधता है श्रीर श्रनुतकृष्ट भी **याँधता है। किन्तु उत्कृष्टसे ब्रनुतकृष्ट** एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका त्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक वाँधता है। इसी प्रकार श्रीदारिक शरीर श्रीर तिर्यञ्चगत्यानुः पूर्वीके उत्क्रष्ट स्थितिबन्धका आश्रय करके सन्निकर्ष जानना चाहिए। शेष सन्निकर्ष मूलोघके समान है। किन्तु कुछ विशेषता है कि श्रठारह कोड़ाकोड़ो सागर प्रमास स्थिति-बन्धवाली प्रकृतियाँ जाननी चाहिए ! इसी प्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च पर्याप्त और पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च योनिनी जीवोंके जानना चाहिए।

३०. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्यात जीवोंमं पाँच झानावरण, नौ दर्शनावरण, सातावेद-नीय, असातावेदनीय, दो आयु, दो गोत्र और पाँच अन्तराय प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है। मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव सोलह कषाय, नपुंसकवेद, भरति शोक, भय और जुगुप्सा इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट भी बाँधता है और अनुत्कृष्ट भी बाँधता है। किन्तु उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवां भाग न्यून तक बाँधता है। इसी प्रकार इन प्रकृतियोंका परस्पर सचिकर्ष जानना चाहिए। जो उत्कृष्ट भी होता है और अनुत्कृष्ट भी होता है। किन्तु उत्कृष्टसे अनु-त्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवां भाग न्यून तक होता है। स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला मिथ्यात्व, सोलह क्याय, भय और जुगुप्साका नियमसे श्रणु संखेंज्जदिभागूणं । हस्स-रदि-श्ररिद-सोग सिया बं सिया श्रवं । यदि बं णिय श्रणु संखेंज्जदिभागू । एवं पुरिस । हस्स उक्क हिदिबं । मिच्छ - सोतासक - एवं स - भय-दुगुं । णिय व बं । णि श्रणु । संखेंज्जदिभागू । रदि णिय व वं । तं तु । एवं रदीए ।

३१. तिरिक्खगदि॰ उक्क०द्वि॰बं० एइंदि॰-श्रोरालि॰-तेजा०-क०-हुंडसं०-वएरा०४-तिरिक्खाणु०-श्रगु०-उप॰-थावरादि०४-श्रथिरादिपंच॰-णिभि० णि॰ बं० । णि॰ तं तु॰ । एवमेदाश्रो श्रएएमएणस्स । तं तु॰ ।

३२. मणुसग० उक्क०िंदिबं० पंचिदि०--स्रोरालि०--तेजा०--क०--हुंडसं०--स्रोरालि०स्रंगो०-स्रसंपत्त०-वरण०४-स्रगु०-उप०-तस-बाद्र-स्रपद्धा०-पत्ते०--स्रथिरा--दिपंच०-िर्णाम० रिणय० रिणय० बं०। स्रणु० संखेंज्जदिभागू०। मणुसाणु० रिणय०।तं तु०। एवं मणुसाणु०।

बन्धक होता है जो नियमसे श्रमुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका बन्ध करता है। हास्य, रित, ग्ररित श्रीर शोकका कदाचित् बन्धक होता है ग्रीर कदाचित् ग्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रमुत्कृष्ट संख्यातवां भाग होन स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार पुरुषवेदके श्राश्रयसे सिन्नकर्ष जानना चाहिए। हास्य प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसकवेद, भय श्रीर जुगुण्साका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे श्रमुत्कृष्ट संख्यातवां भाग होन स्थितिका बन्धक होता है। रितका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट बन्धक भी होता है श्रीर श्रमुत्कृष्ट बन्धक भी होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट बन्धक होता है। जो उत्कृष्टसे श्रमुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिबन्धका बन्धक होता है। इसी प्रकार रितके श्राश्रयसे सिन्नकर्ष जानना चाहिए।

३१. तिर्यञ्चगितकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव एकेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर तैजसशरीर, कार्मणशरीर, हुएइसंस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रधुक्लघु, उपघात, स्थावर श्रादि चार, श्रस्थिर श्रादि पाँच, श्रौर निर्माण प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट भी बाँधता है श्रौर श्रमुत्कृष्ट भी बाँधता है। यदि श्रमुत्कृष्ट बाँधता है तो नियमसे एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन प्रकृतियोंका परस्पर सिन्नकंष जानना चाहिए। जो उत्कृष्ट भी बाँधता है। यदि श्रमुत्कृष्ट बाँधता है तो उत्कृष्टसे श्रमुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है।

३२. मनुष्यगितकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, हुण्डसंस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, श्रसम्प्राप्तास्पाटिका संहनम, वर्णचतुष्क, श्रमुरुलघु, उपघात, त्रस, बादर, श्रपर्यात, प्रत्येक शरीर, श्रस्थिर श्रादि पाँच श्रीर निर्माण प्रकृतियोका नियमसे बन्धक होता है। जो श्रमुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। मनुष्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट भी बाँधता है। किन्तु उत्कृष्टसे श्रमुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पर्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार मनुष्यानुपूर्वीके श्राश्रयसे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

- ३३. बीइंदि॰ उक्क०द्विदिबं॰ तिरिक्खग॰-श्रोरालि॰-तेजा॰-क॰--हुंड०--वरण्०४-तिरिक्खाणु॰-श्रगु०-उप॰-बादर--श्रपज्ज॰--पत्तेग०--श्रथरादिपंच०--णिमि० णिय० बं० । श्रगु॰ संखेंज्जदिभाग्० । श्रोरालि॰श्रंगो०-श्रसंपत्त०-तस० णिय० । तं तु० । एवं श्रोरालि०श्रंगो०-श्रसंप०-तस० ।
- ३४. तीइंदि० उक्क॰ द्विदिबं॰ तिरिक्खग०-त्रोरालि०--तेजा०--क०-हुंडसं०--त्रोरालि०त्रंगो०-त्रसंप०-वराण०४-तिरिक्खाणु०-त्रगु०--उप०--तस-बादर--त्रपण्जन०--पत्तेग०-त्र्रथिरादिपंच०-णिमि० णिय० वं० । णिय० त्रणु० संखेँजजदिभागू० । एवं चदुरिं०-पंचिदि० ।
- ३५. समचदु० उक्क०हिदि-बं० पंचिदि०-ब्रोरालि०-तेजा०-क०-ब्रोरालि०-श्रंगो०-वएएए०४-अग्रु०४-तस०४-िएमि० एिय० बं० | एिय० अणु० संखेर्जेजदि-भागू० | तिरिवस-मणुसगदि०-पंचसंघ०-दोश्राणु०-उज्जो०-अप्पसत्थ०--थिराथिर--सुभासुभ-दूभग-दुस्सर-अणादे०-जस०-अजस० सिया बं० सिया अवं० | यदि बं० णिय० अणु० संखेजजिदिभागू० | वज्जिरिसभ०-पसत्थ०-सुभग-सुस्सर-आदे० सिया
- ३३. द्वीन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, श्रौदारिकश्रीर, तैजसश्रीर, कार्मणश्रीर, हुण्डसंस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलधु,
  उपघात, बादर, श्रपर्याप्त, प्रत्येक श्रीर, श्रस्थिर श्रादि पाँच श्रौर निर्माण प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जो अनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। श्रीदा
  रिक श्राक्षोपाङ्ग, श्रसम्प्राप्तास्प्रपटिका संहनन और अस इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक
  होता है। जो उत्कृष्ट भी बाँधता हे श्रौर श्रनुत्कृष्ट भी बाँधता है। किन्तु उत्कृष्टसे श्रनुत्कृष्ट
  एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है।
  इसी प्रकार श्रीदारिक श्राक्कोपाङ्ग, श्रसम्प्राप्तास्त्रपाटिका संहनन और श्रसकाय इन प्रकृतियोंके
  श्राक्षयसे सन्निकर्ष जानना चाहिए।
- ३४. त्रीन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगित, श्रीदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, हुण्डसंस्थान, श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासरपादिका संहननन, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्च गत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु, उपघात, त्रस, बादर, श्रपर्याप्त, प्रत्येक शरीर, श्रस्थिर श्रादि पाँच श्रीर निर्माण इन प्रकृतियोंका विषयसे वन्धक होता है। जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार चतुरिन्द्रिय जाति श्रीर पञ्चेन्द्रिय जाति श्रीर पञ्चेन्द्रिय जातिके श्राथ्यसे सिक्षकर्ष जानना चाहिए।
- ३४. समचतुरस्रसंस्थानकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रौदारिक श्राङ्गोणाङ्ग, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघु-चतुष्क, श्रौर निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। तिर्यञ्चगति, मजुष्यगति, पाँच संहनन, दो श्रानुपूर्वी, उद्योत, श्रप्रशस्त विहायोगिति, स्थिर, श्रस्थर, श्रुभ, श्रुप्तभ, दुर्भग, दुर्सग, श्रुचर, श्रनादेय, यशःकीर्ति श्रीर अयशःकीर्ति इन प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है, तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। वस्र्षभनाराच संहनन, प्रशस्त विहायोगित, सुभग, सुस्तर, श्रौर श्रादेय इन प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है।

वं० सिया ऋवं० । यदि वं० तं तु० । एवं वज्जरिसभ०-पसत्थ०-[ सुभग ]-स्रस्सर-ऋादे० ।

३६. एग्गोद० उक्कः द्विदिवं० पंचिदिय॰-श्रोरालि०-तेजा०-क०-श्रोरालि०-श्रंगो॰-वगण०४-श्रसंपत्त॰-तस॰४-दूभग-दुस्सर-श्रणादेँ०-िगमि॰ णिय० वं०। णि० श्रणु० संखेँजिदिभागू०। तिरिक्खगिद-पणुसगिद-चिदुसंघ०-दोश्राणु॰-उज्जोव०-थिराथिर-सुभासुभ-जस०-अजस० सिया वं० सिया श्रवं०। यदि वं० णि० श्रणु० संखेँजिदिभागू०। वज्जणारा० सिया वं०। तं तु०। एवं वज्जणारायणं। सादीए वि एसेव भंगो। एवरि णारायणं० तं तु०। एवं णारायणं वि।

यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट भी बाँधता है और अनुत्कृष्ट भी बाँधता है। यदि अनु-त्कृष्ट बाँधता है तो उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट्र एक समय न्यूनसे लेकर पश्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार वज्रपंभनाराचसंहनन, प्रशस्त-विहायोगित, सुभग, सुखर और अदिय प्रकृतियोंके आध्यसे सिवकर्ष जानना चाहिए।

३६. न्युब्रोधपरिमण्डल संस्थानकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, ग्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, श्रसम्प्राप्तासपाटिका संहतन, बस चतुष्क दुर्भग, दुखर, श्रनादेय श्रौर निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है । जो नियमसे ब्रमुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। तिर्यञ्चगति, मन्ष्यगति, चारं संहनन, दो त्रानुपूर्वा, उद्योत, स्थिर, श्रस्थिर, श्रुभ, श्रश्चभ, यशकीर्ति श्रीर श्रयशकीर्ति इन प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित अवन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्या-तवाँ भाग न्यन स्थितिका बन्धक होता है । बज्रनाराचसंइननका कदाचित् बन्धक होता है स्त्रीर कदाचित स्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट भी वाँधता है स्त्रीर त्रानत्कृष्टभी बाँधता है। यदि ऋनुत्कृष्ट् बाँधता है तो उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर परुयका ग्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तककी स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार वेज्र-नाराचसंहननके ग्राश्रयसे सन्निकर्ष<sup>ै</sup>जानना चाहिए। तथा स्वाति संस्थानका भी यही भङ्ग होताहै । इतनी विशेषता है कि इसके नाराचसंहननका उत्क्रप्ट बन्धभी होताहै और अनुत्कृष्ट बन्ध भी होता है। यदि अनुत्कृष्ट बन्ध होता है तो उत्कृष्टसं अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसं लेकर परुषका स्रसंख्यातयाँ भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है । इन प्रकार नाराच-संहननके ऋश्रयसे सन्निकर्य ज्ञानना चाहिए।

३७. कुब्जक संस्थानकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगित, पर्चेन्द्रिय जाति, श्रीदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, अपशस्त विहायोगिति, त्रसचतुष्क, दुर्भग, दुसर, श्रमादेय श्रीर निर्माण इन प्रकृतियोका नियमसे वन्धक होता है। जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात्वाँ भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है। दो गित, दो संहनन, दो श्रानुपूर्वी, उद्योत,

त्राणु०-उज्जो०-थिराथिर-सुभासुभ-जस०-त्रजस० सिया वं० सिया त्रवं० । यदि वं० णिय॰ त्रयु० संखेजजदिभागू० । त्रद्धणारा० सिया वं० । तं तु० । एवं त्राद्ध-णारा० । एवं वामणसंठाणं वि । णवरि स्वीलियसंघ० सिया वं० । तं तु० । एवं स्वीलिय० ।

३८. पर० उक्क०द्विदिवं॰ तिरिक्क्खग०-एइंदि०-ऋोरालि॰-तेजा॰-क्र॰-हुंडसं० वएण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०-उप०-थावर-सुहुम-साधारण-दूभग--ऋणादेँ०--अजस०--णिमि॰ णिय० ऋणु० संखेँज्जदिभागू० । उस्सास-पज्जत्त० णियमा० । तं तु० । ऋथिर-असुभ० सिया वं० संखेँज्जदिभागू० । एवं उस्सास-पज्जत्त-थिर-सुभणामाणं ।

३६. त्रादाव० उक्क०द्विदिवं० तिरिक्खगदि-एइंदि०-श्रोरालि०-तेजा०--क०--हुंड०-वएण०४-तिरिक्खाणु०-त्रगु०४-थावर-वादर-पज्जत्त--पत्ते०--द्भग--श्रणादे०--

स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति और अयशःकीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। अर्धनाराचसंहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट भी बाँधता है और अनुत्कृष्ट भी बाँधता है। यदि अनुत्कृष्ट बाँधता है तो उत्कृष्ट भी बाँधता है। यदि अनुत्कृष्ट बाँधता है तो उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार अर्धनाराचसंहननके आश्रयसे सिक्षकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि यह कीलक संहननका कदा-चित् बन्धक होता है और अनुत्कृष्टका भी बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्टका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्टका बन्धक होता है तो उत्कृष्टका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्टका बन्धक होता है तो उत्कृष्टका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्टका बन्धक होता है तो उत्कृष्टका अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसो प्रकार कोलक संहननके आश्रयसे सिन्नकर्ष जानना चाहिए।

३८. परघातकी उत्छए स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, श्रोदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्डसंस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु, उपघात, स्थावर, स्क्ष्म, साधारण, दुर्भग, श्रनादेय, श्रयशःकीर्ति श्रौर निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जो अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ माग न्यून स्थितिका वन्धक होता है। उन्द्रुत्तस श्रौर पर्याप्त इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट का भी बन्धक होता है श्रौर श्रनुत्कृष्टका बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्टका बन्धक होता है तो उत्कृष्ट से श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है। श्रस्थिर श्रशुभका कदाचित् वन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार उल्लास, पर्याप्त, स्थिर, श्रौर शुभ प्रकृतियोंके श्राश्रयसे सिक्षकर्ष जाननः चाहिए।

३९. य्रातपकी उत्कृष्ट स्थितिकी बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानु-पूर्वी, त्रमुरुलघुचतुष्क, स्थावर, वादर, पर्याप्त, प्रत्येक, दुर्भग, श्रनादेय श्रौर निर्माण णिमि॰ णिय० वं०। णिय० ऋणु॰ संखेंज्जिदिभागू०। थिराथिर-सुभासुभ-अजस॰ सिया वं॰ सिया अवं०। यदि वं० णिय॰ ऋणु॰ संखेंज्जिदिभागू॰। जसगि० सिया०।तं तु॰। एवं उज्जोवं जसगित्तीए वि।

- ४०. अप्पसत्थ० उक्क॰द्विदिबं० तिरिक्खगदि-वीइंदि०-ओरालिय-तेजा०-क०-हुंडसं०-ओरालि०अंगो०-असंप०-वएण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-तस०४-दूभग-अणादे०-िएमि० एि० बं०। एिय० अणु० संखेँजिदिभागू०। उज्जो०-थिरा-थिर-सुभासुभ-जस०-अजस० सिया वं०। यदि बं० संखेजिदिभागू०। दुस्सर० णिय०। तं तु०। एवं दुस्सर०।
- ४१. बादर० उक्क०द्विदिबं० तिरिक्खगदि-एइंदि०-ऋोरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-वएरा०४-तिरिक्खाग्रु०-अगु०-उप०-थावर-सुहुम-अपज्जत्त०-अधिरादिपंच०--िएमि० एिय० बं० । ग्रि० अणु० संखेंज्जदिभागु० ।
  - ४२. मणुस॰-मणुसपज्जत्त-मणुसिखीसु मणुसत्रपज्जत्त० तिरिक्खगदिभंगो ।

प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे अनुस्कृष्ट संख्यतवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ और अयशःकीति इन प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुस्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। यशः कीर्तिका कद्। वित्ववन्धक होता है और कदाचित्अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्टका भी वन्धक होता है और अनुत्कृष्टका भो बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्टका बन्धक होता है, तो उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्थका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार उद्योत और यशःकीर्तिके आअयसे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

४०. श्रप्रशस्त विद्वायोगितकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यश्चगित, द्वीन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, श्रसम्प्राप्तास्पाटिका संद्वनन, वर्णचतुष्क, तिर्यश्चगत्याजुपूर्वी, श्रगुरुत्खुचतुष्क, त्रसचतुष्क, दुर्भग, श्रनादेय श्रौर निर्माण दन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। उद्योत, स्थिर, श्रिस्थर, श्रुभ, श्रशुभ यशःकीर्ति श्रौर श्रयशःकीर्ति इन प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है, तो श्रनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है। दुःस्वर प्रकृतिका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्टका भी बन्धक होता है श्रौर श्रनुत्कृष्टका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्टका बन्धक होता है, तो उत्कृष्टसे श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पर्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार दुःस्वर प्रकृतिके श्राश्रयसे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

४१. बाद्र प्रकृतिको उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव विर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, श्रोदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्डसंस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्या- नुपूर्वी, श्रगुरुलघु, उपधात, स्थावर, सूदम, श्रपयाप्त, श्रस्थिर आदि पाँच श्रीर निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे श्रगुतकृष्ट संख्यातयाँ भागन्यन स्थितिका बन्धक होता है।

४२. सामान्य मनुष्य, मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यनी श्रौर मनुष्य श्रपर्याप्त जीवोंमें तिर्य-

णवरि आहारदुगं तित्थयरं ओघं।

४३. देवगदीए देवेसु णाणावर०-दंसणावर०-वेदणी०-मोहणी०-त्रायुग०-गोद०-त्रंतराइ० त्रोघं। तिरिक्खग० उक्क०द्विदिबं० त्रोरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-वएण०४-तिरिक्खाणु०-त्रगु०४-बादर-पज्जत्त-पत्तेय०-त्र्राथरादिपंच-िण्मि० णि० वं०। णि० तं तु०। एईदि०-पंचिदि-त्र्रोरालि०त्रंगो०-त्र्रसंपत्तसेव०-त्रादाउज्जो०-त्रप्पतत्थ०-तस-थावर-दुस्सर० सिया बं०। यदि बं० तं तु०। एवमेदाणि ऍक-मेंक्कस्स। तं तु०। सेसाणं ऐरइयभंगो।

४४. भवण०-वाणवें०-जोदिसि॰-सोधम्मीसाण ति तिरिक्खगदि० उक्क॰िटि-वं॰ एइंदि०-ञ्रोरालि०-तेजा॰-क०-हु'ढ॰-वएण०४-तिरिक्खाणु॰-त्रमु०-थावर-बादर-पज्जत्त-पत्ते०-त्र्रथिरादिपंच-िष्मि॰ िष्० बं०। िण० तं तु॰। त्र्रादाउज्जोव०

ञ्चगतिके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि ग्राहारक द्विक ग्रौर तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग श्रोघके समान है।

४३. देवगतिमें देवोंमें क्षानावरण, दर्शनावरण, वेदनीय, मोहनीय, श्रायु, गोत्र श्रौर अन्तराय इनके अवान्तर भेदोंका भक्न ओघके समान है। तिर्यञ्चगतिकी उत्रुष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव श्रीदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुं इसंस्थान, वर्ण-चतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलचु चतुष्क, बादर, पर्याप्त प्रत्येक, अस्थिर आदि पांच श्रीर निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्टका भी यन्धक होता है श्रीर श्रनुत्कृष्टका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्टका बन्धक होता है, तो नियमसे उत्कृष्टसे श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। एकेन्द्रिय जाति, पञ्चेन्द्रियज्ञाति, श्रीदारिक श्रांगीपांग, श्रसम्ब्राप्तासुपाटिका संहनन, श्रातप, उद्योत, श्रव्रशस्त विद्वायोगति, श्रस, स्थावर श्रीर दुःस्वर इन प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् अवन्धक होता है | यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर त्रानुस्कृष्ट स्थितिका भो वन्धक होता है । यदि श्रनुस्कृष्ट स्थितिका **बन्धक होता** है तो नियमसे उत्कृष्टसे अनुत्कृष्टु,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यतवी भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन प्रकृतियोंका परस्पर सम्निकर्ष होता है। जो उत्कृष्टका भी बन्धक होता है श्रीर श्रवुत्कृष्टका भी बन्धक होता है। यदि श्रवुत्कृष्टका बन्धक होता है तो उत्कृष्टसे श्रमुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यन तक स्थितिका बन्धक होता है। शेष प्रकृतियोंका भक्त नारिकयोंके समान है।

४४. भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतियी श्रीर सीधर्म—पेशान कल्पके देवोंमें तिर्यञ्चगति की उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव एकेन्द्रिय जाति, श्रीदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु, स्थावर, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक शरीर, श्रस्थिर आदि पाँच श्रीर निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टसे श्रनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवाँभाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। श्रीर श्रव्यतिका बन्धक होता है। यदि बन्धक

सियाः । तं तुः । एवमेदाणि ऍकमेक्स्स । तं तुः । पंचिदियः उक्तः द्विदियं । तिरिक्खयः - ऋोरालिः - तेजाः - कः - वर्षणः ४ – तिरिक्खाणः - ऋगुः ४ – वादर - पज्जत्त - पत्तेयः - ऋथिरादिपंच - िष्मिः णिः वंः । िष्णः ऋणः संसें ज्जिदिभागः । हुं डः - उज्जोः सियाः संसें ज्जिदिभागः । वामणसंदाः - खीलियसंघः - ऋसंपत्तः सियाः । तं तुः । श्चिमेदाणि एक्कमेक्स्स । तं तुः । सेसाणं देवोधं ।

४५. सण्कुमार याव सहस्सार ति णिरयोघं । ऋाण्द याव णवगेवज्जा ित णाणाव०-दंसणाव०-वेदणी०-मोद०-श्रंतरा० श्रोघं । मिच्छ० उक्क०द्विदिवं० सोल-

होता है तो उत्कृष्टका भी बन्धक होता है श्रीर श्रमुत्कृष्टका भी बन्धक होता है। यदि श्रमत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर परयका ग्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इने प्रकृतियां-का परस्पर सन्तिकर्प होता है और ऐसी अवस्थामें वह जीव उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धुक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। पञ्चेन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्जगति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्जगत्या-नुपूर्वी, ऋगुरुलघु चतुष्क, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, श्रस्थिर श्रादि पाँच श्रीर निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यन स्थितिका बन्धक होता है। हण्ड संस्थान और उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रमुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। वामन संस्थान, कीलक संहनन श्रीर श्रसम्प्राप्तासुपाटिका संहतनका कदाचित बन्धक होता है और कदाचित अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है ग्रीर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट्रएक समय न्यूनसे लेकर पल्यका त्रसंख्यातवाँ भाग न्युनतक स्थितिका बन्धक होता है। श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, श्रप्रशस्त-विहायोगति, त्रस और दःस्वरका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्या तवाँ भाग न्यनतक स्थितिका बन्धक होता है। इस प्रकार इनका परस्पर एक दूसरेका सिन्नकर्ष होता है और तब उत्कृष्ट स्थितिका भी यन्धक होता है और श्रदुतकृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुरकृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर परुयका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। श्रेप प्रकृतियोंका भक्त सामान्य देवोंके समान है।

४४. सनत्कुमार कल्पसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें सामान्य नारिकयोंके समान भक्त है। श्रानत कल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयकतकके देवोंमें शानावरण, दर्शनावरण, वेदनीय, गोत्र ग्रीर अन्तरायके अवान्तर भेदोंका भक्त ग्रोघके समान है। मिथ्यात्वकी सक०-णवुंस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं० णिय० | तं तु० | एवमेदाओ एकमेकस्स | तं तु० | इस्थि० उक्क०हिदिबं० मिच्छ०-सोलसक०-अरदि-सोग-भय-दुगुं० णिय० वं० | णि० अणु० संसेंजनदिभागू० | पुरिस० उक्क०हिदिबं० मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुं० णिय० वं० | णिय० संसेंजनदिभागू० | इस्स०-रदि० सिया | तं तु० | अरदि-सोग० सिया० संसेंजनदिभागू० | इस्सं० उक्क०हिदिबं० मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुंगुं० णिय० वं० संसेंजनदिभागू० | पुरिस० सिया० | तं तु० | इत्थि०-णवुंस० सिया० संसेंजनदिभागू० | रदि० णिय० वं० | तं तु० | एवं रदीए वि० |

उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव सोलह कषाय, नपुंसकवेद, अरित, शोक, भय श्रीर जुगुप्साका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवीं भाग, न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इनका परस्पर सन्निकर्ष होता है और तब इनकी स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टसे श्रनुत्कृष्ट एक समय, न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्याः तवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव मिध्यात्व, सोलह कवाय, ग्ररति, शोक, भय ग्रीर जुगुप्साका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग होन स्थितिका बन्धक होता है । पुरुषवेदकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव मिथ्यात्व, स्रोलह कषाय, भय श्रीर जुगुप्साका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवीं भागहीन स्थितिका बन्धक होता है। हास्य श्रीर रतिका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका ऋसंख्यातचाँ भाग न्यूनतक स्थितिका वन्धक होता है। अरित श्रौर शोकका कदाचित् बन्धक होता है त्रीर कदाचित् अवन्धक होता है। यदि धन्धक होता है तो नियमसे श्रुतुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। हास्य की उत्क्रम् स्थितिका बन्धक जीव मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्साका नियमसे बन्धक होता है । जो ग्रनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है । पुरुषवेदका कदाचित बन्धक हीता है और कदाचित अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका ग्रसंख्यातवां भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे प्रमुक्तृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। रितका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्टस्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट, एक समय न्यनसे लेकर प्रस्यका स्रसंख्यातवीं भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार रतिकी श्रपेद्या सन्निकर्ष जानना चाहिए।

मूलप्रती हस्स-रिद उक्क० इति पाठः

४६. मणुसगदि ॰ उक्त०द्विदिवं०' पंचिदि०-स्रोरालि ॰ तेजा०-कम्मइय०-हु'ड ०-स्रोरालि ॰ श्रंगो ०-स्रसंपत्तसेव०-वराण ०४-मणुसाणु०-स्रगु०४-स्रप्पसत्थ०-तस०४--स्रथिरादिस्र०-णि ० णिय० वं० । णि० तं तु० । एवमेदास्रो ऍक्तमेक्स्स । तं तु० ।

४७. समचदु० डक्क०द्विदिबं० मणुसग०-पंचिदिय-त्रोरालिय-तेजा०-क०-त्रोरालि०त्रंगो०-वण्ण०४-प्रणुसाणु०-त्रगु०४-तस०४-णिमि० णिय० संसेंज्जदि-भागू०। वज्जरिसभ०-पसत्थ०-थिरादिछ० सिया०। तं तु०। पंचसंघ०-त्रथिरादि-छ० सिया० संसेंज्जदिभागूणं०। यात्रो तं तु समचदुरसंठाणेण तात्रो समचदुर० सेसभंगात्रो। सेसपगदीणं मणुसगदिसहगदात्रो णिय० संसेंज्जदिभागू०। यात्रो सियात्रो बं० तात्रो तं तु० वा संसेंजजदिभागूणं वा बंयदि। तित्थयरं देवभंगो।

४६. मनुष्यगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रीदारिक शरीर, तैजल शरीर, कार्मणशरीर, हुण्डलंस्थान, श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, श्रासम्प्राप्तास्पादिका संहनन, वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघुचतुष्क, श्रप्रशस्त विहायोगित, असचतुष्क, श्रास्थर श्रादि छह और निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन प्रकृतियोंका प्रस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए और तब उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टले श्रनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पत्थका श्रसंख्यातवां भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है।

४७. समचतुरस्र संस्थानकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव मनुष्यगति, पञ्चे न्द्रिय जाति, श्रौदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मगुशरीर, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुत्यु चतुष्क, त्रस चतुष्क और निर्माण इन प्रसृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे अनुत्कृष्ट संस्थातवां भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। बजर्षम नाराच संहनन, प्रशस्त विहायोगति, श्रौर स्थिर श्रादि छहका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् अयन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है त्रौर त्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अमुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवां भाग न्यनतक स्थितिका बन्धक होता है। पांच संहतन ग्रौर ग्रस्थिर श्रादि छहका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे अनुत्रुष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। यहां पर जिन प्रकृतियोंका समचतुरस्र संस्थानके साथ उत्कृष्ट स्थितिबन्ध होता है या एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्या-तवां भाग न्यूनतक अनुत्कृष्ट स्थितिबन्ध होता है उनका समचतुरस्र संस्थानके समान भक्क जानना चाहिए। शेष प्रकृतियोंका मनुष्यगतिके साथ नियमसे संख्यातवां भाग न्यून श्रनु-त्कृष्ट स्थितिबन्ध होता है। उसमें भी जिनका कदाचित् बन्ध होता है उनका या तो उत्कृष्ट या श्रतुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिबन्ध होता है या संख्यातवां भाग न्यून स्थितिबन्ध होता है। तीर्थङ्कर प्रकृतिका भक्क देवोंके समान है।

<sup>1.</sup> मुलप्रती—हिदिबं० पंचणा० श्रोरा इति पाठः।

४८. ऋणुदिस याव सञ्बद्घा ति पंचणा०-छदंसणा०-सादासा०-बारसक०-सत्तर्णोक०-पंचंत० स्रोघं । मणुसगदि० उक्त०हिदिवं० पंचिदि०-स्रोरालि०-तेजा०-क०-समचदु०--त्र्योरालि०त्र्यंगो०--वज्जरिसभ०--वरुख०४--मणुसाणु०--त्र्युरु०४--पसन्थ०--तस०-४-अथिर-असुभ-सुभग-सुस्सर-आदेँ०-अजस०-िएमि० एिय०। तं तु०। तित्थय० सिया० । तं तु० । एवमेदात्रो ऍकमेर्कस्स । तं तु० । थिर० उक्क०द्विदिवं० मणुसगदि० णियमा संखेँजिदिभागू० । एवं धुवियात्रो सन्वात्रो । सुभ-जस० सिया० तं तु० । त्रसुभ-त्रजस०-तित्थय० सिया० संखेँज्जदिभागू० वं० । एवं सुभ-जसगित्ति० । ४६. सव्वएइंदि०-सव्वविगलिंदि० तिरिक्खअपज्जेत्तभंगो । गावरि वीचारहा-

णाणि णादव्वाणि भवंति । 'पंचिंदिय-पंचिंदियपङ्जत्ता० सव्वपगदी**णं** श्रोर्घ ।

४८. श्रमुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, सातावेदनीय, श्रसातावेदनीय, बारह कषाय, सात नोकषाय श्रीर पाँच श्रन्तरायका भक्क श्रोघके समान है। मनुष्यगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्र संस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वज्र-र्षभ नाराच संहनन, वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, ऋगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, त्रसचतुष्क, श्रस्थिर, त्रशुम, सुभग, सुस्वर, त्रादेय, त्रयशकीर्ति श्रीर निर्माण इन प्रकृतियों-का नियमसे वन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर अनुत्कृष्ट स्थिति-का भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टसे श्रमुत्कृष्ट्र,एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। तीर्थ-क्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्हृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है श्रौर श्रनुत्हृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि 🕒 श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टसे श्रमुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवौँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सम्निकर्ष होता है। जो उत्कृष्ट भी होता है श्रीर अनुत्कृष्ट भी होता है। यदि अनु-त्कृष्ट होता है, तो उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका होता है। स्थिर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्घ करनेवाला जीव मनुष्यगतिका नियमसे अनुस्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार सब ध्रुव प्रकृतियोंका अनुत्कृष्ट, संख्यातवीं भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। शुभ और यशःकीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। श्रशुभ, क्रयशःकीर्ति क्रौर तीर्थङ्कर इन प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है क्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रद्धत्कृष्ट संख्यातवॉ भाग न्यून स्थिति-का बन्धक होता है। इसी प्रकार ग्रुभ श्रौर यशःकीर्तिकी श्रपेत्ता सन्निकर्ष कहना चाहिए।

४६. सब एकेन्द्रिय श्रीर सब विकलेन्द्रिय जीवाँका भङ्ग तिर्यञ्च अपर्याप्तकाँके समान है। इतनी विशेषता है कि इनके वीचार स्थान श्वातन्य हैं। पञ्चेन्द्रिय श्रौर पञ्चेन्द्रिय पर्याप्त

३. मूलपती पंचिदिय-तस ऋपञ्जत्ता इति पाठः ।

पंचिदियत्रपञ्जत्ताः तिरिक्खत्रपञ्जत्तभंगो । पंचकायाणं 'पञ्जतापज्जत्ताणं तिरिक्ख-श्रपञ्जत्तभंगो । एवरि एइंदिय-पंचकायाणं यम्हि संखेज्जिदिभागहीणं तिम्हि श्रसं-खेज्जिदिभागहीणं बंधिद । तस-तसपञ्जत्ताः श्रोधं । तसश्रपञ्जत्ताः 'तिरिक्ख-श्रपञ्जत्तभंगो । पंचमण् -पंचविच -कायजोगिः श्रोधं । श्रोरालिकायजोगिः मणुसभंगो ।

५०. त्रोरालियमिस्से देवगदि० उक्त०हिदिबं० पंचिदि०-तेजा०-क०-समचदु०-वएण्०४-त्रगु०४-पसत्थ०-तस०४-त्रथिर-त्रमुभ-सुभग-सुस्सर-त्रादेँ०-त्रजस०-िएमि० िएय० । त्रणु० एि० संखेंज्जगुण्हीएं० । वेडव्वि०-वेडव्वि०त्रंगो०-देवाणु०-णियमा । तं तु० । तित्थय० सिया० । तं तु० । एदात्रो पगदीत्रो तित्थयरेण सह एक्तमेंक्रस्स तं तु० काद्व्वा । सेसाएं पंचिदियतिरिक्त्वत्रपज्जसभंगो ।

५१. वेडव्वियका॰ देवोधं । एवं चेव वेडव्वियमिसस॰ । एवरि यात्रो तं तु०

जीवों से सब प्रकृतियों का सङ्ग श्रोधके समान है। तथा पञ्चेन्द्रिय श्रपर्याप्त जीवों का सङ्ग तिर्यञ्ज श्रपर्याप्तकों के समान है। पाँच स्थावर काय तथा इनके पर्याप्त श्रीर अवर्याप्त जीवों में सिन्नकर्षका सङ्ग तिर्यञ्ज श्रपर्याप्तकों के समान है। इतनी विशेषता है कि सब एकेन्द्रिय श्रीर पाँचों स्थावर कायिक जीवों के, जिनका संख्यातवां भाग हीन बन्ध कहा है, उनका असंख्यातवां भाग हीन बन्ध कहा है, उनका असंख्यातवां भाग हीन बन्ध कहा है। अस श्रीर श्रस पर्याप्त जीवों के सब प्रकृतियों का सङ्ग श्रीधके समान है। तथा अस श्रपर्याप्तकों के तिर्यञ्ज श्रपर्याप्तकों के समान सङ्ग है। पाँचों मनोयोगी, पाँचों चवनयोगी श्रीर काययोगी जीवों के सब प्रकृतियों का सङ्ग श्रीधके समान है। तथा श्रीदारिक काययोगी जीवों में सब प्रकृतियों का सङ्ग मनुष्यों के समान है।

५०. श्रीदारिकिमश्रकाययोगी जीवोंमें देवगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरक्रसंथान, वर्णचतुक्क, अगुरुल्घुचतुक्क, प्रशस्त विहायोगित, असचतुक्क, श्रस्थिर, श्रग्नुम, सुभग, सुसर, श्रादेय, श्रयशाकीर्ति श्रीर निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका वन्धक होता है। वैक्षियिक शरीर, वैक्षियिक श्राङ्गीणङ्ग श्रीर देव-गत्यानुपूर्वी इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। त्रिर्थकर प्रकृतिका कर्माचन्यक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। त्रिर्थकर प्रकृतिका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टसे श्रनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पत्थका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। इन प्रकृतियोंको तिर्थकर प्रकृतिके साथ परस्पर उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक्रपसे ग्रीर एक समय कम पत्थके श्रसंख्यातवें भाग न्यून तक श्रनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक्रपसे कहना चाहिए। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च श्रपर्यातकोंके समान है।

४१. वैकियिक काययोगी जीवोंमें सब प्रकृतियोंका भक्त सामान्य देवोंके समान है। इसी प्रकार वैकियिकमिश्रकाययोगी जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि जो पर-

१. मूलप्रतौ पदत्रता श्रपञ्जत्तासं इति पाठः । २. मूलप्रतौ तिरिक्खपदजत्त इति पाठः ।

पगदीत्रो तात्रो ऍकमेर्कस्स तं तु० । सेसात्रो संखेँज्जदिभागूणा बंधदि ।

- ४२. त्राहार॰-त्राहारमि॰ पंचणा॰-द्यदंसणा०-दोवेदणी॰-पंचंत॰ त्र्याघं। कोधसंज० उक्क॰हिदिबं० तिषिणसंज॰-पुरिस॰-त्र्यरदि-सोग-भय-दुगुं० णिय० बं०। तं तु०। एवमेदात्रो ऍकमेक्स्स। तं तु०। हस्स० उक्क०हिदिबं० चदुसंज०-पुरिस०-भय-दुगुं० णिय० संखेजितिभागूणं बं०। रदी० णिय०। तं तु०। एवं रदीए।
- ४३. देवगदि॰ उक्क०हिदिबं० पंचिदियादिपगदीस्रो णिय० बं०। तं तु०। तित्थय॰ सिया॰। तं तु०। एवं देवगदिसहगदास्रो ऍक्कमेंक्स्स। तं तु०। थिर०

स्पर उत्कृष्ट स्थितिबन्धवाली या एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवां भाग न्यून तक अनुत्कृष्ट स्थितिबन्धवाली प्रकृतियाँ हैं, उनका यह जीव परस्पर या तो उत्कृष्ट स्थितिबन्ध करता है या उत्कृष्टकी अपेला एक समय कमसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनकक अनुत्कृष्ट स्थितिबन्ध करता है और शेषका संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिबन्ध करता है और शेषका संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिबन्ध करता है।

४२. श्राहारककाययोगी श्रीर श्राहारकिमश्रकाययोगी जीवोंमें पाँच झानावरण, छह दर्शनावरण, दो वेदनीय श्रौर पाँच श्रन्तराय प्रकृतियोंका मङ्ग श्रोघके समान है । क्रोध संज्व-लनकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तीन संज्वलन, पुरुषवेद, ऋरति, शोक, भय श्रीर जुगुप्साका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर **अ**नुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इनका परस्पर सन्निकर्ष होता है। ग्रौर तब इनकी उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि ब्रानुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असं-ख्यातवाँ माग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। हास्यकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव चार संज्वलन, पुरुषवेद, भय श्रौर जुगुत्साका नियमसे बन्धक होता है। जो अनुत्कृष्ट् संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। रतिका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्रुष्ट स्थितिका यन्धक होता है तो नियमसे उन्कृष्टसे अनुत्रुष्ट एक समय न्यूनसे छेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भागहीनतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार रितके ग्राश्रयसे भी सन्निकर्ष जानना चाहिए।

५३. देवगितकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चिन्द्रिय जाति श्रादि प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है। तीर्थकर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। वि अनुत्कृष्ट स्थितिका परस्पर समिक्क होता है। तब यह जीव उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। तब यह जीव उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका

उक्क • हिदिबं • देवगदिश्रद्वावीसं शिय • बं • । संखें ज्जिदिभा • । सुभ-जस • सिया • । तं तु • । श्रसुभ-श्रजस • सिया • संखें ज्जिदिभागू • । एवं सुभ-जस • । तित्थ • उक्क • - हिदिबं • देवगदि-पंचिंदि • श्रादिश्रद्वावीसं पगदीश्रो शिय • संखें ज्जिदिभागुणं बं • ।

४४. कम्मइ० पंचणा०-एवदंसणा०-सादासा०-गोद०-पंचंत० श्रोघं । मिच्छ० उक्क हिदिबं० सोलसक ०- एाबुंस ० - अरदि-सोग-भय-दुगुं० । एाय० । तं तु० । एवमेदात्रो ऍक्रमेर्कस्स । तं तु० । इत्थिवे॰ उक्क०ड्विदिबं० मिच्छ०-सोलसक०-त्र्रास्ट-सोग-भय-दुर्गु ० णिय० संखें ज्ञदिभागूणं वं० । पुरिस० उक्क० हिदिवं० इत्थिभंगो । इस्स-रदि० सिया० । तं तु० । ऋरदि-सोग सिया० संखेर्जनिदभागुणं० । इस्स० बन्धक होता है तो उत्कृष्टसे अनुत्कृष्टुएक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। स्थिर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव देवगति श्रादि श्रद्वाईस प्रकृतियोंका नियमसे षन्धक होता है। जो श्रप्रत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग-द्दीन स्थितिका बन्धक होता है। शुभ और यशकीर्ति प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टसे श्रतुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। अशुभ और अयशःकीर्ति प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार ग्रुम और यशःकीर्ति प्रकृतियोंके आश्रयसे सन्निकर्ष जानमा चाहिए। तीर्थंकर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव देवगति श्रीर

पञ्चेन्द्रिय जाति श्रादि श्रद्वाईस प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है । जो नियमसे

श्रमुस्कृष्ट संख्यात**वाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता** है।

४४. कार्मण काययोगी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, साता-श्रसाता वेदनीय, दो गोत्र ग्रीर पाँच ऋन्तराय प्रकृतियोंका भङ्ग श्रोघके समान है। मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव सोलह कषाय, नपुंसकवेद, श्ररति, शोक, भय श्रीर जुगुप्साका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रनुत्हृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टसे श्रमुत्कृष्ट पक समय न्यूमसे लेकर पत्यका श्रसंख्य।तर्वा भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन सबका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। इनमेंसे किसी एककी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक शेषकी उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है।यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट, एक समय न्युनसे लेकर पर्यका असंख्यातवाँ भाग न्युनतक स्थितिका बन्धक होता है। स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव मिथ्यात्व, सोलह कषाय, श्ररति,शोक, भय श्रीर जुरुप्सा इनका नियमसे वन्धक होता है। जो त्रमुत्कृष्ट संख्यातवाँ भागहोन स्थितिका बन्धक होता है। पुरुषवेदको उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवका भक्न स्त्रीवेदके समान है। यह हास्य श्रौर रतिका कदासित् बन्धक होता है और कदाचित् श्रवन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टको श्रपेक्ता श्रनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका ऋसंख्यातयाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। ऋरति

उक्क ० द्विवं ॰ मिच्छ ॰ सोलसक ॰ भयदुगुं ० णिय० संसें जिंतिभागू ० । इत्थि ॰ । णावुं स ॰ सिया वं ॰ संसें जिंतिभागू ० । पुरिसवे ॰ सिया ० । तं ॰ तु ॰ । रदि ॰ णिय ० । तं तु ० । एवं रदी ए ।

४५. तिरिक्लग० उक्क०द्विदिबं० एइंदि०-पंचिदि०-श्रोरालि०श्रंगो०-श्रसंपत्त०-पर०-उस्सा०--श्रादाउज्जो०--श्रपसत्थ०--तस-थावर--बादर--सुहुम--पज्जत्त--पत्तेय०--साधार०-दुस्सर० सिया० । तं तु० । श्रोरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-वएए०४-तिरि-क्खाणु०-त्रगु०-उप०-श्रथिरादिपैच०-णिभि० एियमा० । तं तु० । एवं तिरिक्खगिट-भंगो श्रोरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-वएए०४-तिरिक्खाणु०-श्रगु०-उप०-श्रथिरादिपंच--णिभिए० ति ।

त्रीर शोकका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित् ज्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका वन्धक होता है। हास्यकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव मिथ्यात्व, सोलह कपाय, मय और जुगुप्साका नियमसे वन्धक होता है। जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भागहीन स्थितिका वन्धक होता है। स्निवेद और नपुंसकवेदका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भागहीन स्थितिका बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है । यदि वन्धक होता है । यदि वन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका नियमसे बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पत्थका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है । रितका नियमसे बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है तो उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पत्थका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार रितके आध्यसे भी सन्वकर्ष जानना चाहिए ।

४४. तिर्यञ्चगतिकी उत्छए स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव एकेन्द्रिय जाति, पञ्चेन्द्रियजाति, श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, श्रसम्प्राप्तास्पाटिका संहनन, परधात, उच्छ्नास, श्रातप, उद्योत, श्राप्रशस्त विहायोगिति, त्रस, स्थावर, वादर, स्हम, पर्याप्त, प्रत्येक, साधारण श्रीर दुःस्वर इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्हर्ण स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रमुत्हर्ण स्थितिका भी वन्धक होता है तो उत्हर्ण स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रमुत्हर्ण स्थितिका वन्धक होता है। श्रीदारिक श्ररीर, तेजस श्रीर, कार्मण श्ररीर, हुएड संस्थान, वर्ण चतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रमुहल्ख, उपधात, अस्थिर श्रादि पाँच, श्रीर जिन्ह्रण स्थितिका भी वन्धक होता है। जो उत्हर्ण स्थितिका वन्धक होता है। जो उत्हर्ण स्थितिका वन्धक होता है श्रीर श्रमुत्हर्ण स्थितिका वन्धक होता है। जो उत्हर्ण स्थितिका वन्धक होता है श्रीर श्रमुत्हर्ण स्थितिका वन्धक होता है। यदि श्रमुत्हर्ण स्थितिका वन्धक होता है तो उत्हर्ण स्थितिका वन्धक होता है। यदि श्रमुत्हर्ण स्थितिका वन्धक होता है तो उत्हर्ण स्थितिका समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यान्तयाँ भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार श्रीदारिक श्रिर, तैजस श्ररीर, कार्मण श्रीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रमुहल्खु, उपघात, श्रस्थिर श्रादि पाँच श्रीर निर्माण इन प्रकृतियोंके उत्हर्ण स्थितिबन्धके श्राश्रयसे सन्निकर्षका भङ्ग तिर्यञ्च गतिके समान जानना चाहिए।

५६. मणुसगदि उक्त ० द्विदिवं० पंचिदि०-श्रोरालि०-तेजा०-क०-श्रोरालि०-श्रंगो०-वर्गण०४-श्रगु०-उप०-तस-बादर-पत्ते०-श्रथिरादिपंच-णिमि० णिय० वं० । णि० श्रगु० संखेँज्जदिभागू० । तिरिणसंठा०-तिरिणसंघ०-श्रप्पसत्थ० पर०-उस्सा०-पज्जत्तापज्जत्त०-दुस्सरं सिया संखेँज्जदिभागू० । मणुसाग्रु० णिय० । तं तु० । एवं मणुसाणु० ।

५७. देवगदि० उक्क०द्विदिबं० पंचिदि०-तेजा०-क०-समचदु०--वरण०४-त्रगु०४-पसत्थवि०-तस०४-त्र्रथिर- श्रमुभ-सुभग-सुस्सर-त्रादे०-श्रजस०-णि० णिय० संखेंडजगुणहीणं बं० । वेउव्वि०-वेउव्वि०श्रंगो०-देवाणु० णि० बं० । णि० तं तु० । तित्थयरं सिथा० । तं तु० । एवं देवगदि०४ ।

प्र⊏. एइंदि० उक्क०द्विदिवं० तिरिक्खग०-स्रोसिख०-तेजा०-क०-हुंड०-

५६. मनुष्यगितकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रीदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघु, उपघात, त्रस, बादर, प्रत्येक, श्रस्थिर श्रादि पाँच श्रीर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भागद्दीन स्थितिका बन्धक होता है। तीन संस्थान, तीन संहमन, श्रप्रशस्त विहायोगित, परघात, उच्छ्वास, पर्यात, श्रपर्यात श्रीर दुःखर इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भागद्दीन स्थितिका बन्धक होता है। मनुष्यगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। वियमसे उत्कृष्ट श्रितका भी बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट श्रितका श्रीदा श्रनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातचाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार मनुष्यगत्यानुपूर्वीके श्राश्रयसे सन्निकर्ष जानमा चाहिए।

४७. देवगतिकी उत्हृष्ट् स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजसश्रीर, कार्मणश्रीर, समचतुरस्र संस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, त्रसचतुष्क, अस्थिर, अश्रभ, सुभग, सुस्वर, आदेय, अथशःकीर्त और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है। जो अनुत्कृष्ट संख्यात गुण्हीन स्थितिका वन्धक होता है। वैकिथिकश्रीर, वैकिथिक आङ्गोपाङ्ग और देवगत्यानुपूर्वा इनका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थिति का भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थिति का भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थिति का बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टभी अपेचा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। तीर्थकर प्रकृतिका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है। दसी प्रकार देवगित चतुष्कके आसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार देवगित चतुष्कके आश्रयसे सिक्षकर्ष जानमा चाहिए।

४८. एकेन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिक। बन्ध करनेवासा जीव तिर्यक्षगति, श्रीदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मगुरीर, हुएड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यक्षगत्यानुपूर्वी, श्रमुरुलघु, वर्गण ०४-तिरिक्खागु॰-अगु॰-उप॰-अथिरादिपंच-शिमि० शि० बं॰ । तं तु॰ । पर०-उस्सा०-आदाउज्जो॰-वादर-सुहुम-पज्जत्तापज्जत्त--पत्तेय०--साधार० सिया० । तं तु० । एवं थावर० । बीइं॰-तीइंदि॰-चदुरिं०-चदुसंटा०-चदुसंघ०-अपज्ज० ओघं ।

५६. समचदु० उक्त ० द्विविं ० पंचिदि०-श्रोरालि०-तेजा०-क०-श्रोरालि०श्रंगो०-वर्गण०४-तस०४-ग्रिमि० णिय० संखेंज्जदिभागूर्ण० । दोगदि-पंचसंघ०-दोश्राणुपु०-उज्जो०-श्रणसत्थ०-श्रथिरादिञ्ज० सिया० संखेंज्जदिभागू० । वज्जरि०-पसत्थ०-थिरादिञ्ज० सिया० । तं तु० । एवं वज्जरिस०-पसत्थ०-सुभग-सुस्सर-श्रादें०-जस० ।

६०. पंचिदि॰ उक्क०द्विदिवं० तिरिक्खग०-त्रोरालि॰--तेजा०--क॰--हुंड०--त्रोरालि॰ त्रंगो॰-त्रसंपत्त॰--वराग्र०४--तिरिक्खाग्रु०--त्रग्र०४--त्रप्यसत्थ०--तस०४--

उपघात, श्रस्थिर श्रादि पाँच श्रौर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। परघात, उल्लास, श्रातप, उद्योत, वादर, स्क्ष्म, पर्यात, श्रपर्यात, प्रत्येक श्रौर साधारण इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेका श्रनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे खेकर पत्थका श्रसंख्यातवीँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार स्थावर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका श्रालम्यन लेकर सन्निकर्ष जानना चाहिए। द्वीन्द्रिय जाति, त्रीन्द्रियजाति, चतुरिन्द्रिय जाति, चार संस्थान, चार संहनन श्रौर श्रपर्यात इन प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका श्रालम्बन लेकर सन्निकर्ष श्रोघके समान जानना चाहिए।

४९. समचतुरस्र संस्थानकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक श्ररीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, त्रसचतुष्क श्रौर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है। जो अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भागहीन स्थितिका बन्धक होता है। दो गित, पांच संहनन, दो श्रानुपूर्वी, उद्योत, श्रमशस्त विद्वायोगिति श्रौर श्रस्थर श्रादि छह इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। वद्र वन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है श्रौर कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टको श्रपेचा श्रमुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार वर्ज्यभ नाराच संहनन, प्रशस्त विद्यायोगित, सुभग, सुखर, शादेय, श्रौर यशःकीर्ति इन प्रकृतियाँके उत्कृष्ट स्थितिवन्धका श्रवलम्बन लेकर सन्निकर्ष जानना चाहिए।

६०. पञ्चेन्द्रियजातिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, श्रौदा-रिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुएड संस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, श्रसम्प्राप्ता-सृपाटिकासंहनन, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु चतुष्क, श्रप्रशस्त विहायोगति, अधिरादिद्यव-िश्व शियव । तं तुव । उज्जोव सियाव । तं तुव । एवं पंचिदियभंगो अोरालिव्अंगोव-असंपत्तव-परव-उस्साव-अप्पसत्थव-तसवश्व-दुस्सरा ति । श्विरि परव-उस्साव-बादर-प्रजत्त-पत्तेव उक्तविदिवंव एइंदिव-पंचिदिव-ओरालिव्अंगोव-अप्पसत्थव-तस-थावर-दुस्सर सियाव । तं तुव ।

६१. श्रादाव० उक्क०द्विदिवं० तिरिक्खगदि-एइंदि०-श्रोरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-वरुण०४-तिरिक्खाणु०--श्रगु०४--थावर--वाद्र--पज्जत्त-पत्ते०--श्रथिरादिपंच--णिमि० णिय० वं० | तं तु० | उज्जो० तिरिक्खगदिभंगो | एविर सुहुम-श्रपज्जत्त-साधारुणं वज्ज० |

६२. सुहुम० उक्क०द्विदिबं० तिरिक्खगदि-एइंदि०-स्रोरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-वरुण०४-तिरिक्खाणु०-स्रगु०-उप०-थावर-स्रपङ्जत्त-साधारण-स्रथिरादिपंच-स्मिक

त्रसचतुष्क, श्रस्थिर त्रादि छह श्रौर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुस्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुस्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टको श्रपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका त्रसंख्य।तवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है । उद्योत प्रकृतिका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उन्छए स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिको अपेक्त श्रमुत्कृष्ट,एक समय न्यनसे लेकर पत्य-का श्रसंख्यातवाँ भाग न्यम तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार पञ्चेन्द्रिय जातिके समान श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, श्रसम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, परघात, उच्छ्वास, श्रप्रशस्त विद्वायोगति, त्रस चतुष्क श्रौर दुःस्वर इन प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिवन्धका श्रालम्बन लेकर सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनो विशेषता है कि परधात, उच्छ्रास, बादर, पर्याप्त श्रौर प्रत्येक प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिका धन्ध करनेवाला जीव एकेन्द्रिय जाति, पञ्चेन्द्रिय जाति, त्रीदारिक त्राङ्गोपाङ्ग, त्रप्रशस्त विहायोगति, त्रस, स्थावर त्रीर दुःखर इनका कदाचित बन्धक होता है और कदाचित अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्रुष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्रुष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेजा श्रानुत्कृष्ट,एक समय न्यनसे लेकर पल्यका ग्रसंख्यातवाँ भाग न्युन तक स्थितिका बन्धक होता है।

६१. त्रातपकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, पकेन्द्रिय जाति, श्रीदारिक शरीर, तैजस शरीर, कामेण शरीर, हुएड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुल्हु चतुष्क, स्थावर, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, अस्थिर त्रादि पाँच और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टको अपेला अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। उद्योत प्रकृतिका भक्न तिर्यञ्चगतिके समान है। इतनी विशेषता है कि सूच्म, अपर्यात और साधारण प्रकृतियोंको छोड़कर इसका सन्निकर्ष कहना चाहिए।

६२. सूक्ष्म प्रकृतिको उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुएड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्च-गत्यानुपूर्वी, अगुरुलध, उपघात, स्थावर, श्रपर्याप्त, साधारण, श्रस्थिर श्रादि पाँच श्रीर णियं वं । तं तु । एवं ग्रयज्जत-साधारण ।

६३. थिर० उक्क० दिवं वे दोगदि-एइंदि०-पंचिंदि ॰ -पंचसंटा०-श्रोरालि० श्रंगो०-पंचसंघ० -- दोश्राणु॰ -- श्रादाउज्जो० -- श्रपसत्थ० -- तस-थावर -- बादर -- सहुम-पत्तेय० --साधार ॰ -श्रमुभादिपंच० सिया० संखें ज्ञ०भागूणं वं०। श्रोरालि० -- तेजा० - क० --वण्ण० ४ -श्रगु० ४ -पज्ञत्त-िण्णि० णि० वं० संखें ज्ञभागू०। समचदु० - वज्जिरि-सभ० -पसत्थ० - सुभगादिपंच सिया०। तं तु०। एवं थिरमंगो सुभ-जसगि०। णवरि जसगित्तीए सुहुम-साधारणं वज्ज।

६४. तित्थय ॰ उक ॰ हिदिबं ॰ मणुसगदिपंचग ॰ सिया ॰ संखें जिदिभागहीणं वं ॰ । देवगदि ॰ ४ सिया ॰ । तं तु ० । पंचिदियात्रो धुविगात्रो अथिर-असुभ-सुभग-

निर्माण इनका नियमसे यन्थक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेद्या अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे छेकर पश्यका असंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार अपर्यात और साधारण प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका अवलम्बन लेकर सन्निकर्ष कहना चाहिए।

६३. स्थिर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव दो गित, एकेन्द्रिय जाति, पञ्चेन्द्रिय जाति, पाँच संस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, पाँच संहनन, दो श्रानुपूर्वी, श्रातप, उद्योत, श्रप्रशस्त विहायोगित, त्रस, स्थाधर, बादर, सूक्ष्म, प्रत्येक, साधारण श्रौर श्रशु-भादि पाँच इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रचन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवीं भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। श्रौदारिक श्रिर, तैजस श्रीर, कार्मण श्रीर, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलष्ट चतुष्क, पर्याप्त और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है। जो श्रमुत्कृष्ट संख्यातवीं भागहीन स्थितिका बन्धक होता है। समचतुरस्र संस्थान, वर्ज्ञर्थभनाराच संहनन, प्रशस्त विहायोगित, श्रौर सुभग श्रादि पीँचका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका असंख्यातवीं भाग न्यनतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार स्थिर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका असंख्यातवीं भाग न्यनतक स्थितका बन्धक होता है। इसी प्रकार स्थिर प्रकृतिके समान श्रम श्रौर यशःकोति प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका श्रवलम्बन लेकर सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि यशःकीर्तिकी श्रपेचा सिक्षकर्ष कहते समय सूक्ष्म श्रौर साधारण इन दो प्रकृतियोंको छोड़कर सन्निकर्ष कहना चाहिए।

६४. तीर्थंद्वर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव मनुष्यगित पञ्चकका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवों मागदीन स्थितिका बन्धक होता है। देवगितचतुष्कका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेका अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूमसे लेकर पत्यका असंख्यातवों भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। पञ्चेन्द्रिय जाति आदि ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियों तथा अस्थिर, अनुभा, सुभग, सुस्वर, आदेय और अवशःकीर्ति

सुस्सर-त्रादें - त्रज० णि० बं० त्रणु० संवें जिद्यागहीएं ० ।

६५. इत्थिवे॰ पंचणा०-णवदंसणा०-दोवेद-मोहणी०छव्वीस-आयु॰ ४-दोगोद०-पंचंत० ओघं । णिरयगदि॰ उक्त०हिदि०वं॰ पंचिदि॰-वेउव्वि॰-तेजा०-क०-हुंड०-वेउव्वि०ऋंगो०-वर्गण०४-णिरयाणु०-अगु०४-अप्पसत्थ०-तस०४-अथिरादिछ०--णिमि० णिय॰ वं॰। तं तु॰। एवं णिरयगदिभंगो पंचिदि॰-वेउव्वि॰-वेउव्वि॰-ऋंगो०-णिरयाणु०-अप्पसत्थ॰-तस-दुस्सर ति ।

६६. तिरिक्खग॰ उक्क॰ द्विदिबं॰ एइंदिय-ऋोरालि॰-तेजा॰-क॰-हुंडसं॰-वएण०४-तिरिक्खाणु॰-ऋगु॰४-थावर-बादर-पज्जत्त-पत्ते०-ऋथिरादिपंच-िएमि॰ एिय॰ बं॰। तं तु॰। ऋादाउज्जो सिया॰। तं तु॰। एवं तिरिक्खगदिभंगो एइंदि॰-ऋोरालि॰-तिरिक्खाणु॰-ऋादाउज्जो॰-थावर ति।

इनका नियमसे बन्धक होता है। जो अनुत्कृष्ट संख्यातवां भागहीन स्थितिका बन्धक होता है।

६४. स्त्रीवेदवाले जीवों में पाँच झानावरण, नौ दर्शनावरण, दो वेद, मोहनीय छन्वीस, आयु चार, दो गोत्र और पीँच अन्तराय इनके उत्हर स्थितिवन्धका सन्तिकर्ष ओधके समान है। नरकगितकी उत्हर स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, वैकियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुएड संस्थान, वैकियिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, नरकगित्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, अपशस्त विहायोगिति, त्रस चतुष्क, अस्थिर आदि स्नुह और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्हर स्थितिका भी वन्धक होता है और अनुत्हर स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्हर स्थितिका बन्धक होता है तो उत्हर्शकी अपेचा अनुत्हर एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असख्यातवीं भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार नरकगितके समान पञ्चेन्द्रिय जाति, वैकियिक शरीर वैकियिक शाङ्गोपाङ्ग. नरकगित्यानुपूर्वी, अप्रशस्त विहायोगित, त्रस और दुःस्वर इन प्रकृतियोंके उत्हर स्थितिबन्धका अवलम्बन लेकर सन्तिकर्ष जानना चाहिए।

६६. तिर्यञ्चगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीय एकेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक श्रीर, तैजस श्रीर, कार्मण श्रीर, हुण्ड संस्थान, घर्णचतुष्क, तिर्यञ्च गत्यानुपूर्ची,
श्रमुरुलय चतुष्क, स्थायर, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, श्रस्थर श्रादि पाँच श्रौर निर्माण इनका
नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रमुरुष्ट स्थितिका
भी बन्धक होता है। यदि श्रमुरुष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेता
श्रमुरुष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातचाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक
होता है। श्रातप श्रौर उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रबन्धक होता
है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है श्रौर अनुरुष्ट स्थितिका
भी बन्धक होता है। यदि श्रमुरुष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेत्ता
श्रमुरुष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातचाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक
होता है। इसी प्रकार तिर्यञ्चगतिके समान पकेन्द्रिय जाति, श्रौद।रिक श्ररीर, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रातप, उद्योत श्रौर स्थावर प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिवन्धका श्रवलम्बन लेकर
सन्निकर्ष जानना चाहिए।

६७. मणुसगदि० उक्कटिदिबं० ऋोघं । एवरि ऋोरालि०ऋंगो० एिय० वं० संखेँज्जदिभागू० । दोसंठा०-तिएिएसंघ०-ऋपज्ज० सिया० संखेँज्जदिभागू० !

६८. देवेगदि० उक्क॰ द्विदिबं॰ ओघं । वीइंदि०-तीइंदि०-चदुरिं० उक्क० द्विदि० ओघं । एवरि विसेसो, ओरालि॰ अंगो॰-असंपत्तसे० एिय० । तं तु० । आहार०-आहार॰ अंगो० ओघं ।

६६. तेजइग० उक्क० द्विदिवं० कम्मइ०-हुंडसं०-वराण४-अगु०[४]-वादर-पज्जतः पत्ते०-अथिरादिपंच०-शिमि०-शिय० वं० । तं तु० । शिरयगदि-एइंदि०-पंचिदि०-ओरालि०-वेउव्व०-वेउव्व०अंगो०-दोआणु०-आदाउज्जो०-अपसत्थ०-तस--थावर--दुस्सर० सिया० । तं तु० । एवं तेजा०भंगो कम्मइग०-हुंड०-वराण०४-अगु०४-वादर-पज्जत्त-पत्तेय०-अथिरादिपंच-शिमिण ति ।

६७. मनुष्यगतिके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका श्रवलम्बन लेकर सन्निकर्षका विचार करनेपर वह श्रोधके समान है। इतनी विशेषता है कि श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्गका यह नियमसे बन्धक है। जो श्रनुत्कृष्ट संख्यातवॉ भागहीन स्थितिका बन्धक है। दो संस्थान, तीन संहनन श्रौर पर्याप्त इनका कदाचित् बन्धक है श्रौर कदाचित् अवन्धक है। यदि बन्धक है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवॉ भाग होन स्थितिका बन्धक है।

६८. देवगतिके उत्हृष्ट स्थितिबन्धका श्रवलम्बन लेकर सन्निकर्षका विचार करनेपर वह श्रोघके समान है। द्वीन्द्रिय जाति, श्रीन्द्रिय जाति श्रीर चतुरिन्द्रिय जातिके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका श्रवलम्बन लेकर सन्निकर्षका विचार करनेपर वह श्रोघके समान है। इतना विशेष है कि श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग श्रीर श्रसम्प्राप्तास्त्रपाटिका संहननका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट की श्रपेक्षा श्रनुत्कृष्ट प्रक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवा भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। आहारक श्रीर श्रीर श्राङ्गोपाङ्गके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका श्रवलम्बन लेकर सन्निकर्षका विचार करनेपर वह श्रीधके समान है।

६६. तैजस श्रीरकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव कार्मण श्रीर, हुण्ड-संस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलधुचतुष्क, वादर, पर्याप्त, प्रत्येक, अस्थिर आदि पाँच और निर्माण इनका नियमसे वन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टकी अपेजा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। नरकगित, एकेन्द्रिय जाति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक श्रीर, वैकियिक श्रीर, वैकियिक आक्षोपाङ्ग, दो आनुपूर्वी, आतप, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगित, त्रस, स्थावर और दुःस्वर इनका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेजा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार तैजस शरीरके समान कार्मण श्रीर, हुएड संस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, बादर, पर्यात, प्रत्येक, अस्थिर आदि पाँच और निर्माण इन प्रकृतियांके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका अवलम्बन लेकर सन्निकर्ण जानना चाहिए।

- ७०. समचदु० उक्क०द्विदि० त्रोघं। एवरि त्रोरालि०त्रंगो०-त्रसंपत्त० सिया<sup>५</sup>० संखेंज्जदिभागू०। एवं पसत्थवि०-सुभग-सुस्सर-त्रादेँ०। एग्गोद०-सादि०-सुज्ज-संठा० त्रोघं।
- ७१. वामणसंठा० उक्त०द्विदिवं० श्रोरालि०श्रंगो० णिय०। तं तु०। खीलियसंघ०-श्रसंप० सिया०। तं तु०। सेसं श्रोघं।
- ७२. त्रोरालि० अंगो० उक्क ० द्विदिवं० तिरिक्खगिद-स्रोरालिय-तेजा०-क०-वर्गण्० ४-तिरिक्खाणु०-स्रगु०-उप०-तस-बादर-पज्जत्त०-स्रथिरादिपंच-णिमि० णि० वं० संखेंज्जिदिभागू० । वीइंदि०-तीइंदि०-चढुरिं०-वामण्य०-खीलिय०-स्रसंप०-स्रपज्ज० सिया० । तं तु० । पंचिदि०-हुंढ०-पर०-उस्सा०-उज्जो०-स्रप्पसत्थ०-पज्जत्त०-दुस्सर
- ७०. समचतुरस संस्थानके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका श्रवतम्बन लेकर सिन्नकर्षका विचार करने पर वह श्रोघके समान है। इतनी विशेषता है कि श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग श्रौर श्रसम्प्राप्ता-स्पाटिका संहननका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार प्रशस्त विहायोगित, सुभग, सुखर श्रौर आदेय इन प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका श्रवत्मवन लेकर सन्निकर्ष कहना चाहिए। न्यश्रोधपरिमण्डल संस्थान, स्वाति संस्थान श्रौर कुन्जक संस्थानके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका श्रवत्मन्यन लेकर सन्निकर्षका विचार करने पर वह श्रोधके समान है।
- ७१. वामन संस्थानकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव श्रौदारिक श्राक्कोपाक्कका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टकी श्रपेचा श्रमुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पत्थका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। कीलक संहनन श्रौर असम्प्राप्तास्त्रपादिका संहननका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रब न्धक होता है। यदि बन्धक होता है। तोउत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेचा श्रमुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पत्थका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। श्रेष सन्निकर्ष श्रोधके समान है।
- ७२. श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्गकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगित, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु, उपघात, त्रस, बादर, पर्यात, श्रस्थिर श्रादि पाँच श्रौर निर्माण इन प्रकृतियोंका निथमसे बन्धक होता है। जो नियमसे श्रमुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। द्वीन्द्रिय जाति, त्रोनद्रय जाति, चतुरिन्द्रिय जाति, वामन संस्थान, कीलक संहनन, श्रस-स्थाप्तासस्पाटिका संहनन श्रौर श्रपर्याप्त इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रद-स्थाप्ता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है तो उत्कृष्टकी श्रपेका श्रमुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। पञ्चन्द्रिय जाति, इण्ड संस्थान, परधात, उन्नुस्स, उद्योत, अप्रशस्त

१. मूलप्रती सिया० तं तु० संले-इति पाठः ।

सिया॰ संखेंज्जिदिभागू० । एवं ऋसंपत्त० । वज्जिरि० श्रोघं । खबरि विसेसो श्रोरालि०श्रंगो॰ खिय० संखेंज्जिदिभागू० ।

७३. सुहुम-अपज्जत्त-साधारणं ओघं । एवरि विसेसो । एज्जत्त उक्त हिदि-वं ओरालि व्यंगो ०-असंपत्तसे व्यादेसेण सिया । तं तु । थिर अधे । एवरि विसेसो, ओरालि व्यंगो ० -असंपत्त । सिया शसंबेंज्जदिभागू । एवं सुभ ० -जसगि । तित्थय व ओघं ।

७४. पुरिसवेदे सव्वाणं श्रोघं। एाबुंसग० सत्तरणं श्रोघं। रिएरयगदि० श्रोघं। तिरिक्लगदि० उक्क०द्विदिवं० पंचिदि०-श्रोरालि०-तेजा-०क०-हुंड०४-श्रोरालि०-श्रंगो०-श्रसंपत्त०-वरण्ण०४-तिरिक्लाणु०-श्रगु०४-श्रप्यसत्थ०-तस०४-श्रथरादिछ०--

विद्यागिगति, पर्याप्त और दुःस्वर इनका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भागहीन स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार असम्प्राप्तास्पाटिका संहननके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका अवलम्बन लेकर सन्निकर्ष आनना चाहिए। वज्रपंभनाराच संहननके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका अवलम्बन लेकर सन्निकर्ष औघके समान है। इतना विशेष है कि औदारिक आङ्गोपाङ्गका नियमसे बन्धक होता है। ओ नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भागहीन स्थितिका बन्धक होता है।

७३. सुर्म, अपर्यात और साधारणके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका अवलम्बन लेकर सन्निकर्ष ओघके समान है। किन्तु यहाँ विशेष जानकर कहना चाहिए। पर्यातकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव औदारिक आङ्गोपाङ और असम्प्राप्तास्पादिका संहननका आदेशसे कदाचित बन्धक होता है और कदाचित अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। स्थिर प्रकृतिके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका अवलम्बन लेकर सन्निकर्ष ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि औदारिक आङ्गोपाङ और असम्प्राप्तास्प्राप्तिका संहननका कदाचित् बन्धक होता है कि और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग होन स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार शुभ और यशक्तित प्रकृतिको उत्कृष्ट स्थितिबन्धका अवलम्बन लेकर सन्निकर्ष जानना चाहिए। तीर्थंकर प्रकृतिके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका अवलम्बन लेकर सन्निकर्ष ओघके समान है।

७४. पुरुषवेदवाले जोवोंके सब प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका श्रवम्लबन लेकर सिन्तकर्ष श्रोधके समान है। नपुंसक वेदवाले जोवोंमें सात कमींके उत्कृष्ट स्थितिका श्रव-लन्बन लेकर सिन्तकर्ष श्रोधके समान है। नरकगितके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका अवलम्बन लेकर सिन्तकर्ष श्रोधके समान है। तिर्यञ्चगितिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धकरनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रोदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गीपाङ्ग, श्रसम्प्रातास्प्रादिका संहनन, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलष्ठ चतुष्क, श्रप्रशस्त विहायोगित, त्रस चतुष्क, श्रिस्थर आदि छह श्रौर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता

<sup>1.</sup> मुलप्रती हुंड० उज्जो० सिया तं तु० घोरा-हित पाठः ।

णिमि० णिय० वं० । तं तु० । [ उज्जो० सिया० । तं तु० । ] एवं त्रोरालि०-त्रोरालि० त्रंगो०-त्रसंपत्त०-तिरिक्लाणु०-उज्जोव ति । मणुसगदि-देवगदि० त्रोघं ।

७५. एइंदि० उक्क ० द्विदिबं० तिरिक्खगदि-स्रोरालि०-तेजा०-क०-हुंढ०-वरण् ०४-तिरिक्खाणु०-स्रगु०-उप०-स्रथिरादिपंच-णिमि० [िण्य० वं०। णिय० स्रणु०] संखेंज्जदिभागू०। पर०-उस्सा०-उज्जो०-वादर-पज्जत्त-पत्तेय० सिया० संखेंज्जदिभागू०। स्रादाव-सुहुम-स्रपज्जत्त-साधारणं सिया०। तं तु०। थावर० णिय० वं०। तं तु०। एवं थावर०। वीइंदि०-तीइंदि०-चदुरिं० स्रोधं।

७६. पंचिदि । उक्क हिदिवं । तेजा - न - हुं ड ० - वरा ए ० ४ - त्रा ए ० ४ - त्रा ए - वरा ए ० ४ - वरा ० ४ - वरा ० ४ - वरा ० ४ -

है। जो उत्हृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टकी अपेका अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँभाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। उद्योतका कदाचित् बन्धक होताहै और कदाचित् अवन्धक होताहै। यदि बन्धक होता है तो कदाचित् उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार औदारिक शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तास्त्रपाटिका संहनन, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और उद्योत इन प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धक आथयसे सन्निकर्ष जानना चाहिए। मनुष्य गति और देवगितके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका अवलम्बन लेकर सन्निकर्ष ओधके समान है।

७४. एकेन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, श्रीदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्ण चतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रमुरु-लघु, उपघात, श्रस्थिर श्रादि पाँच श्रीर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है। जो नियम से श्रनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यन स्थितिका बन्धक होता है। परघात, उल्लास, उद्योत, वादर, पर्याप्त श्रौर प्रत्येक इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि वन्धक होता है,नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवों भागहीन स्थितिका बन्धक होता है। श्रातप, सूक्ष्म, श्रपर्याप्त श्रीर साधारख इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रव-न्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है ग्रीर अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है,तो उत्कृष्टकी अपेत्ता ब्रानुत्कृष्ट एक समय न्युनसे लेकर पल्यका असंख्यातवीं भाग न्युन तक स्थितिका बन्धक होता है। स्थावर प्रकृतिका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है श्रीर अनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेता अनुत्कृष्ट्रएक समय न्युनसे लेकर पत्यका असंख्यातवीं भाग न्युन तक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार स्थावर प्रकृतिके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका अवलम्बन लेकर सन्निकर्ष ज्ञानना चाहिए। द्वीन्द्रियज्ञाति, त्रीन्द्रियज्ञाति श्रौर चत्रुरिन्द्रियज्ञातिके उत्कृष्ट स्थितिवन्धका अवसम्बन लेकर सन्निकर्ष ग्रोघके समान है।

७६. पञ्चेन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, अप्रशस्त विहायोगति, जस चतुष्क, सत्थ०-तस०४-अथिरादिछ०-िएमि० एिय० वं० | तं तु० | एिरयगदि-तिरिक्ख-गदि-ओरालिय-वेउव्विय०-दोअंगो०-असंपसत्त०-दोआए०-उज्जो० सिया० | तं तु० | एवं पंचिदियजादिभंगो तेजा० क०-हुंड०-वएए०४-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-अथिरादिछ०-एिमिए ति । पंचसंठा०-पंचसंघ० ओघं |

७७. त्रादाव ॰ उक्क ० द्विदिवं ० तिरिक्ख गदि-त्रोरास्तिय-तेजा ० - क ० - हुं ड ० वए ए ० ४ - तिरिक्खा ए ० - त्रा १० ४ - बादर-पज्जत्त-पत्तेय ० - त्रियर्च - रिएमि ० ए ० वं ० संखें ज्ञिदिभागू ० । एइंदिय-थावर ० ए य० । तं तु० । पसत्थवि ० - सुभग - सुस्सर- आदें ज्ञ ० श्रोघं । सुहुम - अपज्ञत्त-साधार ० श्रोघं । एवरि अपज्ञत्तस्स एइंदि० - थावर ० सिया ० । तं तु० ।

श्रीस्थर श्रादि छह श्रीर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है । यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो उत्कृष्टकी श्रपेक्षा श्रमुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवों भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। नरकगित, तिर्यश्चमित, श्रीद।रिक श्ररीर, वैकियिक श्ररीर, दो श्राङ्गोपाङ्ग, श्रसम्प्राप्तासुपाटिका संहनन, दो श्रामुपूर्वी श्रीर उद्योत इनका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार पञ्चित्वय जातिके समान तैजस श्रीर, कार्मण श्ररीर, हुएडसंस्थान, वर्ण चतुष्क, श्रमुक्तुष्ट चतुष्क, प्रशस्त विहायोगिति, श्रस चतुष्क, श्रस्थिर श्रादि छह श्रीर निर्माण इनके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका श्रवक्रम्यन लेकर सन्निकर्ष श्रीधके समान है।

७९. श्रातपकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगित, श्रोदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुएड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रमुरुलघुचतुष्क, वादर, पर्याप्त, प्रत्येक, श्रस्थिर श्रादि पींच श्रीर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है। जो अनुत्कृष्ट संख्यातचाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। एकेन्द्रिय जाति श्रीर स्थावर इनका नियमसे वन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । किन्तु यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवीं भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। प्रशस्त विहायोगित, सुभग, सुखर श्रीर आदेय इनके उत्कृष्ट स्थितिवन्धका श्रवलम्बन लेकर सिन्धनकर्ष श्रोघके समान है। तथा स्कृम, श्रपर्याप्त श्रीर साधारण इनके उत्कृष्ट स्थितिवन्धका श्रवलम्बन लेकर सिन्दिक्य जाति श्रीर स्थावर प्रकृतियोंका कदाचित् वन्धक होता है कि अपर्याप्तके साथ एकेन्द्रिय जाति श्रीर स्थावर प्रकृतियोंका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रयेत्वा श्रनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थिति का बन्धक होता है।

- ७८. थिर॰ उक्क०द्विदिबं० ओघं। एवरि विसेसो, एइंदि०-आदाव-थावर० सिया० संखेंज्जदिभागू॰। एवं सुभ-जस०। तित्थय० ओघं।
- ७६. त्रवगदवे०े त्राभिणिबो० उक्क०द्विदिवं० चदुणाणा० णि०। णि० उकस्सा। एवं चदुणाणा०-चदुदंसणा०-चदुसंजल०-पंचंत०।
- द्र०. कोधादि०४-मदि०-सुद्र०-विभंग० श्रोधं । श्राभि०-सुद्र०-श्रोधि० छएएां कम्माएां श्रोधं । श्रपचक्ताणा०'कोध० उक्क०द्विदित्रं० ऍक्कारसक०-पुरिस०-श्ररदि-सोग-भय-दुगुं० णि० वं० । तं तु० । एवमेदाश्रो ऍक्कमेंक्कस्स० । तं तु० । इस्स० उक्क०द्विदिबं० वारसक०-पुरिस०-भय-दुगुं० णि० वं० संर्त्वेज्जगुणहीएां वं० ।
- ७८. स्थिर प्रकृतिके उत्कृष्ट स्थितिबन्धकी श्रिपेत्वा सन्निकर्ष श्रोधके समान है। इतना विशेष है कि एकेन्द्रिय जाति, श्रातप श्रोर स्थावर प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार श्रुभ श्रीर यशःकीर्ति प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका श्राश्रय लेकर सन्निकर्ष जानना चाहिए। तीर्थंकर प्रकृतिके उत्कृष्ट स्थितिबन्धके श्राश्रयसे सन्निकर्ष श्रोधके समान है।
- ७६. श्रवगतवेदवाले जीवोंमें श्राभिनिवोधिक झानावरएकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव वार झानावरएका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार वार झानावरए, वार दर्शनावरए, वार संज्वलन श्रीर पाँच श्रन्तराय प्रकतियोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका श्राश्रय लेकर सन्नि-कर्ष जानना चाहिए।
- ८०. कोधादि चार कषायवाले, मत्यज्ञानी, श्रुताञ्चानी श्रौर विभक्षज्ञानी जोवोंमें ऋपनी श्रपनी सब प्रकृतियोंका सन्निकर्ष ओघके समान है। श्रमिनियोधिकश्रानी, श्रुताश्वानी श्रीर श्रवधिज्ञामी जीवोंमें छह कर्मीके उत्कृष्ट स्थितिबन्धके श्राक्षयसे सन्निकर्प श्रोधके समान है । श्रप्रत्याख्यानावरण कोधको उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव ग्यारह कपाय. पुरुषचेद, ऋरति, शोक, भय श्रौर जुगुत्सा इनका नियमसे वन्धक होता है। किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है और अनुत्रुष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अनुत्रुष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है। इसीप्रकार इन सब प्रकृ-तियोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए । किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेचा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवां भाग न्यृन तक स्थितिका यन्धक होता है। हास्यकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्धक जीव वारह कवाय, पुरुषवेद, भय श्रौर जुगुष्साका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुण् हीन स्थितिका बन्धक होता है । रतिका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेद्या अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका

१. मुलप्रती पच्चक्लाणा०४ कोध० इति पाठः ।

रदि० णिय० वं० । तं तु० । एवं रदीए ।

- ८१. मणुसग॰ उक्क०द्विदिवं० पंचिदि॰-ग्रोरालि०-तेजा०-क०-समचदु०-त्रोरालि०त्रंगो०-वज्जरि०-वण्ण०४-मणुसाणु०-त्रगु०४--पसत्थवि०-तस०४--त्रथिर--त्रसुभ-सुभग-सुस्सर-त्रादेँ०-त्रज०-णिमि॰ णि॰ वं०। तं तु०। एवं मणुसगदि-भंगो त्रोरालि०-त्रोरालि०त्रंगो-वज्जरिसभ०-मणुसाणु०।
- ८२. देवगदि० उक्क०द्विदिवं० पंचिदि०-वेडिवि०-तेजा०-क०-समचदु०-वेडिवेवि० श्रंगो०-वएण०४-देवाणु०—श्रगु०४--पसत्थ०--तस०४--श्रथिर--श्रमुभ--सुभग--सुस्सर-त्रादेॅ०-श्रजस०-िएमि० िएप० । तं तु० । तित्थय० सिया बं० । तं तु० । एवं देवगदिभंगो वेउिव्व०-वेउिव्व०-श्रंगो०-देवाणु०-तित्थय० ।
- ८३. पंचिदि० उक्क०द्विदिवं० तेजा०-क०-समचदु०-वराण्०४-अगु०४-पस-श्रसंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार रतिके उत्कृष्ट स्थितिबन्ध का श्राश्रय लेकर सन्निकर्ष जानमा चाहिए।
- 2१. मनुष्यगितकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करमेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तैजल शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गोणङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन, वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विद्यायोगित, श्रस्चतुष्क, श्रस्थिर, श्रश्चभ, सुभग, सुलर, श्रादेय, श्रयशःकीर्ति श्रौर निर्माण इनका नियमसे वन्धक होता है। किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेत्ता श्रनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवीं भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार मनुष्यगितके समान श्रौदारिक शरीर, श्रौदारिक आङ्गोणङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन श्रौर मनुष्यगत्यानुपूर्वीके उत्कृष्ट स्थितिबन्धके श्राश्रयसे सन्निकर्ष जानना चाहिए।
- ८२. देवगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्न संस्थान, वैक्रियिक ग्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुर्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुर्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुर्क, त्रस्थिर, श्रग्धुम, सुभग, सुसर, श्रादेय, श्रयशःकीर्ति श्रीर निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे वन्धक होता है। किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। यदि वन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रणेक्षा श्रमुत्कृष्ट, पकसमय न्यून स्थितिके लेकर पल्यका श्रसंख्यातवों भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार देवगतिके समान वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक श्राङ्गोपाङ्ग, देवगत्यानुपूर्वी श्रीर तीर्थकर प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिका श्राथ्य लेकर सन्मकर्ष जानना चाहिए।

८३ पञ्चेन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तैजस शरीर, कार्मण

१. मूलमतौ बं॰ पंचिदि॰ तेजा-इति पाठः।

त्थवि०-तस०४-अथिर-अधुभ-सुभग-सुस्सर-आदें ज्ञ-अजस०-सिमि० वं०। तं तु०। मणुसग०-देवग०--अोरालि०--वेउव्वि०--दोश्रंगावं०--वज्जिर०--दोश्राणु०--तित्थय० सिया०। तं तु०। एवं पंचिदियं-भंगो तेजा०-क०-समचदु०-वएरा०४-अगु०४- पसत्थवि०-तस०४-अथिर-असुभ-सुभग--सुस्सर--आदे ज्ज-अजस०--शिमिण ति। आहार०-आहार०अंगो ओर्घ।

दश्व. थिर॰ उक्क०द्विदिबं॰ पंचिदि०-तेजा०-क०-समचदु०-वएण०४-ऋगु०४-पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदे०-णिमि॰ णि० वं० संखेंज्जगुणहीणं वं०। मणु-सगदि-देवगदि-ओरालि॰-वेउव्वि०-दोअंगो०-वज्जरिस०-दोश्राणु० सिया० संखेंज्ज-गुणहीणं वं०ं। सुभ-जसगित्ति० सिया०। तं तु०। ऋसुभ-ऋजस०-तित्थ० सिया०

शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वर्णचतुष्क, ब्रगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, अस्थिर, अशुभ, सुभग, सुखर, आदेय, अयशंकीर्ति और निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेत्रा श्रमुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। मनुष्यगति, देवगति, श्रीदारिक शरीर, वैक्रियिक शरीर, दो श्राङ्गोपाङ्ग, वस्रर्षभ-नाराच संहनन, दो ज्ञानुपूर्वी ग्रौर तीर्थंकर इन प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है ग्रौर कदाचित् श्रवन्थक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टको ऋषेत्ता ऋनुत्कृष्ट्र एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका ऋसंख्यातवीं भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार पञ्चेन्द्रिय जातिके समान तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वर्णचतुष्क, त्रगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, त्रस्थिर, ऋगुम, सुभग, सुखर, ऋर्य, ऋयशःकीर्ति श्रीर निर्माण इन प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका श्राश्रय लेकर सन्निकर्ष जानना चाहिए। आहारक शरीर और आहारक आङ्गोपाङ्गके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका आश्रय लेकर सन्निकर्पं श्रोघके समात है।

८४. स्थिर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुर इसंस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, असचतुष्क, सुभग, सुस्तर, आदेय और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुण्हीन स्थितिका वन्धक होता है। मनुष्यगित, देवगित, औदारिक शरीर, वैकियिक शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, वज्जर्षभनाराच संहनन और दो आनुपूर्वी इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुण्हीन स्थितिका बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका मी बन्धक होता है। यदि अगुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है तो जिल्हण स्थितिका मी बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका यन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका अनुत्कृष्ट, एक स्थय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। अध्य, अध्यक्षकीत और तीर्थकर इनका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। अध्य, अध्यक्षकीत और तीर्थकर इनका

मुजप्रती पंचिदिय तेजादि भंगो इति णठः । २ मुलप्रती वंक मुनग-जसिमित्त इति पाठः ।

संसेंज्जगुण्हीएां वं०। एवं सुभ-जसगित्ति०।

प्र. मरापज्जव० छरणं कम्माणं श्रोघं । कोधसंज० उक्क०द्वि० तिरिणसंज०ः पुरिस०-त्रारदि-सोग-भय-दुगुं० णि० वं०। तं तु०। एवमेदाश्रो ऍक्कमेकॅस्स । तं तु०। हस्स० उक्क०द्विदिबं० चदुसंज०-पुरिस०-भय-दुगुं० णि० वं संखेंज्जगुण-हीर्णं०। रदि० णिय० वं०। तं तु०। एवं रदीए ।

द्भि देवगदि उक हिदिबं पंचिदि - वेउ विव - तेजा - क - समचदु व वेउ विव व खंगो - व प् ए प् देवाणु - अगु ० ४ - प् सत्थ ० - तस० ४ - अथिर - असु भ - सुभग - सुस्सर - आदें ज ॰ - अजस० - णिमि० णि० वं । एव मेदाओं ऍक में क्रस्स । तं तु ० । क्ष्मों क्ष्में क्ष्में तो ते ते । क्ष्में क्ष्में क्ष्में तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातगुण्हीन स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार शुभ और यशः कीर्ति प्रकृतियों के उत्कृष्ट स्थितवन्धका आश्रय लेकर सन्तिकर्ष जानना चाहिए।

८४. मनःपर्ययक्षानी जीवोंमें छह कमौंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका श्राश्रय लेकर सन्ति कर्ष श्रोधके समान है। क्रोध संज्वलनकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तीन संज्व-लन, पुरुषवेद, श्ररति, शोक, भय श्रीर जुगुप्साका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनु-त्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी ऋषेचा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका ग्रसंख्यातवीं भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिवन्धका ग्राश्रय लेकर सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु तथ वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेद्धा श्रमुत्कृष्ट एक समय न्यनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवीँ भाग न्यनतक स्थितिका बन्धक होता है । हास्यकी उत्क्रप्ट स्थितिका बन्घ करनेवाला जीव चार संज्वलन, पुरुषवेद, भय श्रौर जुगुप्साका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे अनुस्कृष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका बन्धक होता है। रतिका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है स्त्रौर स्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेद्या अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार रितके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका श्राश्रय लेकर सन्ति-कर्ष जानना चाहिए।

८६. देवगितकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, वैकियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वैकियिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगिति, असचतुष्क, श्रस्थिर, अश्रुम, सुभग, सुस्थर, श्रादेय, श्रयशःकीर्ति श्रीर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है। इसी प्रकार इनमेंसे प्रत्येकके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका श्राश्रय लेकर सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु तब वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेक्ष श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। तीर्थंकर प्रकृतिका

मुजप्रती-संज ० वं० पुरिस० इति पाठः ।

तित्थय० सिया० । तं तु० । आहार०-आहार०त्रंगो० ऋोघं ।

- ८७. थिर० उक्क ब्रिटिबंब देवगदिश्रहावीसं तिरिएएयुगलं बज्जव िएयब वंब्र संखें ज्ञदिगुण्हीएां वंव । सुभव-जसव सियाब । तं तुव । श्रसुभ-श्रजसव-तित्थयब सियाव संखें ज्ञगुण्हीणंव । एवं सुभ-जसव ।
- ८८. तित्थय० उक्क०द्विदिवं० देवगदिश्रद्वावीसं शिय०वं०। तं तु०। सामाइ०-छेदो०-परिहार० [ मणपज्जवभंगो ] ।
- ८६. सुहुमसं० आभिणियो० उक्क० दिविं च च तुणा० णिय० वं० उक्कस्सा । एवमण्णमण्णस्स । एवं च दुदं०-पंचंत० । संजदासंजद० पिरहारभंगो । असंजद-चक्खुदं०-अचक्खुदं० ओघं। ओधिदं० ओधिणाणिभंगो । किएणाए ए युंसगभंगो । कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेका अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातचीं भाग न्यूनतक अनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है । आहारक शरीर और आहारक आक्रोणाक्कके उत्कृष्ट स्थितिबन्धके आथ्रयसे सन्निकर्ष ओधके समान है ।
- दश. स्थिर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तीन युगलोंको छोड़कर देवगित श्रादि श्रष्टाईस प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जी श्रमुत्कृष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका बन्धक होता है। ग्रुम श्रीर यशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है श्रीर अमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेत्ता श्रमुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्थका श्रसंख्यातवीं भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। श्रग्रुम, श्रयशःकीर्ति और तीर्थकर इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अमुत्कृष्ट संख्यातगुणहीन स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार श्रम और यशःकीर्ति इनके उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक श्रायसे सन्निकर्ष जानना चाहिए।
- ८८. तीर्थंकर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका चन्ध करनेवाला जीव देवगित श्रादि श्रष्टा-ईस प्रकृतियोंका नियमसे चन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी चन्धक होता है श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिकाबन्धक होता है तो उत्कृष्टकी श्रोपेत्वा श्रमुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर एल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। मनःपर्ययञ्चानी जीवोंके समान सामायिक संयत, छेदोपस्थापना संयत श्रीर परिहारविशुद्धि संयत जीवोंके जानना चाहिए।
- द्धः सूद्दमसाम्परायिक संयत जीवोंमें श्राभिनिवोधिक ज्ञानावरण्की उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरण्का नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार इन प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिवन्धकी अपेज्ञा परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। इसी प्रकार चार दर्शनावरण और पाँच अन्तरायके उत्कृष्ट स्थितिवन्धका श्राक्षयः लेकर परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। संयतासंयतोंका भङ्ग परिहारविशुद्धि संयत जीवोंके समान है। असंयत, चजुदर्शनी और अचक्षुदर्शनी जीवोंका भङ्ग श्रोधके समान है। अविधदर्शनी जीवोंका भङ्ग श्रविधाना जीवोंके समान है। इन्ल्ए लेश्यामें नपुंसकवेदी जीवोंके समान भङ्ग है।

- ह.०. षील-काऊणं सत्तरणं कम्माणं त्रोघं। िष्रयगदि० उक्क॰ द्विदि०बं० पंचि-दिय-तेजा०--क०--हुंड०-वरण्ण०४-त्रगु०४-त्रप्पसत्थ०-तस०४-त्रथिरादिद्ध० िण्मि० णिय० बं०। िष्ण० त्रणु० संखेळागुणहीर्षा०। वेउन्वि०-वेउन्वि०न्रंगो०-िष्पर-याणु० िष्य० बं०। तं तु०। एवं वेउन्वि०-वेउन्वि०न्रंगो०-िष्परयाणु०।
- ६१. तिरिक्खगदि० उक्क॰ द्विदि० बं० पंचिदि०-त्रोरालि॰-तेजा०क०-हुंड०-त्रोरालि०त्रंगो०-त्र्यसंपत्त०-वगण०४-तिरिक्खाणु०-त्र्रगु०४-त्रप्यस०--तस०४--त्र्राथ--रादिछ०-णिमि० णि० वं० । तं तु० । उज्जो० सिया० । तं तु० । एवमेदात्रो ऍक्क-मेक्क्स । तं तु० । मणुसगदिदुग-पंचसंठा-पंचसंघ०-पसत्थ०-थिरादिछ० णिरयभंगो ।
- ९०. नील श्रीर कापोत लेश्यामें सात कर्मीका मङ्ग श्रोघके समान है। नरकगितकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघुचतुष्क, श्रग्रशस्त विहायोगित, त्रसचतुष्क, श्रस्थर श्रादि छृह श्रीर निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातगुण्हीन स्थितिका बन्धक होता है। वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक श्राङ्गोपाङ्ग श्रीर नरकगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है। वेक्रियिक शरीर, वैक्रियिक श्राङ्गोपाङ्ग श्रीर नरकगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है तो उत्कृष्टकी श्रपेचा श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक श्राङ्गोपाङ्ग श्रीर नरकगत्थानुपूर्वीके उत्कृष्ट स्थितिवन्धका श्राक्षय लेकर समिक्षण जानना चाहिए।
- ९१. तिर्यञ्जगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति. श्रीदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुएड संस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गीपाङ्ग, असम्बाप्तासृपाटिका संहनन, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, ऋगुरुलघुचतुष्क, ऋपशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, श्रस्थिर श्रादि छह श्रीर निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। किन्त वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुस्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुस्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टकी श्रपेका श्रमुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। उद्योतका कदाचित बन्धक होता है श्रीर कदाचित् ग्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृप्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेका अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धके श्राश्रयसे परस्पर सन्निकर्ष होता है । ऐसी श्रयस्थामें वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर अनुत्कृष्ट स्थितिका भी यन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका यन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी ऋषेचा अनुत्कृष्ट्रपक समय न्यूनसे लेकर पत्यका ऋसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। मनुष्यगतिद्विक पाँच संस्थान, पाँच संहनन, प्रशस्त विहायोगति श्रौर स्थिर श्रादि छह इनके उत्कृष्ट स्थितिबन्धके श्राश्रयसे सन्निकर्ष सामान्य नारिकयोंके समान है।

- हर. देवगदि० उक्क०द्विदिबं० पंचिदि०-तेजा०-क०-समचदु०-वएण०४-अगु-४-पसत्थवि०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदेँ०-णिमि० णि० बं० । णिय० अगु० संखेँ-ज्ञगुणहीणं० । वेउव्वि०-वेउव्वि०श्रंगो० णि० बं० अणु० संखेँज्जदिगुणहीणं० । देवाणु० णिय० बं० । तं तु० । थिराथिर-सुभासुभ-जस०-अजस० सिया० णि० बं० । णि० अणु० संखेँज्जगुणहीणं० । एवं देवाणु० ।
- ६३. एइंदि॰ उक्क ० द्विदिबं० तिरिक्खगदि-स्रोराति०-तेजा०-क०-हुंड०-वएए० ४-तिरिक्खाणु०-त्रगु०-उप०-दूभग-स्रणादे०-िएमि० एि० वं० । एि० स्रणु० संखे-ज्ञगुणहीएां० । पर०-उस्सा-उज्जो०-बादर-पज्जत्त-पत्ते०-थिराथिर-सुभासुभ-जस०-अज-स०सिया बं० । यदि बं० एिय० स्रणु० संखेजगुणहीएां। स्रादाव-सुहुमादि-तिएए० सिया० । तं तु० । थावर० एिय० । तं तु० । एवं थावर० ।
- ९२. देवगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहारिगोति, अस चतुष्क, सुभग, सुस्तर, आदेय और निर्माण इन प्रकृतियोक्ता नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातगुण्होन स्थितिका बन्धक होता है। चैकियिक शरीर और वैकियिक आक्षोणाङ्गका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुण्हीन स्थितिका बन्धक होता है। देवगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टकी अपेत्ता अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। स्थिर, अस्थिर, अभ, अशुभ, यशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो अनुत्कृष्ट संख्यात गुण्हीन स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार देव-गत्यानुपूर्वीके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका आश्रय लेकर सन्निकर्ष जानना चाहिए।
- ९३, एकेन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यव्चगति, श्रीदा-रिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्ण चतुष्क, तिर्यव्चगत्यानपूर्वी, श्रगुरुलघु, उपघात, दुर्भग, श्रनादेय और निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कुष्ट संख्यातगुर्ण द्दीन स्थितिका बन्धक होता है। परघात, उच्छास. उद्योत, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक शरीर, स्थिर, ऋस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति और ऋयशः-कीर्ति इन प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातगुणहीन स्थितिका बन्धक होता है। श्रातप श्रीर सुक्ष्म श्रादि तीनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है। स्थावर प्रकृतिका नियमसे वन्धक होता है। किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है श्रौर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट-की ऋषेज्ञा ऋनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका ऋसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है । इसी प्रकार स्थावर प्रकृतिके उत्कृष्ट स्थितिबन्धकी श्रेपेचा सन्निकर्ष जानना चाहिए !

- ६४. बीइंदि० उक्क॰ द्विदि०वं॰ तिरिक्खगिद-श्रोरालि॰-तेजा॰-क०-श्रोरालि०-श्रंगो०-श्रसंपत्त०-वर्णण०४-तिरिक्खा॰-श्रगु०-उप्०-तस-वादर-पत्ते०-दूभग--श्रणादे०-णिभि॰ णि० वं० संखेजगुणहीर्णं०। पर०-उस्सा॰-उज्जो०-श्रप्पसत्थ०-पञ्ज०-थिराथिर-सुभासुभ-दुस्सर-जस०-श्रजस० सिया॰ संखेजगुणहीर्णं०। श्रपज्ज० सिया॰। तं तु०। एवं तीइंदि०-चदुरिं०।
- हथ्र. आदाव॰ उक्त॰ द्विदिवं॰ तिरिक्खगदि॰-श्रोरालि॰-तेजा॰-क॰-हुंड॰-वगण॰ ४-तिरिक्लाणु॰-अगु॰ ४-बादर-पज्जत्त-पत्ते०-दूभग-अगादे०-णिमि॰ णि॰ अणु॰ संखेजनगुणहीणं०। एइंदि०-थावर॰ णिय०। तं तु॰। थिराथिर-सुभासुभ-जस०-अजस० सिया वं॰। यदि वं० संखेजनगुणहीणं०।
- १६. पर०- अपन्ज० उक्काद्विदिषं० तिरिक्खग०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंड-सं०-वएएा०४-तिरिक्खाणु०-अगु०-उप०-अधिरादिपंच-एिमि० णिय० संस्रेंजगुण-
- ९४. द्वीन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यश्चगित, श्रीदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, श्रसम्प्राप्तास्पादिका संहनन, वर्ण चतुन्क, तिर्यश्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु, उपघात, जस, बादर, प्रत्येक, दुर्मग, श्रनादेय श्रीर श्रीर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे संख्यात गुण होन स्थितिका बन्धक होता है। परघात, उच्छुास, उद्योत, श्रप्रशस्त विद्वायोगित, पर्याप्त, स्थिर, श्रस्थर, श्रम, श्रगुम, दुःखर, यशःकीर्ति श्रीर श्रयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे संख्यातगुण होन स्थितिका बन्धक होता है। श्रप्याप्तका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका मी बन्धक होता है यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेणा श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार श्रीन्द्रिय जाति श्रीर चतुरिन्द्रिय जातिके उत्कृष्ट स्थितिबन्धकी श्रपेणा सन्निकर्ष जानना चाहिए।
- ६५ श्रातपकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगित, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुएड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, दुर्भग, अनादेय श्रौर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो श्रुमुत्कृष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका बन्धक होता है। पकेन्द्रिय जाति श्रौर स्थावर इनका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर अनुतकृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर अनुतकृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुतकृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट की श्रोपेक्षा श्रमुतकृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवा भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। स्थिर, श्रस्थर, श्रुभ, श्रमुभ, यशकीर्ति श्रौर श्रयशकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रमतकृष्ट संख्यातगुणहीन स्थितिका बन्धक होता है।
- ९६, परघात और अपर्याप्त प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, औदारिक शरोर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुएड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुल्घु, उपघात, अस्थिर आदि पाँच और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो

ही०। चदुजादि-थावर-स्रुहुम-साधारण० सिया०। तं तु०। पंचिंदि०-श्रोरालि०श्रंगी-श्रसंपत्त०-तस०-बादर-पत्ते० सिया० संखेंज्जगुणहीर्ण०। मणुसगदि-मणुसाखु० सिया० संखेंजजगुणहीर्ण०।

१७. तित्थय० णिरयगदिभंगो । णविर णीलाए तित्थय० देवगदिसंजुत्तं भाणि-दव्वं । णविर थिराथिर-सुभासुभ-जस०-अ्रजस० सिया० संखेंज्जगुणहीणं । एवं धुविगाणं पि णिय० संखेंज्जगुणहीणं० ।

६८. तेऊए सत्तारणं कम्माणं श्रोघं । देवगदि० उक्क०द्विदिवं० पंचिदि०-तेजा० क०-समचदु०-वरणा०४-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-सुथग-सुस्सर-श्रादेँ०-णिमि० वं० संखेज्जगुर्णाहीर्णा० । वेउव्वि०श्रंगो०-देवाणु० णि० वं० । तं तु० । थिराथिर-सुभा-सुभ-जस०-श्रजस० सिया० संखेजजगुर्णाहीर्णा० । एवं देवगदिभंगो वेउव्वि०-वेउव्वि०

मनुत्कृष्ट संख्यातगुणहीन स्थितिका बन्धक होता है। चार जाति, स्थावर, सूक्ष्म श्रौर साधारण इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। विस्मसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूमसे लेकर पत्थका असंख्यातवाँ भाग न्यूमतक स्थितिका बन्धक होता है। पञ्चित्त्रिय जाति, श्रौदारिक आङ्गोपाङ्क, असम्प्राप्तास्पाटिका संहनन, त्रस, बादर और प्रत्येक इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियम से अनुत्कृष्ट संख्यातगुणहीन स्थितिका बन्धक होता है। मनुष्यगित और मनुष्यगत्यान नुपूर्वीका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका वन्धक होता है।

९७. तीर्थं इर प्रकृतिका भक्क नरकगितके समान है। इतनी विशेषता है कि नील लेखामें तीर्थं इर प्रकृतिके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका सन्निक्षं कहते समय देवगितके साथ कहना चाहिए। इतनी विशेषता है कि स्थिर, श्रस्थिर, श्रुभ, अश्रुभ, यशःकीर्ति और अयशःकीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातगुण होन स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंका भी नियमसे संख्यातगुणहोन अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है।

९८. पीत लेश्यामें सात कमोंका भङ्ग श्रीधके समान है। देवगितकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पश्चिन्दिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, अगुरुलधु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, त्रस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, श्रादेय श्रीर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातगुणुहीन स्थितिका बन्धक होता है। वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक श्राङ्गोपाङ्ग श्रीर देवगत्यानुपूर्वी इनका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका मो बन्धक होता है। किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका मो बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका मो बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेणा श्रनुत्कृष्ट, एक सयय न्यूनसे लेकर एल्यका श्रसंख्यातवाँ माग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। स्थिर, श्रस्थिर, श्रुम, श्रशुम, यशकीर्ति श्रीर श्रयशकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है। स्थिर, श्रस्थिर, श्रुम, श्रशुम, यशकीर्ति श्रीर श्रयशकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेणा श्रमुत्कृष्टसंख्यातगुण होन स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार देवगितिके समान वैक्रियिक

श्रंगो०-देवाणु० | श्राहार०-श्राहार०श्रंगो० श्रोघं | सेसं सोधम्मभंगो | एवं पम्माए वि | स्वारे एइंदि०-श्रादाव-थावरं वज्ज० |

हित्वं व्यापि व्यापं कम्माणं ब्रोघं। मोहणी व्याणदभंगो। देवगदि वक्क हित्वं व्यापि विवाद क्षेत्र सम्बद्ध व्याप् १ - ब्राण् १ - ब्राण् १ - ब्राण् १ - प्रमान् १ - स्मान् १ - स्मान्य १ - स्मान् १ - स्मान् १ - स्मान् १ - स्मान् १ - स्मान्य १ - स्मान्य १ - स्मान्य १ - स

१००. खइगस० सत्तरणां कम्माणं त्रोधिभंगो । मणुसगदि० उक्क०द्विदिवं० पंचिदि०-त्रोरालि०-तेजा०--क०-समचदु०--त्रोरालि०त्रंगो०-वज्जरि०--वराण०४--

शरीर, वैकियिक श्राङ्गोपाङ्ग श्रीर देवगत्यानुपूर्वीके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका श्राश्रय लेकर सन्नि-कर्ष ज्ञानना चाहिए।श्राहारक शरीर श्रीर श्राहारक श्राङ्गोपाङ्गके उत्कृष्ट स्थितिबन्धके श्राश्रयसे सिक्षकर्षश्रीधके समान है। तथाशेष प्रकृतियों के उत्कृष्टस्थितिबन्धके श्राश्रयसे सिन्नकर्ष सौधर्म कल्पके समान है। इसी प्रकार पद्मलेश्यामें भी ज्ञानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनके एकेन्द्रिय ज्ञाति, श्रातप श्रीर स्थावर इन तीन प्रकृतियोंको श्रोडकर सिन्नकर्ष कष्टमा चाहिए।

९९. शुक्ल लेश्यामें छुह कर्मोंका भङ्ग श्रोघके समान है। मोहनीय कर्मका भङ्ग श्रानत करपके समान है। देवगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवालाजीव पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मस्थारीर,समचतुरस्त्र संस्थान,वर्शचतुष्क, ब्रगुरुलघुचतुष्क,प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर त्रादेय श्रीर निर्माण इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे श्रनुत्रुष्ट संख्यातगुण हीन स्थितिका बन्धक होता है । वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक श्राङ्गोपाङ्ग श्रीर देवगत्यानुपूर्वी इनका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्क्रप्रकी श्रपेक्ता अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पर्यका श्रसंख्यातवीं भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है । स्थिर, श्रस्थिर, श्रम, श्रशुभ, यशःकीर्ति और श्रयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातगुरा होन स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार वैकियिक शरीर,वैकियिक ब्राङ्गोपाङ्ग ब्रीर देवगत्यानुपूर्वीकी उत्कृष्ट स्थितिबन्धकी श्रपेत्रा सन्तिकर्ष जानना चाहिए। तथा शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिबन्धकी श्रपेत्रा सन्ति-कर्ष त्रानत करूपके समान है। भव्य जीवोंमें सत्र प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धकी। ऋषेत्रा सन्निकर्ष श्रोधके समान है । श्रभव्य जीवोंमें मत्यक्षानियोंके समान है तथा सम्यग्द्रष्टियोंमें श्रवधिश्वानियोंके समान है।

१००. चायिक सम्यग्दिष्योंमें सात कमौका भङ्ग श्रविधिक्षानियोंके समान है। मनुष्य-गतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गीपाङ्ग, बज्जर्षभनाराच संहनन, वर्ण चतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, त्रसचतुष्क, मणुसाणु०-ऋगु०४-पसत्थ०-तस०४-ऋथिर--ऋगुभ--सुभग--सुस्सर--ऋदिँज्ज-अजस०--णिमि॰ णिय० वं० | तं तु० | तित्थय॰ सिया० | तं तु० | एवं ऋोरालि॰-ऋोरालि० ऋंगो०-वज्जरि०-मणुसाणु० |

१०१. देवगदि॰ उक्क०द्विदिबं॰ पंश्चिदि॰-तेजा०-क०-समचदु०-वरण्०४-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-अथिर-असुभ-सुभग-सुस्सर-आदे०-अजस॰-णिमि० णि० वं० । तं तु० । तित्थय॰ सिया० । तं तु० । वेउन्वि०-वेउन्वि०अंगो॰-देवाणुपु० णि० वं० । तं तु॰ । एवं वेउन्वियदुग-देवाणुपु॰ ।

१०२. पंचिद्दि० उक्क०द्विदिवं० तेजा०-क०-समचदु०-वराण्०४-त्रगु०४-पसत्थ०-तस०४-त्र्राथर-ब्रसुभ-सुभग-सुस्सर-ब्रादेज-अजस०-णिमि० णि० वं० । तं तु० ।

श्रस्थर, श्रश्चभ, सुभग, सुस्वर, श्रादेय, श्रयशःकीर्ति श्रीर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेत्ता श्रमुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदास्वित् बन्धक होता है श्रीर क्षत्रास्वित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकृष्ट श्रिष्ठ श्रीतका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। इसो प्रकार श्रीदारिक श्रद्धित श्रीदारिक श्रीदारिक आङ्गोपाङ्क, वद्धर्षभ नाराच संहनन श्रीर ममुष्यगत्यामुपूर्विक उत्कृष्ट स्थितिवन्धकी श्रपेत्ता सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१०१. देवगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायीगित, त्रस चतुष्क, श्रस्थर, श्रगुभ, सुभग, सुस्थर, श्रादेय, श्रयशकीति और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेचा श्रमुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पर्यका श्रसंख्यातवाँभाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। तिर्थिकर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् अवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भो बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेचा श्रमुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पर्यका श्रसंख्यातवाँभाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। वैकियिक शरीर, वैकियिक श्राङ्गोणङ्ग श्रीर देवगत्यानुपूर्वी इनका नियमसे बन्धक होता है। विन्नु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। विन्नु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। विन्नु कह उत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है। विन्यमसे उत्कृष्टकी श्रपेचा श्रमुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पर्यका श्रसंख्यातवाँभाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार च्यूनसे लेकर पर्यका श्रसंख्यातवाँभाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार वैकियिक क्षिक श्रीर देवगत्यानुपूर्वाके उत्कृष्ट स्थितवन्धकी अपेचा सन्धिक ज्ञानना चाहिए।

१०२. पञ्चेन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, त्रस चतुष्क, अस्थिर, अशुभ, सुभग, सुस्यर, आदेय, अयशःकीर्ति और निर्माण इनका नियमसे वन्धक मणुसगदि-देवगदि-स्रोरालि॰--वेउव्वि०-[ दो ]स्रंगो॰--वज्जरि०--दोस्राणु०--तित्थय० सिया० । तं तु॰ । एवमेदे पंचिदियभंगो ।

१०३. थिर॰ उक्क०द्विदिबं० पंचिदि०-तेजा॰-क॰-समचदु०-वएण्०४-श्रगु०४-पसत्थ०-तस॰४-सुभग-सुम्सर-आदे०-िएमि॰ एिय० संखेळादिभागू०। दोगदि-दोसरीर-दोश्रंगो०-वळारि०-दोश्राणु॰-श्रसुभ-श्रजस॰-तित्थय० सिया॰ संखेळादि-भागू०। सुभग-जसगि॰ सिया॰। तं तु०। एवं थिरभंगो सुभ-जस०।

ं १०४. वेदग०-उवसमस० झोधिभंगो । एावरि उवसम० तित्थय० उक्त०-हिदिबं० देवगदि-पंचिदि०-वेउव्विय०-तेजा०-क०-समचदु०-वेउव्वि० झंगो०-वएएा०४-देवाएु०-त्रगु०४-पसत्य०--तस०४-त्रथिर--त्रमुभ-सुभग--सुस्सर--स्रादेज्ज-स्रजस०--

होता है। किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है स्त्रीर अनुस्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेचा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रासंख्यातवीं भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। मनुष्यगति, देवगति, श्रीदारिक शरीर. वैकियिक शरीर. वज्रर्शमनाराच संहतन, दो ऋानुपूर्वी । तीर्थंकर तथा स्यात् वन्धक होता है और स्यात् अवस्थक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। ग्रीर ग्रमुस्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्रुष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अवेत्ता अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार पञ्चेन्द्रिय जातिके समान इन सब प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितियन्थकी ऋषेत्वा सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१०३. स्थिर प्रकृतिको उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्न संस्थान, वर्ण चतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, असचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। दो गति, दो शरीर, दो आहोपाइ, वज्रर्थभ नाराच संहमन, दो आनुपूर्वी, अग्रुभ, अयशकीर्ति और तीर्थङ्कर इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो वियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पर्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार स्थिर प्रकृतिके समान शुभ और यशकीर्तिके उत्कृष्ट स्थितिबन्धकी अपेना सन्तिकर्ष जानना चाहिए।

१०४. वेदक सम्यक्त्व श्रीर उपशम सम्यक्त्वमें श्रपनी सब प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धकी श्रपेत्ता सिक्षकर्ष श्रविधानी जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि उपशम सम्यक्त्वमें तीर्थंद्वर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव देवगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वैक्रियिक श्राहेश, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वैक्रियिक श्राहेश, वर्ण चतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विद्वायोगिति, अस चतुष्क श्रिस्थर, श्रग्रुभ, सुभग, सुस्वर, श्राहेथ, श्रयशकीर्ति श्रीर निर्माण इनका नियमसे वन्धक

णिमि० णि० वं०। णि० त्रगु० संखेंज्जगुणही०।

१०५. सासणे छएणं कम्माणं त्रोघं। त्रणंताणुवंधिकोध० उक्क०हिदिवं० पएणारसक०-इत्थि०-त्रादि-सोग-भय-दुगुं० एि० वं०। ए० तं तु०। एवमेदात्रो एकमें क्स्स। तं तु०। पुरिस० उक्क०हिदिवं० सोलसक०-भय-दुगुं० एि० वं० संखें ज्जदिभागू०। हस्स-रिद० सिया०। तं तु०। त्रादि-सोग सिया० संखें ज्जदिभागू०। हस्स० उक्क०हिदिवं० सोलसक०-भय-दुगुं० एिय० वं० संखें ज्जदिभागू०। हस्स० उक्क०हिदिवं० सोलसक०-भय-दुगुं० एिय० वं० संखें ज्जदिभागू०। इत्थि० सिया० संखें ज्जदिभागू०। पुरिस० सिया०। तं तु०। रिद० एियमा०। तं तु०। एवं रदीए वि।

होता है जो नियमसे अनुस्कृष्ट संख्यातगुणहीन स्थितिका बन्धक होता है।

२०५. सासादन सम्यक्त्वमें छुद्द कर्मीका भक्क श्रोघके समान है। श्रनन्तानुबन्धी कोधकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पन्द्रह कषाय, स्त्रीवेद, श्ररति, शोक. भय श्रौर जुगुन्साका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है ग्रौर अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि त्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेचा श्रनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्प ज्ञानना च।हिए । ऐसी श्रवस्थामें वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट की अपेत्रा अनुत्कृष्ट्रएक समय न्यूनसे लेकर पर्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थिति का बन्धक होता है। पुरुषवेदकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव सोलह कषाय, भय श्रीर जुगुप्साका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भागहीन स्थितिका बन्धक होता है। हास्य श्रौर रितका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् अवन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्ऋष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्रुष्टिकी श्रपेत्ता अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भागहीनतक स्थितिका बन्धक होता है। त्रप्रति त्रौर शोकका कदाचित् बन्धक होता है त्रौर कदाचित् ऋवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भागहीन स्थितिका बन्धक होता है। हास्यकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव सोलह क्षाय, भय श्रौर जुगुप्साका नियमसे वन्धक होता है। जो नियमसे संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। स्त्रोवेदका कदाचित् बन्धक होता है स्रोर कदाचित् स्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो तियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। पुरुषवेदका कदाचित् बन्धक होता है ग्रौर कदाचित् ग्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी ऋषेत्रा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पर्यका असंख्यातवाँ भाग द्दीनतक स्थितिका बन्धक होता है।रितका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है ऋौर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेका अनुत्कृष्ट्र एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातयाँ भाग द्योनतक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार रतिके उत्कृष्ट स्थितियन्थको ऋषेद्या भी सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

१०६. तिरिक्खगदि० उक्क०द्विदिबं० पंचिदि०-श्रोरालि०-तेजा०-क०-वामण-संटा०-श्रोरालि०श्रंगो०-खीलियसंघ०-वएण०४-तिरिक्खाण०-श्रा०४-श्रपसत्थ०-तस०४-श्रथरादिञ्च०-शिमि० णि० । तं तु० । उज्जो० सिया०। तं तु० । एवमेदाश्रो ऍकमेंकस्स । तं तु० ।

१०७. मणुसगदि० उक्त०द्विदिवं० पैचिदि०-श्रोरात्ति०-तेजा०-क०-श्रोरात्ति०-श्रंगो०-वएए।०४-श्रगु०-श्रप्पसत्थवि०-तस०४-श्रथिरादिछ०-िएमि० एए० संखेज्जदि-भागू० । । खुज्जसं०-वामएासं०-श्रद्ध०-खीलिय० सिया० संखेज्जदिभागू० । मणु-साणु० एि० । तंतु० । एवं मणुसागु० ।

१०二. देवगदि० उक्क० हिदिबं० पंचिदि०-तेजा०-क०-वरारा०४-ऋगु०४-तस०४-

१०६. तिर्यञ्चगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वामन संस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, कीलक संहनन, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु चतुष्क, श्रप्रशस्त विहायोगित, त्रस चतुष्क, श्रिश्यर श्रादि छह श्रौर निर्माण इनका नियमसे वन्धक होता है। किन्तु यह उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है। अदोतका कदाचित् बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। इसी प्रकार इनका परस्पर सन्मिकर्ष होता है। श्रीर सब वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। इसी प्रकार इनका परस्पर सन्मिकर्ष होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। इसी प्रकार इनका परस्पर सन्मिकर्ष होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। इसी प्रकार इनका परस्पर सन्मिकर्ष होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। इसी प्रकार इनका परस्पर सन्मिकर्ष होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। विषमसे उत्कृष्टकी श्रपेका श्रनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पत्थका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका वन्धक होता है।

१०७, मनुष्यगितकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शारीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघु, श्रप्रश्चास्त विहायोगिति, त्रसचतुष्क, श्रस्थिर श्राद्दं छह श्रौर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। कुन्जक संस्थान, वामन संस्थान, श्रर्धनाराच संहतन श्रौर कीलक संहतन इनका कदाचित् बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। मनुष्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। मनुष्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। वियमसे उत्कृष्टकि श्रपेत्त भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेत्ता श्रनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पत्थका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार मनुष्यगत्यानुपूर्वीके उत्कृष्ट स्थितिबन्धकी श्रपेत्ता सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१०८. देवगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, श्रसचतुष्क और निर्माण इनका नियमसे णिमि॰ णि॰ वं॰ संखेँजिदिभागू०। वेउव्वि०-समचदु॰-वेउव्वि०त्रंगो०-देवाणु०-पसत्थवि०-सुभग-सुम्सर-ब्रादें० णिय०। तं तु०। थिर-सुभ-जसगि० सिया०। तं तु०। ब्राथर-ब्रासुभ-ब्राजस० सिया० संखेँजिदिभागू०। एवं वेउव्वि०-वेउव्वि० श्रंगो०-देवाणु०।

१०६. समचढु० उक्त० द्विदिवं० पंचिदि०-तेजा०-क०-वरण० ४-द्यगु०४-तस०४-णिमि० णि० संखेजिदिभागृ० । तिरिक्खगिद-मणुसगिद-त्रोरालि०-त्रोरालित्रंगो०-चदुसंघ०-दोत्राणु०-त्रप्पसत्थवि०-त्र्राथरादिछ० सिया० संखेजिदिभागृ० । देवगिद-वेउच्वि०-वेउच्वि०श्रंगो०-वज्जरिस०-देवाणु०-पसत्थवि०-थिरादिछ० सिया०। तंतु० । एवं समचदु०भंगो पसत्थवि०-थिरादिछ० ।

वन्धक होता है। जो नियमसे अनुरकृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितका वन्धक होता है। वैक्तियिक शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वैकियिक आङ्गीपाङ्ग, देवगरयानुपूर्वा, प्रशस्त विहायोगित, सुभग, सुखर और आदेय इनका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुरकृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुरकृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। यदि अनुरकृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। विवाद स्थान से लेकर प्रथम असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। स्थिर, अभ और यशकीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुरकृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुरकृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुरकृष्ट स्थितिका कसंख्यातवाँ साग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है। अस्थिर, अशुभ और अयशकीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है। श्री प्रकृष्ट अथितका कदाचित् वन्धक होता है। श्री प्रकृष्ट क्षेत्र अयशकीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है। श्री प्रकृष्ट क्षेत्र अयशकीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है। श्री प्रकृष्ट क्षेत्र अयशकीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है। श्री प्रकृष्ट क्षेत्र क्राहे तो नियमसे अनुरकृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार वैकियिक शरीर, वैकियिक आङ्गोपाङ और देवगत्यानुपूर्वाके उत्कृष्ट स्थितवन्धकी अपेत्रा सनिकर्ष जानना चाहिए।

१०६. समचतुरस संस्थानकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, त्रस चतुष्क और निर्माण हनका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवों भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। तिर्यञ्चमित, मनुष्यमित, श्रीदारिक शरीर, श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, चार संहनन, दो त्रानुपूर्वो, अप्रशस्त विहायोगित श्रीर श्रस्थिर श्रादि छह इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् श्रयन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवों भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। यदि वन्धक होता है। देवगित, चैकियिक शरीर, चैकियिक श्राहि छह इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पत्थका स्थल्यातवों भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार समचतुरस्र संस्थानके समान प्रशस्त विहायोगित और स्थिर श्रादि छहके उत्कृष्ट स्थितिका स्रोक्त समान प्रशस्त विहायोगित और स्थिर श्रादि छहके उत्कृष्ट स्थितिक अपेक्षा सन्तिकर्प जानना चाहिए।

- ११०. सम्मोद० उक्त०हिदिनं० पंचिदि०-स्रोरालि०-तेजा०-क०-स्रोरालि० स्रंगो०-वएए०४-स्रपु०४-स्रप्पसत्थ०-तस०४-स्रथिरादिछ०-िएमि० िएय० नं० संखेँ ज्ञिदिभागू०। तिरिक्खगदि-मणुसगदि-तिरिएएसंघ०--दोस्राणु०--उज्जो० सिया० संखेँ ज्ञिदिभागू०। वज्जणारा० सिया०। तं तु०। एवं वज्जणारायएं। एवं सादियं पि। एवरि ए। स्यग्ं सिया०। तं तु०। [ एवं ] णारायएं।
- १११. खुज्ज० उक्क॰ द्विदिवं॰ तिरिक्खगदि-पंचिदि०-स्रोरालि॰-तेजा०-क०-स्रोरालि॰ स्रंगो॰-वरण० ४-तिरिक्खाणु०-स्रगु०४--स्रप्पसत्थ॰--तस०४-स्रथिरादिद्य०-णिमि० णि० वं॰ संखेजनिद्यागू० । खीलिय०-उज्जो० सिया॰ संखेजनिद्यागू॰ । स्रद्धणारा॰ सिया० । तंतु० । एवं स्रद्धणारा० ।
- ११०. न्यग्रोध परिमएडल संस्थानकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव पञ्चे-न्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मणशरीर, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग वर्णचतुष्क, त्रमुरुल्यु चतुष्क, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, त्रस्थिर त्रादि छह श्रीर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे संख्यातवाँ भागहीन अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति, तीन संहनन, दो आनुपूर्वी श्रौर उद्योतका कदा-चित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित श्रवन्धक होता है जो नियमसे संख्यातवीं भागहीन श्रनत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है । वज्रनाराचसंहननका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रयन्थक होता है । यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितका भी बन्धक होता है श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेना अनुन्कृष्ट, एक समय न्यूनसे क्षेकर पत्यका असंख्यातवीं भाग हीनतक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार बज्जनाराचसंहननके उत्कृष्ट स्थिति बन्धकी सन्निकर्प कहना चाहिए । तथा इसी प्रकार स्वातिसंस्थानके उत्कृष्ट स्थितिबन्धकी ऋषेचा भी सन्निकर्ष जामना चाहिए। इतनी विशेषता है कि यह नाराच संहननका कवाचित बन्धक होता है और कवाचित अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है ते। उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेदा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यनसे लेकर परुयका असंख्यातचीं भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार नाराच संहतनके उत्कृष्ट स्थितिचन्धकी अपेक्षा सन्तिकर्ष जानामा चाहिए।
- १११. कुन्जक संस्थानकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगित, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक श्रारीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु चतुष्क, श्रप्रास्त विहायोगिति, त्रसचतुष्क, श्रस्थर श्रादि छह श्रौर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातयाँ भागहीन स्थितिका बन्धक होता है। कीलक संहनन श्रौर उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातयाँ भाग हीन स्थितिका वन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो जित्रमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातयाँ भाग हीन स्थितिका वन्धक होता है। श्रुवंनाराच संहननका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भा वन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार श्रधंनाराच संहननके अत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार श्रधंनाराच संहननके उत्कृष्ट स्थितिवन्धकी श्रोचा सन्निकर्ष जानमा चाहिए।

- ११२. सम्मामि० श्रोधिभंगो । मिच्छे मदिभंगो । सिएए० मूलोघं । श्रसएएीसु पंचणा०-णवदंसणा०-मोहणी० छच्चीस-चदुश्रायु०-दोगोद०-पंचंत० पंचिदियतिरिक्खश्रपज्जत्तभंगो । णिरयगदिसंजुत्ताणं णामपगदीणं तिरिक्खोघं । तिरिक्खगदि० उक्क०हिदिबं० तेजा०-क०-हुंड०-वएण०४-श्रागु०-अधरादिपंच-णिमि०
  णि० संखेंज्जदिभागू०। एइंदि०-श्रोरालि०-तिरिक्खाणु०-थावर-सुहुम-श्रपज्ज०साधार० णि० । तं तु० । एवमेदासिं तंतु० पदिदाणं सरिसो भंगो ।
- ११३. मणुसग॰ उक्क०द्विदिबं॰ मणुसाणु० णि॰। तं तु०। सेसाणं संस्वेज्जदिभागु०।
- ११४. देवगदि॰ उक्क०द्विदिबं० पंचिदि०-वेउन्वि-तेजा०-क०-वेउन्वि॰ अंगो०-वरारा॰४-अगु॰४-तस॰४-िए। एा॰ संखेंज्जदिभागू॰। समचदु॰-देवाणु०-पसत्थ॰-सुभग-सुस्सर-आदें० एाय०। तं तु०। थिराथिर-सुभासुभ-जस॰-अजस॰ सिया०
- ११२. सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंमें श्रवधिज्ञानियोंके समान भङ्ग है। मिथ्यादृष्टि समान भक्त है। संझी जीवोंमें मूलोधके समान भक्त है। जीवोंमें मत्यशानियोंके असंशी जीवोंमें पाँच ब्रानावरण, नौ दर्शनावरण, छुब्बीस मोहनीय, चार श्राय, हो गोत्र श्रीर पाँच श्रन्तराय प्रकृतियोंका भक्त पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च श्रपर्याप्तकोंके समान है। नरकगति सहित नामकर्मकी प्रकृतियोंका भक्क सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है। तिर्यञ्चगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुब्क, अगुरुलघु, उपघात, ऋस्थिर ऋदि पाँच और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रमुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग होन स्थितिका बन्धक होता है। एकेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, स्थावर, सूदम, श्रपर्याप्त श्रौर साधारण इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेत्ता श्रनुत्कृष्टुएक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवीँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार 'तंतु' रूपसे कही गई इन प्रकृतियोंका सदश भंग होता है।
- ११३. मनुष्यगतिको उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव मनुष्यगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेता अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। तथा शेव प्रकृतियोंका अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है।
- १९४. देवगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वैक्रियिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, श्रागुरुलघु चतुष्क, श्रस् चतुष्क श्रौर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। समचतुरस्र संस्थान, देवगत्यानुपूर्वी, प्रशस्त विहागोगित, सुभग, सुखर श्रौर श्रादेय इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो निधमसे उत्कृष्टकी श्रपेक्षा श्रमुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका

संखेंज्जदिभागू० । एवं देवाणु० । चदुजादि० पंचिदिय०तिरिक्खअपज्जत्तभंगो ।

- ११५. समचदु॰ उक्त॰ द्विदिबं० पंचिदि०-तेजा॰-क॰-वएण०४-अगु०४-तस॰४-णि० णिय॰ संखेँज्जदिभागू० | दोगदि-दोसरीर-दोश्रंगो॰-पंचसंघ०-दोश्राणु०-उज्जोव-अप्पसत्थ०-थिराथिर-सुभासुभ-दूभग-दुस्सर-श्रणादेँ०-जस०-श्रजस० सिया० संखेँजदिभागू० | देवगदि-वज्जरि०-पसत्थ०-सुभग-सुस्सर-श्रादेँ० सिया० | तं तु० |
- ११६. चदुसंठा०-श्रोरात्ति०श्रंगो-चदुसंघ०--श्रादाउडजो०--थिर--सुभ--जसगि० अपडजत्तभंगो । श्राहार० श्रोघं । अणाहार० कम्मइगभंगो । एवं उक्कस्स-सत्थाण-सण्णियासं समत्तं ।
- ११७. उक्कस्सपरत्थाणसण्णियासे पगर्दं । एत्तो उक्कस्सपरत्थाणसण्णियास-साधणङ्कं ऋहपदभूदसमासलक्खणं वत्तइस्सामो । तं जहा--पंचिदियसण्णीणं

श्रसंख्यातवीं भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। स्थिर, श्रस्थिर, श्रभ, श्रश्नभ, यशःकीर्ति और अयशःकीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् श्रम्थक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्रुष्ट संख्यातवीं भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार देवगत्यानुपूर्वीके उत्कृष्ट स्थिति बन्धकी श्रपेत्ता सन्निकर्ष जानना चाहिए। चार जातिके उत्कृष्ट स्थितिबन्धकी श्रपेत्ता सन्निकर्ष पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च श्रपर्यातकोंके समान है।

११४. समचतुरस्न संस्थानकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चिन्दिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्ण चतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, अस चतुष्क और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भागहीन स्थितिका बन्धक होता है। दो गित, दो शरीर, दो आक्रोपाक, पाँच संहतन, दो आनुपूर्वी, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगित, स्थिर, अस्थिर, शुम, अशुभ, दुर्भग, दुःस्वर, अनादेय, यशःकीर्ति और अयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। देवगित, वज्रपंभनाराच संहतन, प्रशस्त विहायोगित, सुभग, सुस्वर और आदेग्र इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है । असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है।

११६. चार संस्थान, श्रीदारिक श्राक्कोपाङ्ग, चार संहनन, श्रातप, उद्योत, स्थिर, शुभ श्रीर यशःकीर्ति इनका भन्न श्रपर्यातककेसमान है। श्राहारक जीवोंका भन्न श्रोघके समान है। तथा श्रनाहारक जीवोंका भंग कार्मणुकाययोगी जीवोंके समान है।

इस प्रकार उत्कृष्ट स्वस्थान सन्निकर्ष समाप्त हुन्ना ।

१९७. श्रव उत्कृष्ट परस्थान सन्निकर्षका प्रकरण है । श्रतस्य श्रागे उत्कृष्ट परस्थान सन्निकर्षकी सिद्धिके लिए अर्थपदभूत समास लक्षणको बतलाते हैं उथथा—पञ्चेन्द्रिय त्रपज्जत्ताणं मिच्छादिद्दीणं अब्भवसिद्धियपात्रोगं श्रंतोकोडाकोडिपुथतं वंधमाणस्स दिदिउस्सरणं । तदो सागरोवमसदपुधतं उस्सिरद्ण मणुसायु० वंधश्रोंच्छेदो । तदो सागरोवमसदपुधत्तं उस्सिरद्ण तिरिक्तायु० वंधश्रोंच्छेदो । तदो सागरोवम० उस्सिरद्ण पुरिस०-समचदु०-वज्जरिसभ०-पसत्थवि०-सुभग-सुस्सर-आदे० एदाओ सत्त पगदीश्रो ऍक्कदो वंधन्वंच्छेदो । तदो सागरोवम० उस्सिर्ण एग्लारा० एदासि दोपगदीणं एकदो वंधश्रोंच्छेदो । तदो सागरोवम० उस्सिर्ण एग्लारा० एदासि दोपगदीणं एकदो वंधश्रोंच्छेदो । तदो सागरोवम० उस्सिरद्ण सादिय०-णारायण० एदाश्रो दोपगदीश्रो एकदो वंधवांच्छेदो । तदो सागरोवम० उस्सिरद्ण सादिय०-णारायण० एदाश्रो दोपगदीश्रो एकदो वंधवांच्छेदो । तदो सागरोवम० उस्सिरद्ण वामणसंठा०-खीलियसंघ० एदाश्रो दोपगदीश्रो ऍकदो वंधवांच्छेदो । तदो सागरोवम० उस्सिरद्ण मणुसग०-मणुसाग्रु० पज्जत्तसंजुत्ताश्रो दोपगदिश्रो वंधवोंच्छेदो । तदो सागरोवम० उस्सिरद्ण मणुसग०-मणुसाग्रु० पज्जत्तसंजुत्ताश्रो दोपगदिश्रो वंधवोंच्छेदो । तदो सागरोवम० उस्सिरद्ण चदुरि-दिय० पज्जत्तसंजुत्त० वंधवोंच्छेदो । तदो सागरोवम० उस्सिरद्ण तेइंदिय० पज्जत्तर्सरर०

संबी पर्याप्त मिथ्यादृष्टियोंमें अभव्योंके योग्य अन्तःकोड़ाकोड़ी पृथक्तव प्रमाण स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवके स्थितिका उत्सरस होता है । इससे श्रागे सौ सागर पृथक्त्व प्रमास स्थिति का उत्सरण करके मनुष्यायुकी बन्धन्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्व प्रमाण स्थितिका उत्सरण होनेपर तिर्यञ्चायुकी बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्व प्रमाण स्थितिका उत्सरण होनेपर उच्चगोत्रकी धन्धव्युच्छित्त होती है। इससे सौ सागर प्रथक्त प्रमाण स्थितिका उत्सरण होनेपर पुरुषवेद, समचतुरस्र संस्थान, वज्रर्षभ-नाराच संहनन, प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर श्रीर श्रादेय इन सात प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छिति होती है। इससे सौ सागर पृथक्तवका उत्सरण होनेपर न्यग्रोध परिमण्डल संस्थान और वज्रनाराच संहतन इन दो प्रकृतियोंको एक साथ बन्धन्यु व्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका उत्सरण होनेपर स्वाति संस्थान श्रौर नाराचसंहनन इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ बन्ध ब्युच्छित्ति होती है। इससे सी सागर पृथकत्व प्रमाण स्थितिका उत्सरण होनेपर स्त्री वेदकी बन्धव्युचिञ्चत्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त प्रमाण स्थितिका उत्सरण होनेपर कुन्जक संस्थान और अर्धनाराचसंहननकी एक साथ बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्तव प्रमाण स्थितिका उत्सरण होनेपर वामन संस्थान श्रीर कीलक संहनन इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छित्ति होती है । इससे सौ सागर पृथक्तव प्रमाण स्थितिका उत्सरण होनेपर पर्याप्त प्रकृतिसे संयुक्त मनुष्य-गति और मनुष्यगत्यानुपूर्वी इन दो प्रकृतियोंकी बन्धन्युन्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्तव प्रमाण स्थितिका उत्सरण होनेपर पर्याप्त प्रकृतिसे संयुक्त पञ्चेन्द्रिय जातिको बन्धन्युच्छित्ति होती है । इससे सौ सागर पृथक्त्वका उत्सरण होकर पर्याप्त संयुक्त चतुः रिन्द्रिय जातिकी बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका उत्सरण होकर पर्यप्त संयुक्त त्रीन्द्रियजातिकी बन्धब्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका उत्स-

पज्जनक एदास्रो तिषिण पगदीस्रो ऍकदो वंधवोँच्छेदो । तदो सागरोवमक उस्सरिदृण वादरण्इंदियपज्जनक - पत्तेगक - स्रादाज्जोक - जसिक एदास्रो पंच पगदीस्रो
ऍकदो वंधवोँच्छेदो । तदो सागरोवमक उस्सिरिदृण वादरण्इंदियपज्जन-साधारणक एदास्रो दोपगदीस्रो ऍकदो वंधवोँच्छेदो । तदो सागरोक उस्सिरिदृण सुहुमेइंदियपज्जन-पत्तेयक एदास्रो दोपगदीस्रो ऍकदो वंधवोँच्छेदो । तदो सागरोक उस्सिरिदृण सुहुमेइंदियपज्जन-साधारक - परक - उस्साक - धिरक - सुभक एदास्रो ख-पगदीस्रो ऍकदो वंधवोँच्छेदो । तदो सागरोक उस्सिरिदृण मणुसगठ - भणुसाणुक स्रपञ्जन संजुत्तास्रो दुव पगदीस्रो ऍकदो वंधवोँच्छेदो । तदो सागरोक अस्सिरिदृण प्राप्ति । तदो सागरोक अस्सिरिदृण चुहिंदियस्रपञ्जन क वंधवोँच्छेदो । तदो सागरोक अस्सिरिदृण चुहिंदियस्रपञ्जन क वंधवोँच्छेदो । तदो सागरोक अस्सिरिदृण चुहिंदियस्रपञ्जन क वंधवोँच्छेदो । तदो सागरोक अस्सिरिदृण बादरेइंदियस्रपञ्जन क पत्तेयसंजुत्तास्रो दो पगदीस्रो ऍकदो वंधवोँच्छेदो । तदो सागरोक अस्सिरिदृण बादरेइंदियस्रपञ्जन क पत्तेयसंजुत्तास्रो दो पगदीस्रो ऍकदो वंधवोँच्छेदो । तदो सागरोक उस्सिरिदृण साथरास्त्रा वादो सागरोक उस्सिरिदृण साथरास्त्रा साथराक उत्सिरिदृण साथरास्त्रा प्राप्ती विध्वोँच्छेदो । तदो सागरोक उस्सिरिदृण सुहुमेइंदियस्रपञ्जन प्राप्ती प्राप्ती प्राप्ती दोषिण प्रादीस्रो ऍकदो वंधवोँच्छेदो ।

रण हो कर पर्याप्त संयुक्त द्वीन्द्रिय जाति, श्राप्रशस्त विहायोगित श्रीर दुःस्वर इन तीन प्रकृतियोंकी बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्तवका उत्सरण होकर पर्याप्त संयुक्त बादर एकेन्द्रिय जाति, प्रत्येक, आतप, उद्योत और यशःकीर्ति इन पाँच प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युव्छित्ति होती है । इससे सौ सागर पृथक्त्वका उत्सरण होकर बादर एकेन्द्रिय पर्याप्त और साधारण इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युव्छिसि होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका उत्सरण होकर सूदम एकेन्द्रिय पर्याप्त औरप्रत्येक इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौसागर पृथक्तवका उत्सरण होकर स्क्म एकेन्द्रिय पर्यात्त, साधारण, परघात, उच्छ्वास, स्थिर श्रीर श्रुभ इन छह प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धन्युच्छिः त्ति होती है। इससे सौ सागरे पृथक्तवका उत्सरण होकर अपर्याप्त संयुक्त मनुष्यगति और मनुष्यगत्यानुपूर्वी इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धन्युन्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्तवका उत्सरण होकर अपर्याप्त संयुक्त पञ्चेन्द्रिय जातिकी बन्धन्युव्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका उत्सरग्रहोकर ग्रपर्याप्त संयुक्त चतुरिन्द्रिय जातिकी बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका उत्सरण होकर अपर्याप्त संयुक्त त्रीन्द्रिय जातिकी बन्धव्युच्छित्रि होती है। इससे सौ सागर पृथक्तवका उत्सरण होकर अपर्याप्त संयुक्त द्वीन्द्रिय जाति, श्रीदारिक ग्राङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन श्रीर श्रस इन चार प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छित्ति होती है । इससे सौ सागर पृथक्त्वका उत्सरण होकर बादर एकेन्द्रिय अपर्यात और प्रत्येक संयुक्त इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ बन्ध-ब्युच्छिति होती है। इससे सौ सागर पृथक्तवका उत्सरण होकर बादर एकेन्द्रिय अपर्याप्त श्रीर साधारण संयुक्त इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ वन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सी सागर पृथक्त्वका उत्सरण होकर सूक्ष्म एकेन्द्रिय अपर्याप्त और प्रत्येक संयुक्त इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छित्रत्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका उत्सरण

तदो सागरो० उस्सरिद्ण सादोवे०-इस्स-रिद् एटाञ्चो तिरिष्ण पगदीश्रो अपज्जत्त-संजुत्तात्रो ऍकदो बंधवोच्छेदो । एत्तो सेसाणं पयडीणं ऍकदो बंधवोच्छेदो होहिदि त्ति उकस्सए द्विदिवंधे । एवमपज्जत्तवंधवोच्छेदा भवंति । एवं सब्बञ्चपज्जत्ताणं ।

११८. उक्कस्सपरत्थाणसिष्णयासे पगदं । दुवि०-श्रोघे० श्रादे० । श्रोघेण श्राभिणिबोधि० उक्कस्सिट्टिवंधंतो चदुणा०-णवदंसणा०-श्रसादा०-मिच्छत्त-सोल-सक०-णवुंस०-श्ररदि-सोग-भय-दुगुं०-तेजा०-क०-हुंडसं०-वष्ण०४-श्रगु०४-बादर-पज्जत्त-पत्तेय०-श्रथरादिपंच-िणिम०-णिचा०-पंचंत० णि० बं० । तं तु० उक्कस्सा वा श्रणुक्कस्सा वा । उक्कस्सादो श्रणुक्तस्सा समयूणमादिं कादूण याव पिलदोवमस्स असंखेजिदिभागूणं बंधि । णिरयायु० सिया बंधि सिया श्रवंधि । यदि बंधि णियमा उक्कस्सा । श्रावाधि ग्रावाधा पुण भयणिज्जा । णिरय-तिरिक्खगदि-एइंदिय-पंचिदि०-श्रोशिल०-वंचिव०-दोश्रंगो०-श्रसंपत्त०-दोश्राणु०--श्रादाउज्जो०-श्रप्यत्थ०-तस-थावर-दुस्सर सिया० । तं तु० । एवमेदाश्रो ऍक्कमेक्कस्स । तं तु० काद्वा ।

होकर श्रपर्याप्त संयुक्त सातावेदनीय, हास्य श्रीर रित इन तीन प्रकृतियोंकी एक साध वन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे श्रागे उत्कृष्ट स्थितिबन्ध होनेपर शेष प्रकृतियोंकी एक साध वन्धव्युच्छिति होगी। इस प्रकार श्रपर्याप्त संयुक्त प्रकृतियोंकी वन्धव्युच्छिति होती है। इसी प्रकार सब श्रपर्याप्तकोंके जानना चाहिए।

११८. उत्कृष्ट परस्थान सन्निकर्षका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—श्रोघ श्रीर श्रादेश । श्रोधसे श्राभिनिबोधिकद्वान।वरणकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव चार झानावरण, नौ दर्शनावरण, श्रसाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोछह कषाय, नपुंसकवेद, त्ररति, शोक, भय, जुगुप्सा, तैजस शरीर, कार्मगुरारीर, हुग्डसंस्थान, वर्णचतुरक, त्रगुरुलघु चतुष्क, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, श्रस्थिर श्रादि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र श्रौर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। उसमें भी उत्कृष्टसे श्रनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है । नरकायुका कदाचित् बन्धक होता है श्रीट कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। परन्तु श्राबाधा भजनीय है। नरकगति, तिर्य-ञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति,पञ्चेन्द्रिय जाति. श्रौदारिक शरीर, वैकियिक शरीर, दो श्राङ्गोपाङ्ग. श्रसम्प्राप्तास्त्रपाटिका संहनन, दो श्रानुपूर्वी, श्रातप, उद्योत, श्रप्रशस्त विहायोगति, श्रस, स्थावर और दुःस्वर इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृपकी अपेता अनुत्रुष्ट्र,एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवीं भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होतः है । इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकष<sup>े</sup> जानना चाहिए । जो उत्कष्ट भी होता है श्रीर श्रनुत्कृष्ट भी होता है। उसमें भी उत्कृष्टकी श्रपेचा श्रनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर परयका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है।

१२०. इत्थि० उक्क०द्विदि०चं० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोल-सक०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०-पंचिदि०--छोरालि०-तेजा०-क०--छोरालि०ध्रंगो०--

११९. सातावेदनोयकी उत्छष्ट स्थितिका बन्धक जीव पीँच झानावरण, मौ दर्शना-वरण, मिध्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, तैजसशरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघु, उपघात, निर्माण श्रीर पींच श्रन्तराय इन प्रसृतियोंका नियमसे बन्धक द्वीता है। किन्तु वह नियमसे अनुरक्तृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। जो नियमसे उत्कृष्टकी अपेता श्रनुत्रुष्ट,दो भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है।स्रीवेद, मनुष्यगति श्रीर मनुष्यगत्यान् पूर्वी इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्रुष्ट स्थितिका बन्धक होता है जो उत्कृष्टकी अपेजा अनुत्कृष्ट. तीन भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। पुरुषवेद, हास्य, रति, देवगति, समचतुरस्र संस्थान, वज्रर्षभनाराच संहनन, देवगत्यानुपूर्वी, प्रशस्त विहायोगति, स्थिर श्रादि छह श्रीर उच्चगोत्र इन प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् ग्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। उसमें भी उत्कृष्टकी अपेचा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। नपुंसक वेद, अरित, शोक, तिर्य-इचगति, **एकेन्द्रिय जाति, पञ्चेन्द्रियज्ञा**ति, श्रौदारिक शरीर, वैक्रियिक शरीर, हुण्डसंस्थान, दो ग्राङ्गोपाङ्ग, त्रसम्प्राप्तास्पाटिका संहनन, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, परघात, उच्छास, श्रातप, उद्योत, श्रप्रशस्त विहायोगति, श्रस, स्थात्रर, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, श्रस्थिर श्रादि छह श्रीर नीचगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट,दो महम क्यून स्थितिका बन्धक होता है। तीन जाति, चार संस्थान, चार संहनन, सूक्ष्म, अपयोग श्रीर साधारण इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार हास्य और रतिके उत्कृष्ट स्थितिबन्धकी श्रपेदा सन्तिकर्ष जानना चाहिए।

१२०. स्त्रीवेदकी उत्क्रष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच झानावरण, नौ दर्श-नावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, श्ररति, शोक, भय, जुगुष्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रीदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, वग्गा॰ ४-अगु०४-अष्पसत्थ० तस०४-अथिरादिञ्च० शिम०-णीचा०-पंचंत० शिय० वं० । णि० अणु० । उक्क० अणु० चदुभागू० । तिरिचलग०-हुंडसं०-असंपत्त०-तिरिक्लागु०-उज्जो० सिया० । यदि० चदुभागू० । मणुसग०-मणुसागु० सिया० । तं तु० । खुज्ज० वामणसंडा०-अद्धणारा०-सीलियसं० सिया० संस्वेंजिदिभागू० । १२१, पुरिस० उक्क०द्विदि०वं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छत्त-सोलसक०-

१२१, पुरिस० उक्क द्विदि व पंचणा ॰ - णवदंसणा ॰ - मिच्छत्त - सोलसक ॰ -भय-दुमुं ॰ - पंचिदि ॰ - तेजा ० - क० - वएण ०४ - ऋगु ०४ - तस ०४ - िए मि ॰ - पंचेत ० िए ० वं ० । णि ० ऋणु ० दुभागू ० । सादावे ॰ - हस्स-रदि-- देवगदि-- समचदु ० - वज्जिरि ० -- देवाणु ॰ --पसत्थ ॰ - थिरादि छ ॰ - उच्चा ० सिया ० । तंतु ० । ऋसादा ० - ऋरदि-सोग - तिरिक्स्तग ० -ऋोरालि ॰ -- वे उन्विन-हुंड ० -- दो ऋंगो ० -- ऋसंपत्त ० -- तिरिक्खाणु ० -- उज्जो ० -- ऋष्मत्थ ० --ऋथिरादि छ ० - एगीचा ० सिया ० दुभागू ० । मणुसग ० मणुसाणु ० सिया ० तिभागूणं

अगुरुलघुचतुष्क, अप्रशस्त विद्वायोगित, अस चतुष्क, अस्थिर आदि छह, निर्माण, नीच गोत्र और पाँच अन्तराय इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह अनुत्रुष्ट स्थितिका बन्धक होता है। जो उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्रुष्ट चार भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। तिर्यञ्चगित, हुण्डसंस्थान, असम्प्राप्तास्पाटिका संहनन, तिर्यञ्च गत्यानुपूर्वी और उद्योत इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्रुष्ट चार भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। मनुष्यगित और मनुष्यगत्यानुपूर्वीका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है। यदि अनुत्रुष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्रुष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका मी बन्धक होता है। यदि अनुत्रुष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्रुष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। कुष्क संस्थान, वामन संस्थान, अर्थनाराच संहनन और कीलक संहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्रुष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्रुष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है।

१२१ पुरुप चेदकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव पाँच झानावरण, मौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, मय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजसशरीर, कार्मणशरीर,
वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, अस चतुष्क, निर्माण और पांच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक
होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट,दो भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। सातावेदनीय,
हास्य, रित, देवगित, समचतुरक्र संस्थान, वज्रषभनाराच संहनन, देवगत्यानुपूर्वी, प्रशस्त
विहायोगित, स्थिर आदि छह और उच्चगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है
और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो
नियमसे उत्कृष्टकी अपेचा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातयाँ भाग
न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। असातावेदनीय, अरित, शोक, तिर्यवचगित, औदारिक शरीर, वैकियिक शरीर, हुण्ड संस्थान, दो आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासरपाटिका संहनन,
तिर्यवचगत्यानुपूर्वी, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगिति, अस्थिर आदि छह और नीचगोत्र
इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो
नियमसे अनुत्कृष्ट,दो भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। मनुष्यगित और मनुष्यगत्या-

वं । चदुसंठा०-चदुसंघ० सिया० संखेडजदिभागू० । एवं पुरिसर्वेदभंगो समचदु०-पसत्थ०-सुभग०-सुस्सर-ब्रादेंडज ति ।

१२२. णिरयायु० उक्त॰ द्विदि०वं॰ पंचणा॰ णवदंसणा-असादावे०-मिच्छत्त-सोलसक॰ णवु'स०-अरिद-सोग-भय-दुंगुं०-णिरयग० पंचिदि-०वेउव्वि०-तेजा॰-क०-हुंडसं०-वेउव्वि०अंगो०-वएण्०४-णिरयाणु०-अगु०४--अप्पसत्थवि०--तस०४--अथ--रादिछ०-णिमि० णीचागो०-पंचंत० णि०। तं तु० उक्त० अणु० तिहाणपदिदं वंधदि। असंखेंज्जभागहीणं वा संखेंज्जदिभागहीणं वा संखेंज्जदिगुणहीणं वा।

१२३. तिरिवलायु॰ उक्क॰ द्विदिवं० पंचणा॰-णवदंसणा॰-मिच्छ॰-सोलसक॰-भय-दुगुं०-तिरिवलग०-पंचिदि०-झोरालि॰-तेजा०-क०-समचदु॰--झोरालि॰ झंगो०--वज्जरिसभ०--वराण०४--तिरिक्लाणु०--झगु०४--पसत्थवि०--तस०४--सुभग--सुस्सर--आदे०-णिमि०-णीचा॰-पंचेत० णि० वं० । णि० ऋणु० संखेजजिदगुराहीणं वं० । सादासा०-इत्थिवे०-पुरिस०-हस्स-रदि-ऋरदि-सोग-उज्जो-थिराथिर--सुभासुभ--जस०--

नुपूर्वी इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रनुन्कृष्ट तीन भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। चार संस्थान श्रौर चार संह्नमका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुन्कृष्ट संख्यातवीं भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार पुरुषवेदके समान समचतुरस्र संस्थान, प्रशस्त विहायोगित, सुभग, सुस्वर श्रौर श्रादेय इन प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१२२. नरकायुकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पींच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, श्रसातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसकवेद, अरित, श्रोक, भय, जुगुष्सा, नरकगित, पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्षियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वैक्षियिक श्राह्मेश्वाद, वर्णचतुष्क, वर्णचतुष्क, नरकगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, अप्रशस्त विहायोगित, त्रसचतुष्क, श्रस्थिर श्रादि छह, निर्माण, नीच गोत्र श्रीर पींच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिकाभी वन्धक होता है श्रीर अनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो तीन स्थान पतित स्थितिका बन्धक होता है, या संख्यात्वाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है, या संख्यात्वाँ भागहोन स्थितिका बन्धक होता है।

१२३. तिर्यञ्चायुकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच झानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व. सोलह कषाय, भय, जुगुष्सा, तिर्यञ्चगित, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गणङ्ग, वर्ज्ञर्थभ नाराच संहनन, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलधुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, त्रस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, श्राङ्गय, निर्माण, नीचगोत्र श्रौर पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका बन्धक होता है। साताचेदनीय, श्रसाता वेदनीय, स्थीवेद, पुरुषवेद, हास्य, रित, श्रादी, शोक, उद्योत, स्थर, अस्थिर, शुभ, श्रशुभ, यशःकीर्ति श्रीर श्रयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्थक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यात

त्रजस० सिया० संखेँजिदिगुणहीणं०। मणुसायु० तिरिक्खायुभंगो। एविर णीचागो० वज्ज०। उच्चा० णि० वं० संखेँजितिगुणहीणं।

१२४. देवायु० उक्क०द्विदिबं० पंचणा० छदंसणा० सादा० चदुसंज० पुरिसवे० -इस्स-रदि-भय-दुगुं० देवगदि पंचिदि० वेडिवि० तेजा० क० समचदु० वेडिव० य्रंगो० -वण्ण०४ देवाजु० - त्रगु०४ पसत्यवि० तस०४ थिरादिछ० - णिमि० - उच्चा० -पंचंत० -णि० बं० संखेंज्ञगुणहीणं० । तित्थय० सिया वं० संखेंज्जगुणही० ।

१२५. णिरयगदि० उक्क०द्विदि०वं० पंचणा०-णवदंसणा०-श्रसादा०-मिच्छत्त-सोलसक०-णवुंस०-श्ररदि-सोग-भय-दुगुं०-पंचिदि०-वेउव्वि०-तेजा०-क०-हुंडसंठा०-वेउव्वि०श्रंगो०-वरण०४-णिरयाणु०-श्रगु०४-श्रण्यस्थ०-तस०४ श्रथरादिछ०-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णिय० । तं तु० । णिरयायु० सिया बं० सिया श्रबं० । यदि बं० णि० उक्क० । श्रावाधा पुण भयणिज्ञा । एवं णिरयगदिभंगो वेउव्वि०-वेउव्वि०श्रंगो०-णिरयाणु० ।

गुण्हीन स्थितिका बन्धक होता है। मनुष्यायुका भङ्ग तिर्यञ्चायुके समान है। इतनी विशेषता है कि नीचगोत्रको छोड़कर जानना चाहिए। उच्च गोत्रका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रमुत्कृष्ट संख्यातगुण हीन स्थितिका बन्धक होता है।

१२४. देवायुकी उत्हृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पींच झानावरण, छह दर्शनावरण, साता वेदनीय, चार संज्वलन, पुरुषवेद, द्वास्य, रित, भय, जुगुप्सा, देवगित,
पञ्चेन्द्रिय जाति, चैिकियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान,
वैकियिक आङ्गोपाङ्क, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विद्वायोगिति,
जस चतुष्क, स्थिर आदि छह, निर्माण, उच्चगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे
वन्धक होता है जो नियमसे अनुत्रुष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिक। बन्धक होता है।
तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है।
होता है तो नियमसे अनुत्रुष्ट संख्यातगुणहीन स्थितिक। बन्धक होता है।

१२५. नरकगितकी उत्हृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच झानावरण, नी दर्शनावरण, असाता वेदनीय, मिध्यात्व, सोलह क्याय, नपुंसकवेद, अरित, शोक, भय, जुगुष्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, वैकियिक, शरीर, तैजसशरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वैकियिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, नरकगत्यानुपूर्वी, अगुरुलषु चतुष्क, अप्रशस्त विहायोगित, अस चतुष्क, अस्थिर आदि छह, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्हृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। वियमसे उत्कृष्टकी अपेचा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पद्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। नरकायुका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है। तरकायुका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। परन्तु आबाधा भजनीय है। इसी प्रकार नरकगतिके समान वैकियिक शरीर, वैकिथिक आङ्गोपाङ और नरकगत्यानुपूर्यीकी प्रमुखता से सन्तिकर्ष जानना चाहिए।

१. मृत्तप्रतौ सीचा० क्ति० इति पाठः ।

१२६. तिरिक्लगदि० उक्क०द्विदिवं० पंचणा०-ण्वदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-ण्वुंस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०-ओरालि०-तेजा०--क०-हुंड०--अएण्०४--तिरिक्लाणु०-अगु०४-बादर-पज्जत्त-पत्तेय०-अथिरादिपंच-ण्विमि०-णीचागो००-पंचंत० ण्यि० वं० । तं तु० । एइंदि०-पंचिदि०-ओरालि०अंगो०-असंपत्त०-आदाउज्जो०-अप्पसत्थ०-तस-थावर-दुस्सर० सिया० । तंतु० । एवं ओरालि०-[ओरालि०अंगो०-] तिरिक्लाणु० उज्जो० ।

१२७. मणुसगदि० उक्क०िदिवं० पंचणा०-णवदंसणा०-श्रसादा०-भिच्छ०-सोलसक०-श्ररदि-सोग-भय-दुगुं०-पंचिदि०[श्रोरालि०]-तेजा०-क०-श्रोरालि०श्रंगी०-वण्ण०४- श्रगु०-उप०-तस-वादर-पत्ते०-श्रथिरादिपंच-णिभि०-णीचा०-पंचंतरा० णिय० वं० चदुभागू०। इत्थिवे० सिया०। तंतु०। णुवुंस०-हुंडसं०-श्रसंपत्त०-पर०-उस्सा०-

१२६. तिर्यंक्यगितिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच झानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्य, सोलह कपाय, नपुंसकवेद, अरित, शोक, भय, जुगुप्सा, श्रोदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यंक्यगित्यानुपूर्वी, अगुष्लघु चतुष्क, वादर, पर्याप्त, प्रत्येक शरीर, श्रस्थिर श्रादि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र श्रोर पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेचा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। एकेन्द्रिय जाति, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रोदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तास्प्राटिका संहनम, श्रातप, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगित, अस, स्थावर श्रोर दुःस्वर इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रोर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अगुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रवत्कृष्ट स्थितिका अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। इसीपकार श्रीदारिक शरीर, श्रीदारिक श्राङ्गेपाङ्ग, तिर्यंक्चगत्यानुपूर्वी श्रीर उद्योत प्रकृतियांकी प्रमुखतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१२७. मनुष्यगितकी उत्हृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच झानावरण, नौ दर्शनावरण, ग्रासातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, श्ररित, श्रोक, भय, जुगुष्ला, पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रौदारिक आङ्गोपाग, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघु, उपघात, त्रस, यादर, प्रत्येक, श्रस्थिर श्रादि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र श्रौर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे श्रमुरुष्ठ चार भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है। श्रीवेदका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्हृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टको श्रपेचा श्रमुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे छेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है। नपुंसक वेद, हुएडसंस्थान, श्रसम्प्रासास्प्राटिका संहनन, पर्धात, उच्छ्वास, श्रप्रशस्त विहायोगित, पर्याप्त श्रीर दुःखर इनका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रमुत्कृष्ट चार भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रमुत्कृष्ट चार भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है।

अप्पसत्थ॰-पडजत्त०-दुस्सर० सिया० चदुभागू०। दोसंठा०-दोसंघ०-श्रपज्जत्त० सिया० संखेँजनगु०। मणुसाणु० णिय॰ वं०। णि० तं तु०। एवं मणुसाणु०।

१२८. देवगदि० उक्क िदिवं पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुंगुं०-पंचिदि०-वेउव्वि०--तेजा०--क०-वेउव्वि० त्रंगो०--वएण०४--त्रगु०४--तस०४--णिमि०-पंचंत० णि० वं० दुभागू०। सादावे०-पुरिस०-इस्स-रिद-थिर-सुभ-जस०-सिया०। तं तु०। श्रसादा०-श्ररिद-सोग-श्रथिर-श्रसुभ-श्रजस० सिया० दुभागूणं वं०। इत्थिवे० सिया० तिभागू०। समचदु०-देवाणु०-पसत्थवि०-सुभग-सुस्सर-श्रादे०-उच्चा० णिय० वं०। तं तु०। एवं देवाणु०।

दो संस्थान, दो संहनन और अपर्यात इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अव-न्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातगुणा होन स्थितिका बन्धक होता है। मनुष्यगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुन्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेत्ता अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार मनुष्यगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१२८. देवगतिकी उत्क्रष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला ज़ीव पाँच शानावरण, नौ दर्श-नावरण, मिथ्यात्व, सोलह कथाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, वैकियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मेख शरीर, वैक्रियिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, श्रमुरुत्तघु चतुष्क, त्रस चतुष्क, निर्माण और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट,दो भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। सातावेदनीय, पुरुषवेद, हास्य, रित, स्थिर, शुभ श्रौर यशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् ग्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेचा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्य।तयाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। श्रसाता बेदनीय, श्ररति, शोक, श्रस्थिर, श्रशुभ श्रीर श्रयशकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् ऋबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो नियमसे ऋनुत्कृष्ट,दो भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है । स्त्री वेदका कदाचित् वन्धक होता है स्त्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रवुरकृष्ट्रतीन भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है । समचतुरस्र संस्थान, देवगत्यानुपूर्वी, प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर, श्रादेय श्रीर उच्चगोत्र इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रुतुरकृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रुतुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्क्रष्टकी अपेत्रा अनुत्कृष्ट्र,नियमसे एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार देवगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सिन्नकर्प जानेमा चाहिए।

१२६. एकेन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, श्रसाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, नपुंसक वेद, श्ररति, शोक, भय, जुगु- हुंड०--वरण०४--तिरिक्खाणु०--च्चगु०४-थावर-वाद्र-पज्जत्त--पत्तेय०--च्चथिरादिपंच--णिमि०-णीचा०-पंचंत० णि० वं० । तं तु० । च्चादाउज्जो० सिया० । तं तु० । एव-मादाव-थावर० ।

१३०. बीइंदि० उक्क०िंदिवं० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-भिच्छ०-सोल-सक०-णबुंस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०-तिरिक्खगदि-ओरालिय०--तेजा०-क०-हुंड०-ओरालि०अंगो०-असंपत्त०-वरणा०४--तिरिक्खाणु०- अगु०-उप०-तस--वाद्र-पत्तेय०-अथिरादिपंच-णिभि०-णीचा०-पंचंत० णि० संखेडजिंदिभागू०। पर०-उस्सा०-उज्जो०-अप्पसत्थ०-वज्ज०-दुस्सर० सिया० संखेडजिंदिभागू०। अप्डजत्त० सिया०। तं तु०। एवं बीइंदि० तीइंदि०-चदुरिंदि०।

प्सा, तिर्यञ्चगति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुल चतुष्क, स्थावर, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, श्रस्थिर आदि पाँच. निर्माण, नीचगोत्र श्रौर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। श्रातप श्रौर उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुतकृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। यदि श्रनुतकृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टको श्रवेता श्रनुतकृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पत्थका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार श्रातप श्रौर स्थावर प्रकृतियाँकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१३० द्वीन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानाबरण, नी दर्शनावरण, ग्रसाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कथाय, नपुंसक वेद, श्ररित, शोक, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगति, ग्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुएड संस्थान, ग्रौदारिक शाक्षोपाङ्ग, असम्प्राप्तास्पाटिका संहनन, वर्ण चतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, ग्रगुरुलघु, उपघात, त्रस, बादर, प्रत्येक, ग्रस्थिर ग्रादि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र ग्रौर पाँच ग्रन्तराय हनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे ग्रमुरुष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। परघात, उच्छुास, उद्योत, ग्रप्रशस्त विहायोगिति, बर्ज्यक्षम नाराच संहनन ग्रौर दुःस्वर इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् ग्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे ग्रमुरुष्ट संख्यातवों भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो वियमसे ग्रमुरुष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है ग्रौर अनुरुष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है। यदि वन्धक होता है। यदि श्रमुरुष्ट स्थितिका ग्रमुरुष्ट स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार द्वीन्द्रिय जातिके समान त्रीन्द्रिय ग्रौर चनुरिन्द्रिय जातिकी मुख्यतासे सन्निकर्य जानना चाहिए।

१३१. पंचिदियस्स उक्क०द्विदिवं० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छत्त०-सोलसक०-णवुंस०-अरिद्-सोग-भय-दुगुं०-तेजा०-क०-हुंड०-वएण०४-अगु०४-अप्पसत्थ०-तस०४-अथिरादिछ०-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णि० वं०। तं तु०। णिरयागु० णाणावरणभंगो। णिरयगदि-तिरिक्खगदि-ओरालि०-वेउव्वि०-दौंअंगो०-असंपत्त०-दोआणु०-उज्जो० सिया०। तं तु०। एवं पंचिदियभंगो अप्पसत्थ०-तस-दुस्सर०।

१३२. ब्राहारसरी० उक्क ० द्विवं० पंचणा०-छदंसणा०-सादावे०-चदुसंज०पुरिस०-हस्स-रिद-भय--दुगुं०-देवगदि--पंचिदि०-वेडिव०-तेजा०-क०-समचदु०वेडिव० ब्रंगो०-वएण ०४-देवाणु०-त्रगु०४-पसत्थ०-तस०४-थिरादिछ०-णिमि०उच्चा०-पंचेत० णि० वं० संखेजगुणही० । ब्राहार० ब्रंगो० णि० वं० । तं तु० ।
तित्थय० सिया० संखेजगुणहीणं० । एवं ब्राहार० ब्रंगो० ।

१३१. पञ्चेन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच क्षानावरण, नौ दर्शनावरण, श्रसाता वेदनीय, मिध्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसक वेद, श्ररित, शोक, भय, जुगुप्सा, तेजस शरीर, कामेण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्ण चतुष्क, श्रगुरुलघु चतुष्क, श्रम्श्यस्त विहायोगित, त्रस चतुष्क, श्रस्थिर श्रादि छह, निर्माण, नीचगोत्र श्रौर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट की श्रपेत्ता श्रातुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है । नरक गत्यानुपूर्वीका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है । नरकगित, तिर्यञ्चगित, श्रौदारिक शरीर, वैकियिक शरीर, दो श्राङ्गोपङ्ग, श्रसम्प्राधास्प्राटिकासंहनन, दो आनुपूर्वी शौर उद्योत इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है । यदि वन्धक होता है हो यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेत्ता श्रीत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पत्थका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार पञ्चित्कृष्ट ज्ञातिके समान श्रप्रशस्त विहायोगित, त्रस श्रीर दुःखर प्रकृतियोंकी प्रमुखतासे सिन्नकर्ष ज्ञानमा चाहिए।

१३२. ब्राहारक शरीरकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ब्रानावरण, छह दर्शनावरण, साता वेदनीय, चार संज्वलन, पुरुप वेद, हास्य, रित, भय, जुगुप्सा, देवगित, पञ्चेन्द्रिय जाति, वैकियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वैकियिक ब्राह्मोपाङ्ग, वर्णचतुरक, देवगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु चतुरक, प्रशस्त विहायोगित, जस चतुरक, स्थिर ब्राह्म छह, निर्माण, उच्चगोत्र और पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यात गुण् हीन स्थितिका बन्धक होता है। श्राहारक शरीर श्राङ्मोपाङ्गका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेचा श्रनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पत्थका असंख्यातवों भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। तीर्थङ्कर प्रश्तिका कदाचित् बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यात गुणहोन स्थितिका बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यात गुणहोन स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार श्राहरिक श्राङ्गोपाङ्गकी मुख्यतासे सन्निकर्य जानना चाहिए।

१३३. एग्गोद॰ उक्क॰ द्विदिबं० पंचणा० णवदंसणा० स्रसादा॰ मिच्छ०-सोलसक० - अरदि-सोग-भय-दुगुं॰ - पंचिदि० - ओरालि० न्तेजा० - क० - ओरालि० अंगो० -वएण० ४ - अगु० ४ - अपसत्थ० - तस० ४ - अथिरादिछ॰ - िष्कि॰ - णीचा० - पंचंत० िण० वं० संखेँ जिदिभागू० । इत्थि० - एगुंस० - तिरिक्खग० - मणुसग० - चदुसंघ० - दो आणु० -उज्जो॰ सिया० संखेँ जिदिभागू० । वज्जणारा० सिया० । तं तु० । एवं वज्जणा-रायण० । सादिय० एवं चेव । एवरि णाराय० सिया० । तंतु० । [ एवं णारायणं । ]

१३४. खुज्ज० उक्क०िदिवं० पंचणा०-णवदंसणा०-ग्रसादा०-भिच्छ०-सोल-सक०-णवुंस०-ग्ररिद-सोग-भय-दुगुं०-तिरिक्खगिद-पंचिदि०-ग्रोरात्ति०-तेजा०-क०-त्र्योरात्ति०त्र्यंगो०-वएण०४-तिरिक्खाणु०-त्रगु०४-त्रप्यसत्थ० तस०४-त्रिथरादि इ०-णिमि०-णीचा०-पंचेत० णि० वं० णि० संखेंजनिदभागूणं० | दोसंघ०-उज्जोव०

१३३. न्यद्रोध परिमण्डल संस्थानकी उत्क्रप्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच शानावरण, नौ दर्शनावरण, ऋसाता वेदनीय, मिध्यात्व, सोलह कपाय, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रौदारिक श्राङ्गो-पाङ्ग, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, अस्थिर आदि छह. निर्माण, नीचगोत्र श्रीर पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रन्-त्कृष्ट संख्यातयों भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। स्त्री येद, नपुंसक वेद, तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति, चार संहनन, दो श्रानुपूर्वी और उद्योत इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रानुत्कृष्ट संख्यातवीं भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। बज्रानाराच संहननका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदा-चित् ग्रबन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और ग्रानुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि ग्रानुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियम-से उत्हारकी अपेदा अनुतक्तर, एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार वज्रमाराच सहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। स्वाति संस्थानको मुख्यतासे भी सन्निकर्ष इसी प्रकार जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि यह नाराच संहननका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थिति का भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेचा श्रमुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातची भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार नाराच संहतनकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चहिए।

१३४. कुब्जिक संस्थानकी उत्हृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच श्वामावरण, नौ दर्शनावरण, श्रसाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, नपुंसक वेद, श्ररित, शोक, भय, जुगुष्सा, तिर्थञ्चगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्ण चतुष्क, तिर्थञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु चतुष्क, श्रप्रशस्त विहायोगित, त्रस चतुष्क, श्रस्थिर श्रादि छह, निर्माण, नीचगोत्र श्रौर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो निययसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है।

सिया॰ संखेंज्जदिभागू० | श्रद्धणारा० सिया० | तं तु० | एवं श्रद्धणारा० | वामणसंठा० तं चेव | स्वविर स्वीत्तिय० सिया० | तं तु० | श्रसंपत्त०-उज्जो० सिया॰ संखेंज्जदिभागू० | एवं स्वीतिय० |

१३५. त्रोरालि॰ त्रंगो॰ उक्त॰ द्विदिबं॰ पंचणा०-णवदंसणा०-त्रसादा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-त्ररदि--सोग--भय-दुगुं०--तिरिक्खगदि--पंचिदियजादि--त्रोरालिय०-तेजा०-क०-हुंड०-श्रसंपत्त०-वएण०४-तिरिक्खाणु०-श्रगु०४-श्रपसत्थ०-तस०४-त्रथिरादिछ०-णिमि०-णीचागो०-पंचंत० एिय० बं० तं तु०। उज्जो० सिया०। तं तु०। एवं श्रसंपत्त०।

१३६. वज्जरि० उक्क०द्दिदिवं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-

श्रर्धनाराच संहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है शौर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेचा श्रनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार श्रधंनाराच संहननकी मुख्यंतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। वामन संस्थानकी मुख्यंतासे सन्निकर्ष इसी प्रकार है। इतनी विशेषता है कि यह कीलक संहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेचा श्रमुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। श्रसम्प्रासाख्याटिका संहनन श्रीर उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार कीलक संहननकी श्रपेचा सन्भिकर्ष जानना चाहिए।

१३४. श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्गकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव पाँच झाना वरण, नी दर्शनावरण, श्रसाता वेदनीय, मिध्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसकवेद, श्ररित, शोक भय, जुगुष्सा, तिर्यञ्चगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रीदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुएडसंस्थान, श्रसम्प्राप्तास्प्रपिटिका संहनन, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यातुपूर्वी, अगुरुलयु चतुष्क, श्रप्रशस्त विहायोगित, त्रस चतुष्क, श्रस्थिर श्रादि छह, निर्माण, नीचगोत्र श्रीर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेत्ता श्रमुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। उद्योत प्रकृतिका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका श्रमुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पत्थका श्रसंख्यातवीं भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार श्रसम्प्रक्षास्तृष्टिका संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१३६. वज्रर्षभ नाराच संद्दननकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच झाना-

भय-दुगु ॰-पंचिदि०-[त्रोरालि]०-तेजा०-क०-त्रोरालि॰त्रंगो०-वण्ण०४-त्रगु०४-तस० ४-णिमि०-पंचंत० णि० वं० दुभागू० | सादा०-पुरिस०-हस्स-रदि-समचदु०-पसत्थ०-थिरादिछ०-उच्चा० सिया० | तं तु० | त्रसादा०-णवुंस०-त्ररदि-सोग-तिरिक्खग०-हुंडसं०-तिरिक्खाणु०-उज्जो०-श्रप्पसत्थ०-त्रथिरादिछ०-णीचागो० सिया०दुभागू० | इत्थि०-मणुसग०-मणुसाणु०सिया०तिभागू०|चदुसंठा० सिया संखेजनिदभागू०वंघदि |

सक०-एवुंसग०-अरदि-सोग-भय-दुगुं ०-तिरिक्खगदि-एइंदिय०--श्रोरात्ति०--तेजा०--क०-ऋोरालि०-हुंडसं०-वएरा०४-तिरिक्खागु०-ऋगु० ४-उप०-थावर-ऋथिरादिपंच-णिमि॰-णीचा॰-पंचंत॰ णि॰ वं॰ संखेँजिद्भाग्॰। पर०-उस्सा॰-पज्जत्त-पत्तेग॰ सिया० संखेँज्जदिभागू० । ऋपज्जत्त-साधारण् सिया० । तंतु० । एवं साधारण्० । वरण, मौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सीलह कषाय, भय, जुगुण्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रीदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्ण चतुष्क, श्रगुरुलघु चतुष्क, त्रस चतुष्क, निर्माण श्रौर पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रनुत्रुष्ट,दो भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। साता वेदनीय, पुरुषवेद, हास्य, रति, समचतुरस्र संस्थान, प्रशस्त विहायोगति, स्थिर ग्रादि छह ग्रौर उद्यगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है त्रौर कदाचित् त्रायन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्क्रप्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। ग्रसाता वेदनीय, नपुंसकवेद, त्ररति, शोक, तिर्यञ्चगति, हुण्ड संस्थान, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी उद्योत, त्रप्रशस्त विहायोगति, त्रस्थिर क्रादि छह और नोचगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है क्रीर कदाचित् ऋबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट दो भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। स्त्रीवेद, मनुष्य गति श्रीर मनुष्यगत्यानुपूर्वी इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट तीन भागन्यून स्थितिका बन्घक होता है। चार संस्थानका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् ग्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे ब्रानुत्कृष्ट संख्यातवाँ माग न्यून स्थितिका बन्धक होता है ।

१३% स्ट्मकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच क्षामावरण, मौ दर्शनाः वरण, श्रसाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसकवेद, श्ररित, शोक, भय, जुगुप्सा, तिर्यश्चगित, एकेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रोदारिक श्राङ्गो-पाङ्ग, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यश्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु चतुष्क, उपधात, स्थावर, श्रस्थर श्रादि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र श्रोर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संस्थातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। परधात, उच्छ्वास, पर्याप्त श्रोर प्रत्येक इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रोर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संस्थातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। श्रप्याप्त श्रोर साधारण इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेजा श्रनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार साधारण प्रकृतिकी मुख्यतासे सन्मिकर्ष जानना चाहिए।

१३८. अपज्जत्त० उक्क०द्विदिबं० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छत्त-सोलसक०-णवुंस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०--तिरिक्खग०--ओरालि०--तेजा०--क०--हुंडसं०-वएण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०-उप०--अथिरादिपंच--णिमि०--णीचा०--पंचंत० णिय० बं० संखेंज्जदिभागू०। एइंदि०-पंचिदि०-ओरालि०अंगो०-असंपत्त०-तस-थावर-बादर-पत्तेय० सिया० संखेंज्जदिभागू०। तिणिणजादि-सुहुम-साधारणं सिया०। तं तु०।

१३६. थिर॰ उक्क०द्विदिनं॰ पंचणा०-एवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुं०-तेजा०-क०-वर्गण०४-अगु०४-पडजत्त-िणिम०-पंचंत० णि० बं० दुभागू०। सादा०-पुरिस०-इस्स-रिद्-देवगदि-समचदु०-वज्जरिस०-देवाणु०-पसत्थ०-सुभादि-पंच०-उच्चा० सिया०। तं तु०। असाद०-णवुंस-अरिद-सोग-तिरिक्खगदि-एइंदि०-पंचिदि०-ओरालिय०-वेउिवय०--हुंडसं०-दोअंगो०-असंपत्त०-तिरिक्खाणु०-आदा-

१३८. अपर्यात प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पांच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिण्यात्व, सोलह कषाय, नयुं सकवेद, अरित, शोक, मय, जुगुप्सा, तिर्यञ्च गति, शौदारिकशरीर, तैजस शरीर, कार्मणशरोर, हुएड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघात, अस्थिर आदि पाँच, निर्माण, नीच गोत्र और पांच अन्तराय दनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्रुष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थिति का बन्धक होता है। एकेन्द्रिय जाति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तास्य पाटिका संहनन, जस, स्थावर, बादर और प्रत्येक इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्रुष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। तीन जाति, सूझ्म और साधारण इनका कदाचित् बन्धक होता है शौर कदाचित् अवन्धक होता है, यदि बन्धक होता है तो उत्रुष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है तो उत्रुष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे उत्रुष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्रुष्ट स्थितिका क्षिक होता है। यदि अनुत्रुष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्रुष्ट स्थितिका अपेता अनुत्रुष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पर्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है।

१३६. स्थिर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नी दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, भय, जुगुप्सा, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतु कि, अगुरुलघु चतुष्क, पर्याप्त, निर्माण और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अगुत्कृष्ट दो भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। साता वेदनीय, पुरुषवेद, हास्य, रित, देवगित, समचतुरक्ष संस्थान, च्राव्यभनाराच संहनन, देवगत्यानुपूर्वी, प्रशस्त विहायोगित, शुभ आदि पाँच और उच्चगोत्र इनका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अगुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अगुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टका अपेचा अगुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्थका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। असाता वेदनीय, नपुंसकवेद, अरित, शोक, तिर्यञ्चगित, पकेनिवय जाति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, वैकियिक शरीर, हुण्ड संस्थान, दो आङ्गोपाङ, असस्प्राताखुपटिका संहनन, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, आतप, उद्योत, अप्रशस्त विहायो-

उज्जो ०-- ऋष्पसत्थ ०--तस-थावर-वादर--पत्तेय ०-- ऋग्वभादिपंच-णीचा ० सिया ० दुभागू ० । इत्थि ०- मणुसगदि- मणुसाणु ० सिया ० तिभागू ० । तिषिणजादि-चदुसंठा ० चदुसंघ ० - सुहुम-साधार ० सिया ० संखें ज्जिदिभागू ० । एवं सुभ-जस ० । स्विरि अजस ० - सुहुम-साधार संवें ज्जिति ।

१४०. तित्थय० उक्क०हिदिबं० पंचणा०-छदंसणा०-असादा०-बारसक०-पुरिस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०-देवगदि-पंचिदि०-वेडिव्व०-तेजा०-क०--समचदु०--वेडिव्व०अंगो०-वएण०४-देवाणु०-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-अथिर-असुभ-सुभग-सुस्सर-आदे०-अजस०-िणमि०-उच्चा०-पंचंत० णि० वं० णि० संखेंजजगुणही०। उच्चा० पुरिसवेदभंगो। णवरि तिरिक्खगदि-तिरिक्खाणु०-उज्जोवं वज्ज।

१४१. त्रादेसेण ऐरइएसु त्राभिणिबोधियणाणा० उक्क०हिदिवं० चदुणा०-णवदंसणा०-त्रसादा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-त्ररिद-सोग-भय-दुगुं०--तिरि--क्लगदि-पंचिदि०--त्रोरालि०--तेजा०--क०-हुंड०--त्रोरालि०त्रंगो०--त्रसंपत्त०--

गति, प्रस स्थावर, बादर, पर्याप्त, अशुभ श्रादि पाँच श्रीर नीचगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रनु-त्कृष्ट दो भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। खीवेद, मनुष्यगति श्रीर मनुष्य गत्यानुपूर्वी इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट तीन भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। तीन जाति, चार संस्थान, चार संहनन, स्कृम श्रीर साधारण इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार श्रम श्रीर यशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि श्रयशःकीर्ति, स्कृम श्रीर साधारण इन प्रकृतियोंको छोड़ कर यह सन्निकर्ष कहना चाहिए।

१४०. तीर्थंङ्कर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच झानावरण, छह दर्शनावरण, श्रसाता वेदनीय, वारद्द कषाय, पुरुष वेद, श्ररित, शोक, भय, जुगुष्सा, देवगित, पञ्चेन्द्रिय जाति, वैकियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वैकियिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्ण चतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगिति, वस चतुष्क, श्रस्थिर, श्रग्रुभ, सुभग, सुस्वर, श्रादेय, श्रयशक्तीर्ति, निर्माण, उच्चगोत्र श्रीर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका वन्धक होता है। उच्चगोत्रका भङ्ग पुरुषवेदके समान है। इतनी विशेषता है कि इसके तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी श्रीर उद्योत इन तीन प्रकृतिर्योको छोड़कर सन्निकर्ष कहना चाहिए।

१४१. त्रादेशसे नारिकयोंमें त्राभिनिबोधिक ज्ञानावरणकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, त्रसाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसक वेद, त्ररति, शोक, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगति, पञ्चेन्द्रिय ज्ञाति, त्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, त्रौदारिक त्राङ्गोपाङ्ग, त्रसम्प्राप्तास्रुपाटिका संह-

१. मूलप्रती ग्वारि जस० इति पाठः।

वररा॰४-तिरिक्त्वाणु ०-ऋगु०४-ऋष्यसत्थ०-तस०४-ऋथिराद्छ०-सिम०--सीचा०--पंचंत० सि० वं० | तं तु० | उज्जो० | सिया० | तं तु० | एवमेदास्रो ऍक्क-मेंक्कस्स | तं तु० |

१४२. सादा० उक्क विदिवं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुं ॰-पंचिदि॰-स्रोरालि०-तेजा०-क०-स्रोरालि० स्रंगो०-वगण०४--स्रगु०४--तस०४--णिमि०-पंचंत० णि० वं० णि० दुभागू० । इत्थि०-मणुसगदि०-मणुसाणु० सिया० वं० तिभागू० । एखुंस०-स्ररदि-सोग-तिरिक्खगदि-हुंड०--स्रसंपत्त०--तिरिक्खाणु०--उज्जो०-स्रणसत्थ०-स्रथिरादिछ०-णीचा० सिया० दुभागू० । पुरिस०-इस्स-रदि-समचदु०-वज्जरि०-पसत्थ०-थिरादिछ०-उच्चा० सिया० । तं तु० । चदुसंठा०-चदु-

नन, वर्णंचतुष्क, तिर्यश्च गत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, अप्रशस्त विहायोगित, अस चतुष्क, अस्थिर आदि छह, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है। यदि जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। यदि विवास असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है। उद्योतका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेदा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पर्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सिक्कर्ष जानना चाहिए। और ऐसी अवस्थाम यह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्की अपेद्या अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पर्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका वन्धक होता है।

१४२. साता वेदनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, स्रोलह कषाय, भय, जुगुष्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रौदारिक त्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, त्रगुरुलघु चतुष्क, त्रस चतुः ष्क, निर्माण और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट दो भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है स्त्रीवेद, मनुष्यगति श्रीर मनुष्यगत्यानुपूर्वी इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् ऋबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो नियम से अनुत्कृष्ट तीन भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है । नपुंसकवेद, अरति, शोक, तिर्यञ्च-गति, हुएड संस्थान, असम्प्राप्ताखुपाटिका संद्वनन, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वा, उद्योत, श्रवशस्त विद्या-योगति, श्रस्थिर श्रादि छह श्रौर नीचगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् अबन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट दो भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। पुरुषवेद, हास्य, रति, समचतुरस्र संस्थान, वज्रर्षभ नाराच संहनन, प्रशस्त विहायोगति, स्थिर ऋदि छह श्रौर उच्चगोत्र इनका कदाचित् वन्धक होता है और **कद**।चित् त्रवन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी *ब*न्धक होता है श्रीर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेन्ना अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्थका असंख्यातवाँ भाग न्युन तक स्थितिका बन्धक होता है । चार संस्थान और चार संहननका कदाचित बन्धक

संघ० सिया० संखेंज्जिदिभागू०। एवं सादभंगो पुरिस०-इस्स-रदि-समचदु०-वज्जरि०-पसत्थ०-थिरादिछ०।

१४३. इत्थि० उक्क०हिदिबं० पंचणा०-णवदंसणा०-असादावे०-मिच्छ०-सोलसक०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०-पंचिद्दि०-श्रोरालि०-तेजा०-क०-श्रोरालि०श्रंगो०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-अप्पसत्थ०-तस०४-श्रथिरादिछ०-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णि० वं० चदुभागू० । तिरिक्खगदि-हुंड०-असंपत्त०--तिरिक्खाणु०--उज्जो० सिया० चदुभागू० । मणुसग०-मणुसाणु० सिया० । तं तु० । दोसंडा०-दोसंघ०--सिया० संखेंज्जदिभागू० ।

१४४. तिरिक्खायु० उक्त०हिदिबं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोत्तसक०-भय-दुगुं०--तिरिक्खगदि--पंचिंदियजादि---श्रोरात्ति०--तेजा०--फ०--श्रोरात्ति०श्रंगो०--वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-श्रगु०४-तस०४-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णि० वं० संखेंज्ज-गुणुही० । सादावे०-श्रसादावे०-सत्तणोक०-छस्संठा-०-छस्संघ०-उज्जो०-दोविहा०-

होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार साता प्रकृतिके समान पुरुष वेद, हास्य, रित, समचतुरस्र संस्थान, वज्जर्षभनाराच संहनन, प्रशस्त विहायोगित और स्थिर आदि बहुकी मुख्यतासे सिक्नकर्ष जानना चाहिए।

१४३. स्त्री वेदकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच हानावरण, नौ दर्शनावरण, ग्रसाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, ग्ररति, शोक, भय जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय
जाति, ग्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कामंण शरीर, ग्रौदारिक ग्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क,
तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु चतुष्क, ग्रथशस्त विहायोगिति, त्रस चतुष्क, ग्रस्थिर श्रादि
स्नुह, निर्माण, नोचगोत्र ग्रौर पाँच ग्रन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे
श्रनुत्कृष्ट चार भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। तिर्यञ्चगित, हुएड संस्थान, श्रसम्प्रातास्पाटिका संहनन, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी श्रौर उद्योत इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर
कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट चार भाग न्यून
स्थितिका बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक
होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता
है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेक्ता श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ
भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। दो संस्थान श्रौर दो संहननका कदाचित् बन्धक
होता है और कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट
संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट
संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है।

१४४. तिर्यञ्चायुकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्श-नावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, मय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्ण चतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु चतुष्क, त्रस चतुष्क, निर्माण, भीचगोत्र श्रौर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यात गुण्हीन स्थितिका बन्धक होता है। साता चेदनीय, श्रसाता वेदनीय, सात मोकषाय, छह संस्थान, छह संहनन, उद्योत, दो विहायोगित श्रौर स्थिर थिरादिछ॰ सिया० संखेंज्जगुणही०।

१४४. मणुसायु० उक्त०द्विदिवं० पंचणा०-छदंसणा०-बारसक०-भय-दुगुं०-मणुसगदि-पंचिदि०-श्रोरालि०-तेजा०-क०--श्रोरालि०श्रंगो०--वरण०४--मणुसाणु०-श्रगु०४-तस०४-णिमि०-पंचंत० णि० वं० संस्वेज्जगुणही० । थीणगिद्धितिग-सादा-साद०-मिच्छ०-श्रणंताणुवंधि०४-सत्तणोक०-छस्संठा०-छस्संघ०--दोविहा०--थिरादि-छयुग०-तित्थय०-णीचुचा० सिया० संस्वेज्जगुणही० ।

१४६. मणुसगदि० उक्त०द्विदिवं० श्रोघं । एवरि श्रपञ्जत्तं वज्ज । चदुसंठा०-चदुसंघ०-तित्थय० श्रोघं । एवरि तित्थयरं मणुसगदिसंजुत्तं संखेँज्जगुण्हीणं कादव्वं ।

१४७. एवं सत्तसु पुढवीसु । एविर सत्तमाए मणुसग०-मणुसाणु०-उच्चा० तित्थयरभंगो । सादादिपसत्थात्रो इत्थिवे०-पुरिस०-हस्स-रदि-दोणिणसंठा-दोणिण-संघडण० णिय० तिरिक्खगदिसंजुत्तात्रो सणिणयासे साधेदव्वात्रो भवंति ।

१४८. तिरिक्लेसु श्राभिष्णिंबोधि० उक्क०द्विदि०बं० चढुणाणा०-<mark>णवदंस०-</mark> श्रसाद०-भिच्छ०-सोलसक०-णुबुंस०-श्ररिद-सोग-भय-दुगुं०--णिरयगदि-पंचिंदि०--

आदि छह इनका कदाचित् धन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजुत्कृष्ट संख्यात गुणुहीन स्थितिका बन्धक होता है।

१४५. मनुष्यायुकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेषाला जीच पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, बारह कथाय, भय, जुगुप्सा, मनुष्यगित, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्ण चतुष्क, मनुष्यगन्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु चतुष्क, त्रस चतुष्क, निर्माण श्रौर पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियम से श्रनुत्कृष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका बन्धक होता है। स्त्यानगृद्धि तीन, साता चेदनीय, श्रसाता चेदनीय, मिथ्यात्व, श्रनन्तानुबन्धी चार, सात नोकषाय, छह संख्यान, छह संहनन, दो विहायोगिति, स्थिर श्रादि छह युगल, तीर्थेङ्कर, नीचगीत्र श्रौर उचगीत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका बन्धक होता है।

१४६. मनुष्यगितकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाले जीवका सिक्षकर्ष श्रीघके समान है। इतनी विशेषता है कि अपर्याप्त प्रकृतिको छोड़कर सिन्नकर्ष कहना चाहिए। चार संस्थान, चार संहनन श्रीर तीर्थङ्कर प्रकृतिकी मुख्यतासे सिन्नकर्ष श्रोघके समान है। इतनी विशेषता है कि ममुष्यगित संयुक्त तीर्थङ्कर प्रकृतिको संख्यातगुणा हीन कहना चाहिए।

१४७. इसी प्रकार सातों पृथिवियोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि सातवीं पृथिवीमें मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगोत्रका भङ्ग तीर्थङ्कर प्रकृतिके समान है। तथा साता श्रादि प्रशस्त प्रकृतियाँ, स्त्रीवेद, पुरुपवेद, हास्य, रित, दो संस्थान और दो संह्मन इन प्रकृतियाँको सन्निकर्षमें निमयसे तिर्थञ्चगित संयुक्त ही स्थिना चाहिए।

१४८. तिर्यञ्चोंमें श्राभिनियोधिक ज्ञानावरणकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, श्रसाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसक वेद, श्ररति, शोक, भय, जुगुम्सा, नरकमति, पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शरीर, तैजस शरीर,

वेउन्विय-तेजा०-क॰-हुंड०-वेउन्वि॰त्रंगो०--वएण०४-िएस्याणु०-ऋगु०-ऋपसत्य०--तस॰४-ऋथिरादिञ्च०-िएमि०-णीचा०-पंचंत० िएय० वं० । तं तु० । िएस्यायु० सिया० । यदि० िए० उक्कस्सा । ऋावाधा पुण भयणिज्जा । एवमेदाऋो ऍक्कमेक्कस्स । तं तु० ।

१४६. सादावे॰ उक्क०द्विदिवं० श्रोघं। एवरि तिरिक्खगदि--चदुजादि--श्रोरालि०-चदुसंठा॰-श्रोरालि०श्रंगो०-पंचसंघ०-तिरिक्खाणु॰-श्रादाउज्जो॰--थावर--सुहुम-श्रपञ्जत्त-साधार० सिया० संखेँज्जदिभागू०। एवं हस्स-रदीएं।

१५०. इत्थिवे॰ उक्क॰ द्विदिबं॰ खोधं । एविरि तिरिक्खगदि-दोसंठा०-तिरिएा-संघ०-तिरिक्खाणु०-उज्जो० सिया० संखेजजदिभागु० । खोरालि॰-खोरालि०खंगो० एि० वं॰ संखेजजदिभागु० ।

१५१. पुरिस॰ उक्क ०डिदिबं० खोघं। एवरि तिरिक्खग०-ख्रोरालि०-चदु-

कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वैकिथिक आङ्गोपाङ्ग, वर्ण चतुष्णः, नरक गत्यानुपूर्वी, आगुरुल्छ, अप्रशस्त विह्ययोगित, त्रस चतुष्क, अस्थिर आदि इह, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेचा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। नरकायुका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। परन्तु आवाधा भजनीय है। इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष आनना चाहिए। किन्तु तब वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेचा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है।

१४९. साता वेदनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जोवका भक्क श्रोधके समान है। इतनी विशेषता है कि तिर्यञ्चगित, चार जाति, श्रीदारिक शरीर, चार संस्थान, श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, पाँच संहनन, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रातप, उद्योत, स्थावर, सूक्षम, श्राप्यांत श्रीर साधारण इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है शो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग होन स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार हास्य श्रीर रितको मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१४०. स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाले जीवकी अपेत्ता सन्तिकर्प श्रोधके समान है। इतनी विशेषता है कि तिर्यञ्चगति, दी संस्थान, तीन संहनन, तिर्यञ्चगत्यानु पूर्वी और उद्योत इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। औदारिक शरीर और औदारिक आङ्गोपाङ्ग इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है।

१४१, पुरुषचेदकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवकी अपेक्षा समिकर्ष ओधके समान है। इतनो विशेषता है कि तिर्यञ्ज गति, औदारिक शरीर, चार संस्थान, औदारिक

संठा ॰ - त्रोरालि ॰ ग्रंगो ॰ - पंचसंघ ० - तिरिक्षाणु ० - उड़जो ॰ सिया ० संखें ज्जिदिभाग् ० । एवं पुरिसभंगो समन्वदु ॰ - - वड़जिर ० - - पसत्थ ० - - सुभग - - सुस्सर - - त्रादें जि ० । ब्रायु ॰ श्रोघं ।

१५२, तिरिक्तग० उक्क हिदिबं पंचणा०- णवदंसणा०- असादा०- मिच्छ०-सोलसक०- णवुंस०- अरदि-सोग-भय-दुगुं०- ओरालिय०- तेजा०- क०- हुंड०- वएण० ४-अगु०४-उप०- अथिरादिपंच- णिमि०-णीचा०- पंचंत० णि० वं० संस्वें जिदिभागू० । चढुजादि-- वामणसंदा० -- ओरालि० अंगो० -- स्वीलियसंघ० -- असंपत्त० -- आदाउज्जो० --थावरादि०४ सिया० । तं तु० । पंचिदिय-पर०- उस्सा०- अपसत्थ० - तस०४ - दुस्सर० सिया० संस्वें जिदिभागू० । तिरिक्ताणु० णि० वं० । तं तु० । तिरिक्तगदीए सह तं तु० पदिदाणं णामाणं हेटा उविर तिरिक्तगदिभंगो । णामाणं सत्थाणभंगो ।

श्राक्षोपाक्ष, पाँच संहनन, तिर्यञ्चगत्यानुषूर्वी श्रौर उद्योत इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रानुत्कृष्ट संख्यातवाँ भागहीन स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार पुरुषवेदके समान समचतुरस्त्र संस्थान, वज्जर्षभनाराच संहनन, प्रशस्त विहायोगिति, सुभग, सुखर श्रौर श्रादेय इन प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। आयुको श्रोपेक्षा सन्निकर्ष श्रोधके समान है।

१५२. तिर्यञ्चगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दुर्शनावरण, श्रसाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसक वेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, त्रगुरु-लघु चतुष्क, उपघात, ऋस्थिर श्रादि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र श्रीर पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। चार जाति, वामन संस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, कीलक संहनन, श्रसम्प्राप्तास्ट्-पाटिका संहनन, क्रातप, उद्योत और स्थावर आदि चार इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है श्रौर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। पञ्चेन्द्रिय जाति, परघात, उच्छ्रास, अप्रशस्त विद्वायोगिति, त्रस चतुष्क श्रौर दुःखर इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रयन्थक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। तिर्यञ्चमत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्क्रप्टकी श्रपेचा श्रनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। यहाँ तिर्यञ्चगतिके साथ 'तं त्र॰ रूपसे नाम कर्मकी प्रकृतियोंके आगे पीछेकी जितनी प्रकृतियाँ गिनाई गई हैं,उनके सन्नि-कर्षका मङ्ग तिर्यञ्चगति प्रकृतिके सन्निकर्षके समान है। तथा नामकर्मकी प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष सम्थानके समान है।

- १५४, देवगदिदेग० उक्त०दिविबं० श्रोघं। एग्गोद० सादि० खुज्जसं०-वज्जणा०-गाराय०-श्रद्धणारा० श्रोघं।
- १५५. थिर० उक्त०द्विदिबं० ऋषि । स्त्विति तिरिक्त्वगदि-चरुजादि-ऋोरालि०-चदुसंठा०-श्रोरालि०श्रंगो०-चदुसंघ०-तिरिक्त्वासु०-श्रादुउज्जो०-थावर-सुहुम-साधा--रस्प० सिया० संस्रेंज्जदिभागू० । एवं सुभ-जस० । स्त्विर जसगित्तीए सुहुम-साधारसं वज्ज । एवमेसभंगो पंचिदियतिरिक्त-पंचिदियतिरिक्त्वप्जनत्त-जोसिस्सिस् ।
- १५६. पंचिदियतिरिक्खअपज्जत्तगेमु आभिणिबोधि॰ उक्क०द्विदिवं० चदुणा॰-णवदंसणा॰-असादा॰-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-अरिद-सोग--भय--दुगुं०--तिरि-क्खगदि-एइंदि०-ओरालि॰-तेजा॰-क०-हुंड०-वग्ग०४--तिरिक्स्वाणु०--अगु०--उप०--
- १४३ मनुष्यगतिद्विककी उत्हृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवकी श्रपेला सिनकर्ष श्रोधके समान है। इतनी विशेषता है कि यह श्रौदारिक शरीर श्रोर श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्गका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। कुष्जक संस्थान, वामन संस्थान, तीन संहनन श्रीर श्रपर्यात इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है।
- १५४. देवगतिद्विककी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवका सन्निकर्ष श्रीघके समान है। न्यग्रोध परिमण्डल संस्थान, खाति संस्थान, कुन्जक संस्थान, वज्रनाराच संहन्तन, नाराच संहनन श्रीर अर्धनाराच संहननकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवका सन्निकर्ष श्रीघके समान है।
- १४४. स्थिर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवका सन्निकर्ष स्रोधके समान है। इतनी विशेषता है कि तिर्थञ्चमित, चार जाति, स्रौदारिक शरीर, चार संस्थान, स्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, चार संहनन, तिर्थञ्चमत्यानुपूर्वी, स्रातप, उद्योत, स्थावर, सूदम और साधारण इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् स्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग होन स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार शुभ और यशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि यशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष कहते समय सूदम और साधारणको छोड़कर सन्निकर्ष कहना चाहिए। इसी प्रकार यह सामान्य तिर्थञ्चोंके समान भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्थञ्च, पञ्चेन्द्रिय तिर्थञ्च, पञ्चेन्द्रिय तिर्थञ्च प्रीन्द्रिय तिर्थञ्च प्राप्ति और पञ्चेन्द्रिय तिर्थञ्च योनिनी जीवोंके जानना चाहिए।
- १४६. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च श्रपर्यात जोवोंमें श्राभिनिवोधिक झानावरणकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव चार झानावरण, नौ दर्शनावरण, श्रसाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसक वेद, श्ररित, शोक, भय, जुगुष्सा, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, श्रोदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, हुएड संस्थान, वर्ण चतुष्क, तिर्यञ्च गत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु, उपघात, स्थावर श्रादि चार, श्रस्थिर श्रादि पाँच, निर्माण, नीच-

थावरादि०४-ऋथिरादिपंच-िणमि०-स्तीचा०-पंचंत० स्तिय० वं०। तं तु०। एवमे-दास्रो ऍकमेर्कस्स । तं तु०।

१५७. सादा॰ उक्क०द्विदिवं० पंचणा॰-णवदंसणा॰-मिच्छ॰-सोलसक०-णवुंस॰-भय-दुगुं०-तिस्क्लिगदि-एइंदि०--श्रोरालि॰--तेजा०-क॰--हुंड०--वएण०४--तिस्क्लिणु०-श्रगु०-उप॰-थावरादि०४-श्रथिरादिपंच-णिमि॰-णीचा०-पंचंत॰ णिय॰ वं० संखेंजजदिभागू०। हस्स-रदि० सिया॰। तं तु०। श्ररदि-सोग० सिया० संकेंब्रिदिभागू०। एवं हस्स-रदीणं।

१५८. इत्थिवे॰ उक्क॰ द्विदिबं॰ पंचणा॰-णवदंसणा॰-मिच्छ०-सोलसक॰-भय-दुर्गु॰-पंचिदि॰-छोरालि॰-तेजा॰-क०--छोरालि॰ छंगो०--वण्ण॰--४अग़ु०४--ऋप्प--सत्थ०-तस०४-दूभग-दुस्सर-छणादेँ॰-णिमि॰-णीचा०-पंचंत॰ णि॰ संखेँजिदि-भागूणं॰ । सादासाद॰-हस्स-रदि-छरदि-सोग-तिरिक्खगदि-मणुसगदि-तिण्णिसंठा०-

गोत्र श्रीर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है । यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टकी अपेक्षा श्रनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन सबका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टकी श्रपेचा श्रनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है।

१४७. साता प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच झानावरण, नौ दर्शनावरण, मिध्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसक वेद, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगति, पकेन्द्रिय जाति, श्रोदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुएड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्च गत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु, उपघात, स्थावर श्रादि चार, श्रस्थर श्रादि पाँच, निर्माण, नीच गोत्र श्रीर पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। हास्य श्रीर रितका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेक्षा श्रनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पत्थका श्रसंख्यातवाँ साग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। श्ररित श्रीर श्रोकका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवाँ साग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार हास्य श्रीर रितकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१५८. स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच झानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, अय, जुगुष्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रोदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रोदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्ण चतुष्क, श्रगुरुलघु चतुष्क, श्रप्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, दुर्भग, दुःस्वर, श्रनादेय, निर्माण, नीचगोत्र श्रौर पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भागहीन स्थितिका वन्धक होता है। साता वेदनीय, श्रसाता वेदनीय, हास्य, रित, अरित, शोक, तिर्यञ्चगित, मनुष्य

तिरिणसंघ०-दोत्र्याणु०-थिराथिर-सुभासुभ-जस०-त्र्यजस० सिया० संखेंज्जदिभागू० । उज्जो० सिया० संखेंज्जदिभाग० ।

१५६. पुरिस॰ उक्क िट्टिवं॰ पंचणा०-णवदंसगा०-मिच्छ०-सोलसक०-भयदुगुं॰ -पंचिदि॰-छोरालि०-तेजा०-क॰-छोरालि०छंगो०--वणण०४-अगु॰४--तस०४-णिमि॰-पंचंत॰ णि० वं० संखें जिदिभागू॰। सादासाद०-हस्स-रिद-अरिद-सोगतिरिक्लगिद-मणुसगिद-पंचसंठा०-पंचसंघ०-दोत्राणु०--उज्जो०-धिराधिर--सुभासुभ-दूभग-दुस्सर-अणादेज्ज-जस॰-अजस०-णीचा० सिया० संखें जिदिभागू॰। समचदुर०-वज्जरि०-पसत्थवि०-सुभग-सुस्सर-आदे०-उचा० सिया०। तं तु०। एवं पुरिसवेदभंगो समचदु०--वज्जरिस॰--पसत्थ०--सुभग--सुस्सर--आदे०--जचा०। णवरि
उच्चागो०-तिरिक्लग०-तिरिक्लाणु०-उज्जो० वज्ज।

१६०. तिरिक्ल-मणुसायु० णिरयभंगो । णत्ररि संलेज्जदिभागूणं वं० ।

गति, तीन संस्थान, तीन संहतन, दो ब्रानुपूर्वी, स्थिर, ब्रस्थिर, श्रुम, ब्रश्नुम, यशःकीर्ति ब्रीर ब्रयशःकीर्ति इनका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है। यदि वन्धक होता है। विद्यातकों तो नियमसे ब्रानुत्कृष्ट संस्थातकों भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है। उद्योतका कदाचित् वन्धक होता है। उद्योतका कदाचित् वन्धक होता है। तो नियमसे ब्रानुत्कृष्ट संस्थातवों भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है।

१५६. पुरुषवेदको उत्क्रप्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पांच झानावरस, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुष्सा, पञ्चेन्द्रिय ज्ञाति,श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, औदारिक ब्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, ब्रग्नुरुलघुचतुष्क, त्रस चतुष्क, निर्माण श्रीर पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्रुष्ट संख्यातवां भागदीन स्थितिका बन्धक होता है। सातावेदनीय, श्रसातावेदनीय, हास्य, रति, श्ररति, शोक, तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, दो श्रानुपूर्वी, उद्योत,स्थिर, श्रस्थिर, शुभ, अशुभ, दुर्भग, दुःस्वर, श्रनादेय, यशःकीर्ति, श्रयशःकीर्ति श्रौर नीचगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्रुष्ट संख्यातवां भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। समबतुरस्र संस्थान, वज्रर्पभनाराच संहतन, प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर, ग्रादेय श्रीर उच्चगोत्र इनका कदाचित् वन्धक होता है ऋौर कदाचित् ऋबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी ऋषेत्रा ऋनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवां भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार पुरुषवेदके समान समचतुरस्र संस्थान, वज्रर्पभनाराच संहनम, प्रशस्त विहायोगति, सुप्रग, सुस्वर, श्रादेय श्रीर उद्यगोत्र की मुख्यतासे सम्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि उच्चगोत्रकी ऋषेता सम्नि-कर्ष कहते समय तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और उद्योत इनको छोड़कर सन्निकर्प कहुना चाहिए।

१६०. तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुकी मुख्यतासे सन्निकर्प नरकके समान है। इतनी विशेषता है कि यहाँ संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है।

- १६१. मणुसगदि० उक्क०हिदिबं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-भय-दुगुं०-पंचिदि०-श्रोरालि०-तेजा०--क०-हुंड०--श्रोरालि०श्रंगो०--श्रसं-पत्त०-वर्गण०४-श्रगु०-उप०-तस-बादग-पज्जत्त-पत्तेय०-श्रिथरादिपंच-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णिय० वं० संखेंज्जदिभागू०। सादासाद०-हस्स-रदि-श्ररदि-सोग० सिया० संखेंज्जदिभागू०। मणुसाणु० णि० वं०। तं तु०। एवं मणुसाणु०।
- १६२. वीइंदि० उक्क॰ द्विदिवं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०--भय--दुगुं०--तिरिक्खग०-च्रोरालि०-तेजा०-क०--हुंड०--व्यण०४-तिरि--क्लाणु०-च्रगु०-उप०-वादर-च्रपज्जत्त-पत्ते०-च्रथिरादिपंच--िणमि०--णीचा०--पंचंतरा० णि० वं० संखेज्जदिभागू०। सादासाद०-हस्स-रिद-च्ररिद-सोग० सिया० संखेज्जदि-भागू०। ख्रोरालि०च्रंगो०-च्रसंपत्त०-तस० णि० वं०। तं तु०। एवं ख्रोरालि०-ख्रंगो०-च्रसंपत्त०-तस० ति।
- १६१. मनुष्यगितकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच श्वानावरण, नी दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसक वेद, भय, जुगुष्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुएड संस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, श्रसम्प्रातास्पाटिका संहनन, वर्ण चतुष्क, अगुरुलघु, उपघात, त्रस, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, श्रस्थिर श्रादि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र श्रौर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रनुत्कृष्ट, संख्यातवाँ भाग होन स्थितिका बन्धक होता है। साता वेदनीय, श्रसाता वेदनीय, हास्य, रित, श्ररित श्रौर शोक इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट,संख्यातवाँ भाग होन स्थितिका बन्धक होता है। मनुष्यगर्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेता श्रमुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पह्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार मनुष्यगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सिन्नकर्ष जानना चाहिए।
- १६२. द्वीन्द्रिय जातिकी उत्रृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच झानावरण, नी दर्शनावरण, मिध्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसक वेद, भय, जुगुष्सा, तिर्यञ्चगित, श्रीदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलधु, उपधात, बादर, अपर्यात, प्रत्येक शरीर, अस्थिर आदि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र श्रीर पाँच अन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे अनुत्रुष्ट, संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। साता वेदनीय, असाता वेदनीय, हास्य, रित, अरित श्रीर शोक इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्रुष्ट, संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तास्यपादिका संहनन श्रीर त्रस इनका नियमसे बन्धक होता है। यदि अनुत्रुष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्रुष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्रुष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्रुष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्रुष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्रुष्ट स्थितिका अनुत्रुष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, असम्प्रात्यां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, असम्प्रात्यां साम्यादिका संहनन श्रीर त्रस इन प्रकृतियांकी मुख्यतासे सिन्नकर्ष जानना चाहिए।

१६३. तीइंदि०-चदुरिं०-पंचिंदि० उक्क०द्विदिबं० तं चेव । एवरि श्रोरालि०-श्रंगो०-श्रसंपत्त०-तस० एि० बं० संखेंज्जदिभागू० ।

१६४. एगगोद० उक्क०द्विदिवं पंचणा०-एवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुं०-पंचिदि०-स्रोरालि०-तेजा०-क०-स्रोरालि०स्रंगो०-वएण०४-स्रगु०४-अप्पसत्थ०-तस०४-दूभग-दुस्सर-अणादेंज्ज-णिमि०-णीचा०-पंचतरा० णि० वं० संखेंज्जदिभागू०। सादासादा०-इत्थि०-एवुंस०-हस्स-रदि-स्ररिद-सोग-तिरिक्खगदि-मणुसगदि-चदुसंघ०-दोस्राणु०-उज्जो०-थिराथिर-सुभासुभ-जस०-स्रजस० सिया० संखेंज्जदिभागू०। वज्जणारा० सिया०। तं तु०। एवं वज्जणारा०। सादिय० एवं० चेव। एवरि णारायणं सिया०। तं तु०। एवं णारायणं।

१६५. खुज्ज॰ डक॰ द्विदिवं॰ पंचणा०-णवदंसणा॰-मिच्छ॰-सोलसक०-णवुंस०-भय-दुगुं०--पंचिदि॰--ग्रोरालि॰--तेजा०-क०--त्रोरालि॰श्रंगो॰--वरण॰४-

१६३. त्रीन्द्रिय जाति, चतुरिन्द्रिय जाति और पञ्चेन्द्रिय जातिकी उत्रुष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवके सम्निकर्ष इसी प्रकार जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि औदा-रिक ग्राङ्गोपाङ्ग, श्रसम्ब्राप्तास्पाटिका संहनन ग्रीर त्रस इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रमुत्रुष्ट संख्यात्वां भाग होन स्थितिका वन्धक होता है।

१६४. न्यम्रोध परिमण्डल संस्थानकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच क्षानावरण, नौ दर्शनावरण, भिथ्यात्व, स्रोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदा-रिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रीदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, त्रगुरुलघु चतुष्क क्रप्रशस्त विद्वायोगति, त्रस चतुष्क, दुर्भग, दुःस्वर, अनादेय, निर्माण, नीचगोत्र श्रौर पाँच क्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। साता वेदनीय, श्रसाता वेदनीय, स्त्रीवेद, नपुंसक वेद, हास्य, रित, त्रारित, शोक, तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति, चार संहनन, दो त्रानुपूर्वी, उद्योत, स्थिर त्रस्थिर, शुभ, त्रशुभ, यशकीर्ति श्रौर श्रयशकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् ग्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुस्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। बज्जनाराच संहननका कदाचित् बन्धक होता है औ कदाचित् ग्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्क्रप्रकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्या तवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार नाराच संहननकी मुख्यतासे सन्नि-कर्प जानना चाहिए । खाति संस्थानकी मुख्यतासे सन्निकर्प इसी प्रकार है । इतनी विशे-षता है कि यह नाराच संहननका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है श्रौर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट एक समय न्युनसे लेकर पत्यका असंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार नाराच सहननकी मुख्यतासे सम्निकर्प जानना चाहिए।

१६४. कुश्जक संस्थानकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच झानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, नपुंसक वेद, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रीदारिक श्ररीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्ण चतुष्क, अगुरुलधुः

त्रगु०४-ऋषसत्थ०-तस०४-दूभग-दुस्सर-ऋणादेँ०-िणमि०-णीचा०-पंचंत० णि० वं० संखेँज्जदिभागूणं० । सादासाद०-हस्स-रिद-ऋरिद-सोग-तिरिक्खगिद-मणुसगिद--दोसंघ०-दोत्राणु०-उज्जो०-थिराथिर-सुभासुभ-जस०--ऋजस० सिया० संखेँज्जदि-भागू०। ऋदणारायणं सिया०। तं तु०। एवं ऋदणारायणं। वामणसंटाणं पि एवं चेव। एवरि खीलिय०।

१६६ पर० उक्क०द्विदित्रं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-भय-दुगुं०-तिरिक्खगदि-एइंदि०-श्रोरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-वएण०४-तिरिक्खाणु०-श्रगु०-उप०-थावर-सुहुम-साधारण-दूभग--श्रणादें०-श्रज०-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णि० बं० संखेंज्जदिभागू०। सादासाद०-हस्स-रदि-श्ररदि-सोग-श्रथिर-श्रमुभ० सिया० संखेंज्जदिभागू०। पज्जत्त-उस्सा० णि० वं०। तं तु०। थिर०-सुह सिया०।

चतुष्क, श्रद्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, दुर्भग, दुःखर, श्रनादेय, निर्माण, नीचगोत्र त्रीर पाँच क्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्युन स्थितिका बन्धक होता है । साता वेदनीय, श्रसाता वेदनीय, हास्य, रित, श्ररित, शोक, तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति, दो संहनन, दो त्र्यानुपूर्वी, उद्योत, स्थिर, क्रस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति और अयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रमुत्हप्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। अर्धनाराच संहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर त्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि त्रमुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियम से उत्कृष्टकी श्रपेत्ता त्रानुत्कृष्ट्र,एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका त्रसंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितका बन्धक होता है। इसी प्रकार अर्धनाराच संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। वामन संस्थानकी मुख्यतासे सन्निकर्प इसी प्रकार जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि यह कीलक संहननका कदाचित बन्धक होता है और कदाचित् श्रबन्धक होता है । यदि बन्धक होता हैतो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा श्रनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग**न्यून तक स्थितिका वन्ध**क होता है । इसी प्रकार कीलक संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

१६६. परघात प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच कानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, नपुंसक वेद. भय, जुगुष्सा, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्च गत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघात, स्थावर, सुक्ष्म, साधारण, दुर्भग, श्रनादेय, श्रयशःकीति, निर्माण, नीचगोत्र श्रौर पाँच अन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे अनुत्रुष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। साता वेदनीय, असाता वेदनीय, हास्य, रित, अरित, श्रोक, श्रस्थिर श्रौर अश्रम इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे अनुत्रुष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थिति का बन्धक होता है। पर्याप्त श्रीर उच्छास प्रकृतियोंका नियमसे वन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्रुष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्रुष्ट

तं तु० । एवं उस्सास-पज्जत्त-थिर-सुभ० ।

१६७. त्रादावक उक्तव्हित्बंक पंचणाक-णवदंसणाक-भिच्छक-सोलसकक-णवुंसक-भय-दुगुंक-तिरिक्खगदि-एइंदिक-छोरालिक-तेजाक-क्वल-हुंडक-बगण्कक्ष-तिरि-क्खाणुक-त्र्रगुक्क्ष-तसक्ष-दूभगक-त्र्रणादेक-णिमिक-णीचाक-पंचंतक णिक बंक संस्वे-ज्ञदिभागूक। सादासादक-इस्स-रिद-अरिद-सोग-थिराथिर-सुभासुभ--अजसक सियाक संस्वेजनिद्दभागूक। जसक सियाक। तं तुका एवं उज्जोव-जसका

१६⊏. श्रष्पसत्थ॰ उ०िंड॰वं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिन्छ०-सोलसक०-खतुंस०-भय-दुगुं०-तिरिक्लग०-वेइंदि०-श्रोरालि०--तेजा०-क०-हुंड०--श्रोरालि०श्रं--गो॰-श्रसंपत्त०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-श्रगु०४-तस०४--दूभ०-श्रणादेँ०--णिमि०-णी-

स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्क्रप्टकी अपेदा अमुत्क्रप्ट, एक समय न्यूमसे लेकर पर्यका असंख्यातवों भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। स्थिर और शुभ प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्क्रप्ट स्थितिका भी वन्धक होता है और अमुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है और अमुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृपकी अपेदा अमुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पर्यका असंख्यातवों भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार उच्छ्वास, पर्याप्त, स्थिर और श्रम प्रकृतियोंको मुख्यतासे सन्निकर्य जानना चाहिए।

१६७. श्रांतप प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नो दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसक चेद, भय, जुगुष्सा, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, श्रोदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुएड संस्थान, वर्ण चतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानु-पूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, त्रस चतुष्क, दुर्भग, श्रनादेय, निर्माण, नीचगोत्र श्रोर पाँच श्रन्त राय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रनुत्रृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। साता चेदनीय, श्रसाता चेदनीय, हास्य, रित, श्ररित, श्रोक, स्थिर, श्रस्थिर श्रुभ, श्रश्चभ, श्रीर श्रयशःकीर्ति इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्रुष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका वन्धक होता है। यशि वन्धक होता है। यदि श्रनुत्रुष्ट स्थितिका बन्धक होता है श्रीर श्रनुत्रुष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रनुत्रुष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्रुष्ट श्रीतका भी वन्धक होता है। यदि श्रनुत्रुष्ट स्थितिका वन्धक होता है। यदि श्रनुत्रुष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्रुष्ट श्रीतका स्रनुत्रुष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ माग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार उद्योत श्रीर यशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१६८. अप्रशस्त विहायोगतिकी उत्कृष्ट स्थितिक। यन्थ करनेवाला जीव पाँच झानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, नपुंसक वेद, भय, जुगुष्सा, तिर्यञ्चगति, द्वीन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैज्ञस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तास्पाटिका संहनन, वर्ण चतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, असचतुष्क, हुर्भग, अनादेय, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है। साता वेदनीय, असाता

चा॰-पंचंत० संखेँज्जिदिभागू० । सादासाद०-हस्स-रिद-ऋरिद-सोग-उज्जो॰-थिराधिर-सुभासुभ-जस०-अजस० सिया० संखेँज्जिदिभागू० । दुस्सर० शिय० वं० । तं तु० । एवं दुस्सर० ।

१६१. वादर॰ उ०िढवं॰ पंचणा॰-खवदंसणा०-भिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-भय-दुगुं॰-तिरिक्खगदि-एइंदि०-स्रोरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-स्रोरालि०स्रंगो०-वण्ण॰४-तिरिक्खाणु०-स्रगु०-उप्०-थावर-स्रपङ्जत्त-साधार०-स्रथिरादिपंच-णिभि०--णीचा०-पंचंत्र० णि० वं० संखेडजदिभागू०। सादासाद०-हस्स-रिद-स्ररिद-सोग० सिया॰ संखेडजदिभागू०।

१७०. पत्तेय ॰ उ० दि० वं० पंचणा ॰ -णवदसणा ० -मिच्छ० -सोलसक० -णवुंस० -भय-दु०-तिरिक्त्वग० -एइंदि० -च्रोरालि० --तेजा० --क० -हुंड० --च्रोरिल ० च्रंगो० --तिरि --क्त्वाणु० --वरण० ४ -च्या ० - उप० -थावर - सहुम -च्या ज्ञत्त -च्याथरादिपंच -िण्मि० -णीचा० -पंचंत० णि० वं० संत्रेंज्जदिभागू० । सादासाद० - हस्स -रदि -च्यरिद सोग० सिया० संत्रेंजिदिभागू० ।

वेदनीय, हास्य, रित, ग्रारित, शोक, उद्योत, स्थिर, ग्रस्थिर, ग्रुभ, ग्रशुभ, यशकीर्ति ग्रीर ग्रयशकीर्ति इति इति है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे ग्रनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। यहि बन्धक होता है तो नियमसे ग्रनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। युःस्वर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है ग्रीर कदाचित् ग्रयन्धक होता है। यदि वृन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है ग्रीर ग्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है ग्रीर ग्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि ग्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टको ग्रयेचा ग्रनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर प्रस्थका ग्रसंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार दुःस्वर प्रकृतिकी सुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१६९. वादर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच झानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यत्व, सोलह कपाय, नपुंसक वेद, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चमित, एकेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्ण चतुष्क, तिर्यञ्च गत्यानुपूर्वी, श्रगुर लघु, उपघात, स्थावर, श्रप्याप्त, साधारण, श्रस्थिर श्रादि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र श्रौर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रनुत्कृष्ट, संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है। साता वेदनीय, श्रसातावेदनीय, हास्य, रित, श्ररित श्रौर शोक इनका कदाचित् वन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट, संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट, संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है।

१,५०. प्रत्येक प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेयाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ द्र्यनावरण, मिश्यात्व, सोलह कपाय, नपुंसक वेद, भय, जुगुःसा, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रियजाति, ग्रीदारिक श्ररीर, तेजस्थरीर, कार्मण श्ररीर, हुण्ड संस्थान, श्रीदारिक श्राङ्गोपङ्ग, तिर्यञ्चगत्यानु पूर्वी, वर्णचतुष्क, अगुरुलधु, उपघात, स्थावर, सृत्म, श्रप्यात, श्रस्थरशादि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र श्रीर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे वन्त्रक होता है जो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यात्वाँ भाग हीन स्थितिका वन्धक होता है। साताबेदनीय, असाता वेदनीय, हास्य, रित, श्ररित श्रीर श्रोक इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट, संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है।

- १७१. उच्चा॰ उ॰िह०वं० धुवपगदीएां िएयमा संसेंजनिद्यागू० । सेसाश्रो परियत्तमाणियात्रो तिरिक्खगदिसंजुत्तात्रो वज्ज सिया संसेंजनिद्यागुणं० ।
- १७२. मणुस०३ पंचिदियतिरिक्खभंगो । गावरि ब्राहारदुगं तित्थयरं ब्रोघं । मणुसत्र्यपज्जत्त० पंचिदियतिरिक्खब्रपज्जत्तभंगो ।
- १७३. देवेसु आभिणिबोधि० उक्क०द्विदिवं० चदुणा०-णवदंसणा०-ग्रसादा०-मिन्छ०-सोलसक०-णवुंस०-ग्ररदि-सोग-भय-दुगुं०--तिरिक्खग०-ओरालि०--तेजा०-क०-हुंड०-वएण०४-तिरिक्खाणु०-ग्रगु०४-बादर-पज्जत्त-पत्ते०-ग्रथिरादिपंच-िणिमि०-एीचा०-पंचंत० णि० वं० । तं तु० । एइंदि०-पंचिदि०-ग्रोरालि०ग्रंगो०-ग्रसंपत्त०-ग्रादाज्ज्जो०-ग्रप्यसत्थ०-तस-थावर-दुस्सर० सिया० । तं तु० । एवमेदान्रो ऍक्कमें-कस्स । तं तु० ।
- १७१. उच गोत्रकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव ध्रुव प्रकृतियोंका नियम-से वन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भागद्दीन स्थितिका वन्धक होता है। शेष जितनी परावर्तमान प्रकृतियाँ हैं उनमेंसे तिर्यञ्चगति संयुक्त प्रकृतियोंको छोड़कर बाकी की प्रकृतियोंका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे अनुतकृष्ट,संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है।
- १७२. मनुष्यत्रिकका मङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान है। इतनी विशेषता है कि ब्राहारक द्विक श्रौर तीर्थंकर इन तीन श्रकृतियोंका भङ्ग श्रोधके समान है। तथा मनुष्य श्रापर्याप्तकोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च श्रापर्याप्तकोंके समान है।
- १.५३. देवोंमें ऋ।भिनिवोधिक ज्ञानावरणकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव चार क्षानावरण, नौ दर्शनावरण, श्रसातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसकवेद, श्ररति, शोक, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुएड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, त्रगुरुलघु चतुष्क, वादर, पर्याप्त, प्रत्येक, श्रस्थिर ग्रादि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र श्रीर पाँचा श्रन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यनसे लेकर पर्यका असंख्यातयाँ भाग न्यनतक स्थितिका बन्धक होता है। एकेन्द्रिय जाति, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, श्रसम्प्राप्तासुपाटिका संहनन, श्रातप, उद्योत, श्राप्रशस्त विहायोगति. त्रस, स्थावर श्रीर दुःस्वर इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रमुत्क्रपु स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृषु स्थितिका वन्धकहोता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुस्कृष्ट एक समय न्युनसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग न्युन तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना चोहिए। किन्तु ऐसी अवस्थामें वह उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है ग्रौर ग्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी ऋषेचा अनुत्कृष्ट,पक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवीँ भाग न्यूमतक स्थितिका बन्धक होता है।

१७४. सादावे उ०डि०वं पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुं०-स्रोति०--तेजा०--क०-वरणा०४-स्रगु०४-वाद्र-पञ्जत्त-पत्ते०-िण्मि०-पंचंत० िण् वं दुभागू०। इत्थि०-मणुसग०-मणुसाणु० सिया० तिभागू०। पुरिस०-हस्स-रिद-सम्बद्ध०-वज्जरि०-पसत्थ०-थिरादिछ०-उच्चा० सिया०। तं तु०। णवुंस०-स्ररिद-सोग-तिरिक्खगदि-एइंदि०-पंचिदि०-हुंढ०-स्रोरालि०स्रंगो०-स्रसंपत्त०-उज्जो०-स्रप्सत्थ०-तस-थावर-स्राथिरादिछ०-णीचा० सिया० दुभागू०। चदुसंठा०-चदु-संघ० सिया० संखेंज्जदिभागू०। एवं हस्स-रिद-थिर-सुभ-जसगित्ति०।

१७५. इत्थि॰ उ०हि॰वें॰ ऋोघं । पुरिस॰ उक्क॰ द्विदि॰वं॰ ऋोघं । एवरि देवगदिसंजुत्तं वज्ज । एवं पुरिसवेदभंगो समचदु०-वज्जरिस०-पसत्थ०-सुभग-सुस्सर-श्रादेंजज॰ उच्चा॰ । एवरि उच्चा० तिरिवखगदितिगं वज्ज ।

१७४. साताबेदनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पॉच क्वानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह, कषाय, भय, जुगुप्सा, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, वादर, पर्याप्त, प्रत्येक, निर्माण और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता<sub>र</sub> है जो नियमसे अनुत्कृष्ट,दो भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है। स्त्रीवेद, मनुष्यगति श्रौर मनुष्यगत्यानुपूर्वी इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रयन्थक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुस्कृष्ट तीन भाग न्यन स्थितिका बन्धक होता है । पुरुषवेद, हास्य, रति, समचतुरस्र संस्थान, वज्रर्वभनाराचसंहनन, प्रशस्त विहायोगति, स्थिर श्रादि छह श्रौर उचगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेचा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका ऋसंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। नपुं-सकवेद, बरति, शोक, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, पञ्चेन्द्रिय जाति, हुण्ड संस्थान, श्रीदा-रिक ब्राङ्गोपाङ्ग, ब्रसम्प्राप्तास्प्रपाटिका संहनन, उद्योत, ब्रप्रशस्त विहायोगति, त्रस, स्थावर, श्रस्थिर श्रादि छह श्रीर नीचगीत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट,दो भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। चार संस्थान ऋौर चार संहनन इनका कदाचित् बन्धक होता है ऋौर कदाचित् त्राबन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसं त्रानुत्कृष्टु,संख्यातवाँ भाग न्यून स्थिति का बन्धक होता है । इसी प्रकार हास्य, रति, स्थिर, शुभ ग्रौर यशकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्षं जानना चाहिए।

१७४. स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट स्थितिक। वन्य करनेवाले जीवकी अपेद्या सन्निकर्प श्रोधके समान है। तथा पुरुषवेदकी उत्कृष्ट स्थितिक। वन्य करनेवाले जीवकी अपेद्या सन्निकर्प श्रोधके समान है। इतनी विशेषता है कि यहाँ देवगति संयुक्त को छोड़कर सन्निकर्ष कहना चाहिए। इसी प्रकार पुरुषवेदके समान समयतुरस्र संस्थान, चल्रपंभनाराच संहनन. प्रशस्त विहायोगिति, सुभग, सुस्वर, आदेय और उच्चगोत्रकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि उच्चगोत्रकी मुख्यतासे सन्निकर्प कहते समय तिर्यक्ष-गतित्रिकको छोड़कर सन्निकर्प कहना चाहिए।

१७६. दो त्रायु० णिरयभंगो । मणुसग०-मणुसाणु०-चदुसंठा०-चदुसंघ० णिरयभंगो । एइंदियस्स उ०िह०वं० हेट्टा उविर्त णाणावरणभंगो । णामाणं सत्था-णभंगो । एवं त्रादाव-थावर० । पंचिदि० उ०िट०वं० हेट्टा उविर णाणावरणभंगो । णामाणं सत्थाणभंगो । एवं त्रोरालि०त्रांगो०-त्रासंपत्त०-त्रप्यसत्थवि०-तस-दुस्सर० । तित्थय० उक्क०िटिवं० णि० भंगो ।

१७७. भवणक-वाणवेंत०-जोदिसियक-सोधम्मीसाणदेवेसु आभिणिबोधिक उककिदिवंक चदुणाक-णवदंसणाक-असादाक-मिच्छ०-सोलसकक-णवुंसक-अरदि-सोग-भय-दुगुंक-तिरिक्लगक-एइंदिक-ओरालिक-तेजाठ-क०-हुंड०-विएणक४-तिरिक्लगक-एइंदिक-ओरालिक-तेजाठ-क०-हुंड०-विएणक४-तिरिक्लाणुक-अगुक्ष-थावर-बादर-पज्जन्त-पत्तेक-अधिरादिपंच-िणिमक-णीचाठ--पंचंत० णिक बंक । तं तुक । आदाउज्जोक सियाक । तं तुक । एवमेदाओ ऍकमेंकस्स । तं तुक ।

१७६. दो श्रायुश्रोंका भङ्ग नारिकयोंके समान है। मनुष्यगित, मनुष्यानुपूर्वी, चार संस्थान श्रोर चार संहननका भङ्ग नारिकयोंके समान है। एकेन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवके भागे पीछेकी प्रकृतियोंका भङ्ग झानावर एके समान है तथा नाम कर्मकी प्रकृतियोंका भङ्ग स्वस्थानके समान है। इसी प्रकार श्रातप श्रीर स्थावर प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सिनकर्ष जानना चाहिए। पञ्चेन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवके श्रागे-पीछेकी प्रकृतियोंका भङ्ग झानावर एके समान है तथा नामकर्मकी प्रकृतियोंका भङ्ग स्वस्थानके समान है। इसी प्रकार श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, श्रसम्प्राप्तासस्पादिका संहनन, श्रप्रशस्त विहायोगित, त्रस श्रीर दुःस्वर इनकी मुख्यतासे सिनकर्ष जानना चाहिए। तीर्थेङ्कर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवका भङ्ग नारिकयोंके समान है।

१७७. भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी श्रीर सौधर्म-ऐशान कल्पवासी देवोंमें श्राभि-निवोधिक ज्ञानावरणकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, श्रसाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसक वेद, श्ररति, शोक, भय, जुगुष्सा, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुएड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, ऋगुरुलघुचतुष्क, स्थावर, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, श्रस्थिर ग्रादि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र श्रीर पीँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्टस्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर त्रुतुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि श्रनुत्रुष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेत्ता श्रनुत्रुष्ट्रुएक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवॉ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। श्रातप श्रौर उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रबन्धक होता है । यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्यितिका भी बन्धक होता है श्रीर अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेत्ता श्रनुत्कृष्ट्रक समयन्यूनसे लेकर पर्य-का असंख्यातवी भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार इनका परस्पर सन्नि कर्ष जानना चाहिए। किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। श्रीर अनुत्कृष्ट स्थिति का भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेका अनुत्कृष्टु,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असख्यातवों भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है।

१७६. इत्थि॰ उक्क॰द्विदिबं॰ देवोघं । साविर पंचिदि॰-ऋोरालि०ऋंगो०-ऋष्प-सत्थ०-तस-दुस्सर० सािय० वं० संखेँज्जदिभागू॰ । दोसंठा॰-तिस्स्सिय० सिया० संखेँज्जदिभागू० । एवं मसुसग०-मसुसासु० ।

१८०. पुरिस० उक्क०द्विदि०बं० देवोघं। एविर पंचिदि०-ऋोरालि०ऋंगो०-तस० एि० बं० संखेंज्जदिभागू०। चदुसंटा०-पंचसंघ०-ऋष्पसत्थ०-दुस्सर० सिया० संखेंज्जदिभागू०। एवं पुरिसवेदभंगो समचदु०-वज्जरिसभ०-पसत्थवि०-सुभग-सुस्सर-ऋदिं०-जच्चा०। एविर उच्चागोदे तिरिक्खगदितिगं वज्ज।

१८१. पंचिदि॰ उक्क॰द्विदिबं॰ पंचणा०-णवदंसणा०-असादा॰-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०-श्रोरालि॰--तेजा०-क०--वरण०४--तिरि-

१७८. साता वेदनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवका सिन्नकर्ष सामान्य देवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि पञ्चेन्द्रिय जाति, चार संस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, पाँच संहनन, श्रप्रशस्त विहायोगित श्रस श्रौर दुःस्वर इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रातुत्कृष्ट, संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार हास्य, रित, स्थिर, श्रम श्रौर यशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१७९. स्त्री वेदकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवका सम्निकर्ष सामान्य देवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, श्रप्रशस्त विहायोगिति, श्रस श्रीर दुःस्वर इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। दो संस्थान श्रीर तीन संहननका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट, संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार मनुष्यगित श्रीर मनुष्यगत्यानुष्वींकी मुख्यता से सिष्ठकर्ष जानना चाहिए।

१८०. पुरुषवेदकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवका सिन्नकर्ष सामान्य देवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग श्रौर त्रस इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे श्रमुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। चार संस्थान, पाँच संहनन, श्रप्रशस्त विहायोगित श्रौर दुःस्वर इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रमुत्कृष्ट, संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार पुरुषवेदके समान समवतुरस्र संस्थान, बर्ज्यभनाराच संहनन, प्रशस्त विहायोगित, सुभग, सुस्वर, श्रादेय श्रौर उच्चगोत्रकी मुख्यतासे सिन्नकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि उच्चगोत्रकी मुख्यतासे सिन्नकर्ष कहते समय तिर्यञ्चगतित्रकको छोड़कर सिन्नकर्ष कहना चहिए।

१८१. पञ्चेन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शना-यरण, असाता वेदनोय, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, नपुंसक वेद, अरित, शोक, भय, जुगुप्सा, अौदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्ण चतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलधु क्लाणु०-अगु०४-वादर-पज्जत्त-पत्ते०-अधिरादिपंत्र-णिमि०--णीचा०--पंतंत० णि० वं॰ संखेंज्जदिभागू० । वामणसंटा०-खीलिय०-असंपत्त० सिया० । तं तु० । हुंड०-उज्जोव० सिया॰ संखेंज्जदिभागू० । ओरालि०अंगो०-अप्पसत्थ०-तस-दुस्सर० णियमा० । तं तु० । एवं पंत्तिदियभंगो वामणसंटा०-ओरालि०अंगो०-खीलिय०-असंपत्त०-अप्पसत्थ०-तस-दुस्सर ति । एवं चेव तिण्णिसंटा०-तिण्णिसंघ० । णवरि अहारसीगाओ सिया० संखेंज्जदिभागू० । सोधम्मी० तित्थय० देवोघं ।

१८२. सणक्कुमार याव सहस्सार ति णिरयभंगो । श्राणद याव एवगेवज्जा ति श्राभिणिबोधि० उक्क०द्विदि०बं० चढुणा०-एवदंसणा०-श्रसादा०-मिच्छ०-सोलसक०-त्ररदि-सोग-भय-दुगुं०-मणुसग०-पंचिदि०-श्रोरात्ति०-तेजा०-क०--हुंड०--श्रोरात्ति०श्रंगो०-श्रसंपत्त०-वएण०४-मणुसाणु०-श्रगु०४-श्रप्यसत्थ०--तस०४--श्रथि--

चतुष्क, वादर, पर्याप्त, प्रत्येक, अस्थिर श्रादि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र और श्रन्तराय पाँच इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट, संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। वामन संस्थान, कीलक संहमन श्रीर श्रसम्प्राप्तास्पाटिका संहमन इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् ग्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्छप्र स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रजुत्हृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजुत्हृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेन्ना श्रमुत्कृष्ट्रएक समय न्यूनसे लेकर प्रत्य-का असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिकावन्धक होता है । हुण्ड संस्थान श्रीर उद्योतका कदा-चित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है ती नियमसे अनु-त्रुष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है । श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, श्रप्रशस्त विहा-योगति, त्रस श्रौर दुःखर इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेत्ना श्रनुत्कृष्टु,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवीं भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार पञ्चेन्द्रिय जातिके समान वामन संस्थान. भौद।रिक ग्राङ्गोपाङ्ग, कीलक संहनन, ग्रसम्प्राप्तास्रुपाटिका संहमन, ग्रप्रशस्त विहायोगति, वस श्रौर दुःस्वर इन प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सिश्नकर्ष जानना चाहिए ।तथा इसी प्रकारतीन संस्थान और तीन संहननकी मुख्यतासे भी सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि जिन प्रकृतियोंका अठारह कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण उत्कृष्ट स्थितिबन्ध होता है उनका यहें कदाचित् वन्ध होता है श्रौर कदाचित् बन्ध नहीं होता। यदि बन्ध होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध होता है। सौधर्म और ऐशान कल्प-में तीर्थंङ्कर प्रकृतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष सामान्य देवोंके समान है।

१८२. सानत्कुमार कल्पसे लेकर सहस्रार कल्प तकके देवोंमें सामान्य नारिकयोंके समान भक्त है। श्रानत कल्पसे लेकर नौ ग्रेवेयक तकके देवोंमें श्राभिनियोधक ज्ञानावरणकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, श्रसाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, श्ररति, शोक, भय, जुगुप्सा, मनुष्यगित, पञ्चेन्द्रिय, जाति, श्रोदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, श्रीदारिक ग्राङ्गोपाङ्ग, श्रसम्प्राप्ता-स्पिटिका संहनन, वर्ण चतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु चतुष्क, श्रप्रशस्त विहायोगित अस चतुष्क, श्रस्थर श्रादि छह, निर्माण, नीचगोत्र श्रीर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे

रादिञ्च०-िणमि०-णीचा ७-पंचंत० णि० वं० । तं तु० । एवपेदाञ्चो ऍकमेर्कस्स । तं तु० ।

१८३. सादा० उक्क॰ द्विदिबं० पंचणा॰-एवदंसणा०-िमच्छ०-सोलसक०-भय-दुर्गुं०-मणुसग० पंचिदि०-चोरालि०-तेजा॰ -क०-चोरालि० द्यंगो०-वएए।०४-मणु-साणु०-च्यगु०४-तस०४-िएपि॰-पंचंत॰ एि० वं० संखेंज्जदिभागू०। इत्थि०-एवुंस०-च्यरिद-सोग-पंचसंठा० पंचसंघ०-च्रप्पसत्थ॰-च्रिथरिदछ॰-एीचा० सिया० वं० संखेंज्जदिभागू०। पुरिस०-हस्स रिद-समचदु०-वज्जरि०-पसत्थ०-थिरादिछ०-उच्चा० सिया०। तं तु०। एदाच्यो तं तु०। पडिदल्लिगाच्यो सादभंगो।

१८४. ऋायु० देवोघं । चदुसंटा०-चदुसंघ० देवोघं । एतरि मणुसगदि० एि० वं० संखेंज्जदिभागू० । तित्थय० देवोघं ।

बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवों भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इनका परस्पर सिन्नकर्ष जानना चाहिए और ऐसी अवस्था यह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है।

१८३. साता वेदनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, नी दर्शनावरण, मिध्यात्व, सोलह कपाय, भय, जुगुप्सा, मनुष्याति, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रीदारिक
शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्ण चतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी,
श्रमुक्लघु चतुष्क, त्रस चतुष्क, निर्माण श्रीर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है
जो नियमसे श्रमुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका वन्धक होता है। खीवेद, नपुंसकवेद,
श्ररति, शोक, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, श्रप्रशस्त विहायोगित, श्रस्थिर श्रादि छह श्रीर
नीचगोत्र इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक
होता है तो नियमसे श्रमुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका वन्धक होता है। पुरुषवेद,
हास्य, रित, समचतुरस्र संस्थान, वज्रवंभनाराच संइनन, प्रशस्त विहायोगित, स्थिर श्रादि
छह श्रीर उच्चोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि
वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक
होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका मी वन्धक होता है श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक
होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेत्ता श्रमुत्कृष्ट,
एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है।
यहां ये 'तं तु' पाठमें पठित जितनी प्रकृतियों है उनकी मुख्यतासे सन्निकर्षका विचार करने
पर साता प्रकृतिकी मुख्यतासे कहे गये सन्निकर्षके समान जानना चाहिए।

१८४. त्रायु कर्मकी मुख्यतासे सन्तिकर्ष सामान्य देवींके समान है। चार संस्थान त्रीर चार संहननकी मुख्यतासे सन्तिकर्ष भी सामान्य देवींके समान है। इतनी विशेषता है कि यह मनुष्यगतिका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे त्रनुत्कृष्ट संख्यातवीं भाग हीन स्थितिका वन्धक होता है। तीर्थंक्कर प्रकृतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष सोमान्य देवोंके समान है। १८५. अणुदिसादि याव सन्वद्वा ति आभिणिबोधि० उक्क०हिदिबं० चढुणा०-छदंसणा०-असादा० बारसक०-पुरिस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०-मणुसगदि-पंचिदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-समचदु०-ओरालि०अंगो०-वज्जरिस०-वण्ण०४-मणु-साणु०-अगु०४-पसत्थवि०-तस०४--अथिर-अधुभ-सुभग-सुस्सर-आदें०-अजस०-णिमि०-उच्चा०-पंचंत० णिय० बं० । तं तु० । तित्थय० सिया० । तं तु० । एवमे-दाओ एकमेकस्स । तं तु० ।

१८६. सादा० उक्त ॰ हिदिबं० इस्स-रदि-थिर-सुभ-जस० सिया। तं तु०। अरदि-सोग-अजस०-तित्थय० सिया० संखेँज्जदिभागू०। सेसाणि णिय० वं० संखेंज्जदिभागू०।

१८५. ग्रनदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें श्राभिनिबोधिक श्रानावरणकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव चार ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, श्रसाता वेदनीय, बारह कषाय, पुरुषवेद, श्ररति, शीक, भय, जुगुन्सा, मनुष्यगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रीदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वजर्षभ-नाराच संहनन, वर्ण चतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, ऋगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, श्रस्थिर, श्रशुभ, सुभग, सुस्वर, श्रादेय, श्रयशःकीर्ति, निर्माण उच्चगोत्र श्रीर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर अनुत्कृष्ट स्थितिका भी यन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेचा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवीं भाग न्युनतक स्थितिका बन्धक होता है। तीर्थंद्वर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और ब्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि ब्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी ऋषेचा अनुस्कृष्ट एक समय न्युनसे लेकर पत्यका ऋसंख्यातवीं भाग न्यनतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इनका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्त ऐसी अवस्थामें यह जीव उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थिति-का भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेक्षा श्रनुत्कृष्ट्रपक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवी भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है।

१८६. साता वेदनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव हास्य, रित, स्थिर, शुभ, श्रीर यशःकोर्त इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेद्धा अनुत्कृष्ट, एक समयन्यूनसे छेकर पत्थका असंख्यातचौँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। श्ररित, श्रोक, श्रयशःकीर्ति श्रीर तीर्थेङ्कर इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातचौँ भागहीन स्थितिका बन्धक होता है। श्रेष प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातचौँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है।

१८७. एइंदिय-बादर-सुहुम-पज्जत्तापज्जत्त० विगलिदिय-पज्जत्तापज्जत्त० विंविदिय-तस'अपज्जत्ता० पंचकायाणं वादर-सुहुम-पज्जत्ता पज्जत्त० पंचिदियितिरिक्खअपज्जत्तभंगो । एविर थावराणं सक्वाओ असंखेंज्जदिभागूणं बंधि । पंचिदियतस०२ मूलोधं । पंचमण्०-पंचविच०-कायजोगि० मूलोधं । ओरालियकायजोगि०
मणुसभंगो । ओरालियमिस्से मणुसअपज्जत्तभंगो । एविर देवगदि० उक्क०दिदिवं०
पंचणा०-छदंसणा०-असादा०-बारसक०-पुरिस०-अरिद-सोग-भय-दुगुं०-पंचिदि०तेजा०-क०-समचदु०-वगण्०४-अगु०४-पसत्थिवि०-तस०४--अथिर--असुभ-सुभग-सुस्सर-आदेंज्ज-अजस०-िएमि०-उच्चा०-पंचेत० एग्य० बं संखेंज्जिदगुणहीणं
बंधिद । वेउव्व०-वेउव्व०अंगो०-देवाणु० णि० बं० । तं तु० । तित्थय० सिया० ।
तं तु० । एवं वेउव्व०-वेउव्व०आंगो०-देवाणु० तित्थयरं च । वेउव्वियकायजोगि०
देवोधं । एवं वेउव्विपमस्स० । एविर किंचि विसेसो जाणिद्व्यो ।

१८७. एकेन्द्रिय, इनके बादर श्रीर सूक्ष्म तथा इनके पर्यप्ति श्रीर श्रपर्याप्त, विकले न्द्रिय तथा इनके पर्याप्त और अपर्याप्त, पञ्चेन्द्रिय अपर्याप्त त्रस अपर्याप्त, पाँच स्थावर काय, तथा इनके वादर और सुक्ष्म तथा इनके पर्याप्त और अपर्याप्त जीवोंमें अपनी अपनी प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्यासकांके समान है। इतनी विशेषता है कि स्थावरोंमें सब प्रकृतियोंको श्रसंख्यातर्वे माग न्यून बॉधते हैं । पञ्चेन्द्रियः द्विक ग्रौर त्रस द्विक जीवोंमें सन्निकर्ष मूलोधके समान है। पाँचों मनोयोगी, पाँचों वचन, योगी श्रौर काययोगी जीवोंमें भी सन्निकर्ष मूलोघके समान है। श्रौदारिककाययोगी जीवोंमें सन्निकर्ष मनुष्योंके समान है। श्रौदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें सन्निकर्प मनुष्य अपर्याप्तकोंके समान है। इतनी विशेषता है कि देवगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्धक जीव पाँच ह्यानावरण, छह दर्शनावरण, असाता वेदनीय, बारह कषाय, पुरुषवेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वर्ण चतुष्क, श्रगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, श्रस्थिर, श्रशुभ, सुभग, सुस्वर ग्रादेय, श्रयशःकोर्ति, निर्माण, उच्चगोत्र श्रीर पींच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुण्हीन स्थितिका बन्धक होता है। वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक आक्रोपाङ और देवगत्यानुपूर्वी इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्रुष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेला अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवों भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। तीर्थद्वर प्ररुतिका कदा-चित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है **और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता** है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियय से उत्कृष्टकी अपेदाा अनुत्कृष्ट,एक समयन्यून से लेकर पत्यका श्रसंख्यातवौँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार वैक्रियिक शरीर, वैक्रि-यिक आङ्गोपाङ्ग, देवगस्यानुपूर्वी त्रौर तीर्थङ्कर प्रकृतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । वैकियिक काययोगी जीवोंमें सन्निकर्ष सामान्य देवोंके समान है । इसी प्रकार वैकियिक मिश्र काययोगी जीवोंके जानना चाहिए। किन्तु यहीं कुछ विशेष जानना चाहिए।

१. मूलप्रतौ-तसपञ्जत्ता० इति पाठः । २. मूलप्रतौ-पञ्जता ऋपञ्जत्त इति पाठः ।

१८८. आहार०-आहारमि० आभिणिनोथि० उक्क० द्वित्वं० चढुणा०-छदंसणा०असादा०--चढुसंजल०-पुरिस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०-देवगदि-पंचिदि०--वेउन्वि०तेजा०-क०-समचढु०-वेउन्वि० आंगो०-त्रणण०४-देवाणु०-अगु०४-पसत्थवि०--तस०४अथिर-असुभ-सुभग-सुस्सर-आदे०-अजस०-णिभि०-उच्चा०-पंचंत० णिय० वं०।
तं तु०। तित्थय० सिया०। तं तु०। एवमेदाओ ऍक्रमेक्स्स। तं तु०।

१६०. देवायु० श्रोघं । एवं ते तु० सादभंगो ।

१८८. श्राहारक काययोगी श्रीर श्राहारक मिश्र काययोगी जीवोंमें आभिनिबोधिक क्षानावरणकी उत्क्रष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव चार क्षानावरण, छह दर्शनावरण, त्रसातावेदनीय, चार संज्वलन, पुरुष वेद, ऋरति, शोक, भय, <u>जुगु</u>प्सा, देवगति, पञ्चे-न्द्रिय जाति. वैक्रियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वैक्रियिक ब्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, ब्रगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, श्रस्थिर, श्रशुभ, सुभग, सुस्वर, श्रादेय, श्रयशःकीर्ति, निर्माण, उच्चगोत्र श्रौर पाँच श्रन्त-राय इनका नियमसे वन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रद्धत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट की अपेद्या अनुत्कृष्ट्र, एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवीं भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। तीर्थं द्वार प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा ऋतुत्कृष्ट्रपक समय न्यूनसे लेकर पत्यका ऋसंख्यातवीं भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। इस प्रकार इन प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु ऐसी ग्रवस्थामें यह उत्कृष्ट स्थितिका भो बन्धक होता है ग्रीर त्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुस्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेचा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पर्यका असंख्यातवीं भाग न्यूनतक स्थितिका यन्धक होता है।

१८६. सातावेदनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव हास्य, रित, स्थिर, शुभ ग्रीर यशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है ग्रीर कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। वियमसे उत्कृष्टकी अपेचा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पर्यका असंख्यातवीं भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। ग्राति, शोक, अस्थिर, अग्रुभ, अयशःकीर्ति ग्रीर तीर्थङ्कर इनका कदाचित् बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो तियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवीं भागहीन स्थितिका बन्धक होता है। शेष ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। शेष ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। शेष ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है।

१६०. देवायुकी मुख्यतासे सन्निकर्ष श्रोधके समान है। इस प्रकार यहीं जितनी 'तं तु' पदवाली प्रकृतियों हैं उनका भङ्ग साता चेदनीयके समान है।

- १६१. कम्मइगेसु आभिणिबोधिय० उक्त०हिदिबं० चदुणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०--अरदि--सोग--भय--दुगुं०--तिरिक्खगदि--ओरालि०--तेजा०-क०-हुंडसंटा०-वएण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०-उप०-अधिरादिपंच-णिमि०-णीचा-पंचंत० णि० बं० । तं तु० । दोजादी० ओरालियभंगो । असंपत्त०-पर०-उस्सा०-आदाउज्जो०--अप्पसत्थ०--तस-थावर-बादर--सुहुम-पज्जत्तापज्जत्त-पत्तेय०-साधार०-दुस्सर० सिया० । तं तु० । एवमेदाओ एकमेक्स्स । तं तु० ।
- १६२. सादावे० उक्क०िंदिवं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुं०-स्रोरालि०-तेजा०-क०-वर्गण०४-स्रगु०-उप०-णिमि०-पंचंत० णि० वं० संखेंज्जदिभागू०। इत्थि०-णवुंस०-दोगदि-पंचजादि-पंचसंठा०-स्रोरालि०झंगो०-पंच-संघ ०-दोस्राणु ०-पर०--उस्सा०--स्रादाउज्जो०-स्रप्यसत्थ० -तस--थावरादिचदुयुगलं-
- १९१. कार्मण काययोगी जीवोंमें श्राभिनिबोधिक झानावरणकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव चार झानावरण, नौ दर्शनावरण, श्रसाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कवाय, नपुंसक वेद, ऋरति, शोक, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मेण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी ऋगुरुलघु, उपघात, श्रस्थिर श्रादि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र श्रीर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेत्वा श्रमुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवों भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। दो जातियों का भङ्ग औदारिक शरीरके समान है। असम्प्राप्तास्रुपाटिका सहनन, परघात, उङ्कास, **ब्रातप, उद्योत, श्रप्रशस्त विहायोगति, त्रस, स्थावर, वादर, स्**क्ष्म, पर्याप्त, श्रपर्याप्त, प्रत्येक, साधारण और दुःस्वर इनका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुस्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेत्ता श्रनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवौँ भाग न्यूनतक स्थितिका <mark>बन्धक</mark> होता है । इसी प्रकार इन प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए । किन्तु तब यह उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है या अनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है। यदि अनुतकृष्ट स्थितका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेचा अनुत्कृष्ट्रएक समय न्यूनसे लेकर पल्यका ऋसंख्यातर्वो भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है।
- १९२. साता वेदनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव पीँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्ण चतुष्क, श्रगुरुलघु, उपघात, निर्माण श्रौर पीँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। स्त्रीवेद, नपुंसक वेद, दो गित, पाँच जाति, पौँच संस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, पाँच संहनन, दो श्रानुपूर्वी, परघात, उद्घास, श्रातप, उद्योत, श्रप्रशस्त चिहायोगित, त्रस, स्थावर श्रादि चार युगल, श्रस्थर श्रादि छह और नीचगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। पुरुपवेद, हास्य,

अधिरादिञ्च०-णीचा० सिया॰ संखेँज्जिदिभागू० । पुरिस०-इस्स-रदि-समचदु०-वज्ज-रिस०-पसत्थवि०-थिरादिञ्च०-उच्चागो० सिया॰ । तं तु० । एवं इस्स-रदीएां ।

१६३. इत्थि० उक्क०द्विदिबं० पंचणा०-णवदंसणा०-ग्रसादा०-मिच्छ०-सोल-सक०-ग्ररदि-सोग-भय-दुगुं०-पंचिदि०-ग्रोरालि०-तेजा०-क०-ग्रोरालि०ग्रंगो०--वरणा०४-ग्रगु०४-ग्रप्पसत्थ०-तस०४-ग्रथिरादिछ०-शिमि०-णीचा०-पंचंत० णि० वं० संखेंज्जदिभागू० । तिरिक्खगदिदुग-तिरिणसंठा०-तिरिणसंघ०-उज्जो० सिया० संखेंज्जदिभागू० । मणुसग०-मणुसाणु० सिया० । तं तु० ।

१६४. पुरिस० उक्क॰ द्विदिवं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुं०-पंचिंदि०-स्रोरालि०-तेजा०-क०-स्रोरालि०स्रंगो०-वरण०४-स्रगु०४--तस०४--णिमि०-पंचंत० णि० वं० संखेंज्जदिभागू० । सादा०-हस्स-रदि-समचदु०-वज्जरि०-पसत्थवि०-थिरादिछ०-उचा० सिया० । तं तु० । स्रसादा०-स्ररदि-सोग-दोगदि-पंच-

रित, समचतुरस्न संस्थान, वज्रर्षभ नाराच संहमन, प्रशस्त विहायोगित, स्थिर आदि छह और उच्चगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। विषमसे उत्कृष्टकी अपेचा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार हास्य और रितकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१९३. स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच शानावरण, नौ दर्शनावरण, असाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, अरित, शोक, भय, जुगुष्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलयु चतुष्क, श्रप्रशस्त विहायोगित, त्रस चतुष्क, श्रस्थिर श्रादि छह, निर्माण, नीचगोत्र श्रौर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। तिर्यञ्चगितिह्रिक, तीन संस्थान, तीन संहनन श्रौर उद्योत इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। मनुष्यगित श्रौर मनुष्यग्वत्यानुपूर्वी इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है श्रौर अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेचा श्रनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर प्रथका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है।

१९४. पुरुषवेदकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुष्सा, पश्चिन्द्रिय जाति, श्रीदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघु चतुष्क, त्रस चतुष्क, निर्माण श्रीर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातयाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। साता वेदनीय, हास्य, रित, समचतुरस्र संस्थान, वन्नपंभ नाराच संहनन, प्रशस्त विहायोगित, स्थिर श्रादि छह श्रीर उच्च गोत्र इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् अवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उन्कृष्ट स्थितिका

संठा०-पंचसंघ०-दोत्राणु०-उज्जो०-अप्पसत्थ०-अधिरादिह्य०-णीचा० सिया० संखेँज-भागू० । एवं पुरिसभंगो समचदु०-वज्जरिस०-पसत्थ०-सुभग-सुस्सर-आदेँ०-उचा० । एवरि उच्चागोदे तिरिक्लगदितिगं वज्ज ।

१६५. मणुसगदि० उक्क०हिदिबं० पंचणा०-णवदंसणा०-श्रसादा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुं०-पंचिदि० एवं यात्र शिभि०-शीचा०-पंचंत० शि० बं० संखेंज्ञ-दिभागू० । इत्थिवं० सिया० । तं तु० । श्रावुंस०-तिशिशसंदा०-तिशिशसंघ०-पर०-उस्सा०-श्रव्यसत्थ०-प्रज्ञत्तापज्जत-दुस्सर० सिया० संखेंज्जदिभागू० । मणुसाणु० शि० बं० । तं तु० । एवं मणुसाणु० ।

भी बन्धक होता है और अनुस्हृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुस्हृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्हृष्टको अपेका अनुस्हृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पर्यका असंख्यातवों भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। असाता बेदनीय, अरित, शोक, दो गित, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, दो आनुपूर्वी, उद्योत, अप्रशस्त विद्यागेगित, अस्थिर आदि छह और नोचगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियम से अनुत्कृष्ट संख्यातवों भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार पुरुषवेदके समान समचतुरस्र संस्थान, वज्रर्षभनोराच संहनन, प्रशस्त विद्यागेगित, सुभग, सुखर आदेय और उद्यगोत्रकी मुख्यतासे सिन्नकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि उद्यगोत्रकी अपेका सन्निकर्ष कहते समय तिर्यञ्चगित त्रिकको छोड़कर सन्निकर्ष कहना चाहिए।

१९४. मनुष्यगितकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असाता वेदमीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुष्सा, पञ्चेन्द्रिय जातिसे लेकर निर्माण तक तथा नीच गोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुक्ष्य संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है। स्थिवेदका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुक्ष्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेत्ता अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पर्ध्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। नपुंसकवेद, तीन संस्थान, तीन संहनन, परधात, उक्कास, अप्रशस्त विद्यागिति, पर्याप्त, अपर्याप्त और दुःखर इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। मनुष्यगत्यानुपूर्वोका नियमसे बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। मनुष्यगत्यानुपूर्वोका नियमसे बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। सि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार सनुष्यगत्यानुपूर्वोकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१६६, एइंदियजा० उक्क०हिदिबंध० पंचणा०-णवदंसणा०-श्रसादा०-भिन्छ०-सोलसक०-णग्रंस०--अरदि-सोग--भय--दुगुं०--तिरिक्खग०--ओरालि०--तेजा०-क ०-हुंडसं०-वएण०४--तिरिक्खाणु०-अगुरु-उप०-थावर-अधिरादिपंच-णिमि०-णीचागो०-पंचंत० णि० बं० । तं तु० । पर०-उस्सा०-आदाउज्जो०-वादर-सुहुम-पज्जत्तापज्जत्त-पत्तेय-साधारण० सिया० । तं तु० । एवं आदाव-थावर० । एवरि आदावे सुहुम-अपज्जत्त-साधारण० वज्ज ।

१८७. तिषिणजादि० मणुसत्रपज्जत्तभंगो । चत्तारिसंठा०-चत्तारिसंह० देवोधं ।

१६८. पंचिदियजादि० उक्क०द्विदिवं० पंचणाणा०-णवदंसणा०-श्रसा-दा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-श्ररदि-सोग-भय-दुगुं०-णाम० सत्थाणभंगो णीचागो०-पंचंत० णिय० वं० | तं तु० | एवं श्रोरालि०श्रंगो०-श्रसंप०-श्रप्प-सत्थ०-तस०-दुस्सर० |

१६६. एकेन्द्रिय जातिकी उत्हृष्ट स्थितिका यन्थक जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, श्रसातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, नपुंसक वेद, श्ररित, शोक, भय, जुगुष्सा, तियंश्च गित, श्रोदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुएड संस्थान, वर्णचतुष्क, तियंश्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु, उपघात, स्थावर, श्रस्थिर श्रादि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र श्रोर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो उत्हृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है श्रीर अनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टको श्रपेका अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे छेकर पह्यका श्रसंख्यातवों भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। परधात, उल्लास, श्रातप, उद्योत, बादर, स्वम, पर्याप्त, श्रपर्याप्त, प्रत्येक श्रीर साधारण इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो जिन्मसे उत्कृपकी श्रपेक्षा श्रमुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवों भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार श्रातप श्रीर स्थावर इनकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि श्रातप प्रकृतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष कहते समय स्थूम, श्रपर्यंत श्रीर साधारण इनको छोड़कर सन्तिकर्ष कहना चाहिए।

१९७. तीन जातिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष मनुष्य त्रपर्यात्तकोंके समान है। तथा चार संस्थान त्रौर चार संहतनकी मुख्यतासे सन्निकर्ष सामान्य देवेंकि समान है।

१९८. पञ्चेन्द्रिय जातिकी उत्हृष्ट स्थितिका वन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, श्रसाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कवाय, नपुंसक वेद, श्ररित, शोक, भय, जुगुप्सा श्रीर स्वस्थान भंगके समान नामकर्मकी प्रहृतियाँ, नीचगोत्र श्रीर पाँच अन्तराय इनका नियमसे वन्धक है जो उत्हृष्ट स्थितिका भी वन्धक है श्रीर अनुत्हृष्ट स्थितिका भी बन्धक है। यदि श्रनुत्हृष्ट स्थितिका बन्धक है तो नियमसे उत्हृष्टकी श्रपेचा श्रनुत्हृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पत्थका असंख्यातवीं भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक है। इसी प्रकार श्रीदारिक श्राङ्गोपङ्ग, श्रसम्प्रातास्य्वादिका संहनन, श्रप्रशस्त विहायोगित, त्रस श्रीर दुःस्वर इनकी मुख्यनासे सञ्चिकर्य जानना चाहिए।

१६६. परघाद० अक्क०हिदिवं० पंचाणा०-णवदंस०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०--अरदि--सोग-भय--दुगुं०--तिरिक्खग०-ओरालि० --तेजा०-क०-हुंडसं०--वण्ण०४--तिरिक्खाणु०--अगु०--उप०--उस्सा०-बादर-पज्जत्त-पत्तेय०-अधि-रादिपंच-णिपि०-णीचा०-पंचंत० णिय० वं० । तं तु० । एइंदि०-पंचिदि०-ओरालि० श्रंगो०-असंप०-आदाउज्जो०-अप्पस०-तस-थावर-दुस्सर० सिया० । तं तु० । एवं उस्सा०-बादर-पज्जत्त-पत्तेय० । उज्जो० तिरिक्खगदिभंगो । णवरि सुहुम-अपज्जत्त-साधारण् ० वज्ज० ।

२००. सहुम् उ०ड्डि०वं० पंचणा०-णवदंसणा०-श्रसादा०--मिच्छ०-सोल--सक०-णवुंस०-त्ररदि-सोग-भय-दुर्गु ०-तिरिक्खग०-एइंदि०-श्रोरालि०--तेजा०-क०-हुंड०-वर्गण०४-तिरिक्खाणु०-श्रगु०-उप०-थावर-श्रपज्जत्त-साधारण--श्रथिरादिपंच--णिमि०-णीचा०-पंचतं० णि० वं० । तं तु० । एवं श्रपज्जत्त-साधारणं ।

१९९. परघातकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच झान।वरण, नौ दर्शनावरण, श्रसाता वेदनीय, मिध्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसक वेद, श्ररित, शोक, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगति, श्रीदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुएड संस्थान, वर्ण-चतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, त्रगुरुलघु, उपघात, उच्छवास, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, श्रस्थिर श्रादि पाँच, निर्माण, नीच गोत्र श्रीर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। श्रीर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रतत्रुष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेचा श्रतुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका ऋसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। एकेन्द्रिय जाति, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, श्रसम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, श्रातप, उद्योत, त्रप्रशस्त विहायोगति, त्रस, स्थावर त्र्रौर दुःस्वर इनका कदाचित् बन्धक होता है त्र्रौर कदाचित् ऋबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिकाभी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेता अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवीँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार उच्छास, बादर, पर्याप्त और प्रत्येक इनकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । उद्योतकी मुख्यतासे सन्निकर्षका भङ्ग तिर्यञ्च-गतिके समान है। इतनी विशेषता है कि सुक्ष्म, ऋपर्याप्त और साधारण इनको छोडकर सन्निकर्ष कहना चाहिए।

२००. स्ट्रमकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, श्रासाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसकवेद, श्रारति, शोक, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चन्यति, एकेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्ण्चतुष्क, तिर्यञ्चनत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु, उपघात, स्थावर, ग्रापर्यात, साधारण, श्रस्थिर श्रादि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र श्रीर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेच। श्रमुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार श्रप्यांत्र श्रीर साधारणकी मुख्यतासे सन्निकर्ष ज्ञानना च।हिए।

२०१. थिर० उ० डि०वं० पंचणा०-णवदंसणा०-भिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुं०-स्रोरालि०-तेना०-क०-वरणा०४-स्रगु०४-पज्जत्त-णिभि०-पंचंत० रा० वं० संखेंज्जदिभागू० | स्रसादा०-इत्थि०-णवुंस०-दोगदि-पंचनादि-पंचसंठा०-स्रोरालि०-स्रंगो०-पंचसंघ०-दोन्राणु०-स्रादाउज्जो०-स्रणसत्थ०-तस-थावर-वादर-सृहुम-पत्ते०-साधारण-स्रसुभादिपंच-णीचा० सिया० संखेंज्जदिभागू० | सादा०-पुरिस०-हस्स-रदि-समचदु०-वज्जरिस०-पसत्थ०-सुभग-सुस्सर-स्रादेंज्ज-जस०-उच्चा० सिया० | तंतु० | एवं सुभ-जस० | एवरि जस० सुहुम-स्रपज्जत्त-साधारणं वज्ज |

२०२. तित्थय० उ०िह०वं० पंचणा०-छदंसणा०-ऋसादा०-बारसक०-पुरिस०-श्चरिद-सोग-भय-दुगुं०-पंचिदि०-तेजा०-क०-समचदु०--वरणा ०४--श्चगु०४-पसत्थवि०-तस० ४-श्चथिर-श्रमुभ-सुभग-सुस्सर-श्चादे०-श्चजस०-णिमि०-उच्चा०-पंचंत० णि० वं० संखेंज्जदिगुणही० । मणुसगदिपंचगं सिया० संखेज्जदिगुणहीर्णा०। देवगदि०४

२०१. स्थिरकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, मौ दर्शनावरण, मिध्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, श्रीदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, ग्रमुरुलघु चतुष्क, पर्याप्त, निर्माण श्रीर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवीं भागहीन स्थितिका वन्धक होता है। असाता वेदनीय, स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, दो गति, पाँच जाति, पाँच संस्थान, श्रौदारिक ऋङ्गोपाङ्ग, पाँच संहनन, दो आनुपूर्वी, ऋतिप, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगित, त्रस, स्थायर, यादर, सुदम, प्रत्येक, साधारण, श्रग्रुभ श्रादि पाँच श्रौर नीच गोत्र इनका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित् श्रवन्थक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवेर्ष भाग न्यन स्थितिका बन्धक होता है। साता वेदनीय, पुरुषवेद, हास्य, रति, समचतुरस्र संस्थान, वज्रर्षभनाराचसंहनन, प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर, श्रादेय, यशःकीति श्रीर उच्चगोत्र इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है श्रीर श्रवुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अनुरकृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृषकी अपेता श्र<sub>तिर</sub>हुष्ट,एक समय न्यूनसे छेकर पत्यका श्रसंख्यातवीँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार शुभ श्रीर यशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए। इतनी धिशेषता है कि यशकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष कहते समय सूक्ष्म, अपयीप्त और साधारण इनको छोड़कर सन्निकर्ष कहना चाहिए।

२०२. तीर्थक्कर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, छुह दर्शनावरण, असाता वेदनीय, बारह कषाय, पुरुषवेद, अरित, शोक, भय, जुगुण्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समस्तुरस्र संस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुल्धु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगिति, वसचतुष्क, अस्थिर, अश्वभ, सुभग, सुस्थर, आदेय, अथशःकीर्ति, निर्माण, उद्यगोत्र और पीँच अन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातगुण्हीन स्थितिका वन्धक होता है। मनुष्यगित पञ्चकका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातगुण होन स्थितिका वन्धक होता है। देवगित चतुष्कका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित्

सिया० । तं तु० । एवं देवगदि० ४ । एवरि मणुसगदिपंचगं वज्ज ।

२०४. सादा० उ०िंड०वं० ओघं । एविर ओरात्ति०श्रंगो०-श्रसंपत्त० सिया० संसेंजनिद्भाग् । सेसार्णं पि सब्वार्णं मूलोघं । एविरि ओरात्ति०श्रंगो०-श्रसंपत्त० श्रद्वारसिगाहि सह सिएएयासो साधेदन्वो । पुरिसवे० श्रोघं ।

२०५. एवुंस० न्नाभिणिबो॰ ड॰ड्टि॰बं० चदुणा॰--एवदंसणा०-म्रसादा०-भिच्छ॰-सोलसक०-एवुंस॰-म्ररदि--सोग-भय-दुगुं०--पंचिदि०-तेजा०-क०--वएण०४-हुंड॰-म्रगु०४-म्रप्पसत्थ॰-तस०४-म्रथिरादिछ०-िणिमि॰--एीचा०-पंचंत० णि० वं। तं० तु० । णिरयगदि--तिरिक्खगदि-म्रोरालि०--वेउव्वि०--दो-म्रंगो॰-म्राप्पसत्थ॰-दो

श्रवन्थक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रवुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रवुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेचा श्रवुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार देवगित चतुष्ककी मुख्यतासे सिश्चकर्प जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि देवगित चतुष्ककी मुख्यतासे सिश्चकर्प कहते समय मनुष्यगति पञ्चकको छोड़कर सिन्नकर्ष कहना चाहिए।

२०३. स्त्रीवेदवाले जीवोंमें ग्राभिनिबोधिक झानावरणकी उत्कृप्ट स्थितिके वन्धक जीवकी भ्रवेत्ता प्रथम दण्डक ग्रोधके समान है। इतनी विशेषता है कि ग्रोदारिक ग्राङ्गोपाङ्ग ग्रोर ग्रासम्प्राप्तास्रपाटिका संहननको छोड़कर यह सन्निकर्ष कहना चाहिए।

२०४. साता वेदनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवकी अपेन्ना सिन्नकर्ष श्रोधके समान है। इतनी विशेषता है कि यह श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग श्रीर ग्रसम्प्रातास्पाटिका संहनन इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। तथा शेष सब प्रकृतियाँ का सिन्तकर्ष भी मुलोधके समान है। इतनी विशेषता है कि श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग श्रीर असम्प्रातास्प्राटिका संहनन इनका श्रशरह कोड़ाकोड़ो सागरकी स्थितिका बन्ध करनेवाली प्रकृतियों के साथ सिन्नकर्ष साधना चाहिए। पुरुषवेदवाले जोवोंमें श्रयनी सब प्रकृतियोंका सिन्तकर्ष श्रीधके समान है।

२०४. नपुंसकवेदवाले जीवोंमें आभिनिवोधिक ज्ञान।वरणकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिध्यात्व, सोलह कपाय, नपुंसक वेद, अरित, शोक, भय, जुगुन्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्ण चतुन्क, हुण्ड संस्थान, अगुरुलघुचतुन्क, अप्रशस्त विहायोगित, त्रसचतुन्क, अस्थिर आदि छह, निर्माण, नीचगोत्र और पींच अन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिला भी वन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिला भी वन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेद्या अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है। नरकगित, तिर्यञ्चगित, औदारिक शरीर, वैकियिक शरीर, दी आङ्गोपाङ्ग, अप्रशस्त विहायोगित, दो आनुपूर्वी और उद्योत इनका कदाचिन बन्धक होता है और कदाचित अवन्धक होता है। यदि वन्धक होता

श्रागु०-उज्जो० सिया० । तंतु० । एवमेदाश्रो ऍकमेर्कस्स । तं तु० ।

२०७. श्रवगद्वे श्राभिणिबोधि उ० हि॰ बं॰ चतुणा०-णवदंसणा०-साद्वा०-चतुसंज०-जस०-उच्चा०-पंचंत० णि० बं०। णि० उक्क०। एवं एदाश्रो ऍक्कमें केहि उक्कस्सा।

२०८. कोधादि०४-मदि०-सुद०-विभंगे मूलोयं | त्राभिणि०-सुद०-श्रोधि०-श्राभिणि० उ०ड्ठि०वं० चदुणा०-छदंसणा०-ग्रसादा०--बारसक०-पुरिस०--त्ररदि-सोग-भय--दुगुं०--पैचिदि०--तेजा०-क०--समचदु०-विगण०४--त्रगु०४-पसत्थवि०-तस०४-ग्रथिर-त्रसुभ-सुभग-सुस्सर-त्रादें०-ग्रजस०-णिमि०--उच्चा०-पंचंत० णि० वं० | तंतु० | मुणुसगदि-देवगदि-श्रोरालि०-वेउव्वि०-दोश्रंगो०-वज्जरि०-दोश्राणु०-

है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी यन्थक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेका अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवीं भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सिन्नकर्ष जानना चाहिए और ऐसी अवस्थामें यह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका भन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेका अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवों भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है।

२०६. साता वेदनीयकी उत्हाप्ट स्थितिके बन्धक जीवका सन्निकर्प श्रोघके समान है। इतनी विशेषता है कि एकेन्द्रिय जाति, श्रातप और स्थावर इनको श्रटारह कोड़ा-कोड़ी सागरकी स्थितिवाली प्रकृतियोंके सन्निकर्पमें साध लेना चाहिए। तथा शेष प्रकृतियोंका

सन्निकर्ष मूलीघके समान है।

२०%. श्रपगतचेद्वाले जीवोंमें श्राभिनिबोधिक श्वानावरणकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव चार श्वानावरण, नौ दर्शनावरण, साताचेद्नीय, चार संज्वलन. यशकीर्ति, उचगोत्र श्रीर पाँच श्रम्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार ये सब प्रकृतियों परस्पर एक दूसरेके साथ उत्कृष्ट स्थितिकी बन्धक होता है।

२०८. कोधादि चार कषायवाले, मत्यक्षानी, श्रुताक्षानी श्रौर विभक्षक्षानी जीवों में श्रपनी सब प्रकृतियों का सिनकर्ष मूलोधके समान है। श्राभिनिबोधिक क्षानी, श्रुतक्षानी श्रौर श्रवधिक्षानी जीवों में श्राभिनिबोधिक क्षानायरणकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव चार क्षानायरण, छः दर्शना वरण, श्रसाता चेदनीय, वारह कषाय, पुरुषचेद, श्ररति, शोक, भय, जुगुष्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरका संस्थान, वर्णचतुरका, श्रगुरुलघु चतुरका, पशस्त विहायोगित, त्रसचतुरका, श्रस्थर, श्राध्मा, सुभग, सुभग, सुभर, श्राद्य, श्रयशक्षीति, निर्माण, उच्चगोत्र श्रीर पाँच श्रनतराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है । यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेता श्रनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवोँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है । मनुष्यगित, देवगित, श्रौदारिक शरीर, वैकियिक शरीर, दो श्राङ्गोपाङ्ग, वर्ज्ञपमनाराच सहनन, दो श्रानुपूर्वा श्रौर तीर्थङ्गर इनका कदाचित्

तित्थय० सिया० । रं तु० । एवमेदात्रो ऍकमेंक्स्स । तं तु० ।

२०६. सादावे॰ उ०द्वि॰बं० इस्स-रिद-थिर-सुभ-जसगि० सिया॰ । तं तु० । अरिद-सोग-श्रथिर-श्रसुभ--श्रजस०--देवगिद--दोसरी॰--दोश्रंगो०-वज्जरि०-दोश्राणु० तित्थय॰ सिया० संखेजजगुणहीणं० । सेसाश्रो णिय॰ वं॰ संखेजजगुणही० । एवं इस्स-रिद-थिर-सुभ-जसगि॰ ।

२१०. मणुसायु॰ उ०द्वि०वं० पंचणा०-छदंसणा॰-बारसक०-पुरिस०-भय-दु०-मणुसग०-पंचिदि०-श्रोरालि०-तेजा॰-क०-समचदु०-श्रोरालि०श्रंगो॰-वज्जरि॰--वण्ण॰४--मणुसाणु०-श्रगु॰४--पसत्थ॰--तस०४--सुभग--सुरसर--श्रादेँ॰---णिमि०-उच्चा॰-पंचंत० णि० वं० संखेंज्जगुणही० । सादासा॰-हस्स-रदि-श्ररदि-सोग-थिरा-थिर-सुभासुभ-जस०-श्रजस०-तित्थय० सिया॰ संखेंज्जदिगुणहीणं०। देवायु० श्रोघं।

बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थिति का बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थिति का बन्धक होता है तो नियम से उत्कृष्ट की अपेचा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर प्रत्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इनका प्रस्पर सन्निक्ष जानना चाहिए और तब ऐसी स्थितिमें यह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेचा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर प्रत्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है।

२०९. साता वेदनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव हास्य, रित, स्थिर, शुभ श्रीर यशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेत्ता श्रमुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। श्ररित, शोक, श्रस्थिर, श्रश्म, अयशःकीर्ति, देवगिति, दो शरीर, दो श्राङ्गोपाङ्ग, बर्ज्यभ नाराच संहनन, दो आनुपूर्वी श्रीर तीर्थङ्कर इनका कदाचित् बन्धक होता है जो नियमसे श्रमुत्कृष्ट संख्यात गुण्हीन स्थितिका बन्धक होता है। शेष प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रमुत्कृष्ट संख्यात गुण्हीन स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार होता है जो नियमसे श्रमुत्कृष्ट संख्यात गुण्हीन स्थितिका स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार होता है जो नियमसे श्रमुत्कृष्ट संख्यात गुण्हीन स्थितिका स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार होता है जो नियमसे श्रमुत्कृष्ट संख्यात गुण्हीन स्थितिका स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार होता है जो नियमसे श्रमुत्कृष्ट संख्यात गुण्हीन स्थितिका स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार होता है जो नियमसे श्रमुत्कृष्ट संख्यात गुण्हीन स्थितिका स्थितिका जन्धक होता है।

२१०. मनुष्यायुकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीच पाँच झानावरण, छः दर्शनावरण, बारह कथाय, पुरुषवेद, भय, जुगुष्सा, मनुष्यगित, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रीदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर समचतुरस्र संस्थान, श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन, वर्णचन्तुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगिति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्तर, त्रादेय, निर्माण, उचगोत्र श्रीर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुणहोन स्थितिका बन्धक होता है। साता वेदनीय, श्रसाता वेदनीय, हास्य, रित, श्ररित, शोक, स्थिर, अस्थिर, श्रुभ, श्रगुभ, यशकीर्ति, श्रयशकीर्ति श्रीर तीर्थङ्गर इनका कदाचित् बन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुणहोन स्थितिका वन्धक होता है। देवायुकी श्रोक्ता सन्निकर्ण श्रोप्तके

## श्राहार०-श्राहार०श्रंगो० श्रोघं।

२११. मणपज्जव०-संजद०-सामाइ०-छेदो०-परिहार० आहारकायजीगि-भंगो । एवरि सादावे० उ०द्वि०वं० अरदि-सोग-अधिर-असुभ-अजस०-तित्थय० सिया० संखेजिदिगुणहीणं । धुविगाओ एि० वं० संखेजिगुणहीणं । एवं सादभंगो इस्स-रदि-थिर-सुभ-जसगित्ति-देवायु० । एवरि देवायु० असादावे०-अधिर-असुभ-अजस० वज्ज । सेसाएं एएएएवरणादीएं तित्थयरं एएइस्सदि ति एएद०वं ।

२१२. सुहुमसंपराइ० श्राभिणिबो० उ०द्वि०वं० चदुणा०चदुदंसणा०-सादा०-जस०-उचा०-पंचंत० णि० वं० णि० उकस्सा। एवमेदाश्रो ऍक्समेंबकेण उकस्सा।

२१३. संजदासंजदा० परिहार०भंगो । श्रसंजद०-चक्खुदं०-श्रचक्खुदं० श्रोघं। श्रोधिदं० श्रोधिणाणिभंगो । किएणले० णवुंसगभंगो । णवरि देवायु० उ०िह०वं० पंचणा०-णवदंसणा०-सादा०-मिच्छ०-सोलसक०-पुरिस०-हस्स-रदि-भय-दुगुं० देव-गदि-पसत्थडावीस-उच्चा०-पंचंत० णि० वं० संखेंज्ञगुणहीणं० ।

समान है। ब्राहारकशरीर ब्रीर ब्राहारक ब्राङ्गोपाङ्गकी मुख्यतासे सन्निकर्ष ब्रोधके समान है।

२९१. मनःपर्ययश्वानयाले, संयत, सामायिक संयत, होदोपस्थापना संयत और पिरिहारिवयुद्धि संयत जीवोंमें अपनी-अपनी प्रकृतियोंकी अपेद्धा सिन्नकर्प आहारक काययोगी जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि साता वेदनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव अरित, शोक, अस्थिर, अशुभ, अयशःकीर्ति और तीर्थक्कर इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुण्हीन स्थितिका बन्धक होता है। धुवबन्धवाली प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुण्हीन स्थितिका बन्धक होता है। धुवबन्धवाली प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुण्हीन स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार साता प्रकृतिके समान हास्य, रित, स्थिर, शुभ, यशःकीर्ति और देवायुकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि देवायुकी मुख्यतासे सन्निकर्ष कहते समय असाता वेदनीय, अस्थिर, अशुभ और अयशःकीर्ति इनको छोड़कर सन्निकर्ष कहना चाहिए। शेष क्षानावर णादिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव तीर्थक्कर प्रकृतिको नहीं वाँधेगा, ऐसा जानना चाहिए।

२१२. स्इमसाम्परायिक शुद्धिसंयत जीवोंमें श्राभिनिषोधिक झानावरणकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव चार झानावरण, चार दर्शनावरण, साता वेदनीय, यशः-कीर्ति, उच्चगोत्र और पाँच श्रन्तरायका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार ये प्रकृतियों एक दूसरेकी श्रपेन्ना परस्पर उत्कृष्ट स्थितिकन्धको लिये हुए सम्निकर्पको प्राप्त होती हैं।

२१३. संयतासंयतींका भक्क परिहारिवशुद्धि संयत जीवींके समान है। असंयत, चलुदर्शनवाले और अचलुदर्शनवाले जीवींका भक्क ओघके समान है। अवधिदर्शनवाले जीवींका भक्क अवधिक्षानियोंके समान है। इन्हणलेश्यावाले जीवींका भक्क नपुंसक वेदवाले जीवींके समान है। इतनी विशेषता है कि देवायुकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच झानावरण, नौ दर्शनावरण, सातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, पुरुषवेद, हास्य, रित, भय, जुगुप्सा, देवगित आदि प्रशस्त अद्वर्धस प्रकृतियों, उच्च गोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका यन्धक होता है।

२१४. ग्रील-काऊगं आभिग्रिवो॰ ड॰हि॰बं॰ चदुगा०--खबदंसगा०-असादा॰-मिच्छ०-सोलसक॰-ग्रवुंस०-अरिद-सोग-भय-दुगुं०--तिरिक्खगिद-पंचिदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंडसं०--ओरालि०अंगो॰--असंपत्त०--वग्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४--अप्पसत्थ०-तस०४-अथिरादिछ०--ग्रिमि०--णीचा०-पंचेत० णि बं०। तंतु०। एवमेदाओ ऍक्कमेर्कस्स। तं तु०। सादा०-इत्थि०-पुरिस०-हस्स-रदि-मणुसग०-पंचसंठा०-पंचसंघ०-मणुसाणु०-पसत्थ०-थिरादिछ०-उच्चा० तित्थयरं च ग्रिरयभंगो।

२१५. णिरयायु॰ उ०िड०बं॰ पंचणा०-णवदंसणा०-श्रसादा॰-भिच्छ०-सोल-सक्-णवुंस०-अरिद-सोग-भय-दुगुं॰-पंचिदि॰--तेजा॰--क॰-हुंड॰-वएण०४-अगु०४-अप्पसत्थ॰-तस०४-अधिरादिछ०-णिमि॰-णीचा०--पंचंत० णि० वं॰ संखेंज्ज-गुणही॰ । णिरयग॰-वेउिव्व०-वेउिव्वि॰अंगो०-णिरयाणु॰ णिय॰ वं० । तंतु॰ उक्क० अणु० विद्वाणपदिदं वंधदि, असंखेंज्जभागहीणं वा संखेंज्जदिभागहीणं वा वंधदि । तिषिण-आयुगाणं ओषं ।

२१४. नील और कापीत लेश्यावाले जीवोंमें श्राभिनिवोधिक हानावरण्की उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव चार हानावरण्, नी दर्शनावरण्, श्रक्षाता वेदनीय, मिध्यात्व, सोलह कवाय, नपुंसकवेद, श्ररति, शोक, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रीदारिक श्राति, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, श्रसम्प्रासास्पाटिका संहनम, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु चतुष्क, श्रप्रशस्त विहायोगित, त्रसच्चुष्क, अस्थिर श्रादि छह, निर्माण्, नीचगोत्र श्रीर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है श्रीर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है तो उत्कृष्टकी श्रपेत्वा श्रनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन श्रकृतियोंका एक दूसरेकी श्रपेत्वा सन्निकर्ष जानन। चाहिए और तब यह जीव उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है तो उत्कृष्टकृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टकृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। सातावेदनीय, स्त्रीवेद, पुरुषवेद, श्रस्य, रित, मनुष्यगति, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, प्रशस्त विहायिति, स्थिर श्रादि छह, उच्चगोत्र और तीर्थङ्कर इनका भङ्ग नारकियोंके समान है।

२१४. नरकायुकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच झानावरण, नौदर्शनावरण, ऋसाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसक वेद, श्ररित, शोक, भय, जुगुष्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस श्ररीर, कामंण श्ररीर, हुएड संस्थान, वर्णचतुष्क, श्रगुरु लघु सतुष्क, अप्रशस्त विहायोगित, त्रस चतुष्क, श्रस्थिर श्रादि छह, निर्माण, नीचगीत्र श्रीर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका बन्धक होता है। नरकगित, वैकिथिक श्ररीर, वैकिथिक श्राङ्गोपाङ्ग और नरकगत्यानुपूर्वी इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे उत्कृष्टकी अपेता श्रमुत्कृष्ट, दौ स्थान पतित स्थितिका बन्धक होता है। या तो असंख्यात भागहीन स्थितिका बन्धक होता है। या तो श्रसंख्यात भागहीन स्थितिका बन्धक होता है। तीन श्रायुश्रोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष श्रोधके समान है।

२१६. णिरयग० उ०िड वं० पंचणा०-णवदंसणा०-श्रसादा०-मिच्छ०-सोल-सक०-णवुंस०-श्ररिद-सोग-भय-दुगुं०-पंचिदि०-तेजा०-क०-हुंड०-वएण० ४-श्रगु० ४-पसत्थ०-तस० ४-श्रथिरादिछ०-िणिमि०-णीचा०-पंचंत० िण्य० वं० संखेंज्जगुणही०। णिरयापु० सिया०। यदि० णियमा उक्कस्सा। श्रावाधा पुण भयणिज्जा। वेउिव्व०-वेउिव्व०श्रंगो०-णिरयाणु० णि० वं०। तं तु०। एवं वेउिव्व-वेउिव०श्रंगो०-णिरयाणु०।

२१७. देवगदि० उ०डि॰बं॰ पंचणा॰-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुं०-पंचिदि०-तेजा०-क॰-समचदु०--वएण०४--त्रगु०४--पसत्थवि०--तस०४--सुभग-सुस्सर-त्रादें०-णिमि०-उचा०-पंचंत० णि० बं० णि० त्रणु० संखेंज्जगुणही० । सादा-साद०--हस्स--रदि--त्ररदि--सोग--इत्थि०-पुरिस०-धिराधिर-सुभासुभ--जस०--त्रजस० सिया०संखेंज्जगुणही० । वेउन्वि०-वेउन्वि० श्रंगो० णि० बं० णि० संखेंज्जगुणही० । देवाणु० णि० बं। तं तु० । एवं देवाणु० ।

२१६. नरकगितको उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव पाँच श्वानावरण, नौ दर्शनावरण, असाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसक वेद, अरित, शोक, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्डसंस्थान, वर्णचतुष्क, प्रगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगिति, असचतुष्क, अस्थिर आदि छह, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातगुणहीन स्थितिका बन्धक होता है। विद बन्धक होता है। विद बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है। विद बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है। विद बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका शरीर, वैकियिक शाङ्गोपाङ्ग और नरकमत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका मी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। विव अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार वैकियिक शरीर, वैकियिक अनुत्कृष्ट और नरकगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२१७. देवगतिकी उत्हृष्ट स्थितिका यन्ध करनेवाला जीव पाँच झानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, भय, जुगुष्ला, पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरक संस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, अस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण, उच्चगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातगुण्होन स्थितिका बन्धक होता है। साता वेदनीय, असाता वेदनीय, हास्य, रित, अरित, शोक, स्त्रीवेद, पुरुषचेद, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशकोर्ति और अयशकोर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुण्होन स्थितिका बन्धक होता है। वैकियिक शरीर और वैकियिक आक्रोणक इनका नियमसे बन्धक होता है। वेकियक शरीर और वैकियक आक्रोणक होता है। देवगत्यानुपूर्वीका नियमसे वन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है तो स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका चन्धक होता है तो स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका चन्धक होता है तो स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका चन्धक होता है तो

२१८. एइंदि॰ उक्क०द्वि०वं० पंचणा॰-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-भय॰-दु०--तिरिक्खगदि--झोरालिय॰--तेजा०--क०--हुंढ०--वएण०४-तिरिक्खाणु०-ऋगु०-उप०-दूभग-ऋणादें०-णिमि॰-णीचा०-पंचंत० णि० वं० संखेंजनगुणही०। सादासा०-हस्स-रिद्-अरिद-सोग-पर०-उस्सा०-उज्जो०--वादर--पज्जत्त--पत्तेय०-थिरा-थिर-सुभासुभ-जस०-ऋजस० सिया॰ संखेंज्जगुणहीणं०। आदाव-सुहुम-अपज्जत्त-साथार० सिया०। तं तु०। थावर० णि० वं०। तं तु०। एवं आदाव-थावर०।

२१६. बीइंदि॰ उ०िंडि॰ हेटा उविर एइंदियभंगो । णामाणं सत्थाणभंगो । एवं तीइंदि-चटुरिंदि॰ । सुहुम-साधारणं एइंदियभंगो । णवरि ब्रादाउज्जोवं वज्ज । ब्रायज्जत्त उ०िंडि॰ हेटा उविर एइंदियभंगो । णामाणं सत्थाणभंगो ।

उत्कृष्टकी अपेचा त्रमुत्कृष्ट, एक समय न्यूमसे लेकर पत्यका त्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार देवगत्यानुपूर्वीको मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२१८. एकेन्द्रिय जातिको उत्कृष्ट<sup>्</sup>स्थितिका बन्धक जीव पाँच झानावरण, नौ दर्शना-वरण, मिथ्यात्व, सोलह कवाय, नपुंसक वेद, भय, जुगुन्सा, तिर्यञ्चगति, ग्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर कार्मण शरीर, हुएड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्च गत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघात, दुर्भग, स्रनादेय, निर्माण, नीचगोत्र स्रौर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुण्हीन स्थितिका बन्धक होता है। साता वेदनीय, श्रसाता वेदनीय, हास्य, रति, श्ररति, शोक, परघात, उच्छ्रास, उद्योत, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, स्थिर, ग्रस्थिर, ग्रुभ, त्रग्रुभ, यशःकोर्ति श्रौर त्र्ययशःकोर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका बन्धक होता है। ज्ञातप, सूक्ष्म, श्रपर्याप्त श्रौर साधारण इसका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टकी श्रेपेक्षा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका ऋसंख्यातयाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। स्थावर प्रकृतिका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है स्त्रौर अनुस्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुस्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्ट की ऋषेचा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका ऋसंख्यातवौँ भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार त्रातप त्रीर स्थावरकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२१९. द्वीन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवके नीचे और अपरकी प्रकृतियों का भङ्ग एकेन्द्रिय जातिके समान है। तथा नाम कर्मकी प्रकृतियोंका भङ्ग स्वस्थानके समान है। इसी प्रकार त्रोन्द्रिय जाति और चतुरिन्द्रिय जातिकी मुख्यतासे सिक्षकर्ष जानना चाहिए। तथा सूदम और साधारण प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सिन्नकर्ष एकेन्द्रिय जातिके समान है। इतनी विशेषता है कि ग्रातप और उद्योतको छोड़कर सिन्नकर्ष कहना चाहिए। अपर्याप्त प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवके नीचे और अपरकी प्रकृतियोंका भङ्ग एकेन्द्रिय जातिके समान है।

- २२०. तेऊए देवगदि० उ०िड०वं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुं०-पंचिदि०-तेजा०-क०-समचदु०-वएण०४--अगु०४--पसत्थ०-तस०४--सुभग-सुस्सर-आदेँ०-णिमि०-उच्चा०-पंचंत० णि० वं० संखेँजगुणही० । सादासाद०-इत्थि०-पुरिस०-हस्स-रिद-अरिद-सोग-थिराथिर-सुभासुभ--जस०-अजस० सिया० संखेँजगु-णही०। वेउिव०-वेउिव० अंगो०-देवाणु० णि० वं०। तंतु०। एवं वेउिव०-वेउिव० अंगो०-देवाणु०। तिरिक्ख-मणुसायुगं देवोघं।
- २२१. देवायु० उ०िह०वं० पंचणा०-छदंसणा०-सादा०-चदुसंज०-पुरिस०-हस्स-रिद-भय-दुर्गुं ०-देवगिद-पसत्यद्वावीस-उच्चा०-पंचंत० णिय० वं० संखेंज्जगुणहीणं०। श्रीणिगिद्धितिय-मिच्छ०-बारसक०-तित्थय० सिया० संखेंज्जगुणही०। सेसाझो पगदीझो सोधम्मभंगो । णवरि खाहारदुगं खोघं। एवं पम्माए वि। णवरि सहस्सारभंगो कादन्वो ।
- २२०. पीत लेश्यावाले जीवोंमें देवगितको उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञाना-वरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्य, सोलह कषाय, भय, जुगुस्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्न संस्थान, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, त्रस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, श्रादेय, निर्माण, उच्च गीत्र श्रीर पाँच ग्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यात गुण्हीन स्थितिका बन्धक होता है। साता वेदनीय, श्रसता वेदनीय, स्थीवेद, पुरुषवेद, हास्य, रित, श्ररति, श्रोक, स्थिर, श्रिस, श्राम, श्रश्रम, यशक्तीर्ति श्रीर अयशक्तीर्ति इनका कदाचित् वन्धक होता है। श्रीर वन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यात गुण्हीन स्थितिका बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यात गुण्हीन स्थितिका बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रोरा श्रमुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातचाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार वैकियिक श्ररीर, वैकियिक श्राङ्गोपाङ्ग श्रीर देवगत्यानुपूर्वी का मुख्यतासे सन्तिकर्ष जानना चाहिए। तिर्यञ्चायु श्रीर मनुष्यायुकी मुख्यतासे सन्तिकर्ष जानना चाहिए। तिर्यञ्चायु श्रीर मनुष्यायुकी मुख्यतासे सन्तिकर्ष सामान्य देवोंके समान है।
- २२१. देवायुकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, साता वेदनीय, चार संउवलन, पुरुषवेद, इास्य, रित, भय, जुगुप्सा, देवगित श्रादि प्रशस्त श्रद्धाईस प्रकृतियाँ, उच्च गोत्र श्रीर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रुतुत्कृष्ट संख्यात गुण्हीन स्थितिका बन्धक होता है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व, बारह कषाय, श्रीर तीर्थक्कर इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुण्हीन स्थितिका बन्धक होता है। तथा शेष प्रकृतियोंका मङ्ग सौधमं कल्पके समान है। इतनी विशेषता है कि श्राहारकद्विकका मङ्ग श्रोधके समान है। इसी प्रकार पद्म छेश्यामें भी जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसमें सहस्रार कल्पके समान कथन करना चाहिए।

२२३. भवसिद्धिया० अब्भवसिद्धिया० ओघं । सम्मादिष्टि-खइगसम्मादि० वेदगस०-उवसमसम्मा० ओघिभंगो । खबरि उवसमे तित्थयरस्स संजदभंगो । सेसाखं सम्मादिद्दीखं तित्थय० उ०द्वि०बं० देवगदि-वेउव्वि०-वेउव्वि०अंगो०-देवाखु० खि०बं० । तं तु०। खबरि खइगे मणुसगदि-देवगदिसंजुत्ताओ सत्थाखे कादन्वाओ ।

२२२. शुक्ल लेश्यामें श्रानत कल्पके समान भक्क है। इतनी विशेषता है कि देवायुकी मुख्यतासे सन्निकर्ष श्रोधके समान है। तथा देवगितकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव पाँच झानावरण, मौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, भय, जुगुण्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वर्णचतुष्क, अगुक्लघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगिति, श्रस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, श्रादेय, निर्माण, उश्चगोत्र श्रीर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवों भागहीन स्थितिका बन्धक होता है। साता वेदनीय, श्रसाता वेदनीय, स्त्रीवेद, पुरुषवेद, हास्य, रित, श्ररित, श्रोक श्रीर स्थिर श्रादि तीन युगल इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भागहीन स्थितिका बन्धक होता है। विकिथिक शरीर, वैकिथिक श्राङ्गोपाङ्ग श्रीर देवगत्यानुपूर्वी इनका नियमसे बन्धक होता है। विकिथक शरीर, वैकिथिक श्राङ्गोपाङ श्रीर देवगत्यानुपूर्वी इनका नियमसे बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार व्यक्ति स्तरित श्राङ्गोपाङ श्रोर देवगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। तथा श्राह्मरक द्विकति मुख्यतासे सन्निकर्ष श्रोघक समान है।

२२३. भन्य श्रीर अभन्य जीवों में श्रपनी अपनी प्रकृतियों का सिन्नकर्ष श्रीघके समान है। सम्यग्हिंष्ठ, स्वायिक सम्यग्हिंष्ठ, वेदक सम्यग्हिंष्ट श्रीर उपश्म सम्यग्हिंष्ट जीवों में श्रपनी श्रपनी प्रकृतियों का भक्त श्रविश्वानी जीवों के समान है। इतनी विशेषता है कि उपश्म सम्यन्त्वमें तीर्थं कर प्रकृतिका भक्त संयत जीवों के समान है। दोष सम्यग्हिंष्ट जीवों में तीर्थं कर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव देवगति, वैकियिक शरीर, वैकियिक श्राङ्गेष्ठ श्रीर देवगत्यानुपूर्वी इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेसा श्रनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवीं भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। इतनो विशेषता है कि सायिक सम्यक्त्वमें मनुष्यगति श्रीर देवगित संयुक्त प्रकृतियों को स्वस्थानमें कहना चाहिए।

२२४. सासणे आभिणिबोधि उक्क विश्वं चढुणा - स्वदंसणा - असादा - सोलसक ०--इत्थि ०-- अरदि-सोग-भय-दुगुं ०-- तिरिक्खगदि-पंचिदि ॰ - ओरालि ०- तेजा ० - क०-वामणसंठा ॰ -- ओरालि ० अंगो ० - खीलियसंघ ० -- वण्ण ०४ -- तिरिक्खा खु० -- अगु० ४ - अप्यास्थ ० - तस० ४ - अथिरादि छ० - िणिम ० - णीचा ० - पंचंत ० णि० वं ० | तं तु० | उज्जो ० सिया ० | तं तु० | एवमेदाओ ऍक्क में कस्स | तं तु० |

२२४. सादाः उ०द्वि०वं० पंचणाः —णवदंसणाः —सोलसकः —भय-दुगुं ० — पंचिदिः ० तेजाः -कः -वएण्०४-त्रगुः ४ -तसः ०४-णिमिः -पंचेतः णिः वं० संर्वेज्जदिभागूणं वं० । इत्थिः -त्रप्राः -त्रोत्राः तिरिक्षवगदि -मणुसगदि - तेरालिः ० चदुसंठाः -त्रोरालिः अंगोः ० चदुसंघः - -दोत्राणुः ० -जज्जोः -त्रप्रसःथः ० -त्राधिरादिञ्ज० -णीचाः सियाः संर्वे जिदिभागः । पुरिसः -देवगदि -वेउव्विः समचदुः -वेजव्विः श्रंगोः -वज्जरिः -देवाणुः -

२२४. सासादन सम्यक्त्वमें ग्राभिनियोधिक श्वानावरणकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव चार ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, श्रसाता वेदनीय, सोसह कपाय, स्रोवेद, श्ररति, शोक, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रीदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शुरीर, वामन संस्थान, श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, कीलक संहतन, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुल्घु चतुष्कं, श्रप्रशस्त विद्वायोगति, त्रसचतुष्क, श्रस्थिर श्रादि छह, निर्माख, नीचगोत्र श्रीर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्रुष्टकी अपेद्धा अनुत्रुष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् ग्रबन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है भ्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेता अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवीं भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए और तब यह उत्कृष्ट स्थितिका भो बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेत्ता क्रमुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवीं भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है।

२२४. साता वेदनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव पाँच झानावरण, नौ दर्शनावरण, सोलह कथाय, भय, जुगुल्सा, पञ्चिन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्ण खतुरक, अगुरुत्तघु चतुर्क, त्रस चतुर्क, निर्माण और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। सिवेद, अरित, शोक, तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति, औदारिक शरीर, चार संस्थान, औदारिक आहोणङ्ग, चार संह्वन, दो आनुपूर्वा, उद्योत, अवशस्त विहायोगित, अस्थिर आदि छह और नोच गोत्र इनका कर्शचित् बन्धक होता है और कर्राचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भागहीन स्थितिका बन्धक होता है। पुरुष्वेद, देवगित, वैकियिक शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वैकियिक आहोणङ्ग, चर्चभ

१ मुखबतौ सासणे उक्क०हि०बं० झामिणिबोधि० चतुर्या० इति पाठः ।

पसत्थ०-थिरादिञ्च०-उचा० सिया० वं० । तं तु० । एवं सादभंगो पुरिस०-हस्स-रदि-समचद्०-वज्जरिस०-पसत्थ०-थिरादिञ्च०-उचा० । तिरिएात्रायुगाएां स्रोघं ।

२२६. मणुसग० उ०िट वं० पंचणा०-णवदंसणा०-श्रसादा०-भिच्छ०- सोल-सक०-इत्थिवे०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०--णाम सत्थाणभंगो णीचा०-पंचंत० णि० वं० संखेंज्जदिभाग्०। इत्थि० णि० वं० संखेंज्जदिभाग्०। मणुसाणु० णि० वं०। तं तु०। एवं मणुसाणु०।

२२७. देवगदि० उ०हि०वं० पंचणा०--खबदंसणा०--सोत्तसक०--भय-दुगुं०-उच्चा०-पंचंत०-णि० वं० संखेऽनदिभागूणं० । सादा०-पुरिस०-इस्स--रदि सिया० । तंतु० । ऋसादा०-इत्थिवे०-ऋरदि-सोग० सिया० संखेऽनदिभागू० । णामाणं सत्थाण-

नाराच संहनन, देवगत्यानुपूर्वी, प्रशस्त विहायोगित, स्थिर आदि छह श्रौर उच्चगोत्र हनका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका पन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टकी श्रपेचा श्रमुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार साताबेदनीय प्रकृतिके समान पुरुषवेद, हास्य, रित, समचतुरस्र संस्थान, वज्रर्थभनाराच संहनन, प्रशस्त विहायोगित, स्थिर श्रादि छह श्रौर उच्च गोत्रकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। तीन श्रायुश्चोकी मुख्यतासे सन्निकर्ष श्रोयके समान है।

२२६ मनुष्यगितकी उत्हृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव पाँच झानावरण, नी दर्शनावरण, असाता वेदनीय, मिथ्यत्व, सोलह कपाय, स्रोवेद, अरित, शोक, भय, जुगुष्सा, स्वस्थान भक्क समान नाम कर्मकी प्रकृतियाँ, नीचगीत्र श्रौर पाँच अन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातयाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। स्रोवेदका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातयाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। मनुष्यगत्यानुपूर्वीका नियमसे वन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेका अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पृथ्यका असंख्यातयाँ भाग न्यूनतक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार मनुष्यगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सिवकर्ष जानना चाहिए।

२२७. देवगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुण्ला, उच्चगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुन्कृष्ट संख्यातवों भाग होन स्थितिका वन्धक होता है। साता वेदनीय, पुरुषवेद, हास्य और रित इनका कदाबित् वन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भो बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेची अनुत्कृष्ट, पक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवों भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। असाता वेदनीय, स्थिवेद, अरित और शोक इनका कदाचित् वन्धक होता है। असाता वेदनीय, स्थिवेद, अरित और शोक इनका कदाचित् वन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवों भाग न्यून स्थितिका बन्धक

भंगो । एवं वेडिव्व ०-वेडिव्व ० अंगो ०-देवाणु० । तिरिष्णसंठा०--तिरिणसंघ० अोघं । २२ = सम्मामि० वेदग०भंगो । मिच्छादिष्ठि त्ति मदि०भंगो । सिर्णण अोघं । अस्मर्णीसु आभिणिबोधि० उ०ष्ठि०वं० यथा तिरिक्खोघं पढमदंडओ तथा सेद्वा । सादावे०-इत्थिवे०-इस्स-रदि-अरदि० पंचिदियतिरिक्खअपङ्जत्तभंगो ।

२२६. पुरिस० उ०डि०वं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भयदुगुं०--पंचिदि०--तेजा०--क०--वएण्०४--अगु०४--तस४-णिमि०--पंचंत० णि० वं०
संखेजितिभागू० । सादासाद०-हस्स-रिद-अरिद-सोग-दोगिद-ओरालि०--पंचसंग०ओरालि०अंगो०-पंचसंघ०--दोआणु०-उड्जो०--अप्पसत्थ०-थिराथिर--सुभासुभ-जस०अजस०-णीचा० सिया० संखेजितिभागू० । देवगिद-समचदु०-वज्जिरिस०-देवाणु०पसत्थ०-सुभग-सुस्सर-आदे०-उच्चा० सिया० । तं तु० । वेउव्वि०-[वेउव्वि०]अंगो०
सिया०संखेजितिभागू०। एवं पुरिसभंगो समचदु०-वज्जिरसभ०-पसत्थ०-सुभग-सुस्सर-

होता है। नामकर्मकी प्रकृतियोंका भङ्ग स्वस्थानके समान है। इसी प्रकार वैकियिक शरीर, वैकियिक श्राङ्गोपाङ्ग श्रोर देवगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। तीन संस्थान श्रोर तीन संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष श्रोघके समान है।

२२८. सम्यग्मिध्यादिष्ट जीवोंमें श्रपनी सव प्रकृतियोंका भङ्ग वेदक सम्यग्दिष्टयोंके समान है। मिध्यादिष्ट जीवोंमें मत्यक्षानियोंके समान है। संक्षी जीवोंमें श्रोघके समान है। श्रसंबी जीवोंमें श्रामिनिवोधिक बानावरणकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवके जिस प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंके प्रथम दण्डक कहा है, उस प्रकार जानना चाहिए। साता बेदनीय, स्त्रीवेद, हास्य, रित श्रीर श्ररितकी मुख्यतासे सन्निकर्ष पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च श्रपर्याप्तकोंके समान जानना चाहिए।

२२६. पुरुषचेदकी उरक्षष्ट स्थितिका बन्धक जीव पाँच श्रानावरण, नी दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलुंह कषाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, असचतुष्क, निर्माण और पाँच अन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवीं भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। साता वेदनीय, असाता वेदनीय, हास्य, रति, अरति, शोक, दी गति, श्रौदारिक शरीर, पाँच संस्थान, श्रीदारिक ब्राङ्गोपाङ्ग, पाँच संहनन, दो ब्रानुपूर्वी, उद्योत, ब्रप्रशस्त विहायोगति, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति, अयशःकीर्ति और नीचगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रनुः त्कृष्ट संख्यातर्यों भाग होन स्थितिका बन्धक होता है। देवगति, समचतुरस्र संस्थान, वज्रर्पभनाराच संहनन, देवगत्यानुपूर्वी, प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर, ऋदेय श्रौर उच्चगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रोर कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्क ६ स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेक्षा श्रनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे ७ कर पत्यका ऋसंख्यातवीं भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। वैकियिक शरीर और वैकियिक आङ्गोपाङ्गका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रतुत्कृष्ट संख्यातवीं भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार प्रत्यवेदके समान समजतुरस्र संस्थान, वजर्षभ

ब्रादें०-उच्चा० । एावरि उच्चागोदे तिरिक्खगदितिर्ग<sup>ी</sup> वज्ज ।

२३०. दोग्रहं आयुगाणं तिरिक्खगदीए । णविर संखेंडजिदिभागू० । णिरयायु-ग० उ०िह०बं० यास्रो पगदीस्रो बंधित तास्रो पगदीस्रो तं तु विद्वाणपिददं बंधित, स्रासंखेंडजिदिभागहीणं वा संखेंडजिदिभागहीणं वा । देवायु० उ०िह०बं० यथा ति-रिक्खगदीए । ग्विरि पंचणा०-णवदंसणा०-सादावे०-मिच्छ०-सोलसक०-पुरिस०-हस्स-रिद-भय-दु०-देवगदि-पसत्थद्वावीस-उच्चा०-पंचंत० ग्रि० बं० संखेंडजिदिभागू० ।

२३१. तिरिक्खगदि० उ०िह०वं॰ पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-भिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-अरिद-सोग-भय-दुगुं०-तेजा०-क०-हुंदसं०-वएण०४-अगु०-उप०-अधिरादिपंच-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णि० वं॰ संखेंज्जदिभागू०। एइंदि०-ओरालि०-तिरिक्खाणु०-थावर-सुहुम-अपज्जत्त-साधार० णि० वं०। तं तु०। एदासिं तं तु० पदिदाणं सरिसो भंगो काद्व्वो। मणुसगदिदुगं यथा अपज्जत्तभंगो।

बाराच संहतन, प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर, आदेय श्रीर उद्यगोत्रकी मुख्यतासे सममना चाहिए। इतनो विशेषता है कि उद्यगोत्रमें तिर्यश्चगतित्रिकको छोड़कर सन्निकर्ष कहना चाहिए।

२३०. दो आयुश्रोंकी मुख्यतासे सिन्नकर्ष तिर्यञ्चगितके साथ कहना चाहिए। इतनी विशेषता है कि संख्यातवाँ भाग न्यून कहना चाहिए। नरकायुकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव जिन प्रकृतियोंको बाँधता है उन प्रकृतियोंको वह दो स्थान पतित बाँधता है। या तो असंख्यातवाँ भाग हीन बाँधता है। या तो असंख्यातवाँ भाग हीन बाँधता है। देवायुकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव तिर्यञ्चगितमें कहे गये सिन्नकर्षके समान सिन्नकर्षको प्राप्त होता है। इतनी विशेषता है कि पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, सातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पुरुषवेद, हास्य, रित, भय, जुगुण्सा, देवगित प्रश्रुति अद्वाईस प्रशस्त प्रकृतियाँ, उच्चगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है।

२३१. तिर्यञ्चगितकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शना वरण, ऋसाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसकवेद, ऋरति, शोक, भय, जुगुप्सा, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघु, उपघात, श्रस्थिर ग्रादि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र श्रौर पाँच ऋन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे ऋतुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। एकेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, स्थावर, सूचम, अपर्यात श्रौर साधारण इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेचा श्रनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे छेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। यहाँ इन 'तं तु' पतित प्रकृतियोंका एक समान भक्न करना चाहिए। तथा मनुष्यगति द्विककी मुख्यतासे सन्निकर्ष श्रपर्यातके समान है।

१ - मूलप्रती तिगं च दोगई इति पाठः ।

२३२. देवगदि० उ॰िढ०वं॰ पंचणा॰-णवदंसणा॰-भिच्छ०-सोलसक॰-भयदुगुं॰-पंचिदि॰ याव णिमिण त्ति पंचंत० णि० वं० संस्वेजितिभागू०। सादासाद॰इत्यिवे॰-इस्स-रिद-अरिद-सोग-थिराथिर-सुभासुभ-जस॰-अजस॰ सिया॰ संस्वेजितिभागू०। पुरिस॰ सिया०। तं तु॰। समचदु०-देवाणु॰-पसत्थिवि॰-सुभग-सुस्सरआदेजिन-उच्चा० णि० वं०।तं० तु०। विउव्वि॰) वेउव्विश्रंगो० णि० वं० संस्वेजितिकभागू०। एवं देवाणु०। श्रोरालि०-श्रोरालि॰श्रंगो०-श्रसंपत्त० अपज्जत्तभंगो।
आदाउज्जो०-थिर-सुभ-जस॰ अपज्जत्तभंगो।

२३३. आहार० मूलोघं। ऋणाहार० कम्पइगर्भगो। एवं उकस्सपरत्थाणसणिणयासो समत्तो।

२३४. जहराणए पगदं । एत्तो जहराणपदसरिणयाससाधणाडं श्राहपदभूद--समासलक्लणं वत्तइस्सामो । तं जहा-पंचिदियाणं सएणीणं मिच्छादिद्वीणं श्रब्मव--

२३२. देवगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव पाँच झानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, भय, जुगुन्सा, पञ्चेन्द्रिय जातिसे लेकर निर्माण तक श्रीर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवों भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। साता वेदनीय, श्रसाता वेदनीय, स्रीवेद, हास्य, रित, श्ररित, शोक, स्थिर, श्रस्थिर, श्रुभ, श्रशुभ, यशःकोर्ति श्रीर श्रयशःकीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवीं भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। पुरुषवेदका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्क्रप्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी चन्धक होता है। यह अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेत्ना त्रनुत्कृष्ट्र, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। समचतुरस्र संस्थान, देवगत्यानुपूर्वी, प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर, ब्रादेय और उच्चगोत्र इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रवुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रवुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्क्रष्टकी श्रपेक्ता श्रनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तकस्थितिका बन्घकहोता है। वैक्रियिक शरीर श्रीर वैक्रियिक ग्राङ्गोपाङ्गका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे त्रनुरुष्ट संख्यातवाँ भागहीन स्थितिका यन्धक होता है। इसी प्रकार देवगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। श्रीदारिक शरीर, श्रीदारिक श्राङ्गीपाङ्ग श्रीर श्रसम्प्राप्तासुपाटिका संहननकी मुख्यतासे सन्नि-कर्ष अपर्याप्तके समान है। तथा ब्रातप, ब्रद्योत, स्थिर, शुभ श्रौर यशःकर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्षे श्रपर्याप्तके समान है।

२३३. ब्राहारक जोवोंमें श्रपनी प्रकृतियोंका सन्निकर्ष मूलोघके समान है श्रौर श्रनाहारक जीवोंमें कार्मण काययोगी जीवोंके समान है।

इस प्रकार उत्कृष्ट परस्थान सन्मिकर्ष समाप्त हुआ।

२३४. जघन्य सम्निकर्षका प्रकरण है। इस कारण जघन्य पद सन्निकर्षकी सिद्धि करनेके लिये श्रर्थपदभूत समास लक्षण कहते हैं। यथा—पञ्चेन्द्रिय संज्ञी मिथ्यादिष्ठ जीवोंमें

सिद्धिया० पात्रोग्गं त्र्यंतोकोडाकोडिपुपत्तं वंधमासस्य सिद्धय हिद्दिवंधवोँच्छेदो । श्रंतोसागरोवमकोडाकोडीए श्रद्धद्विदिबंघद्वायं वंघमाणो पि ए बंघदि । तदो सागरोवमसदपुधत्तं श्रोसरिद्ण णिरयायुवंधो श्रोच्छिजनदि । तदो सागरोवम० त्रोसिकः विरिक्तवायुवंधवोच्छेदो । तदो सागरोवमः श्रोसिकः मणुसायु० वंध-वोॅच्छेदो । तदो सागरोवम० श्रोसिक्क० देवायु० बंधवोॅच्छेदो । तदो सागरोवम० त्रोसिक एतरयगदि-िएरयाणुपु एदात्रो दुवे पगदीत्रो ऍकदो वंधवॉच्छेदो । तदो सागरीवम् अोसिक् सहुम-अपज्जत्त-साधारणः संजुताओ एदाओ तिएए पग-दीश्रो ऍकदो बंधवॉच्छेदो । तदो सागरो० श्रोसिक सुद्धप-श्रपज्जत्त-पत्तेय० संजुत्ता-श्रो तिरिए पगदीश्रो ऍकदो वंधवोँच्छेदो । तदो सागरो० श्रोसकि० वादर-श्रपज्जत्त-साधारएं संजुत्तात्रो एदात्रो तिषिष पगदीत्रो ऍकदो बंधवौँच्छेदो । तदो सागरो० त्रोसिकः बादर-अपज्जत-पत्तेय० संजुत्ताओ एदाओ तिष्णि पगदीओ ऍकदो बंधवोँच्छेदो । तदो सागरो० श्रोसिक् वीइंदि०-श्रपज्जत्त० एदाश्रो दुवे पगदीश्रो र्एकदो बंधवोँच्छेदो । तदो सागरो० त्य्रोसिक तीइंदि०-त्र्यपज्जत्त० एदाय्रो दुवे पग-दीक्रो ऍकदो बंधवॉच्छेदो । तदो सागरो० स्रोसिक च बुरिंदि०-स्रपज्जत्त० एदास्रो दुवे पगदीत्रो ऍकदो बंधवोच्छेदो । तदो सागरी॰ त्र्रोसिक॰ पंचिंदियत्रसणिण-त्रपञ्जत्त० एदाश्रो दुवे पगदीश्रो एकदो वंधवोच्छेदो । तदो सागरो० श्रोसकि० पंचि-

श्रमव्योंके योग्य श्रन्तःकोङ्गकोड़ी पृथक्त्व प्रमाण स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवके स्थितिकी बन्ध व्युच्छित्ति नहीं होती। श्रन्तःकोड़ाकोड़ी सागरके श्राघे स्थिति बन्ध स्थानका बन्ध करनेवाला भी नहीं बाँधता। पुनः इससे सौ सागर पृथक्तवका ऋपसरण होनेपर नरकायुकी बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका ऋपसरण होने पर तिर्यञ्चायुकी बन्ध-व्युच्छिति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका श्रपसरण होनेपर मनुष्यायुकी बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका श्रपसरण होकर देशायुकी बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका ऋपसरण होकर नरक-गति श्रीर नरकगत्यानुपूर्वी इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युव्छिति होती है । इससे सौ सागर पृथक्षका श्रपसरण होकर सुक्म, अपर्याप्त और साधारण संयुक्त इन तीन प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धन्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्तका प्रपसरण होकर सुक्स, श्रपर्याप्त श्रौर प्रत्येक संयुक्त इन तीन प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छिति होती है। इससे सौ सागर प्रथक्तका अपसरण होकर बादर, अपर्याप्त और साधारण संयुक्त इन तीन प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छिति होती है । इससे सौ सागर पृथक्त्वका श्रपसरण होकर बादर श्रपर्याप्त और प्रत्येक संयुक्त इन तीन प्रकृतियोंकी एक साथ वन्धव्युच्छिति होतो है । इससे सौ सागर पृथकत्वका त्रपसरण होकर द्वीन्द्रिय जाति श्रीर ऋपर्याप्त इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छित्त होतो है । इससे सौ सागर पृथक्त्वका अपसरण होकर त्रीन्द्रिय जाति श्रौर श्रपर्यात इन दी प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छित्ति होती है । इससे सौ सागर पृथक्त्वका श्रपसरण होकर चतुरिन्द्रिय जाति श्रौर श्रपर्याप्त इन दो प्रकृतियों-की एक साथ बन्धव्यु(वेछुसि होती है । इससे सौ सागर पृथक्तका श्रपसरण होकर पञ्चेन्द्रिय श्रसंज्ञी श्रीर श्रपर्याप्त इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ वन्धव्युव्छित्ति होती है। इससे सौ

सागर पृथक्तवका अपसरण होकर पञ्चेन्द्रिय संज्ञी श्रीर श्रपर्याप्त इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ बन्ध व्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका श्रपसरण होकर सुदम, पर्याप्त श्रीर साधारण इन तीन प्रकृतियोंकी एक साथ वन्धन्युचिञ्चत्ति होती है। इससे सी सागर पृथक्तवका अपसरण होकर सुक्ष्म, पर्याप्त और प्रत्येक संयुक्त इन तीन प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युव्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका श्रपसरण होकर बादर, पर्याप्त श्रीर साधारल संयुक्त इन तीन प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छिति होती है। इससे सौ सागर पृथक्तवका श्रपसरण होकर बादर एकेन्द्रिय, त्रातप, स्थावर, पर्याप्त श्रीर प्रत्येक संयुक्त इन पाँच प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धन्युन्छिति होती है। इससे सौ सागर पृथक्तवका अपसर्ख होकर द्वोन्द्रिय जाति और पर्याप्त संयुक्त इन दो प्रकृतियोंको एक साथ बन्धव्युव्छित्ति होती है । इससे सौ सागर पृथक्तवका श्रवसरण होकर त्रीन्द्रिय जाति श्रीर पर्याप्त संयुक्त इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ वन्धव्युव्छित होती है। इससे सौ सागर पृथक्तवका त्रपसरण होकर चतुरिन्द्रिय जाति श्रौर पर्याप्त संयुक्त इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धन्यन्विद्यत्ति होती है। इससे सौ सागरपृथक्तवका श्रपसरण होकर पञ्चेन्द्रिय श्रसंज्ञी श्रीर पर्याप्त संयुक्त इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छित्त होती है। इससे सौ सागर पृथक्तवका अपसरण होकर तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यामुपूर्वी श्रौर उद्योत संयुक्त इन तीन प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युव्छित्ति होती है। इससे सौ सागरप्रथक्त्वकात्रपसर्ग होकर नीचगोत्रकी बन्धव्युचिछ्चि होती है। इससे सौ सागर पृथवत्वका श्रपसरण होकर श्रप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग, दुःस्वर श्रीर श्रनादेय इन चार प्रकृतियोंकी एक साथ

१. मूलप्रतौ सुद्रुम श्रपज्ञत्त इति पाठः ।

२. मूलप्रतौ बादर अपजन्त इति पाटः ।

३. मूलपतौ एदास्रो दो पगदीस्रो इति पादः ।

वंधवोच्छेदो । तदो सागरो० त्रोसिक हुंडसं०-त्रसंवत्त० एदात्रो दुवे पगदीत्रो एकदो वंधवोच्छेदो । तदो सागरो० त्रोसिक एवुंस० वंधवोच्छेदो । तदो सागरो० त्रोसिक वामणसं० स्वीलियसं० एदात्रो दुवे पगदीत्रो एकदो वंधवोच्छेदो । तदो सागरो० त्रोसिक खुज्जसं०-त्रद्धणारा० एदात्रो दुवे पगदीत्रो एकदो वंधवोच्छेदो । तदो सागरो० त्रोसिक इत्थिवे० वंधवोच्छेदो । तदो सागरो० त्रोसिक सादिय०-णाराय० पदात्रो दुवे पगदीत्रो एकदो वंधवोच्छेदो । तदो सागरो० त्रोसिक णागोद०-वज्जणारा० एदात्रो दुवे पगदीत्रो एकदो वंधवोच्छेदो । तदो सागरो० त्रोसिक मणुसगदि-त्रोरालि०-त्रोरालि० त्रंगो०-वज्जरिस०-मणुसाणु० एदात्रो पंच पगदीत्रो एकदो वंधवोच्छेदो । तदो सागरो० त्रोसिक त्रसादा०-त्ररदि-सोग-त्राध्य-त्रसुभ-त्रजस० एदात्रो ह पगदीत्रो एकदो वंधवोच्छेदो । एतो पाए सेसाणि सव्वकम्माणि सव्वविस्द्धो वंधदि । एदेण त्रहपदेण समासभूदलक्षणेण साधणेण। २३५. जहण्णसण्णियासो दुविधो-सत्थाणसण्णियासो चेव परत्थाण-सिष्ण्यासो चेव । सत्थाणसण्णियासे पगदं । दिवधो णिहेसो-त्रोघे० त्राटे०।

२३४. जहराणसरिणयासी दुविधी-सत्थाणसरिणयासी चैत्र परत्थाण-सिरिणयासी चेत्र । सत्थाणसरिणयासे पगदं । दुविधी णिदेसी-त्रीघे० त्रादे० । त्रोघे० त्राभिणिबीधि० जहराणिद्विबंधमाणी चदुरुणं णाणावर० णियमा बंधमी । णियमा जहराणा । एवमेंकमेंकस्स जहराणा ।

बन्धन्य निव्वत्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका अपसरण होकर हुण्ड संस्थान श्रीर श्रसम्प्राप्तास्तृपाटिका संहनन इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ वन्धन्युचिन्नति होती है। इससे सौ सागर पृथक्तवका अपसरण होकर नपुंसकवेदकी बन्धव्युचित्रति होती है। इससे सी सागर पृथक्तवका अवसरण होकर वामन संस्थान श्रौर कीलक संहनन इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ वन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका अपसरण होकर कुन्जक संस्थान श्रौर श्रर्धनाराच संहतन इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धन्युन्छिति होती है। इससे सी सागर पृथक्त्वका श्रपसरस होकर स्त्रीवेदकी बन्धव्युचित्रित्ति है। इससे सौ सागर प्रथक्त्वका ग्रपसरण होकर स्वाति संस्थान ग्रौर नाराच संहनन इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छित्ति होती है । इससे सौ सागर पृथक्त्वका अपसरण होकर न्यग्रोध परिमण्डल संस्थान और वज्रनाराच संहनन इन दो प्रकृतियोंको एक साथ बन्धःयुच्छित्रुत्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका अपसरण होकर मनुष्यगति, श्रीदारिक शरीर, श्रीदारिक आङ्गोपाङ्ग, चत्रर्थमनाराच संहनन श्रीर मनुष्यगत्यानुपूर्वी इन पाँच प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छिति होतो है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका अपसरण होकर त्रसातावेदनीय, ऋरति, शोक, ऋस्थिर, ऋधुभ ऋौर ऋयशःकीर्ति इन छह प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धब्युच्छित्ति होती है। इससे ग्रागे प्रायः शेप सब कर्मीकी सर्वविशक्त जीव बाँघता है। इस अर्थपद रूप समासभूत लक्षण साधनके अनुसार-

२३४. जघन्य सन्तिकर्ष दो प्रकारका है—खस्थान सन्तिकर्ष और परस्थान सन्ति-कर्ष। खस्थान सन्तिकर्षका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—स्रोघ स्रौर स्रादेश। स्रोघसे स्राभिनिबोधिक झानावरणकी जघन्य स्थितिका यन्धक जीव सार झानावरणका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे जघन्य स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार परस्पर जघन्य स्थितिके बन्धक होते हैं। २३६. शिदाशिदाए जहराशिहिदिबंधतो पचलापचला थीशिगदी शिदा पचला य शिय॰ वंध० । तं तु जहराशा वा अजहराशा वा । जहराशादो अजहराशा समजुत्तरमादि कादृश याव पितदोवमस्स असंखें ज्ञिदिभागव्भिहियं वंधिद । चदुदंसाशा० शि० वं० शि० अजह० असंखें ज्ञागुश्वभिहयं वंधिद । एवं शिदशिद-भंगो चदुदंसाशा० । चक्खुदं० जह० हि०वं० तिरिशादंसाशा० शि० वं० शि० जहराशा०। एवमें क्रमें क्रस्स । तं तु जहराशा०।

२३७. साद॰ ज॰िंड॰ असाद॰ अवंधगो । असाद० जह॰िंडि॰ साद॰ अवंधगो ।

२३८. मिच्छत्त० जह०द्वि०बं० वारसक०-हस्स-रिद-भय-दुगुं० णि० वं० । तं तु जह० अजहएणा वा । जह० अजह० समजुत्तरमादिं कादूण याव पितदोव-मस्स असंखें ज्ञदिभागव्भिहयं वंशिद् । चदुसंज०-पुरिस० णि० वं० णि० अज० असंखें ज्ञगुणव्भिहियं वं० । एवं मिच्छत्तभंगो वारसक०-हस्स-रिद-भय-दुगुं० ।

२३६. कोधसंजल जह०डि०वं० तिपिएसंजलएां एि वं संखेंज्जगुए-

२३६. निद्रानिद्राकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव प्रचलाप्रचला, स्यानगृद्धि, निद्रा और प्रचला इनका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि ग्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि ग्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो जघन्यकी अपेदाा ग्रजघन्य एक समय श्रिधक्तसे लेकर पर्यका ग्रसंख्यातवाँ भाग श्रिधक तक स्थितिका बन्धक होता है। चार दर्शनावरणका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य श्रसंख्यात गुणा अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार निद्रानिद्राके समान चार दर्शनावरणका सन्तिकर्ष जानना चाहिए। चक्षुदर्शनावरणकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव तीन दर्शनावरणका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे जघन्य स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इनका परस्पर सन्निकर्ष होता है। किन्तु तब वह जघन्य स्थितिका बन्धक होता है।

२३७. साता प्रकृतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव ग्रसाता प्रकृतिका ग्रबन्धक होता है। ग्रसाता प्रकृतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव साता प्रकृतिका ग्रवन्धक होता है।

२३८. मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव बारह कषाय, हास्य, रित, भय और जुगुप्सा इनका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका मी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका वन्धक होता है तो जघन्यकी अपेक्ष अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पर्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। चार संज्वलन और पुरुषवेदका नियमसे बन्धक होता है। चार संज्वलन और पुरुषवेदका नियमसे बन्धक होता है। इसी प्रकार मिथ्यात्वके समान बारह कथाय, हास्य, रित, भय और जुगुप्साकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२३९. कोध संज्वलनकी जधन्य स्थितिका बन्धक जीव तीन संज्वलनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजधन्य संख्यातगुणा अधिक स्थितका बन्धक होता है। मान

१ मूलप्रती णि० श्रसंज० श्रसांखे० इति पाठः ।

ब्महियं वं० | माणसंज्ञ जह०द्विदिबं० दोग्रहं संज्ञत्व० णि० वं । णि० श्रज्ञ० संसेंज्जगुराब्भहियं वं० | मायासंज्ञ० जह०द्वि०वं० लोभसंज्ञ० णि० वं० संसेंज्ज-गुराब्भहियं वं० |

२४०. इत्थिवे० जह०द्वि०वं० मिन्छ०-वारसक०-भय-दुर्गु० [ णि० वं० ] असंखेजभागव्भिहियं वं० । चदुसंज० णि० वं० णि० अज० असंखेजागुणव्भिहियं वं० । हस्स-रिद-अरिद-सोग० सिया० असंखेजभागव्भिहियं वं० । एवं णवुंस० ।

२४१. पुरिस॰ जह०डि॰बं० चदुसंज० णि० वं॰ संखेंज्जगुण्ब्भिहियं वं०।

२४२. अरदि॰ जह०द्वि०बं॰ मिच्छत्त-बारसक॰-भय-दुगुं० खि॰ बं० णि॰ अज॰ असंखेंज्ञभागब्भहियं बं०। चदुसंज० णि॰ बं० णि॰ अज० असंखें-ज्यगुणब्भहियं बं०। सोग॰ णि॰ वं०। तं तु०। एवं सोग॰।

२४३. णिरयायु॰ ज॰हि॰बं॰ सेसाणं अवंधगो एव**मएण्मएण्**णं अवंधगो।

संज्वलनको जघन्य स्थितिका बन्धक जीव दो संज्वलनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजधन्य संख्यातगुणा श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। माया संज्वलनकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव लोभ संज्वलनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यातगुणा श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है।

२४०. स्त्रीवेदकी जधन्य स्थितिका बन्धक जीव मिथ्यात्व, वारह कराय, भय श्रीर जुगुप्साका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजधन्य श्रसंख्यातवाँ भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। चार संज्वलनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजधन्य असंख्यात गुणा श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। हास्य, रित, श्ररित श्रीर शोक इनका कदाचित् बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजधन्य श्रसंख्यातवाँ भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार नपुंसक वेदकी मुख्यतासे सन्तिकर्ष जानना चाहिए।

२४१. पुरुषवेदकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव चार संज्वलनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यात गुणा श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है।

२४२. श्ररितकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव मिथ्यात्व, बारह कपाय, भय श्रीर जुगुप्ता इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य श्रसंख्यातवों भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। चार संज्वलनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य श्रसंख्यात गुणा अधिक स्थितिका बन्धक होता है। शोकका नियमसे बन्धक होता है जो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेता श्रजघन्य, एक समय श्रधिक लेकर पख्यका असंख्यातवों भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार श्रोककी मुख्यतासे सिश्चकर्ष जानना चाहिए।

२४३. नरकायुकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव शेप आयुर्श्रोका अवन्धक होता है। इसी प्रकार परस्पर एक आयुका बन्ध करनेवाला अन्य आयुर्श्रोका अवन्धक होता है। २४४. णिरयगदि॰ ज॰ष्टि०बं॰ पंचिदि॰-तेजा०-क०-ह्रुंड०-वएण०४-ऋगु० ४-ऋप्पसत्थवि०-तस॰४-ऋथिरादिछ॰-णि० णि॰ बं० संखेँज्जगुण्बभिह्यं बं०। वेउन्वि॰-वेउन्वि०ऋंगो० णि० बं० संखेँज्जभागब्भिह्यं। णिरयाणु॰ णि० बं०। तं तु०। एवं णिरयाणु०।

२४५. तिरिक्खग० ज॰द्वि०वं० पंचिदि०-स्रोरात्तिय०-तेजा०-क०-समचदु०-स्रोरात्ति०स्रंगो०-वज्जरि०-वएए०४-तिरिक्खाग्र०-त्रगु०४-पसत्थवि०-तस०४-थिरा--दिपंच-शिमि० णि० वं० । तं तु० । उज्जो० सिया० । तं तु० । जसगि० णि० वं० स्रसंर्वेज्जगुणब्महियं० । एवं तिरिक्खाणु०-उज्जो० ।

२४६, मणुसग० ज०डि०वं० पंचिदि०-त्रोरालि०-तेजा०--क०--समचदु०-त्रोरालि०श्रंगो०-वज्जरि०-वएण०४-मणुसाणु०--त्र्रगु०४-पसत्थ०-तस०४-थिरादिपंच-

२४४. नरकगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्डसंस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, अप्रशस्त विद्वायोगिति, अस चतुष्क, अस्थिर आदि छह और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अज्ञधन्य संख्यात गुणा अधिक स्थितिका बन्धक होता है। वैक्रियिक शरीर और वैक्रियिक आक्षोपाक्षका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अज्ञधन्य संख्यातवाँ माग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। नरकगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है जो जधन्य स्थितिका मी बन्धक होता है जो जधन्य स्थितिका मी बन्धक होता है और अज्ञधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अज्ञधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जधन्यकी अपेता अज्ञधन्य एक समय अधिकसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार नरकगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२४४. तिर्यञ्चगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक श्रारीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्न संस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वज्राष्म नाराच संहनन, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, असचतुष्क, स्थिर श्रादि पाँच श्रौर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है। जो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रणेचा श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है । श्रौर कदाचित् श्रवन्थक होता है। यदि बन्धक होता है । यदि श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेचा श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पत्थका श्रसंख्यातवाँ भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। यशुक्तिका नियमसे वन्धक होता है। दिश्वतिका बन्धक होता है। वा नियमसे अजघन्य श्रसंख्यातगुणा श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी श्रौर उद्योतकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२४६. मनुष्य गतिकी जधन्य स्थितिका वन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्न संस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, यज्जर्षभ नाराच संहत्तन, वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रस णिमि० णि० बं० । तं तु० । जसगि० णि० वं० असंखेँजिदिगुण्ब्भिहियं बं० । एवं मणुसाणु० ।

२४७. देवगदि॰ ज०ष्टि॰बं० पंचिदि॰-तेजा॰- क॰-समचदु॰-वएए।०४-अगु०४-पसत्थ०-तस॰४-थिरादिपंच-णिमि० एि० वं॰ संखेँ ज्ञगुण्डभिहयं वं०। वेउन्वि-वेउन्वि०अंगो०-देवाणु० णि॰ बं०। तं तु०। जसगि० सिया० असंखेँ ज्ञ-गुण्डभिहयं वं०। एवं वेउन्वि०अंगो०-देवाणु०।

२४८. एइंदि० ज०डि०बं० तिरिक्खग०-स्रोरालि०-तेजा०-क०-हुंढ०-वएए०४-तिरिक्खाराु०-स्रगु०४--बादर-पज्जत्त-पत्ते०-दूभग-स्रणादेॅ०--िएमि० एि० स्रसंखेंज्जदिभागब्भहियं० | स्रादावं सिया० | तं तु० | उज्जो०--थिराथिर-सुभासुभ-

चतुष्क, स्थिर श्रादि पींच, और निर्माण इनका नियमसे वन्धक होता है जो जघन्य स्थिति का भी वन्धक होता है श्रीर अजधन्य स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रजधन्य स्थितिका वन्धक होता है। यदि श्रजधन्य स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेत्ता श्रजधन्य, एक समय श्रधिकसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातचाँ भाग श्रधिक तक स्थितिका वन्धक होता है। यशःकीर्तिका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजधन्य श्रसंख्यातगुणी अधिक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार मनुष्यगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२४७. देवगितकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्न संस्थान, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्तविहायोगित, त्रस चतुष्क, स्थिर श्रादि पाँच श्रौर निर्माण इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। वैकियिक शरीर, वैकियिक श्राक्तिका श्राक्षणोइ श्रौर देवगत्यानुपूर्वी इनका नियमसे बन्धक होता है जो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेचा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। यशकोर्तिका कदाचित् वन्धक होता है। यशकोर्तिका कदाचित् वन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसो प्रकार वैकियिक शरीर, वैकियिक श्राङ्गायाङ श्रौर देवगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२४८. एकेन्द्रिय जातिको जघन्य स्थितिका वन्धक जीव तिर्यञ्चगति, श्रौदारिक शरीर, तैजल शरीर, कार्मण शरीर, हुएड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, दुर्भग, श्रमादेय श्रोर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजधन्य श्रसंख्यातवों भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। श्रातपका कदाचित् बन्धक होता है श्रोर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है। श्रातपका कदाचित् बन्धक होता है श्रोर अजधन्य स्थितिका भो बन्धक होता है। यदि अजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजधन्य स्थितिका भो बन्धक होता है। यदि अजधन्य स्थितिका बन्धक होता है। वियमसे जधन्यकी श्रपेत्वा श्रजधन्य, एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवों भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। उद्योत, स्थिर, श्रस्थर, श्रुभ, श्रशुभ श्रीर श्रयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजधन्य श्रसंख्यातवों भाग

अजस० सिया० असंखेँज्ञदिभाग≈भिंद्यं० । थावर० णि० वं० । तं तु० । जसिग० सिया० असंखेँज्जदिगुण∞भिंदयं० । एवं आदाव-थावर० ।

२४६. वीइंदि० जह०डि०वं० तिरिक्खगिद-श्रोरालिय०-तेजा०-क०-हुंड०-श्रोरालि०श्रंगो०-श्रसंपत्त०-वएए०४-तिरिक्खाणु०-श्रगु०४-श्रप्पसत्थ-तस०४--दूभग-दुस्सर-श्राह्योदे०-िएपि० णि० वं० श्रसंखेंज्जदिभागब्भहियं० । उज्जो० सिया० । थिरा-थिर-सुभासुभ-श्रजस० सिया० श्रसंखेंज्जदिभागब्भहियं० । जस० सिया० श्रसंखें-उजदिगु० । एवं तीइंदि०-चदुरिंदि० ।

२५०. पंचिंदि० ज॰हि०बं० झोरालि०-तेजा०--क०--समचदु०--झोरालि० स्रंगो०-बज्जरिस०-वएए।०४-झगु०४-पसत्थ०-तस०४-थिरादिपंच-िएमि० एि० बं०।

श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। स्थावरका नियमसे बन्धक होता है जो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजधन्य स्थितिका बन्धक होता है। यदि अजधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेचा अजधन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवों भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजधन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार आतप और स्थावर प्रकृतियों की मुख्यतासे सिक्षकर्ष जानना चाहिए।

२५९. द्वीन्द्रिय जातिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव तिर्यश्चाति, श्रौदारिक शरीर, तैजल शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, श्रलस्थातासुपादिका संहनन, वर्णचतुष्क, तिर्यश्चात्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघुचतुष्क, श्रशस्त विद्वायोगित, त्रस चतुष्क, दुर्भग, दुःस्वर, त्रनादेय श्रीर निर्माण इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य श्रसंख्यातवाँ भाग श्रिधिक स्थितिका बन्धक होता है। उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवस्थक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है तो जधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका वन्धक होता है। स्थर, श्रस्थर, श्रभ, श्रशुभ श्रसंख्यातवाँ भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। स्थर, श्रस्थर, श्रभ, श्रशुभ श्रौर श्रयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है। यदि वन्धक होता है। वियमसे श्रजधन्य श्रसंख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार त्रीन्द्रिय जाति श्रीर चतुरिन्द्रिय जातिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२४०. पञ्चेन्द्रियं जातिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्न संस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गोराङ्ग, वर्ज्यभनाराच संहनन, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, त्रस चतुष्क, स्थिर आदि पाँच श्रौर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रज्ञघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियम से जघन्यकी श्रपेत्त। श्रजघन्य, एक समय श्रधिकसे लेकर पर्यका श्रसंख्यातवाँ भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। तिर्यञ्चगित, मनुष्यगित, हो श्रानुपूर्वी श्रौर उद्योत इनका

तं तु॰ । तिरिक्त्वगिद-मणुसगिद-दोत्राणु॰-उज्जो० सिया० । तं तु० । जस० णि॰ वं० ऋसंस्वेंज्जगु॰ । एवं पंचिदियभंगो स्रोरालिय-तेजा०-क॰-समचदु०-स्रोरालि॰ स्रंगो०-वज्जरिस०-वग्णु०४-स्रगु०४-पसत्य०-तस०४-थिरादिपंच-णिमिण ति ।

२५१. ब्राहार० जह०द्वि०बं॰ देवगदि-पंचिदि०-वेउव्वि०तेजा०-क०-सम-चदु०--वेउव्वि०ब्रंगो०--वरण०४--देवाणु०--ब्रगु०४--पसत्थ०--तस०४-थिरादिपंच--णिमि० णि० वं० संखेँज्जगुणब्भिह्यं० । ब्राहार०ब्रंगो० णि० वं० । तं तु० । जस० णि० वं० णि० असंखेँज्जगुणब्भिह्यं० । तित्थय० सिया० । तं तु० । एवं ब्राहारश्रंगो०-तित्थयरं ।

२५२. एम्मोद० जह ॰ द्वि०वं० पंचिंदि०-स्रोरात्ति०-तेना ॰ - क० - स्रोरात्ति०-

कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजधन्य स्थितिका बन्धक होता है। यदि अजधन्य स्थितिका बन्धक होता है। यदि अजधन्य स्थितिका बन्धक होता है। यशा अधिक से ठेकर पत्थका असंख्यातियाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। यशा कीर्तिका नियमसे बन्धक होता है। यशा कीर्तिका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजधन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसीप्रकार पञ्चेन्द्रिय जातिके समान औद।रिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, औद।रिक आङ्गेणङ्ग, वज्रष्मनाराच संहनन, वर्ण चतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त बिहायोगित, जस चतुष्क, स्थिर आदि पाँच और निर्माण इनकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२४१. श्राहारक श्रीरकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव देवगित, पञ्चेन्द्रिय जाति, वैकियिक श्रीर, तैजस श्रीर, कार्मण श्रीर, समचतुरस्न संस्थान, वैकियिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुरुक, देवगत्याजुपूर्वी, अगुरुलसु चतुर्क, प्रशस्त विहायोगित, अस चतुर्क, स्थिर श्रादि पींच श्रीर निर्माण धनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यात गुणी श्रिष्ठिक स्थितिका बन्धक होता है। श्राहारक श्राङ्गोपाङ्गका नियमसे बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। श्राहारक श्राङ्गोपाङ्गका नियमसे बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेचा श्रजघन्य, एक समय श्रिष्ठकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातचाँ भाग श्रिष्ठकतक स्थितिका बन्धक होता है। यश कोर्तिका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य श्रसंख्यातगुणी श्रिष्ठक स्थितिका बन्धक होता है। त्रार्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर श्रजघन्य स्थितिका मी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका मी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेचा श्रजघन्य एक समय श्रिक्षक लेकर पत्यका श्रसंख्यातचाँ भाग श्रिष्ठक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसो प्रकार श्राहारक श्राङ्गोपाङ्ग श्रीर तीर्थङ्कर प्रकृतिकी मुख्यतासे सन्धिकर्य जानना चाहिए।

२४२. न्यग्रोध परिमण्डल संस्थानकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रीदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, श्रमुक्त्वघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगिति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, श्रादेय श्रीर निर्माण श्रंगो०-वण्गा॰४-श्रगु०४-पसत्थ॰-तस॰४-सुभग-सुस्सर श्रादें॰-श्गिमि०णि० वं० श्रसंखेंज्ञभागब्भहियं०। तिरिक्ख०-मणुसगदि-वज्जरि०-दोश्राणु०-उज्जो॰-थिराथिर-सुभासुभ-श्रजस० सिया० श्रसंखेंज्जदिभा०। वज्जणारा० सिया०। तं तु०। जस० सिया० श्रसंखेंज्जरुण०। एवं वज्जणारा०।

२५३. सादिय० जह०द्वि०वं० णुग्गोदभंगो । एवरि खाराय० सिया० । तं तु० । दोसंघ० सिया० ऋसंखेँ ज्ञदिभा० । एवं खारायख० ।

२५४. खुज्ज॰ जह०द्वि०वं० पंचिदि०-श्रोरात्ति॰-तेजा॰-क०-श्रोरात्ति॰श्रंगो०-वरणा०४--त्रगु०४--पसत्थ॰--तस०४-सुभग-सुस्सर-श्रादें०--णिमि० णि० वं० श्रसं-खेंजनिद्भा० । तिरिक्ख०-मणुसगदि-तिरिणसंघ०-दोत्राणु०--उज्जो॰-थिराथिर-सुभा-

इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातवों भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति, वर्ज्जभनाराच संहनन, दो आनुपूर्वी, उद्योत, स्थिर, अस्थिर, युभ, अगुभ और अयशःकार्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदा-चित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य असंख्यातवों भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। वज्जनाराच संहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। वियमसे अजघन्य स्थितिका क्षेत्र होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पत्थका असंख्यातवों भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। यशकोतिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार वज्जनाराच संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्व जानना चाहिए।

२४३. स्त्राति संस्थानकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवकी. अपेता सिक्षकर्ष न्यप्रोध परिमण्डल संस्थानके समान है। इतनी विशेषता है कि यह नाराच संहमनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका असंख्यातवीं भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। दो संहमनका कदाचित् बन्धक होता है शोर कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य असंख्यातवीं भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार नाराच संहमनकी मुख्यतसे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२४४. कुष्त्रक संस्थानकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्ण चतुष्क, श्रगुरुक्षधु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, त्रस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, श्रादेय श्रौर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजधन्य असंख्यातवों भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। तिर्यञ्चगित, मनुष्यगित, तीन संहनन, दो आनुपूर्वी, उद्योत, स्थिर, अस्थिर, श्रुभ, अशुभ श्रौर श्रयशक्तीर्त इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजधन्य श्रसंख्यातवीं

सुभ--त्रजस० सिया॰ त्रसंखेंज्जदिभा० । जस० सिया॰ त्रसंखेंज्जदिगु॰ । त्रद्ध-णारा॰ सिया॰। तंतु॰। एवं ऋद्धणारा॰। एवं चेव वामणसंटा॰। णवरि खीलिय० सिया० । तंतु॰ । एवं खीलिय॰ ।

२५५. हुंड० जह०डि०वं० पंचिदि०--श्रोरात्ति०-तेजा०--क०-श्रोरात्ति०श्रंगो०-वएण०४-त्रगु०४--पसत्थ०--तस०४-सुभग--सुस्सर--श्रादेँ०-िएमि० एि० वं० । िए० श्रसंखेँजितिभा० । दोगदि-पंचसंघ०--दोश्राग्यु०-उज्जो०--थिराथिर-सुभासुभ-श्रजस० सिया० श्रसंखेँजितिभा० । श्रसंपत्त० सिया० । तं तु० । जस० सिया० श्रसंखेँजिन-दिगु० । एवं श्रसंपत्त० ।

भाग श्रिषक स्थितिका यन्धक होता है। यशःकीर्तिका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रजधन्य श्रसंख्यातगुणी श्रिषक स्थितिका बन्धक होता है। श्रधंनाराच संहननका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो जधन्य स्थितिका भी वन्धक होता है श्रीर श्रजधन्य स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रजधन्य स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रजधन्य स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे जधन्यकी श्रपेक्षा श्रजधन्य एक समय श्रिषक से लेकर पत्थका श्रसंख्यातवों भाग श्रिषक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार श्रधंनाराच संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। तथा इसी प्रकार वामन संस्थानकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि यह कीलक संहननका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धंक होता है। यदि बन्धक होता है तो जधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजधन्य स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार कीलक संहननकी मुख्यतासे सन्वकर्ष जानना चाहिए।

२४४. हुण्ड संस्थानकी जघन्य स्थितिका यन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक श्रारीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रौदारिक श्राङ्गोराङ्ग, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विद्यायोगिति, त्रस चतुष्क, सुभग, सुरुवर, श्रादेय श्रौर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य श्रसंख्यातयों भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। दो गित, पाँच संहनन, दो त्रानुपूर्वी, उद्योत, स्थिर, श्रस्थर, श्रुभ, श्रशुभ श्रौर श्रयशक्तीतिं इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य श्रसंख्यातयों भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। श्रसम्प्रात्तसस्प्रादिका संहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेक्षा श्रजघन्य, एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातयों भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। यश्रकीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है तो नियमसे जघन्धक होता है। यश्रकीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है। यश्रकीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है। यह बन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य असंख्यातयों भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार श्रसम्प्रात्तस्प्राद्रिका संहननकी मुख्यतासे स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार श्रसम्प्रात्तस्प्राद्रिका संहननकी मुख्यतासे स्विकर्ष जानन। चाहिए।

२५६. ऋषसत्थ० ज०ढि०वं० पंचिदि०--श्रोरालि०--तेजा०--क०--श्रोरालि०-श्रंगो०--वएए०४--ऋगु०४--तस०४--िएमि० एि० वं० असंखेँजनिद्या० । दोगदि-इस्संठाए--इस्संघ०--दोश्राणु०--उज्जो०--थिराथिर--स्रुभासुभ--सुभग-सुस्सर--आदेँ०--श्रजस० सिया० असंखेँजनिद्या० । दुभग--दुस्सर--ऋणादेँ० सिया० । तं तु० । जसनि० सिया० असंखेँजनिद्गु० । एवं दूभग-दुस्सर-अणादेँ० ।

२५७. सुहुमस्स ज०द्वि०वं तिरिवस्तगिद-एइंदि०--श्रोरासि०--तेजा०--क०--हु'इसं०--वएण्०४--तिरिक्साणु०--श्रगु०४---थावर---पज्जत्त--पत्ते०---दूभग--श्रणादे०--श्रजस०--िण्मि० णि० वं० श्रसंसेंड्जिदिभा० । थिराथिर-सुभासुभ० सिया० श्रसं-सेंडजिदिभा० ।

२५८. अपज्ञ॰ ज०हि॰वं॰ पंचिदि०-योरालि॰-तेजा०-क०-हुंड०-श्रोरालि०-श्रंगो०-असंपत्त०-वएरा०४-त्रगु॰--उप॰-तस-बादर-पत्ते०--अथिरादिपंच-सिमि० सि॰

२५६. श्राप्रशस्त विद्यायोगितको जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रौदारिक श्राङ्गोणङ्ग, वर्ण चतुष्क, श्रगुकलघु चतुष्क, त्रस चतुष्क और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य असंख्यातवीं भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। दो गित, छह संस्थान, छह संहनन, दो श्रानुपूर्वी, उद्योत, स्थिर, श्रस्थिर, श्रुम, श्रग्रुम, सुमग, सुस्वर, श्रादेय और श्रयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अज्ञघन्य असंख्यातवां भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे अज्ञघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेण श्रजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है। यशःकीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य श्रसंख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार दुर्भग, दुःस्वर श्रीर श्रनादेयकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२५७. स्क्ष्म प्रकृतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, श्रीदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानु-पूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, स्थावर, पर्याप्त, प्रत्येक, दुर्मग, श्रमादेय, श्रयशःकीर्ति और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य श्रसंख्यातवाँ भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। स्थिर, श्रस्थिर शुभ और श्रशुभ इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य श्रसंख्यातवाँ भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है।

२४८. श्रवर्यातको जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुएड संस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, श्रसम्प्राप्तास्पाटिका संहनन, वर्णचतुष्क, श्रग्रहत्त्वु, उपघात, वस, वादर, प्रत्येक, श्रस्थिर श्रादि पाँच श्रौर निर्माण इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे अजधन्य श्रसंख्यातवों भाग श्रिक

वं० असंखेंज्जदिभा० । दोगदि-दोत्राणुपु० सिया० असंखेंज्जदिभा० ।

२५६. अथिर० ज॰ हि॰बं० पंचिदि०—श्रोरात्ति०-तेजा०--क॰-समचढु०-श्रोरात्ति०श्रंगो०--वज्जरिस॰-वएण०४--अगु०४--पसत्यवि०--तस०४--सुभग-सुस्सर-श्रादेँ०--णिमि० णि० बं० असंखेँज्जदिभा० । दोगदि--दोश्राणु०--उज्जो०-सुभग० सिया० असंखेँज्जदिभा० । असुभ-श्रजस० सिया० । तं तु० । जसगि० सिया० असंखेँजगुण्० । एवं असुभ-श्रजस० ।

२६०. गोदे० वेदणीयभंगो त्रांतराइगं णाणावरणभंगो।

२६१. आदेसेण ऐरइगेसु पंचणा०-णवदंसणा० उक्कस्सभंगो । एवरि णियमा वं । तं तु० समजुत्तरमादिं कादृ्ण याव पितदोवमस्स असंखेळादिभागब्भिह्यं० । वेदणीयस्स उक्कस्सभंगो ।

२६२. मिच्छ० ज०द्वि० सोलसक०-पुरिस०--हस्स-रदि--भय-दुगु'० णि० वं०।

स्थितिका बन्धक होता है। दो गित श्रीर दो श्रानुपूर्वीका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजधन्य श्रसंख्यातवाँ भाग श्रिधिक स्थितिका बन्धक होता है।

२४९. श्रस्थिरको जधन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्न संस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वज्रपंभनाराच संहनन, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, त्रस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय श्रीर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजधन्य श्रसंख्यातवाँ भाग श्रिष्ठिक स्थितिका बन्धक होता है। दो गति, दो श्रानुपूर्वी, उद्योत श्रौर सुभग इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजधन्य श्रसंख्यातवाँ भाग श्रिष्ठक स्थितिका बन्धक होता है। श्रुप्तभ श्रौर श्रयशक्तितिका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है हो अधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजधन्य स्थितिका बन्धक होता है। यदि श्रजधन्य स्थितिका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। यशकीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है तो नियमसे जधन्यक होता है। यशकीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजधन्य श्रसंख्यातगुणी श्रिष्ठक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार श्रश्चभ श्रौर अयशकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

्र २६०. गोत्रकर्मका भङ्ग वेदनीयके समान है और अन्तराय कर्मका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है।

५६१. श्रादेशसे नारिकयों में पाँच झानावरण श्रौर नौ दर्शनावरणका भक्न उत्कृष्टके समान है। इतनी विशेषता है कि नियमसे वन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रिपेचा श्रजघन्य, एक समय श्रिधकसे लेकर पर्धका श्रसंख्यातवाँ भाग श्रिधक तक स्थितिका बन्धक होता है। वेदनीयकी मुख्यतासे सिन्नकर्ष उत्कृष्टके समान है।

२६२. मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव सोलह कषाय, पुरुषवेद, हास्य,

तं तु॰ जह॰ अज॰ समजुत्तरमादिं कादृण पलिदोवमस्स असंखें ज्ञभागन्भहियं बं॰। एवमेदाओ ऍक्कमें क्रस्स । तं तु॰।

२६३. इत्थि० जह०द्वि०वंधंतो मिच्छ०-सोलसक०--भय-दुगुं० णिय० वं० तं तु संखेंज्जदिभागव्भहियं० । हस्स-रदि-झरदि-सोग० सिया० संखेंज्जदिभागव्भ-हियं० । एवं णुबुंस० ।

२६४. अरदि॰ जह॰ड्डि॰बं० मिच्छ०-सोलसक०-पुरिसवे॰-भय-दुगुं० णि० वं० संखेँजनदिभागन्भहियं। सोग० णि० बं०। तं तु०। एवं सोग०। आयुगाणं उकस्सभंगो।

२६५. तिरिक्खगदि० ज॰हि०वं० पंचिंदि०-त्रोरालि०-तेजा०-क०-त्रोरालि०-त्रंगो०-वएण०४-त्रगु०४-तस०४-णिमि० णि० वं० संखेंज्जदिभागब्भिहयं० । छस्सं-

रित, भय और जुगुष्सा इनका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेद्धा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इनका परस्पर सिन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेद्धा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है।

२६३. स्रीवेदकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव मिथ्यात्व, सोसह कपाय, भय श्रीर जुगुप्सा इनका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह श्रजघन्य संख्यातवां भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। हास्य, रित, श्ररित श्रीर शोक इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् श्रवन्थक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य संख्यातवीं भाग श्रिधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार नपुंसकवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२६४. ऋरतिकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पुरुष वेद, भय श्रीर जुगुष्सा इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यातवाँ भाग श्रिषक स्थितिका वन्धक होता है। शोकका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेत्ता श्रजघन्य, एक समय श्रिषक लेकर पत्थका श्रसंख्यातवाँ भाग श्रिषक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार शोककी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। श्रायुश्रोंकी अपेत्ता भन्न उत्कृष्टके समान है।

२६५. तिर्यञ्चगितकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रीदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रीदारिक श्राङ्गोणाङ्ग, वर्ण चतुष्क, श्रगुरुलघु चतुष्क, श्रस चतुष्क, श्रीर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यातवीं भाग श्रीधक स्थितिका बन्धक होता है। छह संस्थान, छह संहनन, दो विहायोगित, श्रीर स्थिर श्रादि छह युगल इनका कदाचित् बन्धक होता है।

ठाएां छस्संघडएां दोविहा॰ थिरादिब्रयुगलं सिया॰ संखेंज्जदिभागब्भ॰। तिरि-क्खाणु० एा॰वं०। तं तु०। उज्जो॰ सिया॰। तं तु॰। एवं तिरिक्खाणु॰--उज्जो०।

२६६. मणुसगदि० ज०द्वि॰वं॰ पंचिदि॰-स्रोरालि॰-तेजा॰-क०-समचदु॰-स्रोरालि॰स्रंगो०-बज्जरिस०-वगण०४-मणुसाणु॰-स्रगु०४-पसत्थ०-तस०४-थिरा-दिद्ध॰-णिभि॰ णि० बं० । तं तु० । एवमेदास्रो ऍकमेकस्स । तं तु॰ ।

२६७. पंचसंठा०-पंचसंघ०-अप्पसत्थ० श्रोघं । एवरि णियमा मणुसगदिसंजु त्तात्रो कादव्वात्रो । तासु सेसात्रो संखेँजिदिभागव्महि० ।

२६⊏. तित्थय० ज०डि०बं० मणुसगदि-पंचिदि०-स्रोराति०--तेजा०-क०- सम-

यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजधन्य संख्यातवीं भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वोका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है शौर अजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जधन्यकी अपेका अजधन्य, एक समय अधिकसे लेकर पख्यका असंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो जधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जधन्यको अपेका अजधन्य, एक समय अधिकसे लेकर पख्यका असंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और उद्योतकी मुख्यतासे सिन्नकर्ष जानना चाहिए।

र६६. मनुष्यगितकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, धज्रषम नाराच संहनन, वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विद्वायोगित, त्रसचतुष्क, स्थिर श्रादि छह श्रौर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रज्जबन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेचा श्रज्जबन्य, एक समय श्रिष्ठकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवीं भाग श्रिष्ठक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इनका परस्पर सिश्चिका भी बन्धक होता है। इसी प्रकार इनका परस्पर सिश्चिका भी बन्धक होता है। विद्यातको श्रीर श्रज्जबन्य स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इनका परस्पर सिश्चिका भी बन्धक होता है। यदि श्रज्जबन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यको श्रपेचा श्रज्जवन्य, एक समय श्रिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवीं भाग श्रिष्ठक तक स्थितिका बन्धक होता है।

२६७. पाँच संस्थान, पाँच संहनन श्रीर श्रवशस्त विहायोगित इनकी मुख्यतासे सिन्निकर्ष श्रीघके समान है। इतनी विशेषता है कि इनकी नियमसे मनुष्यगित संयुक्त करना चाहिए। तथा इनमें शेष प्रकृतियोंका श्रज्ञघन्य स्थितिबन्ध होता है जो संख्यातवों भाग श्रिधक होता है।

२६८. तीर्थङ्कर प्रकृतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव मनुष्यगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वस्र्यभनाराच संहनन, वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुत्तघु चतुष्क,

चदु०-श्रोरालि॰ श्रंगो०-वज्जरिस॰-वण्ण॰४-मणुसाणु०--श्रगु०४-पसत्थ०--तस०४-थिरादिञ्च०-णिमि॰ णि॰ वं संसेंज्जगुण्०।

- २६६. गोदं वेदणीयभंगो | त्र्यंतराइगार्ण लालावरणीयभंगो | एवं पढ़म-पुढवीए |
- २७०. विदियाए **णाणावरणी०-वेदणी०-श्रायु-गोद०-श्रं**तराइगाणं **णिरयोधं** । णिदाणिदाए ज**ेडि०वं० पचलापचला-श्रीणगिद्धि**० णि० वं० । तं तु० । श्रदंस० णि० वं० संखेंज्ञग्रु० । एवं पचलापचला-श्रीणगिद्धि**०** ।
- २७१. शिहा० जह०िटवंट पंचदंसट शि० वंट । तं तुट । एवमेदास्रो ऍक-मेंक्स्स । तं तुट ।
  - २७२. मिच्छ० जह०द्वि०वं० ऋणंताणुबंधि०४ णि०वं०। तंतु०। वारस क०-

प्रशस्त विहायोगित, त्रस चतु॰क, स्थिर यादि छह त्रौर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो निर्ममसे क्रज्ञधन्य संख्यातगुणा अधिक स्थितिका वन्धक होता है।

- २६९, गोत्रकर्मका मङ्ग वेदनीयके समान है और ग्रन्तरायकी प्रकृतियोंका भङ्ग इ।नावरणके समान है। इसी प्रकार प्रथम पृथिवीमें जानना चाहिए।
- २७०. दूसरी पृथिवीमें ज्ञानावरण, वेदनीय, त्रायु, गोत्र त्रीर अन्तराय कर्मकी प्रकृतियोंका भद्ध सामान्य नारिकयोंके समान है। निद्वानिद्राकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव प्रचलाप्रचला श्रीर स्थानगृद्धि इनका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जिंधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रज्ञधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रज्ञधन्य स्थितिका बन्धक होता है। वह दर्शनावरणका लेकर प्रस्थक होता है। इस दर्शनावरणका नियमसे बन्धक होता है। इसी प्रकार प्रचलाप्रचला श्रीर स्त्यानगृद्धिकी मुख्यतासे सिक्षक्ष जानना चाहिए।
- २७१. निद्राकी जधन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच दर्शनावरणका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और श्रजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे जधन्यकी श्रपेणा श्रजधन्य, एक समय श्रिधिकसे लेकर पत्थका श्रसंख्यातवीं भाग श्रिधक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इनका परस्पर सिक्षकर्ष जानना चाहिए। किन्तु वह जधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है तो वह नियमसे जधन्यकी श्रपेणा श्रजधन्य, एक समय श्रिधकसे लेकर पत्थका श्रसंख्यातवीं भाग श्रिक समय श्रिधकसे लेकर पत्थका श्रसंख्यातवीं भाग श्रिक तक स्थितिका बन्धक होता है।
- २७२. मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिका यन्धक जीव श्रमन्तानुबन्धी चारका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है श्रीर श्रजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जधन्यकी श्रपेत्वा श्रजधन्य, एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवीं भाग श्रधिक तक स्थिति का बन्धक होता है। बारह कथाय, पुरुषवेद, हास्य, रित, भय श्रीर जुगुप्सा इनका

पुरिस॰-हस्स-रदि-भय-दुगुं० णि०वं० संखेंजजगु० । एवं ऋणंताणुवंधि०४ ।

२७३. अपच्चक्लाणकोधक जिंदिव्बंक ऍकारसक्ताक-पुरिसक-इस्स-रिद-भय-दुर्गु व णिव बंव । तंतुव । एवमेदाओव तं तुक पिद्दाओं ऍकमेर्कस्स । तं तुक । २७४. इत्थिवेक जिंदिक्वेव मिच्छव-सोलसकव-भय-दुव णिक बंव संखेळागुव ।

इस्स-रदि-ऋरदि-सोग० सिया॰ संखेंज्जगु॰ । एवं एावुंस० ।

२७५. अरदि० ज०डि०वं० वारसक०-पुरिस०-भय-दुगुं० णि० वं० संर्लेज्ज-भाग० | सोग० णि० वं० | तं तु० | एवं सोग० |

२७६. तिरिक्खगदि॰ जह०द्विदिवं॰ पंचिदि०-स्रोरालि०-तेजा०-क०-स्रोरा-लि०स्रंगो०-वएण०४-स्रगु०४-तस०४-णि०[णि०]वं० संखेंज्जगु०।समचदु०-वज्जरि०-

नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार श्रनन्तानुबन्धी चतुष्ककी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२७३. श्रमत्याख्यानावरण क्रोधकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव ग्यारह कथाय, पुरुषवेद, हास्य, रित, भय श्रीर जुगुण्सा इनका नियमसे बन्धक होता है। िकन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है। विस्ति श्रिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग श्रिधकतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार 'तं तु' रूपसे प्राप्त इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सिन्नकर्ष होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है। तो नियमसे जघन्यकी श्रपेत्ता श्रजघन्य, एक समय श्रिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग श्रिधक तक स्थितिका बन्धक होता है।

२७४ स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव मिथ्यात्व, सोलह कवाय, भय श्रौर जुगुन्सा इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। हास्य, रित, श्ररित श्रौर शोक इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य संख्यातगुली श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार नपुंसकवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानमा चाहिए।

२७४. अरितकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव बारह कथाय, पुरुषवेद, मय और जुगुप्सा इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। शोकका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यको अपेका अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पत्य का असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार शोककी मुख्यता से सन्तिकर्ष जानना चाहिए।

२७६. तिर्यञ्चगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रीदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, श्रमुरुलघु जतुष्क, श्रसचतुष्क श्रीर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यातगुणी श्रिधक स्थितिका बन्धक होता है। समचतुरस्र संस्थान, वर्ज्ञर्षमनाराच संहनन, प्रशस्त विद्यायोगित, स्थिर श्रादि तीन युगल, सुमग, सुस्वर श्रीर श्रादेय इनका कदाचित् बन्धक होता है

पसत्थ०-थिरादितिषिणयुग०-सुभग-सुस्सर-त्रादें सिया॰ संखेंडजगु॰। पंचसंद्या०-पंचसंघ०-त्रप्रसत्थ॰-दूभग-दुस्सर-त्र्रणादें सिया० संखेंडजदिभा०। तिरिक्खाणु॰ णि॰ वं०। तं तु॰। उडजो० सिया॰ १ तं तु॰। एवं तिरिक्खाणु०-उज्जो०।

२७७. मणुसग० ज०हि०बं० पंचिंदि०-त्रोरालि०-तेजा०-क०-समचढु०-श्रोरालि०श्रंगो०-वज्जरि०--वरण्ए० ४-मणुसाणु०-त्रगु०--पसत्थ०-तस०४--थिरादिञ्ज०-णि०[णि०]बं० | तं तु० | तित्थ० सिया०-|तं तु० | एवं एदाश्रो ऍक्कमेर्कस्स | तं तु० | २७८. णुग्गोद० ज०हि०बं० मणुसग०-पंचिंदि०-श्रोरालि०-तेजा०-क०-श्रोरा-

श्रीर कदाचित् अवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे अजधन्य संख्यात गुणी श्रिधिक स्थितिका बन्धक होता है। पाँच संस्थान, पाँच संहनन, अप्रशस्त विहायोगित, दुर्भग, दुःस्वर श्रीर अनादेय इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रवच्य संख्यातवाँ भाग श्रीष्ठक स्थितिका बन्धक होता है। तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है। यदि अजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। विर्यञ्चगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है। यदि अजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे जधन्यकी श्रपेचा श्रवधन्य एक समय श्रिधकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग श्रिषक तक स्थितिका बन्धक होता है। उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है तो जधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रवधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रवधन्य स्थितिका बन्धक होता है। यदि श्रवधन्य स्थितिका बन्धक होता है। यदि श्रवधन्य स्थितिका बन्धक होता है। एसे श्रवधन तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी श्रीर उद्योतकी सुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२०७ मनुष्यगितकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्दिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्न संस्थान, श्रौदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रवंभ नाराचसंहनन, वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुत्तघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगिति, असचतुष्क श्रौर स्थिर श्रादि छह इनका नियमसे बन्धक होता है जो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि श्रजघन्य स्थितिका मी बन्धक होता है । यदि श्रजघन्य स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रणेवा श्रजघन्य, एक समय श्रिधकसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग श्रधिकतक स्थितिका बन्धक होता है । तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्थक होता है । यदि श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है । एसी प्रजाद इनका परस्पक श्रोस होता है । इसी प्रकार इनका परस्पर सिश्वका भाग श्रिकक तक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार इनका परस्पर सिश्वका जानना चाहिए । किन्तु तथ वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है । श्रीतका भी बन्धक होता है । यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है । यदि श्रजघन्य स्थितका बन्धक होता है । यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है ।

२७८. न्यप्रोध परिमग्रङल संस्थानकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव मनुष्यगति, पञ्चेदिय जाति, श्रीदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण श्रारीर, श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्ण- त्ति०श्रंगो०-वएण०४-मणुसाणु०-श्रगु०४-पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्सर-श्रादे०-णिमि० णि॰ वं० संखेंज्जदिग्रण०। वज्जरि०-थिराथिर-सुभासुभ-जस०-श्रजस० सिया० संखेंज्जदिगुण०। वज्जणारा० सिया०। तं तु०। एवं वज्जणारायणं।

२७६. चदुसंठा०-चदुसंघ० ज०हि०वं० धुविगात्रो मणुसगदीए सह णग्गोद-भंगो । यात्रो सम्मादिहिस्स जहिएणगात्रो तात्रो सिया० णग्गोदभंगो । यात्रो मिच्छादिहिस्स जह०पात्रोग्गात्रो तात्रो सिया० संखेजिमागब्भहियं०। एवं ऋष्पसत्थ०-दूभग-दुस्सर-ऋणादे०।

२८०. अधिरं जह ० हि॰ बं भणुसगदि सह गदास्रो णियमा वं० संखें ज-भागब्भिह्यं । सुभ-जसगित्ति-तित्थय० सिया० संखें जभागब्भिह्यं । असुभ-स्रजस० सिया० । तं तु० । एवं श्रसुभ-स्रजसगित्ति । एवं याव छिद्व त्ति ।

चतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, त्रादेय त्रौर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजधन्य संख्यात-गुणो श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। वज्रषंभनाराच संहनन, स्थिर, श्रस्थर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति त्रौर अयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजधन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। वज्रनाराच संहननका कदाचित् बन्धक होता है। किन्तु वह जधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर अजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जधन्यकी अपेका अजधन्य एक समय अधिकसे लेकर पद्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार वज्रनाराच संहननकी मुख्यतासे सन्तिकर्ष जानना चाहिए।

२७९. चार संस्थान श्रौर चार संहननकी जधन्य स्थितिके बन्धक जीवके ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंका भक्क मनुष्यगितके साथ न्यश्रोध परिमएडल संस्थानके समान है। जो
प्रकृतियों सम्यादिके जधन्य स्थितिबन्धवाली हैं वे कदाचित् बन्धवाली हैं। तथा इनका
भक्क न्यश्रोध परिमएडल संस्थानके समान है श्रौर जो मिथ्यादिके जधन्य स्थिति बन्धके
योग्य हैं उनका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक
होता है तो नियमसे श्रजधन्य संख्यातयों भाग श्रधिक स्थितिका वन्धक होता है। इसी
प्रकार श्रप्रशस्त विहायोगिति, दुर्भग, दुस्वर श्रौर श्रनादेयकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना
चाहिए।

२८०. श्रस्थिर प्रश्नतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव मनुष्यगितके साथ बन्धको प्राप्त होनेवाली प्रश्नतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रज्जघन्य संख्यातयों भाग श्रिथिक स्थितिका बन्धक होता है। श्रुभ, यशःकीर्ति श्रीर तीर्थक्कर इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रज्जचन्य संख्यातयों भाग श्रिथिक स्थितिका बन्धक होता है। श्रश्रुभ श्रीर श्रयशःकीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रज्जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रज्जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जधन्यकी श्रपेचा श्रजघन्य, एक समय श्रिधकसे

२८१. सत्तमाए छपगदीस्रो विदियपुढविभंगो ।

२८२. तिरिक्षत्वग० ज०हि०वं पंचिदि०-स्रोरालि०--तेजा०-क०-समचढु०-स्रोरालि०स्रंगो०-वज्जरिस०-वएण०४--स्रगु०४--पसत्थ०-तस०४-थिरादिस०--िएमि० णि० वं० संखेंज्जगु०। तिरिक्ष्वाणु० णि० वं०। तं तु०। उज्जो० सिया०। तं तु०। एवं तिरिक्ष्वाणु०-उज्जो०। मणुसगदिस्रादि० ज०हि०वं० सम्मादिहिपास्रोग्गास्रो विदियपुरुविभंगो।

२८३. णुग्गोद० ज॰हि॰बं॰ तिरिक्खगदि-पंचिदि॰-स्रोरालि॰-तेजा०-क०-स्रोरालि०श्रंगो०-वरण्०४--तिरिक्खाणु॰-त्रगु०४-पसत्थ०-तस०४--ग्रुभग-ग्रुस्सर-स्रादें०-णिमि० णि० बं॰ संसेंज्जगु॰। वज्जिरस०-उज्जो॰-थिराथिर-ग्रुगाग्रुभ-जस० स्रजस० सिया० संसेंज्जिदिगु०। पंचसंटा॰-पंचसंघ०-श्रप्पसत्थ०-दूभग-दुस्सर-

लेकर पत्यका त्रसंख्यातवों भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार श्रधभ त्रौर श्रयशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । इसी प्रकार छुठी पृथिवी तक जानना चाहिए ।

२८१. सातवीं पृथिवीमें छह प्रकृतियोंका भङ्ग दूसरी पृथिवीके समान है।

रूप्त. तिर्यञ्ज गितकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्न संस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभ नाराच संहनन, वर्ण चतुष्क, श्रगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, त्रस चतुष्क, स्थिर श्रादि छह श्रौर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यागुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर अज्ञघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेचा श्रजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर अज्ञघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेचा श्रजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग श्रधिक तक स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेचा श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार तिर्यञ्चनात्यानुपूर्वी श्रौर उद्योतकी मुख्यता से सन्मिकर्ष जानना चाहिए। मनुष्याति श्रादिको जघन्य स्थितिके बन्धक जीवके समयग्रहिष्ट प्रायोग्य प्रकृतियोंका भङ्ग दूसरी पृथिवोके समान है।

२८३. न्यग्रोध परिमग्डल संस्थानकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव तिर्यञ्च गित, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्ण चतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विद्वायोगिति, त्रस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, श्रादेय श्रौर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यात-गुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। वज्रष्मनाराच संहनन, उद्योत, स्थिर, श्रस्थिर, शुभ, श्रशुभ, यशःकीर्ति श्रौर अयशःकीर्ति इनका कदाखित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक

त्र्यणादेंज्जार्णं एदेणेव विधिणा विदियपुढविभंगो ।

२८४. तिरिक्खेसु पंचणा०--एावदंसणा०--दोवेदणी०--चतुत्रायु०--दोगोद०-पंचंत० णिरयोघं । मिच्छत्त० ज०डि०बं० सोलसक०-पुरिसक्दे-हस्स-रदि-भय-दुर्गु० णि० वं० । तं तु० । एवमेदात्रो ऍक्कमेक्कस्स । तं तु० ।

२८४. इत्थि॰ ज॰ ढि॰वं मिच्छ॰-सोलसक॰-भय-दुगुं॰ णि॰ बं॰ असंखेंज्ज-दिभा॰ । इस्स-रदि-अरदि-सोग॰ सिया॰ असंखेंज्जदिभा० । एवं णवुंस० ।

२८६. ऋरदि० ज०टि०बं० मिच्छत्त-सोत्तसक∘-पुरिस०-भय-दुगुं० णि० वं० ऋसंखेंज्जदिभा०। सोग० णि० वं०। तं तु० ऋसंखेंज्जदिभागब्भहियं वं०। एवं सोग०।

२८७. शास्यगदि० ज०द्वि०वं० पंचिदि०-तेजा०-क०-हुंड०-वरण०४-अगु०४-

होता है। पाँच संस्थान, पाँच संहनन, अप्रशस्त विहायोगित, दुर्भग, दुःस्वर श्रौर अनादेय इनका इसी विधिसे दूसरी पृथिवीके समान भक्क है।

२८४. तिर्यञ्चोंमें पाँच श्वानावरणी, नी दर्शनावरण, दो वेदनीय, चार श्रायु, दो गोत्र श्रौर फाँच अन्तराय इनका भङ्ग सामान्य नारिक्षयोंके समान है। मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव सोलह कषाय, पुरुषवेद, हास्य, रित, भय श्रौर जुगुण्सा इनका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। श्रौर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेता श्रजघन्य, एक समय श्रधिकसे लेकर पत्थका श्रसंख्यातयाँ भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इस प्रकार इनका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु ऐसी श्रवस्थामें वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। श्रीर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है। ग्रीर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है। ग्रीर श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है। ग्रीर श्रजघन्यकी श्रपेत्रा श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पत्थका श्रसंख्यातवाँ भाग श्रधिकतक स्थितिका बन्धक होता है।

२८४. स्त्रीवेदकी जधन्य स्थितिका बन्धक जीव मिथ्यात्व, सोलह कपाय, भय, श्रौर जुगुण्सा इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजधन्य श्रसंख्यातवीं भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। हास्य, रित, श्रुरित श्रौर शोक इनका कदाखित बन्धक होता है। श्रीर कदाखित श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजधन्य श्रसंख्यातवीं भाग श्रिधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार नपुंसक वेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२८६. श्ररतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुल्ला इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य असंख्यातवीं भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। शोकका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह श्रजघन्य श्रसंख्यातवीं भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार शोककी मुख्यतः से सिक्षकर्ष जानना चाहिए।

२८७. नरकगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति तैजस, शरीर, कार्प्रण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, श्रमुरुलधुचतुष्क, श्रप्रशस्त विहायोगति, बस- अपसत्थ०-तस०४-अधिरादिछ०-िएमि० णि० वं॰ संखेंज्जगु॰ । वेउव्वि०-वेउव्वि० श्रंगो० णि॰ वं॰ संखेंज्जदिभागन्भहियं० । णिरयाणु॰िण० वं० । तं तु ० । एवं णिरयाणु० ।

२८८. सेसात्रो पगदीत्रो मूलोघं । एवरि जासि पगदीर्यां असंखेंज्जगुणव्भ-हियं तासि पगदीर्या थिरभंगो कादव्यो । देवगदिचदुकं [संखेज्ज] गुणव्भिहियं । जसव जव्हिव बंव पंचिदियभंगो ।

२८६. पंचिदियतिरिक्षेसु३ सत्त्तगणं कम्माणं णिरयोघं। णिरयगदि० ज॰ हि०-बं० पंचिदियजा०--वेडिव्व०--तेजा०--क०--हुंड०-वेडिव्वि॰ झंगो०-वण्ण०४--अगु०४-अप्पसत्थ०-तस०४-अथिरादिञ्ञ०-िण्मि० णि० वं० संखेंज्जदिभागव्भहियं०। णिरयाणु० णि० वं०। तं तु०। एवं णिरयाणु०।

चतुष्क, श्रस्थिर श्रादि छह श्रौर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे श्रज-धन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। वैक्रियिक शरीर और वैक्रियिक आङ्गो-पाङ्गका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे श्रजधन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। नरकगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है, किन्तु वह जधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और श्रजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जधन्यकी अपेक्षा श्रजधन्य, एक समय श्रधिकसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार नरकगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२८८. शेष प्रकृतियोंका भङ्ग भूलोधके समान है। इतनी विशेषता है कि जिन प्रकृतियोंका श्रसंख्यातगुणा श्रधिक स्थितिबन्ध है, उन प्रकृतियोंका स्थिर प्रकृतिके समान भङ्ग जानना चाहिए। देवगतिचतुष्कका भङ्ग संख्यातगुणा श्रधिक कहना चाहिए। यशःकीर्तिको जधन्य स्थितिके बन्धक जीवका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय जातिके समान है।

२८९. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चित्रकमें सात कमौंका भङ्ग सामान्य नारिकयोंके समान है। नरकगितकी जधन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, वैकियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वैकियिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, आग्रहलघु चतुष्क, अप्रशस्त विहायोगिति, असचतुष्क, अस्थिर आदि छह और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजधन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। नरकगित्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है, किन्तु वह जधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो जधन्यकी अपेक्षा अजधन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार नरकगत्यानुपूर्वीको मुख्यता से सक्षिकर्ष जानना चाहिए।

१ मूलप्रती पगदीणं जसगित्ति श्रासि श्रसंखे-इति पाठः /

- २६०. तिरिक्खन जिंदि० पंचिदि०-स्रोरालि०-तेजा०-क०-स्रोरालि० स्रंगो०-वरण०४-त्रमु०४-तस०-णिमि० णि० वं० संखेंज्जभागब्भ०। अस्संठा०-अस्संघ०-दोविहा०-थिरादिखयु० सिया० संखेंज्जभागब्भ० । तिरिक्खाणु० णि० वं०। तं तु०। एवं तिरिक्खाणु०। [ उज्जोव० सिया०। तं तु०। एवं ] उज्जो०।
- २६१. मणुसग० ज॰डि०बं॰ स्रोरालि॰-स्रोरालि०स्रंगो०-वज्जरिस०-मणु-साणु० णि॰ बं० | तं तु० | सेसास्रो पंचिंदियास्रो पसत्थास्रो णियमा बंधिद संखेजजिद्भा० | थिरादितिणिणुयुग० सिया० संखेजजभागब्भ० | एवं मणुसगदि० | २६२. देवगदि० जह०डि०बं० पंचिंदि०-वेउव्वि०-तेजा०-क०-पसत्थडावीसं
- २९०. तिर्यञ्चगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रीदारिक श्रीर, तैजल शरीर, कामंग शरीर, श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघुचतुष्क वसचतुष्क श्रीर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यातयों भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। छह संस्थान, छह संहनन, दो विहायोगित, स्थिर आदि छह युगलका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य संख्यातयों भाग श्रिषक स्थितिका बन्धक होता है। तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है, किन्तु वह जधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे जधन्यकी श्रपेक्षा श्रजघन्य, एक समय श्रिषक लेकर पत्यका श्रसंख्यातयों भाग श्रिषक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वीकी मुख्यता से सिन्वकर्ष जानना चाहिए। उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेक्षा श्रजघन्य, एक समय श्रिषकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातयों भाग श्रिषक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार उद्योतकी मुख्यतासे सन्वकर्ष जानना चाहिए।
- २९१. मनुष्यगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव श्रौदारिक शरीर, श्रौदारिक श्राक्कोपाझ, वर्ज्ञर्थभनाराचसंहनन श्रौर मनुष्यगत्यानुपूर्वी इनका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रज्जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रेपेता श्रज्ञघन्य, एक समय श्रिधकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवों भाग श्रिधक तक स्थितिका बन्धक होता है। शेष पश्चेन्द्रियजाति श्रादि प्रशस्त प्रकृतियोंको नियमसे बाँधता है जो नियमसे श्रज्जघन्य संख्यातवों भाग श्रिधक स्थितिका बन्धक होता है। स्थिर श्रादि तीन युगलका कदाचित् बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रज्जघन्य संख्यातवों भाग श्रिधक स्थितिका बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रज्जघन्य संख्यातवों भाग श्रिधक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार मनुष्यगत्यानु पूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।
- २९२. देवगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, वैकियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर और प्रशस्त अट्ठाईस प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु चह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जधन्यकी अपेना अजधन्य, एक समय

णि० वं० । तं तु० । एवं एदाओं ऐंकमें कॅस्स । तं तु० । चढुजादि० ओघं । णवरि याओं णि० वं० संखे० : """ णिय० वं० तं तु । याओं सिया वं० तं तु० ताओं तथा चे० कादन्वा । पंचसंठा०-पंचसंघ०-अलसत्थ०-दूभग-दुस्सर-अरणादे० णिरयोघं ।

२६४, मणुस॰३ सत्त्रएणं कम्माणं मूलोघं । एवरि मोह-इत्थि०-णुबुंस०-अरदि-सोगाणं याम्रो श्रसंखेँजदिभागब्भहियात्र्यो तात्र्यो संखेँजभागब्भहियात्र्यो । एएरयगदि-णिरयाणु० श्रोघं । तिरिक्ख०-मणुसगदि-श्रोरालिय०-तेजा०-क०-पंचसंठा०-

श्रिकसे लेकर पर्यका श्रसंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इनका परस्पर सिश्वकर्ष जानना चाहिए। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेका श्रजघन्य, एक समय श्रिधिकसे लेकर पत्थका श्रसंख्यातवाँ भाग श्रिक तक स्थितिका बन्धक होता है। चार जातिकी मुख्यतासे सिश्वकर्ष श्रोधके समान है। इतनी विशेषता है कि जिनका नियमसे बन्धक होता है, उनका संख्यातवाँ भाग श्रिक स्थितिका बन्धक होता है। तथा जिनका कदाचित् 'तं तु' रूपसे बन्धक होता है। उनका उसी प्रकार बन्धक होता है। पाँच संस्थान, पाँच संहनन, श्रप्रशस्त विहायोगित, दुर्भग, दुःस्वर श्रीर श्रनादेय इनकी मुख्यतासे सिनकर्ष सामान्य नारिकयोंके समान है।

२६३. श्रस्यर प्रकृतिकी जधन्य स्थितिका बन्धक जीव देवगित, प्रञ्चेन्द्रिय जाति, वैकियिक शरीर, तैजल शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरक्षसंस्थान, वैकियिक श्राङ्गोणाङ्ग, वर्ण्चतुरक, देवगत्यानुपूर्वी, श्रगुरलधुचतुरक, प्रशस्त विहायोगित, श्रसचतुरक, सुभग, सुस्वर, श्रादेय और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजधन्य संख्यातचौँ भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। श्रशुभ श्रीर श्रयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है। श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो जधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जधन्यकी श्रपेणा अजधन्य, एक समय श्रधिकसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातचौँ भाग श्रधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। सुभग श्रीर यशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्थक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजधन्य संख्यातचौँ भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजधन्य संख्यातचौँ भाग श्रधिक स्थितिका भी बन्धक होता है। इसी प्रकार श्रशुभ और श्रवशक्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानमा चाहिए। इतनी विशेषता है कि एकेन्द्रिय श्रीर श्रवशक्तिक समान है।

२९४. मनुष्यत्रिकमें सात कर्मोंका भङ्ग मूलोघके समान है। इतनी विशेषता है कि मोहनीयके स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, अरित श्रौर शोक इनमेंसे जो प्रकृतियों असंख्यातवों भाग अधिक कही हैं उन्हें संख्यातवों माग अधिक जानना चाहिए। नरकगित श्रौर नरकगत्यानुपूर्वीका भङ्ग श्रोघके समान है। तिर्यञ्चगित, मनुष्यगित, श्रौदारिक शरीर, तैजस श्रुरीर, कार्मण

त्रोरालि॰ श्रंगो०-छस्संघ०-वएए०४-दोत्राणु॰-त्रगु०४-त्रादाउउनो०-दोविहा॰-तस थावरादिएावयुगल-अनस०-िएमि० एदाएां एिएयोघं। एवरि नस० श्रोघभंगो काद्व्वो। सव्वासिं देवगदि० न०द्वि०वं० पेचिदि० पसत्थाएां एि० वं० संखेंज्ज-गुण्डभिह्यं०। एवरि वेउव्वि०-वेउव्वि०श्रंगो०-देवाणु० एि० वं०। तं तु०। आहार०-श्राहार०श्रंगो०-तित्थय० सिया वं०। तं तु०। एवं वेउव्वि०-श्राहार०-दोश्रंगो०-देवाणु०-तित्थयरं च। मणुसश्रपजनत्त० तिरिक्खश्रपजनत्तभंगो।

२६५ देवेसु एइंदिय-आदात-थावर० पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्तभंगो । एवं भवणवासि-वाणवेंतर० । जोदिसिय याव णवगेवज्जा त्ति विदियपुढविभंगो । णविर जोदिसिय याव सोधम्मीसाण त्ति एइंदिय-आदाव-थावर देवोघं । सणकुमार याव सहस्सार त्ति. तिरिक्खगदि-तिरिक्खाणु० उज्जो० । उविर मणुसगदि० आणद याव णवगेवज्जा त्ति । आणुदिस याव सब्बद्धा त्ति मणुसग० ज०दि०वं० एवगेवज्ज

शरीर, पाँच संस्थान, श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, वर्णचतुष्क, दो श्रानुपूर्वी, श्रगुरु-लघुचतुष्क, त्रातप, उद्योत, दो विहायोगति, त्रस-स्थावर त्रादि नौ युगल, श्रयशःकीर्ति श्रीर निर्माण इनका सन्निकर्ष सामान्य नारिकयोंके समान है। इतनी विशेषता है कि यशः-कीर्तिका भङ्ग ग्रोधके समान करना चाहिए । उक्त सब मनुष्योंमें देवगृतिकी जघन्य स्थिति का बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति ऋदि प्रशस्त प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे ग्रजधन्य संख्यातगुणी ग्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। इतनी विशेषता है कि वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक ऋक्नोपाङ्ग और देवगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है, किन्तु वह जघन्य स्थितिकाभी बन्धक होता है श्रीर श्रजघन्य स्थितिकाभी बन्धक होता है। यदि अजधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जधन्यकी अपेन्ना अजधन्य, एक समय त्र्राधिकसे लेकर पर्वयका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। स्राहा-रक शरीर, ऋहारक आङ्गोपाङ्ग श्रौर तीर्थंङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रज्ञघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रज्जघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी ऋषेत्रा अजघन्य, एक समय ऋधिकसे लेकर पर्यका असंख्यातवाँ भाग ऋधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार वैकियिक शरीर, आहारक शरीर, दो श्राङ्गोपाङ्ग, देवगत्यानुपूर्वी और तीर्थङ्कर प्रकृतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। मनुष्य अपर्याप्तकोंका भङ्ग तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान है।

२९४. देवोंमें एकेन्द्रिय जाति, श्रातप श्रीर स्थावर इनका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च श्रपर्यातकोंके समान है। तथा शेष प्रकृतियोंका भङ्ग पहली पृथ्वीके समान है। इसी प्रकार भवनवासी श्रीर व्यन्तर देवोंके जानना चाहिए। ज्योतिषियोंसे लेकर नौ श्रीवेयक तकके देवोंका भङ्ग दूसरी पृथ्वीके समान है। इतनी विशेषता है कि ज्योतिषियोंसे लेकर सौधर्म श्रीर पेशान कल्पतकके देवोंमें एकेन्द्रिय जाति, श्रातप श्रीर स्थावर इन तीन प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है। सानकुत्मार कल्पसे लेकर सहस्रार कल्प तक तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी श्रीर उद्योतका सन्तिकर्ष जानना चाहिए। श्रागे श्रानत कल्पसे लेकर नव श्रीवेयक तक मनुष्यगतिकी श्रपेका सन्तिकर्ष जानना चाहिए। श्रानेत श्रनुदिशसे लेकर

पढमदंडत्रो, ऋथिरादि विदियदंडत्रो य ।

२६६ सञ्वएइंदियाणं तिरिक्ष्लोघं । सञ्वविगत्तिदियाणं पंचिंदियतिरिक्ख-अपज्जत्तभंगो । पंचिंदिय-पंचिंदियपज्जत्त० सत्तरणणं कम्माणं मणुसोघं । णामपग-दीणं पंचिंदियतिरिक्खभंगो । आहार०-आहार०आंगो०-जस०-तित्थय० मूलोघं ।

२६७, पुढवि०-ऋाउ०-वराष्फिदिपत्तेय० पडजत्तापडजत्ता शियोदजीवा बादर-सुहुम-पडजत्तापज्जत्ता मणुसऋपज्जत्तभंगो काद्व्यो । स्वादि ऋसंखेडजदिभागब्भ-हियं० । तेउ०-वाउ०-वादरसुहुम-पडजत्तापडजत्त० सो चेव भंगो । स्वादि सव्वासं तिरिक्खधुविगासं कादव्यं ।

२६≈ तस-तसपज्जना सत्तएएं कम्माएं मणुसोधं। **णामस्स वेउव्वियद्य०-**स्राह्मरदुग-जसगि०-तित्थय० मूलोघं। सेसाएं वेइंदियपज्जनभंगो।

२६६ पंचमण०-तिरिणवचि० णाणावर० वेदणी० आयु० गोद० अंतराइगं च ओघं । णिदाणिदाए ज०डि०बं० पचलापचला-थीणगिद्धि० णि० बं० । तं तु० ।

सर्वार्थिसिद्धि तकके देवोंमें मनुष्यगतिकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवके नौ प्रैवेयकका प्रथम दण्डक ग्रीर ग्रस्थिर ग्रादिका दुसरा दण्डक जानना चाहिए।

२९६. सब एकेन्द्रिय जीवोंमें सामान्य तिर्यञ्चोंके समान भक्त जानना चाहिए। सब विकलेन्द्रियोंमें पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान भक्त जानना चाहिए। पञ्चेन्द्रिय और पञ्चेन्द्रिय पर्याप्त जीवोंमें सात कर्मोंका भक्त सामान्य मनुष्योंके समान है। नामकर्मकी प्रकृतियोंका भक्त पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान है। आहारक शरीर, श्राहारक आक्रोपाक्त, यशः कीर्ति और तीर्थङ्कर प्रकृतिका भक्त मुलोघके समान है।

२९७. पृथ्वीकायिक, जलकायिक और चनस्पतिकायिक प्रत्येक तथा इनके पर्याप्त और अपर्याप्त तथा निगोद जीव और इनके बादर और सूक्ष्म तथा पर्याप्त और अपर्याप्त जीवोंका भक्त मनुष्य अपर्याप्तकोंके समान करना चाहिए। इतनी विशेषता है कि असंख्यानवाँ भाग अधिक जानना चाहिए। अभिनकायिक और वायुकायिक तथा बादर और सूक्ष्म तथा इनके पर्याप्त और अपर्याप्त जीवोंके वही भक्त कहना चाहिए। इतनी विशेषता है कि सबके तिर्यञ्च खुवबन्थवाली प्रकृतियोंका कहना चाहिए।

२६८. त्रस त्रीर त्रस पर्याप्त जीवोंमें सात कमींका भङ्ग सामान्य मनुष्योंके समान है। न।मकर्मकी वैकियिक छह, ब्राहारकद्विक, यशःकीर्ति ब्रीर तीर्थङ्कर प्रकृतियोंका भङ्ग मूलोघके समान है। तथा शेप प्रकृतियोंका भङ्ग द्वीन्द्रिय पर्याप्त जीवोंके समान है।

२९९. पाँच मनोयोगी और तीन वचनयोगी जीवोंमें ज्ञानावरण, वेदनीय, श्रायु, गोत्र श्रीर अन्तरायकी प्रकृतियोंका भङ्ग श्रोधके समान है। निद्रा निद्राकी जधन्य स्थितिका वन्धक जीव प्रचलाप्रचला श्रीर स्त्यानगृद्धिका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जधन्यकी अपेत्रा अजधन्य, एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका असंख्यातयाँ भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। निद्रा और प्रचलाका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे अजधन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका

सिदा-पचला॰ सिय॰ वं० संखेंऽजगुरण० । चदुदंस० सि० वं० ऋसंखेंऽजगु॰ । एवं थीर्णगिद्धि॰३ ।

३०० शिहाए ज॰िंडिवं० पचला शिय० बं० | तं तु०। चदुदंस० शि० बं॰ असंखेंज्जगु० | एवं पचला० | चदुदंस० श्रोघं ।

३०१, भिच्छ० ज०हि॰बं० अर्णाताणुवंधि०४ णि॰ बं॰ । तं तु०। अहकसा०-इस्स॰-रदि-भय-दुगुं० णि० बं० संखेंजनगु०। चदुसंज॰-पुरिस० णि० बं० असंखें-जनगु०। एवं अर्णाताणुवंधि०४।

३०२, श्रपच्चक्खाणकोघ॰ ज॰िट०बं॰ तिष्णिकसा॰ णि॰ बं॰ । तं तु॰ । पच्चक्खाणा॰४-हस्स-रिद-भय-दुगुं० णि० बं० संखेंज्जगु॰ । चदुसंज०-पुरिस॰ णि० बं॰ असंखेंज्जगु० । एवं तिष्णिक० ।

बन्धक होता है। चार दर्शनावरणका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य श्रसंख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसो प्रकार स्त्यानगृद्धि तीनकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३००. निद्राकी जधन्य स्थितिका बन्धक जीव प्रचलका नियमसे बन्धक होता है, किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजधन्य स्थितिका चन्धक होता है तो नियमसे जधन्यकी अपेक्षा अजधन्य, एक समय अधिक से लेकर पत्यका असंख्यातयों भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। चार दर्शनावरणका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजधन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार प्रचला प्रकृतिकी मुख्यता से सन्निकर्ष जानमा चाहिए। चार दर्शनावरणकी मुख्यतासे सन्तिकर्ष ओधके समान है।

३०१. मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव अनन्तानुबन्धी चतुष्कका नियमसे बन्धक होता है, किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका वन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेता अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पख्यका असंख्यातयाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। आठ कषाय, हास्य, रित, भय और जुगुष्साका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। चार संज्वलन और पुरुषवेदका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार अनन्तानुबन्धी-चारकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३०२. श्रप्रत्याख्यानावरण क्रोधकी जधन्य स्थितिका बन्धक जीव तीन कषायका नियमसे बन्धक होता है, किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रज्जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रणेता अजघन्य, एक समय श्रिधिकसे हेकर पत्यका श्रसंख्यातवीं भाग श्रिधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। प्रत्याख्यानावरण चार, हास्य, रित, भय श्रीर जुगुप्सा इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी श्रिधक स्थितिका बन्धक होता है। चार संज्वलन श्रीर पुरुषवेदका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य श्रसंख्यातगुणी श्रिधक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार तीन कथायोंकी मुख्यतासे सन्तिकर्ष जानना चाहिए।

३०३. पच्चक्खाणा॰कोघ॰ ज॰िट॰बं० तिरिणकसा० सि॰ बं० । तं तु० । चदुसंज०-पुरिस॰ सि॰ वं० असंखेंज्जगु॰ । हस्स-रिद-भय-दुगुं० सि० बं॰ संखेंज्जगु॰ । एवं तिरिणकसा० । चदुसंजल०-पुरिस० स्रोघं ।

३०४, इत्थिवे० ज०िंडवं० मिच्छ०-बारसक०-भय-दुगुं० ग्रि० बं० संस्वे-उजगु०। हस्स-रिद-अरिद-सोग० सिया० संस्वेज्जगु०। चदुसंज० ग्रि०बं० असं-खेंज्ज०। एवं ग्रावुंस०।

३०५, हस्स० ज०हि०बं० चदुसंज०-पुरिस० णि० वं० असंखेर्जेजगु०। रदि-भय-दुगुं० णि० बं०। तं तु०। एवं रदि-भय-दुगुं०।

३०६, अरदि० ज॰डि०बं० चदुसंज॰-पुरिस॰ णि॰बं॰ असंखेर्जनगु॰ । भय-दुगुं॰ णि० बं० संखेर्जनगु० । सोग० णि० । तं तु॰ । एवं सोग॰ ।

३०३. प्रत्याख्यानावरण कोधकी जधन्य स्थितिका बन्धक जीव तीन कषायका नियमसे बन्धक होता है, किन्तु वह जधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजधन्य स्थितिका
भी बन्धक होता है। यदि अजधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जधन्यको अपेका
अजधन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका
बन्धक होता है। चार संज्वलन और पुरुषवेदका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे
अजधन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। हास्य, रित, भय और जुगुप्साका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजधन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक
होता है। इसी प्रकार तीन कथायोंकी मुख्यतासे सन्तिकर्ष जासना चाहिए। चार
संज्वलन और पुरुषवेदकी मुख्यतासे सन्तिकर्ष आधिक समान है।

३०४. स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव मिथ्यात्व, बारह कषाय, भय श्रीर जुगुप्साका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। हास्य, रित, अरित श्रीर शोकका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। चार संज्वलनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य श्रसंख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार नपुंसक वेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३०४. हास्यकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव चार संज्यलन श्रौर पुरुषवेदका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य श्रसंख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। रित, भय श्रौर जुगुण्साका नियमसे बन्धक होता है, किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जधन्यको श्रपेचा श्रजघन्य, एक समय श्रधिकसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातची भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है।

३०६. अरितकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव चार संज्वलन और पुरुषवेदका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। भय और जुगुष्साका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। शोकका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य

३०८. तिरिक्स्तगिद् ज०द्वि०वं॰ पंचिद्दि०-श्रोरालि॰-तेजा॰-क०-समचदु०-श्रोरालि॰श्रंगो०-वज्जरिस०-वएए० ४--श्रगु०४-पसत्थ०--तस०४-थिराद्दिपंच-िएमि० णि०वं० संखेज्जगु० । तिरिक्खाणु० णि०वं०। तंतु०। उज्जो० सिया०। तं० तु०। जस० णि॰ वं० श्रसंखेजगु०। एवं तिरिक्खाणु० । एवं तिरिक्खोघं उज्जो०।

स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेत्ता अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पत्यका असंख्यातयाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार शोक की मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३०७. नरकगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चिन्द्रिय जाति, वैकियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वैकियिक आङ्गोपाङ, वर्णचतुन्क, अगुरुलघुचतुन्क, त्रसचतुन्क, अस्थर, अशुभ, अयशःकीर्ति और निर्माणं इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका वन्धक होता है। हुएडसंस्थान, असंप्राप्तास्पाटिका संहनन, दुर्भग, दुस्वर और अनादेय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यात्वाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। नरकगत्यानुपूर्वोका नियमसे बन्धक होता है, किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेता अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार नरकगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३०८. तिर्यञ्चगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शारीर, तैजस शरीर, कार्मख शरीर, समचतुरस्नसंस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वज्जर्षभनाराब-संहनन, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, स्थिर श्रादि पाँच श्रौर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुली श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वोका नियमसे बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है जो नियम से जघन्यकी श्रपेचा अजघन्य, एक समय श्रधिकसे लेकर पर्यका श्रसंख्यातचाँ भाग श्रधिक तक स्थितिका वन्धक होता है। उद्योतका कदा-चित् बन्धक होता है श्रौर अजघन्य स्थितिका वन्धक होता है। उद्योतका कदा-चित् बन्धक होता है श्रौर अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजन्य स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेचा श्रजघन्य, एक समय श्रधिकसे लेकर पर्यका श्रसंख्यातचाँ भाग श्रधिक तक स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रज-घन्य स्थितिका बन्धक होता है। यदि श्रजन्य स्थितिका बन्धक होता है। यश्रकोतिका वन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेचा श्रजघन्य, एक समय श्रधिकसे लेकर पर्यका श्रसंख्यातचाँ भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। यश्रकोतिका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रज्ञघन्य असंख्यातगुली श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। रश्रकोतिका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रज्ञघन्य असंख्यातगुली श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। तथा इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्जके समान उद्योतकी मुख्यतासे सन्धिकर्ष जानना चाहिए। तथा इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्जके समान उद्योतकी मुख्यतासे सन्धिकर्ष जानना चाहिए।

१. मूलप्रतौ तिरिक्खायु० खियमा उज्जो सिया एवं इति पाठः ।

- ३०६. मणुसग० ज०द्वि०वं० श्रोराति॰-श्रोराति॰श्रंगो॰--वज्जरि०-मणु-साणु० णि० वं० । तं तु० । सेसाश्रो पसत्थाश्रो णि० वं० संखेंज्जगु० । जसगि० णि० वं० श्रसंखेंज्जगु० । तित्थय० सिया० संखेंज्जगु० । एवं श्रोरात्ति०-श्रोराति० श्रंगो०-वज्जरि॰-मणुसाणु० ।
- ३१०. देवगदि० ज॰ द्वि०वं पंचिदि०पसत्थपगदीओ स्मि० वं। तंतु०। आहारदुग-तित्थय० सिया०। तंतु०। जसगि०-स्मि० वं० असंखेंज्जगुणुब्भ०। एवमेदाश्रो ऍकमेर्कस्स । तंतु०।
- ३११. एइंदि० ज॰टि०बं० तिरिक्तगदि--स्रोरात्ति०-तेजा०-क०-वरारा०४-तिरिक्ताणु०-स्रगु०४-वादर--पज्जत्त-पत्ते०--शिमि० शि० बं० संखेंक्जगु० । हुंड०-
- ३०६ मनुष्यगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव श्रौदारिक शरीर, श्रौदारिक श्राहोपाङ्ग, वर्ज्ञर्थभनाराचसंहनन श्रौर मनुष्यगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रज्ञघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रज्ञघन्य स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेचा श्रज्ञघन्य एक समय श्रिधकसे लेकर पत्थका श्रसंख्यातवीं भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। श्रेष प्रशस्त प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रज्ञघन्य संख्यातगुणी श्रिधक स्थितिका वन्धक होता है। यश्रकोतिका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे श्रज्ञघन्य श्रसंख्यातगुणी श्रिधक स्थितिका बन्धक होता है। तिर्थक्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है। तिर्थक्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रज्ञघन्य संख्यातगुणी श्रिधक स्थितिका बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रज्ञधन्य संख्यातगुणी श्रिधक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार श्रौदारिक शरीर, श्रौदारिक श्राहोणक, वर्ज्ञ्यभनाराचसंहनन श्रौर मनुष्यगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।
- २१०. देवगितकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पश्चेन्द्रिय जाति श्चादि प्रशस्त प्रश्नतियोंका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे
  जघन्यकी अपेचा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पृथ्यका असंख्यातवाँ भाग श्रीधिक
  तक स्थितिका बन्धक होता है। श्राहारकिहक श्रीर तीर्थंकरका कराचित् बन्धक होता है
  और कराचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक
  होता है और अजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक
  होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेचा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पृथ्यका असंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। यशकीर्तिका नियमसे बन्धक होता
  है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसो प्रकार
  हन सबका परस्पर सन्तिकर्ष होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और
  अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है और
  अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियम
  से जघन्यकी अपेचा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर प्लयका असंख्यातवाँ भाग अधिक
  तक स्थितिका बन्धक होता है।
- ३११. पकेन्द्रिय जातिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव तिर्यञ्चगति श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यातुपूर्वी, श्रगुरुलघुचतुष्क, बादर, पर्याप्त

द्भग-श्रणादे॰ णि॰ वं॰ संखेंज्जभागब्भ० । श्रादाव० सिया०। तं तु० । उज्जो०-थिराथिर-सुहासुह-श्रजस० सिया० संखेंज्जगु० । जस० सिया० श्रसंखेंज्जगु० । थावर० णि० वं० । तं तु० । एवं श्रादाव-थावरं ।

३१२. बीइंदि० ज॰ द्वि॰ बं॰ तिरिक्खग॰-श्रोरात्ति०-तेजा०-क॰-श्रोरात्ति० श्रंगो॰-वरण्ण०४-तिरिक्खाणु०-श्रगु०४--तस॰४--िएमि० णि० वं॰ संखेंज्जगु०। हुंडसं॰--श्रसंपत्त०-श्रप्पसत्थ॰-दूभग-दुस्सर-श्रणादें णि॰ वं॰ संखेंज्जदिभाग॰। उज्जो०-थिराथिर-सुभासुभ-श्रजस० सिया॰ संखेंज्जगु०। जस॰ सिया० श्रसंखेंज्जगु०। एवं तीइंदि०-चतुरिं०।

मत्येक श्रौर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे श्रज्ञधन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। हुएड संस्थान, दुर्भग श्रीर श्रनादेयका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजधन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। आतपका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो ज्ञघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अज्ञघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो ब्रियमसे जघन्यकी श्रपेचा श्रजघन्य एक समय **श्रधिकसे लेकर प**रुवका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। उद्योत, स्थिर, अस्थिर, श्रुभ, श्रश्चभ श्रीर श्रयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदा-चितु श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजधन्य संख्यातगुर्खा श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। यशःकीर्तिका कदाचित बन्धक होता है श्रीर कदाचित अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रज्ञधन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। स्थावरका नियमसे बन्धक होता है, किन्त वह जघन्य स्थिति का भी बन्धक होता है श्रौर श्रज्ञघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रज्ञघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी ऋपेन्ना अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पत्यका त्रसंख्यातवाँ भाग त्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसीप्रकार त्रातप श्रौर स्थावर प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३१२. द्वीन्द्रियजातिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव तिर्यञ्चगति, श्रीदारिक शरीर, तैजस शरीर, कामणशरीर, श्रीदारिक श्राक्षोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रामुक्लघु-चतुष्क, त्रसचतुष्क और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जी नियमसे श्रजघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। हुण्ड संस्थान, श्रसम्प्राप्त।स्पाटिका संहनन, श्रप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग, दुःस्वर श्रीर श्रत्वादेय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यातवाँ भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। उद्योत, स्थिर, श्रस्थर, श्रुभ, श्रग्रुभ श्रीर श्रयशःकार्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है। उद्योत, कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। यशःकार्तिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् श्रवन्धक होता है। यशःकार्तिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् श्रवन्धक होता है। इसी प्रकार त्रीन्द्रिय श्रीर चतुरिन्द्रिय जातिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जामना चाहिए।

३१३. एग्मोद०ज०ड्ठि॰बं॰ पंचिदि०-श्रोराति॰-तेजा॰-क॰-श्रोराति॰श्रंगो०-वएए।०४-श्रगु०४-पसत्थ॰-तस०४-सुभग-सुस्सर-श्रादेँ०-िएमि॰ एि॰ बं॰ संखें ज्ञ-गुण्डभिद्यं। तिरिक्खगदि-मणुसगदि-वज्जिरस०-दोश्राणु०-उज्जो०थिराथिर-सुभा-सुभ-श्रजस० सिया॰ संखें ज्ञगु०। जस० सिया० श्रसंखें ज्ञगु०। वज्जणारा० सिया॰ तंतु०। एवं वज्जणारायएं। एवं चेव सादिय०। एवरि णारायण्० सिया॰ तंतु०। वज्जणारा० सिया॰ संखें ज्ञभाग०। एवं णारा०।

३१४. खुज्जसं॰ ज॰डि॰बं॰ खुग्गोद॰भंगो। एवरि वज्जणारा० संखेंज्जभाग॰। ऋदणारा० सिया॰। तं तु०। एवं श्रद्धणारा०। एवं चेव

३१३. न्यग्रोधपरिमण्डल संस्थानको जद्यन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रीदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विद्वायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, त्रादेय श्रीर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे ग्रजधन्य संख्यातगुणी ग्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। तिर्यञ्च-गति, मनुष्यगति, वजुर्षभनाराच संहनन, दो श्रानुपूर्वी, उद्योत, स्थिर, श्रस्थिर, शुभ, श्रद्धुभ श्रीर श्रयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजधन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। यशः-कीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रज्ञघन्य श्रसंख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है । वज्रनाराच संहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेता श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे बेकर परयका श्रसंख्यातवा भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार वज्रनाराच संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। तथा इसी प्रकार स्वाति संस्थानको मुख्यतासे भी सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि नाराच संहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् ऋबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता यदि अजधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जधन्यकी अपेचा अजधन्य, एक समय ऋघिकसे लेकर पत्यका ऋसंख्यातवाँ भाग ऋघिक तक स्थितिका बन्धक होता है । वजुनाराच संहननका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजधन्य संख्यातवाँ भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार श्रर्द्धनाराच संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३१४. कुष्त्रक संस्थानकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवका भङ्ग न्यग्रोध परिमण्डल संस्थानके समान है। इतनी विदोषता है कि वज्रनाराच संहननका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रवधन्य संख्यातवाँ भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। श्रधनाराच संहननका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रवचन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रवधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रवधन्य स्थितिका बन्धक होता है। द्वी श्रवधक्ते स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार श्रवीनाराच संहननकी मुख्यतासे सन्तिकर्प जानना चाहिए। तथा इसी प्रकार वामन

वामणसंठा । णवरि वज्जणारा । णाराय ० - श्रद्धणाराय ० सिया ० वं ० संखें जज-भाग ० । खीलिय ० सिया ० वं ० । तं तु ० । एवं खीलिय ० । हुं ७० ज ० डि० वं ० णगोदभंगो । णवरि चदुसंघ ० सिया ० वं ० संखें जजभाग ० । असंपत्त ० सिया ० । तं तु ० । जस ० सिया ० असंखें जज्ज ० । एवं असंपत्त ० ।

३१५. ऋष्पसत्थ० ज०हि०वं० पंचिदि०-छोरालि०-तेजा०--क०--छोरालि० ऋंगो०-वएण०४-अगु०४-तस०४-िएमि० एि० वं० संखेळागु०। तिरिक्खगदि-मणुसगदि०-समचदु०-वज्जरिस०-दोश्राणु०-उज्जो०-थिरादि०४-सुभग-सुस्सर--श्रादे० अजस० सिया० संखेळजगु०। पंचसंठा०-पंचसंघ० सिया० संखेळाभा०। दूभग-

संस्थानकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विद्येषता है कि वजुनाराच संहमन, नाराच संहमन श्रीर श्रर्ध माराच संहमनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदा-चित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अज्ञचन्य संख्यातमाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। कीलक संहतनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेचा श्रजघन्य,एक समय श्रधिकसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार कीलकसंहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । हुण्ड संस्थानकी जधन्य स्थितिके धन्धक जीवका सन्निकर्ष न्यग्रीध परिमण्डल संस्थानके समान है। इतनी विशेषता है कि चार संहननका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजधन्य संख्यातवाँ भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। श्रसम्प्राप्तास्रुपाटिका संहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो ज्ञचन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। श्रीर श्रज्जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेचा श्रजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। यशः-कीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है श्रोर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रज्ञघन्य श्रसंख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार श्रसम्प्राप्तासूपाटिका संहननको मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३१४. अप्रशस्त विहायोगितकी जधन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रीदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, असचतुष्क श्रौर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजधन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। तिर्यञ्चगित, मनुष्यगित, समचतुरस्र संस्थान, वज्ञर्षभनाराच संहनन, दो श्रानुपूर्वी, उद्योत, स्थिर श्रादि चार, सुभग, सुस्वर, श्रादेय श्रीर श्रयशकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजधन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। पाँच संस्थान श्रीर पाँच संहननका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजधन्य संख्यातवाँ भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजधन्य संख्यातवाँ भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजधन्य संख्यातवाँ भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। इर्मग, दुःस्वर श्रीर श्रनादेय इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित्

दुस्तर-श्रणादें सिया । तं तु ०। जस ० सिया ० श्रसंखें जगु ०। एवं दूभग-दुस्तर-श्रणादें ।

३१६. सुहुम॰ ज॰ द्वि०वं० तिरिक्त्वगदि-स्रोरालि०-तेजा॰-क॰-वएण्०४-तिरिक्त्वाणु०-त्रगु०४-पज्जत्त-पत्ते॰-अजस०-णिमि० णि॰ वं० संत्वेज्जगु॰। एइंदि०-हुंड०-थावर-दूभग-त्रणादे॰ णि० वं० संत्वेज्जभा०। थिराथिर-सुभासुभ० सिया॰ संत्वेज्जगु॰। एवं साधारणं।

३१७. अपज्जत्त० ज०डि०वं० पंचिदि० -- स्त्रोरात्ति०--तेजा०-क०--स्रोराति० श्रंगो०-वएण०४-त्रगु०-उप०-तस-बाद्र-पत्ने०-अथिर-असुभ-अजस०-िएमि० एि० वं० संखेंज्जगु० | दोगदि-दोश्राणु० सिया० संखेंज्जगु० | हुंड०-श्रसंपत्त०-दूभग-अर्णादे० णि० वं० संखेंज्जदिभाग० ।

श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजधन्य स्थितिका यन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेत्ता श्रजधन्य, एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। यशःकीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदा-चित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होताहै तो नियमसे अजधन्य श्रसंख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार दुर्भग, दुःस्वर श्रौर श्रनादेयकी मुख्यतासे सिक्षकर्ष जानना चाहिए।

३१६. स्क्ष्मकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव तिर्यञ्चगति, श्रौदारिक श्ररीर, तैजस श्ररीर, कार्मश्ररीर. वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघुचतुष्क, पर्याप्त, प्रत्येक, श्रयशःकीर्ति श्रौर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजधन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। एकेन्द्रिय जाति, हुएड संस्थान, स्थावर, दुर्भग श्रौर श्रनादेय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजधन्य संख्यातमाँ माग श्रिधक स्थितिका बन्धक होता है। स्थिर, अस्थिर, श्रुभ श्रौर श्रशुभ इनका कदाचित् बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजधन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजधन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार साधारण प्रकृतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३१७. ऋषयांप्तकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रियज्ञाति,श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघु, उपघात, त्रस, वादर, प्रत्येक, श्रस्थिर, श्रगुभ, अयशःकीर्ति श्रौर निर्माण इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियम से श्रज्ञघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। दीगित श्रौर दो श्रानुपूर्वीका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रज्ञघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। हुएडसंस्थान, श्रसम्प्राप्तासपाटिका संहनन, दुर्भग श्रौर अनादेय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अज्ञघन्य संख्यातवाँ भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है।

मुखप्रती पंचिंदि तेजाक० श्रीराजि० इति पाठः ।

- ३१८. अथर० ज०हि०बं० देवगदि-पंचिदि०-वेउव्वि०-तेजा०--क०-समचदु०-वेउव्वि० अंगो०-वएण्०४-देवाणु०-अगु०४--पसत्थवि०--तस०४-सुभग--सुस्सर-आदे०-णिमि० णि० वं० संखेज्ज० । सुभ-तित्थय० सिया० संखेज्जगु० । असुभ-अजस० सिया० । तं तु० । जस० सिया० असंखेज्जगु०। एसि जसगित्ती भणिदा तेसि असंखेज्जगुणं काद्व्वं । एवं असुभ-अजसगित्ती ।
- ३१६. विचिजोगि-असचमोसविच्जोगीस तसपज्जत्तभंगो । कायजोगि-ओरालि यकायजोगी । ओषं । ओरालियमिस्से एइंदियभंगो । एवरि देवगदि ज०डि॰बं० पंचिदि - तेजा - क० - समचदु - - वएए ०४ - - अग्रु ०४ - पसत्थिव ॰ - तस०४ - - थिरादि छ० -एमि । ए० संखेजगुए । वेडिव्वि० - वेडिव्वि० अंगो० - देवाणु । एप वे० । तं तु० । तित्थ्य ० सिया ० । तं तु० । एवं वेडिव्वि० - वेडिव्वि० अंगो० देवाणु ० - तित्थ्य ० ।

३१९. वचनयोगी और असत्यमृषावचनयोगी जीवोंमें त्रसपर्यात जीवोंके समान भक्ष है। काययोगी और श्रीदारिक काययोगी जीवोंका भक्ष श्रोधके समान है। श्रीदारिक मिश्रकाययोगी जीवोंका भक्ष एकेन्द्रियोंके समान है। इतनी विशेषता है कि देवगतिकी जधन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रियजाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्तविहायोगिति, त्रसचतुष्क, स्थिर श्रादि छह और निर्माण इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे श्रजधन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। वैकियिक शरीर, वैकियिक श्राङ्गणाक्ष श्रीर देवगत्यानुपूर्वी इनका नियमसे वन्धक होता है। वैकियिक शरीर, वैकियिक श्राङ्गणाक्ष श्रीर देवगत्यानुपूर्वी इनका नियमसे वन्धक होता है, किन्तु वह जधन्य स्थितिका भी वन्धक होता है श्रीर श्रजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे जधन्यकी श्रपेका श्रज्ञधन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग श्रधिक तक स्थिति का वन्धक होता है। तीर्थंकरका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। तीर्थंकरका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। तीर्थंकरका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। तीर्थंकरका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। तीर्थंकरका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। तीर्थंकरका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। तीर्थंकरका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है।

३१८ श्रस्थिरकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव देवगित, पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक श्रारीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्न संस्थान, वैक्रियिक श्राङ्गोणङ्ग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, त्रस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, श्रादेय श्रीर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। श्रुम और तीर्थंकर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है। श्री वन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है। यदि श्रज्यन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका श्रवेखा स्थातवा भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। यश्रकोतिका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्थक होता है। यदि बन्धक होता है। यश्रकोतिका कदाचित् बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य श्रसंख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। जनके यश्रकीर्ति प्रकृति कही है उनके श्रसंख्यातगुणी कहनी चाहिए। इसी प्रकार श्रशुम और श्रयश्रकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

- ३२० वेडिव्यकायजोगी० सत्ताएएं कम्माएं सोधम्मभंगो । तिरिक्लगदि० ज०िद्वि पंचिदि०-श्रोरालि०--तेजा०-क०--समचदु०-श्रोरालि०श्रंगो०--वज्जरि०-वएए०४--श्रगु०४--पसत्थ०--तस०४--धिरादिञ्च०-िएमि० एि। बं० संखेंज्जगु०। तिरिक्लाणु० एि। वं०। तं तु०। उज्जो० सिया०। तं तु०। एवं तिरिक्लाणु०-उज्जो०। मणुसगदी० सोधम्मभंगो। एइंदिय-श्रादाव-थावर० सोधम्मभंगो।
- ३२१. राग्गोद० ज०डि०बं० पंचिंदि०--ग्रोरालि०--तेजा०--क०--ग्रोरालि० श्रंगो०-वराषा०४-ग्राउ०४-पसथ०-तस०४--सुभग--सुस्सर--ग्रादे०-शिमि० खि० बं० संखेडॅबरा० | दोगदि-वजरि०-दोत्राखु०-ज्ज्जो०--थिराथिर-सुभासुभ-जस०-त्रजस०

है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेता अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पत्यका असंख्यातवां भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार वैकियिक शरीर, वैकियिक आङ्गोपाङ्ग, देवगत्यानुपूर्वी और तीर्थंकर प्रहातिकी मुख्यतासे सन्तिकर्ष जानना चाहिए।

२२०. वैक्रियिक काययोगी जीवोंमें सात कर्मोंका भड़ सौधर्म करपके समान है। तिर्यञ्चगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रीदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, स्रौदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराचसंहनन, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्तविहायोगति, असचतुष्क, स्थिर ग्रादि छह श्रौर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे ग्रजधन्य संख्यातगुणी ग्रधिक स्थिति का बन्धक होता है। तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है ग्रीर श्रजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रापेक्षा श्रजधन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका ऋसंख्यातवाँ भाग ऋघिक तक स्थितिका बन्धक होता है। उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और श्रजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जधन्यकी श्रपेता श्रजधन्य एक समय अधिकसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी श्रीर उद्योतको मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। मनुष्य गतिका भड़ सौधर्म करुपके समान है। एकेन्द्रिय जाति, श्रातप श्रीर स्थावर इनकी श्रपेत्ता सन्निकर्ष सौधर्म कल्पके समाम है।

३२१. न्यग्रोधपरिमण्डल संस्थानकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रीदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, श्रमु ह लघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगिति, अस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, श्रादेय श्रीर निर्माण इनका नियम से बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यातगुणी श्रीधक स्थितिका बन्धक होता है। दोगिति, वज्रवंभनाराचसंहनन, दो त्रानुपूर्वी, उद्योत, स्थिर, श्रस्थिर, श्रभ, त्रश्रभ, यशःकीर्ति श्रीर त्रयशःकीर्ति इनका कदाचित् वन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य संख्यातगुणी श्रीधक स्थितिका बन्धक होता है। यदि बन्धक

सिया॰ संखें जगु॰ । वज्जणारा॰ सिया॰ । तं तु॰ । [ एवं ] वज्जणा॰ । एवं चेव सादिय॰ । सावरि सारायण॰ सिया॰ । तं तु॰ । वज्जणारा॰ सिया॰ संखें जान्माग्वभ० । एवं सारा॰ । खुज्ज॰ ज॰ हि॰ वं॰ सारागेदमंगो । सावरि वज्जणारा॰ सिया॰ संखें जामाग्वभ० । अद्धर्णारा॰ सिया॰ । तं तु॰ । एवं अद्धर्णारा॰ । वामसा॰ ज॰ हि॰ वं॰ सम्मोदमंगो । सावरि स्वीलिय॰ सिया॰ । तं तु॰ । एवं स्वीलिय॰ । सेसासं सोधम्ममंगो । एवं वेउ व्वियमिस्से । सावरि तिरिक्खगदि-तिरिक्खासु॰-उज्जोव॰ सिया॰ संखें जामा॰ ।

होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रज्ञधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमको जधन्यकी श्रपेना श्रजधन्य,एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। प्रकार बज्जनाराचसंहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। तथा इसी प्रकार स्वाति संस्थानकी मुख्यतासे भी सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि नाराचसंहननका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेत्ता श्रजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पत्यका असंख्यातयाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। वज्ञाराच संहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है।यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजधन्य संख्यातचाँ भाग अधिक स्थितिक। बन्ध होता है। इसीप्रकार नाराच संइनमकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। कुन्जकसंस्थानकी जधन्य स्थितिके बन्धक जीवकी मुख्यतासे सन्निकर्षं न्यत्रोधगरिमग्डल संस्थानके समान है। इतनी विशेषता है कि वज्रनाराचसंहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजधन्य संख्यातवां भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है । ऋर्धनाराच संहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियम से जघन्यकी अपेद्या अजघन्य एक समय अघिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवां भाग ग्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसीप्रकार ग्रर्धनाराच संइननकी मुख्यतासे सन्निकर्षं जानना चाहिए । चामन संस्थानकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवकी मुख्यतासे सन्निकर्प न्ययोधपरिमएडल संस्थानके समान है। इतनी विशेषता है कि कीलक संहननका कदाचित बन्धक होता है स्त्रौर कदाचित श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रज्ञधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेत्ता श्रजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पत्यका असंख्यातवों भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार कीलक संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। शेष कर्मोंका भक्न सीधर्म कल्पके समान है । इसो प्रकार वैक्रियिक मिश्रकाययोगी जीवोंके जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी श्रीर उद्योत इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे अजधन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है।

- ३२२. त्राहार०--त्राहारिमस्स० सव्बद्धभंगो एगम वजा । एग्विर देवगिद् । जिल्हें पंचिदि । वेउव्विष् - तेजा । - क्ष्मचदु ० - वेउव्विष् त्रंगो ० - व्यापा ०४ देवाणु ० त्राप् ०४ प्रस्थ ० त्राप् ० त्राप् ० त्राप् ० त्राप् ० त्राप् ० त्राप् ० त्राप्य ० त्र
- ३२३. त्रथिर॰ ज॰डि॰वं॰ सुभ--जसिंगि--तित्थय॰ सिया॰ संखेंज्जभा-गब्भ॰। त्रसुभ--त्रजस० सिया॰ वं॰।तं तु०। सेसं शि॰ वं॰ संखेज्जभागब्भ-द्वियं०। एवं त्रसुभ-त्रजस०।
  - ३२४. कम्मइगका० स्रोरालियमिस्सभंगो । एवरि तित्थय० ज०हि०वं० मणु-
- ३२२. ऋहारक काययोगी और ब्राहारकमिश्रकाययोगी जीवोंका मङ्ग सर्वार्थसिद्धि के समान है। किन्तु नामकर्मकी प्रकृतियोंको छोड़कर यह कथन करना चाहिए। इतनी विशेषता है कि देवगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वैक्रियिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, देव-गत्यानुपूर्वी, श्रमुरुलघु चतुष्क, प्रशस्तविहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर श्रादि छह श्रीर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है, किन्तु वह जबन्य स्थितिका भी बन्धक होता है भीर अजघन्य स्थितिका मी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी ऋषेत्वा श्रजघन्य, एक समय ऋधिकसे लेकर पत्यका ऋसंख्यातवों भाग श्रिधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। तीर्थंकर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे जघन्यको ऋषेज्ञा अजधन्य,एक समय ऋधिकसे लेकर प्रत्यका ऋसंख्यातचेँ भाग श्रिघिकतक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार इनका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए । किन्तु ऐसी अवस्थामें वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी ऋषेचा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पत्यका ऋसंख्यातवीं भाग ऋधिक तक स्थितिका बन्धक होता है।
- ३२३. श्रस्थिर प्रकृतिकी जघन्य स्थितिका चन्धक जीव शुभ, यशःकीर्त और तीर्थंकर इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रज्ञघन्य संख्यातवों भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। श्रशुभ और श्रयशःकीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रज्जधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेत्ता श्रज्जघन्य, एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवों भाग श्रधिक तक स्थितिका चन्धक होता है। शेष प्रकृतियोंका नियमसे चन्धक होता है। शेष प्रकृतियोंका नियमसे चन्धक होता है जो नियमसे श्रज्ञघन्य संख्यातवों भाग श्रधिक स्थितिका चन्धक होता है। इसी प्रकार श्रशुभ और श्रयशःकीर्ति की मुख्यता से सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३२४ कार्मण काययोगी जीवोंमें भङ्ग स्रोदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि तीर्थंकर प्रकृतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव मनुष्य गतिका कदाचित् बन्धक होता है स्रोर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो सगदि० सिया॰ संखेंज्जगु०। देवगदि० ४ सिया०। तं तु०।

३२५. इत्थिवे०-पुरिसवेदेसु सत्तरणं कम्माणं पंचिदियभंगो । सावरि कोध-संज॰ ज॰हि०बं॰ तिरिणसंज॰ सि० बं॰ सि॰ जहरूसा॰। एवं तिरिससंजल-पार्सा।

३२६. एवुंसमे मोहणी० इत्थिवेदभंगो। सेसं श्रोघं। श्रवगदवेदे श्रोघं। कोषादि०४ श्रोघं। एवरि विसेसो, कोषे कोषसंज० [ज॰हि॰बं०] तिणिएसंज० णि॰ वं० णि० जहएणा०। एवं तिणिएसंजलणाणं। माणे माणसंज० ज०हि॰वं० दोएणं संजल० णि० वं० णि॰ जहएणा०। एवं दोएणं संजलणाणं। मायाए माया-संज० ज०हि०वं लोभसंज० णि॰ वं० णि० जहएणा०। एवं लोभसंजल०। लोभे श्रोघं चेव।

३२७. मदि०-सुद० तिरिक्खोधं । विभंगे सत्तराएं कम्माएं खिरयोधं। खिरयग० ज०हि०बं० पंचिदि०-वेउव्वि०-तेजा०-क०-वेउव्वि०्झंगो०-वएख०४-ऋगु०४-तस०४-

नियमसे श्रज्ञघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। देवगित चतुष्कका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कद्राखित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो ज्ञघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रज्ञघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रज्ञघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रज्ञघन्य स्थितिका बन्धक होता है। यदि श्रज्ञघन्य स्थितिका बन्धक होता है। श्रिकसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवीं भाग श्रिधकतक स्थितिका बन्धक होता है।

३२४. स्त्रीवेदी श्रौर पुरुषवेदी जीवोंमें सात कर्मीका भक्त पञ्चेन्द्रियोंके समान है। इतनी विशेषता है कि क्रोध संज्वलनकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव तीन संज्वलनोंका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे जघन्य स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार तीन संज्वलनोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३२६. नपुंसकवेदी जीवोंमें मोहनीयका भक्त स्त्रीवेदके समान है। तथा शेष कर्मीका भक्त श्रोघके समान है। श्रपगतवेदी जीवोंमें श्रोघके समान है। क्रोधादि चार कषायवाले जीवोंमें श्रोघके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि क्रोधकषायवाले जीवोंमें क्रोध संज्वलनकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव तीन संज्वलनोंका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे जघन्य स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार तीन संज्वलनोंकी मुख्यतासे सन्तिकर्ष जानना चाहिए। मानकषायवाले जीवोंमें मान संज्वलनकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव दो संज्वलनोंका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे जघन्य स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार दो संज्वलनोंकी मुख्यतासे सन्तिकर्ष जानना चाहिए। माया कषायवाले जीवोंमें माया संज्वलनकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव लोभ संज्वलनका नियमसे बन्धक होता है। इसीप्रकार लोभ संज्वलनकी मुख्यतासे सन्तिकर्ष जीवोंमें साथा संज्वलनका नियमसे जघन्य स्थितिका बन्धक होता है। इसीप्रकार लोभ संज्वलनकी मुख्यतासे सन्तिकर्ष जानना चाहिए। लोभकषायवाले जीवोंमें सन्तिकर्ष श्रोघके समान ही है।

३२७. मत्यद्वानी और श्रुताज्ञानी जीवोंमें सिन्तिकर्ष सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है। विभक्तशानमें सात कर्मोंका भक्त सामान्य नारिकयोंके समान है। नरकगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रियजाति, वैकियिकशरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर वैकियिकश्राक्षेपक्त, स्रोर निर्माण इनका

णिमि० णि० वं॰ संवेंज्जगु० । हुंड०-अप्पसत्थ०-अधिरादिछ० णि० वं॰ संवेंज्ज-भाग० । णिरयाणु० णि॰ वं० । तं तु० । एवं णिरयाणु० । तिरिक्खगदि० ज० द्वि०वं० पंचिदि०-तेजा०-क॰-समचदु०-वएण०४-अगु०४-पसत्थवि०-तस०४--ियरा-दिछ०-णिमि० णि॰ संवेंज्जगु० । ओरालि॰ अंगो०-वज्जरि०-तिरिक्खाणु० णि०वं० । तं तु० । उज्जो० सिया० । तं तु० । एवं तिरिक्खाणु०-उज्जो० ।

३२८. मणुसग० ज०द्वि०बं० श्रोरालि०-श्रोरालि०श्रंगो०-वज्जरि०-मणुसाणु० णि० बं० | तं तु० | सेसं तिरिक्लगदिभंगो | एवं श्रोरालि०-श्रोरालि०श्रंगो०-वज्जरि०-

नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रज्ञघन्य संख्यातगुर्शी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। दुरुडसंस्थान, अप्रशस्त्विहायोगति श्रीर श्रस्थिर श्रादि छह इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अज्ञघन्य संख्यातवीं माग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। नरकगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और श्रजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेचा श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवीं भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसीव्रकार नरकगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। तिर्यञ्चगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चे-न्द्रिय जाति, तैजस शरोर, कार्मण शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वर्णचतुष्क, ऋगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्तविद्दायोगति, त्रस चतुष्क, स्थिर त्रादि छह श्रीर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजधन्य संख्यातगुर्श श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। श्रीदारिक आङ्गोपाङ्ग, वजर्षभनाराच संहनन श्रौर तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी इनका नियमसे बन्धक होता है. किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जधन्यकी श्रपेक्षा श्रजधन्य,एक समय श्रधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेता श्रजघन्य, एक समय श्रीधकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसीप्रकार तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी श्रौर उद्योतकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३२८. मनुष्यगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव श्रौदारिक शरीर, श्रौदारिक श्राक्षेपाङ्ग, वर्ज्ञर्थभनाराच संहनन श्रौर मनुष्यगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रज्जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रज्जघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेचा श्रज्जघन्य, एक समय श्रिष्ठकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवीं भाग श्रधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग तिर्यञ्चगतिके समान है। इसीप्रकार श्रौदारिक शरीर, श्रौदारिक शाक्षीपाङ्ग, वज्रर्थभनाराचसंहनन श्रौर मनुष्यगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि श्रौदारिक शरीर, श्रौदारिक शाक्षीपाङ्ग, वज्रर्थभनाराच संहनन, दो गित, दो श्रानुपूर्वी श्रौर उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित्

मणुसाणु०। णवरि त्रोरात्ति०-त्रोरात्ति०त्रांगो०-वज्जरिस०-दोगदि-दोत्राणु०-उज्जो० सिया०। तं तु०।

३२६. देवगदि॰ ज॰िड॰वं॰ पंचिदि०-सादि-पसत्थद्वावीसं णिय०। तं तु०। एवमेदाश्रो ऍकमेकस्स। तं तु०। चदुजादि--पंचसंठा०--पंचसंघ०--श्रप्प-सत्थ०-दूभग-दुस्सर-श्रणादे० मणजोगिभंगो। एवरि जसगि॰ ज० संर्वेज्जगुण्ब्भ०।

३३०. आभिणि०-सुद्ब-श्रोधि० मण्वभंगो । णविर मिच्छत्तपगदि वजा । मणु-सगदि० जब्हिव्बं० पंचिदि०--तेजाब-कब्य-समचदु०--वण्ण०४--अगु०४--पसत्थ०-तस०४-थिरादिपंच-णिमिव्या वं० संखेंज्जगुण्ब्भ० । श्रोरालि०-श्रोरालिव्श्रंगो०-वज्जरि०-मणुसाणुव्या पि० वं० । तं तु० । जसव्याप्त वंव्यसंखेंज्जगुव्य । तित्थयव्य

श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जधन्य स्थितिका भी वन्धक होता है श्रौर श्रजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजधन्य स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेत्ता श्रजधन्य, एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवीं भाग श्रिधिक तक स्थितिका बन्धक होता है।

३२६. देचगतिकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, स्वातिसंस्थान प्रशस्त श्रद्धाईस प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है, किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रज्जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रज्जघन्य स्थितिका श्रव्यक होता है। यदि श्रज्जघन्य स्थितिका श्रव्यक होता है। यदि श्रज्जघन्य स्थितिका श्रव्यका श्रसंख्यातवाँ भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्ध होता है। इसोप्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रज्जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रज्जघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेत्ता श्रज्जघन्य, एक समय श्रधिक से लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। चार जाति, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, श्रद्रशस्त विहायोगिति, दुर्भग, दुःस्वर श्रीर अनादेय इनका भन्न मनोयोगी जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि यशःकोर्तिका नियमसे बन्धक होता है जो श्रज्जघन्य संख्यात-गृशी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है।

३३०. आभिनिबोधिक हानी, श्रुतकानी श्रीर श्रवधि हानी जीवोंका भक्क मनः पर्ययक्षानी जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि मिण्यात्व प्रकृतिको छोड़ कर सिक्ष कहना चाहिए। मनुष्यगितकी जधन्य स्थितिका बन्धक जीव पश्चिन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वर्णचतुष्क, श्रगुरु त्युचतुष्क, प्रशस्ति वहायोगिति, प्रसचतुष्क, स्थिर श्रादि पाँच श्रीर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजधन्य संख्यात गुणी श्रिष्ठक स्थितिका बन्धक होता है। औदारिक श्रिर, श्रीदारिक श्राक्षेणक, वज्रषेभ नाराचसंहनन श्रीर मनुष्यगत्यानुपूर्वी इनका नियमसे बन्धक होता है, किन्तु वह जधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रजधन्य स्थितिका भी वन्धक होता है। श्रदि श्रजधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जधन्यकी श्रपेचा श्रजधन्य, एक समय श्रिष्ठक से लेकर पल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग श्रिष्ठक तक स्थितिका बन्धक होता है। यश-कीर्तिका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजधन्य श्रसंख्यातगुणी श्रिष्ठक स्थितिका बन्धक होता है जो नियमसे श्रजधन्य श्रसंख्यातगुणी श्रिष्ठक स्थितिका बन्धक होता है। तीर्थंकर प्रकृतिका क्रमिक होता है श्रीर कदाचित् श्रिर क्रमिक होता है। तीर्थंकर प्रकृतिका क्रमिक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। तीर्थंकर प्रकृतिका क्रमिक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। तीर्थंकर प्रकृतिका क्रम्थक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। तीर्थंकर प्रकृतिका क्रम्थक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है।

सिया० संखेंज्जगु० । एवं मणुसगदिपंचगस्स ।

३३१. देवगदि० ज०डि०वं० पंचिदि०-पसत्थडावीसं णि० वं० । तं तु० । णवरि जस० णि० वं० असंखेंज्जगु० । आहार०-आहार०श्रंगो०-तित्थय० सिया० । तं तु० । एवमेदाओ ऍकमेंक्स्स । तं तु० ।

३३२. श्रथिर० ज०डि०वं० देवगदि-पंचिदि०-वेउव्वि०-तेजा०-क० समचदु०-वेउव्वि॰श्रंगो०-वएण०४-देवाणु०-श्रगु०४-पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्सर-श्रादे०-णि० णि० वं० संखेंज्जगु० । सुभ०-तित्थय० सिया० संखे०गु० । जस० सिया० श्रसंखे-जागु० । श्रसुभ-श्रजस० सिया० । तं तु० । एवं श्रसुभ-श्रजस० ।

होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार मनुष्यगति पञ्चककी मुख्यतासे सन्निकर्य जानना चाहिए।

३३१. देवगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति प्रशस्त अद्वार्धस प्रकृतियोंका नियमसे वन्धक होता है, किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर अजघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पत्थका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका वन्धक होता है। इतनी विशेषता है कि यशा-कीर्तिका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका वन्धक होता है। आहारक शरीर, आहारक आङ्गोपाङ्ग और तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है। आहारक शरीर, आहारक आङ्गोपाङ्ग और तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थिति का भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है । इसीप्रकार इनका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु ऐसी अवस्थामें वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका अधिकसे होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेचा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवीं भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेचा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवीं भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है।

३३२. श्रस्थिरकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव देवगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वैक्रियिक द्याङ्गोणाङ्ग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विद्यायोगित, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, श्रादेय श्रीर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। श्रुम श्रीर तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है। श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य श्रसंख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य श्रसंख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। श्रशुभ और श्रयशःकीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका बन्धक होता है श्रीर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रणेचा श्रजघन्य, एक समय श्रधिकसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवी तो नियमसे जघन्यकी श्रणेचा श्रजघन्य, एक समय श्रधिकसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवी तो नियमसे जघन्यकी श्रणेचा श्रजघन्य, एक समय श्रधिकसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवी

- ३३३. मर्णपज्जव० संजद-सामाइ०-छेदो॰ झोथिभंगो। श्वविर झसंजद-संजदा-संजदपगदीच्रो वज्ज। परिहार॰ झाहारकायजोगिभंगो। श्वविर झरदि० ज०हि०वं० सोग॰ शि० वं०। तं तु॰। सेसं संखेज्जगु॰। एवं सोग॰।
- ३३४. अथिर॰ ज०िंदि॰ देवगदि-पंचिंदि०-वेउन्वि०-तेजा०-कः०-समचदु०-वेजन्वि०त्रंगो॰--वएए।०४--देवाणु०-त्रगु०४-पसत्थ०--तस०-४-ग्रुभग--ग्रुस्सर्--त्रादे०-णिमि० संखेज्जगु॰ । ग्रुभ--जस०--तित्थय॰ सिया० संखेज्जगु० । त्राप्तुभ-त्रजस॰ सिया० । तं तु० । एवं त्राप्तुभ-त्रजस० ।
- ३३५. सुहुमसंप० श्रोघं। संजदासंजदेपिरहारभंगो। एविर मोह० श्रद्वकसा०-पुरिस०-हस्स-रिद-भय-दुगुं० एदाश्रो ऍक्कमैंकस्स । तं तु०। श्ररिद० ज०िट०वं० श्रद्ध-भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसीप्रकार श्रश्चभ श्रौर श्रयशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३३३. मनःपर्ययक्षानी, संयत, सामायिक संयत और छेदोपस्थापना संयत जीवोंका भक्त अविधिश्वानी जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि असंयत और संयतासंयतकी प्रकृतियोंको छोड़कर जानना चाहिए। परिहारविशुद्धि संयतोंका भक्त आहारककाययोगी जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि अरितको जधन्य स्थितिका बन्धक होता है और अजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है, किन्तु वह अधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जधन्यकी अपेता अजधन्य एक समय अधिकसे लेकर पत्यका असंख्यातवीं भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। शेष प्रकृतियोंका नियमसे अजधन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। शेष प्रकृतियोंका नियमसे अजधन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार शोककी मुख्यतासे सिक्षकर्ष जानना चाहिए।

३३४. श्रस्थिरकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव देवगित, पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शारीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वैक्रियिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विद्यायोगित, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, श्रादेय और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी श्रिधिक स्थितिका बन्धक होता है। ग्रुभ, यशकीर्ति श्रीर तीर्थकर इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजधन्य संख्यातगुणी श्रिधिक स्थितिका बन्धक होता है। श्रिक श्रीर श्रवश्वातिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है तो जधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जधन्यकी श्रोचा श्रजधन्य, एक समय श्रिधकसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग श्रिधकतक स्थितिका बन्धक होता है। इसीप्रकार श्रशुभ श्रीर श्रयशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३२४. स्टमसाम्परायिक संयत जीवोंका भक्त श्रोघसे समान है। संयतासंयत जीवों का भक्त परिहारविशुद्धिसंयत जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि मोहनीयकी आठ कषाय, पुरुषवेद, हास्य, रित, भय श्रोर जुगुप्सा इनका परस्पर सन्निकर्ष होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। श्रीर अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यको अपेक्षा श्रजघन्य, एक समय श्रिधकसे लेकर पल्यका असंख्यातवों भाग श्रिधक तक स्थितिका बन्धक होता है। श्ररिककी

कसा०-पुरिस०--भय-दुगु'० णि० संखेज्जगु०। सोग० णियमा बं०।तं तु०। एवं सोग०।

३३६. ऋसंजद० तिरिक्स्बोघं । एवरि तित्थय० श्रोघं । एवरि जस० एि वं० संसेंज्जगु० ।

३३७. चक्खुदंस० तसपज्जत्तभंगो । श्रचक्खुदं० मृ्लोघं । श्रोधिदंस० श्रोधि-णाणिभंगो ।

३३८. किएण--णील--काऊणं असंजदभंगो। एवरि किएण-णीलाणं तित्थयरं देवगदिसह काद्व्यो। काउए पढमपुढविभंगो। तेऊए छएएं कम्माणं सोधम्मभंगो। मिच्छ० ज०द्वि०वं० अर्णताणु-वंधि०४ णि० वं०। तं तु०। वारसकसा०-पुरिस०-हस्स-रदि-भय-दुगुं० णि० वं० संखें ज्ञगु०। एवं अर्णताखुवंधि०४।

३३६ अपचक्लासाकोध० ज०डि०बं० तिस्सिकसा० सा वं। तं तु०।

जघन्य स्थितिका बन्धक जीव आठ कषाय, पुरुषयेद, भय और जुगुण्सा इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। शोक का नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका भन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेचा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार शोककी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३३६. श्रसंयत जीवोंमें सामान्य तिर्यञ्चोंके समान जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि तीर्थंकर प्रकृतिका भङ्ग श्रोघके समान है। इतनी विशेषता है कि यशःकीर्तिका नियम से बन्धक होता है जो नियमसे श्रज्ञघन्य संख्यातगुर्खी श्रिधक स्थितिका बन्धक होता है।

३३७. चक्षुदर्शनवाले जीवोंका भङ्ग त्रसपर्याप्त जीवोंके समान है। श्रवश्चदर्शनवाले जीवोंका भङ्ग मृलोघके समान है। श्रवधिदर्शनवाले जीवोंका भङ्ग श्रवधिक्षानी जीवोंके समान है।

३३८. कृष्ण, नील, श्रौर कापीत लेश्यावाले जीवोंका भक्त श्रसंयत जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि कृष्ण श्रौर नील लेश्यावाले जीवोंके तीर्थंकर श्रकृति देवगित सिहत कहनी चाहिए। कापीत लेश्यामें तीर्थंकर प्रकृतिका अङ्ग पहली पृथ्वीके समान है। पीत लेश्यामें छह कमौंका भक्त सौधर्म कल्पके समान है। मिथ्यात्वकी जधन्य स्थितिका बन्धक जीव श्रनन्तानुवन्धी चारका नियमसे बन्धक होता है, किन्तु वह जधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे जधन्यकी श्रपेत्ता श्रजधन्य, एक समय श्रधिकसे छेकर पल्यका श्रसंख्यातवीं भाग श्रधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। बारह कषाय, पुरुषवेद, हास्य, रित, भय श्रौर जुगुप्साका नियमसे बन्धक होता है। बारह कषाय, पुरुषवेद, हास्य, रित, भय श्रौर जुगुप्साका नियमसे बन्धक होता है। नियमसे श्रजधन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी श्रकार श्रनन्तानुबन्धी चारकी मुख्यतासे सिन्नकर्ष जानना चाहिए।

३३९. श्रप्रत्याख्यानावरण क्रोधकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव तीन कषायका नियमसे बन्धक होता है, किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर ग्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे श्रहक०-पुरिस०-हस्स-रदि-भय-दुगु<sup>'</sup>० **शा० वं० संखें**ज्जगु० । एवं तिरि**शकसा०** ।

३४० पश्चक्वाणकोध० ज०ड्ठि०वं० तिषिणक० णि० वं० । तं तु० । चदु-संज०-पुरिस०-हस्स-रदि-भय-दुगुं० णि० वं० संखेज्जगु० । एवं तिषिणकसा० ।

३४१. कोधसंज० ज०हि०बं० तिषिणसंज०--पुरिस०--हस्स--रदि--भय--दुगुं० णि० बं०। तं तु०। एवमेदात्रो एकमेकस्स । तं तु०।

३४२, इत्थि० ज॰डि०वं० भिच्छ० सोलसक० भय-दुगुं० णि० वं० संखेंज्ज-गुणब्भहियं० । हस्स-रदि-ऋरदि-सोग० सिया० संखेंज्जगु० । एवं णवुंस० ।

३४३ अरदि० ज०डि०वं० चदुसंज०--पुरिस०-भय--दुगुं० णि० वं० संखे-

जघन्यकी श्रपेद्धा अजघन्य, एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग श्रधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। श्राठ कषाय, पुरुषवेद, हास्य, रित, भय श्रोर जुगुप्सा इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजधन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसीप्रकार तीन कषायोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३४० प्रत्याश्यानावरण कोधकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव तीन कषायोंका नियमसे बन्धक होता है, किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यद अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेत्ता अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। चार संज्वलन, पुरुषवेद, हास्य, रित, भय और जुगुष्सा इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसीप्रकार तीन कषायोंकी मुख्यतासे सिन्नकर्ष जानना चाहिए।

३४१. क्रोध सैं ज्वलनकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव तीन सैं ज्वलन, पुरुषवेद, हास्य, रित, भय और जुगुप्सा इनका नियमसे बन्धक होता है, किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेत्ता अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातधाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। इसोप्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सन्तिकर्ष जानना चाहिए। किन्तु ऐसी अवस्थामें वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है। विस्मसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातधाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है।

३४२. स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीच मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय श्रौर जुगुप्सा इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजधन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। हास्य, रित, श्ररित श्रौर शोक इनका कदाचित बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजधन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसीप्रकार नपुंसकवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३४३. श्ररतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव श्रार संज्वलन, पुरुषवेद भय श्रीर जुगुप्सा इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजधन्य संख्यातग्रुणी ज्जगु० । सोग० णि० वं० । तं तु० । एवं सोग० ।

३४४. तिरिक्लगदि--एइंदि०--पंचसंठा०-पंचसंघ०--तिरिक्खाणु०-आदाउज्जो०-अप्पसत्थ०-थावर-दूभग-दुस्सर-अणादें० सोधम्ममंगो। मणुसगदि० ज०द्वि०वं० पंचिदि०--तेजा०-क०--समचदु०--वएण०४--अगु०४--पसत्थवि०--तस४--थिरादि छ०-णिमि० णि० वं० सर्लेडजगुण्डभिह्यं०। ओरालि०-ओरालि०अंगो०-वज्जिरि०-मणुसाणु० णि० वं०। तं तु०। तित्थय० सिया० संखेडजगु०। एवं ओरालि०-ओरालि०अंगो०-वज्जिरि०-मणुसागु०।

३४५. देवगदि० ज०द्वि०वं० परिहार-पढमदंडस्रो काद्वो । स्रथिरं पि तस्सेव विदिय-दंडस्रो । एवं पम्माए ।

३४६. सुकाए सत्तरणं कम्माणं मणजोगिभंगो। मणुसगदि-स्रोरालि०-स्रोरालि०स्रंगो०-वज्जरि०-मणुसाणु० पम्माए भंगो। एवरि जस० णि० वं०

श्रियिक स्थितिका बन्धक होता है। शोकका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है शौर अजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेक्षा श्रजधन्य एक समय श्रिधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवीं भाग श्रिधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार शोककी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३४४. तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, आतप, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगित, स्थायर, दुर्मग, दुस्वर और अनादेय इनका भक्न सौधर्म कल्पके समान है। मनुष्यगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रियजाति, तैजस शरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्र संस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगिति, जसचतुष्क, स्थिर आदि छह और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। श्रौदारिक शरीर, औदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वज्रपंभनाराचसंहनन और मनुष्यगत्यानुपूर्वी इनका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है जो नियमसे जघन्यकी अपेता अजघन्य, एक समय अधिक से लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। तीर्थंकर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् श्रबन्धक होता है। तीर्थंकर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् श्रबन्धक होता है। इसी प्रकार औदारिक शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रपंभनाराचसंहनन और मनुष्यगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३४४. देवगतिकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवके परिहारिवशुद्धसंयतका प्रथम दण्डक कहना चाहिए और अस्थिर प्रकृति भी कहना चाहिए। तथा उसीके दूसरा दण्डक कहना चाहिए। इसी प्रकार पद्मतेश्यावाले जीवोंके जानना चाहिए।

३४६. शुक्ललेश्यामें सात कमाँका भङ्ग मनोयोगी जीवोंके समान है। मनुष्यगति, श्रीदारिक शरीर, श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहतन श्रीर मनुष्यगत्यानुपूर्वीका भङ्ग पद्मलेश्याके समान है। इतनी विशेषता है कि यशकीर्तिका नियमसे बन्धक होता है श्चसंखेज्जगुरु । पंचसंठा०-पंचसंघरु-श्रणसत्थ०-दूभग-दुस्सर-श्रणादेँ० श्राणदभंगो । वज्जरि०-जसरु सिया वं० संखेज्जगुरु । सेसं पम्माए भंगो । एवरि जसगित्तिरु श्चसंखेज्जगुरु ।

३४७. भवसिद्धिया० ओघं । अन्भवसिद्धिया० मिद्भंगो । सम्मादि०-खइग-सम्मादि० ओधिभंगो । वेदगसम्मादि० पम्मभंगो । एवरि मिन्छ०पगदीओ वज्ज । सासणे सत्त्त्रणं कम्माणं णिरयोघं । एवरि मिन्छत्त-एवुंसग० वज्ज । तिरिक्ख-गिद्धि ज०िद्धि पंचिदि०--ओरालि०--तेजा०--क०-समचदु०--ओरालि० अंगो०-वज्जरि०--वएए०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-थिरादिछ०-एिमि० णि० वं० । तं तु० । उज्जो० सिया० । तं तु० । एवं तिरिक्खाणु०-उज्जो० ।

३४८. मणुसगदि॰ ज०डि०बं० तिरिक्खगदिभंगो । एवरि [मिच्छत्त-एवुं

जो नियमसे श्रज्ञघन्य श्रसंख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका वन्धक होता है। पींच संस्थान, पाँच संहनन, श्रप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग, दुस्वर श्रीर श्रनादेय इनका भङ्ग श्रानत कल्पके समान है। वज्रर्षभनाराच संहनन श्रीर यशःकीतिं इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रज्ञघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। इतनी विशेषता है कि यशःकीर्तिकी श्रसंख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है।

३४७. भव्य जीवींका भङ्ग छोघके समान है। छभव्य जीवोंका भङ्ग मत्यज्ञानियोंके समान है। सम्यग्दछि और चायिक सम्यग्दछि जीवींका भङ्ग श्रवधिशानी जीवींके समान है। वेदक सभ्यम्दृष्टि जीवोंका भङ्ग पद्मलेश्यावाले जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्व सम्बन्धी प्रकृतियोंको छोड़कर कहना चाहिए। सासादन सम्यक्त्वमें सात कर्मीका भङ्ग सामान्य नारिकयोंके समान है। इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्व और नपुंसक वेदको छोड़कर कहना चाहिए। तिर्यञ्जगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षमनाराच संहनन, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्तविहायोगति, त्रस चतुष्क, स्थिर ग्रादि छह ग्रौर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जधन्य स्थितिका भी वन्धक होता है श्रौर श्रजवन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रज्ञघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेचा श्रजधन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवीं भाग श्रधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है ग्रौर ग्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जधन्यकी श्रपेक्षा श्रज्ञघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातचौँ भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी श्रीर उद्योतकी मुख्यतासे सन्निकर्षे जाननां चाहिए।

३४८. मनुष्यगतिकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवका भङ्ग तिर्यञ्चगतिके समार है। इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्व श्रीर नपुंसकवेदको छोड़कर कहना चाहिए। देव-गतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव प्रशस्त श्रद्धांस प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता स०] वज्ज । देवगदि० ज०डि०वं० पसत्थद्वावीसं िाय० । तं तु० ।

३४६. पंचिदि० ज०द्वि०वं० तेजा०-क०-समचदु०-वएएए०४-अगु०४-पसत्थ०तस०४-थिरादिछ०-िएमि० एए० वं० | तं तु० | तिरिएगिदि-दोसरीर-दोश्रंगो०वज्जरि०-तिरिएग्आए०-उज्जो० सिया० | तं तु० | एवं तेजा०-क०-समचदु०वएएए०४--अगु०४--पसत्थिव०--तस०४--थिरादिछ०--णिमिएां | एवं खोरालि०ओरालि०अंगो०-वज्जरि० | एवरि दोगिदि-दोआए०-उज्जो० सिया० | तं तु० |
सेसं पसत्थ [प-]गदी खो एए० वं० | तं तु० | चदुसंठा०--चदुसंघ०--अप्पसत्थ०दूभग-दुस्सर-अर्णादे० मणजोगिभंगो | एवरि थिराथिर-सुभासुभ-जस०-अजस०

है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है ग्रीर ग्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेता ग्रजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पर्यका श्रसंख्यातवाँ भाग श्रधिकतक स्थितिका बन्धक होता है।

३४९. पञ्चेन्द्रिय जातिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर श्रादि छह श्रीर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जधन्यकी अपेता अजधन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। तीन गति, दो शरीर, दो क्राङ्गोपाङ्ग, वज्रर्थभनाराच संहनन, तीन क्रानुपूर्वी क्रीर उद्योत इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रोर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जधन्यकी श्रपेचा श्रजधन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग श्रधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार तैजस शरीर. कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वर्णचतुष्क, त्रगुरु लघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर श्रादि छह श्रोर निर्माणको मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। तथा इसी प्रकार श्रौदारिक शरोर, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ श्रौर वज्रर्पमनाराचसंहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि दो गति, दो क्रानुपूर्वी श्रीर उद्योत इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और श्रजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रज्ञघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेत्ता श्रज्जघन्य,एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातयाँ भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। शेष प्रशस्त प्रकृतियोंका नियमसे वन्धक होता है। किन्तु वह जधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेक्षा श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग श्रधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। चार संस्थान, चार संहनन, श्रप्रशस्त विहायीगति, दुर्भग, दुस्वर श्रौर श्रनादेय इनका भङ्ग मनोयोगी जीवोंके समान है । इतनी विशेषता है कि र् स्थिर-त्रस्थिर, शुभ-त्रशुभ श्रौर यशःकीतिं-त्रयशःकीतिं इन तीन युगलोंका कदाचित् बन्धक

तिरिए वि सिया॰ संखेजितिभा०।

३५०. सम्मामिच्छ० वेदगभंगो । मिच्छादिही० मदिभंगो । सिएए० मणुस-भंगो । असिएए० तिरिक्खोघं । आहार० ओघं । अणाहार० कम्मइगभंगो ।

३५१. जहएणपरत्थाण-सिएणयासो दुवि०—श्रोघे० श्रादे० । श्रोघे० श्राभिणिबो०णाणावरणीयस्स जहएणयं द्विदिं बंधंतो चदुणाणा०-चदुदंसणा०-सादा०-जस०-उच्चा०-पंचंतरा० णिय० वं० । णिय० जहएणा० । एवमेदाश्रो ऍक्क-मेंक्कस्स । तं तु० जहएणा० ।

३५२. शिहाशिहाए ज०द्वि०वं० पंचणा०-चदुदंसणा०-सादा०-चदुसंज०-पुरिस०-जस०-पंचंतरा० शि० वं० । शि० अजह० असंखेज्जगु०। चदुदंस०-भिच्छ०-वारसक०-हस्स-रिद-भय-दुगुं०-पंचिदि०--ओरालि०-तेजा०-क०--समचदु०-ओरालि० अंगो०-वज्जरि०-वश्ण०४--अगु०४--पसत्थ०--तस०४--थिरादिपंच-शिमि० शि०वं०। तं तु० । दोगदि-दोआणु०-उज्जो०-शीचा० सिया०। तं तु० । उच्चा० सिया०

होता है और कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य संख्यातवाँ भाग श्रधिक स्थितिका वन्धक होता है।

३४०. सम्यग्मिध्यादिष्ट जीवोंका भङ्ग वेदकसम्यग्दिष्ट्योंके समान है श्रीर मिध्या-दृष्टि जीवोंका भङ्ग मत्यक्षानी जीवोंके समान है। संज्ञी जीवोंका भङ्ग मनुष्योंके समान है और श्रसंज्ञी जीवोंका भङ्ग सामान्य तिर्यञ्जोंके समान है। श्राहारक जीवोंका भङ्ग श्रोघके समान है। तथा अनाहारक जीवोंका भङ्ग कार्मगुकाययोगी जीवोंके समान है।

## इस प्रकार जघन्य स्वस्थानसन्निकर्ष समाप्त हुआ।

३४१. जघन्य परस्थानसन्निकर्ष दो प्रकारका है—श्रोघ श्रीर श्रादेश। श्रोघसे श्राभिनिबोधिक झानावरणकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव चार झानावरण, चार दर्शनावरण, सातावेदनीय, यशःकीर्ति, उद्यगोत्र श्रीर पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे जघन्य स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सन्तिकर्ष जानना चाहिए। किन्तु वह जघन्य स्थितिका ही बन्धक होता है।

३४२. निद्रानिद्राकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच श्वानावरण, चार दर्शनावरण, सातावेदनीय, चार सञ्ज्वलन, पुरुषवेद, यशःकीर्ति श्रीर पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। चार दर्शनावरण, मिथ्यात्व, बारह कषाय, हास्य, रित, भय, जुगुष्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गाल, वर्ज्यमनाराच संहनन, वर्णचतुष्क, अगुरुछधुचतुष्क, प्रशस्तविहायोगित, अस चतुष्क, स्थिर श्रादि पाँच श्रौर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। दो गित, दो श्रानुपूर्वी, उद्योत और नीचगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि श्रवन्धक होता है। तो जघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है। दो गित, दो श्रानुपूर्वी, उद्योत और नीचगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो जघन्य स्थितका भी वन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो जघन्य स्थितका भी वन्धक होता है श्रौर

असंखेंर्जगु० । एवं णिदाणिदाए भंगो चदुदंस०-मिच्छ०-दारसक०-हस्स-रदि-भय-दुर्गु ०--तिरिक्खगदि--मणुसगदि-पंचिदि० -ग्रोरालि०-तेजा०-क०-समचदु०-स्रोरालि०-ग्रंगो०-वज्जरि०-वएण०४-दोत्राणु०-ग्रगु०४--उज्जो०-पसत्थवि०-तस०४-थिरादिपंच-णिमि०-णीचागोद त्ति ।

३५३. श्रसादा० ज०िट वंघंतो खनगपगदीश्रो णिदाणिद्दाए भंगो। पंच-दंसणा०-मिच्छ०-वारसक०-भय-दुगुं०--पंचिदि०-श्रोरालि०--तेजा०--क०--समचदु०-श्रोरालि०श्रंगो०--वज्जिरि०-वण्ण०४-श्रगु०४-पसत्थ०-तस०४--सुभग--सुस्सर-श्रादे०-णिभि०णि०वं०संखेज्जभाग०।हम्स-रिद-तिरिक्खगदि-मणुसगदि-दोश्राणु०-उज्जो०-थिर-सुभ-णीचा० सिया० श्रसंखेज्जभाग० । श्ररदि-सोग-श्रथिर-श्रसुभ-श्रजस० सिया०।तं तु०। जस०--उचा० सिया० श्रसंखेज्जगु०। एवं श्ररदि--सोग--श्रथिर-श्रसुभ-त्रजस०।

श्रज्ञघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रज्ञघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेद्धा श्रज्ञघन्य, एक समय श्रिधिकसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग श्रिधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। उच्चगोत्रका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अज्ञघन्य श्रसंख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार निद्रानिद्राके समान चार दर्शनावरण, मिथ्यात्व, बारह कपाय, हास्य, रित, भय, जुगुण्सा, तिर्यश्चगित, मनुष्यगित, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रीदारिक श्रीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्न संस्थान, श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वज्ञर्षभनाराच संहनन, वर्णचतुष्क, दो ग्रानुपूर्वी, श्रगुरुलघुचतुष्क, उद्योत, श्रशस्त विहायोगिति, श्रसचतुष्क, स्थिर श्रादि पाँच, निर्माण श्रीर नोचगोत्रकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३५३. श्रसाता चेदनीयकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवके चपक प्रकृतियोंका भङ्ग निद्रानिद्राके समान है। पाँच दर्शनावरण, मिथ्यात्व, बारह कषाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त-विहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, श्रादेथ श्रीर निर्माण रनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे संख्यातवाँ भाग ऋधिक स्थितिका बन्धक होता है। हास्य, रित, तिर्यञ्चमति, मनुष्यमति, दो त्रानुपूर्वी, उद्योत, स्थिर, शुभ श्रौर नीचगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रज्ञघन्य श्रसंख्यातचौँ भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। श्ररति, शोक, श्रस्थिर, अग्रुभ श्रीर श्रयशःकीर्ति इनका कदःचित् वन्धक होता है श्रीर कदःचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जधन्यकी श्रपेचा श्रजधन्य एक समय श्रधिकसे छेकर पत्यका श्रसंख्यातवीँ भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। यशकोिति और उचगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् त्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजधन्य श्रसंख्यात-गुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार अरति, शोक, ऋस्थिर, ऋशुभ और श्रयशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३५४. कोधसंजि जि॰ दि०वं० पंचणा०-चदुदंसणा०-सादावे०-तिष्णसंजि०-, जस०-उचा०-पंचंत० णिय० वं० संखेंज्जगु० | एवं तिष्णिसंजि०-पुरिस० | गाविर माणे दोसंजलणं मायाए लोभसंज० पुरिस० चदुसंजलण ति भाणिद्व्वं | लोभे गात्थि संजल०-पुरिस० |

३५५. इत्थि० ज०हि०वं० खवगपगदीश्रो णिहाणिहाए भंगो। पंचदंस० मिच्छ०-चारसक०--भय--दुगुं०--पंचिदि०--श्रोरालि०-तेजा०--क०--श्रोरालि०श्रंगो०-वगण०-४ अगु०-४ पसत्थ०-तस०-४ सुभग-सुस्सर-आरेठॅ०--णिमि० णि० वं० श्रसं-खेंज्जभाग०। सादा०-जस०-उच्चा० सिया० श्रसंखेंज्जगु०। श्रसादा०-श्रदि-सोग-तिरिक्व०-मणुसग०-तिणिणसंटा०-तिणिणसंघ०-दोश्राणु०-उज्जो०-थिराथिर-सुभासुभ-श्रजस०-णीचा०-सिया० श्रसंखेंज्जभाग०। एवं णवुंस०। णविर पंचसंटा०-पंच-संघ०-णिरयाणु० ज०हि०वं० पंचणा०--चदुदंसणा०--चदुसंज०--पंचंत० णि० वं० श्रसंखेंज्जगु०। पंचदंसणा०-श्रसादा०-मिच्छ०-वारसक०--णवुंस०-श्ररदि-सोग-भय-दुगुं०-चदुवीसणामपगदीश्रो--णीचा० णि० वं० संखेंज्जगु०। णिरयग०-वेउव्वि०-

३४४. कोध सं ज्वलमकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच झानावरण, चार दर्श-नावरण, सातावेदनीय, तीन सं ज्वलन, यशःकीर्ति, उच्चगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजधन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार तीन सं ज्वलन और पुरुपवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि मानमें दो सं ज्वलन, मायामें लोभ सं ज्वलन और पुरुपवेदमें चार सं ज्वलन कहना चाहिए। लोभमें सं ज्वलन और पुरुषवेदका सन्निकर्ष नहीं होता।

२४४. स्त्रीयेदकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवके चपक प्रकृतियोंका भक्न निद्रानिद्राके समान है। पाँच दर्शनावरण, मिथ्यात्व, बारह कषाय,भय, जुगुष्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, ग्रीदा-रिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क,सुभग, सुस्वर, क्रादेय और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे असंख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। साता बेदनीय. यशःकीर्ति श्रौर उच्चगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अज्ञधन्य ऋसंख्यातगुणी ऋधिक स्थितिका बन्धक होता है। श्रसाताबेदनीय, श्ररति, शोक, तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति, तीन संस्थान, तीन संहनन, दो क्रानुपूर्वी, उद्योत, स्थिर, क्रस्थिर, शुभ, क्रशुभ क्रयशःकीर्ति क्रौर नीच गोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रज्ञघन्य श्रसंख्यातवाँ भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार नपुंसक वेदको मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेपता है कि पौंच संस्थान, पाँच संहतन श्रीर नरकगत्यातुपूर्वीकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संच्वलन और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजधन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। पाँच दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, बारह कषाय, नपुंसकवेद, अरति, शोक भय, जुगुप्सा, चौदीस नामकर्मकी प्रशृतियाँ और नीचगोत्र इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजबन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है।

वेउव्विब्छंगो०-सिरयाणु॰ सि० वं० सि० अज० | जह० अज॰ विद्वासपिदिदासं वंधदि संखेंज्जभाग० संसे जसु॰ |

३५६. तिरिक्लायु० ज०हि॰बं॰ लवगपगदीश्रो णि० बं॰ श्रसंखेज्जगु०। पंचदंस०-मिच्छ०-बारसक०--एवुंस०-भय--दुगुं०-तिरिक्लगदि० श्रपज्जत्तसंजुत्ताश्रो पगदीश्रो एिचा॰ णि॰ बं॰। णि० श्रन०। जह० श्रन० विद्वाणपदिदं श्रसंखेज-भाग० संखेजागु॰। सादावे॰ सिया॰ श्रसंखेजागु०। श्रसादा०-इस्स-रिद-श्ररिद-सोग--पंचनादि-श्रोरालि०श्रंगो०--श्रसंपत्त०--तस-थावर--बादर-सुहुम--पत्तेय-साधार० सिया०। यदि० बं॰ णि० श्रन॰ विद्वाणपदिदं श्रसंखेजाभा० संखेजागु०। एवं मणुसायु०। एवरि एइंदियसंजुत्ताश्रो बजा।

३५७. देवायु० ज०िड०वं० स्वयगपगदीओ णि० वं० असंखें ज्ञगु० । पंचदंस०--भिच्छ०-वारसक०--हस्स-रिद--भय--दुगुं०-पसत्थणामाओ चदुवीसं णि० वं०
संखें ज्ञगु० । इत्थि० सिया० संखें ज्ञगु० । पुरिस० सिया० असंखें ज्ञगु० । देवगदिनरकगति, वैक्षियिक शरीर, वैक्षियिक आङ्गोपाङ्ग और नरकगत्यानुपूर्वी इनका नियमसे
बन्धक होता है जो जघन्यको अपेक्षा अजधन्य, नियमसे दो स्थान पतित स्थितियोंका वन्धक
होता है । या तो संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है या संख्यातमुर्गी
अधिक स्थितिका बन्धक होता है ।

३'४६. तिर्यश्चायुकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव चपक प्रकृतियोंका नियमसं बन्धक होता है जो नियमसे अज्ञघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। पाँच दर्शनावरण, मिथ्यात्व, बारह कषाय, नपुंसकवेद, भय, जुगुप्सा, तिर्यश्चगित, अपर्यातसंयुक्त प्रकृतियाँ और नीचगोत्र इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अज्ञघन्य स्थितिका बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्यकी अपेचा अज्ञघन्य, दो स्थान पतित स्थितिका बन्धक होता है, या तो असंख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है या संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। सातावेदनीयका कदाचित् बन्धक होता है या संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। असातावेदनीय, हास्य, रित, अरित, शोक, पाँच जाति, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासगुणिटका संहनन, त्रस, स्थावर, बाहर, स्थम, प्रत्येक और साधारण इनका कदाचित् बन्धक होता है। या तो असंख्यातवाँ हे तो नियमसे अज्ञघन्य, दो स्थानपतित स्थितिका बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अज्ञघन्य, दो स्थानपतित स्थितिका बन्धक होता है या तो असंख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका वन्धक होता है या संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार मनुष्यायुकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि एकेन्द्रिय जाति संयुक्त प्रकृतियोंको छोड्कर जानना चाहिए।

३५७. देवायुकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव दापक प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। गाँच दर्शनावरण, मिथ्यात्व, बारह कषाय, हास्य, रित, भय, जुगुष्सा और नामकर्मकी चौबीस प्रशस्त प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। स्रीवेदका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता

१. मूलप्रती यदि० णि० बं० णि० इति पाठः।

वेउन्वि॰-वेउन्वि॰त्रंगो०-देवाणु॰ णि॰ बं॰, णि० अज० विद्वाणपदिदं संस्केंज्जभा॰ संस्केंज्जगु०।

३५६. तिरिक्खग० ज०डि०बं० खवगपगदीश्रो श्रमंखें ज्ञगु०। पंचदंस०-मिच्छ०-बारसक०--हस्स--रदि-भय-दुगुं०-णाम० सत्थाणभंगो णीचा० णि० बं०। तं तु०। एवं तिरिक्खाणु०--उज्जो०। मणुसगदि० तिरिक्खगदिभंगो। णविर उच्चा० णि० बं० श्रसंखें ज्ञगु०।

है। पुरुषवेदका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है। देवगति, वैक्रियक शरीर, वैक्रियक श्राङ्गोपाङ्ग श्रीर देवगत्यानुपूर्वी इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रवधक दोता है जो नियमसे श्रवधक होता है जो नियमसे श्रवधक होता है या तो संख्यातवाँ भाग श्रिषक स्थितिका बन्धक होता है।

३४८. नरकगतिकी अधन्य स्थितिका बन्धक जीव चपक प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजधन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। पाँच दर्शनावरण, असाताचेदनीय, मिथ्यात्व, बारह कपाय, नपुंसकवेद, अरित, शोक, भय, जुगुप्सा, स्वस्थान मंगके समान नामकर्मकी प्रकृतियाँ और नीचगोत्र इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। नरकगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है, किन्तु वह जधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है जो नियमसे जधन्यक होता है। यदि अजधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जधन्यकी अपेचा अजधन्य, एक समय अधिक लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक रिथतिका बन्धक होता है। इसी प्रकार नरकगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सिक्वक जानना चाहिए।

३४९. तिर्यञ्चगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव चपकप्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। पाँच दर्शनावरण, मिथ्यात्व, बारह कषाय, हास्य, रित, भय, जुगुण्सा, स्वस्थान मङ्गके समान नामकर्मकी प्रकृतियाँ और नीच गोत्र इनका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेचा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ माग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और उद्योतकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। मनुष्यगतिका मङ्ग तिर्यञ्चगतिके समान है। इतनी विशेषता है कि उद्य गोत्रका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है।

मूलप्रतौ अं॰ श्रसंखेजि॰ इति पाठः । २. मूलप्रतौ श्रसंखेजगु॰ देवगदि॰ श्रसंखेजगु॰ देवगदि॰ इति पाठः ।

- ३६०. देवगदि० जि॰ ट्वि॰ विवासियो [ शि॰ वं॰ ] असंखेँज्जगु॰ । पंचदंस॰-मिच्छ०-बारसक॰-चदुस्रोक० सिय० संखेँज्जगु॰ । साम सत्थासभंगो ।
- ३६१. एइंदि॰-ज॰ट्टि०बं० खब॰पगदीओ शि॰ बं० असंखेंज्जगु॰। पंचदंस॰-भिच्छ०--बारसक०--एावुंस॰-भय-दुगुं०--शीचा॰ शि० वं॰ असंखेंज्जभा॰। सादा० सिया॰ असंखेंज्जगु०। असादा०--इस्स-रदि-अरदि--सोग० सिया० असंखेंज्जभा०। शाम॰ सत्थाराभंगो। एवं आदाव-थावर०। एवं बीइंदि०-तीइं०-चदुरिं०।
- ३६२. ब्राहार० ज०डि०बं० स्ववगपगदीसं शि० बं॰ ब्रसंखेंज्जगु॰ । हस्स-रदि-भय-दुर्गं० सि० बं॰ संखेंज्जगु० । साम० सत्थासभंगो । एवं ब्राहार०ब्रंगो० तित्थय॰ ।
- ३६३. राम्गोद० ज॰िड॰बं० खवगपगदीत्रो शि॰ बं॰ त्रसंखेंजागु०। पंच-दंस०-भिच्छ०-बारसक०-भय-दुगुं० शि० बं० त्रसंखेंजभा०। सादा० सिया०
- ३६०. देवगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव चपक प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। पाँच दर्शनावरण, मिथ्यात्व, बारह कषाय और चार नोकषाय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। नामकर्मकी प्रकृतियोंका भंग स्वस्थानके समान है।
- ३६१. एकेन्द्रिय जातिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव ज्ञपक प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अज्ञघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। पाँच दर्शनावरण, मिथ्यात्व, बारह कषाय, नपुंसकवेद, भय, जुगुण्सा और नीच गोत्र इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अज्ञघन्य असंख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। सातावेदनीयका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अज्ञघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है। असातावेदनीय, हास्य, रित, अरित और शोक इनका कदाचित् बन्धक होता है। असातावेदनीय, हास्य, रित, अरित और शोक इनका कदाचित् बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अज्ञघन्य असंख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। वामकर्मकी प्रकृतियोंका भङ्ग स्व-स्थानके समान है। इसी प्रकार आतप और स्थावर प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। तथा इसी प्रकार द्वीन्द्रियजाति, त्रीन्द्रिय जाति और चतुरिन्द्रिय जातिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।
- ३६२. श्राहारक शरीरकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव चपक प्रश्नितयोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य श्रसंख्यातगुणी श्रिधक स्थितिका बन्धक होता है। हास्य, रित, भय श्रीर जुगुण्सा इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यातगुणी श्रिधक स्थितिका बन्धक होता है। नामकर्मकी प्रश्नितयोंका भंग स्वस्थानके समान है। इसी प्रकार श्राहारक श्राङ्गोपाङ्ग श्रीर तीर्थेकर प्रश्नितकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।
- ३६३. न्यग्रोध परिमण्डल संस्थानकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव चपक प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। पाँच दर्शनावरण, मिथ्यात्व, बारह कपाय, भय और जुगुप्सा

त्रसंखेंज्जगु० । इरस-रदि-श्चरिद-सोग-णीचा० सिया० असंखेंज्जभा० । णाम० सत्थाणभंगो । एवं चदुदंस०-पंचसंघ०-अप्पसत्थ०-दूभग-दुस्सर-अणादे० णग्गोदभंगो । णवरि खुज्ज०-वामण०-अद्धणारा०-खीलिय०-इत्थिवे० सिया० असंखेंज्जभा० । पुरिस० सिया० असंखेंज्जगु० ।

३६४. हुंड०-त्रसंपत्त० ज०द्वि०वं० इत्थि०-णवुंस० सिया० असंखें जगु० । एवं अप्पसत्थ०-दूभग-दुस्सर-श्रणादें०-तिरिणवेदाणि भाणिदव्वाणि । सुहुम-साधा-रण० एइंदियभंगो । एवरि सगपगदीश्रो जाणिदव्वाश्रो । एवं सव्वेसि णामाणं । स्विरि अप्पप्पणो सत्थाणं कादव्वं ।

३६५. त्रादेसेण ऐरइएस त्राभिणिबोधि॰ ज॰हि॰बं० चदुणा॰-णवदंसणा०-सादा०--मिच्छ०-सोलसक०--पुरिस०--हस्स--रदि--भय-दुर्गुं ०--मणुसग०--पंचिंदि०--त्रोरालि०-समचदु०-त्रोरालि॰अंगो०--वज्जरि०-वएण० ४--मणुसाणु०--त्रगु० ४--

इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रज्ञघन्य श्रसंख्यातवाँ भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। साता वेदनीयका क्यांचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रज्ञघन्य श्रसंख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। हास्य, रित, श्ररित, शोक श्रीर नीचगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रज्ञघन्य श्रसंख्यातवाँ भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। नामकर्मकी प्रशृतियोंका भङ्ग स्वस्थानके समान है। इसी प्रकार न्यश्रोध परिभगडल संस्थानके समान चार दर्शनावरण पाँच संहनन, श्रप्रशस्तविहायोगित, दुर्भग, दुस्वर श्रीर श्रनादेयकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि कुष्जकसंस्थान, वामन संस्थान, श्रधंनाराच संहनन, कीलक संहनन श्रीर स्त्रविद इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रज्ञघन्य श्रसंख्यातवों भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। पुरुषवेदका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रज्ञघन्य श्रसंख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रज्ञघन्य श्रसंख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है।

३६४. हुएडसंस्थान और श्रसम्प्राप्तास्पाटिका संहननकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव स्त्रीयेद श्रीर नपुंसकवेदका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रयन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य श्रसंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इस प्रकार अप्रशस्त विहायोगित, दुर्भग, दुस्वर, श्रनादेय श्रीर तीन वेदोंकी मुख्यतासे सिन्नकर्ष जानना चाहिए। सूदम श्रीर साधारण प्रकृतियोंका भक्न एकेन्द्रिय जातिके समान है। इतनी विशेषता है कि श्रपनी-श्रपनी प्रकृतियों जाननी चाहिए। इसी प्रकार सब नामकर्मकी प्रकृतियोंकी जानना चाहिए। इतनो विशेषता है कि श्रपना श्रपना स्टन्धान कहना चाहिए।

३६४. ब्रादेशसे नारिकयोंमें ब्रामिनिबोधिक ज्ञानावरणकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव चार ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, सातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, पुरुषवेद, हास्य,रित,भय,जुगुष्सा, मनुष्यगति, पञ्चेन्द्रियजाति, ब्रौदारिक शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, ब्रोदारिक ब्राङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन, वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघुचतुष्क, पसत्थ०-तस०४-थिरादिञ्ञक-णिमि०-उचा०-पंचंत० णि० वं० । तं तु० । एवमेदात्रो ऍकमेंक्रस्स । तं तु० ।

३६६. असादा० ज०िड वं० पंचणा०-णवदंसणा०-भिच्छ०-सोलसक०-भय-दु०-मणुसग०-पंचिदि०-श्रोरालिय०-तेजा०-क०-समचदु० श्रोरालि०श्रंगो०-वज्जिरि०-वण्ण०४- मणुसाणु०-त्रारा०४-पसत्थवि०--तस०४--सुभग--सुस्सर--श्रादे०-णिमि०-उच्चा०-पंचंत० णि० बं० संखेंज्जभा० । हस्स-रदि-थिर-सुभ-जसगि० सिया० संखें-ज्जभा० । अरदि-सोग-श्रथिर-श्रसुभ-श्रजस० सिया० । तं तु० । एवं श्रथिर-श्रसुभ-श्रजस० ।

३६७. इत्थिवे० ज॰डि०वं॰ पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दु०-मणुस०-पंचिदि०-स्रोरालि०-तेजा०-क०-स्रोरालि०श्रंगो०-वराण०४-मणुसाणु०-

प्रशस्त विहायोगित, त्रसचतुष्क, स्थिर त्रादि छह, निर्माण, उच्चगीत्र त्रीर पांच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है, किन्तु वह जधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जधन्यकी अपेचा अजधन्य, एक समय अधिक लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्य जानना चाहिए। किन्तु तब वह जधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसं जधन्यकी अपेचा अजधन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है।

३६६. श्रसाता वेदनीयकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, भय, जुगुन्सा, मनुष्यगित, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचनुरस्रसंस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्ज्ञर्थभनाराच संइनन, वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलधुचनुष्क, प्रशस्तविहायोगित, त्रसचनुष्क, सुभग, सुस्वर, श्रादेय, निर्माण, उच्चगोत्र श्रौर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रज्ञघन्य संख्यातवाँभाग श्रिष्ठिक स्थितिका बन्धक होता है। हस्य, रित, स्थिर, शुभ श्रोर यशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्थक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रज्ञघन्य संख्यातवाँ भाग श्रिष्ठक स्थितिका बन्धक होता है। श्ररित, श्रोक, श्रस्थिर, श्रग्रुभ श्रौर श्रयशःकीर्ति इनका कदाचित् वन्धक होता है। श्ररित, श्रोक, श्रस्थिर, श्रग्रुभ श्रौर श्रयशःकीर्ति इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि श्रवन्धक होता है। यदि श्रवन्धक होता है। यदि श्रज्ञघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेत्ता श्रज्ञघन्य, एक समय श्रिष्ठकसे लेकर पर्यका श्रसंख्यातवाँ भाग श्रियकतक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार श्रस्थर, श्रग्रुभ श्रौर श्रयशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३६७. स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, भय, जुगुष्सा, मनुष्यगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मण शरीर, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्याद्वण्यी, श्रगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विद्यायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, श्रादेय, निर्माण, उच्चगोत्र श्रौर

त्रमु०४- पसत्थवि०--तस०४- सुभग-सुस्सर-त्रादे**०**--णिमि०उच्चा०-पंचंत० णि० वं० संखेंज्जभागब्भहियं० । सादासाद ०--हस्स-रदि--श्ररदि--सोग--तिरिणसंटा०--तिएणि-संघ०--थिराथिर्--सुभासुभ--जस०--अजस० सिया० संवेज्जभा०। एवं णवुंस०। स्विति पंचसंठा०-पंचसंघ० ।

३६⊏. तिरिक्खायु॰ ज०डि०वं॰ पंचणाणावरणादिधुविगाणं णि॰ वं० संखेंडजगु०। सेसात्रो परियत्तमाणियात्रो सन्वात्रो सिया० संखेंडजगु०। एवं मणु-सायु॰ । णवरि ग्रीचुच्चा० सिया० संखेँजगु० ।

३६६. तिरिक्त्वग० ज॰डि॰वं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दु०-ग्रीचा०-पंचंत० णि० वं० संखेँजभा०। सादासाद०-तिरिणवे०-हस्स-रदि-ऋरदि-सोग॰ सिया॰ संखेँज्जभाग॰ । खाम॰ सत्थाणभंगो । पंचसंठा०-पंचसंघ०-धुविगार्णं कादव्वं । साथस्स अप्पप्पसो सत्थासभंगो ।

पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यातवीं भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है । साता वेदनीय, श्रसाता वेदनीय, हास्य, रित, श्ररित, शोक, तीन संस्थान, तीन संहनन, स्थिर, अस्थिर, ग्रुध, ग्रश्नुम, यशक्तीर्ति ग्रौर अयशः कीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अज्ञबन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार नपुंसकवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि पाँच संस्थान ग्रौर पाँच संहननका कदाचित् बन्धक होता है ग्रौर कदाचित् ग्रबन्धक होता है।

३६८. तिर्यञ्चायुकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण स्रादि ध्रुवबन्ध-वाली प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। शेष परावर्तमान सब प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यात-गुणी त्रधिक स्थितिका चन्धक होता है। इसी प्रकार मनुष्यायुकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानमा चाहिए । इतनो विशेषता है कि नीचगोत्र और उधगोत्रका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजधन्य संख्यात-गुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है।

३६९. तिर्यञ्चगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच झानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, नीच गीत्र और पाँच ऋन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। साताचेदनीय, ऋसाताचेदनीय, तीन वेद, हास्य, रति, ऋरति ऋौर शोक इनका कदाचित् बन्धक होता है ग्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। नामकर्मका भङ्ग सस्थानके समान है। पाँच संस्थान, पाँच संहनन, अप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग, दुखर और अनादेय इनकी मुख्यतासे सन्निकर्ष श्रोघके समान है। किन्तु श्रपनी प्रकृतियोंकी स्थितिको संख्यातवीं भाग अधिक कहना चाहिए। इतनी विशेषता है कि उचगोत्रको ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके साथ कहना चाहिए। तथा नामकर्मकी अपनी अपनी प्रकृतियोंका भङ्ग खस्थानके समान है। Jain Education International

३७० तित्थय० ज०हि०वं० पंचाणा०-छदंसणा०-सादावे०--बारसक०-पुरिस०-इस्स-रदि--भय-दुगुं०--उज्ञागो०-पंचंत० णि० वं० संखेजिनगु० । साम सत्थासभंगो । एवं पढमाए पुढवीए ।

३७१. विदियाए पुढवीए आभिणिबो॰ ज॰डि॰बं॰ चदुणा॰-छदंसणा॰-सादाबे॰-बारसक॰-पुरिस॰-इस्स-रिद-भय-द्वु॰-मणुसगिदयात्रो ि एरयोघं पढमदंडत्रो उच्चा॰-पंचंत० णि० वं० । तं तु० । तित्थय० सिया० । तं तु॰ । एवमेदात्रो ऍक-मेंक्स्स । तं तु॰ ।

३७२ . शिदाशिदाए ज॰ द्वि०बं॰ पंचाणा०-पढमदंडस्रो शि॰ बं॰ संखेंजजगु० । पचलापचला-धीणगिद्धि--मिच्छत्त-स्रागंताणुबंधि०४ शि॰ बं॰ । तं तु० । एवं धीण-गिद्धितिय-मिच्छ०-स्रागंताणुबंधि०४ ।

३७०. तीर्थंकर प्रकृतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव, पाँच शानावरण, छह दर्शना-वरण, सातावेदनीय, बारह कषाय, पुरुष वेद, हास्य, रित, भय, जुगुप्सा, उद्यगोत्र श्रौर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यातगुणी श्रिधिक स्थितिका बन्धक होता है। नामकर्मकी प्रकृतियोंका भक्क संस्थानके समान है। इसी प्रकार पहिली पृथ्वीमें जानना चाहिए।

३७१. दूसरी पृथ्वीमें श्राभिनिबोधिक शानावरणकी जधन्य स्थितिके बन्धक जीवके चार झानावरण, छह दर्शनावरण, सातावेदनीय, बारह कषाय, पुरुष वेद, हास्य, रति, भय, जुगुल्सा श्रौर मनुष्यगति श्रादि प्रकृतियाँ सामान्य नारिकयोंके समान प्रथम दराडकमें कही गई प्रकृतियाँ, उच्चगोत्र और पाँच ग्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेता अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पत्थका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। तीर्थंकर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है स्रोर कदाचित स्रबन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है ऋौर ऋजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी ऋषेत्वा ऋजघन्य एक समय ऋधिकसे लेकर पत्यका ऋसंख्यातवाँ भाग ऋधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु ऐसी अवस्थामें वह जधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर अज्ञचन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अज्ञचन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेदा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग ग्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है ।

३७२. निद्रानिद्राकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण ऋदि प्रथम दराडकमें कहो गई प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अज्ञघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। प्रचला-प्रचला, स्त्यानगृद्धि, मिथ्यात्व और अनन्तानुवन्धी चार इनका नियमसे बन्धक होता है, किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है
और अज्ञधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अज्ञधन्य स्थितिका बन्धक होता है
तो नियमसे जघन्यकी अपेजा अज्ञधन्य,एक समय अधिकसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ

३७३ असादा० ज०डि०वं० पंचणाणा॰ मणुसगदिसंजुत्ताओ णिरयोघं। णवरि सम्मादिडिपगदीओ वंधदि। एवं अरदि-सो०-अथिर-असुभ-अजस०।

३७४. इत्थिवे० ज॰ द्वि॰ वं॰ पंचणा॰--णवदंसणा०--भिच्छ०-सोलसक०--भय-दु॰-णाम मणुसगदिसंजुत्तात्रो उच्चा०-पंचंत० णि० वं० संखेंज्जगु० । सादासाद॰-चदुणोक॰-समचदु॰-वज्जरिस०-थिरादितिणिणुयुगलं सिया॰ संखेंज्जगु॰ । दोसंटा०-दोसंघ॰ सिया॰ संखेंज्जभा० । एवं णुवुंस॰ । णुवरि चदुसंठा०-चदुसंघ० सिया० संखेंज्जभा० । श्रायु॰ णिरयोघभंगो ।

३७५ तिरिक्खग० ज०डि०वं० हेडा उत्तरि खबुंसगभंगो । खामसत्थाखभंगो । एवं पंचसंठा०-पंचसंघ०-अप्पस्तथिव०-द्भग-दुस्सर-अखादे० हेडा उवरि । खामं अप्पप्पणो सत्थाखभंगो । एवं चदुसु पुढवीसु । सत्तमाए पुढवीए एसो चेव भंगो । खबरि खिदाखिदाए ज०डि०वं० पचलापचला-थीणगिद्धि-मिच्छ०-अखंताखुवंधि०४-

भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व श्रौर श्रनन्तानुबन्धी चारकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

३७३. श्रसातावेदनीयकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवके पाँच झानावरण श्रादि मनुष्यगति संयुक्त प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य नारकियोंके समान है। इतनी विशेषता है कि यह सम्यग्दिष्ट सम्बन्धी प्रकृतियोंको वाँधता है। इसी प्रकार श्ररित, शोक, अस्थिर, श्रशुभ श्रीर श्रयशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३७४. स्त्रीवेद्की जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच झानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कवाय, भय, जुगुप्सा, नामकर्मकी मनुष्यगित संयुक्त प्रकृतियाँ, उच्चगोत्र श्रीर पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। सातावेदनीय, असातावेदनीय, चार नोकवाय, समचतुरस्रसंस्थान, वज्जर्षमनाराचसंहनन, स्थिर आदि तीन युगल इनका कदाचित् धन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। दो संस्थान और दो संहनन इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातवां माग अधिक स्थितिका वन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातवां माग अधिक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार नपुंसकवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि चार संस्थान और चार संहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ माग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ माग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ माग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। आयुकर्मकी मुख्यतासे सन्निकर्ष सामान्य नारकियोंके समान है।

३७४. तिर्यञ्चगतिकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवके नीचे ऊपरकी प्रकृतियोंका भक्क नपुंसकवेदके समान है। नामकर्मकी प्रकृतियोंका भक्क स्वस्थानके समान है। इसी प्रकार पाँच संस्थान, पाँच संहनने, श्रप्रशस्त विहायोगित, दुर्भग, दुस्वर श्रोर अनादेयकी मुख्यतासे नीचे ऊपरकी श्रपनी-श्रपनी प्रकृतियोंका सन्निकर्ष जानना चाहिए। तथा नामकर्मकी श्रपनी प्रकृतियोंका भंग स्वस्थानके समान है। इसी प्रकार तोसरी आदि चार पृथिवियोंमें जानना चाहिए। सातवीं पृथ्वीमें यही भंग है। इतनी विशेषता है कि निद्रानिद्राकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव प्रचला-प्रचला, स्त्यानगृद्धि, मिथ्यात्व.

तिरिक्खग०-तिरिक्खाणु०-णीचा० णि० बं०। तं तु०। उज्जो० सिया०। तं तु०। एवमेदाओ एकमेर्कस्स । तं तु०। पंचसंठा०--पंचसंघ०--अप्पसत्थ०--दूभग--दुस्सर-अर्णादे० तिरिक्खगदिसंजुत्ताओ कादव्वाओ।

३७६. तिरिक्लेसु मूलोघं । एवरि खवगपगदीएां शिहाणिहाए भंगो । पंचिदिय-तिरिक्ख०३ आभिश्विक जिब्हिठवं० चढुणा०--एवदंसणा०-सादा०-मिच्छ०-सोल-सक०-पुरिस०-हस्स-रिद-भय-दु०-देवगदि-पंचिदि०--वेउव्विक-तेजा०-क०-समचढु०-वेउव्विक्झंगो०--वरणा०४-देवाणु०--ऋगु०४--पसत्थ०-तस०४-थिरादिछ०--शिमि०-उच्चागो०--पंचंत० शि० वं० । तं हु० । एवमेदाओ ऍक्कमेक्स्स । तं तु० । असादा० ज०हि०वं० शिरयोघं । शवरि देवगदिसंजुत्तं ।

अनन्तानुबन्धी चार, तिर्यञ्चगित, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और नीचगोत्र इनका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेला अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पत्यका असंख्यातयाँ माग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेला अजघन्य, एक समय अधिकते लेकर पत्यका असंख्यातयाँ माग अधिकतेक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन प्रकृतियोंका परस्पर सिक्तकर्ष होता है। किन्तु ऐसी अवस्थामें वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेला अजघन्य स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेला अजघन्य एक समय अधिकते वन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेला अजघन्य एक समय अधिकते लेकर पत्यका असंस्थातवाँ माग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। पाँच संस्थान, पाँच संहनन, अप्रशस्त विहायोगिति, दुर्भग, दुस्वर और अनादेय इनको तिर्यञ्चगित सिहत कहना च।हिए।

३७६. तिर्यञ्जोमें मूलोधके समान भङ्ग जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि चपक प्रकृतियोंका भङ्ग निद्रानिद्राके समान है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें ग्राभिनिचोधिक श्वानावरणकी अघन्य स्थितिका बन्धक जीव चार श्वानावरण, नौ दर्शनावरण, साता-वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पुरुषवेद, हास्य, रति, भय, जुगुप्सा, देवगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वैक्रियिक श्राङ्गोपांग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्तविहायोगति, बसचतुष्क, स्थिर श्रादि छह, निर्माण, उद्यगीत्र श्रीर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे यन्धक होता है जो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और ब्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जधन्यकी अपेका अजधन्य एक समय ऋधिकसे लेकर पल्यका ऋसंख्यातवाँ भाग ऋधिकतक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार इन प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए । किन्तु ऐसी श्रवस्थामें वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जधन्यकी अपेचा अजधन्य, एक समय अधिकसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है । श्रसाता चेदनीयकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवका भङ्ग सामान्य नारकियोंके समान है । इतनी विशेषता है कि देवगति संयुक्त कहना चाहिए ।

३७७. मणुसगदि० ज०हि०वं० श्रोरालि०-श्रोरालि० श्रंगो०-वज्ज०-मणुसाणु० णि० वं० । तं तु० । पुरिस० उच्चा० णि० वं० संखें ज्ञभा० । एवं सव्वाणं धुवि-गणं । सादासाद० चदुणोक० थिरादितिषिणयुगलं सिया० संखें ज्ञभाग० । एवं तं तु पदिदाणं । इत्थिवं०--एवुंस०--तिरिक्खग०--पंचसंदा०--पंचसंदा०--पंचसंदा०-श्रप्पसत्थ०-द्भग-दुस्सर-श्रणादें० हेट्टा उवरिं मणुसगदिभंगो । एवरि वेदविसेसा जाणिद्व्या । एवरि सत्थाणभंगो । एवरि इत्थिवं० मणुसगदि--देवगदिसंजुत्तं काद्व्यं । चदुश्रायु० श्रोघं । एवरि धुवियाश्रो ताश्रो एि० वं० विद्याणपदिदं वंधदि संखें ज्ञभा० संखेज्जगु० । परियत्तमाणियाश्रो सिया० विद्याणपदिदं वंधदि संखें ज्ञभा० संखेज्जगु० । एरियत्तमाणियाश्रो सिया० विद्याणपदिदं वंधदि संखेजभा० संखेज्जगु० । एरियत्तमाणियाश्रो सिया० विद्याणपदिदं वंधदि संखेजभा० संखेज्जगु० । एरियत्तमाणियाश्रो सिया० विद्याणपदिदं वंधदि संखेजभा० संखेजगु० । एरियत्तमाणियाश्रो सिया० विद्याणपदिदं वंधदि संखेजभा० संखेजगु० । एरियत्रमादि-चिर्यतिरिक्खश्रपज्जत्ता० एरियोघं । एवरि दोश्रायु० जोणिपियभंगो ।

३७७. ममुख्यगतिकी जधन्य स्थितिका वन्धक जीव श्रीदारिक शरीर, श्रीदारिक श्रांगोपांग, वज्जर्षभनाराचसंहनन श्रौर मनुष्यगत्यानुपूर्वी इनका नियमसे वन्धक होता है जो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है यदि श्रजघन्य स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेत्ता श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका सन्धक होता है। पुरुषवेद श्रौर उद्यगोत्रका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे ु संख्यातवां भाग अधिक स्थितिका यन्धक होता है। इसी प्रकार सब धुवबन्धवाली प्रकृतियोंका जानना चाहिए। सातावेदमीय, श्रसातावेदनीय, चार नोकषाय और स्थिर अदि तीन युगल इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अज्ञघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार "तं तु" रूपसे पठित प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सिन्न-कर्ष जारना चाहिए। स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, तिर्यञ्चगति, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, क्रप्रशस्तविहायोगति, दुर्भग, दुस्वर ब्रौर ब्रनादेय इनका नीचे ऊपर मनुष्यगतिके समान भक्त है। इतनी विशेषता है कि वेद विशेष जानना चाहिए। नामकर्मकी प्रकृतियोंका भक्त स्वस्थानके समान है। इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेदको मनुष्यगति ख्रौर देवगति सहित कहना चाहिए। चार श्रायुश्रोंका भङ्ग श्रोधके समान है। इतनी विशेषता है कि जो ध्रुवबन्ध-वाली प्रकृतियाँ हैं उनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे अज्ञचन्य दो स्थान पतित स्थितिका बन्धक होता है या तो संख्यातवाँ भाग ऋधिक स्थितिका बन्धक होता है या संख्यातगुर्णी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। परावर्तमान प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित अवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे अजधन्य दो स्थान पतित स्थितिका बन्धक होता है। या तो संख्यातवां भाग त्रिधिक स्थितिका बन्धक होता है या संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। नरकगति, चार जाति, नरक-गस्यातुपूर्वी, श्रातप श्रीर स्थावर श्रादि चार इनकी मुख्यतासे सन्निकर्ष सामान्य तिर्यञ्चोंके समान जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि संख्यातवाँ भाग ऋधिक करना चाहिए। पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्च अपर्याप्तकोंका भङ्ग सामान्य नारिकयोंके समान है। इतनी विशेषता है कि दो श्रायुर्वोका सङ्ग योनिमती तिर्यञ्चोंके समान है।

- ३७८. मणुस०३ खवगपगदी० खोघं। देवगदि०४ ख्राहार०भंगो०। णिरय-गदि-णिरयाणु० खोघं। सेसं पढमपुढविभंगो। मणुसख्रपज्जत्तेसु पंचिदियतिरिक्ख-अपज्जत्तभंगो।
- ३७६. देवेसु शिरयोघं । एवरि एइंदिय-आदाव-थावरं शादव्वं । एवं भवण०-वाणवेंत० । जोदिसि०-सोधम्भीसा० विदियपुढिवभंगो । एवरि एइंदिय-आदाव-थावर० भाणिदव्वा । सराकुमार याव सहस्सार ति विढियपुढिवभंगो । एवं चेव आणद याव एवगेवज्ञा ति । एवरि तिरिक्तगदिचदुकं वज्ञ । अणुदिस याव सव्वहा ति पढम-दंडओ विदियपुढिवभंगो । एवं विदियदंडओ वि । असादा०-मणुसायु० शि० ।
- ३८०. सव्वण्इंदिएसु तिरिक्खोघं । विगलिंदियपज्जत्तापज्जत्त-पंचिदिय-तस-अपज्जत्त० पंचिदियतिरिक्खअपज्जत्तभंगो । पंचिदिय-पंचिदियपण्जत्त० खवगपगदीणं स्रोघं । सेसाणं पंचिदियतिरिक्खभंगो ।
- ३८१. पंचकायाणं तिरिक्खोधं । एविर तेउ०--वाउ० तिरिक्खगदि०--तिरि-क्खाणु०--णीचा० पुत्र्वं काद्व्यं । तस-तसपज्जत्ता स्ववगपगदीणं मूलोधं । सेसाणं मणुसोधं । एविर वेउन्वियद्धकं श्रोधं ।
- ३७८. मनुष्यत्रिकमें चपक प्रकृतियोंका भङ्ग श्रोधके समान है। देवगतिचतुष्कका भङ्ग श्राहारक शरीरके समान है। नरकगति श्रीर नरकगत्यानुपूर्वीका भङ्ग श्रोधके समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग पहली पृथिवीके समान है। मनुष्य श्रपयप्तिकोंमें पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्च श्रपर्यप्तिकोंके समान है।
- ३७९. देवोंमें सामान्य नारिकयोंके समान भक्त है। इतनी विशेषता है कि एकेन्द्रिय जाति, श्रातप श्रीर स्थावर प्रकृतियाँ जाननी चाहिए। इसी प्रकार भवनवासी श्रीर व्यन्तर देवोंके जानना चाहिए। ज्योतिष्क, सौधमं श्रीर पेशान कल्पके देवोंमें दूसरी पृथिवीके समान भक्त है। इतनी विशेषता है कि एकेन्द्रिय जाति, श्रातप श्रीर स्थावर प्रकृतियाँ कहनी चाहिए। सनत्कुमार कल्पसे लेकर सहस्रार कल्प तकके देवोंमें दूसरी पृथ्वीके समान भक्त है। तथा इसी प्रकार श्रानत कल्पसे लेकर नी श्रेवेयक तकके देवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि तिर्यञ्चमति चतुष्कको छोड़कर सिक्तकर्ष जानना चाहिए। श्रानुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें प्रथम दएडकका भक्त दुसरी पृथिवीके समान है। इसी प्रकार दूसरा दएडक भी जानना चाहिए। तथा श्रसाता वेदनीय श्रीर मनुष्यायुका नियमसे बन्धक होता है।
- ३८०. सब एकेन्द्रियोंमें सामान्य तिर्यञ्चोंके समान भंग है। विकलेन्द्रिय पर्याप्त, विकलेन्द्रिय अपर्याप्त, पञ्चेन्द्रिय अपर्याप्त और त्रस अपर्याप्त जीवोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान है। पञ्चेन्द्रिय और पञ्चेन्द्रिय पर्याप्त जीवोंमें जपक प्रकृतियोंका भङ्ग अधिके समान है। रोष प्रकृतियोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान है।
- ३८१. पॉॅंच स्थावर कायिक जीवोंका मङ्ग लामान्य तिर्यञ्चोंके समान है। इतनी विशेषता है कि श्राग्निकायिक श्रीर वायुकायिक जीवोंमें तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी श्रीर नीचगोत्र इनको पहिले कहना चाहिए। त्रस श्रीर जस पर्याप्त जीवोंमें चपक प्रकृतियोंका भङ्ग मूलोघके समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य मनुष्योंके समान है। इतनी विशेषता है कि वैकिथिक छः श्रोधके समान है।

३८२. पंचमण्ड-तिरिण्वचि० श्राभिणिवोधि०श्रादि श्रोघं। शिहाणिहाए ज०िह्वं० पंचणा॰-चदुदंस०-साद्वं०--चदुसंज०-पुरिस०-जस॰--उच्चा०--पंचंत० णि॰ बं० श्रसंखेंज्जगु॰। पचलापचला-थीणिगिद्धि-मिच्छत्त-श्रणंताणुवंधि०-४ णिय० वं०। तं० तु०। शिहा-पचला-श्रद्धकसा०-हस्स-रिद--भय--दुगुं०-देवगिद-वेडिवय०-तेजा॰-क॰-समचदु०-वेउिवव्श्रंगो०-वरण्०४--देवाणु॰-श्रगु०४--पसत्थवि०-तस०४-थिरादिपंच-शिभि० शि० बं० संखेंजजगु०। एवं थीण्गिद्धि०३-मिच्छ०-श्रणंताणु-वंधि०४।

३८३. शिहाए ज०िंडिवं० खवगपगदीयां शिहाशिहाए भंगो । पचला शि० बं० । तं तु॰ । हस्स-रदि-भय-दु॰--देवगदि--पसत्थसत्तावीसं शि॰ बं॰ संखेंर्जजगु० । झाहारदुगं तित्थयरं सिया॰ संखेंरजगु० । एवं पचला० ।

३८४. ऋसादा॰ ज०६०वं० खवगपगदीएां सिहाए भंगो । सिहा-पचला-भय

३८२. पाँच मनोयोगी और तीन वचनयोगी जीवोंमें श्रामिनवोधिक ज्ञानावरण श्रादिका भङ्ग श्रोधके समान है। निद्रानिद्राकी जघन्य स्थितिका बन्धक पाँच श्रानावरण, चार दर्शनावरण, सातावेदनीय, चार सद्भ्वलन, पुरुषवेद, यद्भकोति, उच्चगोत्र श्रीर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे श्रज्ञघन्य श्रसंख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। प्रचलायचला, स्थानगृद्धि, मिथ्यान्य श्रीर श्रनन्तानुवन्धी चार इनका नियमसे बन्धक होता है किन्तु पह जघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है श्रीर श्रज्ञचन्य स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रज्ञचन्य स्थितिका भी वन्धक होता है तो नियमसे जघन्यको श्रपंजा श्रज्ञचन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका असंख्यातचौँ भाग श्रधिक तक स्थितिका वन्धक होता है। निद्रा, प्रचला, श्राष्ट कपाय, हास्य, रित, भय, जुगुप्ता, देवगति, प्रक्रियक श्रर्राण, निजसशरीय, कार्मण्यारीय, समचनुरस्रसंख्यान, वैकियक श्रागोपांग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वो, अगुरुलधुचनुष्क, प्रशस्त विहायोगित, त्रसचनुष्क, स्थिर श्रादि पाँच श्रीर निर्माण इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे श्रज्ञघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्य श्रीर श्रनन्तानुवन्धी चारको मुख्यतासे सन्धिकर्य जानना चाहिए।

३८३. निद्राकी जघन्य स्थितिक वन्धक जीवके सब प्रकृतियोंका भक्ष निद्रानिद्राके समान है। प्रचलाका नियमसे वन्धक होता है। जो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। जो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेत्ता अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका वन्धक होता है। हास्य, रित, भय, जुगुण्सा, देवगित आदि प्रशस्त सत्ताईस प्रकृतियाँ इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। आहारक द्विक और तीर्थकर इनका कदाचित् बन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका वन्ध होता है। इसी प्रकार प्रचला प्रकृतिकी मुद्यताले स्विकार जानना चाहिए।

३८४. श्रसाता चेदनीयकी अधन्य स्थितिके चन्धक जीवके चपक प्रकृतियोंका सङ्ग निद्राके समान है । निद्रा, प्रचला, भय, जुगुल्ला, देवगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, चैकियिक दुगुं ०--देवगदि--पंचिदि०--वेउव्वि०--तेजा०--क्र०-समचढु०--वेउव्वि०श्रंगो०-वएए।०४-देवाणु०-त्रगु०४--पसत्थ०--तस०४--सुभग--सुस्सर--त्रादेँ०--एिमि० एि० वं० संखेँ-उजगु०। हस्स-रदि-थिर-सुभ० सिया० संखेजनगु०। जस० सिया० श्रसंखेँजगु०। श्ररदि--श्रथिर--श्रमुभ--श्रजस० सिया०। तं तु०। एवं श्ररदि--सोग--श्रथिर--श्रसुभ-श्रजस०।

३८५. ऋषस्चक्खाणकोघ॰ ज॰डि०वं० खवगपगदीणं शिदाए भंगो । तिष्णिक० शि० बं० । तं तु० । सेसाणं शिदाए भंगो । एवं तिष्णिकसा० ।

३८६, पच्चक्खाणकोघ० ज०डि०वं० खत्रगपगदीर्ण शिदाए भंगो । सेसास्रो हेट्टा उवरि संखेऽजगु० । तिरिशाक० शि० वं० । तं० तु० । एवं तिरिशाक० ।

शरीर, तैजस शरीर, कार्मण्शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वैकियिक आङ्कोषाङ्क, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्तिविहायोगित, त्रसचतुष्क, सुमग, सुस्वर, आदेय और निर्माण इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। हास्य, रित, स्थिर और शुभ इनका कदाबित् बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका वन्धक होता है। यदा बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका वन्धक होता है। यशाकीर्तिका कदाबित् वन्धक होता है। अरित, शोक, अस्थिर, अशुभ और अयशाकीर्ति इनका कदाबित् बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका स्थितिका बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका वन्धक होता है। इसी अकार अरित, शोक, अस्थिर, अशुभ और अयशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्य जानना चाहिए।

३८४. श्रप्रत्याख्यानावरण कोधकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवके लपक प्रकृतियोंका मङ्ग निदाके समान है। तीन कषायोंका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थिति का भी बन्धक होता है । यदि अजधन्य स्थिति का बन्धक होता है । यदि अजधन्य स्थिति का बन्धक होता है । यदि अजधन्य स्थिति का बन्धक होता है तो नियमसे जधन्यकी अपेत्रा श्रजधन्य एक समय श्रिधिकसे लेकर प्रत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग श्रिधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। श्रेप प्रकृतियोंका भङ्ग निदाके समान है। इसी प्रकार तीन कषायोंकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए।

३८६. प्रत्याख्यानावरण कोधको जघन्य स्थितिके बन्धक जीवके चपक प्रकृतियोंका भङ्ग निद्राके समान है। शेप प्रकृतियोंका नीचे ऊपर नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणो अधिक स्थितिका बन्धक होता है। तीन कपायोंका नियमसे बन्धक होता है, किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेता अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पत्यका असंख्यातयाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार तीन कपायोंकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए।

३८७. इत्थिवे० ज॰ हि०वं० पंचणा = -चदुसंज०--पंचंत० णि० वं० असंखेंज्जगु० । पंचदंस०--मिच्छ०--वारसक०--भय--दुगुं०--पंचिदि०--तेजा०--क०--वणण०४-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्सर--आदें०--णिमि० णि० वं० संखें-जगु० । सादा०-जस०-उच्चा० सिया० संखेंज्जगु० । असादा०--चदुणोक०--तिणिण-गदि-दोसरीर--समचदु०-दोद्यंगो०-वज्जरि०-तिणिआआणु०--उज्जो०--थिराथिर--सुभा-सुभ-अजस०-णीचा० सिया० संखेंज्जगु० । णग्गोद०-सादि०-वज्जणारा० णाराय सिया० संखेंज्जभा०। एवं एवंस० । णवरि दोगदि-समचदु०-वज्जिरस०-दोआणु०-उज्जो०-थिराथिर-सुभासुभ-अज०-णीचा० सिया० संखेंजजगु० । चदुसंठा०-चदुसंघ० सिया० संखेंज्जभा०।

३८८. खायुगाएां चदुएएां पि खवगपगदीएां असंखेंज्जगु० । सेसाएां मणुसभंगो । ३८८. णिस्यगदि० जिब्हि॰वं॰ खवगपगदीएां खोघं । पंचदं०--असादा०-

३८७. स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच झानावरण, चार दर्शनावरण, चार सैं ज्वलन ग्रीर पाँच ग्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजधन्य क्रसंख्यातगुर्गी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। पींच दर्शनावरण, मिथ्यात्व, बारह कषाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेद्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्ण चतुष्क, श्रगुरु-लघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुखर, त्रादेय और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अज्ञघन्य संख्यातगुणी ऋधिक स्थितिका बन्धक होता है। साता वेदनीय, यशःकीतिं श्रीर उचगोत्रका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् त्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे त्राजघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। श्रसाता वेदनीय, चार नोकषाय, तीन गति, दो शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, दो त्राङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराचसंहनन, तीन त्रानुपूर्वी, उद्योत, स्थिर, श्रस्थिर, श्रम, श्रश्म, श्रयशःकीर्ति श्रीर नीचगीत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित अवस्थक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी ऋधिक स्थितिका बन्धक होता है। न्ययोधसंस्थान, स्वातिसंस्थान, वज्रनाराच संहनन और नाराच संहनन इनका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित् श्रयन्थक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसं अज्ञघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसीअकार नपुंसकवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि दोगति, समचतुरस्रसंस्थान, वज्जर्पभनाराचसंहनन, दो त्रानुपूर्वी, उद्योत, स्थिर, ऋस्थिर, शुभ, ऋशुभ, अयशःकीर्ति और तीचगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् ऋबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे ऋजधन्य संख्यातगुणी ऋधिक स्थितिका बन्धक होता है। चार संस्थान और चार संहतन इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अज्ञघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है।

२८८. चार श्रायुश्रोंकी भी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव चपक प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजधन्य श्रसंख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग मनुष्योंके समान है।

३८९. नरकगतिकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवके सपक प्रकृतियोंका भङ्ग स्रोघके

भिच्छ०--बारसक०--अरिद-सोग--भय--दु०--पंचिदि०-वेउव्व०--तेजा०-क०-वेउव्व०-अंगो०--वरण्०४-अगु०-तस०४-अथिर-असुभ-अजस०--िण्मि०-णीचा० णि० वं० संखेडजगु०। णवुंस०--हुंडसं०--अप्यसत्थ०--दूभग--दुस्सर--अणादे० णि वं० संखे-ज्जभा०। णिरयाणु० णि० वं०। तं तु०। एवं णिरयाणु०।

३६०. तिरिक्खगदि० ज०िड० संवगाणं ि एरयगिदभंगो । पंचदंस०-मिन्छ०-वारसक०-इस्स-रिद-भय-दु०-पंचिदि०-झोरालि०-तेजा०--क०-समचदु०-झोरालि० झंगो०--वज्जरि०--वरण्०४-झगु०४-पसत्थ०-तस०४-थिरादिपंच िण्० वं० संखेंज्जगु० । तिरिक्खाणु०--णीचा० शि० वं० । तं तु० । उज्जो० सिया० । तं तु० ! एवं तिरिक्खाणु०-उज्जो०-णीचागो० ।

३६१. मणुसग० ज०द्वि०वं० श्रोरालि॰--श्रोरालि०श्रंगो॰--वज्जरि०--मणु-समाम है। पाँच दर्शनावरण, श्रसातावेदनीय, मिथ्यात्व, बारहकषाय, श्ररति, श्रोक, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मणुशरीर, वैक्रियिक श्राङ्गोणङ्ग, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघु, जसचतुष्क, श्रस्थिर, श्रशुभ, श्रयशःकीर्ति, निर्माण श्रीर नीचगोत्र इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे श्रज्ञचन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। नपुंसकवेद, हुण्डसंस्थान, श्रप्रशस्त विहायोगित, दुर्भग, दुस्वर श्रीर श्रनादेय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रज्ञघन्य संख्यातवाँभाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। नरकगत्यानुपूर्वीका नियमसे वन्धक होता है,किन्तु वह ज्ञचन्य स्थितिका बन्धक होता है। गरिक श्रज्ञचन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रज्ञचन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेत्वा अज्ञचन्य, एक समय श्रिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँभाग श्रिकतक स्थितिक। बन्धक होता है। इसी प्रकार नरकगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष ज्ञानना चाहिए।

२९०. तिर्यञ्चगितकी जघन्य स्थितिके चन्धक जीवके ज्ञपक प्रकृतियोंका भक्ष नरकगितके समान है। पाँच दर्शनावरण, मिथ्यात्व, बारहकषाय, हास्य, रित, भय, जुगुष्सा, पञ्चेन्द्रयज्ञाति, श्रौदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्रसंस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वज्रर्थभनाराच संहनन, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगिति, जसचतुष्क श्रौर स्थिर आदि पाँच इनका नियमसे चन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी श्रौर नीचगोत्र इनका नियमसे बन्धक होता है, किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेक्षा श्रजधन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवों भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्थक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है। इसीप्रकार तिर्यञ्चन्यक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेक्षा श्रजघन्य, एक समय श्रधिकसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवों भाग श्रधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। इसीप्रकार तिर्यञ्चन्यका श्रसंख्यातवों भाग श्रधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। इसीप्रकार तिर्यञ्चन्यका श्रसंख्यातवों भाग श्रधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। इसीप्रकार तिर्यञ्चन्यन्यनुपूर्वी, उद्योत श्रौर नीचगोत्रकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२९१. मनुष्यगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव औदारिक शरीर, श्रीदारिक श्रांगोपांग, वज्रर्वभनाराच संहनन श्रीर मनुष्यगत्यानुपूर्वी इनका नियमसे वन्धक होता साखु० णि॰ वं॰ ! तं तु॰ | सेसाएां तिरिक्खगदिभंगो | एवरि तित्थय०सिया० संखेजजगु० | एवं मणुसगदिपंचगस्स |

३६२. देवगदि० ज०ट्टि०बं० पंचणा०--चदुदंस०--सादा०--चदुसंज०--पुरिस०-जस०--उच्चा०--पंचंत० णि० वं० असंखेंज्जगु०। इस्स--रदि--भय--दु० णि० वं० संखेज्जगु०। पंचिदियादिपसत्थसत्तावीसं णि० वं०। तं तु०। तित्थय० सिया०। तं तु०। एवमेदात्रो ऍकमेर्कस्स । तं तु०।

३६३. एईदि० ज०ड्डि०वं खिवगाणं त्रोघं । पंचदं०--मिच्छ०--बारसकसा०-भय--दु०--णाम संत्थाणभंगो णीचा० णि० बं० संखेंज्जगु०। सादा०--जस० सिया०

है। किन्तु वह जधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमले जधन्यकी अपेचा अजधन्य, एक समय अधिक ले लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। शेप प्रकृतियोंका भङ्ग तिर्यक्षगतिके समान है। इतनी विशेषता है कि तीर्थंकर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमले अजधन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसोप्रकार मनुष्यगतिपञ्चककी मुख्यताले सचिकर्ष जानना चाहिए।

३९२. देवगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच झानावरण, चार दर्शनावरण, सातावेदनीय, चार सं ज्वलन, पुरुषवेद, यशःकीर्ति, उच्चगोत्र श्रौर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य श्रसंख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। हास्य, रित, भय श्रीर जुगुप्सा इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यात्रगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। पञ्चेन्द्रिय जाति श्रादि प्रशस्त सत्ताईस प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और ब्रज्जघन्य स्थितिका भो बन्धक होता है। यदि ब्रज्जघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेत्ता श्रजघन्य, एक समय अधिकसे छेकर पल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। तीर्थंकर प्रकृतिका कदाचित बन्धक होता है और कदाचित् ग्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजधन्य स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेन्ना अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सक्षिकर्षं जानना चाहिए। किन्तु ऐसी अवस्थामें वह जघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है ग्रौर ग्रजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि ग्रजधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेद्या अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पत्यका ग्रसंख्यातचौँ भाग श्रधिकतक स्थितिका वन्धक होता है।

३९३. एकेन्द्रिय जातिकी जघन्य स्थितिके वन्धक जीवके चपक प्रकृतियांका भङ्ग श्रोधके समान है। पाँच दर्शनांवरण, मिथ्यात्व, वारह कषाय, भय, जुगुष्सा, नाम कर्मकी स्वस्थान भङ्गवाली प्रकृतियाँ श्रौर नीचगोत्रका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे श्रजधन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। साता वेदनीय श्रीर यशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है।

असंखेंज्जगु० । असादा०--चदुणोक०-थिराथिर--मुभामुभ--अज०-उज्जो० सिया० संखेंज्जगु० । एवु'स०-हु'ड०--दूभग-अणादें० णि० बं० संखेंज्जभा० । एवं वीइं०-तीइं०-चदुरिं० हेटा उवरिं एइंदियभंगो । एाम० सत्थाराभंगो ।

३६४. राग्गोद० ज०डि०वं० खिवगार्ण श्रोघं।सेसार्ण इत्थिवेदभंगो। साम० सत्थाराभंगो। सन्वार्ण संघड०--श्रपसत्थ०--दूभग--दुस्सर-श्रसार्देज्जार्ण हेट्टा उवरिं इत्थिवेदभंगो। सावरि कि वि विसेसो जासिदन्त्रो। वेदेस साम श्रपपासे सत्थाराभंगो।

३६५. विचजोगि--असचमोसविचजोगि॰ तसपज्जत्तभंगो । कायजोगि-अोरा-लियकायजोगि० स्रोघं । स्रोरालियमिस्से तिरिक्त्लोघं । एवरि देवगदि॰ ज०िंड॰ वं॰ पंचणा॰--छदंसणा॰--सादावे॰-बारसक॰-पंचणोक॰--पंचिदि॰-तेजा०-क॰-समचदु०-वएण०४--अगु०४--पसत्थ०--तस०४--थिरादिछ॰--णिमि०--उच्चा०-पंचंत० णि० वं॰ संसेज्जगु० । वेडिव्वि॰--वेडिवि० स्रंगो०--देवागु० णि० वं० । तं तु० । तित्थय०

यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रज्ञधन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। असाता वेदनीय, चार नोकषाय, स्थिर, श्रस्थर, श्रभ, श्रश्रम, श्रयशकीर्ति और उद्योत इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रज्ञधन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका वन्धक होता है। नपुंसकवेद, हुण्डसंस्थान, दुर्भग श्रीर श्रनादेय इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे श्रज्ञधन्य संख्यातवाँभाग श्रिधिक स्थितिका वन्धक होता है। इसीप्रकार द्वीन्द्रिय जाति, श्रीन्द्रियजाति श्रीर चतुरिन्द्रिय जातिकी जधन्य स्थितिके बन्धक जीवके नीचे अपरकी प्रकृतियोंका भङ्ग एकेन्द्रिय जातिके समान है। तथा नामकर्मकी प्रकृतियोंका भङ्ग स्वस्थानके समान है।

३९४. न्ययोध परिमण्डल संस्थानकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवके ज्ञपक प्रकृतियोंका भङ्ग श्रोधके समान है। रोप प्रकृतियोंका भङ्ग स्त्रीवेदके समान है। नामकर्मकी प्रकृतियोंका भङ्ग स्वस्थानके समान है। सब संहनन, ग्रप्रशस्त विद्वायोगिति, दुर्भग, दुस्वर श्रीर ग्रानादेय इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जोवके नीचे ऊपरकी प्रकृतियोंका भङ्ग स्त्रीवेदके समान है। इतनी विशेषता है कि कुछ विशेष जानना चाहिए। तीन वेदोंमें नामकर्मकी श्रपनी-श्रपनी प्रकृतियोंका भङ्ग स्वस्थानके समान है।

३९४. वचनयोगी श्रीर श्रस्त्यमृप्यचन्ननयोगी जीवोंमें सब प्रकृतियोंका भङ्ग त्रस पर्याप्तकोंके समान है। काययोगी श्रीर औदारिक काययोगी जीवोंमें श्रीघके समान है। श्रीदारिक मिश्र काययोगमें सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है। इतनी विशेषता है कि देवगतिकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, सातावेदनीय, बारह कपाय, पाँच नोकपाय, पञ्चेन्द्रिय ज्ञाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वर्ण्-चतुष्क, श्रगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, त्रसचतुष्क, स्थिर श्रादि छह, निर्माण, उच्च-गोत्र श्रीर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे श्रज्ञघन्य संख्यातगुणी श्रिष्ठक स्थितिका बन्धक होता है। वैकियिक शरीर, वैकियिक श्राङ्गोणङ्ग श्रीर देवगत्यातुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और श्रज्ञघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रज्ञघन्य स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेचा श्रज्ञघन्य एक समय श्रिष्ठकसे लेकर पर्यका श्रसंख्यातवाँ तो नियमसे जघन्यकी श्रपेचा श्रज्ञघन्य, एक समय श्रिष्ठकसे लेकर पर्यका श्रसंख्यातवाँ

सिया । तं तु । एवमेदात्रो ऍक्रमें क्रस्स ! तं तु ।

३६६. वेउव्वियका॰ आभिणिदंडओ जोदिसियपहमदंडओ व्व असाद॰ विदिय-दंडय॰ । णिहाणिहाए ज॰हि॰वं॰ पचलापचलादीणं मिच्छ०--अणंताणुवंधि०४ णियमा वं॰ । तं तु० । तिरिक्खग०-तिरिक्खाणु०-उज्जो० सिया० । तं तु० । मणु-सग०--मणुसाणु०--उच्चा० सिया॰ संखेजजगु॰ । धुविगाणं णि० वं० संखेजगु० । एवं थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुवधि०४ ।

३६७. इत्थिवे॰ ज॰ि६०वं० पंचणा०--णवदंसणा०--मिच्छ॰--सोलसक०-भय-दु०-पंचिदि॰--स्रोरात्ति०--तेजा०--क॰--स्रोरात्ति०स्रंगो॰--वएण०४--स्रगु०४-पसत्थ०-

भाग अधिक तक स्थितिका यन्धक होता है। तीर्थंकर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो जधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजधन्य स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे जधन्यकी अपेचा अजधन्य, एक समय अधिकसे लेकर पर्यका असंख्यातवों भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका सिचिकर्ष जानना चाहिए। किन्तु ऐसी अबस्थामें वह जधन्य स्थितिका भी वन्धक होता है और अजधन्य स्थितिका भी वन्धक होता है और अजधन्य स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अजधन्य स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे जधन्यकी अपेचा अजधन्य, एक समय अधिकसे लेकर पर्यका असंख्यातवों भाग अधिकतक स्थितिका वन्धक होता है।

३९६, वैकिथिक काययोग्में श्रामिनिबोधिक प्रथमदगुडक ज्योतिषी देवींके प्रथम द्गडकके समान है तथा त्रसाता वेदनीय दूसरा दगडक भी इसीप्रकार है । निद्रानिद्राकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव प्रचलाप्रचला ग्रादि, मिथ्यात्व ग्रीर श्रमन्तानुबन्धी चारका तियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजधन्य स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रज्ञघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेता श्रजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पत्यका असंख्यातवों भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। तिर्यञ्चगित, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी श्रीर उद्योत इनका कदाचित् यन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जवन्य स्थितिका भी वन्धक हीता है श्रीर श्रजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेचा श्रजघन्य एक समय क्रधिकसे लेकर परुषका असंख्यातवीं भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। मनुष्य गति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी श्रीर उच्चगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है कदाचित अवन्यक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजधन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। ध्रुचवन्धवाली प्रकृतियोंका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे अज्ञघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व श्रौर श्रनन्तानुबन्धी चारकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३६७. स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुष्सा, पञ्चेन्द्रियजाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगित,

तस०४-सुभग-सुस्सर--त्रादेँ०-णिमि०--पंचंत० णि० वं० संखेँज्ञगु० । सादासाद०-चदुणोक०--दोगदि--सभचदु०--वज्जरि०--दोत्राणु०-उज्जो०-थिराथिर--सुभासुभ-जस०-त्रजस०--दोगोदं सिया० संसेँज्ज० । दोसंठा०--दोसंघ० सिया० संखेँज्जभा० । एवं णवु'स० । णवरि पंचसंठा०-पंचसंघ०-दोत्रायु० देवोघं ।

३६८. णगोद् जिंदि विच्या पंचणा विस्ता विन्सि स्वर्यस्या विस्तर्य से लसक विस्ति विद्या विद्या

त्रस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अज्ञधन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। साता वेदनीय, ग्रस।ता वेदनीय, चार नोकषाय, दोगित, समचतुरस्रसंस्थान, वज्रवंभनाराच-संहनन, दो आनुपूर्वा, उद्योत, स्थिर, ग्रस्थर, श्रुभ, अश्रुभ, यशःकीर्ति, अयशःकीर्ति और दो गोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। दो संस्थान और दो संहनन इनका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है। इसी प्रकार नपुंसकवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि पाँच संस्थान, पाँच संहनन और दो आयुका भन्न सामान्य देवोंके समान है।

३९८. न्यग्रोधपरिमण्डलसंस्थानकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच झानावरण, नौ दर्शन(वरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पुरुषवेद, भय, जुंगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रीदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रीदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, ब्रादेय, निर्माण श्रौर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजधन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका वन्धक होता है। साता वेदनीय, श्रसाता वेदनीय, चार नोकषाय, दो गति, वजुर्षभनाराच संहनन, दो त्रानुपूर्वी, उद्योत, स्थिर, ग्रस्थिर, ग्रुभ, ग्रश्भ, यशकीर्ति, श्रयशःकीर्ति, नीचगोत्र श्रौर उच्चगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् ग्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे ग्रजधन्य संख्यातगुर्गी ग्रधिक स्थितिका यन्धक होता है । वज्जनाराचसंहननका कदाचित् यन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रजधन्य स्थितिका भो बन्धक होता है। यदि श्रजधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यको अपेत्ता अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पर्व्यका असंख्यातवीं भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार बज़नाराचसंहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। चार संस्थान, चार संहनन, ऋप्रशस्तविहायीगति, दुर्भग, दुस्वर श्रौर श्रनादेय इनकी मुख्यतासे सन्तिकर्ष न्यश्रोधपरिमण्डल संस्थानके समान है । इतनी विशेषता है कि कुन्तक संस्थान, वामन संस्थान, ऋईनाराच संहनन श्रीर कीलक भंगो । एवरि खुज्जसंठा०-वामणसंठा०-श्रद्धणारा०-खीलिय० इत्थि० सिया० संखेजा-भाग० । पुरिस० सिया० संखेजजगु० । हुंउ०-श्रसंपत्त०--श्रपसत्थ०-दूभग-दुस्सर-श्रणादे० पुरिस० सिया० संखेजनगु० । इत्थिवे०-एाबुंस० सिया० संखेजनभा० ।

३६६. एइंदि० ज०द्वि०वं० पंचणा०-णवदंसणा०-भिच्छ०-सोलसक०-भय-दु०--तिरिक्खग०--श्रोरालि०--तेजा०--क०-वरणा०४-तिरिक्खाणु०--श्रगु०४--बादर-पज्जत्त-पत्ते०--शिमि०--णीचा०--पंचंत० णि० वं० संखेज्जगु० । सादासादा०-चदु-गोक०-उज्जो०-थिराथिर-सुभासुभ-श्रजस० सिया० संखेज्जगु० । एवुंस०-हुंडसं०-दुभग--श्रणादे० णि० वं० संखेज्जभाग० । श्रादाव० सिया० । तं तु० । थावरं णि० वं० । तं तु० । एवं श्रादाव-थावर० । एवं वेडिव्वियमिस्स० । णवरि मिच्छत्त-

संस्थानकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव स्त्रीवेदका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातवीं भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। पुरुषवेदका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् अबन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। हुएइसंस्थान, असम्ब्राप्तास्पादिका संहनन, अप्रशस्त विहायोगित, दुर्भग, दुस्वर श्रीर अनादेय इनकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव पुरुपवेदका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् अबन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका वन्धक होता है। स्थिवेद श्रीर नपुंसकवेदका कदाचित् बन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका वन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे कदाचित् बन्धक होता है श्रीर नपुंसकवेदका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर नपुंसकवेदका कदाचित् अजघन्य संख्यातवीं भाग अधिक स्थितिका वन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो

३९९. एकेन्द्रिय जातिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच झानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्य, सोलहकषाय, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, वादर, पर्याप्त, प्रत्येक, निर्माण, नीच गोत्र श्रौर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे क्रजघन्य संख्यातगुणी क्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। साता वेदनीय, श्रसाता वेदनीय, चार नोकपाय, उद्योत, स्थिर, श्रस्थिर, शुभ, श्रशुभ श्रीर श्रयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है ग्रौर कदाचित् ग्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अज्ञघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। नपुंसकवेद, हुएडसंस्थान, दुर्भग श्रीर श्रनादेय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजधन्य संख्यातवाँ भाग ग्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। श्रातपका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी ऋषेत्ता ऋजघन्य एक समय ऋधिकसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। स्थावरका नियमसे वन्धक होता है । किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है ऋौर ऋजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रज्ञघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेत्ता श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग श्रधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार क्रातप और स्थावरकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए।

पगदी यम्हि संखेँजगुणव्महियं तम्हि संखेँजभागव्भहियं कादव्वं । सम्मत्तपगदीश्रो संखेँजगुणव्महियात्रो ।

४००. ब्राहार०--ब्राहारमिस्स॰ ब्राभिणिवोधि॰ ज॰िट॰वं॰ चदुणा०-ब्रदं--सणा०-सादा०-चदुसंज॰-पंचणोक०-देवगदि-पसत्थद्वावीस-उचा०-पंचंत० णि० वं० । तं तु० । तित्थय० सिया० । तं तु० । एवमेदाओं ऍक्कमेंक्स्स । [तं तु० ] ।

४०१. ग्रसादाः ज०द्वि०वं० पंचणाः ० छदंसणाः ०-चदुसंज०-पुरिसं०-भय-दु० देवगदि-पसत्थपणवीस-उचाः ०-पंचंतः णि० संखेजनभागः । इस्स-रदि-थिर-सुभ-जस०-तित्थयः सियाः संखेजनभागः । ग्रारदि-सोग--श्रथिर--श्रसुभ--त्रजस० सियाः । तं तु० । एवं श्रादि-सोग-श्रथिर-श्रसुभ-श्रजस० ।

इसी प्रकार वैकियिक मिश्रकाययोगमें अपनी प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सिन्नकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्व सम्बन्धी प्रकृतियाँ जहाँपर संख्यातगुणी श्रधिक कही हैं वहाँ पर संख्यातवां भाग अधिक कहनी चाहिए श्रीर सम्यक्त्व सम्बन्धी प्रकृतियाँ संख्यातगुणी श्रधिक कहनी चाहिए।

४००. श्राहारककाययोग श्रौर श्राहारक मिश्रकाययोगमें श्रामिनिवोधिक श्रानावरण की जघन्य स्थितिका यन्धक जीच चार श्रानावरण, छह दर्शनावरण, साता वेदनीय, चार सं-उवलन, पाँच नोकषाय, देचगित श्रादि प्रशस्त श्रद्धाईस प्रकृतियाँ, उद्यगित श्रीर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है, किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेत्ता श्रजघन्य, एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग श्रधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। तीर्थंकर प्रकृतिका कदाचित् वन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेत्ता श्रजघन्य, एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवों भाग श्रधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सिन्तकर्ष जानना चाहिए। किन्तु ऐसी श्रवस्थामें वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है ग्रीर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेत्ता श्रजघन्य, एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवों है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेत्ता श्रजघन्य, एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवों भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है।

४०१. श्रसातावेदनीयकी जधन्य स्थितिका वन्धक जीव पाँच झानावरण, छह दर्शनावरण, चार सं ज्वलन, पुरुषवेद, भय, जुगुप्सा, देवगित श्रादि पश्चीस प्रशस्त प्रहातियाँ, उद्यगोत श्रीर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रज्जघन्य संख्यातवाँ भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। हास्य, रित, स्थिर, श्रुभ, यशःकीर्ति और तीर्थंकर इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रज्जघन्य संख्यातवाँ भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। श्ररित, श्रोक, श्रस्थिर, श्रश्नभ श्रीर श्रयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो जधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रज्जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रज्जघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रज्जघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यको श्रोचा अजधन्य, एक समय श्रिधकसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार श्ररित, श्रोक, श्रस्थिर, श्रश्चभ और श्रयशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए।

- ४०२. देवायु॰ ज०डि०वं० पंचाणा॰-चदुदंस॰-सादावे०-चदुसंज॰-पंचाणोक०-देवगदि--पसत्थद्वावीस--उचा०--पंचंत० णि० वं० संखेंडजगु०। तित्थय॰ सिया० संखेंडजगु॰।
- ४०३. कम्मइग० ऋरेरालियभिस्सभंगो । एवरि तित्थय० ज०डि०वं मणुसमदि-पंचगस्स सिया० संखेँजगु० । देवगदि०४ सिया० । तं तु० पलिदोवमस्स ऋसंखेँजिदिभा० ।
- ४०४. इत्थि०-पुरिस० अभिणिबोधि० ज०दि०बं० चदुणा०-चदुदंस०-सादावे०-चदुसंज०-पुरिस०-जस०-उचा०-पंचंत० णि० बं० जहरूणा० | एवमण्ण-मण्णाएं जहण्णा० | सेसाओ पगदीओ पंचिदियभंगो |

४०५. णवुंसगे खिवगात्रो इत्थिवेदभंगो । सेसा पगदी मूलोघं ।

४०६ अवगदवे आभिणिबोधि ज०िड बंट चदुणार-चदुदंस०-सादा०-जस०-उच्चार-पंचंत० णि० वं० जहरूगा०। एवगण्णभएणस्स जहरूणार । चदुसंज० मृलोघं।

४०२. देवायुकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, साता बेदनीय, चार में ज्वलन, पाँच नोकपाय, देवगित आदि प्रशस्त अद्वाईस प्रकृतियाँ, उचगीत और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजधन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। तीर्थंकर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजधन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजधन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है।

४०३. कार्मण काययोगी जीवोंका भङ्ग श्रौदारिक मिश्रकाययोगी जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि तीर्थंकर प्रकृतिकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव ममुष्यगति पञ्जकका कदाचित् वन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रज्जघन्य संख्यातगुणी श्रिधक स्थितिका बन्धक होता है। देवगति चतुष्कका कदाचित् वन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है है, तो वह नियमसे श्रज्जघन्य पख्यका श्रसंख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है।

४०४. स्त्रीवेद श्रोर पुरुष्येद्दवाले जीवोंमें श्राभिनिबोधिक झानावरणकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव चार झानावरण, चार दर्शनावरण, साता वेदनीय, चार सं उवलन, पुरुषवेद, यशःकीर्ति, उच्चगोत्र श्रीर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे जघन्य स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार इन सबका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु ऐसी श्रवस्थामें वह नियमसे जघन्य स्थितिका वन्धक होता है। शेष प्रकृतियोंका भन्न पञ्चेन्द्रियोंके समान है।

४०४. नपुंसकवेदवाले जीवोंमें चपक प्रकृतियोंका भङ्ग स्त्रीवेदके समान है । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग मुलोघके समान है ।

४०६. श्रवगतवेदवाले जीवोंमें श्राभिनिवोधिक झानावरणकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव चार झानावरण, चार दर्शनावरण, सातावेदनीय, यशःकीति, उचगोत्र श्रीर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे जघन्य स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु ऐसी

४०७. कोथ-माण-माया० श्रोघं । एवरि खवगपगदीणं इत्थिवेदभंगो । मोह० विसेसा० । [कोहे] कोथसंज० [ज०हि॰वं॰] तिरिण्संज॰ सि०वं०िण् जहरणा॰ । पुरिस० श्रोघं । माणे माण्संज० ज०हि॰वं० दोएएं संज० सि०वं० सि० जहरणा० । मायाए मायसंज० ज०हि॰वं० लोभसंज० सि० वं० सि० जहरणा॰ । [लोभे लोभसंज०] मृलोघं ।

४०८. मदि०-सुद० तिरिवलोधं । विभंगे ऋाभिणिबोधि० ज०िड्डबं० चदुणा०-णवदंसणा०--सादा०--भिच्छ०-सोलसक०--पंचणोक०--देवगदिपसत्थहावीस--उच्चा०-पंचंत० णि० वं७ । तं तु७ । एवभेदाऋो ऍकमेंक्सस्स । तं तु० ।

त्रवस्थामें वह नियमसे ज्ञघन्य स्थितिका वन्धक होता है। चार सञ्ज्वलनका भङ्ग मूलोवके समान है।

४०७. क्रोध, मान और माया कपायवाले जीवोंमें श्रोधके समान भक्त है। इतनी विशेषता है कि स्रथक प्रकृतियोंका भक्त स्त्रीवेदके समान है। मोहनीयकी कुछ विशेषता है। क्रोधकपायमें क्रोध सं उचलनकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव तीन सं उचलनोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे जघन्य स्थितिका वन्धक होता है। पुरुषवेदका भक्त श्रोधके समान है। मान कपायमें मान सं उचलनकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव दो सै उचलनों का नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे जघन्य स्थितिका बन्धक होता है। माया कषायमें माया सञ्ज्वलनकी जघन्य स्थितिका बन्धक होता है। माया कषायमें माया सञ्ज्वलनकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव लोग सञ्ज्वलनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे जघन्य स्थितिका बन्धक होता है। लोग कषायमें लोग सञ्ज्वलनका भक्त मूलोघके समान है।

४० मत्यक्षानी श्रीर श्रुताक्षानी जीवोंमें श्रपनी सब प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य तिर्यञ्जोंके समान है। विभङ्ग क्षानी जीवोंमें श्राभिनिबोधिक क्षानावरण्की जघन्य स्थितिका यन्धक जीव चार क्षानावरण्, नौ दर्शनावरण्, साता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पाँच नोकपाय, देवगित श्रादि प्रशुस्त श्रुहाईस प्रकृतियाँ, उच्चगोत्र श्रीर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रजधन्य स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रजधन्य स्थितिका चन्धक होता है, तो नियमसे जघन्यको अपेदा श्रजधन्य एक समय अधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सिनकर्य जानना चाहिए। किन्तु ऐसी श्रवस्थामें वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेचा श्रजधन्य एक समय श्रिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग श्रिकतक स्थितिका वन्धक होता है।

४०९. ग्रसातायेद्नीयकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच श्वानावरण, नी दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, भय, जुगुष्सा, पुरुषवेद, पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस द्यारीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वर्णचतुष्क, ग्रगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायो गति, त्रस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, ग्रादेय, निर्माण श्रीर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे सुस्सर-ञ्चादे०-णिमि०पंचंतरा० णि० वं० संखें ज्ञगु० । इस्स-रिद्-तिरिणगिद-त्रोरालि०-वेडिव०सरीर-दोश्रंगो०-वज्जरि०-तिरिणश्राणु०-उज्जो०-थिर-सुभ-जस०-दोगोद० सिया० संखें ज्ञगु० । श्ररिद-सोग-श्रथिर-श्रसुभ-श्रजस० सिया० । तं तु० । एवं श्ररिद-सोग-श्रथिर-श्रसुभ-श्रजस० ।

४१०. इत्थिवे॰ ज॰टि०वं० पंचणा॰-णवदंसणा०-भिन्छत्त-सोलसक०-भय-दु॰-पंचिदि॰-तेजा॰-क०-वएण॰४--झगु०-पसत्थ०-तस०४--सुभग-सुस्सर-आदे०-णिमि०-पंचंत॰ णि० वं० संसेंज्जगु॰ । सादा०-हस्स-रदि-तिएणगदि-दोसरीर-सम-चदु०-दोझंगो०-वज्जरि०-तिएणझाणु०-उज्जो०-थिरादितिएण-दोगोद०-सिया-संसे-ज्जगु॰ । असादा०-अरदि-सोग दोसंडा०-दोसंघ०--ऋथरादितिएण॰ सिया० संसे-ज्जभा० । एवं णवुंस० । एवरि चदुसंडा०-चदुसंघ० सिया॰ संसेज्जभा० ।

बन्धक होता है जो नियमसे अजधन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। हास्य, रित, तीन गित, श्रीदारिक शरीर, यैक्षियिक शरीर, दो आक्षोपाक्ष, वर्ज्यभनाराच-संहनन, तीन आनुपूर्वी, उद्योत, स्थिर, शुभ, यशःकीर्ति श्रीर दो गोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् अबन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे अजधन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। श्ररित, शोक, श्रस्थिर, श्रशुभ श्रीर श्रयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है। यदि वन्धक होता है श्रीर श्रजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे जधन्यकी श्रपेत्वा अजधन्य, एक समय अधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग श्रधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार श्ररित, श्रोक, अस्थिर, श्रशुभ और अयशः-कीर्तिकी मुख्यतासे सन्तिकर्ष जानना चाहिए।

४१०. स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच क्षानावरण, नौ दर्शनावरण, मिध्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, प्रशस्तविहायोगित, त्रस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण और पाँच अन्तराय इनका नियमसे चन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। सातावेदनीय, हास्य, रित, तीन गित, दो शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, दो आङ्गोपाङ्क, वज्रषमनाराच संहनन, तीन आतुपूर्वी, उद्योत, स्थिर आदि तीन और दो गोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है। यदि वन्धक होता है। स्थानमसे अजघन्य संस्थान, दो संहनन और अस्थिर आदि तीन इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। इसी प्रकार नपुंसकवेदकी मुख्यत।से सिन्नकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि चार संस्थान और चार संहनन इनका कदाचित् बन्धक होता है और कटाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संह्यत।से सिन्नकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि चार संस्थान और चार संहनन इनका कदाचित् बन्धक होता है और कटाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातयों भाग अधिक स्थितका बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातयों भाग अधिक स्थितका बन्धक होता है।

- ४११, शिरयायु० ज॰िट०बं० पंचणा०-- णवदंसणा०-- मिच्छ०--सोलसक०-भय-दु०-पंचिदि०-वेउव्वि०-तेजा०-क०-वेउव्वि०त्रंगो०--वरण०४--त्रगु०४--तस०४--शिमि०--णीचा०--पंचंत० शि० वं० संखेंज्जगु०। त्रसाद०--णवुंस०--त्ररित-सोग-शिरयगदि-हुंड०-शिरयाणु०-त्रप्यसत्थ०-त्रथिरादिछ० शि० वं० संखेंज्जभाग०।
- ४१२. तिरिक्लायु॰ ज०डि०बं० तिरिक्लगदि याव मण्०भंगो । मणुसायु० ज०डि०बं॰ तिरिक्लायुभंगो ।
- ४१३. देवायु० ज०द्वि०वं० पंचणा०-णवदंसणा०-सादावे०-मिच्छ०-संाल-सक०-हस्स-रिद-भय-दु०-देवगदि-पसत्थद्वावीस--उच्चा०--पंचंत०र्था० वं० संखेंज्जगु०। इत्थिवे० सिया० संखेजभा०। पुरिस० सिया० संखेज्जगु०।
  - ४१४. शिरय॰ ज॰डि॰वं॰ हेटा उवरिं शिरयायुभंगो । शाम॰ सत्थाराभंगो ।
- ४१५. तिरिक्खग॰ ज॰िह०वं॰ पंचणा०-णवदंसणा० सादा०-मिच्छ॰-सोल-सक॰-पंचणोक०-णाम सत्थाणभंगो पंचंत० णि० वं॰ संखें ज्ञगु॰ । तिरिक्खायु०
- ४११. नरकायुकी जधन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच झानावरण, नौ दर्शनावरण, भिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, त्रस चतुष्क, निर्माण, नोचगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजधन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। असाता वेदनीय, नपुंसकवेद, अरित, शोक, नरकगित, हुएडसंस्थान, नरकगत्यानुपूर्वी, अप्रशस्त विहायोगित और अस्थिर आदि छह इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजधन्य संख्यातवीं भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है।
- ४१२. तिर्यञ्चायुकी जघन्य स्थितिके वन्धक जीवके तिर्यञ्चगति श्रादि प्रकृतियोंका भङ्ग मनोयोगी जीवोंके समान है। मनुष्यायुकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवका भङ्ग तिर्यञ्च श्रायुके समान है।
- ४१३. देवायुकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच क्वानावरण, नौ दर्शनावरण, साता वेदनीय, मिथ्यत्व, सोलह कषाय, हास्य, रित, भय, जुगुण्सा, देवगित श्राहि प्रशस्त श्रद्धाईस प्रकृतियाँ, उच्चगीत्र श्रीर पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रज्ञघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। स्रीवेदका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रज्ञघन्य संख्यातयाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। पुरुषवेदका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। पुरुषवेदका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रज्ञघन्य संख्यातगुणी श्रिधक स्थितिका बन्धक होता है।

४१४. नरकगतिकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवके नीचे-ऊपरकी प्रकृतियोंका भङ्ग नरकायुके समान है। नामकर्मकी प्रकृतियोंका भङ्ग स्वस्थानके समान है।

४१४. तिर्यञ्चगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच झानावरण, नौ दर्शनावरण, साता वेदनीय, मिथ्यात्व, सीलह कषाय, पाँच नोकषाय स्वस्थानके समान नामकर्मकी प्रकृतियाँ और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुर्शी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और नीचगोत्र

णीचागो॰ णि॰। तं तु॰। उज्जो॰ सिया०। तं० तु०। एवं तिरिक्स्वाणु०-उज्जो॰-णीचागो०।

४१६. मणुसग० ज०िड०वं० हेट्टा उवरिं तिरिक्खगदिभंगो । साम० सत्थासभंगो ।

४१७. रागोद० ज०डि०वं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-पुरिस०-भय-दु०-णाम सत्थाणभंगो पंचंत० णि० वं० संखेंज्जगु० । सादावं०-हस्स-रदि-णीचुच्चागो० सिया० संखेंज्जगु० । त्रसादा०-त्र्रारदि-सोग-त्र्राधर-त्रमुभ-त्रज्ञक सिया० संखेंज्जदिभा० । तिरिक्ख-मणुसगदि-वज्जरि०-दोत्राणु०-थिर-सुभ-जसगि० सिया० संखेंज्जगु० । वज्जणारा० सिया० । तं तु० । एवं वज्जणारायण्० ।

इनका नियमसे बन्धक होता है जो जघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका चन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेत्ता अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पर्ध्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे छेकर पर्यका असंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उद्योत और नीचगोत्रकी मुख्यतासे सिक्षकर्ष कहना चाहिए।

४१६. मनुष्यगतिकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवके नीचे ऊपरकी प्रकृतियोंका भङ्ग तिर्यञ्चगतिके समान है। नाम कर्मकी प्रकृतियोंका भङ्ग स्वस्थानके समान है।

४१७. न्यग्रोधपरिमण्डल संस्थानको जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच बानावरण नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलहकषाय, पुरुषवेद, भय, जुगुप्सा, स्वस्थान भङ्ग रूपसे कही गई नामकर्मकी प्रकृतियाँ और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रज्ञधन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। साता वेदनीय, हास्य, रति, नीचगोत्र ग्रौर उच्चगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है ग्रौर कदाचित् ग्रबन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे अजधन्य संख्यातगुर्ही अधिक स्थितिका बन्धक होता है। असातावेदनीय, अरित, शोक, अस्थिर, अशुभ और अयशःकीर्ति इनका कदाचित बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे ब्रज्जघन्य संख्यातयाँ भाग अधिक स्थितिका यन्धक होता है। तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति, बज्जर्षमनाराच संहनन, दो ब्रानुपूर्वी, स्थिर, ग्रुभ ब्रौर यशकीति इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रज्ञघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। बज्रनाराचसंहननका कदाचित बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर अजघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अजद्यस्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जद्यस्यको अपेना अजद्यस्य, एक समय श्रधिकसे लेकर प्रत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग श्रधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी व्रकार भूजनाराचसंहननकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए ।

- ४१८. चरुसंठा०-चरुसंघ० हेट्टा उवरि एमगोदर्भगो। एगम अप्पप्पणो सत्थाए-भंगो। एवरि विसेसो कादन्वो। अप्पसत्थविहा०-दूभग-दुस्सर-अर्णादे० एमगोदर्भगो। एवरि किंचि विसेसो एगदन्वो।
- ४१६. आभिणि०-सुद्ब-ओधि० आभिणिबोधि० ज०डि०बं० चटुणाणावर-णादिखविगाणं ओघं। णिदाए जब्हिब्बंब पंचणा० मणजोगिभंगो। एवं पचला०। असादा० ज०डि०बंब मणजोगिभंगो।
- ४२०. मणुसायु० ज०हि०बं० पंचणा०-चदुरंसणा०-चदुसंज०-पुरिस०-उच्चा०--पंचंत० णि० बं० असंखेंज्जगु० । णिद्दा-पचला०-अहक०-भय-दु०-मणु-सगिद्दिंच०-पंचिद्दि०--तेजा०--क०--समचदु०--वगण्ण०-४ अगु०--पसत्थवि०--तस०४-सुभग--सुस्सर--आदेँ०--णिमि० णि० बं० संखेंज्जगु० । सादा०--जस० सिया० असंखेंज्जगु० । असादा०--अरदि--सोग-अथिर-असुभ-अजस० सिया० संखेंज्जगु० । इस्स-रदि-थिर-सुभ-तित्थय० सिया० संखेंज्जगु० ।
- ४१८. चार संस्थान श्रौर चार संहननकी जघन्य स्थितिके वन्धक जीवके नीचे ऊपरकी प्रकृतियोंका भङ्ग न्यग्रोधपरिमण्डल संस्थानके समान है। नामकर्मको श्रपनी श्रपनी प्रकृतियोंका भङ्ग स्वस्थानके समान है। किन्तु यहाँ जो विशेषता हो, उसे जानकर कहनी चाहिए। श्रप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग, दुस्वर श्रौर अनादेय इनकी सुख्यतासे सिन्निकर्ष न्यग्रोधपरिमण्डल संस्थानके समान है। किन्तु यहाँ जो विशेषता है, उसे जानकर कहनी चाहिए।
- ४१९. श्राभिनिबोधिक श्रानी, श्रुतञ्चानी श्रौर श्रवधिश्वानी जीवोमें श्राभिनिबोधिक श्वानावरणकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवके चार ज्ञानावरण श्रादि चएक प्रकृतियोंका भङ्ग श्रोधके समान है। निद्राकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवके पाँच श्वानावरण श्रादिका भङ्ग मनोयोगी जीवोंके समान है। इसी प्रकार प्रचलाकी मुख्यतासे सञ्जिकपे जानना चाहिए। श्रसाता वेदनीयकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवका भङ्ग मनोयोगी जीवोंके समान है।
- ४२०. मनुष्य आयुकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच झानाघरण, चार दर्शना-घरण, चार सं ज्वलन, पुरुषवेद, उच्चगोत्र और पाँच ऋन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य श्रसंख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। निद्रा, प्रचला, श्राठ कथाय, भय, जुगुप्सा, मनुष्यगितपञ्चक, पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजसशरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघु, प्रशस्त विहायोगिति, त्रस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, श्रादेय और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। सातावेदनीय और यशः कीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य श्रसंख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। श्रसाता-वेदनीय, श्ररित, शोक, श्रस्थिर, श्रशुम और श्रयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य संख्यात गुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। हास्य, रित, स्थिर, श्रम और तीर्थंकर प्रकृति

- ४२१. देवायु० ज॰हि०बं० पंचणा०--चढुदंस॰--सादा० चढुसंज०-पुरिस०-जसगि॰-उच्चा०-पंचंत० णि० बं० संखेंज्जगु० । णिद्दा-पचला-अद्वकसा०-हस्स-रदि-भय-दुर्गु ॰-देवगदिपसत्थद्वावीसं णि० वं॰ संखेंज्जगु० । तित्थय० सिया० संखेंज्जगु० ।
- ४२२. मणुसग० जि॰ हि०बं॰ पंचणा॰-चदुदंसणा॰-सादा॰-चदुसंज०-पुरिस०-जस०-उच्चा॰-पंचंत॰ णि॰ बं० असंखेंज्जगु॰ । णिद्दा-पचला-अहक०--हस्स-रदि-भय-दुगुं० णि० बं॰ संखेंज्जगु॰ । णाम० सत्थाणभंगो ।
- ४२३. देवगदि ॰ ज॰डि०बं० खविगात्रो त्रोघं । णाम० सत्थाणभंगो । हस्स-रदि-भय-दु० णि ॰ बं० संखेजागु० ।
- ४२४. मण्पज्जव-संजद-सामाइय-छेदो०-परिहार० श्रोधिभंगो । सुहुमसांपराइ० श्रोघं । संजदासंजद० श्राभिणिबो० ज०द्वि०वं० चदुणा०-छदंसणा०-सादावे०-श्रद्व-कसा०--पुरिस०-हस्स-रदि-भय-दु०-देवगदिपसत्थद्वावीस-उच्चा०-पंचंत० णि० वं० ।

इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितका बन्धक होता है ।

- ४२१. देवायुकी जधन्य स्थितिका बन्धक जीव, पाँच श्वानावरण, चार दर्शनावरण, सातावेदनीय, चार सं उचलन, पुरुषवेद, यशःकीर्ति, उच्चगोत्र और पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजधन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। निद्रा, प्रचला, श्राठ कथाय, हास्य, रित, भय, जुगुष्सा और देवगित श्रादि प्रशस्त श्रद्धांस प्रकृतियाँ इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजधन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। तीर्थंद्वर प्रकृतिका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजधन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजधन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है।
- ४२२ मनुष्यगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच शानावरण, चार दर्शनाः बरण, सातावेदनीय, चार संज्वलन, पुरुषवेद, यशःकीर्ति, उच्चगोत्र श्रीर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रज्ञयन्य श्रसंख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। निद्रा, प्रचला, श्राठ कपाय, हास्य, रित, भय श्रीर जुगुण्सा इनका नियमसे बन्धक होता है। नियमसे अज्ञधन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। नामकर्मकी प्रकृतियोंका भद्ग स्वस्थानके समान है।
- ४२३. देवगतिकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवके चपक प्रकृतियोंका भङ्ग श्रोधके समान है। नामकर्मकी प्रकृतियोंका भङ्ग स्वस्थानके समान है। हास्य, रित, भय और जुगुप्सा रनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजधन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है।
- ४२४. मनःपर्ययक्षानी, संयत, सामायिक संयत, छेदोपस्थापनासंयत श्रौर परिहार-विश्विद्धसंयत इनका भक्न श्रवधिक्षानी जीवोंके समान है। सुदम साम्पराय संयत जीवोंका भक्न श्रोधके समान है। संयतासंयत जीवोंमें श्रमिनिबोधिक श्वानाघरणकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव चार श्वानावरण, छह दर्शनावरण, साता वेदनीय, श्राठ कषाय, पुरुषवेद, हास्य, रित, भय, जुगुण्सा, देवगित श्रादि प्रशस्त श्रद्धाईस प्रकृतियाँ, उचगोत्र श्रौर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर

तं तु० । तित्थय० सिया० । तं तु० । एवमेदात्रो ऍक्कमेर्कस्स । तं तु० ।

४२५. ग्रसादा० ज०िंढ० इस्स-रदि-थिर-सुभ-जस॰ सिया॰ संसेंज्जगु०। एवं तित्थय० । त्ररदि-सोग-ग्रथिर-ग्रसुभ-ग्रजस० सिया० । तं तु० । धुविगार्ण णि० वं० संसेंज्जगु० । एवं त्ररदि-सोग-ग्रथिर-ग्रसुभ-श्रजस० ।

४२६. असंजद० तिरिक्खोघं। एवरि तित्थय० ज०हि०वं० धुवपगदीश्रो देव-गदिसंजुत्ताओ पसत्थणामपगदीओ यदिवं० संखेजिए०। चक्खुदं० तसपज्जत्तभंगो। अचक्खुदं ओघं। ओधिदं० ओधिणाणिभंगो। किएएए-एील्-काऊ० तिरिक्खोघभंगो। एवरि तित्थय० असंजदस्स० संजदाभिम्रहस्स देवगदिसंजुत्ताओ पसत्थाओ एए०

श्रज्ञघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रज्ञघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियम-से जघन्यकी श्रपेका श्रज्ञघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। तीर्थं हर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और श्रज्ञघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रज्ञघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियम-से जघन्यकी श्रपेका श्रज्ञघन्य,एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन सब प्रकृतियाँका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु ऐसी श्रवस्थामें वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रज्ञघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रज्ञघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेका श्रज्ञघन्य,एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है।

४२४. ग्रसाता वेदनीयकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव हास्य, रित, स्थिर, श्रम श्रीर यशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजधन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार तीर्थंकर प्रकृतिकी मुख्यतासे सिक्षकर्ष जानना चाहिए। श्ररित, श्रोक, श्रस्थिर, श्रशुभ श्रीर श्रयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जधन्यकी श्रपेक्षा श्रजधन्य, एक समय श्रधिकसे लेकर पश्यका श्रसंख्यातवों भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। ध्रवबन्धवाली प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजधन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार श्ररित, श्रोक, श्रस्थिर, श्रशुभ श्रीर श्रयश्वक कीर्तिकी मुख्यतासे सिक्षकर्ष जानना चाहिए।

४२६. श्रसंयत जीवोंमें अपनी सब प्रकृतियोंका भक्त सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है। इतनी विशेषता है कि तीर्थंकर प्रकृतिको जघन्य स्थितिका बन्धक जीव ध्रुव प्रकृतियोंको देवगतिसंयुक्त बाँधता है। तथा नामकर्मकी प्रशस्त प्रकृतियोंको यदि शाँधता है तो संख्यात-गुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। चश्चदर्शनवाले जीवोंमें अस्पर्याप्त जीवोंके समान भन्न है। श्रवधिदर्शनवाले जीवोंमें श्रोधके समान भन्न है। श्रवधिदर्शनवाले जीवोंमें श्राधके समान भन्न है। श्रवधिदर्शनवाले जीवोंमें श्राधक समान भन्न है। कृष्ण, नील श्रोर कापोत लेश्यावाले जीवोंमें सामान्य तिर्यञ्चोंके समान भन्न है। इतनी विशेषता है कि सम्यक्ष्तवके श्रीममुख हुए श्रसंयत जीवके तीर्थंकर

संखेज्जगु० । किएण्॰-एील्॰ मणुसो सत्थाणे विम्रुज्भमाणो तित्थयरस्स असंजद-सामित्रेण असंजदभंगो । काऊए तित्थय॰ णिरयोघं ।

४२७. तेऊए आभिणिबो० ज०िड बं० चदुणा०--छदंसणा०--सादा०-चदु-संज०-पंचणोक०--देवगदि--पसत्थद्वावीस--उच्चा०-पंचत णि०। तं तु०। आहारदुगं तित्थयरं सिया०। तं तु०। एवमेदाओ ऍक्कमेक्स्स । तं० तु०।

४२८. दंसण्तिय-श्रसादा०--भिच्छ०-बारसक०-श्ररदि-स्नेग० मणजोगिभंगो । इत्थिवे० ज०िठ्वं० पंचणा०-णवदंस०-भिच्छ०-सोलसक०-भय-दु०-पंचिदि०-तेजा०-क०-वर्षण०४-श्रगु०४-पसत्थवि०-तस०४-सुभग--सुस्सर-श्रादे०-उच्चा०-पंचंत० णि० वं० संखेंज्ञगु० । दोगदि-दोसरीर--दोश्रंगो०-दोश्राणु० सिया० संखेंज्जगु० । सादा-

प्रकृतिका जघन्य स्थितिबन्ध होता है। तथा देवगित संयुक्त प्रशस्त प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। कृष्ण श्रीर नील लेश्यामें मनुष्य स्वस्थानमें विशुद्धिको प्राप्त होता हुशा तीर्थंकर प्रकृतिका बन्धक होता हैं। जिसके श्रसंयत स्वामित्वकी श्रपेत्ता श्रसंयतके समान भङ्ग है। कापोत लेश्यामें तीर्थंकर प्रकृतिका भङ्ग सामान्य नारिकयोंके समान है।

४२७. पीतलेश्यावाले जीवों में श्रीभिनिवोधिक शानावरण्की जवन्य स्थितिका वन्धक जीव चार शानावरण्, छह दर्शनावरण्, सातावेदनीय, चार संज्वलन, पींच नोकषाय, देवगित श्रादि प्रशस्त श्रद्धाईस प्रकृतियाँ, उद्यगोत्र श्रीर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रज्ञचन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेत्ता श्रज्ञचन्य, एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग श्रधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। श्राहारकद्विक श्रीर तीर्थेङ्कर इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्थक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रज्ञचन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रज्ञचन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेत्ता श्रज्ञचन्य, एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग श्रधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सन्मिक्ष जानना चाहिए। किन्तु ऐसी श्रवस्थामें वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रज्ञघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रज्ञचन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रज्ञचन्य स्थितिका वन्धक होता है श्रीर श्रज्ञघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रज्ञचन्य स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेत्ता श्रज्ञचन्य, एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग श्रिक तक स्थितिका वन्धक होता है।

शर्दा तीन दर्शनावरण, श्रसाताचेदनीय, मिथ्यात्व, बारह कथाय, श्ररित श्रीर शोक इनकी मुख्यतासे सन्निकर्ष मनोयोगी जीवोंके समाम है। स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच झानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कथाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चीन्द्रयज्ञाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्ण चतुष्क, श्रगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, श्रस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, श्रादेय, उच्चगोत्र श्रीर पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यातगुणी श्रिवक स्थितिका बन्धक होता है। दो गित, दो शरीर, दो श्राङ्गोपाङ्ग श्रीर दो श्रानुपूर्वी इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे

साद ॰ - हस्स-रदि-अरदि--सोग-समचदु०-वज्जरि॰ -- थिराथिर-सुभासुभ--जस० -- अजस० सिया० संखेजारु० । खग्गोद० -सादि० -- वज्जरि० -- खारा० सिया० संखेजाभा०। एवं खबु'स० । खबरि चदुसंठा० -चदुसंघ [सिया० संखेजाभा० ।]

४२६. तिरिक्ख-मणुसायु॰ देवभंगो | देवायु॰ ज॰ द्वि॰ वं० पंचणा ० छदंसणा०-सादावे०-बारसक० इस्स-रिद-भय-दु०-देवगदिपसत्थद्वावीस-उच्चा०-पंचंत० णि॰ वं० संखेंज्जगु॰ । थीणगिद्धि० ३-भिच्छ०-ऋणंताणुवंधि० ४-पुरिस० सिया० संखेंज्जगु० । इत्थिवे० सिया० संखेंज्जगु॰ । तित्थय० सिया० संखेंज्जगु० ।

४३०, मणुस० ज०डि०बं० पंचणा०-छदंसणा०-सादा०-बारसक०-यंचणोक०-णामसत्थाणभंगो उच्चा०-पंचंत०-णि० वं० संखेंज्जगु० । तित्थय० सिया० संखें-ज्जगु० । एवं त्रोरालि०--श्रोरालि०श्रंगो०--वज्जरि०--मणुसाणु० । तिरिक्खग०--

श्रज्ञधन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका वन्धक होता है। सातावेदनीय, श्रसातावेदनीय, हास्य, रित, श्ररित, श्रोक, समचतुरस्र संस्थान, वज्ञपंभनाराच संहनन, स्थिर, श्रिस्य, श्रिभ, श्रश्चभ, यशःकोर्ति और अयशःकीर्ति इनका कदाचित् वन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रज्ञधन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। न्यग्रीधपरिमण्डल संस्थान, स्वातिसंस्थान, वज्रपंभनाराच संहनन श्रीर नाराचसंहनन इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रज्ञधन्य संख्यातयाँ भाग श्रधिक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार नपुंसकवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष ज्ञानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि चार संस्थान श्रीर चार संहनन इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् अवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रज्ञधन्य संख्यातयाँ भाग श्रधिक स्थितिका वन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रज्ञधन्य संख्यातयाँ भाग श्रधिक स्थितिका वन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रज्ञधन्य संख्यातयाँ भाग श्रधिक स्थितिका वन्धक होता है।

४२६. तिर्यञ्च श्रायु श्रीर मनुष्य श्रायुका भक्क देवींके समान है। देवायुकी जधन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच झानावरण, छह दर्शनावरण, सातावेदनीय, बारह कथाय, हास्य, रित, भय, जुगुष्सा, देवगित श्रादि प्रशस्त श्रद्धाईस प्रकृतियाँ, उच्चगीत्र श्रीर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रज्ञघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व, श्रनन्तानुबन्धी चार श्रीर पुरुषवेद इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रज्ञघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। स्त्रीवेदका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रज्ञघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। तीर्थं इर प्रस्तिका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रज्ञघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रज्ञघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रज्ञघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है।

४३०. मनुष्यगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच झामावरण, छह दर्शना-वरण, सातावेदनीय, बारह कषाय, पाँचनोकषाय, नामकर्मको स्वस्थानके समान प्रकृतियाँ, उच्चगोत्र ग्रीर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। तीर्थेकर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार श्रीदारिक श्रारीर, श्रीदारिक एइंदि०-पंचसंठा०-पंचसंघ०-तिरिक्ताणु०-त्रादाउङजो०-त्रप्यसत्थवि०-थावरं सोधम्म-भंगो । एवं पम्माए वि ।

४३१, सुक्षाए मणजोगिभंगो । एविर इत्थि०-एावु'स०-मणुसगदि-स्रोरालि०-पंचसंठा०-स्रोरालि०स्रंगो०-द्यस्संघ०-मणुसाणु०-स्त्रप्पसत्थवि०-द्भग-दुस्सर-स्रणादे० जहराणुसिराणुयासे संजम०-सम्मत्त०-मिच्छ०पास्रोग्गास्रो पगदीस्रो साद्णु सिराण-यासेद्व्वं ।

४३२. भवसिद्धि० त्रोघं । अब्भवसिद्धिया० मदिभंगो । सम्मादि०-खइग०-वेदग०-उवसम० त्रोधिभंगो । खबरि वेदगसं० जहरिखगाखि पयत्ता ऋष्पमत्ता करेंति ।

४३३, मणुसग० ज०हि०बं० पंचणा०-छदंसणा० वेदगे करेदि । तएणादूण सिएणयासेदव्यं तेडभंगो ।

४३४ [ सासणे ऋभिणिबो॰ज०डि०वं० ] चदुणा०--णवदंसणा०--सादा०--सोलसक०--पंचणोक०--पंचिदि०-तेजा०--क०--समचदु०--वरण०४-ऋगु०४--पसत्थ०-तस०४--थिरादिछ०-णिमि०-पंचंत० णि० वं० | तं तु० | तिरिण्गदि-दोसरीर-

श्राङ्गोपाङ्ग, वञ्जर्षभनारात्र संहनन श्रोर मनुष्यगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सिक्षकर्ष जानमा चाहिए। तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रातप, उद्योत, श्रप्रशस्त विहायोगति श्रोर स्थावर इनका भङ्ग सौधर्भ कलाके समान है। इसीप्रकार एवालेश्यामें भी जानना चाहिए।

४३१. शुक्त लेश्यामें मनोयोगी जीवोंके समान भन्न है। इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, मनुष्यगति, श्रौदारिक शरीर, पाँच संस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, श्रृह संहनन, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, श्रप्रशस्त विहायोगित, दुर्भग, दुःस्वर और स्रनादेय तथा जघन्य सन्निकर्षमें संयम, सम्यक्त्व श्रौर मिथ्यात्वके योग्य प्रकृतियोंको जानकर सन्निकर्ष कहना चाहिए।

४३२. भव्य जीवोंका मङ्ग श्रोधके समान है। श्रभव्य जीवोंका मङ्ग मत्यक्कानियोंके समान है। सम्यग्दछि, हायिकसम्यग्दछि, वेदकसम्यग्दछि श्रौर उपशमसम्यग्दछि जीवोंका मङ्ग श्रवधिद्यानी जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि वेदक सम्यक्त्वमें प्रमत्त श्रीर श्रप्रमत्त जीव अधन्य सन्तिकर्ष करते हैं।

४३३. मनुष्यगतिकी जधन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच **झाना**वरण श्रीर छु**द्द** दर्शनावरखको वेदक सम्यक्त्वमें करता है। उसे जानकर पीतलेश्याके समान सन्निकर्ष साथ बेना चाहिए।

४३४. सासादन सम्यक्त्वमें श्राभिनियोधिक ज्ञानावरणकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव चार ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, सातावेदनीय, सोलह कषाय, पाँच नोकषाय, पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघु-चतुष्क, प्रशस्तविहायोगित, जस चतुष्क, स्थिर श्रादि छह, निर्माण श्रीर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है, किन्तु वह जधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजधन्य स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे जधन्यकी अपेका श्रजधन्य, एक समय श्रिधकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवीं भाग श्रिधकतक स्थितिका बन्धक होता है। तीन गति, दो शरीर, दो श्रक्कोणक, वर्ज्यक्रम

दोद्यंगो०-वज्जरि०--तिणिसत्राणु०-उज्जो०--शीचुच्चागो० सिया० । तं तु० । एव-मेदात्रो ऍक्सेक्स्स । तं तु० ।

४३५, असादा० ज०डि॰बं० धुविगाओ णि० वं॰ संसेंज्जभाग० । अरदि-सोग-अधिर असुभ-अजस० सिया॰ । तं तु० । इस्स--रदि--तिणिणगदि-दोसरीर-दो-श्रंगो०--वज्जरिस०--तिणिणआणु०--उज्जो०--धिर--सुभ---जस०---णीचुच्चा० सिया० संसेंज्जभा० ।

४३६. इत्थिवे० असादभंगो । एवरि तिष्णिसंठा०--तिष्णिसंघ० सिया० संखेंज्जदिभा० । एवुंसगे इत्थिभंगो । एवरि तिरिक्ख-मणुसगदि-पंचसंठा०-पंचसंघ०-दोत्राणु० सिया० संखेंज्जदिभा० । सेसाओ परावत्तमाणियाओ सिया०

नाराचसंहनन, तीन श्रानुपूर्वी, उद्योत, नीचगोत्र श्रीर उच्चगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्थक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यको श्रपेद्धा श्रजघन्य, एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवीं भाग श्रधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु ऐसी श्रवस्थामें वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यको श्रपेद्धा श्रजघन्य, एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवों भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है।

४३४. श्रसातावेदनीयकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव श्रुवप्रकृतियोंका नियमसे धन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यातवों भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। श्ररित, शोक, श्रस्थिर, श्रग्रुम श्रौर श्रयशकीर्त इनका कदासित वन्धक होता है श्रौर कदा-ित श्रवन्थक होता है। यदि बन्धक होता है तो जधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेत्ता श्रजघन्य, एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवों भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। हास्य, रित, तीन गित, दो शरीर, दो श्रङ्गोपाङ्ग, वज्रपेमनाराचसंहनन, तीन श्रानुपूर्वी, उद्योत, स्थिर, श्रुभ, यशःकोर्ति, नीचगोत्र श्रौर उच्चगोत्र इनका कदासित् बन्धक होता है। श्रीर कदासित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य संख्यातवों भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है।

४३६. स्रीवेदका अङ्ग असातावेदनीयके समान है। इतनी विशेषता है कि तीन संस्थान ग्रीर तीन संहननका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् ग्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे ग्रज्जचन्य संख्यातवाँ भाग श्रिधिक स्थितिका बन्धक होता है। नपुंसकवेदका अङ्ग स्रीवेदके समान है। इतनो विशेषता है कि तिर्थञ्चगति, मनुष्यगति, पांच संस्थान, पांच संहनन श्रीर दो श्रामुण्वींका कदाचित् वन्धक होता है। श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे संख्यातवाँ भाग श्रिधक स्थितिका बन्धक होता है। श्रेष परावर्तमान प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। श्रेष परावर्तमान प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रज्जघन्य संख्यातगुली श्रिधक स्थितिन

संखेंज्जगु॰ । एवं मग्रुस्सायु॰ । देवायु॰ ज॰हि॰बं॰ णाणावरणादि॰ णि॰ अज॰ । संखेंज्जगु॰ ।

४३७. तिरिक्लायु॰ ज॰ड्डि०बं॰ धुविगात्रो िए॰ बं॰ संखेर्ज्जगु॰ । सेसात्रो परियत्तमाणियात्रो िसया॰ संखेर्जनगु॰ । एवं मणुसायुगं पि । देवायु॰ ज॰ड्डि॰बं॰ णाणावरणादि॰ िण ॰ बं॰ संखेर्जनगु॰ ।

४३८. एग्गोद॰ ज॰द्धि॰वं॰ पंचणा०-णवदंसणा०-सोलसक०-भय-दु०-पंचिदि०-तेजा०-क॰ णि० वं॰ संखेंज्जभा० । श्रासादा॰-इस्स-रिद-श्ररिद-सोग-णीचुच्चा० सिया० संखेंजजभा० । पुरिस० णियमा संखेंजजभा० । णाम० सत्थाण-भंगो । एवं गुग्गोदभंगो तिषिणसंठा०-चदुसंघ०-श्रणसत्थवि०-दुभग-दुस्सर श्रणादें० ।

४३६, सम्माभिच्छ० त्राभिणिबोधि० ज०ड्डि०वं० चेदुर्णा०-छदंसणा०-सादा०-वारसक०-पंचणोक०-पंचिदि०-तेजा०-क०-समचदु०-वरण०४-त्रगु०४-

का बन्धक होता है। इसी प्रकार मनुष्यायुकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। देवायु-की जघन्य स्थितिका बन्धक जीव झानावरणादिका नियमसे श्रजघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है।

४३७. तिर्यञ्च आयुकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। शेष परावर्तमान प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार मनुष्यायुकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। देवायुकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव शानावरण आदिका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है।

४३ म्यग्रोधपरिमग्डलसंस्थानकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच झानावरण, नौ दर्शनावरण, सोलहकषाय, भय, जुगुप्सा, पश्चेन्द्रियजाति, तैजसशरीर, श्रीर कार्मण शरीर इनका नियमसे धन्धक होता है जो नियमसे श्रज्ञघन्य संख्यातवाँ भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। श्रसाताचेदनीय, हास्य, रित, श्ररित, शोक, नीचगोत्र श्रीर उच्चगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रज्ञघन्य संख्यातवों भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रज्ञघन्य संख्यातवों भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। पुरुषचेदका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रज्ञघन्य संख्यातवों भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। नामकर्मकी प्रकृतियोंका भङ्ग स्वस्थानके समान है। इसी प्रकार न्यशोधपरि-मण्डल संस्थानके समान तीन संस्थान, चार संहनन, प्रशस्त विहायोगित, दुर्भग, दुःस्वर श्रीर श्रनादेयकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

४३९. सम्यग्मिध्यादृष्टि जीवोंमें श्राभिनिवोधिक श्रानावरणकी ज्ञघन्य स्थितिका बन्धक जीव चार श्रानावरण, छह दर्शनावरण, सातावेदनीय, बारह कषाय, पाँच नोकषाय, पञ्चेन्द्रियजाति, तेजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्रसंस्थान वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघु- चतुष्क, प्रशस्तविहायोगति, अस चतुष्क, स्थिर श्रादि छह, निर्माण उच्चगोत्र श्रीर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है, किन्तु वह ज्ञघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रज्ञघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रज्ञघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो

पसत्थ०--तस०४-थिरादिछ०-णिमि०-उच्चा०--पंचंत० णि० वं० । तं तु० । दोगदि-दोसरीर-दोत्र्यंगो०--वज्जरि०--दोत्राणु० सिया० । तं तु० । एवमेदात्र्यो ऍकमेर्कस्स । तं तु० ।

४४१. मिच्छादिद्वी० मदि०भंगो | सिएए० मणुसभंगो | श्रसिएए० तिरिक्लोघं | एवरि शिरयायु० ज०द्वि०वं० शिरयमदि--वेउन्वि०-वेउन्वि०श्रंगो०--शिरयाणु० शि० वं० संस्वेंजभा० | सेसाएां संस्वेंजगु० | एवं देवायु० | श्राहार० श्रोघं |

नियमसे जघन्यकी श्रपेक्षा श्रजघन्य, एक समय श्रधिकसे लेकर पर्ल्यका श्रसंख्यातवों भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। दो गति, दो श्ररीर, दो श्राङ्गोपाङ्ग, वञ्जर्षभन।राच संहनन श्रीर दो श्रानुपूर्वो इनका कदाचित् यन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रजघन्य स्थिति का भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेक्षा श्रजघन्य, एक समय श्रधिकसे लेकर पर्ल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका सिश्वकर्ष जानना चाहिए। किन्तु ऐसी श्रवस्थामें वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेक्षा श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पर्ल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है।

४४०. श्रसातावेदनीयकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रज्ञधन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। हास्य, रित, दो गति, दो शरीर, दो श्राक्षोपाङ्ग, वज्रषमनाराच संहनन, दो श्रानुपूर्वा, स्थिर, श्रुभ श्रीर यशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। श्रारति, शोक, श्रस्थिर श्रीर श्रयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रयन्धक होता है वो वह जधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और श्रज्ञधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रज्ञधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेचा श्रज्ञधन्य, एक समय श्रधिकसे लेकर पख्यका श्रसंख्यातवाँ भाग श्रिधक तक स्थितिका बन्धक हीता है।

४४१. मिथ्यादृष्टि जीवोंका भङ्ग मत्यक्षानी जीवोंके समान है। संक्षी जीवोंका भङ्ग मनुष्योंके समान है। ग्रसंबी जीवोंका भङ्ग सामान्य तिर्यञ्जोंके समान है। इतनी विशेषता है कि नरकायुकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव नरकगित, वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक श्राङ्गोपाङ्ग और नरकगत्यानुपूर्वी इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजधन्य संख्यातवों भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है तथा शेष प्रकृतियोंकी संख्यातगुणी अधिक स्थितिका वन्धक होता है तथा शेष प्रकृतियोंकी संख्यातगुणी

असाहार० कम्मइ० भंगो ।

## एवं जहएणसिएणयासी समत्ती। एवं सिएणयासी समत्ती।

४४२. णाणाजीवेहि भंगविचयाणुगमेण दुवि०-जह० उक्क०। उक्कस्सए पगदं। तं तत्थ इमं अद्वपदं मूलपगदिभंगो काद्व्वो। एदेण अद्वपदेण दुवि०-ओघे० आदे०। ओघे० णिरय-मणुस-देवाथूणं उक्कस्सा० अणुक्कस्सा० अद्वभंगो। सेसाणं पगदीणं उक्कस्स०-अणुक्कस्सा० तिरिणभंगो। एवं ओघभंगो तिरिक्खोधं पुढवि०-आउ०-तेउ०-वाउ० तेसं च बाद्र०-वाद्रवण्णदिपत्तेय०-कायजोगि--ओरालि०-ओरालियमि०-कम्मइ०--णवुंस०--कोधादि०४--मदि०--सुद्०--असंज०--अचक्खु०--किएण० णील०-काउ०-भवस०-अवभवस०-मिच्छा०-असंगिण०-आहार०-आणाहारमे नि।

४४३. एइंदिय--बादरपुढवि०--श्राउ०--तेउ०-वाउ०--वादरवणप्फदिपत्तेय०श्रप--ज्जत्त--सन्वसुहुप्त-वर्णप्फदि--णियोद० श्रायूणि दोण्णि श्रोघं । सेसाणं उक० श्रणुक्क० वंधगा य श्रवंधगा य ।

४४४. मणुसञ्चपज्जत्त ०--ग्रोरालियमि०---कम्मइग०--ग्रणाहार० देवगदि०४-तित्थय० वेडव्वियमि०-ग्राहार०-ग्राहारमि०-ग्रवगद०-सुहुमसंप०-उवसम०-सासण०ग्राहारक जीवोंका भङ्ग ग्रोधके समान है तथा श्रनाहारक जीवोंका भङ्ग कार्मणकाययोगी
जीवोंके समान है।

## इस प्रकार जघन्य सन्तिकर्ष समाप्त हुआ। इस प्रकार सन्तिकर्ष समाप्त हुआ।

४३२. नाना जीवोंकी अपेता भङ्गविचयानुगम हो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। उसके विषयमें यह अर्थपद मूल प्रकृतिवन्धके समान कहना चाहिए। इस अर्थपदके अनुसार निर्देश दो प्रकारका है—श्रोध और आदेश। ओवसे नरकायु, मनुष्यायु और देवायुके उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धकके आठ भङ्ग होते हैं। श्रेप प्रकृतियोंके उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिवन्धके तीन भङ्ग होते हैं। इस प्रकार श्रोधके समान सामान्य तिर्यक्ष पृथ्वीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक और इनके वादर, वादरवनस्पतिकायिकप्रत्येक, काययोगी, औदारिक काययोगी, औदारिक-मिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी, नपुंसकवेदी, कोधादि चार कपायवाले, मत्यश्चानी, श्रुताश्चानी. असंयत, अचलुदर्शनी, छप्णलेश्यावाले, नोललेश्यावाले, कापोतलेश्यावाले, भव्य, स्रभ्य, मिश्रवाहिष्ट, असंबी, आहारक और अनाहारक जीवोंके जानना चाहिए।

४४३. एकेन्द्रिय अपर्याप्त, बादर पृथिबीकायिक अपर्याप्त, बादरजलकायिक अपर्याप्त, बादर अग्निकायिकअपर्याप्त, बादरवायुकायिकअपर्याप्त, बादर बनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर अपर्याप्त, सब सूदम, बनस्पतिकायिक श्रीर निगोद जीवोंके दो आयु ओघके समान हैं। शेष प्रकृतियोंके उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव होते हैं और अबन्धक जीव होते हैं।

४४४. मनुष्य अपर्यात, श्रीदारिक मिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी श्रीर अनाहारक जीवोंमें देवगतिचतुष्क श्रीर तीर्थंकर प्रहातिके तथा वैकियिक मिश्रकाययोगी, श्राहारक काययोगी, श्राहारक मिश्रकाययोगी, श्रपगतयेदी, सृदमसाम्परायिक संयत, उपशमसम्यग्दिष्ट, सम्मामिच्छादिहि ति सन्वपगदीणं उक्कस्सा० अणुक्कस्सा० अहभंगा ।

४४५. बादरपुढवि०-स्राउ०-तेउ०-वाउ०-वाद्स्वण्फदिपत्तेय०पज्जत्ता० देवगदि भंगो। स्रायु०णिरयायुभंगो। सेसार्णाण्रियास्रो याव सण्णि ति स्रोवं। एवमुकस्सं समत्तं

४४६. जहराणए पगदं । तत्थ इमं श्रहपदं मृत्यपादिभंगो । एदेण श्रहपदेण दुविक--श्रोघेव श्रादेव । श्रोघेव खवगपगदीएां तिरिएणश्रायु-वेडव्वियद्धक्क-तिरिक्ख-गदिवश-श्राहारदुग-तित्थयव जहव श्रजह उक्कस्सभंगो । सेसाएां पगदीएां जहव श्रजव श्रित्थ वंधगा य श्रवंधगा य । एवं श्रोधभंगो कायजोगि--श्रोरात्वियकाव-एणवुंसव-कोधादिवश-श्रवक्षुव-भवसिक-श्राहारए ति ।

४४७. तिरिक्खगदीए तिरिण्यायु॰-वेडिव्यिख०-तिरिक्खगदि-तिरिक्खाणु०-उज्जो०-णीचा० उक्तसभंगो। सेसाणं जह० अज० अत्थि वंधगा य अवंधगा य । एवं तिरिक्खोधं खोरालियमि॰-कम्मइ०-मिद०-सुद०-असंजद०-किएण०-णील०-काउले०-अब्भवसि०--मिच्छादि०--असिएण०--अणाहारगि ति। णविर खोरालियमिस्स-कम्मइ-अणाहारगे देवगदिपंचगं उक्तस्सभंगो।

सासादन सम्यग्दछि श्रीर सम्यग्मिथ्यादछि जीवोंमें सब प्रकृतियोंके उत्कृष्ट श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितियन्थके श्राठ मङ्ग होते हैं ।

४४४. बादर पृथ्वीकायिक पर्याप्त, बादर जलकायिकपर्याप्त, बादर अग्निकायिक पर्याप्त, बादर वायुकायिक पर्याप्त और बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर पर्याप्त जीवोंके देवगतिके समान भङ्ग है। तथा आयुका नरकायुके समान भङ्ग है। शेष नरकगतिसे लेकर संज्ञी तक सब मार्गणाओं ओघके समान भङ्ग है।

## इस प्रकार उत्कृष्ट भङ्गविचयानुगम समाप्त हुआ ।

४४६. जघन्यका प्रकरण है। उस विषयमें यह अर्थपद मूलप्रकृतिस्थिति बन्धके समान है। इस अर्थपदके अनुसार निर्देश दो प्रकारका है—जोघ और आदेश। ब्रोधकी अपेचा चपक प्रकृतियाँ, तीन आयु, वैकियिक छह, तिर्यञ्चगति चार, आहारक-द्विक और तीर्यकरकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका भङ्ग उत्कृष्टके समान है। शेष प्रकृतियोंके जघन्य और अजघन्य स्थितिबन्धके बन्धक जीव होते हैं और अबन्धक जीव होते हैं। इस प्रकार ओधके समान काययोगी, औदारिक काययोगी, नपुंसकवेदी, कोधाहि चार कपाययोगी, अच्छादर्शनी, भव्य और आहारक जीवोंके जानना चाहिए।

४४७. तिर्यञ्चगतिमें तीन श्रायु, वैकियिक छह, तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उद्योत श्रीर नीचगोत्रका मङ्ग उत्कृष्टके समान है। श्रेष प्रकृतियोंके जघन्य श्रीर श्रज्ञघन्य स्थितिबन्धके वन्धक जीव होते हैं श्रीर श्रवन्धक जीव होते हैं। इस प्रकार सामान्य रिर्यञ्चोंके समान श्रीदारिक मिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी, मत्यज्ञानी, श्रुताञ्चानी, श्रसंयत, इन्ण्लेश्यावाले, नीललेश्यावाले, कापोतलेश्यावाले, श्रमन्य, मिथ्यादृष्टि, श्रसंशी श्रीर श्रनाहारक जीवोंके जानना चाहिए। इतनो विशेषता है कि मौदारिक मिश्रकाययोगी, कार्मण काययोगी श्रीर श्रनाहारक जीवोंके देवगति पञ्चकका मङ्ग उत्कृष्टके समान है।

४४८. एइंदिएसु [मणुसग॰-] मणुसाणु॰-तिरिक्खगदि-तिरिक्खाणु०-उज्जो॰एीचा॰ श्रोघो । सेसं उक्कस्सभंगो । पुढिनि०-श्राउ०-तेउ०-वाउ०-वादरपुढिनि०-श्राउ०तेउ०-वाउ॰ तिरिक्खायु॰ श्रोघं । सेसं उक्कस्सभंगो । वादरपुढिनि०-श्राउ०-तेउ०-वाउ०-वादरवणप्फिदिपत्तेय॰श्रपज्जत्त-सन्वसहुम-बणप्फिदि-णियोदे॰ मणुसायु॰श्रोघं । संसाणं
श्रित्थ वंधगा य श्रवंधगा य । सेसाणं णिरयादि याव सिएण ति उक्कस्सभंगो ।

### एवं जहएएएयं समत्तं।

४४६. भागाभागं दुविधं-जहएएएयं उक्कस्सयं च । उक्कस्सए पगदं । दुवि०च्रोघे० च्रादे० । च्रोघेए तिएएच्रायु०-वेडिव्वयद्ध०-तित्थय० उक्क०िद्धिवंधगा
सव्वजीवाएं केविद्धयो भागो ? च्रसंखेंज्जिदिभागो । च्रणु०िद्ध०वंधगा सव्वजी० के० ?
च्रसंखेंज्जा भागा । च्राहार०-च्राहार०च्रंगो० उ०िद्ध०वं० सव्वजी० के० ? संखेंज्जदिभा० । च्रणु०िद०वं० के० 'संखेंज्जा भा० । सेसाएं पगदीएं उ०िद०वं० सव्वजी०
के० ? च्रणंतच्यो भागो । च्रणु०िद०वं० सव्व० के० ? च्रणंता भागा । एवं च्रोयभंगो
तिरिक्खोचं कायजोगि०-च्रोरालि०-च्योरालियमि०-कम्मइ०-एवुंस०-कोधादि०४मदि०-सुद०-च्रसंजद०-च्रचक्खुदं०-तिएएले०-भवसिद्धि०-च्रव्यवस्व--पिच्छादि०-

४४८. एकेन्द्रियोंमें मनुष्यगित, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, तिर्यञ्चगित, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उद्योत और नीचगोत्रका भङ्ग श्रोधके समान है तथा शेष प्रकृतियोंका भङ्ग उत्कृष्टके समान है। पृथ्वीकायिक, जलकायिक, श्राग्नकायिक, वायुकायिक, बादर पृथ्वीकायिक, बादर जलकायिक, बादर श्राग्नकायिक श्रोर बादर वायुकायिक जीवोंमें तिर्यञ्चायुका भङ्ग श्रोधके समान है। तथा शेष प्रकृतियोंका भङ्ग उत्कृष्टके समान है। बादर पृथिवीकायिक श्रपर्याप्त बादर जलकायिक श्रपर्याप्त, बादर श्राप्तकायिक श्रपर्याप्त, बादर जलकायिक श्रपर्याप्त, बादर श्राप्तकायिक श्रपर्याप्त, बादर वनस्पतिकायिक श्रपर्याप्त, बादर अपर्याप्त, सब सूच्म, वनस्पति कायिक श्रीर निगोद जोवोंमें मनुष्यायुका भङ्ग श्रोधके समान है। श्रेप प्रकृतियोंके बन्धक जीव होते हैं और श्रयन्धक जीव होते हैं। नरकगतिसे लेकर संझी मार्गणा तक श्रेप सब मार्गणाश्रोंका भङ्ग उत्कृष्टके समान है।

#### इस प्रकार जघन्य भङ्गविचयानुगम समाप्त हुआ।

४४९. भागाभाग दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । इसकी अपेत्ता निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे तीन आयु, वैकियिक छह और तीर्थक्कर प्रकृतिके उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? असंस्थातवें भाग प्रमाण हैं । अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? असंस्थात बहुभाग प्रमाण हैं । आहारक शरीर और आहारक आक्रोपाक्षके उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? संख्यातवें भाग प्रमाण हैं । अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? संख्यात बहुभाग प्रमाण हैं । श्रेष सब प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? अनन्तवें भाग प्रमाण हैं । अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? अनन्तवें भाग प्रमाण हैं । अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? अनन्तवें भाग प्रमाण हैं । इसी प्रकार ओघके समान सामान्य तिर्यञ्च, कितवें भाग प्रमाण हैं ? अनन्तवं बहुभाग प्रमाण हैं । इसी प्रकार ओघके समान सामान्य तिर्यञ्च, कितवें भाग प्रमाण हैं । स्थारकाययोगी, कार्मणकाययोगी, नपुंसकवेदी, कोधादि चार कपायवाले, मत्यक्कानो, श्रुताक्कानी, असंयत, अचक्षुदर्शनी, तीन लेश्यावाले,

१ मुलप्रती संखेजदिभाग० इति पाठः। २ मुलप्रती ऋगंता भागा इति पाठः।

श्राहार०-श्रणाहारग ति । णवरि श्रोरालियमि०-कम्मइ०-श्रणाहार० देवगदिपंचगस्स श्राहारसरीरभंगो । सेसाएं णिरयादि याव सणिण ति ए श्रसंखेंज्जजीविगा तेसि तित्थयरभंगो । एवं ए संखेंज्जजीविगा तेसि श्राहारसरीरभंगो । एइंदिय-वर्णण्यदि-णियो-दाणं तिरिक्खायु० श्रोघं । सेसाएं पगदीणं मणुसश्रपज्जत्तभंगो ।

## एवं उकस्सभागाभागं समत्तं।

४५०. जहण्णण पगदं । दुवि०--श्रोघे० श्रादे० । श्रोघे० खवगपगदीणं '
तिरिक्खगदि-तिरिक्खाणु०-उज्जो०-णीचा० ज०द्वि०वं० सव्व० केव? श्रणंतश्रो भागो ।
श्रज०द्वि०वं० सव्व० केव० ? श्रयंता भा० । श्राहार०--श्राहार०श्रंगो उक्कस्सभंगो । सेसाणं पगदीणं ज०द्वि०वं० सव्व० केव० ? श्रसंखेंज्जदिभागो । श्रज०द्वि०वं०
सव्व० केव० ? श्रसंखेंज्जा भागा । एवं श्रोघभंगो कायजोगि०--श्रोरालियका०-णावुंस०-कोथादि०४-श्रचक्खुदं०-भवसिद्धि०-श्राहारग ति ।

४५१. तिरिक्लेसु तिरिक्लगदि--तिरिक्लाणु॰--उज्जो०-णीचा० त्रोघं। सेसाएं पगदीएं देवगदिभंगो। एवं तिरिक्लोघभंगो एइंदि॰--त्रोरालियमि०--कम्पइ०-पदि०-

भन्य, श्रभन्य, मिथ्यादिए, श्राह्मारक श्रीर श्रमाहारक जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि श्रीदारिक मिश्रकाययोगी, कार्मण काययोगी श्रीर श्रनाहारक जीवोंमें देवगति पञ्चकका भङ्ग श्राह्मारक शरीरके समान है। शेष नरकगितसे लेकर संश्री मार्गण तक जिन मार्गणश्रोंमें जो श्रसंख्यात जीव राशियाँ हैं, उनका भङ्ग तीर्थङ्कर प्रकृतिके समान है। तथा इसी प्रकार जो संख्यात जीव-राशियाँ हैं, उनका भङ्ग श्राह्मारक शरीरके समान है। एकेन्द्रिय, वनस्पतिकायिक श्रीर निगोद जीवोंके तिर्यश्रायुका भङ्ग श्रोधके समान है तथा श्रेष प्रकृतियोंका भङ्ग मनुष्य श्रपर्यात्रकोंके समान है।

#### इस प्रकार उत्कृष्ट भागाभाग समाप्त हुन्ना।

४५०. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—श्रोघ और श्रादेश। श्रोघसे चपक प्रकृतियाँ, तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उद्योत श्रीर नीचगोत्रके जघन्य स्थितिके वन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं? श्रनन्तवें भाग प्रमाण हैं। श्रजधन्य स्थितिके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं? श्रनन्त बहुमाग प्रमाण हैं। श्राहारक शरीर श्रीर श्राहारक शाङ्गोपाङ्गका भङ्ग उत्कृष्टके समान है। दोष प्रकृतियोंके जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं? श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण हैं। श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं? श्रसंख्यात बहुमाग प्रमाण हैं। इस प्रकार श्रोघके समान काययोगी, श्रीदारिक काययोगी, नपुंसकवेदी, कोधादि चार कषाययाले, श्रचक्षुदर्शनी, भव्य श्रीर श्राहारक जीवोंके जानना चाहिए।

४४१. तिर्यञ्चोंमें तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उद्योत श्रौर नीचगोत्रका भंग श्रोघके समान है। शेष प्रकृतियोंका भंग देवगतिके समान है। इस प्रकार सामान्य

१. मृलपतौ -गदीणं तिरिक्लगदीणं तिरिक्ल-इति पाठः । २. मृलप्रतौ ऋखंतभा० इति पाठः ।

सुद०--असंज०-तिषिणले०-अब्भवसि०--मिच्छा०-अस्पिण०-अणाहारग ति । णवरि स्रोरालियपि०--कम्मइ०-अणाहार० देवगदि०४-तित्थय० आहारसरीरभंगो । सेसाणं णिरयादि याव सिष्ण ति ए संखेजजीविगा ए अ असंखेजजीविगा तेसि जह० अज० उकस्सभंगो ।

## एवं भागाभागं समत्तं।

तिर्यञ्चिकि समान एकेन्द्रिय, श्रीदारिक मिश्रकाययोगी, कार्मण काययोगी, मत्यक्षानी, श्रुताक्षानी, श्रसंयत, तीन लेश्यावाले, श्रभव्य, मिश्यादृष्टि, श्रसंक्षी श्रीर अनाहारक जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि श्रीदारिक मिश्रकाययोगी, कार्मण काययोगी श्रीर श्रनाहारक जीवोंमें देवगतिचतुष्क श्रीर तीर्थंकर प्रशुतिका भंग श्राहारक श्रीरके सक्षान है। शेष नरकगतिसे लेकर संज्ञीतक जितनी मार्गणएँ हैं इनमें जो संख्यात जीव-विशिषाँ हैं और जी श्रसंख्यात जीव-राशियाँ हैं, उन सबमें जबन्य श्रीर श्रजवन्यका भंग इत्लापके समान है।

#### इस प्रकार जघन्य भागाभाग समाप्त हुन्ना । इस प्रकार-भागाभाग समाप्त हुन्ना ।

४४२. परिणाम दो प्रकारका है—जयन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । उसकी अपेद्या निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । खोघसे नरकायु और वैकिथिक इहकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीय कितने हैं ? अलंख्यात हैं । तिर्यञ्चायुकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं ? अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं ? अनन्त हैं । मनुष्यायु, देवायु और तीर्थङ्कर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं ? अलंख्यात हैं । आहारक द्विकवी उत्कृष्ट श्रीर अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं । आहारक द्विकवी उत्कृष्ट श्रीर अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं । शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं ? अनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव कितने हैं ? अनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव कितने हैं ? अनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव कितने हैं ? अनुत्व स्थितिके वन्धक जीव कितने हैं ? अनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव कितने हैं ? अनुत्व स्थितिके वन्धक जीव कितने हैं ? अनुत्व स्थितिके वन्धक जीव कितने हैं ? अनुत्व स्थितिके वन्धक जीव कितने हैं ? अनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव कितने हैं ? अनुत्व स्थितिके वन्धक जीव कितने हैं ? अनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव कितने हैं ? अनुत्व स्थितिके वन्धक स्थितिके

१. मृतप्रती गोल ॰ श्रोराजिय तित्थय ० इति पादः।

संखेंजा। श्रोरालियमि०--कम्मइ०- श्रणाहार० देवगदि०४--तित्थय० उक्क० श्रणु० हि०बं० केत्ति० ? संखेंजा।

४५३. णिरएसु मणसायु० उ० ऋणु० द्वि०बं० संखेज्जा । सेसाणं उक्क० ऋणु० के० ? ऋसंखेज्जा । एवं सन्विणिरय-सन्वदेव० । णविर सन्वद्वसि० सन्वपगदीणं उ० ऋणु० द्वि०वं० केत्ति० ? संखेज्जा ।

४५४. पंचिदियतिरिक्ख०३तिषिणग्रायु० उ० हि० बं० के ति०? संखें जा। श्रणु०- हि० बं० के ति०? स्रसंखें जा। से साणं पगदीणं उ० श्रणु० हि० बं० के तिया? असंखें जा। पंचिदियतिरिक्ख अपज्ञत्त० मणुसायु० उ० हि० बं० के ति०? संखें जा। श्रणु०- हि० बं० के ति०? असंखें जा। से साणं उ० श्रणु० हि० बं० के ति०? असंखें जा। एवं मणुस अपज्ञत्त-सन्वविग लिंदिय० च दुषहं का याणं वाद रवण्फ दिपत्तेय०।

४५५. मणुसेसु दोत्रायु०-वेडिंवयद्य०-त्राहार०२-तित्थय० उ० त्रणु० हि०वं० के० ? संखेंज्ञा । सेसाणं उ०हि०वं० के० ? संखेंज्ञा । त्रणु०हि०वं० केत्तिया ? त्रसं-खेंज्ञा । मणुसपज्जत्त-मणुसिणीसु सन्वाणं पगदीणं दो पदा संखेंज्ञा ।

४५६. एइंदिय-वर्णप्फदि-िणयोदेसु तिरिक्खायु॰ उक्क॰ असंखेजा । अणु०

तीर्थंकर प्रकृतिकी उत्कृष्ट और श्रमुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यात हैं। श्रीदारिक मिश्रकाययोगी, कार्मणुकाययोगी श्रीर श्रमाहारक जीवोंमें देवगति चतुष्क श्रीर तीर्थंकर प्रकृतिकी उत्कृष्ट श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं !

४४३. नारिक्योंमें मनुष्यायुकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यात हैं। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। इसी प्रकार सब नारकी और सब देवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि सर्वार्थ-सिद्धिमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं! संख्यात हैं।

४४४. पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्जिकमं तीन श्रायुक्रीकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं । श्रेष प्रकृतियोंके उत्कृष्ट श्लोर श्रमुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्च श्रपर्यात जोवोंमं ममुख्यायुकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं । श्रमुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं । श्रमुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । श्रेष प्रकृतियोंके उत्कृष्ट और अमुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । इसी प्रकार ममुख्य श्रपर्यात, सब विकलेन्द्रिय, चार स्थावर काय और बादर वमस्पति कायिक प्रत्येक शरीर जीवोंके जानना चाहिए।

४४४. मनुष्योंमें दो आयु, वैक्रियिक छह, आहारक द्विक और तीर्थङ्कर प्रकृतिकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं? संख्यात हैं। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं? संख्यात हैं। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं? असंख्यात हैं। असंख्यात हैं। मनुष्यपर्यात और मनुष्यिनी जीवोंमें सब प्रकृतियोंके दो पदवाले जीव संख्यात हैं।

४४६. एकेन्द्रिय, वनस्पतिकायिक श्रौर निगोद जीवोंमें तिर्यश्चायुकी उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव श्रसंख्यात हैं। श्रजुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव श्रमन्त हैं। मजुष्यायुकी अर्णता । मणुसायु॰ उक्क॰ अणु॰ खोघं । सेसाएां उक्क॰ अणु॰ ऋणंता ।

४५७. पंचिदिय--तसपज्जत्ता०२ तिरिए आयु० तित्थय० उ० द्वि० बं० संखेंजा। अणु० असंखेंजा। आहार०२ उक्क० अणु० संखेंजा। सेसाएं उक्क० अणु० असंखेंजा। एवं पंचमण०-पंचवचि०-इत्थि०-पुरिस०-चक्ख०-सिरए ति। पंचिदि०-तसअपज्जत्त० तिरिक्खभंगो।

४५८. वेउव्वि०-वेउव्वि० [मिस्स०] देवोयं । एविर मिस्से तित्थय० दो वि पदा संखेंज्जा } आहार०--आहारमिस्स--अवगदवे०--मएापज्जव०--संजद--सामाइय--छेदोव०-परिहार०-सुहमसं० सब्वपगदीएां उक्क० अणु० हि०वं० के० १ संखेंज्जा ।

४५६. विभंगे तिणिश्रायु० उ० हि॰ बं० के० ? संखेंज्जा ! अणु० के० ? असंखेंज्जा । सेसाणं उक० अणु० हि० बं० केति० ? असंखेंज्जा । आभि०-सुद०-ओधि० मणुसायु०-आहार०२ दो वि पदा संखेंज्जा । देवायु०--तित्थय० उ० हि० बं केति० ? संखेंज्जा । अणु० असंखेंज्जा । सेसाणं उ० अणु० हि० बं० के० ? असंखेंज्जा । एवं ओधिदं०-सम्मादि०-वेदगसम्मा०-[उनसमसम्मा० ।] एवरि उनसमस० आहार०२-तित्थय० दो वि पदा संखेंज्जा । संजदासंजदेसु देवायु० उ० हि० बं० संखेंज्जा । अणु० उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव ओधके समान है । शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव अनन्त हैं ।

४४७. पञ्चेन्द्रिय, पञ्चेन्द्रियपर्याप्त, त्रस त्रौर त्रसपर्याप्त जीवोंमें तीन त्रायु क्रौर तीर्थद्वर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यात हैं। त्रमुतकृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यात हैं। त्राहारक द्विककी उत्कृष्ट श्रौर अमुतकृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यात हैं। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट श्रौर अमुतकृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यात हैं। इसी प्रकार पाँच मनोयोगो, पाँच वचनयोगो, स्त्रीवेदो, पुरुषवेदी चनुदर्शनी श्रौर संक्षी जीवोंके जानना चाहिए। पञ्चेन्द्रिय अपर्याप्त और त्रस अपर्याप्त जीवोंमें तिर्यञ्चोंके समान भक्क हैं।

४४८. वैकियिक काययोगी और वैकियिक मिश्रकाययोगी जीवोंमें सामान्य देवोंके समान मझ हैं। इतनी विशेषता है कि वैकियिक मिश्रकाययोगमें तीर्थंकर प्रकृतिके दोनों ही पदवाले जीव संख्यात हैं। श्राहारक काययोगी, श्राहारक मिश्रकाययोगी, श्रापतवेदो, मनःपर्ययञ्चानी, संयत, सामियक संयत, छेदोपस्थापना संयत, परिहारविशुद्धि संयत और स्क्ष्मसाम्पराय संयत जीवोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और श्रमुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं? संख्यात हैं।

४४९ विभक्त ज्ञानी जीवोंमें तीन आयुश्रोंकी उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव कितने हैं ! संख्यात हैं ! अनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव कितने हैं ! असंख्यात हैं ! शेष प्रकृतियों की उत्कृष्ट श्रीर अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं ! असंख्यात हैं ! आभिनिबोधिक क्षानी, श्रुतक्षानी और अवधिक्षानी जीवोंमें मनुष्यायु और आहारक द्विकके दोनों ही पदवाले जीव संख्यात हैं ! देवायु और तीर्थंकर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं ! संख्यात हैं ! अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यात हैं ! शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं ! असंख्यात हैं ! शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं ! असंख्यात हैं ! इसी प्रकार अवधिदर्शनी, सम्यग्र्दिष्ट, वेदक सम्यग्दिष्ट और उपशमसम्यग्दिष्ट जीवोंके जानना चाहिए ! इतनी विशेषता है कि उपशम सम्यग्दिष्ट जीवोंमें आहारक द्विक और तीर्थंक्षर प्रकृतिके दोनों ही पदवाले जीव संख्यात हैं । संयतासंयत जीवोंमें देवायुकी उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव संख्यात हैं । अनुत्कृष्ट

श्रसंखेंजा। तित्थय० दो नि पदा संखेंजा। सेसाग्रं उक्क० श्रग्रु ० हि० व असंखेंजा।

४६० तेउ-पम्मासु मणुसायु० देवोघं। देवायु० उ०डि०व० संखेँजा। अणु० असंखेँजा। सेसाणं उ० अणु०डि०वं० के० १ असंखेँजा। सुझाए खर्गे दांआयु०-आहार०२ दो पदा संखेँजा। सेसाणं उक० अणु० असंखेँजा। सासणे तिरिक्ख-देवायु० उक० संखेँजा। अणु०डि०वं० असंखेँजा। मणुसायु० दो वि पदा संखेँजा। सेसाणं उक० अणु० असंखेँजा। सम्मामिन्छा० सन्वाणं उक्क० अणु० असंखेँजा। असण्णीसु णिरय—देवायु० उक० अणु० असंखेँजा। असंखेँजा। तिरिक्खायु० उक्क० अणु० असंखेँजा। अणु० अशंखेंजा। तिरिक्खायु० उक्क० असंखेँजा। अणु० अशंवा। सेसाणं आधं।

## एवं उकस्सपरिमाणं समत्तं।

४६१ जहण्णए पगदं । दुवि०-शोघे० आदे० । ओघे० पंचगा०-चदुदंसगा०-सादा०-चदुसंज०-पुरिस०-जस०-उचा०-पंचंत० जह०डि०बंधमा केतिया १ संखेजा। अज० केति०? अणंता०। तिण्णि आयु०-वेउ व्विथञ्च० जह० अज० असंखेंजा। आहार० २ उक्तस्सभंगो । तित्थय० ज०डि० संखेंजा। अज० असंखेंजा। तिरिक्खगदि-तिरिक्खागु०-उज्जो०-गीचा० जह० असंखेंजा। अज० अणंता। सेसाणं जह० अज०

स्थितिके बंधक जीव ऋसंख्यात हैं। तीर्थंद्भर प्रकृतिके दोनों ही पदवाले जीव संख्यात हैं। रोष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और ऋनुत्कृष्ट स्थितिके बंधक जीव ऋसंख्यात हैं।

४६०. पीत और पद्म लेश्या में मनुष्यायुका भंग सामान्य देवोंके समान है। देवायुकी उत्कृष्ट श्वितिके बन्धक जीव संख्यात हैं। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यात हैं। श्रेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं श्वसंख्यात हैं। श्रुक्त लेश्या और क्षायिक सम्यग्दिष्ट जीवोंमें दो आयु और आहारक द्विकके दोनों ही पदवाले जीव संख्यात हैं। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट श्वितिके बन्धक जीव असंख्यात हैं। सासादन सम्यक्त्वमें तियञ्चायु और देवायुकी उत्कृष्ट श्वितिके बन्धक जीव संख्यात हैं। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यात हैं। मनुष्यायुके दोनों ही पदवाले जीव संख्यात हैं। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यात हैं। सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यात हैं। सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यात हैं। तिर्यव्यायुकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यात हैं। शेष प्रकृतियोंका भक्त और के समान है।

### इस प्रकार उत्कृष्ट परिमाण समाप्त हुआ।

४६१. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—स्रोध स्रौर स्रादेश। स्रोधसे पांच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, साता वे दनीय, चार सङ्ख्वलन, पुरुपवेद, यशःकीर्ति, उच्चगोत्र स्रौर पांच स्रान्तरायकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं ! संख्यात हैं। स्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं ! स्रान्तर हैं। तीन स्रायु स्थार वैकियक सहकी जघन्य स्थार स्थानके बन्धक जीव स्रसंख्यात हैं। स्थाहारक द्विकका भङ्ग उत्कृष्टके समान है। तीर्थ हुर प्रकृतिकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव संख्यात हैं। स्थाहरचाति, तिर्यक्रमाति, उद्योत स्थार की प्रमान है। स्थाहरचाति, विश्वस्थाति स्थान स्थान

भणंता । एवं श्रोधभंगो कायजोगि-श्रोरालि०-एवंस०-कोधादि०४-अचक्खु०-भवसि०-भाहारगे ति । एवरि श्रोरालि० तित्थय० उक्तस्सभंगी ।

४६२ शिरएसु उक्तस्सभंगो । तिरिक्खेसु तिण्णिश्चायु ०-वेउव्वियछ०-तिरिक्खगदि ४ श्रोघं । सेसाणं जह० श्रज० श्रणंता । सन्वपंचिदियतिरिक्खेसु सन्वपगदीणं जह० श्रज० श्रसंखेंजा। एवं पंचिदिय०तिरिक्खभंगो सन्वश्चपज्जत्त--विगलिंदि० चदुण्णं कायाणं वादरवर्णण्कदिवत्ते० ।

४६३ मणुरेषु खविगाणं जह० संखेंजा। अज० असंखेंजा। दो आयु-वेउच्चियछ०--आहार०२--तित्थय० दो पदा संखेंजा। सेसाणं दो वि पदा असंखेजा। मणुसपज्जत्त--मणुसिणीसु उक्कस्सभंगी।

४६४ एइंदि० तिरिक्खगदि-तिरिक्खाणु-उज्ञो०-सीचा० श्रोघं । सेसाणं जह० श्रज्ज० असंता । एवं सन्ववसप्कदि-णियोदाणं । स्ववरि तिरिक्खगदि०४ जह० श्रज० श्रणंता ।

४६५ पंचिदिय-तस०२ खनिगाणं तित्थय० जह० संखेंजा । अज० असंखेंजा । आहार०२ श्रोघं । सेसाणं जह० अज० असंखेंजा ।

४६६ पंचमर्य-तिष्णिवचि० पंचणा०-स्यवदंसणा०--सादासाद०--चहुवीसमोह०-

श्चनन्त हैं। इसीप्रकार श्रोधके समान काययोगी, श्रीदारिककाययोगी, नपुंसकवेदी, क्रोधादि चार कषायवाले, श्वचद्धदर्शनी, भन्य श्रीर श्राहारक जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि श्रीदारिक काययोगमें तीर्थ हुर प्रकृतिका भङ्ग उत्कृष्टके समान है।

४६२. नारिकयोंमें उत्क्रास्टके समान भक्न है। तियेश्वों में तीन आयु, वैक्रियिक छह, तियेक्चगति चारका मंग ओपके समान है। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीव अनन्त हैं। सब पञ्चेन्द्रिय तियेक्चोंमें सब प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीव असंख्यात हैं। इसी प्रकार पञ्चेन्द्रिय तियञ्चके समान सब अपर्याप्त, विकलेन्द्रिय, चारकायवाले और बाद्र बन स्पतिकायिक प्रत्येक शरीर जीवोंके जानना चाहिए।

४६३. मनुष्योंमें सपक प्रकृतियोंकी जधन्य स्थितिके बन्धक जीव संख्यात हैं। अजधन्य स्थितिके बन्धक जीव असंख्यात हैं। दो आयु, वैकियिक छह, आहारकदिक और तीयद्वर प्रकृतिके दो पदवाले जीव संख्यात हैं। तथा शेष प्रकृतियोंके दोनों ही पदवाले जीव असंख्यात हैं। तथा शेष प्रकृतियोंके दोनों ही पदवाले जीव असंख्यात हैं। मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें अपनी सब प्रकृतियोंका मङ्ग उत्कृष्टके समान है।

४६४ एकेंद्रियोंमें तिर्थेञ्चगति, तिर्थेञ्चगत्यानुपूर्वी, उद्योत श्रोर नीचगोत्रका भङ्ग श्रोघके समान है। रोष प्रकृतियोंकी जघन्य श्रीर श्रजघन्य स्थितिके बंधक जीव श्रनंत हैं। इसी प्रकार सब वनस्पतिकायिक श्रीर निगोद जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि तिर्थेञ्चगति चतुष्ककी जघन्य श्रीर श्रजघन्य स्थितिके बंधक जीव श्रनंत हैं।

४६४ पंचेंद्रिय, पंचेंद्रियपर्याप्त, त्रस श्रीर त्रसपर्याप्त जीवोंमें चपक प्रकृतियों श्रीर तीर्थं हुर प्रकृतिकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव संख्यात हैं। श्राचारदिकका भंग श्रीयके समान है। तथा शेष प्रकृतियों की जघन्य श्रीर श्राचम्य स्थितिके बन्धक जीव श्रसंख्यात हैं।

४६६. पाँच मनोयोगी और तीन वचनयोगी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण,

देवगदि--पंचिदिय०--वेउव्यय--तेजा०--क०--समचदु०-- वेउव्यि०अंगो०--वण्ण०४-दे-वाणु०--अगु०४--पसत्थ-०तस०४--थिराथिर-सुभासुम-सुभग - सुस्सर - आदेजा-जस०-अजस०--णिमि०--तित्थय०--उचा०--पंचेत० जह० संखेजा । अज० असंखेजा। आहारदुगं ओदं।सेसास्रं दो वि पदा असंखेजा। विचिजो०-असचमो०-इत्थि०-पुरिस० पंचिदियभंगो । एवरि इत्थि० तित्थय० जह० अज०संखेजा।

४६७ श्रोरालियमि०-फम्मइ०-अणाहार० विरिक्षियं। णवरि देवमदि०४-वित्थय० उक्कस्मभंगो। वेउव्वि०-वेउव्यिमि०-आहार०-श्राहारिम०-श्रवगद०-मणप-ज्ञव०-संजद-सामाइ०-श्रेदोव०-परिहार०-मुहुमसंप० उक्कस्सभंगी। मदि-सुद०-श्रमंज०-विषिणले०-श्रवमवसि०-मिच्छादि०-श्रमण्यि० विरिक्षोघं। णवरि श्रमंजद० वित्थय० जह० संखेंजा। श्रज० असंखेंजा। किण्ण०-णील० वित्थय० जह० संखेंजा। काऊए विरथय० दो वि पदा श्रसंखेंजा।

४६८. विभंगे पंचणा०-णवदंसणा०-सादा०-मिच्छ०-सोलसक०-पंचणोक०-देवगदि-पसत्थद्वावीस-उचा०-पंचंत० जह० संखेजा। अज० असंखेजा । सेसाणां जह०

सातावेदनीय, असातावेदनीय, चौबीस मोहनीय, देवगति, पब्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शरीर, तैजस शरीर, कामण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वैक्रियिक आंगोपांग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुत्वयु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, असचतुष्क, स्थिर, आंध्यर शुभ, अशुभ, सुभग, सुस्वर, आदेय, यशःकीति, अयशःकीति, निर्माण, तीर्थकर, उचगोत्र और पाँच अन्तराय इनकी जवन्य स्थितिके बन्धक जीव संख्यात हैं। आहारक द्विकका भंग ओवके समान है, तथा अजवन्य स्थितिके बन्धक जीव असंख्यात हैं। आहारक द्विकका भंग ओवके समान है, तथा शेप प्रकृतियोंके दोनों ही पदवाले जीव असंख्यात हैं। वचनयोगी, असल्यमृपावचनयोगी, स्त्रीवेदी और पुरुपवेदी जीवों में भंग पञ्चिन्द्रयों के समान है। इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेदियोंमें तीर्थङ्कर प्रकृतिकी जवन्य और अजवन्य स्थितिके बन्धक जीव संख्यात हैं।

४६७ श्रोदारिक मिश्रकाययांगी, कार्मण काययांगी श्रोर श्रमाहारक जीवोंका भंग सामान्य तिर्यक्चोंके समान है। इतनी विशेषता है कि देवगति चतुष्क श्रीर तीर्थकर प्रकृति का भंग उत्कृष्टके समान है। वैक्रियिक काययंगी, वैक्रियिक मिश्रकाययोगी, श्राहारक काययोगी, श्राहारक मिश्रकाययोगी श्रपगतवेदी, मनःपर्ययद्वानी, संयत, सामायिक संयत, छेदोपध्थापनासंयत, परिहार्रविश्चित्रितंयत श्रीर सृक्ष्मसाम्पराय संयत जीवोंमें श्रपनी सब प्रकृतियोंका भंग उत्कृष्टके समान है। मत्यद्वानी, श्रुताद्वानी, स्थान है। इतनी विशेषता है कि श्रमंयतोंमें तीथद्वर प्रकृतिकी ज्ञानय स्थितके वन्धक जीव संस्थात हैं। तथा श्राज्ञानय स्थितके बन्धक जीव श्रमंख्यात हैं। श्रुपण श्रीर नील लेश्यामें तीर्थकर प्रकृतिकी ज्ञानय श्रार श्राज्ञानय स्थितिके वंधक जीव संख्यात हैं। काषीत लेश्यामें तीर्थक्वर प्रकृतिकी दोनीं ही पर्वाले जीव श्रमंख्यात हैं। काषीत लेश्यामें तीर्थक्वर प्रकृतिके दोनीं ही पर्वाले जीव श्रमंख्यात हैं।

४६८ विभंगज्ञानी जीवंभि पाँच क्रानावरण, मी दर्शनावरण, सातावेदनीय, भिथ्याख, सीलह क्रपाय, पाँच नीक्रपाय, देवर्गात च्यादि प्रशास च्याहिस प्रकृतियाँ, उच्चगाप्र च्यार पाँच खन्तराय इनकी अवस्य (खानके बन्धक जीव संख्यात है। तथा च्याजवस्य स्थितिके बन्धक जीव श्रज्ञ श्रसंखेंजा। श्राभि-०सुद०-श्रोधि०-मणुसायु०-श्राहारदुगं उक्कस्सभंगो। मणुसग-दिपंचगं देवायु० ज० श्रज्ञ० श्रसंखेंजा। सेसाणं ज० संखेंजा। अज० [श्रसंखेंजा]। एवं श्रोधिदंस०-सम्मादि०-खइग०-वेदग०-उवसम०। स्वारि खइगे दो श्रायु० उवसभे यथासंखाए तित्थय० उक्कस्सभंगो। चक्खुदं० तसपज्जनभंगो।

४६९. तेऊए इत्थि०-णवुंस०-तिरिक्ख-देवायु--तिरिक्खगदि०४--मणुसगदिपंचगएइंदि०-पंचसंठा०-पंचसंघ०-आदाव०-अप्पसत्थ०-थावर-दूभग-दुस्सर-अणादे० ज०
अज० असंखेंजा। सेसाणं ज० संखेंजा। अज० असंखेंजा। मणुसायु-आहारदुगं दो
वि पदा संखेंजा। एवं पम्माए वि। णविर एइंदियतिमं वजा। सुक्काए इत्थि०खवंस०-मणुसगदिपंचग-पंचसंठा०- पंचसंघ०- अप्पसत्थ०- दूभग - दुस्सर -- अणादें०
खीचा० अ० अज० असंखेंजा। दोआयु-आहारदुगं उक्करसभंगो। सेसाणं जह०
संखेंजा। अज० असंखेंजा।

४७०, सासग्र०-सम्मामि० पसत्थागां ज० अज० असंखेंजा। मणुसायु० उक्कस्सभंगो। सग्रणीसु खनिगागां देनगदि०४-तित्थय० जह० संखेंजा। अज०

असंख्यात हैं। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य श्रीर श्रजहान्य स्थितिके वन्धक जीव असंख्यात हैं। आभिनिवोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी श्रीर अविधिज्ञानी जीवोंमें मनुष्यायु और आहारकद्विकका भंग उत्कृष्टके समान है। मनुष्यगित पञ्चक श्रीर देवायुकी जघन्य श्रीर श्रजघन्य स्थितिके वन्धक जीव असंख्यात हैं। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके वन्धक जीव संख्यात हैं। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके वन्धक जीव संख्यात हैं। इसी प्रकार अवधिदर्शनी, सम्यग्दृष्टि, ज्ञायिकसम्यग्दृष्टि, वेदक सम्यग्दृष्टि श्रीर उपशमसम्यग्दृष्टि जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि ज्ञायिक सम्यग्दृष्टि जीवोंमें दो आयु और उपशम सम्यग्दृष्टि जीवोंमें क्रमसे तीथंकर प्रकृतिका भंग उत्कृष्टके समान है।

४६६. पीतलेश्यावाले जीवोंमें स्रीवेद, नपुंसकवेद, तिर्यव्चायु, देवायु, तिर्यव्चगति चतुष्क, मनुष्यगतिपंचक, एकेन्द्रिय जाति, पाँच संस्थान, पाँच संह्नन, आतप, अप्रशास विहायोगति, स्थावर, दुभंग, दुस्वर, अनादेय प्रकृतियोंकी जघन्य और अजधन्य स्थितिके बन्धक जीव असंख्यात हैं। रोष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव संख्यात हैं। राष्ट्रियांकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव संख्यात हैं। मनुष्यायु और आहारकदिकके दोनों ही पदवाले जीव संख्यात हैं। इसी पद्मलेश्यावाले जीवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है एकेन्द्रियत्रिकको छोड़कर कहना चाहिए। शुक्रलेश्यावाले जीवोंमें खीवेद, नपुंसकवेद, मनुष्यगतिपञ्चक, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, अप्रशासत विहायोगित, दुभंग, दुःस्वर, अनादेय और नीचगोत्रकी जधन्य और अजधन्य स्थितिके बन्धक जीव असंख्यात हैं। दो आयु और आहारकदिकका भङ्ग उत्कृष्टके समान है। शेष प्रकृतियोंकी जधन्य स्थितिके बन्धक जीव संख्यात हैं। शेष प्रकृतियोंकी जधन्य स्थितिके बन्धक जीव संख्यात हैं।

४७० सासादनसम्यग्द्दिन्द्र श्रीर सम्यग्निश्याद्दिः जीवोमें प्रशस्त प्रकृतियोंकी जघन्य श्रीर श्रजवन्य स्थितिके बन्धक जीव श्रसंख्यात हैं। मनुष्यायुका भङ्ग दरक्वष्टके समान है। संज्ञी जीवोमें चपक प्रकृतियाँ, देवगति चार श्रीर तीथद्भर प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव संख्यात हैं। अजधन्य स्थितिके बन्धक जीव असंख्यात हैं। श्राहारकद्विकका भङ्ग श्रोवके समान है। शेष

# असंखेर्जा । आहारदुगं ओघं। सेसाएां जह० अज० असंखेर्जा । एवं परिमाणं समत्तं । स्ट्रेतिपरूवणा

४७१. खें चं दुवि०-जह० उक्त० । उक्तस्सए पगदं । दुवि०-श्रोघे० श्रादे० । श्रोघेण तिरिण श्रायुगाणं वेउवित्रयञ्च०-श्राहारदुग-तित्थय० उक्त० श्राणु० हि० केविड खेंचे ? लोगस्स श्रसंखेंज्जिदिमागे । सेसाणं उक्त० लोगस्स श्रसंखेंजिदिमागे । श्राणु० सन्वलोगे । एवं श्रोघमंगो तिरिक्लोघो कायजोगि-श्रोरालि०-श्रोरालियमि०-कम्मइ०-णवुंस० - कोधादि०४-मदि०-सुद०-श्रसंज० - श्रवक्खु०- तिरिणले०-भवसि०-श्रवमवसि०-मिन्छादि०-श्रसणिण०-श्राहार०-श्रणाहारग ति । णविर किएण०-णील०-काउ० तित्थय० उक्त० श्रणुक्त० लोगस्स श्रसंखेंजिदिभागे ।

४७२ एइंदिएसु पंचणा०-णवदंस०-सादासाद०-मोहणीय०२४-तिरिक्खगदि-एइंदि०-त्रोरालि०-तेजा०-क०-हुंडसं०-वरण०४- तिरिक्खाणु०-त्रगु०४-थावर-सहुम-पज्जतापज्जत्त-पत्ते०- साधार०-थिराथिर - सुभासुप्त-दूभग -त्रणादेँ०-त्रज०-णिमि०-णीचा०-पंचंत० उक्क० त्रणु० सन्वलोगे। इत्थि०-पुरिस०-चदुजादि-पंचसंठा०-त्रोरालि० द्यंगो०-छरसंव०-त्रादाउडजो०-दोविहा०-तस-बादर- सुभम-सुस्तर-दुस्तर-त्रादेंज्ज०-जस० उक्क० लोग० संखेंज्ज०। श्रणु० सन्वलोगे। तिरिक्ख-

प्रकृतियोंकी जधन्य श्रीर अजधन्य स्थितिके बन्धक जीव श्रसंख्यात हैं। परिमाण समाप्त हुआ। चैत्रश्रह्मणा

४७१. चेत्र दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्ट का प्रकरण है । उसकी अपेचा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे तीन आयु, वैकिथिक छह, आहारकि की तीर्थंकरकी उत्कृष्ट और अनुकृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका कितना चेत्र है ? लोकका असंख्यातवाँ भाग नेत्र है । शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका चेत्र लोकके संख्यातवाँ भाग प्रमाण है । तथा अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका चेत्र सब लोक है । इस प्रकार ओघके समान सामान्य तियञ्च, काययोगी, औदारिक काययोगी, औदारिक मिश्र काययोगी, कार्मणकाययोगी, नपुंसकदेदी, कोधादि चार कषायवाले, मत्यझानी, श्रुताझानी, असंयत, अचलुदर्शनी, तीन लेश्यावाले, भव्य, अभव्य, मिथ्यादृष्टि, असंझी, आहारक और अनाहारक जीवोंके जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि कृष्ण, नोल और कापोत लेश्यामें तीर्थं क्रूर प्रकृतिको उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका चेत्र लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण है ।

४७२. एकेन्द्रियोंमें पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, सातावेदनीय, असातावेदनीय, चौनीस मोहनीय, तिर्यञ्च गति, एकेन्द्रिय जाति, खौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुएडसंस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, स्थावर, सूदम, पर्याप्त, अपर्याप्त, प्रत्येक, साधारण, स्थिर, अस्थिर, शुम, अशुम, दुमंग, अनादेय, अयशःकीर्ति, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनकी उत्कृष्ट और अनुस्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका चेत्र सब लोक है। स्थिवेद, पुरुषवेद, चार जाति, पाँच संस्थान, औदारिक आक्षापाङ्ग, अह संहनन, आतप, उद्योत, दो विहायोगित, त्रस, वादर, सुमग, सुस्वर, दुस्वर, आदेय और यशःकीर्ति इनकी उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंका चेत्र लोकके संख्यातवें भाग प्रभाण है। तथा अनुस्कृष्ट स्थितिके बन्धक

मणुसायु०--मणुसगदि-मणुसाणु०--उच्चा० श्रोघं । बादरएइंदियपञ्जत्तापञ्जत्व० थावरपगदीणं उक्क॰ श्रणु० सन्वलो० । मणुसायु०-मणुमगदि-मणुसाणु०--उच्चा० उक्क० श्रणु० लोग० श्रसंखेंज्ज० । तिरिक्खायु० उक्क० लोग० श्रसंखेंज्ज० । श्रणु० लोग० संखेंज्जि० । सेसाणं उक्क० श्रणु० लोग० संखेंज्जा० । सहुमएइंदिय-पञ्जता-पज्जत्त । तिरिक्ख-मणुसायु श्लोघं । सेसाणं सन्वयगदीणं उक्क० श्रणु० सन्वलोगे । एवं सन्वसुदुमाणं ।

४७३ पुढवि०-श्राउ०-तेउ०-वाउ० सव्वासं श्रोघं। बादरपुढविका०-श्राउ०तेउ०-वाउ०-वादरवसप्फदिपत्ते० थावरपगदीणं उक्क० लो० श्रसंखेंज्ज०।
श्रायु० सव्वलो०। तिरिक्खायु०-तसपगदीसं उक्क० श्रायु० लो० श्रसंखेंज्ज०।
बादरपुढवि-०श्राउ०-तेउ-वाउ०-वादरवसप्फदिपत्ते०पज्जत्ता० विगलिदियभंगो।
बादरपुढवि०-श्राउ०-तेउ०-वाउ०-वादरवसप्फदिपत्ते०श्रपज्जत्ता० थावरपगदीणं
उक्क० श्रायु० सव्वलो०। मसुसायु० श्रोघं। तिरिक्खायु० तसपगदीणं च
उक्क० श्रायु० लो० श्रसंखेंज्ज०। सवरि बादरवाऊसं श्रायु० श्रायु० श्रायु०

जीवोंका चेन्न सब लोक है। तिर्यक्कायु, मनुष्यायु, मनुष्यायि, मनुष्यगरयानुपूर्वी श्रीर उच्चगोत्रका मंग श्रीयके समान है। बादर एकेन्द्रिय श्रीर इनके पर्याप्त श्रीर अपर्याप्त जीवोंमें स्थावर प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट श्रीर श्रनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंका चेत्र सब लोक है। मनुष्यायु, मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी श्रीर उच्चगोत्रकी उत्कृष्ट श्रीर अनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंका चेत्र लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। तिर्यक्कायुकी उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंका चेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है, तथा अनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंका चेत्र लोकके संख्यातवें भागप्रमाण है। रोष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट श्रीर अनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंका चेत्र लोकके संख्यात बहुभाग प्रमाण है। सूद्म एकेन्द्रिय श्रीर इनके पर्याप्त श्रीर अपर्याप्त जीवोंका चेत्र लोकके संख्यात बहुभाग प्रमाण है। सूद्म एकेन्द्रिय श्रीर इनके पर्याप्त श्रीर अपर्याप्त जीवोंका तिर्यक्कायु और मनुष्यायु का भङ्ग श्रोघके समान है। तथा शेप सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट श्रीर अनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंका क्षेत्र सब लोक है। इसी प्रकार सब सूद्म जीवोंके जानना चाहिए।

४७३. पृथ्वीकायिक, जलकायिक, द्राप्तिकायिक, त्रोर वायुकायिक जीवोंमें सब प्रकृतितियों का भङ्ग स्रोघके समान है। बादर पृथ्वीकायिक, बादर जलकायिक, बादर त्राप्तिकायिक, बादर वायुकायिक खौर वादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर जीवों में स्थावर प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवों का क्षेत्र लोकके त्र्रसंख्यातवें भाग प्रमाण है। त्रानुकृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंका क्षेत्र लोकके त्र्रसंख्यातवें भाग प्रमाण है। बादर पृथ्वीकायिक पर्याप्त, बादर जलकायिक पर्याप्त, बादर क्राप्तिकायिक पर्याप्त, बादर क्राप्तिकायिक पर्याप्त, बादर क्राप्तिकायिक पर्याप्त, बादर वायुकायिक पर्याप्त, बादर वायुकायिक प्रत्येक शरीर पर्याप्त जीवोंका भङ्ग विकलेन्द्रिय जीवोंके समान है। बादर पृथ्वीकायिक क्राप्याप्त, बादर जलकायिक त्राप्तिकायिक प्रयोप्त, बादर जलकायिक त्राप्तिकायिक प्रत्येकशरीर त्राप्ति, वादर वायुकायिक क्राप्याप्त, बादर वायुकायिक क्राप्याप्त, बादर वाद्यकायिक क्राप्याप्त, बादर वास्पतिकायिक प्रत्येकशरीर त्राप्ता जीवोंमें स्थावर प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट क्षार क्रानुकृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंका क्षेत्र लोक के त्रसंख्यातवें भाग प्रमाण है। इतनी विशेषता है कि वादर वायुनिक बन्धक जीवोंका क्षेत्र लोक के त्रसंख्यातवें भाग प्रमाण है। इतनी विशेषता है कि वादर वायुन

संखेंज । सेसार्ग यम्हि लोगस्स असंखेंज ० तम्हि लोगस्स संखेंज ० काद्व्वो । वर्गाष्फदि-णियोद० थावरपगदीर्ग उक्क अणु० सव्वलो० । मणुसायु० श्रोधो । तिरिक्खायु०-तसपगदीर्ग लोग० असंखेंज० । अणु० सव्वलोगे । बादरवर्गाष्फदि-णियोद० पजनापजनगर्गा च बादरपुढवि०अपजनभंगो । सेसार्ग शिरयादि याव सिर्ण नि संखेंजासंखेंजरासीर्ग उक्क० अणु० लोग० असंखेंजदिभागे ।

## एवं उकस्सं समत्तं

४७४ जहण्णए पगदं । दुवि०-श्रोघे॰ आदे० । श्रोघे० पंचणा०-चदुदंसणा०-सादा०-चदुसंज०-पुरिस०-मणुसगदि-मणुसाग्छ०-जस०-उचा०-पंचंत० जह० लो० असंखेज्ज० । अज० सन्वलोगे । तिरिणश्रायु०-वेउविवयछ०-आहारदुग-तित्थय० जह० अज० उक्तस्समंगो । तिरिक्खायु०-सहुमणाम० ज० अज० सन्वलो० । सेसाग्रं ज० लो० संखेज्ज० । अज० सन्वलो० । एवं श्रोघमंगो कायजोगि-श्रोरालि०-णवंस० कोधादि०४-अवक्खु०-भवसि०-आहारग ति ।

४७५ तिरिक्खेसु वेउव्वियञ्च०-तिरिण्णाश्चायु०-मणुस०-मणुस।णु०-उच्चा० श्रोधं। तिरिक्खायु०-सुहुमणामाणं जह० अज० सव्वलो०। सेसाणं श्रोधं। एवं एइंदि०-कायिक जीवों में श्रायुकी श्रनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका चेत्र लोकके संख्यातवें भाग प्रमाण है। शेष प्रकृतियोंके बन्धक जीवोंका जहाँ लोकका श्रसंख्यातवों भाग चेत्र कहा है,वहाँ वह लोकके संख्यातवें भाग प्रमाण जानना चाहिए। वनस्पतिकायिक श्रौर निगोद जीवोंमें स्थावर प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट श्रौर श्रनुकृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका चेत्र सब लोक है। मनुष्यायुका भंग श्रोधके समान है। तिर्यश्चायु श्रौर त्रस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका चेत्र लोकके श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण है, तथा श्रनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवों चेत्र सब लोक है। बादर बनस्पतिकायिक श्रोर निगोद जीव तथा इनके पर्याप्त श्रौर श्रपर्याप्त जीवोंका भंग बादर पृथ्वीकायिक श्रपर्याप्त जीवोंके समान है। शेप नरकगतिसे लेकर संज्ञी मार्गणा तक संख्यात श्रौर श्रसंख्यात राशिवाले जीवोंमें उत्कृष्ट श्रीर श्रनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका चेत्र लोकके श्रसंख्यात राशिवाले जीवोंमें उत्कृष्ट श्रीर श्रनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका चेत्र लोकके श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण है।

इस प्रकार उत्कृष्ट चेत्र समाप्त हुआ।

४०४. जघन्यका प्रकरण है। उसकी अपेत्ता निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, सातावेदनीय, चार सं ज्वलन, पुरुषवेद, मनुष्यागित, मनुष्यास्यानुपूर्वी, यशकीर्ति, उत्तरोत्र और पाँच अन्तराय इनकी जघन्य स्थितिके वन्धक जीवोंका त्तेत्र लोकके असंस्थातवे भाग प्रमाण है। अजघन्य श्थितिके वन्धक जीवोंका त्तेत्र सव लोक है। तीन आधु, विक्रियिक छह, आहारकिहक और तीर्थक्कर इनकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके वन्धक जीवोंका त्रेत्र सब लोक है। तिर्थक्कायु और सूद्म इनकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके वन्धक जीवोंका त्रेत्र सब लोक है। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके वन्धक जीवोंका त्रेत्र सब लोक है। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके वन्धक जीवोंका त्रेत्र सब लोक है। इसी प्रकार आघके समान काययोगी, औदरिक काययोगी, नपुंसकवेदी, क्रोधादि चार क्षायवाल, अञ्चलुदर्शनी, भव्य और आहारक जीवोंके जानना चाहिए।

४७४. तिर्येक्कोंमें वैक्रियिक छह्, तीन त्रायु, मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी त्रौर उचगोत्रका भङ्ग स्रोधके समान है । तिर्येक्कायु स्रोर सूद्दमकी जधन्य स्रोर त्र्यजधन्य स्थितिके वंधक जीवोंका द्वेत्र सब बादरएइंदि०-पडजत्तापडजत्त०। थावरपगदीसं च एवं चेव। तिरिक्खायु०-तसपगदीसं च ज० अज० लोग० संखेडज०। मसुसायु-मसुसगदिदुग० दो पदा लोग० असंखेडज०। सब्बसुसुपासं मसुसायु० ओघं। सेसासं सब्बपगदीसं ज० अज० सन्त्रलो०।

४७६ पुढवि०--म्राउ०-तेउ०--वाउ० तिरिक्ख-मणुसायु० त्रोघं।सेसाणं ज० लो० असं०। अज० सन्वलो०। बादरपुढवि०-त्राउ०-तेउ०-वाउ० थावरपगदीणं ज० लो० असंखेँ०। अज० सन्वलो०।सेसाणं ज० अज० लोग० असंखेँ०। बादरपुढवि०-आउ०--तेउ०--वाउ०पज्जन० विगलिंदियभंगो। बादरपुढवि०--आउ०--तेउ०--वाउ०- अपण्जन० थावरपगदीणं जह० लोग० असंखेँ०। अज० सन्वलो०।दोन्नायु०-तसपगदीणं जह० अज० लोग० असंखेँ०। सुहुमं दो वि सन्वलोगे। एवरि वाऊणं सन्वत्थ जह० लो० असंखेँ० तिक्ह लोगस्स संखेँ अदिमागं कादन्वं। वसप्परि-िण्योदाणं दोन्नायु०--सुहुमणाम० भ्रोघं।सेसाणं ज० लो० असंखेँ अ०। अज०

लोक है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग श्रोधके समान है। इसीप्रकार एकेन्द्रिय, बादर एकेन्द्रिय श्रौर इनके पर्याप्त-श्रपर्याप्त जीवोंके जानना चाहिए। स्थावर प्रकृतियोंका चेत्र इसी प्रकार है। तिर्यं व्चायु श्रौर त्रस प्रकृतियों की जवन्य श्रौर श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका चेत्र लोकके संस्थातवें भाग प्रमाण है। मनुष्यायु श्रौर मनुष्यगतिद्विक इनके दोनों ही पदोंका चेत्र लोकके श्रसंस्थातवें भाग प्रमाण है। सब सूद्दम जीवोंके मनुष्यायुका भंग श्रोधके समान है। शेष सब प्रकृतियोंकी जबन्य श्रौर श्रजधन्य स्थितिक बन्धक जीवोंका चेत्र सब लोक है।

४७६. पृथ्वीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक और वायुकायिक जीवोंमें तिर्युद्धाय श्रीर मनुष्याय का भंग श्रोधक समान है। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य श्थितिके बन्धक जीवोंका होत्र लोकके ऋसंख्यातवें भाग प्रमाण है और अजधन्य स्थिति के बन्धक जीवों का चेत्र सब लोक है। बादर पृथिवीकायिक, बादर जलकायिक, बादर अग्निकायिक और बादरवायकायिक जीवोंमें स्थावर प्रकृतियोंकी जघन्य स्थिति के बन्धक जीवोंका चेत्र लोकके ऋसंख्यातवें भाग प्रमाण है ऋौर खज्जवन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका चेत्र सब लोक है। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य ख्रौर खज्जवन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जेत्र लोकके ऋसंख्यातवें भाग प्रमाण है। बादर पृथ्वीकायिक पर्याप्त, बादर जलकायिक पर्याप्त, बादर अग्निकायिक पर्याप्त और बादर वायुकायिक पर्याप्त जीवोंमें अपनी सब प्रकृतियोंका भुद्ध विकृतेन्द्रियोंके समान है । बादर पृथ्वीकायिक अपर्याप्त, बादर जलकायिक अपर्याप्त, बादर अग्निकायिक अपर्याप्त और बादर वायुकायिक अपर्याप्त जीवोंमें स्थावर प्रकृतियोंकी जधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका चेत्र लोकके ऋसंस्थातवें भाग प्रमाण है और अजधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका क्षेत्र सव लोक है। दो श्राय श्रौर त्रस प्रकृतियोंकी जघन्य श्रौर त्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका क्षेत्र लोकके ऋसंख्यातवें भाग प्रमाण है। सूच्मके दोनों ही पदवाले जीवोंका क्षेत्र सब लोक है। इतनी विशेषता है कि वायुकायिक जीवोंके सर्वत्र जहाँ लोकका असंख्यातवां भाग चेत्र कहा है वहाँ लोकका संख्यातवाँ भाग चेत्र कहना चाहिए। वनस्पतिकायिक त्र्यौर निगोद जीवोंमें दो त्राय स्रौर सद्मनामकी त्रपेचा चेत्र स्रोघके समान है। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण है और अजघन्य स्थितिके बन्धक

सब्बलो० । बादरवर्षण्कदि-शियोदार्शं पञ्जतापञ्जता० थावरपगदीसं ज० लो० श्रमंखेंज्ज०। श्रज्ञ० सन्बली० । सेसार्ख यगदीशं ज्ञ ग्रज० असंखेंज्ज० । सुद्रम० दो वि पदा सञ्जलो० । बादरवगुष्फदिपत्ते० बादरपुढविभंगो ।

४७७. श्रोरालियमि० तिरिक्ख-मणुसायु-मणुसगदि-मणुसाणु-देवगदि०४--तित्थ-य०--उचा० श्रोघं। सेसागं तिरिक्खोघं। एवं कम्मइ०-प्रगाहारम त्ति। मदि०-सुद०-श्रसंजितिरिया०-श्रब्भवसि०-भिच्छादि०-श्रसियाः विरिक्लोदं । सेसायां शिरयादि यात्र सिर्णि० संबैंडजासंबेंडजरासीगां जह० अज० लो० असंबेंडज०। एवं खेंचं समतं

# फोसग्रापरूवग्रा

४७८. फोसर्ण दुवि०-जह० उक्त० । उक्तस्सए पयदं । दुवि०-भ्रोपे० आदे० । श्रोघे० पंचर्याः--सवदंससा-श्रसादावे०-मिच्छ०- सोलसक०--सवुंस०--श्ररदि--सोग- भय-दुर्गु०-तिरिक्खग०-श्रोरासि०--तेजा०--ऋ०--हुंड०--वण्ण०४--तिरिक्खाग्रु०--श्रगु० ४--उच्जो ०--बादर-पञ्जत-पत्ते ०-अश्विर-असुभ द्भग-दुस्तर-अणादे ०-जस ०-अजस ०-णिमि०-णीचा०-पंचंत० उकस्सद्रिदिवंधगेहि केवडियं खेंत्तं फोसिदं ? लोगस्स असंखेंज्ज अह-तेरसचों इसमागा वा देख्या। अग्रु० सन्वलो०। सादा०-हस्स

जीवाँका चेत्र सब लोक है। बादर बनस्पतिकायिक और निगोद तथा इनके पर्याप्त और अपर्याप्त जीवोंमें स्थावर प्रकृतियोंकी जधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका चेत्र लोकके ऋसंस्यातवें भाग प्रमाण है श्रीर श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका द्वेत्र सब लोक है। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य श्रीर अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका चेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है। सुदमके दोनों ही पदोंका चेत्र सब लोक है। बादर बनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर जीवोंका भक्क बादर पृथिबीकायिक जीवोंके समान है।

४७० औदारिक मिश्रकाययोगी जीवोंमें तियेखायु, मनुष्यायु, मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानु-पूर्वी, देवगति चतुष्क, तीर्थक्कर श्रौर उच्चगोत्र इनका भक्क श्रोघके समान है। शेष प्रकृतियोंका भक्क सामान्य तिर्थब्चोंके समान है। इसी प्रकार कार्मणुकाययोगी और अनाहारक जीवोंके जानना चाहिए। मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, श्रसंयत, तीन लेश्यावाले, श्रमञ्य, मिथ्यादृष्टि श्रौर श्रसंज्ञी जीवोंके अपनी सब प्रकृतियोंका भक्न सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है। शेष नरक गतिसे लेकर संज्ञीतक संख्यात श्रीर श्रसंख्यात राशिवाली सब मार्गणात्रोंमें जघन्य श्रीर श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका चेत्र लोकके ऋसंख्यातवें भाग प्रमाण है। इस प्रकार चेत्र समाप्त हुन्या ।

### स्पर्शन प्ररूपणा

४७८. स्पर्शन दो प्रकारका है--जघन्य ऋौर उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है-अोघ और आदेश। ओघसे पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असाताचेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, नपुंसकवेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, तिर्यब्चगति श्रौदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, हुएडसस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यवचगत्यानुपूर्वी, श्रगुरू-लघुचतुःक, उद्योत, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक शरीर, ऋस्थिर, ऋशुभ, दुर्भग, दुःस्वर, अनादेय, यशः कीर्ति, अयशःकीर्ति, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनकी उत्क्रप्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कितने चेत्रका स्परान किया है ? लोकके ऋसंख्यातवें भाग, कुछ कम ऋाठवटे चौदहराजु और कुळ कम तेरह बटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। ऋतुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब

रदि-धिर-सुभ० उक्क० लो० ऋसंखेऽबदिभागो श्रह्ण—चोइसभागा वा देख्या। त्र्रणु० सब्बलो० । सादा०–हस्स–रदि−थिर–सुभ० उक्क० लो० श्रसंखें<sup>ड्</sup>जदिभागो अडु-चोंद्समागा वा देस्रणा सब्बलोगो वा। श्रणु ० सब्बलो० । इत्थि०-पुरिस०-पंचिद्वि - पंचसंठा ० - श्रोरालि ० अंगो ० - छस्संघ ० - दोविहा ० - तस-सुभग - दोसर ० - श्रादे० उक्क० लोगस्स श्रमंखे० अष्ट-बारह० । ऋगु० सन्वलो० । णिरय-देवायु०-श्राहारदुगं खेंत्तमंगो । एवं सञ्वत्थ । तिरिक्खायु–तिण्यिजादि० उक्क० खेत्त० । ऋगुक्क० सञ्वलो० । मसुसायु० उक्क० खेत्त० । असु० अट्टचोइस० सन्वलोगो । सिरयग०-सिरयासु० अणु ० लोगस्य असंखें ० अचोद्स० । मणुसग०-मणुसाणु०-आदाव०-उचा० उक्क० लोगस्स असंखे० ऋदुचोद्दस०। ऋगु० सन्वलो०। वेउन्वि०-वेउव्विव्श्रंगोव उक्तव लोव असंखेंव छचोदसव । ऋगुव बारहचोंदसव । देवगव-देवाणु० उक्क० लो० असंखें० अथवा दिनडूचोंदस०। अणु० छचोंदस०। एइंदि०--थावर० उक्क० अट्ट--खवचोहस० । ऋखु० सव्वलो० । सुहुम-अपजत-लोक चेत्रका स्परीन किया है। सातावेदनीय, हास्य, रति, स्थिर, श्रीर शुभ प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके ऋसंस्थातवें भाग और कुछ कम ऋाठ वटे चौदह राजू न्नेत्रका स्पर्शन किया है। ऋनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। सातावेदनीय, हास्य, रति, स्थिर और शुभकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके श्रसंख्यात**वें** भाग, कुछ कम ब्राठवटे चौदह राजु ब्रीर सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्रीवेद, पुरुषवेद, पब्चेन्द्रिय जाति, पाँच संस्थान, ब्रौदारिक ब्राङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, दो विहायो-गति, त्रस, सुभग, दो स्वर स्त्रीर स्रादेय इनकी उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंने लोकके असंस्यातवें भाग, कुछ कम आठ वटे चौदह राजु और कुछ कम बारह वटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। नरकायु, देवायु और आहारकद्विकका भङ्ग चेत्रके समान है। इसी प्रकार इन तीन प्रकृतियोंके आश्रयसे सर्वत्र रपर्शन जानना चाहिए। तिर्यञ्चायु त्र्यौर तीन जातिकी उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंका स्पर्शन स्रेत्रके समान है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन सब लोक है। मनुष्यायुकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन त्रेत्रके समान है। अनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंने कुछ कम आठचटे चौदह राजु श्रोर सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। नरकगति श्रोर नरकगत्यानुपूर्वीकी उत्कृष्ट और अनत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंस्थातवें भाग प्रमाण और कुछ कम छह वटे चोदह राजु चेदका स्पर्शन किया है। मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, आतप श्रौर उचगोत्रकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवे भाग प्रमाण और कुछ कम श्राठवटे चौदह राजु त्रेत्रका स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट स्थितके वन्धक जीवीने सब लोक न्नेत्रका स्पर्शन किया है। वैक्रियिक शरीर ख्रौर वैक्रियिक ख्राङ्गोपाङ्गकी उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और कुछ कम छह बटे चाँदह राध चेत्रका स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम बारह यटे चौदह राजू देवका स्पर्शन किया है। देवगति ऋौर देवगत्यानुपूर्वीकी ब्ल्क्षष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लाकके असंख्यातवेभाग प्रमास् अथवा कुम कम डेड़ बटे चौद्द राजू तेत्र का खरीन किया है । अनुस्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंने कुछ कम छह वटे चौदह राजु केशका स्पर्शन किया है। एकेन्द्रिय जाति और स्थावर इसकी उत्कृष्ट स्थिति के बन्धक जीवों ो कुछ कम आठवटे चीदह राजु और कुछ कम नी

साधारण० उक्क० लो० त्रसंखेँ० सञ्चलो० । श्रणु० सञ्चलो० । तिस्यय० उक्क० खेँतभंगो । श्रणु० श्रद्धचोँ इस० ।

४७६. आदेसेश शेरइएस दोश्रायु-मणुसग०-मणुसाणु०-तित्थय०-उचा० उक्क० अणु० खेतं। सेसं उक्क० श्रणु० छचोंइस०। पढमाए पुढवीए खेत्तभंगो। विदियादि याव सत्तम ति दोश्रायु-मणुसगदिदुग-तित्थय०-उचा० उक्क० श्रणु० खेत्तभंगो। सेसाणं उक्क० बे-तिण्णि-चत्तारि-पंच-छचोंइस०।

४८० तिरिक्षेषु पंचणा०-णवदंस०-ग्रसादा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-ग्राह्मिसोग-मय-दुर्गु०-पंचिदि-न्तेजा०-क०-हुंड०-वएण०४-ग्रमु०४-ग्रप्पत्थ०-तस०४--ग्रथिरादिछ०--णिमि०--णीचा०-पंचंत० उक्क० छचीँ इस०। श्रणु० सन्वलो०। सादा०-हस्स-रिद--तिरिक्खगदि -- एइंदि०-- श्रोरालि०-तिरिक्खाणु०-थावरादि०४--थिर-सुम० उक्क० लो० श्रसं० सन्वलो०। श्रणु० सन्वलो०। इत्थि०--तिरिक्खायु०--मणुसगदि--तिरिणजादि-चदुसंठा०-श्रोरालि०श्रंगो०-श्रसंघ०-श्रादाव० खेंचभंगो।

बटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। अनुस्कृष्ट स्थिति के बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। सूदम, अपयोप्त और साधारण इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोक के असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। अनुस्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। अनुस्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। तीर्थ इस प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। और अनुस्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया हैं।

४७६. आदेशसे नारिकयों में दो आयु, मनुष्यगित, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, तीर्थक्कर और उच्चाित्र इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्र के समान है। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंके कुछ कम छह वटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। पहिली में सब प्रकृतियोंके स्पर्शनका भङ्ग चेत्रके समान है। दूसरी पृथ्वीसे लेकर सातवीं तक दो आयु, मनुष्यगतिद्विक, तीर्थक्कर और उच्च गोत्रकी उत्कृष्ट खोर अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कमसे कुछ कम एक बटे चौदह राज्, कुछ कम दो बटे चौदह राज्, कुछ कम तीन बटे चौदह राज् कुछ कम चार बटे चौदह राज् खार कुछ कम चार बटे चौदह राज् खार कुछ कम पांच बटे चौदह राज् कुछ कम चार बटे चौदह राज खार कुछ कम पांच बटे चौदह राज खार किया है।

४८०. तिर्यश्चों में पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, श्रासातावेदनीय, मिध्यात्व सोलह क्षाय, नपुंसक वेद, श्राति, शोक, मय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुएडसंस्थान, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघुचतुष्क, श्रप्रास्त विहायोगित, त्रस चतुष्क, श्रास्थर श्रादि छह, निर्माण, नीचगोत्र श्रोर पाँच श्रन्तराय इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने छुछ कम छह वटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। श्रातुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। सातावेदनीय हास्य, रित, तिर्यश्चगित, एकेन्द्रियजाति, श्रोदारिकशरीर, तिर्यश्चगत्यातुपूर्वी, स्थावर श्रादि चार, स्थिर श्रोर श्रम इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके श्रमंख्यातवेभाग प्रमाण श्रोर सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। श्रातुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। श्रातुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। श्रावेदर, तिर्यश्चायु, मनुष्यगति, तीन जाति, चार संस्थान, श्रोदारिक श्राङ्गापाङ्ग, छह

पुरिस०-समचदु०-पसत्थवि०-सुभग-सुस्सर-आदे०-उच्चा०उक्क० दिवहुवोह्स० । अणु ० सव्वलो० । वेउव्वियञ्च० श्रोघं । उज्जो०-जसगि० उक्क० सत्त-चोह्स० । अणु ० सव्वलो० । मणुसायु० श्रोघं । स्वरि वज्जे स्वत्थि ।

४८१ पंचिदियतिरिक्खितिष्णि० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ-असादा० सोलसक०-गवुंस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०-तेजा०-क०-हुंड०-वण्ण०४-अगु०४ पज्जत-- प्रे०-अथिरादिपंच-णिमि०-णीचा०-पंचंत० उक्क० ली० असंखें० छच्चोह्स०। अणु० सव्वली०। सादावे०-हस्स-रिद-तिरिक्खगिद-एइंदि०-ओरालि०-तिरिक्खाणु०-आवरादि०४--थिर-सुभ० उक्क० अणु० लोग० असंखे० सव्वली०। हिर्थ० उक्क० खेतं। अणु० दिवड्डचोह्स०। पुरिस०-देवगिद-समचदु०-देवाणु०- पसत्थ-सुभग-सुस्सर-आदे०-उचा० उक्क० खेतंभो। किं णिमित्तं भवणवासीए उप्पक्ति सोधम्मीसाणे ण उपज्जिद त्ति उक्कस्सिडिदिनंधंतो तेण खेत्तं, इद्रत्थ दिवडु-चोह्स०। अणु० छचोह्स०। णिरयग०-णिरयाणु० उक्क० अणु० छचोह्स०। पंचिदि०-वेउव्वि०-वेउव्वि०अंगो०-तस० उक्क० छचोह्स०। अणु० वारह०।

संहनन श्रीर श्रातप इनकी मुख्यतासे स्पर्शन चेत्रके समान है। पुरुषवेद, समचतुरस्न संस्थान, प्रशास्त विहायोगित, सुभग सुरवर, श्रादेय श्रीर उचगोत्र इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम डेढ़ बटे चौदह राज् चेत्र का स्परान किया है। श्रातुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्परान किया है। वैकियिक छहकी मुख्यतासे स्परान श्रोचके समान है। उद्योत श्रीर यशःकीर्तिकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम सात बटे चौदह राज् चेत्रका स्परान किया है। श्रातुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्परान किया है।

४८१. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिक में पाँच ज्ञानावरण, नौदर्शनावरण, मिथ्यात्व, श्रासाता वेदनीय, सोलहकषाय, नपुंसकवेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, हुरुडप्रंस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, पर्याप्त, प्रत्येकरारीर, अस्थिर आदि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनकी उत्क्रुष्ट स्थितिके बन्धक जीवों ने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और कुछ कम छह बटे चौदह राजू त्रेत्रका स्पर्शन किया है। अनुस्कुष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। सातावेदनीय, हास्य, रति, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रियजाति, श्रौदारिक शरीर, तियेश्चगत्यानुपूर्वी, स्थावर श्रादि चार, स्थिर श्रौर शुभ इनकी उत्कृष्ट श्रौर श्रनुकुष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्रीचेदकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। अनुस्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम डेढ़ बटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। पुरुषवेद, देवगति, समचतुरस्न-संस्थान, देवगत्यानुपूर्वी, प्रशस्त विद्यायोगति, सुभग, सुस्वर, आदेय और उच्चगोत्र इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवींका स्पर्शन चेत्रके समान है। क्योंकि यह जीव भवनवासियोंमें उत्पन्न होता है, सौधर्म श्रोर ऐशान कल्पमें नहीं उत्पन्न होता, इसलिए उत्क्रुप्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवका स्पर्शन चेत्रके समान कहा है। अन्यत्र कुछ कम डेड़ बटे चौदह राजु स्पर्शन है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। नर्कगति ऋौर नरगत्यातुपूर्वीकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राज् नेत्रका स्परीन किया है। पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिक द्यांगोपांग चौर त्रस इनकी उत्कर्ध्ट स्थितिके बन्धक जीवींने कुछ कम छह बटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है आरे अनु-

अप्यसत्थ०-दुस्सरं शिरयगदिभंगो । उज्जो०-जस० उक्क० अशु० सत्तचोँ इस०। बादर० उक्क० अच्चोँ द्दस० । आशु० तेरहचोँ द्दस० । सेसाणं उक्क० आशु० खेँचभंगो ।

४८२. पंचिदियतिरिक्स्त्रश्रपञ्ज० पंचणा०-णवदंसणा०-सादासाद०-मिच्छ०-सोलसक० -णवंस० हस्स-रिद-श्ररिद-सोग-भय-दुगुं०-तिरिक्खगदि-एइंदि०-श्रोराखि०-तेजा०-क०-हुंड०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-ग्रगु०४-थावर-सुहुम-पञ्जतापञ्जत-पत्ते० साधार०-धिराधिर-सुभासुभ-द्मग-श्रणादे०-ग्रजस०-णिमि०-णीचा-एचंत० उक० अणु० लो० श्रसंखे० सञ्बलो० । उञ्जो०-वादर-जसमि० उक्क० अणु० सत्तचोइस०। सेसाणं उक्क० अणु० लो० श्रसंखे० । एवं मणुसग्रपञ्जत्त-सञ्बविगलिदि०-पंचिदि०-तसग्रपञ्जत। बादर-बादरपुढवि०-ग्राउ० तेउ०-वाउ०-बादरवणप्फदिएन्य० पञ्जत्ता०।

४८३ मणुस मणुसपञ्जत-मणुसिणीसु पंचणा० णवदंसणा०-श्रसादा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवंस०-ऋरदि-सोग-भय-दुर्गु०-तेजा०-क०-हुंड०-वण्ण० ४-अगु० ४

स्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम बारह बटे चौदह राज़ू चेत्रका स्पर्शन किया है। अप्रशासनिव्हायोगित श्रीर दुःस्वर इनकी मुख्यतासे स्पर्शन नरकगितिके समान है। उद्योत श्रीर यशःकीर्तिकी उत्कृष्ट श्रीर अनुकृष्ट श्रिति के बन्धक जीवोंने कुछ कम सातबटे चौदह राज़ू चेत्रका स्पर्शन किया है। बादर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राज़ू चेत्रका स्पर्शन किया है और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम तेरह बटे चौदह राज़ू चेत्रका स्पर्शन किया है। श्रेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट श्रीर अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है।

४८२. पश्चिन्द्रिय तिर्यक्क अपयोप्तिकोंमें पाँच ज्ञानवरण, नौ दर्शनावरण, साता वेदनीय, असला वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसकवेद, हास्य, रित, अरित, शोक, भय, जुरुप्सा, तियक्क्वगित, एकेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कामण शरीर, हुण्डसंस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यक्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलश्चचतुष्क, स्थावर, सूद्म, पर्याप्त, अपर्याप्त, प्रत्येक, साधारण, स्थिर, श्रास्थर, श्रुभ, अशुभ, दुर्भग, अनादेय, श्रयशक्तिति, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनकी उत्कृष्ट श्रीर अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवेंभाग प्रमाण और सब लोक चेत्रका स्परान किया है। उद्योत, बादर और यशकीतिः इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवेंभाग प्रमाण और प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थिति के बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवेंभाग प्रमाण चेत्रका स्परान किया है। श्रेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थिति के बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवेंभाग प्रमाण चेत्रका स्परान किया है। इसी प्रकार मनुष्य अपर्याप्त, सब विकलेन्द्रिय, पञ्चेन्द्रिय अपर्याप्त, त्रस अपर्याप्त, बादर प्रथ्वी कायिक पर्याप्त, बादर जलकायिक पर्याप्त, बादर अस्मिकायिक पर्याप्त, बादर वायुकायिक पर्याप्त और बादरवनस्पति कायिक प्रत्येक शरीर पर्याप्त जीवोंके जानना चाहिए।

४८३. मनुष्य, मनुष्य पर्याप्त श्रीर मनुष्यिनी जीवों में पींच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण श्रमातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसकवेद, श्ररति, शोक, भय, जुगुप्सा, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, हुण्डसंस्थान, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघुचतुष्क, पर्याप्त, प्रत्येकशरीर, श्राम्थर श्राह पजन-परो०-अधिरादिपंच-णिमि०-णीचा०-पंचंत० उक्क० खेंत्तं। अणु० लो० असंखें० सञ्चलो० । सादा०-हस्स-रदि-तिरिक्खगदि-एइंदि०-श्रोरालि०-तिरिक्खाणु०-धावरादि०४-धिर-सुभ० उक्क० अणु० लो० असंखेंज्ञदि० सञ्चलो०। उज्ञो०-जसगि० डक्क० अणु० लोग० श्रसंखें० सत्तचो०। बादर० उक्क० खेत्तं। अणु० सत्तचो०। सेसाणं खेंतं।

४८४ देवेतु इत्थि०-पुरिस०-दोश्रायु०-मणुसग०-पंचिदि०-पंचसंठा०-ओरालि०अंगो०-अस्संघड०-मणुसाणु०-आदाव-दोविहा०-तस-सुभग-दुस्सर-आदें जञ्जि०-तित्थय०-उच्चा० उक्क० अणु० अङ्घचोँद्दस०। सेसाणं उक्क० अणु० अङ्घ-णवचोँद्द-स०। एवं सञ्बदेवाणं अञ्चपपणो फोसणं काद्व्यं।

४८५. एइंदिएसु थावरपगदीणं उक्त० अग्रु० सम्बलो० । दोत्रायु० तिरिक्खोघं । उज्जो० बादर०-जस० उक्क० सत्तचोंद्दस० । अग्रु० सम्बलो० । सेसाणं पगदीणं उक्क० खेंनां । अग्रु० सम्बलो० । बादरएइंदि० एजनापज्जन्त० थावरपगदीयां उक्क०

पाँच, निर्माण, नीचगोत्र श्रौर पाँच श्रन्तराय इनकी उत्कृष्ट स्थिति के बन्धक जीवोंका रपर्शन चेत्र के समान है श्रौर श्रनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण श्रौर सब लोक च त्रका स्पर्शन किया है। साता वेदनीय, हास्य, रित, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, श्रौदारिकशरीर, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, स्थावर श्रादि चार, स्थिर श्रौर श्रभ इनकी उत्कृष्ट श्रौर श्रनुत्कृष्ट स्थिति के बन्धक जीवोंने लोकके श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण श्रौर सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। उद्योत श्रौर यशःकीर्ति इनकी उत्कृष्ट श्रौर श्रनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण श्रौर कुछ कम सात बटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। बादर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। तथा श्रनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम सात बटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। श्रेप प्रकृतियोंकी मुख्यतासे स्पर्शन चेत्रके समान है।

४८४. देवोंमें स्त्रीवेद, पुरुपवेद, दो आयु, मनुष्यमति, पञ्चेन्द्रिय जाति, पांच संस्थान, आँदारिक आंगोपांग, छह संहनन, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, आतप, दो विहायोगित, त्रस, सुभग, दुःस्वर, आदेय, तीर्धङ्कर और उच्चगोत्र इनकी उक्काट और अनुकुष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछकम आठ बटे चौदह राजू नेत्रका स्पर्शन किया है। शेष प्रकृतियोंकी उक्काष्ट और अनुकुष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू और अनुकुष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू और अनुकुष्ट स्थितिके विद्या है। इसी प्रकार सब देवोंके अपना-अपना स्पर्शन कहना चाहिए।

४८४. एकेन्द्रियोंमें ध्यावर प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सव लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। दो श्रायुत्र्योंका भङ्ग सामान्य तिर्यक्लोंके समान है। उद्योत, वादर श्रोर यशःकीर्ति इनकी उत्कृष्ट ध्यितिके बन्धक जीवोंने छुछ कम सातबटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट ध्यितिके बन्धक जीवोंने सव लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। शेप प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट ध्यितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। बादर एकेन्द्रिय श्रोर इनके पर्याप्त श्रीर अपर्याप्त जीवोंने स्थावर प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट श्रीर अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने युछ कम सातबटे

अणु० सत्तर्चो०। मणुसायु०-मणुसगदि-मणुसाणु०-उचा० उक्क० अणु० स्रोग० असंबेंज ०।

४८६ पुढवि०-आड०-तेड०-बाउ० थावरपगदीणं उक्क० लोग० असंखेंज० सब्बलो०। ऋणु० सब्बलो०। तिरिक्ख-मणुसायु० तिरिक्खोघं। उज्जो०-बादर०-जस० उक्क० सत्त्वचो०। अणु० सब्बलो०। तसपगदीणं ऋ।दाव उक्क०लोग० ऋसं-खेंज्ज०। अणु० सब्बलो०।

४८७. बादरपुढवि०-ऋाउ०-तेउ०-वाउ०-थावरपगदीणं उक्क० लोग० ऋसं-खेंज्ज० सन्वली० । अणु० सन्वली० । दोश्रायु० खेंचभंगो । उजी०-वादर०-जस० उक्क० ऋणु० लोग० ऋसंखेंज्ज० सत्त्वचेंद्रस । सेसाणं उक्क० ऋणु० लोग० ऋसंखेंज्ज० ।

४८८. बादरपुढवि०-त्राउ०-तेउ०-वाउ० ऋष्ऊत्ताणं थावरपगदीणं उक्क० ऋगु० सन्वलो० । उज्जो०-बादर०-जसगि० उक्क० ऋगु० सत्तचोँदस० । सेसाणं उक्क० ऋगु० लोग० ऋसंखेँ० । गावरि वाऊणं यम्हि लोगस्स ऋसंखेँज० तम्हि लोगस्स संखेँज० कादन्त्रो ।

चौदह राज् त्रेत्रका स्पर्शन किया है। मनुष्यायु, मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगोत्रकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके अंसस्यातवेंभाग प्रमाण त्रेत्रका स्पर्शन किया है।

४६६. पृथ्वीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक और वायुकायिक जीवोंमें स्थावर प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक चेत्रका स्पर्भन किया है तथा अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्भन किया है। तियं ख्रायु और मनुष्यायुका भङ्ग सामान्य तियं ख्रोंके समान है। उद्योत, बादर और यशःकीति इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम सात्वदे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है तथा अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। त्रसप्रकृतियाँ और आत्या इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। तथा अनुकृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है।

४५७. बादर पृथ्वीकायिक, बादर जलकायिक, बादर अम्निकायिक और वादर वायुकायिक जीवोंमें ।थावर प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट धितिके बन्धक जीवोंने लोकके आसंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक त्रेत्रका स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट धितिके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। दो आयुका भङ्ग चेत्रके समान है। उद्योत, बादर और यशःकीर्ति इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके आसंख्यातवेंभाग प्रमाण और कुछ कम सातबटे चौदह राजू त्रेत्रका स्पर्शन किया है। शेप प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके आसंख्यातवें भाग प्रमाण त्रेत्रका स्पर्शन किया है।

४८८. बादर पृथ्वीकायिक अपर्याप्त, बादर जलकायिक अपर्याप्त, बादर अग्निकायिक अपर्याप्त और वादर वायुकायिक अपर्याप्त जीवोंमें स्थावर प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थिति- के वन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। उद्योत, बादर और यशःकीर्ति इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंने कुछ कम सात बटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है तथा शेप प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुकृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि जहाँ पर लोकका असंख्यातवें भाग प्रमाण स्पर्शन कहा है वहाँ पर वायुकायिक जीवोंके लोकके संख्यातवाँभाग प्रमाण स्पर्शन कहना चाहिए।

४८९. सञ्चसुरुमाणं सञ्चपगदीणं उक्क० ऋणु० खेर्च । ग्रविर तिरिक्खायु० उक्क० लोग० ऋसंखें ० सञ्चलो० । ऋणु० सञ्चलो० । मग्रुसायु० उक्क० ऋगु० लोग० ऋसंखें ज्ञ० सञ्चलो० । वसप्पदि—णियोदाणं एइंदियमंगो । ग्रविर तसपगदीयां लोग० ऋसंखें ० काद्व्यो । उज्जो०—बादर०—जसिग० उक्क० सत्त्रचों इस० । अग्रु० सञ्चलो० । बादरवणप्पदि-शियोदाणं पज्जत्तावज्ञत्त० बादरपुढविअपजत्तमं-गो । बादरवणप्पदिपत्ते० बादरपुढविभंगो ।

४६०, पंचिदिय-तस०२ पंचणा०-णवदंसणा०-असादावे०-मिच्छ०-सोल-सक०-णवंस०-अरदि-सोग-भय-दुर्गु०-तिरिक्खग०-ओरालि०-तेज०-क०-हुंड०-वणा० ४-तिरिक्खाणु०-अगु०४ - पज्जन-परोय० - अथिरादिपंच-णिमि०-णीचा० - पंचंत० उक्क० अट्ठ-तेरहचो० । अणु० अट्ठचोंद्दस० सञ्चलो० । सादावे०-इस्स-रदि-थिर-सुभ० उक्क० अणु० अट्ठचो० सञ्चलो० । इत्थि०-पुरिस०-पंचिदि०-ओरालि०-श्रंगो०-पंचसंठा०-अस्संघ०-दोविहा०-तस-सुभग-सुस्सर-आदे० उक्क० अणु० अट्ठ-

धन्दः सब सूद्दम जीवोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुस्कृष्ट श्रिविके बन्धक जीवोंका स्पर्शन होने समान है। इतनी विशेषता है कि तियं व्यायुकी उत्कृष्ट श्रिविके बन्धक जीवोंने छोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सबलोक होनका स्पर्शन किया है। श्रीर अनुस्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक होनका स्पर्शन किया है। मनुष्यायुकी उत्कृष्ट श्रीर अनुस्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब छोक होनका स्पर्शन किया है। वनस्पति कायिक और निगोद जीवोंमें अपनी सब प्रकृतियोंका भन्न एकेन्द्रियोंके समान है। इतनी विशेषता है कि त्रस प्रकृतियोंका स्पर्शन छोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण कहना चाहिए। उद्योत, बादर और यशःकीर्ति इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम सात बटे चौदह राज् हेन्नका स्पर्शन किया है। बादर वनस्पतिकायिक, बादर निगोद और इनके पर्याप्त-अपर्याप्त जीवोंमें अपनी सब प्रकृतियोंका भन्न बादर पृथ्वीकायिक अपर्याप्त जीवोंके समान है। बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर जीवोंमें अपनी सब प्रकृतियोंका भन्न बादर पृथ्वीकायिक जीवोंके समान है।

४९० पब्चेन्द्रिय, पब्चेन्द्रिय पर्याप्त, त्रस और त्रस पर्याप्त जीवोंमें पाँच झानावरण, नौ दर्शनावर्ण, असातावेदनीय, मिश्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसकवेद, अरित, शोक, भय, ज्युप्सा, तियब्चगित औदारिक शरीर, तैजसशरीर, कामणशरीर, हुण्डसंत्थान, वर्णचतुष्क, तियब्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, पर्याप्त, प्रत्येक, अस्थिर आदि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ वट चौदह राजू और कुछ कम आठ वट चौदह राजू और सब लोक क्रेत्रका स्पर्शन किया है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ वट चौदह राजू और सब लोक क्रेत्रका स्पर्शन किया है। सातावेदनीय, हास्य, रित, स्थिर, और शुभ प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ वटे चौदह राजू और सब लोक क्रेत्रका स्पर्शन किया है। स्वीवेद, पुरुषवेद, पब्चेन्द्रिय जाति, औदारिक आक्रोपाक्क, पाँच संस्थान, छह संहनन, दो विहायोगिति, त्रस, सुभग, सुखर और आदेय इनकी उन्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम

बारहर्। सिरय-देवायुर्ण-तिस्मिजादिर्ण-आहारदुर्ग उक्कर असुरु स्ति। तिरिवध-मस्सायुर्ण-तित्थयर उक्कर स्ति। असुरु अहचोइसरः। सिरयगदि-सिरयासुपुरु उर् कर असुरु छचोद्दसर। देवगदि-देवासुरु इक्कर असुरु ओधं। मणुसगरु-मस्सासुरु-आदाबर्ण-उचार उक्कर असुरु अहचोद्दसरः। एइंदिर्ण-श्वावर उक्कर अहु-मवचोर्छ। असुरु अहचोरु सञ्बद्धारः। वेउविवर्ण-वेउविवर्ण्यंगोरु उक्कर छचोद्दसरः। असुरु बारहचोर्छ। उज्लोर्ण-बादर्ग-जसिन् उक्कर असुरु अहु-तेरहर्श। सुहुम-अपजन्त-साधार उक्कर असुरु लोगरुअसंखेर्ण सञ्बद्धार। एवं पंचमणर्श्वचिर्ण-चक्खदंसणि ति।

४९१. कायजोगि० ओघं। ओरालिय० तिरिक्लोघं। णवरि आहारदुग-तिरथय० मणुसमंगो। ओरालियमि० दोआयु०-सुहुमपगदीणं सत्थाणं उक्त० लो० असंखेंज्ञ० सन्वलो०। अणु० सन्वलो०। गावरि मणुमायु० अगु० लो० असंखेंज्ञ०

बारह वटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। नरकायु, देवायु, तीन जाति ऋौर आहारक द्विक इनकी उत्क्रष्ट ऋौर ऋतुःकृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। तिर्यञ्चाय, मनुष्यायु और तीर्थङ्कर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू स्वेत्रका स्पर्शन किया है। नर्क-गति श्रीर नरकगत्यानुपूर्वीकी उत्कृष्ट श्रीर श्रानुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवीने कुछ कम छह बटे चौदह राजू चेत्रका स्परांन किया है।देवगति और देवगत्यानुपूर्वीकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन ओधके समान है । मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, स्रातप स्रोर उच्चगोत्र इनकी उत्कर और अनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। एकेन्द्रिय और स्थावर इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम छाठ बटे चौदह राज् और कुछ कम नौबटे चौदह राजु त्रेत्रका स्पर्शन किया है। तथा अपुत्छष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने इंछ कम आठ बटे चोदह राजु और सब लोक चेत्रका स्परीन किया है। वैक्रियिक शरीर और वैक्रियिकआंगोपांग इनकी उक्छष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है त्यीर अनुस्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवीने कुछ कम बारह बटे चोदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। उद्योत, बादर श्रोर यश कीर्तिकी उत्कृष्ट श्रीर त्रानुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ वटे चौदह राजू और कुछ कम तेरह बटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। सूद्दम, अपर्याप्त और साधारण इनकी उन्ह्रष्ट और अनुत्क्रष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके श्रसंस्यातवें भाग प्रमाण श्रीर सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार पाँच मनोयोगी, पांच वचनयोगी त्यौर चक्षदर्शनी जीवोंके जानना चाहिए।

४६१. काययोगी जीवोंमें श्रूपनी सब प्रकृतियोंका भंग श्रोघके समान है। श्रौदारिक काययोगी जीवोंमें सामान्य तियद्धोंके समान है। इतनी विशेषता है कि श्राहारकदिक श्रौर तीथकर प्रकृतिका भङ्ग मनुष्योंके समान है। श्रौदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें दो श्रायु श्रौर सूदम प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण श्रौर सब लोक सेत्रका स्पर्शन किया है। तथा श्रनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक सेत्रका स्पर्शन किया है। तथा श्रनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक सेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि मनुष्यायुकी श्रनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके

सन्बलो० । अथवा सरीरपञ्जतीए पञ्जती पञ्जतगदस्स खेँतमंगो । उञ्जो०-गदर०-जसगि० उक्कः सत्तचोँ० । अणु० सञ्जलो० । अण्णत्य खेँत्तं । देवगदि०४ तित्यय० उक्क० अणु० खेँत्तं । सेमाणं उभयथा उक्क० लो० ऋसंखेँञ० । अणु० सन्वलो० ।

४६२, वेडिव्यका० पंचणा०-णवदंसणा०-सादासाद०-मिच्छ०-सोलसक०-सत्तणोक०-तिरिक्खगदि-झोरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-चण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-उन्जो०-बादर-पन्जन्त-पत्तेय-थिराथिर-सुभासुम-दूभग-झणादेँ०-जस०-अजस०-णिमि०-णीचा०-पंचंत० उक्क० अणु० अह०-तेरह०। इत्थि०-पुरिस०-पंचिदि०-पंचसंठा०-ओरालि०झंगो०-छस्संघ०-दोविहा०-तस-सुभग-दोसर०-आदेँ० उक्क० अणु० अह-बारह०। दोआयु०-मणुसगदि-एइंदि०-मणुसाणु०-अत्दाव-थावर-तित्थय०-उन्हा० देवोघं। वेडिव्यिम०-आहार०-आहारमि० खेतभंगो।

४९३, कम्मइग० पंचणा०-णवदंसणा०-लादासाद०-मिच्छ०-सोलसक०-णवणोक०-तिरिक्खगदि-पंचिदि०-ओराजि०-तेजा०-कम्म०-छस्संठा०-ओरालि०-

असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक देत्रका स्पर्शन किया है अथवा शरीर पर्याप्तिसे पर्याप्त हुए जीवोंकी अपेका स्पर्शन देत्रके समान है। उद्योत, वादर और यशःकीर्तिकी उन्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम सात बटे चोदह राजू देत्रका स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक देत्रका स्पर्शन किया है। अन्य र स्पर्शन देत्रके समान है। देवगतिचतुष्क और तीर्थक्कर इनकी उन्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन देत्रके समान है। सेमान है। शेप प्रकृतियोंकी दोनों प्रकारसे उन्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन लोकके असंख्याति भाग प्रमाण है तथा अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन किया है।

४९२. वैक्रियिककाययोगी जीवोंमें पाँच झानावरण नो दर्शनावरण, सानावेदनीय, असातावेदनीय, मिश्याख, सोलह कपाय, सात नोकपाय, तिर्यवच्चगित, खोदारिक शरीर, तेजस शरीर, कामण शरीर, हुएडसंस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी अगुरुलतु चतुष्क, उद्योत, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, स्थिर, अस्थिर, श्रुम, अशुम, दुर्भग, अनादेय, यशकीित, अयशकीित, निर्माण, नीचगोत्र खोर पाँच खन्तराय इनकी उन्हर्ण्ट और खतुत्कृष्ट श्वितिके वन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू खौर कुछ कम तेरह बटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। क्षीवेद, पुरुषवेद, पञ्चेन्द्रियजाित, पाँच संस्थान, खोदारिक खाङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, दो बिहायोगित, त्रस, सुमग, दो स्वर और आदेय इनकी उन्हर्ण्ट और अनुत्कृष्ट श्वितिके वन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू खोर खादेय इनकी उन्हर्ण्ट और अनुत्कृष्ट श्वितिके वन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू खोर खादेय इनकी उन्हर्ण्ट और अनुत्कृष्ट श्वितिके वन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू खोर खादेय इनकी उन्हर्ण्ट और अनुत्कृष्ट श्वितिके वन्धक जीवोंने कुछ कम आछ, बटे चौदह राजू खोर कुछ कम वारह बटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। दो आयु, मनुष्यगति, एकेंद्रिय जाित, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, आत्य, स्थावर, तीर्यकृष्ट और उचगोत्र इनका मङ्ग सामान्य देवोंके समान है। विक्रियकामश्रकाययोगी, आहारककाययोगी छोवोंमें अपनी सब प्रकृतियों की मुख्यतास स्पर्शन चेत्रके समान है।

४९३- कार्मण्काययोगी जीवोंमें पाँच झानावरण, नो दशनावरण, सातावेदनीय, श्रासातावेदनीय, मिश्यात्व, सोलह कपाय, नो नोकपाय, नियञ्चर्गात, पञ्चेन्द्रिय जात, श्रोदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, छह संस्थान, श्रोदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, वर्णचनुष्क, श्रंगो०-छस्संघ०-वरण०४-तिरिक्खाणु०-श्रगु०४-उउजो०-दोविहा०-तस०४-थिरा दिल्लयुग०-णिमि०-णीचा०-पंचंत० उक्क० बारहचों०। अणु० सम्बलो०। मणुसगदि-तिरिणजादि-मणुसाणु० उक्क० श्रगु० खेंनं। सुहुम-अपन्जत्त-साधार० उक्क० लो० असंखें०। अणु० सम्बलो०। देवगदि०४-तित्थय० उक्क० अणु० खेंनं। एइंदि०-श्रादाव-थावर० उक्क० दिवहुचोंदस०। श्रगु० सम्बलो०।

४९४. इत्थिवे० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-पंचणोक०तेजा०-क०-हुंडसं०-वण्ण०४-झगुरू०-पउजत्त-पन्तेग०-अधिरादिपंच-णिमि०-णीचा०पंचंत० उक्क० अट्ट-तेरहचों० । अणु० अट्टचों० सन्वत्तो० । सादा०-हरस-रदि-धिरसुभ० उक्क० अणु० अट्टचोंहस० सन्वत्तो० । इत्थिवे०-पुरिस०-मणुमग०-पंचमठा०श्रोरात्रि०अंगो०-छ्रसंघ०-मणुसाणु०-आदाव -पसत्थवि० - सुभग-सुरसर--आर्दे० उच्चा० उक्क० अणु० अट्टचोंहस० । णिरय-देवायु०-तिण्णिजादि-आहार०२-तिरथय०
चक्क० अणु० खेंत्रभंगो । तिरिक्ख-मणुसायु० चक्क० खेतं । अणु० अट्टचोंद्दस० ।

तिर्यक्षगत्यानुपूर्वी, अगुरुलयुचतुष्क, उद्योत, दो विद्यायोगित, असचतुष्क, विधर आदि छह गुगल, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनकी उत्कृष्ट व्यितिके बन्धक जीवांने कुछ कम बारह बटे चौदह राजू सेत्रका स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट व्यितिके बन्धक जीवांने सब लोक सेत्रका स्पर्शन किया है। मनुष्यगति, तीन जाति और मनुष्यगत्यानुपूर्वी इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट व्यितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन सेत्रके समान है। सूद्रम, अपर्याप्त और साधारण इनकी उत्कृष्ट व्यितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग अमाण सेत्रका स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट व्यितिके बन्धक जीवोंने सब लोक सेत्रका स्पर्शन किया है। इवगति चतुष्क और तीर्थक्कर इनकी उत्कृष्ट अथितिके बन्धक जीवोंने सब लोक सेत्रका स्पर्शन के समान है। एकेन्द्रिय जाति, आतप और स्थावर इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सुरु कम डेढ़बटे चौदह राजू सेत्रका स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक सेत्रका स्पर्शन किया है।

४९४ स्त्रीवेदवाले जीवोंमें पांच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, पाँच नोकपाय, तैजस शरीर, कामण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुल्यु, पर्याप्त, प्रत्येक, अस्थिर आदि पांच, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनकी उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू चौत्रका स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू और सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। साना वेदनीय, हास्य, रित, स्थिर और शुभ इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू और सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्रीवेद, पुरुपवेद, मनुष्यगित, पांच संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, आतप, प्रशस्त विहायोगित, सुभग, सुरुवर, आदेय और उच्चगोत्र इनकी उत्कृष्ट श्रीर अनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंने कुछ कम आठ वटे राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। नरकायु, देवायु, नीन जाति, आहारकद्विक और तीथङ्कर इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। निर्यक्रायु और मनुष्यायुकी उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। विर्यक्रायुक्त वन्धक जीवोंने कुछ कम आठ वटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन चेत्रके समान है। विर्यक्रायुक्त वन्धक जीवोंने कुछ कम आठ वटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। विर्यक्रायिक वन्धक जीवोंने कुछ कम आठ वटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। विर्वक्रयाति, स्थान चेत्रके समान है। विर्वक्रयाति स्पर्शन ओघके समान है। तिर्वक्रयाति,

वेउन्वियस्त अधं। तिरिक्सगदि-एइंदि०-ग्रोरासि०-तिरिक्सागु०-धावर ० उक्क० अह-णवचों०। अगु० अहचों० सन्वसो०। पंचिदि०-ग्रप्पसत्थ०-तस-दुस्सर० उक्क० छचोंद्दस०। अगु० ग्रह-बारह०। उडजो०-जस० उक्क० अगु० अह-णवचोंद्दस०। बादर० उक्क० श्रगु० अह-तेरहचोंद्दस। सुहुम-ग्रपडजत्त-साधारण० उक्क० अगु० लोग० श्रसंखें० सन्वलो०। पुरिसेस इत्थिभंगो। णवरि पंचिदि०-ग्रप्पसत्थ०-तस-दुस्सर० उक्क० अगु० अह-नारहचोंद्दस०। तित्थय० ग्रोधं।

४६५. णवुंस० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छत्त-सोलसक०-इत्थि०-पुरिस०-णवुंस०-अरिद-सोग-भय-दुर्गु०-तिरिक्खग०-पंचिदि०-श्रोराहि०-तेजा०-क०-छसंठा०--श्रोरालि०श्रंगो०--छसंघ०-वण्ण०४--तिरिक्खाणु०-श्रगु०-दोविहा०-उउजो०-तस०४-श्रथिर - श्रमुभ- सुभग-दूभग-सुस्सर--दुस्सर--श्रादे०-अणादे०-श्रजस०-णिमि०-णीचा०-पंचेत० उक्क० छच्चोंद्दस० । श्रणु० सन्वलो० । सादावे०-हस्स-रिद-एइंदि०-थावरादि ४--थिर-सुभ० उक्क० लो० श्रसंसें० सन्वलो० । श्रणु० सन्वलो० ।

एकेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तिर्यक्कारयानुपूर्वी श्रौर स्थावर इनकी उरकृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठ बटे चौदह राजू श्रौर कुछ कम नो बटे चौदह राजू सेत्रका रपर्शन किया है। श्रमुख्छ स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठ बटे चौदह राजू श्रौर सब लोक सेत्रका रपर्शन किया है। पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रप्रशस्त विहायोगिति, त्रस श्रौर दुःस्वर इनकी उरकृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राजू सेत्रका रपर्शन किया है। तथा श्रमुख्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठ बटे चौदह राजू श्रौर कुछ कम बारह बटे चौदह राजू स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठ बटे चौदह राजू श्रौर श्रुकृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठ बटे चौदह राजू श्रौर श्रुकृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठ बटे चौदह राजू श्रौर श्रुकृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठ बटे चौदह राजू श्रौर श्रुकृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठ बटे चौदह राजू श्रौर अनुख्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके श्रसंख्यातवें भाग श्रमाण श्रौर सब लोक सेत्रका स्पर्शन किया है। पुरुपवेदी जीवोंमें स्थीवेदी जीवोंके समान मंग है। इतनी विशेषता है कि पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रप्रशस्त विहायोगिति, त्रस श्रौर दुस्वर इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठ बटे चौदह राजू श्रौर कुछ कम बारह बटे चौदह राजू श्रौर कुछ कम बार बटे चौदह राजू श्रौर कुछ कम बारह बटे चौदह राजू श्रीर कुछ कम बारह बटे चौदह राजू स्थीर कुछ कम

४९४. नपुंसकवेदी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व; सोलह कपाय, स्नीवेद, पुरुपवेद, नपुंसकवेद, अरित, शोक, भय, जुगुप्सा, तिर्यव्चगित, पश्चेन्द्रिय जाति, ख्रोदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, छह संस्थान, ख्रोदारिक ख्राङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, वर्णचतुष्क, तिर्यद्भगत्यानुपूर्वी, अगुरुलधु, दो विह्ययोगित, उद्योत, त्रस चतुष्क, ख्राधिर, ख्राधुम, सुभग, दुर्भग, सुस्वर, दुःस्वर, ख्रादेय, ख्रादेय, ख्रयशःकीर्ति, निर्माण, नीचगोत्र ख्रौर पाँच ख्रन्तराय इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। सातावेदनीय, हास्य, रित, एकेन्द्रियजाति, स्थावर ख्रादि चार, स्थिर ख्रोर शुभ इनकी उत्कृष्ट स्थितिके

दोश्रायु०-श्रहारदुग-तित्थय०, इक० अणु० खेंत्तर्भगो । तिरिक्खायु-मणुसगदि-तिण्णिजादि-मणुसाणु०-श्रादाव-उचागो० उक० लो० असंखेंज्ञदि०। अणु० सन्वलो०।
मणुसायु० इक० खे०। अणु० लो० असंखें० सन्वलो०। देउन्वियद्ध० श्रोघो।
उन्जो०-जस० उक० तेरहचोंद्दस०। श्रणुक० सन्वलो०। अवगदवेदे खें०भंगो
कोधादि०४ श्रोघं।

४९६. मदि०-सुद० श्रोघं । स्वति देवगदि-देवासु० उक्क० सें० । असु० पंचचोंद्द० । वेउव्वि०-वेउव्वि०अंगो० उक्क० स्चोंद्दस० । असु० एकारसचोंद्दस० ।
विभंगे पंचणा०-स्वदंसणा०-श्रसादादे०-मिच्छ०-सोस्रसक०-पंचणोक०-तेजा०-क०हुंडसं०-वर्षण०४-श्रगु०४-प्रजत्त-पत्तेय०-श्राथरादिपंच--णिमि० - सीचा० - पंचंत०
उक्क० अदु-तेरह० । असु० अदु-तेरह० सन्वलो० । सादादे०-हस्स-रदि-धिर-सुम०
उक्क० असु० श्रद्धचों० सन्वलो० । इतिथ०-पुरिस०-पंचिदि०-पंचसंठा०-ओरालि •-

बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सव लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। दो आयु, आहारकद्विक और तीर्थं इर इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। तिर्यं आयु, मनुष्यगति, तीन जाति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, आतप और उच्चगोत्र इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। मनुष्यायुकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका भन्न चेत्रके समान है तथा अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। वैकियिक छहकी अपेचा स्पर्शन ओधके समान है। उद्योत और यशःकीर्तिकी उत्कृष्ट ध्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम तेरह बट चौदह राज्य चेत्रका स्पर्शन किया है। अमृत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। अपनत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। अपनत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। अपनत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। अपनत्वेदी जीवोंमें अपनी सब प्रकृतियोंकी अपेचा स्पर्शन चेत्रके समान है। तथा कोधादि चार कपायवाले जीवोंमें श्रोधके समान है।

४६६. मत्यज्ञानी और श्रुताज्ञानी जीवोंमें ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि देवगित और देवगत्यानुपूर्वीकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम पाँच बटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। बैिकियिक श्रारीर और वैकियिक आहोपाङ्गकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम ग्यारह बटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। विभंगज्ञानी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असाता-वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, पाँच नोकपाय, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, हुएडसंस्थान, वर्ण चतुष्क, अगुरुत्वच चतुष्क पर्याप्त, प्रत्येक, अस्थिर आदि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू और बुछ कम आठ बटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। सातावेदनीय, हास्य, रिन, स्थिर और शुभ इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू, कुछ कम तेरह बटे चौदह राजू और सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। सातावेदनीय, हास्य, रिन, स्थिर और शुभ इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ वटे चौदह राजू और सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। स्थितके वन्धक जीवोंने कुछ कम आठ वटे चौदह राजू और सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है।

अंगो०-छरसंघ०-दोविहा०-तस सुमग-दोसर-आर्दे० उक्क० अणु० अह-मारहचोँ इस०। णिरय-देवायु०--तिरिणजादि० उक्क० अणु० खेँ तमंगो। तिरिक्ख-मणुसायु० उक्क० खेत्तमंगो। अणु० अह-चोँ इद०। वेज व्वियक्ष० मिदमंगो। तिरिक्ख-मणुसायु० उक्क० खेत्तमंगो। अणु० अह-तेरहचोँ ०। अणु० अह-तेरहचौँ० स्व्वलो०। मणुसग०--मणुसाणु०--आदाव०--उचा० उक्क० अणु० अहचोँ०। एहं दि०--थावर० उक्क० अह-णवचौँ अणु० अह० सव्वलो०। जज्जो०--वादर०--जसिग० उक्क० अणु० अह-तेरह०। सहुम-अपडजत्त-साधार० उक्क० अणु० लो० असंखेँ ० स्वलो०।

४९७, आभिणि०--सुद०-श्रोधिणा० देवायु०--आहारदुगं उक्क० श्रणु० श्रोघं। देवगदि०४ उक्क० श्रोघं०। श्रणु० छच्चोद्दस०। तित्थय० ओघं। सेसागं उक्क० श्रणु०

पञ्चेन्द्रियजाति, पाँच संस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, दोविहायोगति, त्रस, सुभग, दो स्वर और आदेय इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू और कुछ कम बारह बटे चौदह राजू दोवका ।पर्शन किया है। नरकायु, देवायु और तीन जाति इनकी उत्कृष्ट और अनुस्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। तिर्येखायु श्रीर मनुष्यायुकी उत्क्रष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्परीन क्षेत्रके समान है । श्रनुरकृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजु दोहका ।पर्शन किया है। वैक्रियक छहकी मुस्यतासे स्पर्शन मत्यज्ञानियोंके समान है। तिर्यव्यगति श्रौदारिकशारीर श्रौर तिर्यव्यगत्यानुपूर्वीकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ गटे चौदह राजू और दुछ कम तेरह बटे चौदह राजु दोत्रका स्परीन किया है। अनुस्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजु, कुछ कम तेरह बटे चौदह राजू ऋौर सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। मनुष्यगति, मनुष्यगत्या-नुपूर्वी, त्यातप त्रीर उच्चगोत्र इनकी उत्कृष्ट श्रीर त्यनुत्कृष्ट श्रितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम स्राठ बटे चौदह राजु दोवका स्पर्शन किया है। एकेन्द्रियजाति स्नौर स्थावर इनकी उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंने कुछ कम आठ वटे चौदह राजु और बुछ कम नौ बटे चौदह राजु चेत्रका अर्थन किया है। त्रानुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम त्राठ बटे चौदह राजु स्त्रीर सब लोक नेत्रका स्पर्शन किया है। उद्योत, वादर ऋौर यशाकीर्ति इनकी उत्कृष्ट और अमुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू और कुछ कम तेरह बटे चौदह राजू क्षेत्रका भ्पर्शन किया है। सूद्रम, श्रपर्याप्त श्रीर साधारण इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंने लोकके ऋसंख्यातवें भाग प्रमाण ऋौर सव लोक चेत्रका स्परीन किया है।

४६७ आमिनिबोधिक ज्ञानी, श्रुतज्ञानी और श्रविधज्ञानी जीवोंमें देवायु और श्राहारक दिककी उत्कृष्ट श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिके वन्यक जीवोंका स्पर्गन श्रोधके समान है। देवगित चतुष्ककी उत्कृष्ट स्थितिके वन्यक जीवोंका स्पर्शन श्रोधके समान है। श्रमुत्कृष्ट स्थितिके वन्यक जीवोंने छुद्ध कम छह बटे चौदह राजु होत्रका स्पर्शन किया है। तीर्थद्धर प्रकृतिका भङ्ग श्रोधके समान है। शेप प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिके वन्यक जीवोंने छुद्ध कम श्राठ बटे चौदह राजु होत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार श्रविदर्शनी, प्रम्यस्टिंट, चायिकसम्यस्टिंट,

अहचाद्दस० । एवं श्रोधिदंस०--सम्मादिष्टि-खइग०--वेदग०--उवसमस० । णविर खहगे देवगदि०४ खेंचं । तित्थय० उक्त० श्रणु० श्रष्टचों० ।

४९८. मणपज्जल-संजद-सामाइ०-छेदे।०-परिहार० -मुहुमसं० खेंनं । संजदा-संजदे सादावे०-हस्स-रदि-थिर-सुभ-जस० उक्क० अणु० छचोंद्दस०। देवायु--तित्यय० उक्क० अणु० खेंनं। सेसागं उक्क० खेंनं। अणु० छच्चेंद्दस०। असंजद०-अनक्खुदं ओघं।

४६६. किणाले० णवंसगर्भगो । णवरि णिरयगदि-वेडिक०-वेडिक० खंगो० - णिरयाणु० उक्क० अणु० छन्तें ह्दस० । देवगदि-देवाणु०--तिस्थय० उक्क० आणु० खेत्तर्भगो । णील-काऊए पढमदंडओ णवंसगर्भगा । णवरि चत्तारि-वेच्चों इस० । सादा-इस्स-रदि-थिर-सुम-जस० एदाओ पढमदंडओ भाणिदक्वाओ । णिरयग०-वेडिक्कि॰-वेडिकि० अंगो०-णिरयाणु० उक्क० आणु० चत्तारि-वे चों इस० । देवगदि०-देवाणु० किण्ण-भंगो । सेसाणं णवुंसगर्भगो ।

वेदकसम्यग्दिष्ट श्रीर उपशमसम्यग्दिष्ट जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि चायिक सम्यग्दिष्ट जीवोंमें देवगति चतुःकका भङ्ग दोवके समान है। तथा तीर्थद्वर प्रकृतिकी उत्कृष्ट श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठ बटे चौदह राजू चेत्रका स्परीन किया है।

१६८. मन प्रयंशानी, संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापनासंयत, परिहारविशुद्धि संयत और सूद्तमसाम्परायसंयत जीवोंमें अपनी सब प्रकृतियोंका भक्न दो के समान है। संयता-संयत जीवोंमें सातावेदनीय, हास्य, रित, स्थिर, शुभ और यशाकीति इनकी उत्कृष्ट और अनुस्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बड़े चौद्ह राष्ट्र दोशका स्पर्शन किया है। देवायु और तीर्थं क्कर इनकी उत्कृष्ट और अनुस्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेश्रके समान है। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेश्रके समान है। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन के समान है। तथा अनुस्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बड़े चौद्ह राज् चेश्रका स्पर्शन किया है। असंयत और अवश्रुदर्शनी जीवोंका भंग ओवके समान है।

४६६. कृष्णतेश्यावाले जीवोंका भन्न नपुंसकवेदी जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि नरकगति, वैकियिकशारीर, वैकियिकआंगोपान और नरकगत्यानुपूर्वी इनकी उत्कृष्ट श्रीर अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने इक कम इह बटे चौदह राजू चोत्रका स्पर्शन किया है। देवगति, देवगत्यानुपूर्वी और तीर्थ इस्ति उत्कृष्ट आर अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन दोत्रके समान है। नील और कापोत लेखावाले जीवोंमें प्रथम दण्डकका भंग नपुंसकवेदी जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कमसे इन्न कम चार बटे चौदह राजू और इन्न कम दो बटे चौदह राजू दोत्रका स्पर्शन किया है। सातावेदनीय, हास्य, रित, स्थिर, शुभ और यशाकीर्ति इनकी मुख्यतासे स्पर्शन प्रथम दण्डकके समान कहना चाहिए। नरकगति, वैकियिकशरीर, वैकियिकआङ्गोपान और नरकगत्यानुपूर्वी इनकी उत्कृष्ट श्रीर अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कमसे इन्न कम चार बटे चौदह राजू और इन्न कम दो बटे चौदह राजु चौत्रका स्पर्शन किया है। देवगित और देवगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे स्पर्शन कृष्ण लेक्यावाले जीवोंके समान है। तमा श्रेप प्रकृतियोंकी मुख्यतासे स्पर्शन न्युंसकवेदी जीवोंके समान है।

५०० तेऊए देवायु-ब्राहारदुगं० खे ०। देवगदि ०४ उक्त० खेँचं। ब्रणु० दिवहु-चौँ६०। इत्थि०-पुरिस० मणुसग०-पंचिदि० पंचसंठा०-श्रोरालि० ब्रंगो०-छरसंघ०-ब्रादाव--दोविहा०--तस-सुभग-दोसर-आदेक्का -ितत्थयः - उच्चा०--तिरिक्ख०-मणुसायु० उक्त० ब्रणु० ब्रह्चचोँ०। सेसाणं उक्त० अणु० अह-णव०। पम्माए देवायु --श्राहारदुगं खेँचं। देवगदि०४ उक्त० खेचं। श्रणु० पंचचो०। सेसाणं उक्त० अणु० ब्रह्म--णवचो०। सुकाए देवायु-ब्राहारदुगं ब्रोघं।देवगदि०४ उक्त० खेंचं। अणु० छचोँह्स०। सेसाणं उक्त० ब्रणु० ब्रच्चोँह०। ५०१ भवसिद्धिया० ब्रोघं। ब्रब्भवसि० मदि०भंगो। सामणे देवायु० ब्रोघं। तिरिक्ख-

मणुसायु० उक्क० खेर्स । अणु० अहचों० । मणुसगदि-मणुसाणु--उच्चा० उक्क० अणु० अहचों० । देवगदि०४ उक्क० खेर्स । अणु० पंचचोंद्दस० । सेसाणं उक्क० अणु० अह-बारह० । सम्मामि० देवगदि०४ उक्क० अणु० खेर्स । सेसाणं उक्क० अणु० अहचों० ।

५००. पीत लेखायाले जीवोंमें देवायु और आहारक द्विकका भङ्ग चेत्रके समान है। देवगति चतुष्ककी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन त्रेत्रके समान है। अनुःकृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुब कम डेढ़ बटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। खीवेद, पुरुपवेद, भनुष्य-गति, पञ्चेन्द्रिय जाति, पाँच संस्थान, औदारिक श्रांगोपांग, छह संहनन, श्रातप, दो विहायोगाँत, त्रस, सुभग, दो स्वर, ऋदिय, तीर्थङ्कर, उच्चगोत्र, तिर्यञ्चायु और मनुष्यायु इनकी उरक्कष्ट ऋरि श्रमुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौद्ह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। शेष प्रकृतियोंकी उक्ष्य श्रीर अनुरुक्षष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कमे आठ यटे चौदह राजु श्रीर कुछ कम नो बटे चौदह राजू क्रेत्रका स्पर्शन किया है। पद्मकेश्यावाले जीवोंमें देवायु श्रीर आहा-रकद्विकका संग चेत्रके समान है। देवगति चतुःककी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है । ऋनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवांने बुद्ध कम पाँच वट चौद्ह राजू चेत्रका स्पराँन किया है । शोप प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट श्रीर श्रनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ, कम श्राट वर्ड चोदह राजु ऋोर कुछ कम नौ वडे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। शुक्ल लेश्यावाले जीवामें देवायु श्रीर त्राहारकद्विकका भंग त्रोघके समान है । देवगृति चतुष्ककी उक्कष्ट स्थितिके वन्धक जीवींका स्पर्शन चेश्के समान है । अनुस्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवॉने कुछ कम छह बडे चौदह राजू चेशका स्पर्शन किया है। शेप प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट श्रोर श्रमुकुष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है।

४०१ भन्य जीवोंमें अपनी सब प्रकृतियोंका भङ्ग आंघके समान है। अभन्य जीवोंमें मत्यज्ञानी जीवोंके समान है। सासादनसम्यन्द्रष्टि जीवोंमें देवायुका भङ्ग ओघके समान है। सिर्यक्चायु और मनुष्यायुकी उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। अनुस्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंने कुछ कम अस्ट बटे चौदह राजू प्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगोत्रकी उत्कृष्ट श्रीर अनुस्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंने कुछ कम आट बटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। देवगितचतुक्कि उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। अनुस्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंका स्पर्शन किया है। योप प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुस्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंने कुछ कम आट बटे चौदह राजू आर कुछ कम बारह बटे चौदह राजू प्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यग्मिथ्यादिष्ट जीवोंमें देवगितचनुक्कि उत्कृष्ट और अनुस्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुस्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुस्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुस्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंने कुछ कम आठ वटे चौदह राज प्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है।

५०२, असण्णीसु पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-भिच्छ०-सोलसक०-सत्तणोक०-तिरिक्खायु-मणुसगदि-चदुजादि-[ओरालि०]-तेजा०-क०-छस्संठा०-ओरालि०अंगो०-छस्संघ०-चएण०४-मणुसाणु०-अगु०-४-आदाव-दोविहा०-तस०४ -अधिरादिछ०-सुभग-सुस्सर-आदे०-णिपि०-णीचुचा०-पंचंत०-उक्क० खेनं। अणु०सव्वलो०।
सादावे०-हस्स रदि-तिरिक्खगदि-एइंदि०-ओरालि०-तिरिक्खाणु०-धावरादि०४-थिरसुभ० उक्क० लो०असंखेंज० सव्वलो०। अणु० सव्वलो०। णिरय-देवायु-वेजव्वियछ०खेत्तभंगो। मणुसायु० एइंदियभंगो। उज्ञो०-जसिग० उक्क० सत्तवोद्दस०। अणु०
सव्वलो०। आहार० औदं। अणाहार० कम्मइगभंगो। एवं उक्कस्सफोसणं समन्तं।

५०३. जहण्णए पगदं ! दुवि०-श्रोधे० श्रादे० । श्रोधे० खविगाणं मणुसग०मणुसाणु० जहण्णद्विदिवंधगेहिं केवडियं खेत्तं फोसिदं ? लोगस्स श्रसंखें अदिभागो ।
श्रज० सब्बलो० । पंचदंस०-श्रसादा०-मिच्छ०-बारसक०-श्रहणोक०-तिरिक्खगदिचदुजादि-श्रोरालि०-तेजा०-क०-छस्संठा०-श्रोरालि०अंगो०-छस्संघ०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-श्रगु०४-श्रादाउजो०-दोविहा०-तस-श्रादर-पजत्त-श्रपजत्त-परोय०साधार०-थिरादिपंचयुगल-श्रजस०-णिमि०-णिचा० जहरूण० श्रजहरूण० खेतं। ख्रिस्य-

४०२. असंज्ञी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, नी दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्याख, सोलह कपाय, सात नोकपाय, तिर्यवन्त्रायु, मनुष्यगित, चार जाति, औदारिकरारीर, तैजसरारीर कामण्रारीर, छह संस्थान, औदारिक आंगोपांग, छह संहनन, वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, आतप, दो विहायोगित, त्रसचतुष्क, अस्थिर आदि छह, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण, नीचगोत्र, उच्चगोत्र और पाँच अन्तराय इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन सेत्रके समान है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन सेव लोक है। सातावेदनीय, हास्य, रित, तिर्यवन्त्रगित, एकेन्द्रियजाति, औदारिकरारीर, तिर्यक्र्यात्यानुपूर्वी, स्थावर आदि चार, स्थिर और सुभकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन लोकके असंख्यात्यं भाग प्रमाण और सब लोक है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन सेव लोक है। नरकायु, देवायु और वैक्रियिक छहका भङ्ग त्रेत्रके समान है। मनुष्यायुका भङ्ग एकेन्द्रियोंके समान है। उद्योत और यशःकीर्तिकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन कुछ कम सात बटे चौदह राजू है और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन कुछ कम सात बटे चौदह राजू है और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन सेव लोक है। आहारक जीवोंका सङ्ग अधिके समान है। अनाहारक जीवोंका सङ्ग कार्मणकाययोगी जीवोंके समान है। इस प्रकार उत्कृष्ट स्पर्शन समाप्त हुआ।

५०२ जयन्यका प्रकरण है। उसकी अपेद्धा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। अवसे द्धापक प्रकृतियाँ, मनुष्यगति और मनुष्यगत्यानुपूर्वीकी जयन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कितने द्येत्रका स्पर्शन किया है। अजयन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कितने द्येत्रका स्पर्शन किया है। आजयन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक द्वेत्रका स्पर्शन किया है। पाँच दर्शनावरण, अस्मातावेदनीय, मिथ्यात्व, वारह कपाय, आठ नोकपाय, तियंश्वगति, चार जाति, औदारिकशरीर, तैजसरारीर, कार्मण्यारीर, छह संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, वर्णचनुष्क, तियंश्वगत्यानुपूर्वी, अगुरुलधुचनुष्क, आतप, उद्योत, दो विह्यायोगिति, त्रस, बादर, पर्याप्त, अपर्याप्त, प्रत्येकशरीर, साधारण, स्थिर आदि पाँच युगल, अथराकीति, निर्माण और नीचगोत्र इनकी जधन्य और अजयन्य स्थितिके वन्धक जीवोंका स्पर्शन दोत्रके समान है। नरकायु, देवायु और आहारकदिकका

देवायु०-ब्राहारदुगं उक्कस्सभंगो । एवं सव्वत्थ । तिरिक्षायु-सुहुम० जह० श्रज० सव्वलो० । मणुसायु० जह० [अज०] लोग० असंखें ज० सव्वलोगो वा । णिरय-देव-गदि-णिरय-देवाणु० जह० खेंतां । अज० छच्चोंद्द० । एइंदि०-थावर० जह० सत्त-चोंद० । श्रज० सव्वलो० । वेउव्वि०-वेउव्विश्चंगो० जह० खेंतां । श्रजह० बारहचों० । तित्थय० जह० खेंतां । श्रजह० बारहचों० ।

५०४. णिरएसु दोत्रायु-मणुसग०-मणुसाणु०--तित्थय०--उच्चा० उक्कस्सभंगो । सेसाणं जह० खेंत्रभंगो । श्रज० छच्चोद्दस० । पढमाए खेतं । विदियादि याव छद्वि ति तिरिक्खायु-मणुसगदि०४-तित्थय० खेंत्रं । सेसाणं जह० खेतं । श्रज० एक्क-दो-तिण्णि-चत्तारि-पंचचोद्दस० । णवरि तिरिक्खगदि-तिरिक्खाणु०-उज्जो० जह० श्रज० एक-वे-तिरिक्ण-चत्तारि-पंचचोद्दस० । सत्तमाए इत्थि-णवंसठा०-पंचसंघ०-श्रप्सत्थ०-दूभग-दुस्सर-श्रणादें० जह० श्रज० छच्चोद्दस० । तिरि-

भक्न उत्कृष्टके समान है। इसी प्रकार इन चार प्रकृतियोंकी मुख्यतासे स्पर्शन सर्वत्र जानना चाहिए। तियकचायु श्रोर सूदम इनके जधन्य श्रोर श्रजधन्य रिथितिके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। मनुष्यायुकी जधन्य श्रोर श्रजधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण श्रोर सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। नरकगति, देवगति, नरकगत्यानुपूर्वी, श्रोर देवगत्यानुपूर्वी इनको जधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। श्रजधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन किया है। एकेन्द्रिय जाति श्रोर स्थावर इनकी जधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम सात बटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। योकियिकशारीर श्रोर वैकियिक श्राङ्गोपाङ्गकी जधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। वैकियिकशारीर श्रोर वैकियिक श्राङ्गोपाङ्गकी जधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन चेत्रके समान है। श्रजधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन किया है। तीर्थङ्कर प्रकृतिकी जधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रका स्पर्शन किया है। तीर्थङ्कर प्रकृतिकी जधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। श्रजधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रका स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम बारह बटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। तीर्थङ्कर प्रकृतिका जधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। श्रजधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राह चेत्रका स्पर्शन किया है।

४०४ नारिकयों में दो आयु, मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, तीर्थक्कर और उच्चगीत्रका भक्क उत्कृष्टिक समान है। शेष प्रकृतियों की जघन्य स्थितिक बन्धक जीवों का स्पर्शन क्रियक समान है। अजघन्य स्थितिक बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राजु क्रेत्रका स्पर्शन किया है। पहिली पृथ्वीमें स्पर्शन क्रेत्रके समान है। दूसरीसे लेकर छटवीं तक पाँच पृथिवियों में तिर्यव्चायु, मनुष्यगित चार और तीर्थकर प्रकृतिका भक्क बेत्रके समान है। शेष प्रकृतियों की जघन्य स्थितिक बन्धक जीवों का स्पर्शन क्रेत्रके समान है। अजघन्य स्थिति के बन्धक जीवोंने कमसे कुछ कम एक बटे चौदह राजु, कुछ कम दो बटे चौदह राजु, कुछ कम तीन बटे चौदह राजु, कुछ कम पाँच बटे चौदह राजु, कुछ कम पान बटे चौदह राजु, कुछ कम चार बटे चौदह राजु और अजघन्य स्थितिक बन्धक जीवों ने कुछ कम छह बटे चौदह राजु के अना क्री चार करने चौदह राजु के कम छह बटे चौदह राजु के कम छह बटे चौदह राजु के त्रका स्थरन किया है। तिर्थक्कायु और मनुष्यगित त्रिकका भक्क के समान है। शेप

क्खायु-मणुसगदितिगं खेतं । सेसाणं जद०खेनं । अज० छच्बोँद्दस० ।

५०५. तिरिक्षेसु पंत्रणा०-णवदंसणा०-दोवेदणीय--मिच्छ०--सोलस ०णवणोक०-दोगदि--चदुजादि-द्योरालि०-तेजा०-क०-छस्तंठा०--द्योरालि०अंगो०-छस्तंघ०-वएण०४-दोद्याणु०-मगु०४-म्रादाउजो०-दोविहा०-तस-बादर -पजतम्रपज्ञत-पत्ते०-साधार०-धिरादिख्रगुग०-णिमि०-णीचुच्चा०-पंचत० जह० खेँचं।
अज० सक्त्रलो०। तिरिक्खायु-सुहुमणा० जह० मज० सच्वलो०। मणुसायु० जह०
अज० लोग० असंखेँज० सम्बलो०। एइंदि०--थावर--वेउव्वियद्ध० श्रोधं। एवं
तिरिक्खोधं मदि०-सुद०-असंज०--अब्भवसि०--मिच्छादिष्टि ति। एवरि एदेसि देवगदि--देवाणु० सज० पंवचोद्दस०। सतंत्रण अज० अष्टचोँद्दस०।

५०६, पंचिदियतिरिक्ख०३ पंचणा०--सावदंसणा०--सादासाद०--मोहस्रोय० २४--तिरिक्खगदि--एइंदि०--स्रोरालि०-तेजा०--क्र०--हुंड०--वण्ण०४--तिरिक्खाणु०-इस्राह०४-थावर- पज्जत- अपज्जत-पचेय०-साधार०--धिराधिर-सुभासुभ-दूभग-न्न-प्रकृतियों की जघन्य स्थिति के बन्धक जीवों का स्पर्शन चेत्र के समान है। स्रजघन्य स्थिति के बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बढे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है।

४०४. तिर्यञ्चोंमें पांच ज्ञानावरण, बी दर्शनावरण, दो वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, नी नोकषाय, दो गति, चार जाति, श्रीदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्भण शरीर, छह संस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, वर्णचतुष्क, दो श्रानुपूर्वी, श्रगुरुलघुचतुष्क, श्रातप, उद्योत, दो विहायोगति, त्रस, वादर, पर्योप्त, श्रपर्याप्त, प्रत्येकशरीर, साधारणशरीर, स्थिर आदि छह युगल, निर्माण, नीचगात्र, उद्यगीत और पांच अन्तराय इनकी जवन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्परान त्रेत्रके समान है। अजयन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक त्रेत्रका स्पर्शन किया है। तिर्यक्काय त्रीर सत्तमको जयन्य त्रीर अजधन्य स्थितिके वन्धक जीवाने सव लोक न्नेक्षका स्पर्शन किया है। मनुष्यायुकी जधन्य श्रीर अजधन्य स्थितिके वन्धक जीवाने लोकके असंख्यातवें भागप्रभाग श्रीर सब लोक चेत्रका स्परीन किया है। एकेन्द्रिय जाति, स्थाधर श्रीर वैकियिक छहका भक्क श्रोपके समान है। इसी प्रकार सामान्य तिर्यश्चोंके समान मत्यज्ञानी. श्रुताज्ञानी, असंयत, अभव्य और मिथ्यादृष्टि जीवोंके जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि इन जीवोंके देवगति श्रौर देवगत्यानुपूर्वीकी अजवन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम पांच बटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि ऋसंयत जीवोंमें वैक्रियिक शरीर **ऋौर वैक्रियिक ऋाङ्गोपाङ्गकी ऋजधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम ग्यारह वटे चौदह राज्** चेत्रका स्पर्शन किया है। तथा इन्हीं ऋसंयत जीवोंमें तीर्थङ्कर प्रकृतिकी अजवन्य स्थितिके वन्यक जीवोंने कुछ कम आठ वटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है।

४०६. पश्चेन्द्रिय तिर्यव्यविक्रमें पांच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, सातावेदनीय, श्रसाता-वेदनीय, मोहनीय चौबीस, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कःमण शरीर, हुण्डसंस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुत्तघु चतुष्क, स्थावर, पर्याप्त, श्रपर्याप्त, प्रत्येक, साधारण, स्थिर, श्रास्थिर, श्रुभ, श्रशुभ, दुर्भग, श्रनादेय, श्रयशःकीर्ति, निर्माण, नीचगोत्र श्रौर पांच श्रन्तराय इनकी अधन्य स्थितिक धन्धक जीवोंने लोकके श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण गादें - अजस० - गिमि० - गीचा० - पंचंतराइगं० जह० लो० असंखें ज०। अज० लो० असखें ज० सव्वलो०। णविर एइं दि० - थावर० जह० सत्तचोद्दस०। उज्जो० - जसिग० जह० खेतं। अज० सत्तचोद्दस०। बादर० जह० खेतं। अज० तेरहचोद्दस०। सुहुम० दो वि पदा लोग० असंखें जज० सव्वलो०। सेसाणं जह० खेतं। अज० अप्पप्पणो [फोसणं कादव्वं।]

५०%. पंचिदियतिरिक्खत्रपन्जत्ता० पंचणा०-स्वतंसगा०-दोवेदणी०-मोद-णीय०२४-तिरिक्खगदि-एइं दिय०-द्रोरालि०-तेजा०-क०-हुं ड०-वरण०४-तिरिक्खगु०-अगु०४-थावरणा०-पन्जत्त-- त्रपन्जत्ता--पने०-साधार०-थिराथिर-सुभो-सुभ-दूभग-त्रणादे०-अजस०-गिमि०-गीचा०-पंचंत० जह० खेंनं। अज०द्दि० लोग० असंखेंजज० सन्वलो०। णवरि एइं दि०-थावर० जह० सन्ताचोद्द०। उडजो०-बादर०-जसिग० जह० खेंनं। अज०दि० लोग० असंखेंज०। सेसागं जह० अज० खेंनभंगे। प्वरि सुदुम० जह० अज० लोग० असंखेंज० सन्वलो०। एवं पंचिदिय-तस-अपज-नाणं सन्वविगलिदिय-बादरपुढवि०-आउ०-तेउ०-वाउ०-बादरवणफदिपनेय०पज्जनाणं च।

त्रेत्रका स्पर्शन किया है। ऋजवन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके ऋसंख्यातवें भाग प्रमोण क्रौर सब लोक त्रेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि एकेन्द्रिय जाति और स्थायरकी जवन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम सात बटे चौद्ह राजू त्रेत्रका स्परान किया है। उद्योत और यशःकीर्तिकी जवन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्परान त्रेत्रके समान है। अजवन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम सात बटे चौद्ह राजू त्रेत्रका स्परान किया है। आजवन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम तेरह बटे चौद्ह राजू त्रेत्रका स्परान केया है। अप्रवान है। अजवन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम तेरह बटे चौद्ह राजू त्रेत्रका स्पर्शन किया है। सूद्मके दोनों ही पद्वाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग-प्रमाण और सब लोक त्रेत्रका स्पर्शन किया है। शेष प्रकृतियोंकी जवन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन है। अजवन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन त्रेत्रके समान है। अजवन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन त्रेत्रके समान है। अजवन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका क्रिया स्पर्शन करना चाहिए।

४०७. पञ्चीन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, दो वेदनीय, चौवीस मोहनीय, तिर्यञ्चगित, एकेन्द्रिय जाति, श्रौदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मण्रारीर, हुण्डसंस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रमुरुलघुचतुष्क, स्थावर, पर्याप्त, अपर्याप्त, प्रत्येक, साधारण, स्थिर, श्रास्थर, श्रुभ, श्रग्धभ, दुभग, श्रमादेय, श्रयशःकीर्ति, निर्माण, नीचगोत्र श्रौर पांच श्रन्तराय इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके श्रमंख्यातवें भागप्रमाण श्रौर सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि एकेन्द्रिय जाति श्रौर ग्थावर इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम सात बटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। श्राप्त प्रश्निके बन्धक जीवोंने कुछ कम सात बटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। श्रोप प्रकृतियों की जघन्य श्रौर श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके समान है। श्राप्त प्रश्निकों की जघन्य श्रौर श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके समान है। इतनी विशेषता है कि सूद्रमकी जघन्य श्रौर श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके समान है। इतनी विशेषता है कि सूद्रमकी जघन्य श्रौर श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके श्रमंख्यातवें भाग प्रमाण श्रौर सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार, पर्वचिन्द्रय श्रपर्शन किया है। इस श्रीप्ता श्रीर सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार, पर्वचिन्द्रय श्रपर्शन स्थाप्त श्रीर त्रस श्राप्तीप्त जीवोंके तथा सब विकलेन्द्रिय, बादर प्रथ्वी-

- ५०८. मणुसगदीएसु३ सन्त्रपगदीणं जह० खेँचं । श्रज्ञ० श्रप्यप्पाणे फोसणं कादन्वं । एवं मणुसत्रपञ्जन्त० ।
- ५०९. देवेसु थावरपगदीणं जह० खेँत्तं । अज्ज० अट्ट-सवर्चो० । तसपगदीणं जह० खेँत्तभंगो । अज० अट्टचो० । सविर दोआयु०-तिस्थय० जह० अज० अट्ट-चोद्द० । एवं सव्वदेवासं अप्यप्पसो फोसणं साद्स सोदव्तं ।
- ४१०. एइंदिए तिरिक्लोघं । बादरएइंदिय-पज्जत्त-अपज्जत्त सब्बयगदीएां जह० लोग० संखेंज्ज० । अज० सब्बलो० । एवरि मणुसायु०-मणुसगदि-मणु साणु०-उच्चा० जह० अज० लोग० असंखेंज्ज० । एइंदि०-धावर० जह० सत्तवों० । अज० सब्बलो० । उज्जो०-बादर०-जसगि० जह० खेंत्रं । अज० सत्तवोंद्द० । तिरिक्लायु०-आदाव०-सुहुम०-तसपगदीछां च खेंत्रं ।
- ४११. पुढवि०-म्राउ०-तेउ०-वाउ० तिरिक्खायु०-प्रुहुम० जह० स्रज्ञ० सव्व-स्रो० । सेसाणं जह० लोग० असंस्रेज्ज० । श्रज्ज० सव्वलो० । स्वारि एइंदिय-थावर०

कायिक पर्याप्त, बादर जलकायिक पर्याप्त, बादर ऋग्निकायिक पर्याप्त, बादर वायुकायिक पर्याप्त ऋौर बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शारीर पर्याप्त जीवोंके जानना चाहिए।

- ४०८. मनुष्यत्रिकमें सब प्रकृतियोंकी जवन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन देत्रके समान है। अजबन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका अपना-अपना स्पर्शन करना चाहिए। इसी प्रकार मनुष्य अपर्याप्त जीवोंके जानना चाहिए।
- ४०६. देवोंमें स्थावर प्रकृतियोंकी जवन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। अज्ञचन्य स्थितिके वन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू और कुछ कम नौ बटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। त्रस प्रकृतियोंकी जवन्य स्थितिके वन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। अज्ञवन्य स्थितिके वन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि दो आयु और तीर्थकर प्रकृतिकी जघन्य और अज्ञघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार सब देवोंके अपना-अपना स्पर्शन जानकर ते आना चाहिए।
- ४१०. एकेन्द्रियों में सामान्य तिर्यव्योंके समान भक्क है। बादर एकेन्द्रिय और उनके पर्याप्तअपर्याप्त जीवों से सब प्रकृतियों को जवन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके संख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अजधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि मनुष्यायु, मनुष्यगित, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगित्रकी जधन्य और अजधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। एकेन्द्रिय जाति और स्थावरकी जधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम सात बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अजधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। उच्चोत, बादर और यशःकीर्ति इनकी जधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। अजधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। अजधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। अजधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम सात बटे चौदह राजू क्षेत्र का स्पर्शन किया है। तिर्यव्यायु, आतप, सूक्त और त्रस प्रकृतियोंका भक्क क्षेत्रके समान है।
- ४११. पृथ्वीकायिक, जलकायिक, श्राग्निकायिक श्रोर वायुकायिक जीवोंमें तिर्यक्कायु श्रीर सूहम इनकी जघन्य श्रीर अजयन्य स्थिति के बन्धक जीवोंने सब लोक देत्र का स्पर्शन किया है। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण चेत्र का स्पर्शन

जह सत्तर्चों । अज विस्ति । उन्जो - बादर-जसिंग वह विश्व । विदर-पुढिवि - आउ - तें उं । वादर-पुढिवि - आउ - तें उ - वाउ वें थावरपगदीणां जह विशेष असंसें ज्ज व । अज व सन्व-लो व । एइंदिय व - थावर व पुढिविभंगो । उन्जो व - बादर - जसिंग विदिक्ष व अप-ज्ज त्यां पें से सार्थ जह व अज वें त्यां गो । बादरपुढिवि व - आउ व - तें उ - - वाउ व अपज्ज त व थावरपगदीणं जह व अज वें तं । एइंदि व - उन्जो व - थावर व - जादर - जसिंग व बादर पुढिविभंगो । सुहुम व जह व अज व वें तं । से सार्थ पि वें त्यांगो ।

५१२. वर्षाप्कदि-णियोदेसु तिरिक्खायु-सुहुम० जह० अज० सव्वली०। एइंदि०-उन्जो०-थावर-बादर-जसगि० पुढिनिमंगो। सेसाणं खेंचभंगो। खवरि मणुसायु० तिरिक्खोषं । बादरवर्णप्कदि-शियोद-पन्जना-अपन्जना० बादरपुढिविश्चपन्जतमंगो। बादरवणप्कदिपत्ते० बादरपुढिविभंगो। सन्त्रसुहुमाणं खेंत्तं। खवरि मणुसायु० एइंदिय-भंगो। खवरि वाऊखं जम्हि लोग० असंखें० तम्हि लोगस्स संखेंज्जदिभागं काद्वन्वं। ५१३. पंचिदिय-तस०२ एइंदिय-थावर ० जह० सत्त्वों०। अज० अट्टचोंद०

किया है तथा अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि एकेन्द्रिय जाति और स्थावर इनकी जघन्य स्थिति के बन्धक जीवोंने कुछ कम सात बटे षोदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। अजघन्य स्थिति के बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। उद्योत, बादर और यशाकीर्ति इनकी जघन्य और अजध्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। बादर पृथ्वीकायिक, बादर जलकायिक, बादर आप्तिकों असंख्यातवें भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्र का स्पर्शन किया है। एकेन्द्रिय जाति और स्थावर इनका भङ्ग पृथ्वीकायिक जीवोंने समान है। उद्योत, बादर और यशाकीर्ति इनका भङ्ग तिर्यञ्च अपर्याप्तकों के समान है। शेष प्रकृतियों की जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंको समान है। श्रेष प्रकृतियों की जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। बादर पृथ्वीकायिक अपर्याप्त, बादर जलकायिक अपर्याप्त, बादर आपत्र प्रकृतियों की जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। एकेन्द्रिय जाति, उद्योत, स्थावर, बादर, और यशाकीर्ति इनका भङ्ग बादर पृथ्वीकायिक जीवोंके समान है। सूद्दम प्रकृतिकी जघन्य और अजघन्य स्थिति के बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। सूद्दम प्रकृतिकी जघन्य और अजघन्य स्थिति के बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। श्रेष प्रकृतियोंका भी स्पर्शन चेत्रके समान है।

५१२. वनस्पतिकायिक और निगोद जीवोंमें तियँक्चायु और सूद्म इनकी जघन्य और श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। एकेन्द्रियजाति, उद्योत, स्थावर, बादर और यशःकीर्तिका भक्क पृथ्वीकायिक जीवोंके समान है। शेष प्रकृतियोंका भक्क चेत्र के समान है। इतनी विशेषता है कि मनुष्यायुका भक्क समान्य तियंक्चों के समान है। बादर वनस्पतिकायिक और निगोद तथा इनके पर्याप्त श्रीर अपर्याप्त जीवोंमें बादर पृथ्वीकायिक अपर्याप्त जीवोंके समान भक्क है। बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येकशरीर जीवोंमें बादर पृथ्वीकायिक जीवोंके समान भक्क है। सब सूद्मोंका भक्क चेत्र के समान है। इतनी विशेषता है कि मनुष्यायु का भक्क एकेन्द्रियोंके समान है। इतनी विशेषता है कि वायुकायिक जीवोंका जहाँपर लोकका श्रमख्यान तथा प्रभाग प्रमाण स्पर्शन कहना चाहिए। ५१३. प्रक्वेन्द्रियद्विक और त्रसद्विक जीवोंको एकेन्द्रिय और स्थावर इनकी जघन्य स्थिति

सब्वलो ः । सेसाणं जहर खेरां । श्रज ० श्रशुकस्सभंगो ।

४१४. पंचमण०-तिण्यिवचि० इत्थि०-णवुंस०-पंचसंठा०-पंचसंघ०-अप्प-सत्थ०-द्भग-दुस्सर-अणार्दे० जह० अष्ट-बारह० । अज० अणुकस्सभंगो । एइंदि०-थावर० जह० अष्ट-णवचो० । अज० अणुकस्सभंगो । मणुसगदि०४ जह० अज० अष्टचोंद्स० । एवं श्रादावं पि । सेसाणं पि जह० खेसं । अज० अणुकस्सफीसण-भंगो । णवरि सुहुम० जह० लो० असंखेंज्ज० सञ्चलो० । विच्जोगि०-असचमोस० तसपज्जसभंगो ।

४१५. कायजोगि०-स्रोरालिय० स्रोधं। स्वति स्रोरालियका० मसुसायु-तित्थयराणं चरज्जु स्वति । श्रोरालियमि० देवगदि०४-तित्थय० उक्कस्समंगी । सेसासं तिरिक्खोधं। स्वति एहंदि०-थावर०-सुहुम० जह० स्रज्ज० खेंत्रं । वेडिक्वियका० धीस्पगिद्धि०३-मि० इ०-स्रसंतासुवंधि०४ जह० अहुचों० । स्रज्ज० स्रस्तसंगी । तिरिक्खगदि०४ जह० वेत्रं । श्रज्ज० स्रसुक्कस्तमंगी । हिरिक्खगदि०४ जह० वेत्रं । श्रज्ज० श्रसुक्कस्तमंगी । हिरिक्णपिक्षस्तमंगी । हिरिक्णपिक्षस्तमंगी ।

के बन्धक जीवोंने कुछ कम सात बटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू और सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। रोष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन अनुतुकुष्टके समान है।

११४ पांच मनोयोगी श्रीर तीन वचनयोगी जीवोमें स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, पांच संस्थान, पांच संहनन, श्रप्रशस्त विहायोगित, दुर्भग, दुस्वर श्रीर श्रनादेय इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठ बटे चौदह राजू श्रीर कुछ कम बारह बटे चौदह राजू चैत्रका स्पर्शन किया है। श्रज्जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका भङ्ग श्रमुक्त प्रके समान है। एकेन्द्रय जाति श्रीर स्थावरकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका भङ्ग श्रमुक्त प्रके समान है। एकेन्द्रय जाति श्रीर स्थावरकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठ बटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। श्रज्जघन्य स्थिति के बन्धक जीवोंका स्पर्शन श्रमुक्त हके समान है। मनुष्यगति चार की जघन्य श्रीर श्रज्जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठ बटे चौदह राज चेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार श्रातपकी श्रपेत्ता भी स्पर्शन जानना चाहिए। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है श्रीर श्रमुक्त स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन श्रमुक्त स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है कि सूद्मकी अधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके श्रमंख्यातवें भाग प्रमाण श्रीर सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। वचनयोगी श्रीर श्रमत्यमृष्यवचनयोगी जीवोंका भङ्ग त्रसपर्याप्त जीवोंके समान है।

४१४. काययोगी और श्रीदारिककाययोगी जीवोंका मङ्ग श्रोधके समान है। इतनी विशेषता है कि श्रौदारिककाययोगी जीवोंमें मनुष्यायु श्रौर तीथकर प्रकृतियोंका राजुप्रमाए स्पर्शन नहीं है। श्रौदारिक मिश्रकाययोगी जीवोंमें देवगति चतुष्क श्रौर तीथक्कर प्रकृतियोंका भङ्ग उत्कृष्टके समान है वथा शेष प्रकृतियोंका भङ्ग्म सामान्य तिर्यक्चोंके समान है। इतनी विशेषता है कि एकेन्द्रिय जाति, स्थावर श्रौर सूदम इनकी जधन्य श्रौर श्रजधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। वैक्रियककाययोगी जीवोंमें स्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व और अनम्तानुबन्धी चारकी जधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका भङ्ग श्रमुत्कृष्टके समान है। तिर्यक्चिमति चारकी जधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका भङ्ग श्रमुत्कृष्टके समान है। तिर्यक्चिमति चारकी जधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। तिर्यक्चिमति चारकी जधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। श्रजधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका

सत्थ०-द्भग-दुस्सर-श्रणादेँ जह अह-बारह । श्रज श्र श्रुक्षस्सभंगो । दोश्रायु-मणुसग०-मणुसाणु०-श्रादाद-तिस्थय०-उच्चागो० जह श्रञ्ज श्रहचोँ । एइंदि०-थावर जह श्रज श्रह-णवचौँ ६० । सेसाणं जह श्रहचौँ । श्रज श्र श्रुक्तस्स-भंगो । वेउव्वियमि०-श्राहार०-आहारमि० खेँ तभंगो । कम्मइग० खेँ तमंगो । एवं श्रणाहार ।

४१६. इत्थि-पुरिसेस एइंदिय-धावर० जह० सत्तचों०। अज० असुकस्सभंगो। सुदुम० जह० अज० लोग० असंखेंज० सव्वलो०। इत्थीए तित्थय० जह० अज० खेंतं। सेसाणं जह० खेतं। अज० असुकस्सभंगो। सावुंसगे कोधादि०४-अचक्खुदं०-भवसि०-आहारग ति ओघं। सावुंस०-मसुसायु०-तित्थय० ओरालियकायजोगिभंगो। साविर सावुंसगे तित्थय० खेंतं। अवगदवेदे खेंतं।

प्रश्न. विभंगे असादा०-अरिद्-सोग-अधिर-असुभ-अजस० जह० अहु-बारहचोद्दस० | अज० अणुक्तस्समंगो | इत्थि०-णवुंस०-पंचसंठा०-पंचसंघ०-अप्प-एगर्शन अनुत्कृष्टके समान है।स्त्रीवदे, नपुसंकवदे, पांच संस्थान, पांच संहनन, अप्रशस्त विहायोगित, दुर्भग दुःस्वर और अनादेय इनकी जधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौद्ह राजु और कुछ कम बारह बटे चौद्ह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है तथा अजधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका भक्त अनुत्कृष्टके समान है। दोआयु, मनुष्यगित, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, आतप, तीर्धक्कर और उच गोत्र इनकी जधन्य और अजधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौद्ह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। एकेन्द्रिय जाति और स्थावर इनकी जधन्य और अजधन्य स्थितिके बन्धक जीवों ने कुछ कम आठ बटे चौद्हराजू और कुछ कम नौ बटे चौद्ह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष प्रकृतियोंकी जधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौद्द राजु चेत्रका स्पर्शन किया है तथा अजधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौद्द राजु चेत्रका स्पर्शन किया है तथा अजधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंना स्पर्शन अनुत्कृष्टके समान है। वैकियिक मिश्रकाययोगी, आहारक काययोगी और आहारक मिश्रकाययोगी जीवोंमें अपनी सब प्रकृतियोंका भक्त चेत्रके समान है। कार्मण्काययोगी जीवोंमें अपनी सब प्रकृतियोंका भक्त चेत्रके समान है। इसी प्रकार अनाहारक जीवोंके जाननावाहिए।

४१६ स्नीवेदी और पुरुषवेदी जीवोंमें एकेन्द्रिय जाति और स्थावर इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम सात वटे चौद्ह राजु त्रेत्रका स्पर्शन किया है। श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका भन्न श्रात्रके समान है। सूद्दमको जघन्य श्रौर अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका भन्न श्रात्रके समान है। सूद्दमको जघन्य श्रौर अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लीक स्नेत्रका स्पर्शन किया है। स्नीवेदी जीवोंमें तीर्थक्कर प्रकृतिको जघन्य श्रौर अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन है। राथा अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन त्रेत्रके समान है। राथा अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवों का स्पर्शन अनुस्कृष्ठ के समान है। नपुंसकवेदी, क्रोधादि चार कषायवाले, अच्छ दर्शनी, भव्य और आहारक जीवोंका भन्न श्रोवके समान है। किन्तु नपुंसकवेद, मनुष्यायु और तीर्थक्कर प्रकृतिका भन्न श्रौदारिक काययोगी जीवों के समान है। इतनी विशेषता है कि नपुंसकवेदमें तीर्थक्कर प्रकृतिका भन्न लेत्रके समान है। श्रापगतवेदमें अपनी सब प्रकृतियोंका भन्न स्नेत्रके समान है।

४१७. विभङ्ग ज्ञानी जीवोंमें असाता वेदनीय, अर्रात, शोक, अस्थिर, अशुभ और अयशः कीर्ति इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू और सत्थ०-दूभग-दुस्तर-प्रणादैँ० जह० श्रद्ध-बारहचौँ० । श्रज० श्रप्णकस्तमंगो । मणु-सगदिपंचग० जह० श्रज० श्रद्धचौँ६० । सेसाणं जह० खेँतं । श्रज० श्रप्णकस्तमंगो । णवरि एइंदि०-थावर-जह० श्रद्ध-णवचौँ६० । श्रज० श्रप्णकस्तमंगो । सुदुम० जह० श्रज० लो० श्रसंखेँ० सन्वलो ० ।

४१८. आभिणि०-सुद०-म्रोधि० मणुसायु०-मणुसगदिपंचग० जह० अज० श्रष्ट चोंद्दस०। देवायु०-म्राहारदुगं खेंसं। देवगदि०४ उक्कस्समंगो। सेसायां जह० खेंसं। श्रज्ज० श्रणुक्कस्समंगो। मणपज्ज०-संजद-सामाइ०-छेदो०-परिहार०-सुहुमसं० खेंसं।

५१६. संजदासंजद० असादा०-अरदि-सोग-अधिर-असुम-अजस० जह० अज० छचोद्द० । देवायु०-तित्थय० जह० अज० खेँचं । सेसाणं जह० खेँचं । अज० छचोद्द० । ओधिदं०-सम्मादि०-खइग०-वेदग०-उवसम०-आमिणि०मंगो । स्वरि

कुछ कम बारह बटे चौदह राजु चेत्र का स्पर्शन किया है। अजबन्य स्थित के बन्धक जीवोंका स्पर्शन अनुरुक्टके समान है। स्त्रीवंद, नपुं सकवेद, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, अप्रशस्त विहायोगित, दुर्भग, दुस्वर और अनादेय इनकी जधन्य स्थिति के बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजु और कुछ कम बारह बटे चौदह राजु चेत्र का स्पर्शन किया है। तथा अजधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने स्पर्शन अनुरुक्टके समान है। मनुष्यगतिपद्धककी जधन्य और अजधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। शेष प्रकृतियों की जधन्य स्थिति के बन्धक जीवोंने स्पर्शन चेत्रके समान है। तथा अजधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने समान है। इतनी विशेषता है कि एकेन्द्रिय जाति और स्थावर इनकी जधन्य स्थिति के बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजु और कुछ कम नौ बटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। तथा अजधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने स्पर्शन किया है। तथा अजधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने स्पर्शन किया है। तथा अजधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने स्थावर इनकी जधन्य स्थिति के बन्धक जीवोंने कुछ कम नौ बटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। तथा अजधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने सोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है।

५१८. आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानी जीवोंमें मनुष्यायु और मनुष्य-गति पञ्चककी जचन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ वटे चौदह राजू त्रेत्रका स्पर्शन किया है। देवायु और आहारकद्विकका भन्न चेत्रके समान है। देवगतिचतुष्कका भन्न उत्कृष्टके समान है। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है तथा अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन अनुत्कृष्टके समान है। मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिक संयत, छेदोपस्थापना संयत, परिहारविद्युद्धि संयत और सूद्दमसाम्पराय संयत जीवोंका भन्न चेत्रके समान है।

४१६. संयतासंयत जीवोंमें असाता, अरित, शोक, अस्थिर, अशुभ और अयशःकीर्ति इनकी जयन्य और अजवन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बढे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। देवायु और तीथंकर इनकी जयन्य और अजयन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। शेष प्रकृतियोंकी जयन्य स्थिति के बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। तथा अजयन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बढे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। अवधिदर्शनी, सम्यग्दृष्टि, चायिकसम्यग्दृष्टि, वेदकसम्यग्दृष्टि और उपशमसम्यग्दृष्टि

खह्गे देवगदि०४ खेंतं । उवसमे तित्थय० खेंतं । चक्खुदं० तसपञ्जसभंगी ।

४२०. किण्ण०-णील०-काउ० असंजद्भंगो । खर्वार देवगदि०३-तित्थय० खेचं ।
मणुसायु०तिरिक्खभंगो । तेऊए० पंचणा०-णवदंसणा०-सादासाद०-मोह०२४पंचिदि०-तेजा०-क०-समचदु०-वण्ण०४-अगु०४-पसत्थिति०-तस०४-थिराथिर सुभासुभ-जस०-अजस०-णिमि०-उचा०-पंचेत० जह० खेँचं । अज० अणुक्तस्सभंगो । देवगदि०४ जह० खेँचं । अज० दिवहुचो० । सेसाणं सोधम्मभंगो । एवं पम्माए सहस्सार भंगो काद्व्वो । देवगदि०४ जह० खेँचं । अज० पंचचो० । सुक्काए मणुसमदिपंचग०
जह० अज० खचोद्द० । सेसाणं जह० खेँचं । अज० खचो०। णवरि इत्थि०-णुवं स०पंचसंठा०-पंचसंघ०-अप्पसत्थ०-दूभग-दुस्सर-अणादेँ० जह० अज० खचोँद्द० ।

४२१. सास**यो इ**त्थि०-पंचसंठा०-पंचसंघ०-ग्रप्पसत्थ०-तस०४ जह० स्रज्ञ० स्रह्र-एकारस० | मणुसगदिपंचग० जह० स्रज० सहचोँ० | देवगदि०४ जह० स्रज०

जीवों का भक्क आभिनियोधिकज्ञानी जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि चायिकसम्यग्दृष्टि जीवोंमें देवगतिचतुष्कका भक्क चेत्रके समान है। तथा उपरामसम्यग्दृष्टि जीवोंमें तीथक्कर प्रकृतिका भक्क चेत्रके समान है। चक्कदर्शनवाले जीवोंका भक्क त्रसपर्याप्त जीवोंके समान है।

५२०. कृष्ण, नील खौर कापीत लेश्यावाले जीवींका भन्न असंयत जीवींके समान है। इतनी विशेषता है कि देवगति त्रिक श्रीर तीर्थं हुर प्रकृतिका भक्क चेत्रके समाम है 🕆 तथा मनध्यायुका भक्त तिर्यष्टचों के समान है। पीतलेश्यावाले जीवोंमें पांच ज्ञानावरण, नौ दर्शना-वर्गा, साता वेदनीय, श्रसाता वेदनीय, चौबीस मोहनीय, पब्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण रारीर, समचतुरस्रसंस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, स्थिर, ऋस्थिर, शुभ, ऋशुभ, यशःकीर्ति, अयशःकीर्ति, निर्माण, उच्चगोत्र ऋौर पींच अन्तराय इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेन्नके समान है। तथा श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्परीत अनुत्कृष्टके समान है। देवगति चतुष्ककी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्परीन नित्रके समान है तथा श्रजचन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम डेढ बटे चौदह राज् चेत्रका स्पर्शन किया है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग सौधर्म कल्पके समान है। इसी प्रकार पद्मलेश्या-वाले जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि सहस्त्रार कल्पके समान भन्न करना चाहिए। तथा देवगति चतुष्ककी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। और श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम पांच बटे चौदह राजु चेत्रका स्परीन किया है। शुक्र हेश्यावाले जीवोंमें मनुष्यगतिपद्धककी जवन्य और श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। तथा शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है और अजधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि स्तीवेद, नपुंसकवेद, पांच संस्थान, पींच संहनने, अप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग, दुःखर श्रीर श्रनादेय इनकी जवन्य श्रीर श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है।

४२१. सासादन सम्यग्द्दष्टि जीवोंमें श्लीवेद, पाँच संस्थान, पाँच संहतन, अप्रशस्त विहायो-गति और श्रस चतुष्ककी ज्ञयन्य और अज्ञघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजु और कुछ कम ग्यारह बटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। मनुष्यगतिपञ्चककी पंचची । सेसाणं जह श्रष्टचों । श्रज श्रणुक्तस्सभंगी । सम्मामिच्छे सञ्चपा-दीयां जह श्रज श्रष्टचों । स्वार देवगदि ०४ जह ० खेंचं । स्विश्य पंचिदियमंगी । अस्थिण ० तिरिक्खोधं । स्वार श्रायु०-वेउन्विपञ्च० जह० श्रज ० खेंचमंगी । एवं जहरूस्य समत्तं । एवं फोस्स समत्तं ।

## कालपरूवणा

५२२. काली दुनि०-जह० उक्तस्सयं च। उक्तस्सए पगदं। दुनि०-श्रोपे० श्रादे०। श्रोपे० शिरपायु० उक्त०द्विविधया केनिन् कालादो होदि ? जहण्णेण एगसमयं, उक्तस्सेण श्रानलियाए श्रमंखेजिदिभागो। अणु० जह० श्रंतो०, उक्त० पिलदोनमस्स श्रमंखेजिदि। तिरिक्लायु० उक्त० जह० एग०, उक्त० संखेजितसम्या। अणु० सम्बद्धा। मणुस-देनायु० उक्त० जह० एग०, उक्त० संखेजिसम०। श्राणु० जह० श्रंतो०, उक्त० पिलदोनमस्स श्रमंखेजिदिभा०। श्राहार०-श्राहार०अंगो०-तित्थय० उक्त० अहण्णु० अंतो०, श्रणु० सम्बद्धा। सेसाणं उक्त० जह० एग०, उक्त० पिलदो० श्रमंखेँ०।

जधन्य और अजधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू देत्रका स्पर्शन किया है। देवगतिचतुष्ककी जधन्य और अजधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम पाँच बटे चौदह राजू देत्रका स्पर्शन किया है। शेष प्रकृतियोंकी जधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू देत्रका स्पर्शन किया है। शेष प्रकृतियोंकी जधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन अनुत्कृष्टके समान है। सन्यिग्ध्यादृष्टि जीवोंमें सब प्रकृतियोंकी जधन्य और अजधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू देत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि देव-गित चतुष्ककी जधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन देत्रके समान है। संज्ञी जीवोंमें अपनी सब प्रकृतियोंका मङ्ग पञ्चेन्द्रियोंके समान है। असंज्ञी जीवोंमें समान्य तिर्थक्कोंके समान है। इतनी विशेषता है कि आयु और वैकियिक छह इनकी जबन्य और अजधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन देत्रके समान है। इस प्रकार जधन्य स्पर्शन समाप्त हुआ। इस प्रकार स्पर्शन समाप्त हुआ।

कालप्ररूपणा

४२०. काल दो प्रकारका है-जवन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । उसकी श्रपेचा निर्देश दो प्रकारका है-श्रोध और आदेश । श्रोधसे नरकायुकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका कितना काल है ? जवन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल श्रावलिके श्रमंख्यातयें भाग प्रमाण है । अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जवन्य काल श्रन्तमुं हुते है और उत्कृष्ट काल पत्यके श्रमंख्यातयें भाग प्रमाण है । तियञ्चायुकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जधन्यकाल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है । श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका सब काल है । मनुष्यायु और देवायुकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जधन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है । श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जधन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पत्यके श्रमंख्यातवें भाग प्रमाण है । श्राहारक श्राहारक श्राह्मोपाङ्ग और तीर्थङ्कर इनकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य श्रोर उत्कृष्ट काल श्रन्तमुहूर्त है । तथा श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका सब काल है । श्रमुत्कृष्ट काल श्रन्तमुहूर्त है । तथा श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका सब काल है । श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका सब काल है । श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका सब काल है । श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका सब काल है । इसी प्रकार श्रोधके समान सामान्य तिर्यक्च, काययोगी, श्रोदारिक काययोगी, नपुंसकवेदी,

अणु० सब्बद्धा । एवं श्रोघभंगो तिरिक्खोघं कायजोगि-ओरालि०-णवु स०-कोघादि०-४-मदि-सुद०-श्रसंज०-अवक्खुदं०-तिण्णिले०-भवसिद्धि-श्रब्भवसिद्धि०-मिच्छादि०-अस-षिण्-श्राहारग ति ।

५२३. गिरयेसु तिरिक्छ।यु० उक्क० जह० एग०, उक्क० आविति असंखेँ । श्रणु० जह० श्रंतो०, उक्क० पितदो० असंखें ज०। मणुसायु० उक्क० जह० एग०, उक्क० संखेँ ज्ञासम०। श्रणु० जहण्णु० श्रंतो०। सेसाणं उक्क० जह० एग,० उक्क० पितदो० श्रसंखें ज०। श्रणु० सम्बद्धा। एवं सम्बणिरयासं सम्बदेवाणं च। ग्रविर सत्तमाए मणुसग०—मणुसाणु०—उच्चा० उक्क० जह० श्रंतो०, उक्क० पितदो० श्रसंखें ०। अणु० सम्बद्धा।

४२४. पंचिदियतिरिक्खतिण्यि तिरिक्खायु० उक्त० श्रोघं। अणु० जह० अंतो०, उक्त० पलिदो० श्रसंखेंज्ज०। सेसोणं ओघं। पंचिदियतिरिक्खश्रपज्जनमेसु तिरिक्खायु० जिस्यमंगो। सेसं श्रोघं। एवं सन्वश्रपज्जनाणं तसाणं सन्वविगलिदियाणं बादरपुढवि०- श्राउ०-तेउ०-वाउ०-वादरवसण्फिदिपत्ते यपज्जनाणं च। स्वरि मसुसम्रपज्जनमे श्रायुगवज्जासं सन्वपगदीसं उक्त० श्रसुण जह० एग०, उक्त० पलिदो० श्रसंखेंज्ज०।

कोधादिचार कषायवाले, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, श्रसंयत, श्रचक्षुद्रशनी, तीन लेश्यावाले, भव्य, श्रभव्य, मिथ्यादृष्टि, श्रसंज्ञी श्रौर् श्राहारक जीवोंके जानना चाहिए।

१२३ नारकी जीवोंमें तिर्यक्कायुकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जधन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवित्तके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जधन्य काल अन्तम् हूर्त है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। मनुष्यायुकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जधन्य काल एक समय है और उत्कृष्टकाल संख्यात समय है। अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जधन्य और उत्कृष्ट काल अन्तमु हूर्त है। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जधन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्य के असंख्यातवें भाग प्रमाण है। अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका चधन्य करनेवाले जीवोंका सब काल है। इसी प्रकार सब नारकी और सब देवों के जानना चाहिए। इतनी विशेषता है की सातवीं पृथ्वीमें मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। अनुत्कृष्ट स्थितिका जधन्य काल अन्तमु हूर्त है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। अनुत्कृष्ट स्थितिका जधन्य काल अन्तमु हूर्त है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। अनुत्कृष्ट स्थितिका जन्य करनेवाले जीवोंका सब काल है।

४२४. प्रचेन्द्रितिर्यक्कित्रेकमें तियेक्कायुकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका काल श्रोबके समान है। अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य काल अन्तर्मु हूत है और उत्कृष्ट काल प्रत्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण हैं। शेप प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है। प्रक्वेन्द्रिय तियंक्च अपर्याप्तकोंमें तिर्यक्चायुका भङ्ग नारिक्योंके समान है। तथा शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है। इसी प्रकार सब अपर्याप्त, त्रस, सब विकलेन्द्रिय, बादर पृथ्वी-कायिक, पर्याप्त, बादर जलकायिक पर्याप्त, बादर अग्निकायिक पर्याप्त, बादर वायुकायिक पर्याप्त और बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरोर पर्याप्त जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि मनुष्य अपर्याप्तकों में आयुओंको छोड़कर सब प्रकृतियोंकी उन्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जवन्य काल एक समय है और उन्कृष्ट काल प्रत्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है।

४२४. मणुसेसु णिरय-देवायु० उक्क॰ जह० एग०, उक्क० संखेंज्ञसम०।
अणु॰ जह० उक्क॰ अंतो॰। तिरिक्ख-मणुसायु० उक्क॰ ओघं। अणु॰ जह॰ अंतो॰,
उक्क० पिलदो० असंखेंज्ज०। सेसाणं उक्क॰ जह० एग॰, [उक्क०] अंतो०। अणु॰
सम्बद्धा। आहारदुगं तित्थय० ओघं। मणुसपज्जत्त-मणुसिणीसु चदुआयु० उक्क० जह०
एग०, उक्क० संखेंज्जसम०। अणु० जहएणु० अंतो०। सेसाणं उक्क० जह॰ एग॰,
उक्क० अंतो०। अणु॰ सम्बद्धा। आहारदुगं तित्थय० ओघं।

५२६. सन्बद्घे सन्वपगदीएां उक्क० जह० एग०, उक्क० श्रंतो०। श्रणु० सन्बद्धा। श्रायु० णिरयभंगो।

४२७. सञ्वएइंदिएस तिरिक्ख--मशुसायु० पंचिदियतिरिक्खअपडजत्तभंगो । श्वविर तिरिक्खायु० अणु० सञ्बद्धा । सेसार्ग उक्क० अणु० सञ्बद्धा । एस भंगो सञ्बस्रहुमार्गा बादरपुढवि०--आउ०--तेउ०--वाउ०अपज्जत्त०---वराष्पिदि--शियोद० बादरपुज्जत्त-अपज्जत्ता० बादरवराष्पिदिपत्तेय० अपज्जत्तगार्गं च ।

५२८. पुढवि०-आउ०-तेउ०-वाउ०-वादरपुढवि०-आउ०-तेउ०-वाउ०-बादर-

४२४. मनुष्यों में नरकायु श्रीर देवायुका उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जधन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जधन्य श्रोर उत्कृष्ट काल श्रन्तमुंहूर्त है। तिर्यञ्चायु श्रीर मनुष्यायुकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जधन्य काल श्रन्तमुंहूर्त है श्रीर उत्कृष्ट काल पल्यके श्रसंख्यालवें भाग प्रमाण है। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जधन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल श्रन्तमुंहूर्त है। श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका सब काल है। श्राहारकद्विक श्रीर तीर्थें इर प्रकृतिका मङ्ग श्रोधके समान है। मनुष्यपर्याप्त श्रीर मनुष्यिनी जीवोंमें चार श्रायुश्रोंकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जधन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जधन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल श्रन्तमुंहुर्त है। श्रेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जधन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल श्रन्तमुंहुर्त है। श्रेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जधन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल श्रन्तमुंहुर्त है। श्रेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जधन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल श्रन्तमुंहुर्त है। श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जधन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल श्रन्तमुंहुर्त है। श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जधन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल श्रन्तमुंहुर्त है। श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जधन्य काल एक समय है।

५२६. सर्वार्थसिद्धिके देवोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्टस्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जधम्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करने-वाले जीवोंका सब काल है। आयुका भक्त नारिकयोंके समान है।

४२७. सब एकेन्द्रियोंमें तिर्यञ्चायु श्रौर मनुष्यायुका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्यानिकोंके समान है। इतनी विशेषता है कि तिर्यञ्चायुकी अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका काल सर्वदा है। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट श्रीर अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका काल सर्वदा है। यह भङ्ग सब स्व्थ्म, बादर पृथ्वीकायिक अपर्याप्त, बादर जलकायिक अपर्याप्त, वादर आग्निकायिक अपर्याप्त, वनस्पतिकायिक अपर्याप्त, वादर अग्निकायिक अपर्याप्त, वादर वनस्पतिकायिक कायिक, निगोद और इन दोनोंके वादर और पर्याप्त अपर्याप्त तथा वादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर अपर्याप्त जीवोंके जानना चाहिए।

४२८. पृथ्वीकायिक, जलकायिक, ऋग्निकायिक, वायुकायिक, वादर पृथ्वीकायिक,

वराष्फदिपत्तेय० दोत्राधु० एइंदियभंगो । पञ्जत्तमे दोत्राधु० पंचिदियतिरिक्ख-श्रपञ्जत्तभंगो । सेसार्स पगदीर्स उक्क० जह० एग०, उक्क० पत्तिदो० श्रसंखे० । श्रपु० सन्बद्धा ।

५२६. पंचिदिय--तस०२ तिषिणआयु॰ उक्क॰ जह० एग॰, उक्क० संर्खेंजन-सम०। अणु० जह॰ अंतो०, उक्क॰ पित्तदो॰ असंर्खे०। सेसाणं ओघं। एवं पंच-मण॰-पंचवचि॰-वेउव्वियका॰-इत्थि॰-पुरिस॰--विभंग०-चक्खुदं०--तेउले०-पम्मले॰-सुक्कले०--सिष्णि ति। स्विरि पंचमस्य०--पंचवचि०--वेउव्वि० आयु॰ अणु॰ जह० एग०, उक्क॰ पित्तदो० असंर्वेडज०। तेउ-पम्माए तिरिक्ख-मसुसायु॰ देवोघं। सुक्काए दो वि आयु॰ मसुसि०भंगो।

५३०. त्रोरालियमिस्से दोत्रायु० एइंदियभंगो । देवगदि०४-तित्थय० सत्थाएं उक्क० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अणु० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अथवा सरीर-पज्जतीए दिज्जदि ति तदो उक्क० जहएणु० अंतो० । अणु० जह० उक्क० अंतो० । सेसाएं उक्क० जह० एग०, उक्क० पित्तदो० असंस्वेज्ज० । अणु० सन्दद्धा अधा-

वादर जलकाथिक, वादर श्राग्निकायिक, बादर वायुकियक श्रीर वादर वनस्पतिकायिक, प्रत्येक शरीर जीवोंमें दो श्रायुश्रोंका भक्त एकेन्द्रियोंके समान है। इनके पर्याप्तकोंमें दो श्रायुश्रोंका भक्त पश्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान है। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थिति का बन्ध करनेवाले जीवोंका जधन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल पत्यके श्रसंख्या तवें भाग प्रमाण है। श्रवत्कृष्ट स्थितका बन्ध करनेवाले जीवोंका काल सर्वदा है।

४२६. पञ्चेन्द्रियद्विक और असद्विक जीवोंमें तीन आयुओंकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल पत्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। शेष भक्रतियोंका भङ्ग श्रोधके समान है। इसी प्रकार पाँच मनोयोगी, पाँच वचनयोगी, वैकियिक काययोगी, स्थीवेदी, पुरुषवेदी, विभङ्गक्षानी, चचुदर्शनी, पीतलेश्यावाले, पद्मलेश्यावाले, शुक्ललेश्यावाले और संबी जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि पाँच मनोयोगी, पाँच वचनयोगी और वैकियिककाययोगी जीवोंमें आयुकी अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल एल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। पीत और पद्मलेश्यावाले जीवोंमें तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है। शुक्ललेश्यावाले जीवोंमें दोनों हो आयुओंका भङ्ग मनुष्यायुका कि समान है।

४३०. बीदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें दो श्रायुश्रोंका मङ्ग एकेन्द्रियोंके समान है। देवगित चतुक्त श्रीर तीर्थङ्कर इनकी स्वस्थानमें उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल अन्तर्मृहूर्त है। श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल अन्तर्मृहूर्त है अथवा शरीर पर्याप्तिमें श्रगर यह काल प्राप्त किया जाता है तो उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल अन्तर्मृहूर्त है। श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल अन्तर्मृहूर्त है। श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल अन्तर्मृहूर्त है। श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल प्रकृष्ट काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल प्रकृष्ट काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल प्रवर्षेत्र श्रमंख्यातवें भाग प्रमाण है। श्रमुत्कृष्ट

पवत्तस्स । अथवा सरीरपङ्जतीए दिङ्जदि त्ति तदो धुविगाणं उक्क० जह० अंतो०, उक्क० पलिदो० असंर्वेडज० । एवं वेउन्वियमि०-आहारमि० । णवरि वेउन्वियमि० अणु० जह० अंतो०, उक्क० पलिदो० असंर्वेडज० । आहारमिस्से चत्तारि अंतो० ।

५३१. आहारकायजोगि॰ सघ्वपगदीएां उक्त॰ अणु॰ जह॰ एग॰, उक्त॰ अंतो॰। एवरि देवायु॰ उक्त॰ जह॰ एग॰, उक्त॰ संखेंजजसम॰। अणु॰ जह॰ एग॰, उक्त० अंतो॰। एवं आहारिमस्से देवायु॰।

५३२. कम्मइंगे देवगदि०४-तित्थय० उक्क० ऋणु० जह० एग०, उक्क० संर्खेजनसम०। सेसार्ण उक्क० जह० एग०, उक्क० ऋगवित्याए ऋसंर्खेजन०। ऋणु० सन्वद्धा।

५३३. अवगद्वेदे सन्त्राणं उक्तः अणुः जहः एगः, उक्तः अंतोः । एवं सुद्गुमसंपः ।

५३४. त्राभि०-सुद्०-त्रोधि० सादावे०-हस्स-रदि-त्राहारदुग-थिर-सुभ-जसिग०-तित्थय० त्रोघं । मणुसायु० देवोघं । देवायु० श्रोघं । सेसाणं सञ्वाणं उक्क० जह०

स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका काल अधः प्रवृत्तके सर्वदा है। अथवा श्ररीरपर्यातिमें यह काल दिया जाता है तो ध्रुववन्धवाली प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जधन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल पर्व्यके असंख्यातवें माग प्रमाण है। स्सी प्रकार वैकियिकमिश्रकाययोगी और आहारकमिश्रकाययोगी जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि वैकियिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जोवोंका जधन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल पत्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। तथा आहारकमिश्रकाययोगी जीवोंमें चारों हो काल अन्तर्मुहूर्त हैं।

प्रदेश, ब्रहारककाययोगी जीवोंमें सब प्रकृतियोंका उत्कृष्ट और अनुहार स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जधन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। इनकी विशेषता है कि देवायुकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जधन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जधन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। इसी प्रकार आहा-रकमिश्रकाययोगी जीवोंमें देवायुकी मुख्यतासे काल जानना चाहिए।

४३२. कामंग्रकाययोगी जीवोंमें देवगतिचतुष्क और तीर्थद्वर प्रकृतिकी उत्कृष्ट और श्रमुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जधन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जधन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल श्राविक्षके श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण है। श्रमुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है।

४३३. श्रापगतचेदी जीवोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल श्रन्तर्भुद्धर्त है। इसी प्रकार सूक्ष्म-सांपरायिक संयत जीवोंके जानना चाहिए।

४३४. श्राभिनियोधिकश्वानी, श्रुतश्वानी श्रोर श्रवधिश्वानी जीवोंमें साता वेदनीय, हास्य, रति, श्राहारकद्विक, स्थिर, शुभ, यशकीर्ति श्रोर तीर्थद्वर इतका भङ्ग श्रोधके समान है। मनुष्यायुका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है। देवायुका भङ्ग श्रोधके समान है। शेष सव श्चंतो॰, उक्क॰ पलिदो॰ असंखेँ॰ । अणु॰ सब्बद्धा । एवं संजदासंजदे श्रोधिदं०-सम्मादि०-वेदग० ।

४३४. मणपज्जव॰ सादावे०--हस्स-रदि--ब्राहारदुग-थिर-सुभ-जसगि० उक्क० जह० एग०, उक्क० अंतो० | ब्रणु० सन्बद्धा | सेसाणं उक्क० जह० उक्क० अंतो० | ब्रणु० सन्बद्धा | एवं संजद-सामाइ०-छेदो०- परिहार० |

५३६. उनसम० पंचणा०-छदंसणा०--नारसक०-पुरिस०-भय-दुगुं-मणुसगदि-पंचिदि०-छोरालि०-तेजा०-क०-समचदु०--छोरालि०छंगो०--नज्जरि०--नण्ण०४-मणु-साणु०-अगु०४-पसत्थिन०--तस०४--सुभग-सुस्सर-आर्देज्ज०--णिमि०-णीचा०-पंचंत० उक्क० अणु० जह० जंतो०, उक्क० पलिदो० असंखेज्ज० । सादाने०--हस्स-रदि-थिर-सुभ-जसगि० उक्क० अणु० जह० एग०, उक्क० पलिदो० असंखेजिदिभा०। असादा०-अरदि-सोग-अथिर--असुभ-अजस०-देनगदि०४ उक्क० जह० अंतो०, उक्क० पलिदो० असंखे०। अणु० जह० एग०, उक्क० पलिदो० असंखे०। आहारदुगं उक्क० अणु० जह० एग०, उक्क अंतो०। तित्थय० उक्क० जह० एग०, उक्क० अंतो०।

प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल पत्यके ग्रसंख्यातवें भाग प्रमाण है । ग्रानुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका सब काल है । इसी प्रकार संयतासंयत, अवधिदर्शनी, सम्यग्दिष्ट और वेदकसम्यग्दिष्ट जीवोंके जानना चाहिए ।

४३४. मनःपर्ययद्वानी जीवोंमें सातावेदनीय, हास्य, रित, श्राहारकद्विक, स्थिर, शुभ और यशःकीति इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहर्त है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। श्रेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहर्त है तथा अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। इसी प्रकार संयत, सामायिकसंयत छेदोपस्थापनासंयत और परिहारविद्यद्विसंयत जीवोंके जानना चाहिए।

 अणु० जह० उक्क० अंतो० । एवं सम्मामि० । एवरि देवगदि०४ धुविगाए भंगो । सासर्णे दोरिए आयु० उक्क० जह० एग०, उक्क० संखेँज्ञ० । अणु० जह० एग०, उक्क० पितदो० असंखेँज० । अणाहार० कम्मइगभंगो ।

## एवं उक्कस्सकालं समत्तं

४३७. जहएएए पगरं। दुवि०-श्रोघे० श्रादे०। श्रोघे॰ खवगपगदीएां श्राहारदुगं तित्थय॰ जह० द्विदिवंध० केवचिरं० ? जह० उक्क० श्रंतो॰। श्रज॰ सव्बद्धा।
तिरिक्खग०--तिरिक्खाणु॰--उज्जो०--एीचा० जह० जह० एग॰, उक्क॰ पिलदो०
श्रसंखेंज्ञ०। श्रज॰ सव्बद्धा। तिरिएएश्रायु॰ जह० जह० एग०, उक्क॰ श्रावित्व०
श्रसंखेंज्ज०। श्रज॰ जह० श्रंतो०, उक्क॰ पिलदो० श्रसंखेंज्ज॰। वेउव्वियञ्ज०
श्रक्ससमंगो। सेसाएं जह० श्रज० सव्बद्धा। एवं श्रोधमंगो कायजोगि--श्रोरालियका॰-एखुंस०-कोधादि॰४-श्रचकखुदं॰-भवसि॰-श्राहारगे ति। एवरि खवमपगदीएं कायजोगि--श्रोरालियका० जह० जह॰ एग०। एवरि जोग-कसाएसु श्रायुगस्स
श्रज॰ जह० एगस०।

मुंहूर्त है। अनुरहर स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य और उत्हर काल अन्तर्मृहर्त है। इसी प्रकार सम्यग्मिण्यादृष्टि जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि देवगति चतुष्कका भक्त ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके समान है। सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंमें दो आयुओंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल प्रव्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। अनाहारक जीवोंका भक्त कार्मणकाययोगी जीवोंके समान है।

### इस प्रकार उत्कृष्ट काल समाप्त हुआ।

४३७. जघन्यका प्रकरण है। उसकी श्रपेचा निर्देश दो प्रकारका है—श्रोघ श्रीर आदेश। श्रोधसे चपक प्रकृतियाँ, श्राहारकद्विक श्रौर तीर्थक्कर इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका कितना काल है ? जघन्य और उत्कृष्ट काल श्रन्तर्मुहर्त है। श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका सब काल है। तिर्यञ्चगित, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उद्योत श्रौर नीचगोत्र इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीघोंका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्ट काल पत्यके श्रसंख्यातचें भाग प्रमाण हैं। श्रज्ञधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। तीन त्रायुत्रोंकी जघन्य स्थितिके यन्थक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल त्रावितके त्रासंख्यातवें भाग प्रमाण है। त्राज्ञघन्य स्थितिके वन्धक जीवोंका जघन्य काल अन्तर्मुहुर्त है और उत्कृष्ट काल पत्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है । वैकिथिक छहका भङ्ग उत्कृष्टके समान है। शेष प्रकृतियोंको जघन्य त्रौर श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जोवोंका काल सर्वदा है। इसी प्रकार ओघके समान काययोगी, श्रौदारिक काययोगी, नपुंसकवेदी, क्रोधादि चार कषायवाले, श्रचचुदर्शनी, भव्य श्रौर श्राहारक जीवोंके जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि चपक प्रष्टतियोंके काययीगी और औदारिक काययोगी जीवोंमें जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है। इतनी विशेषता है कि योग और कषायवाले जीवोंमें ऋायुकी ऋजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है।

५३८. शिरएस दोश्रायु० उक्कस्सभंगो । संसार्ण जह० [ जह० ] एग, उक्क० आविलि० असंर्वेज्ज० | अज० सव्बद्धा | तित्थय० उक्कस्सभंगो | एवं पढमपुढवीए | विदियादि याव सत्तमा ति उक्कस्सभंगो | एविरि थीरणगिद्धि ३-मिच्छत्त-अर्णताणु-बंधि०४ जह० जह० अंतो०, उक्क० पित्विं। असंर्वे० | सत्तमाए तिरिक्लगदि-तिरिक्लाणु०-शीचा० थीरणगिद्धि०भंगो |

५३६. तिरिक्षेसु णिरय-मणुस-देवायु०-वेउव्विछ०-तिरिक्खगदि०४ श्रोघं । सेसाणं जह० श्रज्ज० सव्वद्धा । एवं तिरिक्खोघं मिद्द०-सुद०-श्रसंज०-तिष्णिले०-श्रब्भविस०-मिच्छादि०-श्रसणिण ति । सव्वपंचिदियतिरिक्खाणं उक्कस्सभंगो । णविस् चदुश्रायु० णिरयायुभंगो । पंचिदियतिरिक्खभपज्जत्त० दोश्रायु० तिरिक्खायु-भंगो । एवं सव्वश्रपज्जत्ताणं तसाणं सव्वविगतिदियाणं बादरपुढविकाइय-श्राउ०-तेउ०-वाउ०-बादरवणप्फदिपत्तेयपज्जत्ताणं च ।

५४०. मणुसेसु खवगपगदीएां देवगदि०४ जह० जह० उक्क० अंतो०। अज० ब्रोघं। दोब्रायु॰ पंचिंदियतिरिक्सभंगो। दोब्रायु॰ जह० जह० एग०, उक्क० संर्त्वेज्जसम्। अज० जहएणु॰ अंतो०। णिरयगदि-णिरयाणु॰ जह० जह० एग०,

४३८. नारिकयोंमें दो आयुआंका भङ्ग उत्कृष्टके समान है। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आविलके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग उत्कृष्टके समान है। इसी प्रकार पहली पृथ्वीमें जानना चाहिए। दूसरी पृथ्वीसे लेकर सातवीं तक भङ्ग उत्कृष्टके समान है। इतनी विशेषता है कि स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धी चार इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल अन्तर्मुहर्त है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। सातवीं पृथ्वीमें तिर्यक्षगित, तिर्यक्षगित्वानुपूर्वी और नीचगोत्रका भङ्ग स्त्यानगृद्धि तीनके समान है।

४३६. तिर्यञ्जोंमें नरकायु, मनुष्यायु, देवायु, वैकियिक छह श्रौर तिर्यञ्चगित चतुष्कका भक्त श्रोघके समान है। शेष प्रकृतियोंकी जधन्य श्रौर श्रज्ञधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंके समान मत्यञ्चानी, श्रृताञ्चानी, श्रसंयत, तीन छेश्यावाछे, श्रभव्य, मिथ्यादृष्टि श्रोर श्रसंही जीवोंके जानना चाहिए। सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंका भक्त उत्कृष्टके समान है। इतनी विशेषता है कि चार श्रायुश्रोंका भक्त नरकायुके समान है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च श्रुपयिक्त श्रीमिकार सब श्रुपयिक्त समान है। इसी प्रकार सब श्रुपयिक्त समान है। इसी प्रकार सब श्रुपयिक्त सम, सब विकछेन्द्रिय, बाहर पृथ्वोकायिक पर्याप्त, वाहर जलकायिक पर्याप्त, बाहर श्रीमिकायिक पर्याप्त श्रीर बाहर वायुकायिक पर्याप्त श्रीर बाहर वनस्पति कायिक प्रत्येक श्रीर पर्याप्त जीवोंके जानना चाहिए।

४४०. मनुष्योंमें ज्ञपक प्रकृतियाँ श्रीर देवगतिचतुष्ककी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल श्रन्तर्मुहूर्त है। श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल श्रोघके समान है। दो श्रायुश्रोंकी काल श्रोघके समान है। दो श्रायुश्रोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल श्रन्तर्मुहूर्त है। मरकगति श्रीर नरकगत्यानुपूर्वोंकी जघन्य स्थितिके वन्धक जीवोंका जघन्य काल एक

उक्त॰ श्रंतो॰। श्रज॰ सन्बद्धा। सेमाएं जह॰ जह॰ एग॰, उक्त॰ श्रावलि॰ श्रसंखेँ॰। श्रज॰ सन्बद्धा।

५४१. मणुसपज्जत्त-मणुसिणीस सो चेत्र भंगो । एतरि यम्हि आविलया० असंखेँ तिम्ह संखेँजसम् । मणुसश्चपज्जत्त० सन्त्रपगदीएां जह० जह० एग०, उक्क॰ आविलि० असंखेँ० । अज० जह० खुदाभत्त० विसमयूणं, उक्क० पिलदो० असंखेँ० । एतरि सन्त्रह परियत्तीएां आयुगाएां च अज० पगदिकालो कादन्त्रो । देवाएां णिस्यभंगो । एतरि एइंदि०-आदाव-थात्र० सत्थाणभंगो ।

४४२. एइंदिएसु मणुसायु०--तिरिक्त्वगिद्---तिरिक्त्वाणु०---उज्जो०--णीचा० श्रोधं। सेसाणं जह० श्रज॰ सन्बद्धा। पुढवि०--श्राउ०-तेउ०-वाउ०-वादरपुढवि०-श्राउ०-तेउ०-वाउ०-वादरपुढवि०-श्राउ०-तेउ०-वाउ०-वादर-वणप्पदिपत्तेय० दोश्रायु० श्रोधं। सेसाणं जह० जह० एग०, उक्क० पितदो० श्रसंखेंज्ज०। श्रज० सम्बद्धा। वादरपुढवि०-वाउ०-तेउ०-वाउ०-श्रपुजत्ता० मणुसायु० श्रोधं। सेसाणं जह० श्रज० सम्बद्धा। एवं वर्णप्पदि-- णियोद-वादरवर्णप्पदि-- लियोद-पज्जत्त-श्रपज्जत्ता० वादरवर्णप्पदिपत्तेय० श्रपज्जताणं

समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहर्त है। अजधन्य स्थितिके बन्धक जीवेंका काल सर्वदा है। शेष प्रकृतियोंकी जधन्य स्थितिके वन्धक जीवेंका जधन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल श्राविलके असंख्यातवें माग प्रमाण है। अजधन्य स्थितिके वन्धक जीवेंका काल सर्वदा है।

४४१. मनुष्य पर्यात श्रीर मनुष्यिनियों में वही भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि जहाँ पर श्राविल के श्रसंख्यात वें भाग प्रमाण काल कहा है, वहाँ पर संख्यात समय काल कहना चाहिए। मनुष्य अपर्यातकों में सब प्रकृतियों की जघन्य स्थितिके बन्धक जीवों का जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल श्राविल के श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण है। श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवों का जघन्य काल हो। समय कम श्रुरुल भव श्रहण प्रमाण है। श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवों का जघन्य काल हो। समय कम श्रुरुल भव श्रहण प्रमाण है। श्रोर उत्कृष्ट काल पत्यके श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण है। इतनी विशेषता है कि सर्वत्र परिवर्तमान प्रकृतियों की श्रीर श्रायुओं की श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवों का काल प्रकृतिबन्धके काल के समान कहना चाहिए। देवों में नारिकयों के समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि एकेन्द्रिय, श्रातप श्रीर स्थावर इनका भङ्ग स्वस्थानके समान है।

४४२. एकेन्द्रियों में मनुष्यायु, तिर्यञ्चगित, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उद्योत और नीचगोत्रका भङ्ग श्रोघके समान है। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। पृथ्वीकायिक, जलकायिक, श्रानिकायिक, वायुकायिक, बादर पृथ्वीकायिक, बादर जलकायिक, वादर श्रानिकायिक प्रत्येक शरीर जलकायिक, वादर श्रानिकायिक प्रत्येक शरीर जीवोंमें दो श्रायुश्रोंका भङ्ग श्रोधके समान है। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल प्रत्येक श्रसंख्यातवें भाग प्रभाग है। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। वादर पृथ्वीकायिक अपर्यात, वादर जलकायिक श्रपर्यात, बादर जलकायिक श्रपर्यात, बादर जलकायिक श्रपर्यात, बादर जलकायिक श्रपर्यात, बादर अग्निकायिक श्रपर्यात श्रोधके समान है। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य श्रीर श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका

## सन्बसुहुमाणं च ।

५४३. पंचिंदिय-तस॰२ खवगपगदीणं स्रोवं। सेसाणं पंचिंदियतिरिक्ख-स्रपज्जसभंगो । एवं इत्थि०-पुरिस० । एवरि इत्थिवे॰ तित्थय० जह० जह० एग०, उक्क० श्रंतो॰ ।

४४४. पंचमण०-तिषिणवचि० पंचणा०-णवदंसणा-सादासाद०-मोह०२४-देवगदि०४-पंचिदि०-तेजा०-क०-समचदु०-वगण०४-अगु०४-पसत्थवि०-तस०४-थिराथिर-सुभासुथ-सुभग-सुस्सर--आदे०--जस०--अजस०--णिमि०--तित्थय०-उच्चागो०
पंचंत० जह० जह० एग०, उक्क० अंतो० | अज० सव्बद्धा | इत्थिवे०--णवुंस०तिषिणगदि-चदुजादि-अोरालि०पंचसंठा०--ओरालि०अंगो०-अस्संघ०--तिषिणआणु०आदाउज्जो०-अप्पसत्थ०-थावरादि०४--दूभग--दुस्सर--अणादे०-णीचा० जह० जह०
एग०, उक्क० पलिदा असंखे० | अज० सव्बद्धा | चदुआयु० पंचिदियतिरिक्खभंगो | एवरि अज० जह० एग० | दोवचि० स्वयापगदीग् जह० जह० एग०, उक्क०
अंतो० | अज० सव्वद्धा | चदुआयु० मणजोगिभंगो | सेसाएं तसभंगी |

काल सर्यदा है। इसी प्रकार वनस्पतिकायिक, निगोद, यादर वनस्पतिकायिक, बादर निगोद और इनके पर्याप्त-अपर्याप्त, बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर अपर्याप्त और सब सूदम जीवोंके जानना चाहिए।

४४३. पञ्चेन्द्रियद्विक श्रौर त्रसिद्धिक जीवोंमें क्षपक प्रकृतियोंका भङ्ग श्रोघके समान है। रोप प्रकृतियोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च श्रपयीप्तकोंके समान है। इसी प्रकार स्त्रीवेदी श्रौर पुरुपवेदी जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेदी जीवोंमें तीर्थेद्धर प्रकृतिकी जधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जधन्य काल एक समय है श्रौर उत्कृप्ट काल श्रन्तर्मुहुर्त है।

४४४. पाँच मनोयागी श्रीर तीन वचनयोगी जीवॉमें पाँच क्वानावरण, नौ दर्शना-वरण, सातावेदनीय, ग्रसातावेदनीय, चौबीस मोहनीय, देवगतिचार, पञ्चेन्द्रियजाति, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरम्न संस्थान, वर्ण चतुष्क, त्रगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त-विहायोगित, त्रसचतुष्क, स्थिर, ऋस्थिर, द्युम, ऋदुम, सुभग, सुस्वर, ऋदेय, यशःकीर्ति, अयशःकीर्ति, निर्माण, तीर्थद्वर, उचगोत्र और पाँच अन्तराय इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहुर्न है। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है । स्त्रोवेद, नपुसंकवेद, तीन गति, चारजाति, श्रीदारिक शरीर, पाँच संस्थान, औदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, तीन श्रानुपूर्वी, श्रातप, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगात, स्थावर आदि चार, दुर्भग, दुःस्वर, श्रतादेथ<sup>ं</sup> और नीचगोत्र इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके ऋसं-ख्यातवें भाग प्रमास है। श्रज्ञघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। चार श्रायुर्श्रोका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान है। इतनी विशेषता है कि श्रज्ञघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है। दो वचनयोगवाले जीवोंमें चपकप्रकृतियोंकी जधन्य स्थितिके वन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृप्ट काल श्रन्तर्मुहुर्त है। श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। चार श्रायुश्रोंका भङ्ग मनोयोगी जीवोंके समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग त्रस जीवोंके समान है।

४४५. त्रोरालियमि॰ तिरिक्खग०-तिरिक्खाणु०-उज्जो०-णीचा०-देवगदि०४-तित्थयरं० उक्कस्सभंगो । मणुसायु० त्रोघं । सेसाणं जह० अज० सन्वद्धा । वेडन्वि०-वेडन्वियमि०-आहार०-आहारमि० उक्कस्सभंगो । कम्मइगे तिरिक्खगदि-तिरिक्खाणु०-उज्जो०-णीचा० जह० जह० एग०, उक्क० आवित्वि० असंखेँ०, । अज० सन्वद्धा । देवगदि०४-तित्थय० उक्कस्सभंगो । सेसाणं जह० अज० सन्वद्धा ।

५४६. अवगदे सव्वाणं जह० जह० उक्क० अंतो०। अज० जह० एग०, उक्क० अंतो०। एवं सुहुमसंप०।

५४७. विभंगे पंचणा०-णवदंसणा०-सादावे०-भिच्छ०-सोलसक०-पंचणोक०-देवगदि--पंचिदि०-वेजिव०-तेजा०-क०-समचदु०-वेजिव० स्रंगो०-वएण०४--देवाणु०-अगु०४-पसत्थ०-तस०४--थिरादिछ०-णिभि०-ज्ञा० पंचंत० जह० जह० उक्क स्रंतो०। स्रज० सन्वद्धा । स्रसादा० इत्थि०-णवुंस०-स्ररिद-सोग--णिरपगदि-चदु-जादि-पंचसंठा०-पंचसंघ०-णिरपाणु०-श्रप्पस्थ०--स्रादाव-थावरादि०४-दूभग-दुस्सर-स्रणादे० जह० जह० एग०, उक्क० पितदो० स्रसंखे०। स्रज० सन्वद्धा । चदुस्रायु०

४४४. श्रीदारिक मिश्रकाययोगी जीवोंमें तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्च गत्यानुपूर्वी, उद्योत, नीचगोत्र, देवगतिचतुष्क श्रौर तीर्थङ्कर इनका मङ्ग उत्हाएके समान है। मनुष्यायुका मङ्ग श्रोघके समान है। शेष प्रकृतियोको जघन्य श्रौर श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। वैकियिककाययोगी, वैकियिकमिश्रकाययोगी, श्राहारककाययोगी, श्रौर श्राहारकमिश्रकाययोगी जीवोंका मङ्ग उत्हाएके समान है। कार्मणकाययोगी जीवोंमें तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उद्योत श्रौर नीच-गोत्रकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है श्रौर उत्हाए काल श्रावलिके श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण है। श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। देवगति चतुष्क श्रौर तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग उत्हाएके समान है। श्रेष प्रकृतियोंकी जघन्य श्रीर अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है।

४४६. श्रपगतवेदी जीवोंमें सब प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल श्रन्तर्मुहूर्त है। श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल श्रन्तर्मुहूर्त है। इसी प्रकार सुदमसाम्परायिक जीवोंके जानना चाहिए।

४४७. विभंगज्ञानी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, सातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, पाँच नोकषाय, देवगति, पञ्चेन्द्रियजाति, वैकियिकश्ररीर, तैजस श्ररीर, कार्मण श्ररीर, समचतुरससंस्थान, वैकियिक श्राङ्गोपाङ, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलधुचतुष्क, प्रशस्तविहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर श्रादि छह, निर्माण, उच्चगोच श्रीर पाँच श्रन्तराय इनकी जन्यय स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल अन्तर्मु हुर्त है। श्रज्ञचन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। श्रसाता वेदनीय, स्रोवेद, नपुंसकवेद, श्ररित, श्रोक, नरकगति, चार जाति, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, नरकगत्यानुपूर्वी, श्रप्रशस्त विहायोगिति, श्रातप, स्थावर श्रादि चार, दुर्भग, दुःस्वर श्रीर श्रनादेय इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल पत्यके श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण है। श्रज्ञघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। चार श्रायुका भङ्ग

पंचिदियभंगो । तिरिक्ख-मणुसग०-ऋोरालि॰-छोरालि०ऋंगो०--बज्जरि॰-दोश्राणु॰-उज्जो॰-णीचा॰ जह॰ जह॰ ऋंतो० । अज० एग०, उक्क० पलिदो० असंखेंज्ज॰ । अज० सन्बद्धा ।

५४८८. त्राभि०-सुद्ब-त्रोधि० त्रसादा०--त्ररिद-सोग-त्रथिर--त्रसुभ-त्रजस० जह० जह० एग०, उक्क० त्रंतो० | त्रज० सब्बद्धा | सेसाएां जह० जह० उक्क० त्रंतो० | त्रज० सब्बद्धा | एविर मसुसगदिपंचग० जह० जह० एग०, उक्क० पिलदो० त्रसंखेंज्ज० | एवं त्रोधिदं०-सम्मादि०-खइग०-वेद्ग० | एविर दोत्रायु देव-भंगो | खइगे दोत्रायु० मणुसि०भंगो |

५४६. मण्पज्ज•-संजद-सामाइय--छेदो० खवगपदीणं ऋोघं। ऋसादावे०-ऋरदि-सोग-ऋथिर--श्रमुभ-श्रजस० जह० जह० एग०, उक्क० श्रंतो०। सेसाणं जह० जहएणु० श्रंतो०। सन्वपगदीणं अज० सन्वद्धा। ऋायु० मणुसि०भंगो। एवं परिहार०।

५५०, संजदासंजदे असादा०-अरिद-सोग-अधिर-असुभ-अजस० जह० जह० एग०, एक० पिलदो० असंखे०। अज० सम्बद्धा! सेसाएां जह० जह० उक्क० पञ्चेन्द्रियोंके समान है। तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति, श्रीदारिक शरीर, श्रीदारिक शाङ्गोपाङ्ग, वज्जवभनाराच संहनन, दो शानुपूर्वी, उद्योत श्रीर नीचगोत्र इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल श्रन्तर्मुहूर्त है। श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जोवोंका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल पत्यके श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण है।

४४८. श्राभिनियोधिक हानी, श्रुतहानी और श्रवधिहानी जीवों में श्रसाता येदनीय, श्राति, श्रोक, श्रस्थिर अश्रभ और श्रयशःकीतिं इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। श्रेप प्रकृतियोंका जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल श्रन्तर्मुहूर्त है। श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। इतनी विशेषता है कि मनुष्यगित पञ्चककी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल पत्थके श्रसंख्यातवें माग प्रमाण है। इसी प्रकार श्रवधिदर्शनी, सम्यग्हिष्, ज्ञायिक सम्यग्हिष्ट श्रीर वेदक सम्यग्हिष्ट जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि दो श्रायुश्रोंका भङ्ग देवोंके समान है। ज्ञायिक सम्यग्हिए जीवोंमें दो श्रायुश्रोंका भङ्ग मनुष्यिनियोंके समान है।

४४९. मनःपर्ययक्षानी, संयत, सामायिकसंयत और छेदोपस्थापना संयत जीवोंमें चपक प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है। असातावेदनीय, अरित, शोक, अस्थिर, अग्रभ और अयशःकीर्ति इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मृहुर्त है। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मृहुर्त है। सब प्रकृतियोंकी अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। आयुका भङ्ग मनुष्यितियोंके समान है। इसी प्रकार परिहारिवशुद्धिसंयत जीवोंके जानना चाहिए।

४४०. संयतासंयत जीवोंमें श्रसाताधेदनीय, श्ररित, शोक, श्रस्थिर, श्रश्नम श्रीर अयशःकीर्ति इनकी जबन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जधन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल पत्यके श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण है। श्रजधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। शेष प्रकृतियोंकी जधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जधन्य श्रीर उत्कृष्ट अंतो । अज । सब्बद्धा । देवायु० ओघं । चक्खुदं० तसभंगो ।

५५१. तेऊए इत्थि०-एावुंस०-दोगदि-एइंदि०--श्रोरालि०-पंचसंठा०--छस्संघ०-दोश्राणु०--श्रादाखळो०-अप्पसत्थ०-थावर-दूभग-दुस्सर-श्रणादेँ०-एीचा० जह० जह० एग०, उक्क० पलिदो० श्रसंखेँळ०। अज० सन्बद्धा। श्रसादा०-अरदि सोग-श्राथर-असुभ--श्रजस० जह० जह० एगसमयं, उक्क० श्रंतो०। सेसाएं जह० जह० उक्क० श्रंतो०। अज० सन्बद्धा। एवं पम्माए। तेऊए एसि अप्पमनो करेति तेसि दुविधो कालो। यदि अधापवत्तसंजदो जहएएाडिद्विधंधकालो जह० जह० एग०, उक्क श्रंतो०। अथवा दंसएपोहखवगस्स कीरदि तदो जहएए० श्रंतो०। एवं परिहारे। पम्माए देवगदिश्रादि श्रधापवत्तस्स दिळादि। एवं सुक्काए वि।

४५२. उवसम॰ पंचणा०-छदंसणा०-चदुसंज०-पुरिस०--भय--दुगुं०-पंचिदि०-तेजा०-क०-समचदु०-वरण्०४-अगु०४-पसत्थवि०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आर्दॅ०-णिमि० उचा०-पंचंत० जह० जह एग०, उक्क० अंतो० | अज० जह० अंतो०, उक्क० पित्तदो० असंखेज० | सादासाद०-हस्स--रिद--अरिद-सोग-थिराथिर-सुभासुभ-जस०-अजस०-देवगदि०४ जह० जह० एग०, उक्क० अंतो० | अज० जह० एग०, उक्क० पित्तदो०

काल श्रन्तर्मुहूर्त है । अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है । देवायुका भङ्ग श्रोघके समान है । चजुदर्शनयाले जीवोंका भङ्ग त्रस जीवोंके समान है ।

४५१. पीतलेश्यावाले जीवोंमें स्थावेद, नषुंसकवेद, दी गति, एकेन्द्रिय जाति, स्रोदारिक शरीर, पाँच संस्थान, छह संहनन, दो त्रानुपूर्वी, स्रातप, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगित, स्थावर, दुर्भग, दुःस्वर, अनादेय और नीचगोत्र इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल प्रत्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। असाता वेदनीय, अरित, शोक, अस्थिर, अशुभ और अयशःकीर्ति इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहुर्त है। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य श्रीत उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहुर्त है। श्री प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। इसी प्रकार पद्मलेश्यावाले जीवोंके जानना चाहिए। पीतलेश्यामें जिनको अप्रमत्त करते हैं उनका दो प्रकारका काल है। यहि अध्यवन्य स्थितिके बन्धकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहुर्त है अथवा दर्शनमोहनीयका चपक करता है तो जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहुर्त है। इसी प्रकार परिहारविश्विद्ध संयत जीवोंके जानना चाहिए। एक्लेश्यावाले जीवोंके भी जानना चाहिए। अधाअनुत्तके देनी चाहिए। इसी प्रकार शुक्ललेश्यावाले जीवोंके भी जानना चाहिए।

४४२. उपशमसम्बन्दि जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, चार संज्वलन, पुरुपवेद, भय, जगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कामेण शरीर, समचतुरस्त्र संस्थान, वर्णचतुष्क, श्रगुरुटशुचतुष्क, प्रशस्तविहायोगिति, त्रसचतुष्क, सुभग सुस्वर, श्रादेय, निर्माण, उच्चगोत्र श्रीर पाँच अन्तराय इनकी जघन्य स्थितिके वैन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहुर्त है। श्रज्ञचन्य स्थितिके वन्धक जीवोंका जघन्य काल अन्तर्मुहुर्त है। श्रज्ञचन्य स्थितिके वन्धक जीवोंका जघन्य काल अन्तर्मुहुर्त है श्रीर उत्कृष्ट काल पर्व्यके श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण है। सातावेदनीय, श्रसातावेदनीय, हास्य, रित, श्ररित, श्रीक, स्थिर, श्रस्थिर, श्रुभ, श्रश्चभ, यशःकीर्ति, श्रयशःकीर्ति और देवगित चतुष्ककी जघन्य स्थितिके वन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट

असंखें जिन् । अहक निर्णं जह निर्णं उक्क अंतो । अज निर्णं अंतो । उक्क पित्ति । प्रमुखं जिन् । मणुसगदिपंचग निर्णं अज जह एग अंतो । उक्क पित्ति । असंखें जिन् । आहारदुगं जह अज जह एग । उक्क यंतो । तित्थय । जह जह एग । उक्क अंतो । अज जह एगसमयं, उक्क अंतो ।

४५३. सासणे सम्मामि० उक्षस्सभंगो । एवरि सासणे तिरिक्ख-देवायु० जह० जह० एग०, उक्ष० त्रावलि० त्रसंर्लंडज० । त्रज० जह० त्रंतो०, उक्ष० पलिदो० त्रसंखे० । मणुसायु० देवभंगो ।

४५४. सएणीसु खवगपगदीणं देवगदि०४--त्राहारदुग-तित्थय॰ मणुसभंगो । चदुत्रायु॰ पंचिदियभंगो । सेसाणं जह० जह० एग॰, उक्क॰ त्रावलि॰ ऋसंखेँजज०। ऋज॰ सब्बद्धा । एवं जहएणयं समत्तं ।

## एवं कालं समत्तं

## **अंतरपरू**वणा

५५५. ब्रांतरं दुविधं । जहरूएएयं उकस्सयं च । उकस्सए पगदं । दुवि०-स्रोधे०

काल अन्तर्मुहूर्त है। अजधन्य स्थितिकें बन्धक जीवोंका जधन्य काल एक समय है और और उत्कृष्ट काल पत्यके संख्यातयें भाग प्रमाण है। आठ कपायोंकी जधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जधन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अजधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जधन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल पत्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। मनुष्यगित पञ्चककी जधन्य और अजधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जधन्य काल कमसे एक समय और अन्तर्मुहूर्त है तथा उत्कृष्ट काल पत्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। आहारक द्विककी जधन्य और अजधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जधन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। तीर्थक्कर प्रकृतिकी जधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जधन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अजधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जधन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अजधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जधन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है।

४४३. सासादनसम्यग्दिष्ट श्रीर सम्यग्मिण्यादिष्ट जीवोंमें उत्कृष्टके समान भक्क है। इतनी विशेषता है कि सासादनमें तिर्यञ्चायु श्रीर देवायुकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल श्राविलके श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण है। श्रजधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल श्रन्तर्मुहर्त है श्रीर उत्कृष्ट काल पत्यके श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण है। मनुष्यायुका भक्क देवोंके समान है।

४४४. संश्री जीवोंमें चपक प्रकृतियाँ, देवगति चतुष्क, श्राहारकद्विक श्रीर तीर्थंद्भर प्रकृतिका भङ्ग मनुष्योंके समान है। चार श्रायुश्रोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रियोंके समान है। श्रेष प्रकृतियोंकी जधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जधन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल श्राविक श्रसंस्थातवें भाग प्रमाल है। श्रजधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। इस प्रकार जधन्य काल समात हुआ।

इस प्रकार काल समाप्त हुन्ना।

### अन्तरप्ररूपगा

४४४. अन्तर दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । उसकी अपेत्रा

आदे । अंधिण णिरय-मणुस-देवापूणं उक्कस्सिटिद्वंधगंतरं केविचरं ? जह० एग०, उक्क० अंसुलस्स असंसे असं० ओसप्पिणि-उस्सिष्णिओ । अणु० जह० एग०, उक्क० अंसुलस्स असं० एग०, उक्क० चंदुवीसं मुहुनं । सेसाणं उक्क० जह० एग०, उक्क० अंगुलस्स असं० असंखे ० ओसप्पिणि० । अणु० णित्थ अंतरं । एवं ओधभंगो तिरिक्खोधं कायजोगि-ओरालि०--ओरालियमि०--कम्मइ०--णावुंस०--कोधादि०४-मिद०-सुद०-असंज०-[चक्खदं ] अचक्खदं०--तिरिणले०---भविस०-अब्भवसि०--मिच्छादि०--असिण्ण--आहार०-अणाहारगं ति । णविर ओरालियमि०--कम्मइ०--अणाहारगं देवगदि०४-तित्थय० उक्क० ओधं । अणु० जह० एग०, उक्क० मासपुधनं । तित्थय० वासपुधनं ।

४५६. सन्वण्इंदियाणं दोऋायु० श्रोघं । सेसाणं उक्क० ऋणु० णत्थि श्रंतरं । एवं वर्णप्फदि-णियोदाणं ।

४५७. पुढवि०-त्राउ०-तेउ०-वाउ०-बादरपुढवि०--त्राउ०-तेउ०-वाउ० तेसिं चेव पज्जत्ता० श्रोघं । स्पवरि पज्जत्तेसु तिरिक्खायु० श्रासु० जह० एग०, उक्क० श्रंतो० ।

निर्देश दो प्रकारका है--श्रोध श्रौर श्रादेश। श्रोधसे, नरकायु, मनुष्यायु श्रौर देवायु इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका श्रन्तरकाल कितना है ? जघन्य श्रन्तर काल एक समय है और उत्कृष्ट श्रन्तर काल श्रंगुलके श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण है . जो कि श्रसंख्यातासंख्यात उत्सर्विणो श्रौर श्रवसर्विणी कालके बरावर है। श्रवत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य श्रन्तर काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट अन्तर काल चौबीस मुहूर्त है। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जधन्य ग्रन्तर काल एक समय है और उत्कृष्ट ग्रन्तर काल श्रङ्ग लके श्रसंख्यातचे भाग प्रमाण है जो कि श्रसंख्यातासंख्यात उत्सर्पिणी और श्रवसर्पिणी कालके बराबर है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका अन्तर काल नहीं है। इसी प्रकार श्रोघके समान सामान्य तिर्यञ्च, काययोगी, श्रौदारिककाययोगी, श्रौदारिकमिश्रकाययोगी. कार्मेणकाययोगी, नपुंसकवेदी, क्रोधादि चार कपायवाले, मत्यशानी, श्रुताशानी, श्रसंयत, चतुदर्शनी, श्रवश्चदर्शनी, तीन लेश्यावाले, भन्य, अभन्य, मिथ्यादृष्टि, श्रसंही, श्राहारक श्रौर श्रनाहारक जीवोंके जानना चाहिये । इतनी विशेषता है कि श्रौदारिकमिश्रकाययोगी। कार्मणकाययोगी श्रीर श्रनाहारक जीवोंमें देवगतिचतुष्क श्रीर तीर्धङ्कर इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका अन्तरकाल श्रीघके समान है। श्रनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर मासपृथक्तव है। तीर्थद्वर प्रकृतिका उत्कृष्ट ग्रन्तर वर्षप्रथक्तव है।

४४६. सब एकेन्द्रिय जीवोंमें दो आयुओंका भङ्ग श्रोधके समान है। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट श्रीर अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका अन्तर काल नहीं है। इसी प्रकार बनस्पति-कायिक श्रीर निगोद जीवोंके जानना चाहिए।

४५७. पृथ्वोकायिक, जलकायिक, ग्रम्निकायिक, वायुकायिक, बादर पृथ्वीकायिक, बादर जलकायिक, बादर श्रम्निकायिक और बादर वायुकायिक तथा इन्होंके पर्याप्त जीवोंका मङ्ग ओधके समान है। इतनी विशेषता है कि पर्याप्तकोंमें तिर्यञ्चायुकी श्रमुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जधन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। तथा तैजस

Jain Education International

तेजा०--क० चढुवीसं मुहुत्तं० । वादर [ पुढवि०- ] त्राउ०--तेउ०-वाउ०त्रपज्जत्ता० एइंदियभंगो । सव्वसुहुमाणां एइंदियभंगो । बादरवराष्फिदिपतेय० वादरपुढविभंगो ।

४५८. अवगदवेदे सञ्चपगदीणं उक्क० जह० एग०, उक्क० वासपुथत्तं । ऋणु० जह० एग०, उक्क० छम्मासं० । एवं सुहुपसं० । वेउन्वियमि०-श्राहार०-श्राहारमि० तित्थय० उक्क० श्रोघं । श्रणु० जह० एग०, उक्क० वासपुथत्तं० । सेसाणं उक्क० श्रोघं । श्रणु० जह० एग०, उक्क० श्रपण्यणो पगदिश्रंतरं ।

४५६. मणुसञ्चप्रजिल-सासाए०-सम्मामि० उक्कः श्रोघं । अणु० जह० एग०, उक्क० पिलदो० असंखेँ । सेसाएं एएरपादि याव सिएए ति उक्क० जह० एग०, उक्क० अंगुल० असंखेँ । अणु॰ पगिदेशंतरं । आपुगाणि एसि अत्थि तेसि उक्क० जह० एग०, उक्क० अंगुल० असंखेँ । अणु॰ अप्पप्णो पगिदेशंतरं कादव्वं । एवं उक्कस्संतरं समत्तं

शरीर और कार्मणशरीरका चौबीस मुहूर्त है। बादर पृथ्वीकायिकश्रपर्याप्त, बादर जल-कायिक श्रपर्याप्त, बादर श्रप्निकायिक श्रपर्याप्त और बादर वायुकायिक श्रपर्याप्त जीवोंका भक्त पकेन्द्रियोंके समान है। सब सूच्मोंका भक्त एकेन्द्रियोंके समान है। बादर वनस्पति-कायिक प्रत्येकशरीर जीवोंका भक्त बादर पृथ्वीकायिक जीवोंके समान है।

४४८. अपगतवेदी जीवोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व है। श्रुनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर छह महीना है। इसी प्रकार स्कृमसाम्पराय संयत जीवोंके जानना चाहिए। वैकियिकमिश्रकाययोगी, श्राहारककाययोगी और श्राहारकमिश्रकाययोगी जीवोंमें तीर्थक्कर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका अन्तर काल श्रोधके समान है। श्रुनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट ,अन्तर वर्षपृथक्त्व है। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट ,श्रमन है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर श्रमने-श्रपने प्रश्नित बन्धक समान है।

४४९. मनुष्यश्रपर्यात, सासादनसम्यग्दिए श्रीर सम्यग्मिथ्यादिए जीवोंमें श्रपनी सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंका श्रन्तर काल श्रोधके समान है तथा अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जधन्य श्रन्तर एक समय है श्रोर उत्कृष्ट श्रन्तर पर्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। नरकगतिसे लेकर संज्ञी तक श्रेप सब मार्गणाश्रोंमें श्रपनी-श्रपनी प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जधन्य श्रन्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर श्रङ्गलके श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण है जो श्रसंख्यातासंख्यात श्रवसर्विणी श्रीर उत्सर्विणियोंके बराबर है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका अस्तर काल प्रकृतिवन्धके श्रन्तर काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर काल श्रंगुलके श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण है जो कि श्रसंख्यातासंख्यात श्रवसर्विणी श्रीर उत्सर्विणियोंके बरावर है। तथा श्रमुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका अस्तर काल श्रवत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका अस्तर काल श्रयत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका अस्तर काल श्रयने-श्रपने प्रश्रतिवन्धके श्रन्तर कालके समान करना चाहिए।

इस प्रकार उत्कृष्ट अन्तर काल समाप्त हुआ।

- ४६०. जहराणए पगदं । दुवि०-ओवे० आदे० । ओघे० खवगपगदीएां जह० जह० एग०, उक्क० छम्मासं० । अज० एत्थि अंतरं । तिरिएाआयु०--वेउव्वियछ०-तिरिक्खग०-आहारदुग-तिरिक्खाणु०-उज्जो०-तित्थय०-एीचा० उक्कस्सभंगो । सेसाएां जह० अज० एत्थि अंतरं । एवं ओघभंगो कायजोगि--ओरालियका०--एावु'स०--कोधादि०४-अचक्खु०-भवसि०-आहारगे ति ।
- ४६१. तिरिक्लेसु तिषिणत्रायु०-वेउव्वियछ०--तिरिक्लगदि०४ जह॰ अज० उक्कस्सभंगो । सेसाणं जह॰ अज० एत्थि अंतरं । एवं तिरिक्लोघं ओरालियमि० [ कम्मइ०- ] मदि०-सुद०-असंज०--तिषिणले०--अब्भवसि०-भिच्छादि०--असिण्-अणाहारे ति । एवरि ओरालियमि०-कम्मइ०-अणाहारगेसु देवगदि०४--तित्थय० जह० अज० उक्कस्सभंगो ।
- ४६२. मणुस०३ खवगपगदीणं श्रोघो । सेसाणं उक्कस्सभंगो । एवरि मणुसि० खवगपगदीणं वासपुथत्तं० ।
- ५६३. एइंदिय-बादरेइंदिय-पज्जता अपज्जत्ता मणुसायु० तिरिक्खगदि०४ उकस्सभंगो । सेसाणं जह० अज० सात्थि अंतरं । सन्वस्रहुमास्यं मणुसायु० स्रोधं ।

४६०. जघन्यका प्रकरण है। उसकी श्रापेत्ता निर्देश दो प्रकारका है—श्रोघ श्रीर श्रादेश। श्रोघसे त्रपक प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य श्रन्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर छह म'हीना है। श्रज्ञघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका श्रन्तर काल नहीं है। तीन श्रायु, वैक्षियिक छह, तिर्यञ्चगित, श्राहारकद्विक, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उद्योत, तीर्थं इर श्रीर नीचगोत्र इनका भद्ग उत्कृष्टके समान है। श्रेप प्रकृतियोंकी जघन्य श्रीर श्रज्ञघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका श्रन्तर काल नहीं है। इसी प्रकार श्रोघके समान काययोगी, श्रीदारिककाययोगी,नपुंसकवेदी, कोधादि चार कषायवाले, श्रचश्चदर्शनी, भव्य श्रीर श्राहारक जीवोंके जानना चाहिए।

४६१. तिर्यञ्चोंमें तीन श्रायु, वैकियिक छह और तिर्यञ्चगित चतुष्ककी जघन्य श्रीर श्रज्जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका भङ्ग उत्कृष्टके समान है। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य श्रीर श्रज्जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका श्रन्तर काल नहीं है। इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंके समान श्रीदारिकमिश्रकाययोगी, कार्मण्काययोगी, मत्यक्षानी, श्रुताक्षानी, श्रसंयत, तीन छेश्या-वाले, श्रभव्य, मिश्यादृष्टि, श्रसंशी श्रीर श्रनाहारक जीवोंके जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि श्रीदारिकमिश्रकाययोगी, कार्मण्काययोगी श्रीर श्रनाहारक जीवोंमें तीर्थङ्कर प्रकृतिकी जधन्य श्रीर श्रज्जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका श्रन्तर काल उत्कृष्टके समान है।

४६२. मनुष्यत्रिकमें चपक प्रकृतियोंका भङ्ग ग्रोधके समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग उत्कृषके समान है। इतनी विशेषता है कि मनुष्यिनियोंमें चपक प्रकृतियोंकी जधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका उत्कृष्ट श्रन्तर काल वर्षपृथक्त्व है।

४६३. एकेन्द्रिय, बादर एकेन्द्रिय श्रीर इनके पर्याप्त-अपर्याप्त जीवोंमें मनुष्यायु श्रीर तिर्यञ्चगतिचतुष्कका मङ्ग उत्छएके समान है। शोष प्रकृतियोंकी जघन्य श्रीर अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका श्रन्तर काल नहीं है। सब सुदम जीवोंमें मनुष्यायुका भङ्ग श्रोघके सेसाणं जह॰ अज॰ एत्थि अंतरं । पुढवि॰--आउ॰-तेउ॰-वाउ॰ तिरिक्खायु॰ जह॰ अज॰ एत्थि अंतरं । सेसाणं जह॰ जह॰ एग॰, उक्क॰ अंगुलस्स असंस्वे॰ । अज॰ एत्थि अंतरं । मणुसायु॰ ओघं । बादरपुढवि॰ अपज्जत्ता मणुसायु॰ ओघं । सेसाणं जह॰ अज॰ एत्थि अंतरं । एवं बादरआउ॰-तेउ॰--वाउ०अपज्जत्ता । वणप्पदि-िएयोद---सब्ववादरवणप्पदि--िणयोद-वादरवणप्पदिपत्तेय॰ तस्सेव अपज्जता॰ मणुसायु॰ ओघं । सेसाणं जह॰ अज॰ एत्थि अंतरं ।

४६४. पंचिदि ॰ -तस०--पंचमण०--पंचवचि ॰ --इत्थि ॰ --पुरिस ॰ --आभि०-सुद ॰ -ओधि ॰ --मण्पज्ञव०---संजद --सामाइ० -- छेदो ० ---पि हार० --संजदासजद --- चक्खुदं ॰ --ओधि दं ॰ -सुक्कले ० -सम्मादि ॰ -खइग० -सिएण् ति एदेसि मणुसभंगो । एवरि खवग-पगदीणं सेढिविसेसो णादच्यो । अवगद्ये० सच्वपगदीणं जह ॰ अज० जह ॰ एग०, उक्क० बम्मासं० । एवं सहुमसंप ० । सेसाणं णिर्यादि याव सम्मामिच्छादिहि ति सच्वपगदीणं अप्पण्णो उक्कस्सभंगो ।

## एवं अंतरं समतं

समान है। रोष प्रकृतियोंकी जघन्य श्रीर श्रज्ञघन्य स्थितिके बन्धक जीयोंका श्रन्तर काल नहीं है। पृथ्वीकायिक, जलकायिक, श्रम्निकायिक श्रीर वायुकायिक जीयोंमें तिर्यश्चायुकी जघन्य श्रीर श्रज्ञघन्य स्थितिके बन्धक जीयोंका श्रन्तर काल नहीं है। रोष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीयोंका जघन्य श्रन्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर श्रंगुलके श्रसंख्यातयें भाग प्रमाण है जो श्रसंख्यातासंख्यात श्रवसर्पिणयों श्रीर उत्सर्पिण्योंके वरावर है। श्रज्ञघन्य स्थितिके बन्धक जीयोंका श्रन्तर काल नहीं है। मनुष्यायुका मक्त श्रोधके समान है। यादर पृथ्वीकायिक श्रपर्यात्त जीयोंमें मनुष्यायुका मक्त श्रोधके समान है। रोष प्रकृतियोंकी जघन्य श्रीर श्रज्ञघन्य स्थितिके बन्धक जीयोंका श्रन्तर काल नहीं है। इसी प्रकार वादर जलकायिक श्रपर्यात्त, बादर श्रिनिकायिक श्रपर्यात्त श्रीर बादर वायुकायिक श्रपर्यात्त जीयोंके जानना चाहिए। वनस्पतिकायिक, निगोद जीव, सब बादर वनस्पतिकायिक, सब बादर निगोद जीव, बादर चनस्पतिकायिक प्रत्येक श्ररीर श्रीर उनके श्रपर्यात्त जीयोंका श्रन्तर काल नहीं है।

५६४. पञ्चेन्द्रिय, त्रसकायिक, पाँच मनोयोगी, पाँच वचनयोगी, स्रविदी, पुरुषवेदी, आभिनियोधिक हानी, श्रुत्तहानी, श्रवधिक्रानी, श्रवधिक्रानी, स्रवधिक्रानी, स्रवधिक्रानी, श्रवधिक्रानी, श्रवधिक्रानी, श्रवधिद्रश्नी, श्रवधिद्रश्नी, श्रवधिद्रश्नी, श्रवधिद्रश्नी, श्रवधिद्रश्नी, श्रवधिद्रश्नी, श्रवधिद्रश्नी, श्रवधिद्रश्नी, श्रव्यवाले, सम्यग्दृष्टि, लायिक सम्यग्दृष्टि श्रीर संज्ञी इनका भन्न मनुष्योंके समान है। इतनी विशेषता है कि चापक प्रकृतियोंकी श्रोणिविशेष ज्ञाननी चाहिए। श्रपगतवेदी जीवोंमें सब प्रकृतियोंकी ज्ञानय श्रीर श्रवज्ञाचन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका ज्ञानय श्रन्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर छह महीना है। इसी प्रकार स्वस्मसाम्परायसंयत जीवोंके ज्ञानना चाहिए। श्रेष नरकगतिसे लेकर सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवों तक श्रेष सब मार्गणाश्रीमें सब प्रकृतियोंका भन्न श्रपने-श्रपने उत्कृष्टके समान ज्ञानना चाहिए।

इस प्रकार अन्तर काल समाप्त हुन्ना।

### भावपरूवसा

५६५. भावं दुविधं–जहएएयं उक्तस्सयं च । उक्तस्सए पगदं ! दुवि०--ऋोघे० ब्रादे० । ख्रोघे० सञ्वपगदीएां उक्त० ऋणु० वंधगा त्ति को भावो ? ब्रोदइगो भावो । एवं ऋणाहारग त्ति रोदच्वं ।

४६६. जहरुणए पगदं । दुवि०-ऋोघे॰ ऋादे॰ । [ऋोघे॰ ] सब्वपगदीएाँ जह० ऋज० को भावो ? ऋोदइगो भावो । एवं याव ऋणाहारग त्ति खेदव्वं । 🖁 एवं भावं समत्तं

# अप्पाबहुगपरूवगा

५६७. ऋषाबहुगं दुविधं-जीवऋषाबहुगं चेव द्विदिऋषावहुगं चेव | जीवऋषा-बहुगं तिविधं--जहरूरायं उकस्सयं अजहरूराणऋगुकस्सयं चेव । उकस्सर् पगदं । दुवि०-ऋोये० आदे० । ओये० तिरिएण्आयुगारां वेउच्वियछ०-तित्थय० सन्वत्थोवा उकस्सिद्धिवंधगा जीवा । ऋणुक्कस्सिद्धिवंधगा जीवा असंखेँ ज्ञगुणा । आहारदुगं सन्वत्थोवा उक्क० जीवा । ऋणु० जीवा संखेँ ज्ञगुणा । सेसाणं सन्वत्थोवा उक्क० जीवा। ऋणु० जीवा ऋणंतगु० । एवं खोघभंगो तिरिक्खोधं कायजोगि-खोरालियका०-खोरालियमि०--कम्मइ०--णवुंस०--कोधादि०४-मदि०-सुद०--असंज०--अचक्खदं०-

#### भावप्ररूपगा

४६४. भाव दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और असुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका कौन भाव है । श्रीदियक भाव है । इसी प्रकार अनिहासक मार्गणातक जानना चाहिए।

४६६. जघन्यका प्रकरण है। उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—श्रोध श्रोर श्रादेश। श्रोधसे सब प्रकृतियोंकी जघन्य श्रोर श्रजधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका कौन भाव है? श्रोदियक भाव है। इसो प्रकार श्रनाहारक मार्गणतक जानना चाहिए।

इस प्रकार भाव समाप्त हुन्ना ।

# **ऋल्पबहुत्वप्ररूप**गा

४६७. श्रह्पबहुत्व दो प्रकारका है—जीव श्रह्पबहुत्व श्रीर स्थित श्रह्पबहुत्व। जीव श्रह्पबहुत्व तीन प्रकारका है—जग्रन्य, उत्कृष्ट श्रीर जग्रन्य उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकर्ण है। उसकी श्रपेना निर्देश दो प्रकारका है—श्रोध श्रीर श्रादेश। श्रोधसे तीन श्रायु, वैक्रियिक छह श्रीर तीर्थ इर इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सबसे श्रह्प हैं। इनसे श्रमुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। श्राहारकद्विककी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सबसे श्रद्ध हैं। इनसे श्रमुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सबसे श्रद्ध हैं। इनसे श्रमुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव अनन्तगुणे हैं। इसी प्रकार श्रीधके समान सामान्य तिर्यञ्च, काययोगी, श्रीदारिककाययोगी, श्रीदारिकमिथकाययोगी, कार्मणकाययोगी, नपुंसकवेदी, कोधादि चार कषायवाले, प्रत्यक्षानी, श्रुताक्षानी, श्रसंयत, श्रवश्चद्ध दर्शनी, तीन लेश्यावाले, भव्य, श्रमव्य, मिथ्यादिष्ट,

तिरिणले॰-भवसि॰-अन्भवसि॰--मिच्छादि०-असिएण॰-आहार०-अणाहारगे ति । एवरि ओरालियमि०-कम्मइ०-अणाहार० देवगदि०४-तित्थय० सन्व० उक्क० जीवा । अणु॰ जीवा संखेँज्जगु॰। एवरि ओरालियका० तित्थय० अणु० द्विद० संखेँज्जगु॰। सेसाएं एिरयादि याव सिएण ति एमु असंखेँज्जाणंतरासीएं तेसि सन्वत्थोवा उक्क॰ जीवा। अणु॰ जीवा असंखेँज्ज॰। एमु संखेँजरासि तेसि सन्वत्थोवा उक्क॰ जीवा। अणु॰ जीवा संखेँजगु॰। एवरि एइंदि०-वणफिद-णियोदेमु तिरिक्खायु॰ ओघं। एवं उक्कस्सं समत्तं

४६८. जहरूएए पगदं । दुविब्---ग्रोघेव ग्रादेव । ग्रोघेव खवगपगदीएं तिरिक्खगदि-तिरिक्खाणुव--उज्जोव-णीचाव सन्वत्थोवा जहव । श्रजव श्रणंतएव । सेसाएं जहव सन्वत्थोवा जीवा । श्रजव श्रसंखेंज्ञव । एवरि श्राहारदुगं तित्थयरं च उक्तस्सभंगो । एवं श्रोघभंगो कायजोगि--श्रोरालियकाव--एवुंसव-कोधादिव्ध---श्रचखुव-भवसिव-श्राहारगे चि ।

५६६. तिरिक्खेसु तिरिक्खगदि-तिरिक्खाणु०--उज्जो०--णीचा० सव्वत्थोवा जह०। अज० अर्णतसु० । सेसाणं सव्वपगदीणं सव्वत्थोवा जह० जीवा। अज०

श्रसंशी, श्राहारक और श्रनाहारक जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि श्रोदारिक मिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी श्रोर श्रनाहारक जीवोंमें देवगति चतुक्क श्रोर तीर्थं इर इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे श्रनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इतनी विशेषता है कि श्रोदारिककाययोगी जीवोंमें तीर्थं इर प्रकृतिकी श्रनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। नरकगतिसे लेकर संशी तक शेष सब मार्गणाश्रोंमें जो श्रसंख्यात श्रोर अनन्त राशिवाली मार्गणायें हैं, उनमें उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे श्रनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। तथा इनमें जो संख्यात राशिवाली मार्गणायें हैं, उनमें उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे श्रनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं।

### इस प्रकार उत्कृष्ट ऋल्पबहुत्व समाप्त हुआ।

४६८. जघन्यका प्रकरण है। उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे क्ष्यक प्रकृतियाँ, तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यातुपूर्वी, उद्योत और नीचगोत्र इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे अजघन्य स्थितिके बन्धक जीव अवन्तगुणे हैं। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे अजघन्य स्थितिके बन्धक जीव असंस्थातगुणे हैं। इतनी विशेषता है कि आहारकदिक और तीर्थक्कर प्रकृतिका भक्त उत्कृष्टके समान है। इसी प्रकार ओघके समान काययोगी, औदारिककाययोगी, नवुंसकवेदी, कोधादि चार कषायवाले, अचलुद्दानो, भव्य और आहारक जीवोंके जानना चाहिए।

४६९. तिर्यञ्चोमं तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उद्योत श्रीर नीचगोत्र इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तीक हैं। इनसे श्रजधन्य स्थितिके बन्धक जीव श्रनन्त-गुग्ने हैं। दोष सब प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे जीवा असंखेँ० । [ एवं ] श्रोरालियमि०-कम्मइ०-मदि०-सुद०--असंज०-तिरिणले०-श्रव्भवसि०-मिच्छादि०--श्रसरिण-श्रणाहारगे ति । एवरि श्रोरालियमि०-कम्मइ०-श्रणाहार० देवगदि०४--तित्थयरं उक्कस्सभंगो । सेसाणं शिरयादि याव सिर्ण ति असंखेँज-संखेँज--श्रणंतरासीणं उक्कस्सभंगो । एवरि एइंदिय--वर्णफिदि--शियोदेसु तिरिक्खायु० श्रोघं ।

४७०. अनहरण्णमणुकस्सए पगदं | दुवि०-स्रोघे० स्रादे० | स्रोघे० खवगपगदीणं सम्बत्थोवा जह० जीवा | उक्क० असंखें ज्ञ० | स्रजहरण्णमणुक्क० स्रणंतगु० | स्राहार-दुगं सम्बत्थोवा जह० हिदि० | उक्क० हिदि० संखें ज्ञगु० | स्रज०स्रणु० संखें ज्ञ० | तिरिण्यायु०--वंडिवियछ० सम्बत्थोवा उक्क० | जह० स्रसंखें ज्ञ० | स्रज०स्रणु० स्रसंखें ज्ञ० | तिरिक्खगदि--तिरिक्खाणु०-उज्जो०-णीचा० सम्बत्थोवा उक्क० | जह० संखें ज्ञ० | स्रज०स्रणु० स्रसंखें ज्ञगु० ।

श्रज्ञघन्य स्थितिके वन्धक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। इसी प्रकार श्रौदारिकिमश्रकाययोगी, कार्मण्काययोगी, मत्यज्ञानी, श्रुदाज्ञानी, श्रसंयत, तीन लेश्यावाले, श्रभव्य, मिथ्यादृष्टि, श्रसंज्ञी श्रौर श्रनाहारक जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि श्रौदारिकिमश्रकाययोगी, कार्मण्काययोगी श्रौर श्रनाहारक जीवोंमें देवगित चतुष्क श्रौर तीर्थङ्करका मङ्ग उत्रुप्तके समान है। नरकगितसे लेकर संशी तक श्रोप जितनी मार्गणायें हैं, उनमें श्रसंख्यात, संख्यात श्रौर श्रनन्त राशिवाली मार्गणाश्रोंमें उत्रुप्तके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि एकेन्द्रिय, वनस्पति श्रौर निगोद जीवोंमें तिर्यञ्चायुका भङ्ग श्रोधके समान है।

४७०. जघन्य उत्कृष्ट श्रह्मवहुत्वका प्रकरण हैं। उसकी श्रपेना निर्देश दो प्रकारका है—श्रोघ श्रीर श्रादंश। श्रोघसे स्वक प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। इनसे श्रज्ञघन्यश्रमुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीय श्रमन्तगुणे हैं। श्राहारकिहककी जघन्य स्थितिके बन्धक जीय सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे श्रज्ञघन्य श्रमुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे श्रज्ञघन्य श्रमुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे जघन्य स्थितिके बन्धक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। इनसे श्रज्ञघन्य श्रमुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। इनसे जघन्य स्थितिके वन्धक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। इनसे जघन्य श्रमुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। इनसे श्रज्ञघन्य श्रमुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। इनसे श्रज्ञघन्य श्रमुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव स्थातगुणे हैं। इनसे अज्ञघन्य श्रमुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे श्रज्ञघन्य श्रमुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे श्रज्ञ्यिक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। इनसे श्रज्ञघन्य श्रमुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव स्थितिके वन्धक जीव स्थितिके वन्धक जीव स्थितिके वन्धक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। इनसे श्रज्ञघन्य श्रमुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव स्थितिके वन्धक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। इनसे श्रज्ञघन्य श्रमुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं।

४७१. आदेसेण ऐरइएमु दोएएं आयु०सव्वत्थोवा उक्क०। जह॰ असंखेँजा॰। अज॰मणुक्क० असंखेँजागु०। एवि मणुसायु० संखेँजागुणं कादव्यं। सेसाएं सव्वत्थोवा जह॰। उक्क० असंखेँ०। अज॰मणुक्कस्स० असंखेँजा०। एवं सव्विण्याएं। एवि विद्यादि याव छि ति इत्थि०-एवुंस०--तिरिक्खगदि-तिग-पंचसंठा०--पंचसंघ०-अष्पसत्थ०-दूभग--दुस्सर--अणादेँ०--एविगागे॰ सव्वत्थोवा जह०। उक्क० संखेँजागु०। अज०अणु० हिदि० असंखेँजा०। एविर सत्तमाए तिरिक्खगदि० थिरयोघं। मणुसग०--मणुसाणु०--उच्चा० तिरिक्खायुभंगो। एवं सव्वदेवाएं। एविर आण्यद-पाणद० इत्थि०-एवुंस०-पंचसंठा०-पंचसंघ०-अष्पसत्थ०-दूभग-दुस्सर-अणादेँ०--णीचा० सव्वत्थोवा जह०। उक्क० संखेँजागु०। अज०अणु० असंखेँजा०। अज०अणु० असंखेँजा०। सन्ति स्वाएं स्ववत्थोवा उक्क०। जह० संखेँजागु०। अज०अणु० असंखेँजा०। सन्ति स्वाएं सव्वत्थोवा उक्क०। जह० संखेँजा०। सन्ति सन्ति स्वाएं सव्वत्थोवा जह०। उक्क० संखेँजागु०। सेसाएं सव्वत्थोवा जह०। उक्क० संखेँजा०। अज०अणु० असंखेँजा०। एवं स्विरिंगिवजा ति। अणुदिस-अणुत्तर-सव्वहे मणुसायु० देवोघं। सेसाएं सव्वत्थोवा जह०। उक्क० संखेँजा०।

४७१. त्रादेशसे नारिकयोंमें दो क्रायक्रोंकी उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे जघन्य स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुरो हैं। इनसे श्रजधन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव असंख्यातगुरो हैं। इतनी विशेषता है कि मनुष्यायुकी संख्यातगुरा। करना चाहिए। शेष सब प्रकृतियोंकी जबन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव असंख्यातगुर्णे हैं। इनसे अज्ञयन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव ग्रसंख्यातगुरो हैं। इसी प्रकार सब नारकियोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि दूसरी पृथ्वीसे लेकर छुटी पृथ्वी तकके नारकियोंमें स्त्रीवेद, नपूंसकवेद, तिर्यञ्च-गतित्रिक, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, अप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग, दुःस्वर,अनादेय श्रीर नीचगोत्र इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव संख्यातगुर्णे हैं । इनके अजधन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुर्णे हैं । इतनी विशेषता है कि सातवीं पृथ्वीमें तिर्यं ≋गतिचतुष्कका भक्त सामान्य नारकियोंके समान है । तथा मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उचगोत्रका भङ्ग तिर्यञ्चायके समान है। इसी प्रकार सब देवोंके जानना चाहिए।इतनी विशेषता है कि श्रानत ग्रीर प्रासत करूप वासी देवोंमें खोवेद, नपुंसकवेद, पाँच संस्थान, पाँच संहतन, ऋप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग, दुःस्वर, अनादेय और नीचगीत्र इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव संख्यातगुर्णे हैं। इनसे अजधन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके ंधक जोव ग्रसंस्यातगुरो हैं। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक ा । इनसे जघन्य स्थितिके वन्धक जीव संख्यातगुरो हैं । इनसे श्रजधन्य श्रमुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव ग्रसंख्यातगुरो हैं इसी प्रकार उपरिम ग्रैवेयक तकके देवोंके जानना चाहिए। अनुदिश, अनुत्तर और सर्वार्थसिद्धिके देवोंमें मनुष्यायुका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है। शेप सब प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव संख्यातगुरो हैं। इनसे अज्ञधन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुरो हैं । इतनी विशेषता है कि सर्वार्थसिद्धिमें संख्यातगुरो करने चाहिए ।

५७२. तिरिक्षेसु चदुश्रायु-वेउव्वियञ्च -तिरिक्खग०--तिरिक्खाणु०--उज्जो०-णीचा० श्रोघं । सेसाणं सन्वत्थोवा उक्क । जह० श्रणंतगु० । श्रज०श्रणु० श्रसं-खेंज्ज० । पंचिदियतिरिक्ख०३ सन्वपगदीणं सन्वत्थोवा उक्क०। जह० श्रसंखेंज्ज० । श्रज०श्रणु० श्रसंखेंज्ज० । पंचिदियतिरिक्खश्रपज्जत्त० सन्वपगदीणं सन्वत्थोवा उक्क०। जह० श्रसंखेंज्ज० । श्रज०श्रणु० श्रसंखेंज्ज० ।

५७३. मणुसेसु खवगपगदीणं सञ्बत्थोवा जह । उक्क संखेँज्ज । अज अणु असंखेँज्ज । िएरय-देवायु - तित्थय व थोवा उक्क । जह संखेँज । श्रिज अणु असंखेँज । विउव्वयक सन्वत्थोवा जह । उक्क संखेँज । अज अणु संखेँज । विउव्वयक सन्वत्थोवा जह । उक्क संखेँज । अज अणु संखेँज । आहारदुगं ओघं। सेसाणं सन्वत्थोवा उक्क । जह असंखेँज । अज अणु असंखेँज । मणुसपज्जत मणुसिणीसु असिण्णपगदीणं खवगपगदीणं च ओघं। एवरि संखेज जगुणं काद वं। मणुस अप जतेसु णिरयोघं।

५७४. एइंदिएसु दोत्रायु॰ त्रोघं। तिरिक्खगदि-तिरिक्खाणु०-उन्जो०-सीचा०

५७२. तिर्यञ्चोंमें चार आयु, वैक्रियिक छह, तिर्यञ्चगित, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उद्योत और नीचगोत्रका भक्न ओघके समान है। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे ज्ञज्ञघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुर्शे हैं। पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चित्रकमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुर्शे हैं। इनसे अधन्य स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुर्शे हैं। इनसे अधन्य स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुर्शे हैं। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्यातकोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुर्शे हैं। इनसे अध्यातकोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे अधन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुर्शे हैं।

४७३. मनुष्यों में चपक प्रकृतियों की जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। नरकायु, देवायु और तीर्थङ्कर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे अघन्य स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनके अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनके अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनके अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। आहारकद्विकका भङ्ग ओधके समान है। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हें। इनसे जघन्य स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। मनुष्यपर्यात और मनुष्यिनियोंमें असंक्षी सम्बन्धी प्रकृतियों और चएक प्रकृतियोंका भक्न ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि संख्यातगुणा करना चाहिए। मनुष्य अपर्यातकोंमें सामान्य नारिकयोंके समान भक्न है।

४७४. एकेन्द्रियोंमें दो श्रायुश्रीका भङ्ग श्रोघके समान है। तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्या-नुपूर्वी उद्योत श्रीर नीचगोत्र इनकी जघन्य स्थितिके वन्धक जीव सबसे स्तीक हैं। इनसे सन्वत्थोवा जह० | उक्क० ऋणंतगु० | श्रजह० ऋसंखेँजगु० | सेसाणं सन्वत्थावा जह० | उक्क० संखेँज्जगु० | ऋज० ऋणु० ऋसंखेँज्ज० | एवं सन्वविगर्लिदिय-सन्व-पंचकायाणं | पंचिदिय-तसश्चपज्ज० पंचिदियतिरिक्ख ऋपज्जत्तभंगो |

५७५. पंचिदिय-तस॰२ खवगपगदीणं सन्बत्थोवा जह॰। उक्क० असंखेँ०। अज॰ अणु० असंखेँ०। पंचदंस०-असादा॰-मिच्छ०-बारसक॰--अहणोक०-तिरिक्ख-गिद्-मणुसगिद्-एइंदि॰-पंचिदि०-ओरालि॰-तेजा०-क॰-इस्संठा०--ओरालि०अंगो॰-अस्संघ०--वरण०४--दोत्राणु०--अगु०४--आदाउज्जो०--दोविहा॰-तस०४-थावरादि-पंचयुगल-अजस०-णिमि॰-णीचा॰ सन्वत्थोवा उक्क०। जह० असंखेँज्ञ०। अज०-अणु० असंखेँज्ञ०। णवरि सेसो णाद्व्यो। चदुआयु०-वेउव्वियछ० थोवा उक्क०। जह॰ असंखेँज्ञ०। अज०अणु० असंखेँज्ज०। तिरिणजादि-सहुमणामाणं अपउज०-साधार० देवगदिभंगो। आहारदुगं तित्थय० ओवं।

५७६ पंचमण०-तिरिणवचि० चदुत्रायु० सन्वत्थोवा उक्क० । जह० स्रसंखेँ० ।

उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव अनन्तगुणे हैं। इनसे अजधन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। शेष प्रकृतियोंकी जधन्य स्थितिके वन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे अजधन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इसी प्रकार सब विकलेन्द्रिय और सब पाँच स्थावरकायिक जीवोंके जानना चाहिए। पञ्चेन्द्रिय अपर्याप्त और अस अपर्याप्त जीवोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त से समान है।

४७४. पञ्चेन्द्रयद्विक और त्रसद्विक जीवोंमें चपक प्रश्नितयोंकी जधन्य स्थितिके वन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव श्रसंस्थातगुणे हैं। इनसे श्रजधन्य श्रनुत्कृष्टस्थितिके वन्धक जीव श्रसंस्थातगुणे हैं। इनसे श्रजधन्य श्रनुत्कृष्टस्थितिके वन्धक जीव श्रसंस्थातगुणे हैं। पाँच दर्शनावरण, श्रसातावेदनीय, मिण्यात्व, वारह कपाय, श्राठ नोकधाय, तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति, एकेन्द्रिय जाति, पञ्चेन्द्रियजाति, श्रौदारिक श्रारो, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, छह संस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गोणाङ्ग, छह संहनन, वर्णचतुष्क, दो श्रानुपूर्वी, श्रगुरुत्वधुचतुष्क, श्रातप, उद्योत, दो विहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थावर श्रादि पाँच युगल, श्रयशक्तिर्ते, निर्माण श्रौर नीचगोत्र इनको उत्रष्ट स्थितिके वन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे जधन्य स्थितिके वन्धक जीव श्रसंस्थातगुणे हैं। इतनी विशेषता हैं। इनसे श्रजधन्य श्रनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव श्रसंस्थातगुणे हैं। इतनी विशेषता है कि शेष श्रत्यवहुत्व जानना चाहिए। चार श्रायु श्रौर वैकियिक इहकी उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जोव सबसे स्तोक हैं। इनसे जधन्य स्थितिके वन्धक जोव श्रसंस्थातगुणे हैं। इनसे श्रजधन्य श्रनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव श्रसंस्थातगुणे हैं। इनसे श्रज्ञधन्य श्रनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव श्रसंस्थातगुणे हैं। इनसे श्रजधन्य श्रनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव श्रसंस्थातगुणे हैं। दीन जाति, स्दम, श्रपर्यात श्रौर साधारण इनका भङ्ग देवगितके समान है। श्राहारकद्विक श्रौर तीर्थद्वर इनका भङ्ग श्रोधके समान है।

४७६. पाँच मनोयोगी और तीन वचनयोगी जीवोंमें चार श्रायुत्रोंकी उत्हृष्ट स्थितिके वन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे जघन्य स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुण हैं। इनसे अजि०अणु० असंखेँज० । आहारदुगं तित्थयं अोघं । इत्थि॰-एवुंस॰-णिर्यगदि-चदुजादि--पंचसंटा०-पंचसंघ०--णिर्याणु॰--अपसत्थ॰--थावरादि०४-दूभग--दुस्सर० सन्वत्थोवा जह॰। उक्क॰ संखेँज०। अज॰अणु॰ असंखेँज०। सेसाएं सन्वत्थोवा जह॰। उक्क० असंखेँ०। अज॰अणु॰ असंखेँज०। सेसाएं सन्वत्थोवा जह॰। उक्क० असंखेँ०। अज॰अणु॰ असंखेँ०। दोवचि० तसपज्जत्तभंगो । काय-जोगि-ओरालियका॰ ओघं।

४७७. ख्रोरालियिमि० देवगिद०४--तित्थय० सन्वत्थोवा उक्क०। जह० संखेँज्जन०। अन०अणु० संखेँजन०। सेसाणं ख्रोघं। एवं कम्मइग०--अणाहार०। वेउन्वियका० सन्वपगदीणं सन्वत्थोवा जह०। उक्क० असंखेँजन०। अन०अणु० असंखेँजन०। एवरि इत्थिवेदादीणं विसेसाए। दोख्रायु० देवोघं। एवं वेउन्वियिम०। एवरि आयु० एत्थि। आहार० आहारिमस्से सन्वपगदीणं सन्वत्थोवा जह०। उक्क० संखेँजन०। अन०अणु० संखेँजन०। देवायु० मणुसिभंगो।

५७८. इत्थि०-पुरिस० खवगपगदीएां सब्बत्थोवा जह० । उक्क० असंखेंज्ज०।

अजघन्य अनुत्रुष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। आहारकद्विक और तीर्थद्वर प्रश्नतिका भङ्ग ओघके समान है। स्रीवेद, नपुंसकवेद, नरकगित, चार जाति, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, नरकगित्यानुपूर्वी, अवशस्त विहायोगिति, स्थावर आदि चार, दुर्भग और दुःस्वर इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। शेप प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। शेप प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। दो चचनयोगी जीवोंका भङ्ग अस पर्याप्त जीवोंके समान है। काययोगी और औदारिक काययोगी जीवोंका भङ्ग ओघके समान है।

४७७. ग्रौदारिकमिथ्रकाययोगी जीवोंमें देवगित चतुष्क ग्रौर तीर्यक्कर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे जघन्य स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। ग्रेप प्रकृतियोंका भक्त श्रोधके समान है। इसी प्रकार कार्मणकाययोगी श्रौर अनाहारक जीवोंके जानना चाहिए। वैकियिक काययोगी जीवोंमें सव प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके वन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। इनसे श्रजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हें। इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेद श्रादि प्रकृतियोंकी विशेषता जाननी चाहिए। दो श्रायुश्रोंका भक्त सामान्य देवोंके समान है। इसी प्रकार वैकियिक मिश्रकाययोगी जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनके श्रायुक्ता बन्ध नहीं होता। श्राहारककाययोगी श्रौर श्राहारकमिश्रकाययोगी जीवोंमें सव प्रकृतियोंकी जधन्य स्थितिके वन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे श्रजघन्य श्रजुग्छ स्थितिके वन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे श्रजघन श्रज्ञघन्य श्रजुग्छ स्थितिके वन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। देवायुका भक्त मनुष्यिनयोंके समान है।

४७८ स्त्रीवेदवाले स्रोर पुरुपवेदवाले जीवोंमें चपक प्रस्तियोंकी जघन्य स्थितिके यन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्हुए स्थितिके बन्धक जीव स्रसंख्यातगुणे हैं। अजि॰ अणु॰ असंखेँजज्ञ । साबुंस॰-कोधादि०४-अचक्खुदं०-भवसि॰-आहार॰ मूलोघं। अवगदवे॰ सन्वपगदीसं सन्वत्थोवा उक्क॰ । जह॰ संखेँज्ज॰ । अज०अणु० संखेँजज्ञ । एवं सुहुमसंप० ।

५७६. मदि॰-सुद॰-असंज॰-तिषिणले॰-अब्भवसि०--िमच्छादि॰-असिएण ति
तिरिक्तोयं । विभंगे चदुआयु० मणजोगिभंगो । सेसाणं सब्बत्थोवा जह॰ । उक्क॰
असंखेँजन॰ । अज॰अणु० असंखेँजन॰ । णविर सत्थाणपगिदिवसेसो णाद्व्वो ।
आभि०-सुद॰-ओधि॰ देवायु०-आहारदुग-तित्थय॰ ओयं। असादा॰-अरिद-सोग-अथिर-असुभ--अजस० सव्वत्थोवा जह॰ । उक्क॰ असंखेँ॰ । अज०अणु० असंखेँजन० । मणुसायु॰ देवोयं । सेसाणं सव्वपगदीणं सव्वत्थोवा जह॰ । उक्क० असंखेँजन० । अज०अणु० असंखेँजन० । उक्क० संखेँजन० । अज०अणु० संखेँजन० । सेसाणं [ सव्वत्थोवा जह० । उक्क० संखेँजन० । अजह०अणु० संखेँजन० । सेसाणं [ सव्वत्थोवा ] जह० । उक्क० संखेँजन० । अजह०अणु० संखेँजन० । एवरि आयु० मणुसि०भंगो । एवं संजद-सामाइ०-छेदो०-परिहार० ।

इनसे अजघन्य श्रनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव श्रसंख्यातगुरो हैं। नपुंसकवेदी, कीधादि चार कषायवाले, श्रचनुदर्शनी, भव्य, श्रौर श्राहारक जीवोंका भक्त मूलोघके समान है। श्रपगतवेदी जीवोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे जघन्य-स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुरो हैं। इनसे श्रजघन्य श्रनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुरो हैं। इसी प्रकार सूक्ष्मसाम्परायिक संयत जीवोंके जानना चाहिए।

४७९. मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, श्रसंयत, तीन लेश्यावाले, अभव्य, मिथ्यादृष्टि श्रौर असंज्ञी जीवोंमें श्रपनी-अपनी सब प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है। विभङ्ग ज्ञानी जीवोंमें चार श्रायुत्रोंका भङ्ग मनोयोगी जीवोंके समान है। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव श्रसंख्यातगुरो हैं। इनसे श्रज्ञघन्य श्रनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव श्रसंख्यातगुर्णे हैं। इतनी विद्योषता है कि स्वस्थान प्रकृतिगत विशेषता जाननी चाहिए । श्रभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी श्रौर व्यविक्षामी जीवोंमें देवायु, ब्राहारकद्विक ब्रौर तीर्थङ्कर प्रकृतिका भक्क श्रोधके समान है। इ.सातावेदनीय, श्ररति, शोक, अस्थिर, श्रशुभ श्रौर श्रयशकीर्ति इनकी जघन्य स्थितिके ब धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव ग्रसंख्यातगुरो हैं। इनसे ग्रजघन्य त्रमुत्रुष्ट स्थितिके वन्धक जीव ग्रसंख्यातगुर्णे हैं। मनुष्यायुका भङ्ग सामान्य देवेंकि समान है। शेष सब प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव श्रसंख्यातगुरो हैं। इनसे श्रजघन्य श्रतुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव श्रसंख्यातगुर्णे हैं । मनःपर्ययक्षानी जीवोंमें श्रसातावेदनीय, अरति, शोक, श्रस्थिर, श्रद्धभ श्रौर श्रयशःकीर्ति इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुरो हैं। इनसे अजधन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुरो हैं। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुरो हैं। इनसे श्रजधन्य त्रपुरकृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इतनी विशेषता है कि **श्रायुका** भङ्ग मनुष्यिनियोंके समान हैं। इसी प्रकार संयत, सामायिक संयत, छेदोपस्थापना संयत श्रौर परिहारविशुद्धि संयत जीवोंके जानना चाहिए।

४=० संजदासंजदे असादावे०-अरदि-सोग-अथिर--असुभ-अजस० सन्वत्थोवा उक्त० । जह० संखेँजन० । अज०अणु० असंखेँजन० । सेसाणं सन्वत्थोवा जह० । उक्त० असंखेँ० । अज०अणु० असंखेँजन० । एवरि तित्थय० संखेँजन० । आयु० णारगभंगो । अधिदंस०--सम्मादि०--वेदगस०--उवसमसम्मा० अधिणाणिभंगो । चक्खुदं० तसपज्जत्तभंगो ।

४८१. तेऊए मणुसगिद्यंचगं सन्वत्थोवा जह०। उक्क० असंखेँज्ज०। अज० अणु० असंखेँज्ज०। सेसाणं सन्वत्थोवा जह०। उक्क० असंखेँज्ज०। अज० असंखेँज्ज०। सेसाणं सन्वत्थोवा जह०। उक्क० असंखेँज्ज०। अज०अणु० असंखेँज्ज०। एवं प्रमाए। शुक्काए वि एवं चेव।] एवरि सुक्काए मणुसगिद्यंचगं सन्वत्थोवा उक्क० द्विदिवं०। जह० द्विदि० संखेँजज०। अज० अणु० असंखेँजज०।

५८२. खइगसं० सव्वपगदीणं सव्वत्थोवा जह० | उक्क० असंखेँज्ञ० | अज० अणु० असंखेँज्ज० | एवरि दोआयु० सव्वड०भंगो | एवरि मणुसगदिपंचगं सव्वत्थोवा जह० | उक्क० संखेँज्ज० | अज०अणु० असंखेँज्ज० | सासणे सव्वपगदीणं सव्व-

४८०. संयत्तासंयत जीवों में श्रसातावेदनीय, श्ररित, शोक, श्रस्थिर, श्रगुभ श्रौर श्रयशःकीर्ति इनकी उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे जधन्य स्थितिके वन्धक जीव संख्यातगुरे हैं। इनसे श्रजधन्य श्रमुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव श्रसंख्यातगुरे हैं। शेष प्रकृतियोंकी जधन्य स्थितिके वन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव श्रसंख्यातगुरे हैं। इनसे श्रजधन्य श्रमुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव श्रसंख्यातगुरे हैं। इनसे श्रजधन्य श्रमुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव श्रसंख्यातगुरे हैं। इतनी विशेषता है कि तीर्थंकर प्रकृतिकी श्रपेशा संख्यातगुरे कहने चाहिए। श्रायु कर्मका भन्न सारिक्योंके समान है। श्रवधिदर्शनी, सम्यग्दिष्ट, वेदकसम्यग्दिष्ट श्रीर उपशमसम्यग्दिष्ट जीवोंका भन्न श्रवधिश्वानी जीवोंके समान है। चचुदर्शनी जीवोंका भन्न श्रसपर्यात जीवोंके समान है।

५८१. पीतलेश्यावाले जीवोंमें मनुष्यगति पञ्चककी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अजधन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेद आदि सस्थान प्रकृतिगत विशेषताको जानना चाहिए। इसी प्रकार पद्मलेश्यावाले जीवोंमें जानना चाहिए। इसी प्रकार शुक्ललेश्यावाले जीवोंमें भी जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि शुक्ललेश्यावाले जीवोंमें मनुष्यगति पञ्चककी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तीक हैं। इनसे जघन्य स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं।

५६२ . ज्ञायिक सम्यग्दिष्ट जीवोंमें सब प्रकृतियोंकी जधन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अजधन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीच असंख्यातगुणे हैं। इतनी विशेषता है कि दो आयुओंका भक्क सर्वार्थसिद्धिके समान है। इतनी विशेषता है कि मनुष्यगति पश्चककी जधन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे त्थोवा उक्कः । जहः असंखेँ । अजश्याणुः असंखेँ । सम्मामिः ओधिभंगो । सण्णीसु चदुत्रायुः पंचिदियभंगो । संसाणं मणुसोयं । एवं जीवश्रणावहुगं समत्तं

# द्विदिअप्पाब**हुगपरू**वणा

- ४८३. द्विदिअप्पावहुगं तिविधं--जहएणयं उक्कस्सयं जहएणुक्कस्सयं च । उक्कस्सए पगदं ! दुवि०-श्रोघे० श्रादे० । श्रोघेण सब्वपगदीणं सब्वत्थोवा उक्कस्सश्रो द्विदिवंथो । यद्विदिवंथो विसेसाथिश्रो । एवं याव श्राणाहारग ति लोदव्वं ।
- ४८४. जहरूराए पगदं । दुवि०-योघे० खादे० । खोघे० सध्वपगदीएां सन्व-त्थोवा जह० द्विदि० । यद्विदि० विसेसा० । एवं याव खणाहारम ति रादस्वं ।
- ४८४. जहरणुक्कस्सए पगदं । दुविधं--त्रोघे० द्यादे० । त्रोघे० खवगपगदीसं चदुत्रायुगासं सन्वत्थावा जहरससो हिद्विधो । यद्विदिवधो विसेसा० । उक्कसहिदि-बंधो त्रसंखेँजगरसो । यहिद्धि विसेसा० । सेसासां सन्वत्थोवा जह० । यहिद्धि० विसेसा० । उक्क०हिद्धि० संखेँजग० । यहिद्धि० विसेसा० । एवं त्रोधभंगो मसुस०३-पंचिद्धि०--तस०२-पंचमसा०--पंचवचि०--कायजोगि--त्रोसलियका०--इत्थि०-सबुदं०-भवसि०-ससिस-त्रसाहारस ति ।

अजयन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुर्णे हैं। सासादनसम्यदृष्टि जीवोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे जयन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे जयन्य स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अजयन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंका भङ्ग अवधिक्वानी जीवोंके समान है। संज्ञी जीवोंमें चार आयुओंका भङ्ग पञ्चेन्द्रियोंके समान है। तथा शेष प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य मनुष्योंके समान है। इस प्रकार जीव अल्पवहुत्व समाप्त हुआ।

# स्थिति अल्पबहुत्वप्ररूपणा

४८३. स्थिति श्रह्पबहुत्य तीन प्रकारका है — जघन्य, उत्कृष्ट श्रीर जघन्योत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । उसकी श्रपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है-श्रीघ श्रीर श्रादेश । श्रीघसे सब प्रकृतियोंका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थित बन्ध विशेष श्रिधिक है । इसी प्रकार श्रनाहारक मार्गणा तक कथन करना चाहिए ।

४८४. जघन्यका प्रकर्ण है। उसकी अपेत्रा निर्देश दो प्रकारका है--श्रोघ श्रीर श्रादेश। श्रोघसे सब प्रकृतियोंका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थिति-बन्ध विशेष श्रिधिक है। इसी प्रकार श्रनाहारक गार्गणा तक कथन करना चाहिए।

४८४. जघन्योत्हष्टका प्रकरण है। उसकी ग्रपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—-ग्रोघ ग्रीर आदेश। ग्रीघसे चपक प्रकृतियों ग्रीर चार ग्रायुग्रोंका जघन्य स्थितवन्ध सवसे स्तोक है। इससे यित्यति वन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे उत्कृष्ट स्थितिवन्ध ग्रसंख्यातगुण है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। शेष प्रकृतियोंका जघन्य स्थितवन्ध सवसे स्तोक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे उत्कृष्ट स्थितवन्ध संख्यातगुण है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे उत्कृष्ट स्थितवन्ध संख्यातगुण है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे प्रकार ग्रीविक समान मनुष्यिक पञ्चित्रियहिक, त्रसिक्क, पाँच मनोयोगी, पाँच वचनयोगी, काययोगी, ग्रीदारिक काययोगी, स्रीवेदी, नपुंसकवेदी, कोधादि चार कपायवाले, चचुदर्शनी, ग्रचचुदर्शनी, भव्य, संज्ञी ग्रीर ग्रनाहारक जीवोंके जानना चाहिए।

५८६. ऐरइएसु सब्वपगदीणं सब्बत्थोवा जह० । यद्विदि० विसे० । उक्क० ऋसंखेंज्ज० । यद्विदि० विसे० । एस भंगो सब्विएरय-सब्बदेवाएां ख्रोरालियमि०-वेउब्विय०--वेउब्वियमि०--ब्राहार०--ब्राहारमि ०---कम्भइ०---परिहार०--संजदासंजद्-वेदगसं०-सम्मामि० ।

५८७. तिरिक्खेमु चरुत्रायु० सन्वत्थोत्रा जह० हिदि० । यहिदि० विसे० । उक्क० असंखेँज्ञ० । यहिदि० विसे० । सेसाएं सन्वकम्माएं सन्वत्थोवा जह०हिदि० । यहिदि० विसे० । उक्क०हिदि० संखेँज्ञ० । यहिदि० विसे० । एवं तिरिक्खोयं पंचिदियतिरिक्ख०३-मदि०-मुद०-असंज०-तिएिएखे०-अन्भवसि०-मिन्छादिहि ति । पंचिदियतिरिक्खअपज्जत्त० शिर्यभंगो । एवं भशुसअपज्जत्त-पंचिदि०-तसअपज्ज० ।

४ ८८. एइंदिएस दोब्रायु० णिरयोघं । सेसाएं सन्वत्थोवा जह०हिदि० । यहिदि० विसे० । उक्क०हिदि० विसे० । यहिदि० विसे० । एस भंगो सन्वएइंदियाएं सन्वविग्नालिदियाणं पंचकायाणं च ।

४८६. अवगद्वे॰ सादा०-जस॰-उचा० सन्वत्थोवा जह॰हिदि॰। यहिदि॰ विसे०। उक्क॰हिदि॰ असंखेँजा०। यहिदि॰ विसे०। सेसाएं सन्वत्थोवा जह०

५८६. नारिकयोंमें सब प्रकृतियोंका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है । इससे यित्स्थितिबन्ध श्रिसंख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। यह भङ्ग सब नारकी, सब देव, श्रीदारिकिमधिकाययोगी, वैकियिककाययोगी, श्रीहारकिमधिकाययोगी, श्राहारककाययोगी, श्रीहारकिमधिकाययोगी, कार्मणकाययोगी, परिहारिवशिद्धसंयत, संयतासंयत, वेदकसम्यद्दि श्रीर सम्यग्मिथ्यादिष्ट जीवोंके जानना चाहिए।

४८७. तिर्यञ्जों मं चार श्रायुश्रोंका ज्ञचन्य स्थितिबन्ध सवसे स्तोक है। इससे यहिस्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे उत्हाट्ट स्थितिबन्ध श्रसंख्यातगुणा है। इससे यहिस्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। शेष सब कमींका ज्ञघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यहिस्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे उत्हाट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यहिस्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे प्रकार सामान्य तिर्यञ्जोंके समान पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्जिक, मत्यक्षानी, श्रुताज्ञानी, श्रसंयत, तीन लेश्यावाले, श्रभव्य श्रीर मिथ्यादिट जीवोंके ज्ञानना चाहिए। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च श्रपर्यातकोंमें नारिकयोंके समान भक्न है। इसी प्रकार मनुष्य श्रपर्यात, पञ्चेन्द्रिय श्रपर्यात श्रीर त्रस श्रपर्यात जीवोंके ज्ञानना चाहिए।

४६८. एकेन्द्रियोंमें दो आयुर्श्रोका भङ्ग नारिकयोंके समान है। शेप प्रकृतियोंका ज्ञान्य स्थितिवन्ध सबसे स्तोक है। इससे उत्कृष्ट स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे उत्कृष्ट स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यिस्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। यह भङ्ग सब एकेन्द्रिय, सब विक्लेन्द्रिय और पाँच स्थावरकायिक जीवोंके जानना चाहिए।

४८९. ग्रपगतवेदी जीवोंमं सातावेदनीय, यशःकीर्ति ग्रौर उच्चगोत्र इनका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे उत्ग्रप्ट स्थितिबन्ध ग्रसंख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष ग्रधिक है। शेष प्रकृतियोंका हिदि० । यहिदि० विसे० । उक्क० संखेँजन० । यहिदि० विसे० । एवं सुहुमसंप० । खबरि सब्बाएां संखेँजजगुरां कादब्वं ।

- ५६१. तेउ-पम्माए देवगदिभंगो । सासणे तिरिक्खोघं । श्रसण्लि॰ णिरय-देवायूणं सन्वत्थोवा जह॰ द्विदि० । यद्विदि० विसे० । उक्क० द्विदि० श्रसंखेँज ० । यद्विदि० विसे० । सेसाणं तिरिक्खोघं । एवि तिरिक्ख-मणुसायु० मणुसत्र्यपञ्जत्त-भंगो । वेउन्वियञ्चकं सन्वत्थोवा जह० द्विदि० । यद्विदि० विसे० । उक्क० द्विदि० विसे० । यद्विदि० विसे० । एवं द्विदिश्रण्या बहुगं समत्तं ।

# भृयो द्विदिऋप्पाबहुगपरूवगा

५६२. भूयो हिदिश्रपावहुगं दुविधं--सत्थाणहिदिश्रपावहुगं चेव परस्थाणहिदि-श्रपाबहुगं चेव । सत्थाणहिदिश्रपावहुगं दुविधं--जहरूणयं उक्कस्सयं च । उक्कस्सए पगदं । दुवि०--श्रोघे० श्रादे० । श्रोघे० पंचणा०-णवदंसणा०-वरूण४-श्रगु० ४-तस-थावर-श्रादाउज्जो०-णिमि०-तित्थय०--पंचंत० सन्वत्थोवा उक्क०हिदि० । यहिदि०

जधन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे उत्कृप्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्थितबन्ध विशेष अधिक है। इसी प्रकार सूक्ष्मसाम्परायिक संयत जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि सब प्रकृतियोंका संख्यातगुणा करना चाहिए।

४९०. श्राभिनिवोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी श्रौर श्रवधिज्ञानी जीवोंमें स्पक प्रकृतियोंका भङ्ग श्रोधके समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है। यह भङ्ग मनः-पर्ययज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापनासंयत, अवधिदर्शनी, श्रुक्ललेश्यावाले, सम्यग्दिष्ट, सायिकसम्यग्दिष्ट श्रौर उपशमसम्यग्दिष्ट जीवोंके जानना चाहिए।

५६१. पीत और पद्मलेश्यावाले जोवोंमें देवगतिके समान भद्ग है। सासादन सम्यग्दिए जीवोंमें सामान्य तिर्यञ्चोंके समान भद्ग है। असंज्ञी जीवोंमें नरकायु और देवायुका जवन्य स्थितिवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे उत्कृष्ट स्थितिवन्ध असंख्यातगुणा है। इससे यित्थितवन्ध विशेष अधिक है। शेष प्रकृतियोंका भद्ग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है। इतनी विशेषता है कि तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुका भद्ग मनुष्य अपर्यातकोंके समान है। वैकियिक छहका जवन्य स्थितवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे उत्कृष्ट स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्थितवन्ध हिश्रा।

# भूय: स्थिति ऋल्पबहुत्वप्ररूपणा

४९२. भूयः स्थितिग्रल्पवहुत्व दो प्रकारका है—स्वस्थान स्थितिग्रल्पवहुत्व श्रौर परस्थान स्थितिग्रल्पबहुत्व। स्वस्थान स्थितिग्रल्पबहुत्व दो प्रकारका है—ज्ञधन्य श्रौर उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है। उसकी ग्रुपेता निर्देश दो प्रकारका है—ग्रोघ श्रौर श्रादेश। ग्रोघसे पीँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, वर्णचतुष्क, त्रमुरलपुचतुष्क, त्रस, स्थावर, ग्रातप, उद्योत, निर्माण, तीर्थक्वर श्रौर पाँच ग्रन्तराय इनका उत्कृष्ट स्थिति-वन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष श्रीधक है। सातावेदनीयका उत्कृष्ट

विसे० | सादावे॰ सन्वत्थोवा उक्क०हिदि० | यहिदि॰ विसे॰ | असादावे० उक्क० हिदि॰ विसे० | यहिदि॰ विसे० | सन्वत्थोवा पुरिस०--इस्स-रदीणं उक्क०हिदि० | यहिदि० विसे० | इत्थि॰ उक्क०हिदि० विसे० | यहिदि० विसे० | एवुंस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं॰ उक्क०हिदि० विसे० | यहिदि० विसे० | सोलसक० उक्क०हिदि० विसे० | यहिदि० विसे० | [ यद्विदि० विसे॰ |]

४६३. सन्वत्थोवा तिरिक्ल-मणुसायु० उक्क॰हिदि०। यहिदि॰ विसे०। णिरय-देवायु० उक्क०हिदि० संखेँजगगु०। यहिदि० विसे०।

५६४. सन्वत्थोवा देवगदि० उक्क० हिदि०। यहिदि० विसे०। मणुसग० उक्क० हिदि० विसे०। यहिदि० विसे०। णिरय-तिरिक्खगदि० उक्क० हिदि० [ विसे०] यहिदि० विसे०। सन्वत्थोवा तिरिण्जादीणं उक्क० हिदि०। यहिदि० विसे०। एइंदि०-पंचिदि० उक्क० हिदि० विसे०। यहिदि० विसे०। सन्वत्थोवा आहार० उक्क० हिदि०। यहिदि० विसे०। चदुएणं सरीराणं उक्क० हिदि० संसेठ ज०। यहिदि० विसे०। सन्वत्थोवा समचदुर० उक्क० हिदि०। यहिदि० विसे०। एग्गोद० उक्क०

स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे असाता-वेदनीयका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। पुरुषयेद, हास्य श्रीर रित इनका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे खीवेदका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे नपुंसकवेद, श्ररित, शोक, भय श्रीर जुगुप्सा इनका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे सोलह कषायोंका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे मिथ्यात्वका उत्कृष्ट स्थितबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष विशेष श्रधिक है।

५६३. तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विरोष अधिक है। इससे नरकायु और देवायुका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यात-गुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है।

५९४. देवगतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे मनुष्यगतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे मनुष्यगतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे मतुष्यगतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे एकेन्द्रिय जाति और पञ्चेन्द्रिय जातिका उत्कृष्ट स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। अहारक शरीरका स्थितबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे चार शरीरका स्थितबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थिबन्ध विशेष अधिक है। इससे चार शरीरका उत्कृष्ट स्थिति बन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। समच तुरस्र संस्थानका उत्कृष्ट स्थितबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष अधिक है।

डिदि० विसे०। यहिदि० विसे०। सादि० उक्क०हिदि० विसे०। यहिदि० विसे०। स्वुज्ज० उ०हिदि० विसे०। यहिदि० विसे०। वामण० उक्क०हिदि० विसे०। यहिदि० विसे०। कुंड० उक्क०हिदि० विसे०। यहिदि० विसे०। सन्वत्थोवा आहार० अंगो० उक्क०हिदि०। यहिदि० विसे०। दोएणं अंगो० उक्क०हिदि० संसेंजज०। यहिदि० विसे०।

५६५. जहा संठाँणाणं तहा संघडणाणं। जहा गदीणं तहा आणुपुन्तीणं। सन्वत्थोवा पसत्थ० उक्क०हिदि०। यहिदि० विसे०। अप्पसत्थ० उक्क०हिदि० विसे०। यहिदि० विसे०। विसे०। सन्वत्थोवा सुहुम-अपज्जत्त-साधारणाणं उक्क०हिदि०। यहिदि० विसे०। वादर-पज्जत्त-पत्तेय० उक्क०हिदि० विसे०। यहिदि० विसे०। सन्वत्थोवा थिरादिळ०- उच्चा० उक्क०हिदि०। यहिदि० विसे०। अथिरादिळ०-णीचा० उक्क०हिदि० विसे०। यहिदि० विसे०। न्यं अधिरादिळ०-णीचा० उक्क०हिदि० विसे०। यहिदि० विसे०। यहिदि०-तस०२-पंचमण०-पंचवि०-कायजोगि-पुरिसवे०-कोधादि०४-चक्खु०-अचक्खु०-भवसि०-सणिण-आहारण् ति ।

इससे यत्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे स्वातिसंस्थानका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यस्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यस्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे वामन संस्थानका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे वामन संस्थानका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे हुण्ड संस्थानका उत्कृष्ट स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे हुण्ड संस्थानका उत्कृष्ट स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। श्राहारक श्राङ्गोपाङ्गका उत्कृष्ट स्थितवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है।

४९४. पहले जिस प्रकार संस्थानोंका श्रह्मचहुत्व कह श्राए हैं, उसी प्रकार संहतनोंका कहना चाहिए। तथा जिस प्रकार गतियोंका कह आये हैं उसी प्रकार शानुपूर्वियोंका कहना चाहिए। प्रशस्त विहायोगितिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्धितबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे श्रिप्रास्त विहायोगितिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे स्तोक है। इससे यित्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे स्तोक है। इससे यित्थितबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे प्रकार श्रोधक समान पञ्चित्द्रयिक, त्रसिक्क, पाँच मनोयोगी, पाँच वचनयोगी, काययोगी, पुरुषवेदी, कोधादि चार कपायवाले, चचुदर्शनी, श्रचचुदर्शनी, भव्य, संबो श्रीर श्राहारक जीवोंके जानना चाहिए।

४९६. श्रादेशसे नारिकयोंमें पाँच झानावरण, नी दर्शनावरण, दो श्रायु, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रीदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क,

पंचंत० सन्त्रत्थोवा उक्क०डिदि० । यदिदि० विसे० । सेसाखं श्रोघं । एवं सन्त्र-िष्पर्याणं । स्वारं सत्तमाएं सन्वत्थोवा मणुसग०-मणुसाणु०-उज्जो० उक्क०डिदि० । यद्विदि० विसे० । तिरिक्खगदि--तिरिक्खाणु०--सीचा० उक्क० संखेज्ज० । यद्विदि० विसे० ।

५६७. तिरिक्खेसु खोर्च । एवरि सब्बत्थोवा तिरिक्ख-मणुसायुक उक्षक हिदिक । यहिदिक विसेठ । देवायुक उक्षक हिदिक संखेड जठ । यहिदिक विसेठ । एएस्यायुक उक्षक हिदिक संखेड जठ । यहिदिक विसेठ । एएस्यायुक उक्षक हिदिक विसेठ । यहिदिक विसेठ । सण्यमिदिक उक्षक हिदिक विसेठ । मणुसमिदिक उक्षक हिदिक विसेठ । यहिदिक विसेठ । एएस्यगदिक उक्षक हिदिक विसेठ । यहिदिक विसेठ । यहिदिक विसेठ ।

४६=. सन्वत्थोवा चदुएएएां जादीएां उक्त ० द्विदि०। यद्विदि० विसे०। पंचिदि० उक्क ० द्विदि० विसे०। यद्विदि० विसे०। सन्वत्थोवा त्र्योरालिय० उक्क ० द्विदि०। यद्विदि० विसे०। तिएएए सरीराएं उक्क ० द्विदि० विसे०। यद्विदि० विसे०।

५६६. संटाएां ऋोवं । सन्वत्थावा ऋोरालि०ऋंगो० उक्त०दिदि० । यदिदि०

अगुरुलघु चतुष्क, उद्योत, बस चतुष्क, निर्माण, तीर्थद्वर श्रीर पाँच अन्तराय इनका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। शेष प्रकृतियोंका मङ्ग श्रीधके समान है। इसी प्रकार सब नारिकयोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि सातवीं पृथ्वीमें मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुषूर्वी और उद्योतका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुष्वी श्रीर नीचगोत्रका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है।

४९७. तिर्पञ्चों में श्रोघके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि तिर्पञ्चायु श्रीर मनुष्पायुका उत्हर स्थितिवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे वत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष श्रधिक है।

४९०, चार जातियोंका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष ग्रिथिक है। इससे पञ्चेन्द्रिय जातिका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध विशेष श्रिथिक है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष श्रिथिक है। श्रीदारिक श्रिशेरका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिवन्ध सबसे स्तोक है। इससे वीन श्रीशंका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध विशेष श्रिथिक है। इससे वीन श्रीशंका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध विशेष श्रिथिक है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष श्रिथिक है।

४९९. संस्थानीका भङ्ग श्रीयके समान है । श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्गका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यहिस्थितिबन्ध विशेष श्रीधक है । इससे वैकियिक श्राङ्गोपाङ्गका विसे०। वेउन्विय•अंगो॰ उक्क०हिदि० विसे०। यहिदि० विसे०। सन्बत्थोवा वज्जरिस० उक्क०हिदि०। यहिदि॰ विसे०। वज्जणा० उक्क०हिदि॰ विसे०। यहिदि॰ विसे०। णारायण्॰ उक्क०हिदि॰ विसे०। यहिदि० विसे०। अद्भूणा० उ॰हि॰ विसे०। यहिदि० विसे०। खीलिय०-असंपत्त० उक्क०हि॰ विसे०। यहिदि॰ विसे०। यथा गदि० तथा आणुपुन्वि०।

६००. सन्वत्थोवा थावरादि०४ उक्क०हिदि० । यहिदि० विसे० । तपडि-पक्लाणं उक्क०हिदि० विसे० । यहिदि० विसे० । एवं पंचिदय-तिरिक्त०३ । पंचिदियतिरिक्तअपज्जत्तगेसु पंचणा०-णवदंसणा०-अोरालि०-तेजा०-क०-ओरालि० अंगो०--वणण०४-असु०४--आदाउज्जो०--णिभ०--पंचंत० सन्वत्थोवा उक्क०हिदि० । यहिदि० विसे० । इत्थि० यहिदि० विसे० । इत्थि० उक्क०हिदि० । यहिदि० विसे० । यहिद० विसे० । यहिदि० विसे० । यहिदि० विसे० । यहिदि० विसे० । यहिद० विस

उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। वज्रष्म नाराचसंहननका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे वज्रनाराच संहननका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे नाराचसंहननका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे कोलकसंहनन श्रीर श्रसम्प्राप्तास्य पाटिका संहननका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे कोलकसंहनन श्रीर श्रसम्प्राप्तास्य पाटिका संहननका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यात्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यात्स्थिक है। इससे यात्सिक है। इससे

६००. स्थावर श्रादि चारका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे इनकी प्रतिपत्त प्रकृतियोंका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इसी प्रकार पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्च त्रिकके जानना चाहिए। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च श्रपातकोंमें पांच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण्यरीर, श्रौदारिक श्राङ्गोपङ्ग, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलधु चतुष्क, श्रातप, उद्योत, निर्माण् श्रौर पाँच श्रन्तराय इनका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे स्त्रोवदका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध सबसे स्त्रोक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे ह्रास्य श्रीर रिक्ता उत्कृष्ट स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे विशेष श्रधिक है। इससे नपुंस्कचेद, श्ररित, श्रोक, भय श्रौर जुगुण्सा इनका उत्कृष्ट स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे वित्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। दो श्रायुश्रौका भङ्ग नारिकरोंके समान है।

- ६०१. सन्वत्थोवा मणुसग० उक्त० हिदि०। यहिदि० विसे०। तिरिक्खग० उक्त० हिदि० विसे०। यहिदि० विसे०। एवं आणुपु०। सन्वत्थोवा पंचिदि० उक्त० हिदि०। यहिदि० विसे०। चतुरिं० उक्त० हिदि० विसे०। यहिदि० विसे०। तीइंदि० उक्त० हिदि० विसे०। यहिदि० विसे०। यहिद० विसे०। यहिद० विसे०। यहिद० विसे०। यहिद० विसे०।
- ६०२. सन्वत्थोवा तस०४ उक्त०द्विदि० । यहि० विसे० । तप्प**डिपक्**लाएं उ०डि० विसे० । यहि० विसे० । सेसाएं णिरयभंगो ।
- ६०३. भणुसेसु णिरयभंगो । णवरि आयु० ओघं । सन्वत्थोवा आहार० उ० हि० । यहि० विसे० । ओरालि० उ०द्घि० संखें ज्ञ० । यहि० विसे० । वेउन्वि०-तेजा०-क० उ०हि० विसे० । यहि० विसे० । सन्वत्थोवा आहार०अंगो० उ०हि० । यहि० विसे० । यहि० विसे० । वेउन्वि० अंगो० उ०हि० विसे० । वेउन्वि० अंगो० उ०हि० विसे० । यहि० विसे० । मणुसअपज्ञत्त० पंचिदिय तिरिक्तअपज्ञत्त-भंगो ।

६०२. त्रसचतुर्कंका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष ऋधिक है। इससे इनको प्रतिपद्म प्रकृतियोंका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष ऋधिक है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष ऋधिक है। शेष प्रकृतियोंका मक्न नारकियोंके समान है।

६०३. मनुष्यों में नारिकयों के समान भक्त है। इतनी विशेषता है कि आयुर्ग्नों का भक्त को घके समान है। श्राहारकद्विकका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे श्रीदारिक श्ररीरका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यतागुणा है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे वैक्रियिक श्ररीर, तैजस श्ररीर श्रीर कार्मण श्ररीरका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष श्रधिक है। श्राहारक श्राह्मोणक्तका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष श्रधिक है। मनुष्य श्रपर्याप्तकोंका भक्त पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च श्रपर्याप्तकोंके समान है।

६०१. मनुष्यगितका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यितस्थितिबन्ध विशेष श्रिषिक है। इससे तिर्यञ्चगितका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष श्रिषिक है। इससे यितस्थितिबन्ध विशेष श्रिषिक है। इससे यितस्थितिबन्ध विशेष श्रिषिक है। इससे प्रकार श्रानुपूर्वियोंकी मुख्यतासे श्रव्यबहुत्व जानना चाहिए। पञ्चेन्द्रिय जातिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यितस्थितिबन्ध विशेष श्रिषिक है। इससे यितस्थितिबन्ध विशेष श्रिषिक है। इससे यितस्थितिबन्ध विशेष श्रिषक है।

६०४. देवाणं िएरयभंगो । एवरि भवण ॰ वाणवेंत० - जोदिसिय० - सोधम्भी-साणं सन्वत्थोवा पंचिदि० उ० हि॰ । यहि० विसे॰ । एइंदि० उ० हि॰ विसे॰ । यहि० विसे॰ । एवं तस-थावर० । संघडणाणं तिरिक्खोघं । आएद याव एवगेवज्ञा ति सन्वत्थोवा पुरिस० - इस्स-रिद० उ० हि॰ । यहि० विसे॰ । इत्थि० उ॰ हि० विसे॰ । यहि० विसे॰ । हि० विसे॰ । यहि० विसे॰ । इस्स-रिद० उक्क॰ हि॰ । यहि० विसे॰ । पुरिस० - अपदि-सोग-भय-दुगुं० - उ० हि० विसे॰ । यहि० विसे॰ ।

६०५. एइंदि०-विगलिंदि०-पंचिदिय-तसञ्चपज्ञ०--पंचकायाणं च पंचिदिय-तिरिक्खञ्चपज्जत्तभंगो । ञ्रोरालियका० मणुसभंगो । ञ्रोरालियमि० सन्वत्थोवा देव-गदि॰ उ०द्दि० । यद्दि० विसे० । मणुसग॰ उक्क॰हि० संखेज्ज० । यद्दि० विसे०।

६०४, देवोंका भक्क नारकियोंके समान है। इतनी विशेषता है कि भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिकी श्रीर सौधर्म पेशान कल्पवासी देवोंमें पञ्चेन्द्रिय जातिका उत्कृष्ट स्थिति-बन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे एकेन्द्रिय जातिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्रिथति विशेष अधिक है । इसी प्रकार त्रस श्रौर स्थावर प्रकृतियोंका जानना चाहिए। संहननोंका भङ्ग सामान्य तिर्यञ्जोंके समान है। श्रानत कल्पसे लेकर नवग्रैवेयक तकके देवोंमें पुरुषवेद, हास्य श्रौर रतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे स्रीवेदका उत्कृष्ट स्थिति-बन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे नपुंसकवेद, श्ररति-शोक, भय श्रीर जुगुप्साका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे सोलह कपायका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे मिथ्यात्वका उत्कृप्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। श्रमुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें हास्य श्रीर रतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पुरुषचेद, अरति, शोक, भय श्रीर जुगुप्साका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितवन्थ विशेष अधिक है। इससे बारह कपायका उत्कृष्ट स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष अधिक है।

६०५. एकेन्द्रिय, विकलेन्द्रिय, एञ्चेन्द्रिय अपर्याप्त, जसअपर्याप्त और पाँच स्थावर कायिक जीवोंका भक्न पञ्चेन्द्रिय तिर्थञ्च अपर्याप्तकोंके समान है। औदारिककाययोगी जीवोंका भक्न मनुष्योंके समान है। औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें देवगतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे मनुष्यगितका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे विर्यञ्जगितका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे विर्यञ्जगितका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे विर्यञ्जगितका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक

तिरिक्खग० उक्क०डि० विसे० | यहि० विसे० | सेसाएां श्रपज्जत्तभंगो | वेउब्वियका० देवोघं | एवं वेउब्वियमि० |

६०६. आहार०-आहारिम० सन्वत्थोवा पंचणोक० उ०िह०। यहि० विसे०। चदुसंज० उ०िह० विसे०। यहि० विसे०। सन्वत्थोवा थिर-सुभ-जसिम० उ०िह०। यहि० विसे०। तप्पडिपक्खाणं उ०िह० विसे०। यहि० विसे०।

६०७. कम्मइग० पंचणा०--णवदंसणा०--वरणा०४-अगु०४-आदाउज्जो०--तस-थावरादि४युगल-णिमि०--तित्थय०--पंचंत० सन्बत्थोवा उ०द्वि०। यद्वि० विसे०। सन्वत्थोवा चदुरिं० उ०द्वि०। यद्वि० विसे०। तीइंदि० उ०द्वि० विसे०। यद्वि० विसे०। बेइंदि० उ०द्वि० विसे०। यद्वि० विसे०। एइंदि०--पंचिदि० उ०द्वि० विसे०। यद्वि० विसे०। सेसाणं ओयं। यावरि गदी ओरालियमिस्समंगो।

५०८. इत्थिवेदे देवोघं । एवरि आहार॰ उ॰डि० थोवा । यदि॰ विसे॰ । चदुएएां सरीराएां उ०डि० संखेंज्जगु०। यडि० विसे० | सन्वत्थोवा आहार० श्रंगो॰ उ॰डि॰ । यडि॰ विसे० | श्रोरालि०श्रंगो० उ०डि॰ संखेंज्ज० | यडि० विसे॰ ।

है । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग श्रपर्यातकोंके समान है । वैकिथिककाययोगी जीवोंका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है । इसी प्रकार वैकिथिकमिश्रकाययोगी जीवोंके जानना चाहिए !

६०६. आहारककाययोगी और आहारकिमश्रकाययोगी जीवोंमें पाँच नोकषायोंका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे चार सम्जवलनोंका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। स्थिर, शुभ और यशःकीर्तिका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे प्रतिवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है।

६०७. कार्मण्काययोगी जीवोंमें पाँच शानावरण, नो दर्शनावरण, वर्णचतुष्क, श्रमुकल्च चुचतुष्क, श्रातप, उद्योत, त्रस श्रीर स्थावर श्रादि चार युगल, निर्माण, तीर्थे इर श्रीर
पाँच श्रन्तराय इनका उत्हर्ष्ट स्थितिवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष
श्रिथिक है। चतुरिन्द्रिय जातिका उत्हर्ष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितिवन्ध
विशेष श्रीधिक है। इससे जीन्द्रिय जातिका उत्हर्ष्ट स्थितिबन्ध विशेष श्रीधिक है। इससे
यित्स्थितिवन्ध विशेष श्रीधिक है। इससे द्वीन्द्रिय जातिका उत्हर्ष्ट स्थितिबन्ध विशेष श्रीधक
है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष श्रीधक है। इससे एकेन्द्रिय श्रीर पञ्चेन्द्रिय जातिका
उत्हर्ष्ट स्थितिबन्ध विशेष ग्रीधिक है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष श्रीधक है। शेष प्रहातियोंका भङ्ग श्रीघके समान है। इतनी विशेषता है कि गतियोंका भङ्ग श्रीदारिकिमिश्रकाययोगी जीवोंके समान है।

६०८. स्त्रीवेदो जीवोंमें सामान्य देवोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि श्राहा-रक शरीरका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे चार शरीरोंका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुर्गा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। श्राहारक श्राङ्गोपाङ्गका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्गका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुर्गा है। इससे वेउब्बि०ऋंगो॰ उ०द्वि॰ विसे०। यद्वि० विसे०। संघडणं देवोघं। एविरि स्वीलिय॰-ऋसंपत्त० दोएएं उ॰टि॰ विसे०।

६०६. एाबु'सगे झोतं। एाविर सञ्बत्थोवा चढुझायु-जादी उ०डि०। यडि० विसे०। पंचिदि० उक्त०डि० विसे०। यडि० विसे०। सञ्बत्थोवा थावरादि०४-उ०डि०। यडि० विसे०। तस०४ उ०डि० विसे०। यडि० विसे०। अवगद्वेदे सब्बाएां सब्बत्थोवा उ०डि०। यडि० विसे०।

६१०. मदि - सुद्द - विभंग = श्रोघं । श्राभि - सुद्द - श्रोधि ॰ सन्वत्थोवा सादा ॰ उ० हि० । यहि० विसे० । श्रमादा ० उ० हि० संखे ज्ञागु ० । यहि० विसे० । एवं परियत्तमाणीणं । संसाणं सन्वत्थोवा उ० हि० । यहि० विसे० । एवरि मोह० सन्वत्थोवा इस्त-रिद्द ० उ० हि० । यहि० विसे० । पंचणोक ० उ० हि० विसे० । यहि विसे० । वार्सक ० उ० हि० विसे० । यहि० विसे० । सन्वत्थोवा मणुसायु ० उ० हि० । यहि० विसे० । देवायु ० उ० हि० श्रमंखे ज्ञा । यहि० विसे० । मणुसायु ० उ० हि० । यहि० विसे० । मणुसायु ० उ० हि० । यहि० विसे० । देवायु ० उ० हि० श्रमंखे ज्ञा । यहि० विसे० । मणुपायु ० उ० हि० । यहि० विसे० ।

यितस्थितवन्य विशेष अधिक है। इससे वैकिथिक आङ्गोषाङ्गका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यितस्थितिवन्ध विशेष अधिक है। संहतनोंका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि कीलक संहतन और असम्प्राप्तास्र्याटिका संहतन इन दोनोंका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध विशेष अधिक है।

६०९. नपुंसकवेदी जीवोंमें श्रोघके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि चार आयुओं और चार जातियोंका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे पञ्चेन्द्रिय जातिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष श्रधिक है। स्थावर श्रादि चारका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे उत्कृष्ट स्थितबन्ध विशेष श्रधिक है। श्रपगतवेदी जीवोंमें सब प्रकृतियोंका उत्कृष्ट स्थितवन्ध सबसे स्तोक है इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है।

६१०. मत्यज्ञानी, श्रुताङ्गानी श्रीर विभङ्गङ्गानी जीवोंमें श्रोघके समान भङ्ग है। श्राभिनिविधिकञ्जानी, श्रुतज्ञानी, श्रीर श्रवधिज्ञानी जीवोंमें साता प्रकृतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे श्राता वेदनीयका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यिस्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इसी प्रकार परावर्तमान प्रकृतियोंका जानना चाहिए। शेष प्रकृतियोंका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे पित्स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे पित्स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रीधिक है। इससे पित्स्थितिबन्ध विशेष श्रीधिक है। इससे पाँच नोक्ष्यायोंका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे विशेष श्रीधिक है। इससे विशेष श्रीधिक है। इससे विशेष श्रीधिक है। इससे विशेष श्रीधिक है। इससे विश्वित्वन्ध विशेष श्रीधक है। इससे विश्वित्वन्ध विशेष विशेष

सम्मादि ० खइग ० -वेट्ग ० - उवसम ० - सासण ० - सम्मामि० आभिणिबोधि० भंगो । णवरि एट्सिं मग्गणाणं अपपणणो पनदीत्रो णाद्श अप्यावहुगं साधेदन्वाश्रो ।

- ६११. सासग्रे सन्वत्थोवा तिरिक्ख-मग्रुसायु॰ उ॰डि॰। यडि॰ विसे॰। देवायु॰ उ०ड्डि॰ संखेज्ज॰। यडि॰ विसे॰। श्रसंज॰--श्रब्भवसि०--मिच्छादि॰ मदि०भंगो।
- ६१२. किएणले॰ एयुंसगभंगो०। एति-काऊएं सन्वत्थोवा देवगदि० उ० हि॰। यहि॰ विसे॰। एत्यग॰ उ०हि॰ विसे॰। यहि॰ विसे॰। मणुसग॰ उ० हि॰ संखेळा०। यहि॰ विसे॰। तिरिक्खग० उ०हि॰ विसे॰। यहि॰ विसे॰। सन्वत्थोवा चढुजादि॰ उ॰हि॰। यहि॰ विसे०। पंचिंदि॰ उ०हि॰ संखेळागु०। [यहि॰ विसे०।] सेसाएं खोदं।
- ह१३. तेउ० सोधम्मभंगो । एविर सब्बत्थोवा आहार० उ०डि० । यडि० विसे० । वेउब्वि० उ०डि० संखेजागु० । यडि० विसे० । ओराखि०-तेजा०-क० उक्क०डि० संखेजागु० । यडि० विसे० । सब्बत्थोवा देवगदि० उ०डि० । यडि०

श्रधिक है। मनःपर्यपद्यानी, संयत, साम्रायिकसंयत, छेदोपस्थापनासंयत, परिहार विद्युद्धि संयत, संयतासंयत, श्रवधिदर्शनी, श्रुक्कलेश्यावाले, सम्यग्दिष्ट, लायिकसम्यग्दिष्ट, वेदकसम्यग्दिष्ट, उपश्रमसम्यग्दिष्ट, सासादनसम्यग्दिष्ट श्रीर सम्यग्मिश्यादिष्ट जीवोंमें श्राभिनिवोधिकहानी जीवोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि इन मार्गणाश्रोमें श्रपनी श्रपनी प्रकृतियोंको जानकर श्रव्यवद्धत्व साध लेना चाहिए।

६११. सासादनसम्यग्दिए जीवोंमें तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे देवायुका उत्कृष्ट स्थिति-बन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। श्रसंयतसम्यग्दिए, श्रभव्य श्रीर मिथ्यादिए जीवोंका भक्त मत्यक्षानी जीवोंके समान है।

६१२. कृष्णुलेश्यावाले जीवोंमें नपुंसकवेदी जीवोंके समान मङ्ग है। नील और कापोत लेश्यावाले जीवोंमें देवगतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्धितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्धितवन्ध विशेष अधिक है। इससे मनुष्यगतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्धितवन्ध विशेष अधिक है। इससे मनुष्यगतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातन्तुणा है। इससे यित्धितवन्ध विशेष अधिक है। इससे तिर्यञ्चगतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्धितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्धितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्धितवन्ध विशेष अधिक है। इससे पञ्चेन्द्रिय जातिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्धितवन्ध विशेष अधिक है। इससे पञ्चेन्द्रिय जातिका उत्कृष्ट स्थितबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्धितवन्ध विशेष अधिक है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है।

६१३. पीतलेश्यावाले जोवोंमें सौधर्म कल्पके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है। कि आहारक शरीरका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे वैकियिक शरीरका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे औदारिक शरीर, तैजस शरीर और कार्मण शरीरका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। देवगतिका उत्कृष्ट

विसे । मणुसगदि ० उ० दि० संखें ज्ञा । यदि ० विसे ० । तिरिक्ख ग० उ० दि ० विसे ० । यदि ० विसे ० । एवं तिष्णित्राणु० । एवं पम्माए वि । एवरि सहस्सारभंगो ।

६१४. असएणीसु सन्वत्थोवा तिरिक्ख-मणुसायु॰ उ०हि०। यहि० विसे०। देवायु॰ उ०हि॰ असंखे॰। यहि० विसे०। णिरयायु॰ उ०हि० असंखे॰। [यहि० विसे०।] सन्वत्थोवा देवगदि॰ उ०हि०। यहि० विसे०। मणुसग० उ॰ हि॰ विसे॰। यहिदि० विसे०। तिरिक्खग॰ उ०हि० विसे॰। यहि० विसे०। यिह० विसे०। यिह० विसे०। यहि० विसे०। यहि० विसे०। सन्वत्थोवा चहुरिंदि॰ उ०हि०। यहि० विसे०। तीइंदि० उ०हि० विसे०। यहि० विसे०। वीइंदि० उ०हि० विसे०। यहि० विसे०। वीइंदि० उ०हि० विसे०। यहि० विसे०। पंचिदि० उ०हि० विसे०। यहि० विसे०। पंचिदि० उ०हि० विसे०। यहि० विसे०। पंचिदि० उ०हि० विसे०। यहि० विसे०। यहि० विसे०। यहि० विसे०। क्षा उपाहार॰ उ०हि० विसे०। यहि० विसे०। सेसा० अपजात्मंगो। अणाहार॰ कम्मइगमंगो।

एवं उक्तस्सं समत्तं

स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे ममुष्यगितका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे वित्यञ्चगितिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इसी प्रकार तीन आनुपूर्वियोंकी मुख्यतासे अल्पबहुत्व जानना चाहिए। इसी प्रकार पद्मलेश्यावाले जीवोंके भी जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनके सहस्रार कल्पके समान मङ्ग जानना चाहिए।

६१४. श्रसंक्षी जीवोंमें तिर्यञ्चायु श्रीर मनुष्यायुका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे देवायुका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध असंख्यात-गुगा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विद्योष श्रधिक है । इससे नरकायुका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध न्त्रसंख्यातगुत्का है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष श्रधिक है। देवगतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे मनुष्यगतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक हैं। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे तिर्यक्षगतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे नरक-गतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। चतुरिन्द्रिय जातिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सवसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे त्रीन्द्रिय जातिका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध विशेष ऋधिक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष ऋधिक है। इससे द्वीन्द्रिय जातिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष ऋधिक है। इससे यत्स्थिति-बन्ध विशेष श्रधिक है। इससे एकेन्द्रिय जातिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितबन्धः विशेष श्रधिक है । इससे पञ्चेन्द्रिय जातिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। चार त्रानुपूर्वियोंका भङ्ग चार गतियोंके समान है। स्थावर श्रादि चारका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इस्से बस चतुष्कका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष इधिक है। शेष प्रकृतियोंका मङ्ग श्रपर्याप्तकोंके समान है। तथा श्रनाहारक जीवोंका भङ्ग कार्मगुकाय- योगी जीवोंके समान है।

इस प्रकार उत्कृष्ट ऋत्पबहुत्व समाप्त हुऋा ।

६१५. जहएएए पगदं । दुवि०--श्रोघे० आदे० । श्रोघे० पंचणा०--वएए।०४-त्रगु०४--त्रादाउज्जोब--िएमिव--तित्थयव--पंचंतब सन्वत्थोवा जहब हिदिब । यहिव विसे॰ । सब्बत्थोवा चटुदंस॰ ज०हि॰ । यहि० विसे॰ । पंचदंस॰ ज०हि० ऋसंखेँ० । यहि॰ विसे० | सब्वत्थोवा सादावे॰ ज०हि॰ | यहि॰ विसे॰ | असादावे० ज०हि॰ श्रसंखें<u>ज्ज० । यहि० विसे० । सब्बत्थोवा लोभसं</u>ज० ज०हि० । यहि० विसे० । मायासंज्ञ ज्ञान्दि संखेजा । यहि विसे । माणसंज्ञ ज्ञान्दि विसे । यहि विसे॰ । कोधसंज० ज०हि० विसे॰ । यहि० विसे० । पुरिस० ज०हि० संखेंज्ञ० । यहि० विसे० । हस्स-रदि-भय-दुगुं० ज०हि० ऋसंखेँज्ञ० । यहि० विसे० । ऋरदि-सोग० ज०डि० विसे०। यहि० विसे०। एषु स० ज०डि० विसे०। यहि० विसे०। वारसक ॰ ज०द्वि० विसे० । यद्वि० विसे० । मिच्छ० ज०द्वि० विसे० । यद्वि० विसे० । ६१६. सब्बत्थोवा तिरिक्ख-मणुसायु० ज०द्वि० । यद्वि० विसे० । णिरय-

देवायु० ज॰िंड० संखेँज्ञ० । यद्वि० विसे० । [ सव्वत्थोवा ] तिरिक्ख-मणुसग०

६१४. जघन्यका प्रकरण है उसकी अपेता निर्देश दो प्रकारका है--ग्रोघ श्रौर श्रादेश। श्रोघसे पाँच श्रानावरण, वर्ण चतुष्क, श्रमुरुलघुचतुष्क, श्रातप, उद्योत, निर्माण, तीर्थङ्कर श्रीर पाँच श्रन्तराय इनका जघन्य स्थितिवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। चार दर्शनावरणका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे पाँच दर्शनावरणका जधन्य स्थितिबन्ध श्रसंख्यातग्रुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। साता वेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे श्रसातावेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध श्रसं-ख्यातगुर्वा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। लोभ संज्वलमका जघन्य स्थिति-बन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे माया संज्वलनका जयन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे मान-संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे कोधसंज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे पुरुषवेदका जधन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है । इससे हास्य, रति, भय और जुगुप्साका जघन्य स्थितिवन्ध असंख्यात-गुणा है। इससे यत्स्थितवन्ध विद्योष ऋधिक है। इससे ऋरति और शोकका जधन्य स्थितिबन्ध विशेष ऋधिक है। इससे यरिस्थितिवन्ध विशेष ऋधिक है। इससे नपुंसकवेदका जधन्य स्थितिवन्ध विशेष ऋधिक है। इससे यत्स्थितियन्ध विशेष ऋधिक है। इससे वारह कपायका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे मिथ्यात्वका जघन्य स्थितिवन्ध विशेष ऋधिक है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है।

६१६. तिर्यञ्चायु श्रीर मनुष्यायुका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितवन्ध विशोप ऋधिक है। इससे नरकायु और देवायुका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातः गुणा है। इससे यत्स्थितियन्ध विशेष ऋधिक हैं। तिर्यञ्चगति श्रौर मनुष्यगतिका जघन्य स्थितियन्ध सबसे स्तोक है। इससे यहिस्थतियन्ध विशोप अधिक है। इससे देवगतिका ज॰िड॰। यिंड॰ विसे०। देवग० ज०िड० संसेंज्ज॰। यिंडि० विसे०। णिरयग० ज॰िड० विसे॰। यिंडि० विसे०। सन्त्रत्थोवा पंचिंदि० ज॰िड०। यिंडि० विसे०। चंदुरिं० ज॰िड॰ विसे०। यिंडि॰ विसे०। तीइंदि॰ ज॰िड॰ विसे०। यिंडि० विसे०। वीइंदि॰ ज॰िड० विसे०। यिंडि० विसे०। एइंदि॰ ज॰िड० विसे०। यिंडि० विसे०।

६१७. सन्वत्थोवा श्रोरालि०-तेजा०-क० ज०हि० । यहि० विसे० । वेउन्वि० ज॰हि० संखेंज्जा० । यहि० विसे० । श्राहार ज०हि० संखेंज्जा० । यहि० विसे० । सन्वत्थोवा श्रोरालि०श्रंगो० ज०हि० । यहि० विसे० । वेउन्वि०श्रंगो० ज०हि० संखेंज्ज० । यहि० विसे० । श्राहार०श्रंगो० ज०हि० संखेज्ज० । यहि० विसे० । संठाण-संघडणं उक्कस्सभंगो ।

६२८. सञ्बत्थोवा पसत्थक--तस०४-थिरादिपंच ज०हि०। यहि० विसे०। तप्पडिपक्खार्णं ज०हि० विसे०।यहि० विसे०। सञ्बत्थोवा जस०--उच्चा० ज०हि०। यहि० विसे०। अजस०-णीचा० ज०हि० असंखेंज्ज०।यहि० विसे०। एवं ओघ-भंगो कायजोगि-ओरालि०-एावुंस०-कोधादि०४-अचक्खु०-भवसि०-आहारए ति।

जघन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इसंसे यित्स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे नरकगितका जघन्य स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। एश्लेन्द्रिय जातिका जघन्य स्थितिवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे चतुरिन्द्रिय जातिका जघन्य स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे चिन्द्रिय जातिका जघन्य स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे चीन्द्रिय जातिका जघन्य स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है।

६१७. श्रीदारिकशरीर, तैजसशरीर श्रीर कार्मणशरीरका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे वैकियिकशरीरका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे श्राहारकशरीरको जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्गका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्राङ्गोपाङ्गका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्राङ्गोपाङ्गका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे विशेष श्रधिक है। इससे श्राङ्गोपाङ्गका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे श्राङ्गोपाङ्गका जघन्य स्थितबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष श्रधिक है। संस्थान श्रीर संहननौका मङ्ग उत्सुख़के समान है।

६१ म. प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क श्रौर स्थिर श्रादि पाँचका जघन्य स्थितियन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्थितियन्ध विशेष श्रधिक है। इससे इनकी प्रतिपत्त प्रकृतियाँका जघन्य स्थितियन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्थितियन्ध विशेष श्रधिक है। यशःकीर्ति श्रोर उद्यगोत्रका जघन्य स्थितियन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितयन्ध विशेष श्रधिक है। इससे श्रयशःकीर्ति श्रौर नीचगोत्रका जघन्य स्थितियन्ध श्रसंख्यातगुणा है। इससे यित्थितियन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्थितयन्ध श्रसंख्यातगुणा है। इससे यित्थितियन्ध विशेष श्रधिक है। इसी प्रकार श्रीष्ठके समान काययोगी, श्रौदारिककाययोगी, नपुंसकवेदी, कोधिद चार कषायवाले, श्रचश्चर्रानी, भव्य श्रीर श्राहारक जीवोंके जानना चाहिए।

६१६ , ि ( एस्सु उक्कस्सभंगो । एवि स् पुरिस०-हस्स-रिद-भय-दुर्गु ० जिल्हि० थोवा । यहि० विसे० । अरिद-सोग० जिल्हि० विसे० । यहि० विसे० । इत्थि० जिल्हि० विसे० । यहि० विसे० । एवुंस० जिल्हि० विसे० । यहि० विसे० । सोल-सक जिल्हि० विसे० । यहि० विसे० । मिच्छ० जिल्हि० विसे० । यहि० विसे० । पिच्छ० जिल्हि० विसे० । यहि० विसे० । एवं पढमाए ।

६२०. विदियादि यात छट्ठि ति सञ्बत्थोवा छदंस॰ ज०डि०। यट्ठि० विसे॰। थीएगिद्धि॰ र ज॰डि॰ संखेँज्ञ०। यट्ठि॰ विसे॰। सञ्बत्थोवा पुरिस०- हस्स--रदि-भय-दुगुं० ज०डि०। यट्ठि॰ विसे॰। अरदि--सोग० ज॰डि० विसे॰। यट्ठि॰ विसे॰। वारसक० ज॰डि० विसे॰। यट्ठि॰ विसे॰। अर्णताणुबंधि०४ ज॰डि संखेँज्ञ०। यट्ठि० विसे॰। मिच्छ० ज॰डि॰ विसे॰। यट्ठि॰ विसे॰। उत्थि० ज॰डि० संखेँज्ञ०। यट्ठि० विसे॰। एचुंस० ज॰डि० विसे॰। यट्ठि० विसे॰।

६२१. सन्वत्थोवा मणुसग० ज॰ड्डि॰बं० | यहि विसे० | तिरिक्खग० ज०हि० संखेंज्ज० | यहि॰ विसे० | एवं त्राणुपु० | सन्वत्थोवा समचदु० ज०हि० ।

६१९. नारिकयों में उत्कृष्टके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि पुरुषवेद, हास्य, रित, भय और जुगुप्सा इनका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्धितबन्ध विशेष अधिक है। इससे अतिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्धितबन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्धितबन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्धितबन्ध विशेष अधिक है। इससे खीवेदका जघन्य स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्धितबन्ध विशेष अधिक है। इससे नपुंसकवेदका जघन्य स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्धितबन्ध विशेष अधिक है। इससे सोलह कथायका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्धितबन्ध विशेष अधिक है। इससे प्रतिबन्ध विशेष अधिक है। इसी प्रकार पहली प्रियोमें जानना चाहिए।

६२०. दूसरीसे लेकर छुठी तक पृथिवीमें छह दर्शनावरणका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यिस्थितिबन्ध विशेष श्रिष्ठक है। इससे यिस्थितिबन्ध सिंशेष श्रिष्ठक है। पुरुषयेद, हास्य, रित, भय और जुगुष्साका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यिस्थितिबन्ध विशेष श्रिष्ठक है। पुरुषयेद, हास्य, रित, भय और जुगुष्साका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यिस्थितिबन्ध विशेष श्रिष्ठक है। इससे यिस्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे श्रामनताजुबन्धी चारका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यिस्थितिबन्ध विशेष श्रिष्ठक है। इससे प्रिथ्यतिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यिस्थितिबन्ध विशेष श्रिष्ठक है। इससे स्थितिबन्ध सिंथितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यिस्थितिबन्ध विशेष श्रिष्ठक है। इससे स्थितवन्ध सिंथितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यिस्थितवन्ध विशेष श्रिष्ठक है। इससे नपुंसकवेदका जघन्य स्थितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यिस्थितवन्ध विशेष श्रिष्ठक है। इससे नपुंसकवेदका जघन्य स्थितवन्ध विशेष श्रिष्ठक है। इससे नपुंसकवेदका जघन्य स्थितवन्ध विशेष श्रिष्ठक है।

६२१. मनुष्यगतिका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे तिर्यञ्चगतिका जघन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुरू है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इसी प्रकार अग्नुपूर्वियोंकी मुख्यतासे ऋएपबहुत्व जानना यिह विसे॰ । स्थार्यं उक्तस्सभंगो। एवं संघड०।

६२२. सन्वत्थोवा पसत्थ०-सुभग-सुस्सर-ग्रादें०--उच्चा॰ ज॰हि० । यहि० विसे० । तप्पडिपक्खाणं ज॰हि॰ संखेँज्ज॰ । यहि॰ विसे० । थिर-सुभ-जसिग० ज॰हि० थोवा० । यहि० विसे० । तप्पडिपक्खाणं ज॰हि० विसे० । यहि० विसे० । एवं सत्तमाए ।

६२३. तिरिक्खेसु छएणं कम्माणं िएरयोघं । ऋायु०४ मूलोघं । ए।मा० ऋोघं । एविरि सन्वत्थोवा जस० ज०हि० । यहि० विसे० । अजस० ज०हि० विसे० । यहि० विसे० । एवं पंचिंदियतिरिक्स०३ । पंचिंदियतिरिक्स्वअपज्जत्तएसु िएरयोघं ।

६२४. मणुसेसु म्लोघं। एविर सन्वत्थोवा मणुसग० ज०द्वि०। यहि० विसे०। तिरिक्लग० ज०द्वि० विसे०। यद्वि० विसे०। देवगदि० ज०द्वि० संखेंज्ञ०। यद्वि० विसे०। शिरयग० ज०द्वि० संखेंज्ञ०। यद्वि० विसे०। जादी श्रोघं। सन्वत्थोवा तिरिणसरीराणं ज०द्वि०। यद्वि० विसे०। वेउन्वि०-स्राहार० ज०द्वि०

चाहिए। समचतुरस्रसंस्थानका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे नयग्रोध परिमंडल संस्थानका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। शेष संस्थानोंकी मुख्यतासे श्रव्यवहुत्व उत्कृष्टके समान है। तथा इसी प्रकार संहननोंकी मुख्यतासे श्रव्यवहुत्व जानना चाहिए।

६२२. प्रशस्त विहायोगित, सुभग, सुस्वर, श्रादेय श्रौर उच्चगोत्रका जघन्य स्थिति-बन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे इनकी प्रतिपद्मभूत प्रकृतियोंका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। स्थिर, श्रुभ श्रौर यशःकीर्ति इनका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे इनकी प्रतिपद्म प्रशृतियोंका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इसी प्रकार सातवीं पृथिवीमें जानना चाहिए।

६२३. तिर्यञ्चोंमें छह कर्मोंकी मुख्यतासे अल्पबहुत्व सामान्य नारिकयोंके समान है। चार श्रायुओंकी मुख्यतासे अल्पबहुत्व मूलोधके समान है। तथा नामकर्मकी प्रकृतियोंकी मुख्यतासे अल्पबहुत्व ओधके समान है। इतनी विशेषता है कि यशःकीर्तिका जघन्य स्थिति-बन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे अयशःकीर्तिका जघन्य स्थितिबन्ध स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इसमे प्रकार पञ्चिन्द्रिय तिर्यञ्चित्रकमें जानना चाहिए। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें सामान्य नारिक्योंके समान जानना चाहिए।

६२४. मनुष्योंमें मूलोधके समान भड़ है। इतनी विशेषता है कि मनुष्यगतिका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे तिर्यञ्जगितका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे देवगितका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे नरकगितका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। पाँच जातियोंकी मुख्यतासे अल्पबहुत्व अश्वेषके समान है। तीन शरीरोंका जघन्य संखेँज्ञ० । यहि॰ विसे० । श्रोराति॰श्लंगो॰ ज०डि० थोवा । यहि० विसे० । वेउच्चि०-श्राहार॰श्लंगो॰ ज॰डि० संखेँज्ञ० । यहि० विसे० । सेसाएां श्लोघं । सन्त्रश्लप्तज्ञत्त-सन्त्रविगत्तिदिय-पंचकायाएां पंचिदियतिरिक्खश्रपज्जत्तभंगो ।

६२५. देवाणं णिरयभंगो । सावरि थोवा पंचिंदि०-तस० ज०डि० । यहि० विसे० । एइंदि०-थावर० ज०डि० विसे० । यहि० विसे० ।

६२६. एइंदिएसु तिरिक्त्वोयं । एवरि गदीएां एिश्य ऋष्पाबहुगं । पंचिंदय-पंचिंदियपज्जत्ता॰ सत्तरणां कम्माणां ओयं । सन्वत्थोवा देवगदि० ज॰हि॰ । यहि॰ विसे० । मणुसग॰ ज॰हि॰ विसे॰ । यहि० विसे० । तिरिक्त्वग० ज०हि॰ विसे० । यहि० विसे॰ । एवं लास-तार्माणां जारि विसेश । एवं आणुपु॰ । सेसं ओपं । एवं तास-तार्माणां । एवरि विसेश । सन्वत्थोवा मणुसग० ज॰हि॰ । यहि॰ विसे० । तिरिक्त्वगदि० ज०हि० विसे० । यहि० विसे० । देवगदि ज०हि॰ संखेंजा॰ । यहि॰ विसे० । एएस्मा॰ ज०हि० विसे० । यहि॰ विसे० ।

स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे वैकियिक और आहारक शरीरका जधन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्थितवन्ध विशेष अधिक है। औदारिक आङ्गोपाङ्गका जधन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्थितबन्ध विशेष अधिक विशेष अधिक है। इससे येतिश्वितवन्ध विशेष अधिक है। इससे वैकियिक और आहारक आङ्गोपाङ्गका जधन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्थितवन्ध विशेष अधिक है। वया शेष प्रकृतियोंकी मुख्यतासे अल्पबहुत्व ओधके समान है। सब अपर्याप्त, सब विकलेन्द्रिय और पाँच स्थावर कायिक जीवोंका मङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान है।

६२४. देवोंका भङ्ग नारिकयोंके समान है। इतनी विशेषता है कि पञ्चेन्द्रिय जाति श्रीर त्रसका जधन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यहिस्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे एकेन्द्रिय जाति श्रीर स्थावरका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे यहिस्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है।

६२६. एकेन्द्रियोंमें सामान्य तिर्यञ्चोंके समान अल्पबहुत्य है। इतनी विशेषता है कि इनमें गतियोंका अल्पबहुत्व नहीं है। पञ्चेन्द्रिय श्रीर पञ्चेन्द्रिय पर्याप्तकोंमें सात कर्मोंका अल्पबहुत्व श्रीयके समान है। देवगतिका जयन्य स्थितवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे परिस्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे विर्यञ्चगतिका जयन्य स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे नरकगतिका जयन्य स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे प्रकार चार आनुपूर्वियोंकी अपेका अल्पबहुत्व जानना चाहिए। शेष प्रकृतियोंके जयन्य स्थितवन्धका अल्पबहुत्व श्रीयके समान है। इसो प्रकार असकायिक और असकायिक पर्याप्त जीवोंके जानना चिहए। इतनी विशेषता है। इसो प्रकार असकायिक और असकायिक पर्याप्त जीवोंके जानना चिहए। इतनी विशेषता है। इससे यित्स्थितिवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे विर्यञ्चगतिका जयन्य स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है।

६२७. पंचमण०-तिष्णिविच सन्वस्थोवा चदुदंस० ज॰हि॰। यहि० विसे०। णिदा-पचला॰ ज॰हि० असंखेंज्ञ०। यहि॰ विसे०। थीणिगिद्ध०३ ज०हि० संखेंज्ञ०। यहि० विसे०। सन्वस्थोवा लोभसंज० ज०हि॰। यहि॰ विसे०। मायासंज० ज०हि॰ संखेंज्ञ०। यहि॰ विसे०। माणसंज० ज०हि॰ विसे०। यहि० विसे०। यहि॰ विसे०। यहि॰ विसे०। पुरिस० ज०हि० संखेंज्ञ०। यहि॰ विसे०। पुरिस० ज०हि० संखेंज्ञ०। यहि० विसे०। इस्स-रिद-भय-दुगुं० ज०हि० असंखें०। यहि० विसे०। अपदि-सोग० ज०हि० संखेंज्ञ०। यहि० विसे०। पच्चक्खाणावर०४ ज०हि० संखेंज्ञ०। यहि० विसे०। अपप्चक्खाणा०४ ज०हि० संखेंज्ञ०। यहि० विसे०। यहि० विसे०। यहि० विसे०। यहि० विसे०। यहि० विसे०। सन्वस्थोवा देवगदि० ज०हि०। यहि० विसे०। सन्वस्थोवा देवगदि० ज०हि०। यहि० विसे०। मणुसग० ज०हि० संखेंज्ञ०। यहि० विसे०। पहि० विसे०। सन्वस्थोवा देवगदि० ज०हि०। यहि० विसे०। सन्वस्थोवा देवगदि० ज०हि०। यहि० विसे०। सन्वस्थोवा देवगदि० ज०हि०। सहि० विसे०। सन्वस्थोवा देवगदि०। पिरक्खग० ज०हि० संखेंज्ज०। यहि० विसे०। पिरक्खग०। सन्वस्थोवा पंचिदि० ज०हि०। यहि०

६२७. पाँचों मनोयोगी श्रौर तीन वचनयोगी जीवोंमें चार दर्शनावरणका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशोष अधिक है। इससे निष्ठा और प्रचलाका जधन्य स्थितिबन्ध श्रसंख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्धं विशेष श्रधिक है। इससे स्त्यानगृद्धि तीनका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। लोभ संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे मायासंज्यलनका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष ऋधिक है। इससे मानसंज्वलनका जधन्य स्थितवन्ध विशेष ऋधिक है । इससे यत्स्थितियन्ध विशेष अधिक है । इससे क्रोध संज्वलनका जधन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पुरुषवेदका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष ऋधिक है । इससे हास्य, रित, भय ग्रौर जुगुप्साका जघन्य स्थितिबन्ध श्रसंख्यातगुणा है। इससे यह्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे ऋरति और शीकका जघन्य स्थितियन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध किशोप अधिक है। इससे प्रत्याख्यानावरण चारका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे अप्रत्याख्यानावरण चारका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष ब्रधिक है। इससे ग्रनन्तानुबन्धी चारका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे मिथ्यात्वका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यह्म्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे स्त्रीवेद और पुरुषवेदका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है । इससे नपुं सकवेदका जघन्य स्थिति-बन्ध विशेष ऋधिक है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष ऋधिक है। देवगतिका जघन्य स्थिति-बन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष ऋधिक है । इससे मनुष्यगतिका जघन्य स्थितिबन्धसंख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष ऋधिक है। इससे तिर्यञ्चगतिका अधन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष ऋधिक है। इससे जरक-

विसे । चटुरिदि ॰ ज॰ हि ० संखें जागु ० । यहि ० विसे ॰ । उवरि श्रोपं । सन्वत्थोवा चटुएणं सरीराणं ज० हि ० । यहि ॰ विसे ॰ । श्रोरात्तिय ॰ ज० हि ० संखें जा ॰ । यहि ० विसे ० । संडाणं संघडणं दोविहा ० विदियपुद्दिनंगो । श्रंगोवंग ० सरीरभंगो । सन्वत्थोवा तस० ४ जहि ० । यहि ॰ विसे ० । तप्पिडिपक्खाणं ज० हि ० संखें जा ॰ । यहि ० विसे ॰ । सन्वत्थोवा थिरादिपंच ॰ ज० हि ० । यहि ० विसे ० । तप्पिडिपक्खाणं ज० हि ० संखें जा ० । यहि ० विसे ० । सन्वत्थोवा जसिं ० — उच्चा ० ज० हि ० । यहि ० विसे ० । सन्वत्थोवा जसिं ० — उच्चा ० ज० हि ० । यहि ० विसे ० । से संपिचिदियभंगो । ६२० विसे ० । से संपिचिदियभंगो । ६२० विचे जो गि ० - श्रमच मोस ० तस प ज्ञारां । श्रोरात्तियका ० खवगपगदीणं श्रोघं । से सं विरिक्खोयं । श्रोरात्तिमि ० तिरिक्खोयं । वे उन्वियका ० सो थम्मभंगो । एवं वे उन्वियमि ० । श्राहार ० - श्राहारिक उक्करसभंगो । कम्मइ ० - श्रणाहार ० श्रोरात्तियमिस्सभंगो । इत्थिवेदेसु श्रोघं । से साणं पंचिदियभंगो । एवं पुरिसवे ० । श्रवपदिवेदे श्रोघं । को धादि ० ४ श्रोघं । एवरि सो एवरियमें । एवं पुरिसवे ० । श्रवपदिवेदे श्रोघं । को धादि ० ४ श्रोघं । एवरिय से सो एवरियमें । संजलाणा ० ४

गतिका जधन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुण है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रिथिक है। पञ्चेन्द्रिय जातिका जधन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रिथिक है। इससे चत्रित्व ज्ञिष ज्ञिथिक है। इससे चत्रित्व ज्ञिष ज्ञिष श्रिथिक है। इससे चत्रित्व ज्ञिष श्रिथिक है। इससे य्रामिका अल्पबहुत्व श्रीधिक समान है। चार शरीरीका जधन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे श्रीदारिक शरीरका जधन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रीदारिक शरीरका जधन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रीदार्थिक श्रीदान श्रीदेश स्थान, संहनन श्रीर दो विहायोगित इनका भङ्ग दूसरी पृथिवीके समान है। श्राङ्गीपाङ्गीका भङ्ग शरीरोंके समान है। त्रसचतुष्कका जधन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रीदिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रीदक है। इससे इनकी प्रतिपत्त प्रश्विक स्थान स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे इनकी प्रतिपत्त प्रश्वितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे इक्की प्रतिपत्त प्रश्वितिबन्ध सिथितिबन्ध सिथित श्रीर उद्यगोत्रका जधन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रीदक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रीदक है। इससे यत्स्थितिबन्ध सिथित है। इससे यत्स्थितिबन्ध सिथित है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रीदक है। इससे यत्स्थितिबन्ध सिथित है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रीदक है। इससे सिथित वन्ध सिथित स

६२८. वचनयोगी और श्रसत्यमृपायचनयोगी जीवोंमें त्रसपर्याप्त जीवोंके समान भक्त है। ओदारिककाययोगी जीवोंमें चपक प्रकृतियोंका भक्त श्रोधके समान है। तथा शेप प्रकृतियोंका भक्त सामान्य तिर्यञ्जोंके समान है। श्रीदारिक मिश्रकाययोगी जीवोंमें सामान्य तिर्यञ्जोंके समान भक्त है। इसी प्रकार वैकियकमिश्रकाययोगी जीवोंके जानना चाहिए। आहारककाययोगी श्रीर आहारकमिश्रकाययोगी जीवोंके जानना चाहिए। आहारककाययोगी श्रीर अनहारक जीवोंमें श्रीदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंके समान भक्त है। कार्मणकाययोगी श्रीर खनाहारक जीवोंमें श्रीदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंके समान भक्त है। क्ष्मीवेदी जीवोंमें चपक प्रकृतियोंका भक्त श्रीधके समान है। श्रेप प्रकृतियोंका भक्त पञ्चित्त्रयोंके समान है। इसी प्रकार पुरुपवेदी जीवोंके जानना चाहिए। श्रपगतयेदी जीवोंमें ओधके समान भक्त है। कोधादि चार कषाय-

कोधे मार्गे०३ मायाए दोरिख लोभे ऍक०।

६२६. मदि०-सुद०-ग्रसंज०-ग्रह्भव०--मिन्हादि० तिरिक्खोधं। विभंगे सन्वत्थोवा देवग० ज०िह०। यिह० विसे०। तिरिक्ख-मणुसग० ज०िह० संखें ज्ञा०। यिह० विसे०। तिरिक्ख-मणुसग० ज०िह० संखें ज्ञा०। यिह० विसे०। सन्वत्थोवा पंचिदि० ज०िह०। यिह० विसे०। चदुरिंदि० ज०िह० संखें ज्ञा०। यिह० विसे०। तीइंदि० ज०िह० विसे०। यिह० विसे०। पहिंदि० ज०िह० विसे०। यिह० विसे०। एइंदि० ज०िह० विसे०। यिह० विसे०। सन्वत्थोवा वेष्ठिव०-तेजा०-क० ज०िह०। यिह० विसे०। ग्रीह० विसे०। यह० विसे०।

६३०. आभिव-सुद्व-ओधिव सन्वत्थोवा मणुसायुव जव्हिव । यहिव विसेव। देवायुव जव्हिव असंखें ज्ञव । यहिव विसेव। सन्वत्योवा देवगव जव्हिव। यहिव विसेव। सन्वत्योवा देवगव जव्हिव। यहिव विसेव। मणुसगव जव्हिव संखें ज्ञगुव। यहिव विसेव। सेसाणं मणजोगिभंगो। एवं ओधिदंसणी-सम्माद्विव-स्वइगव-वेदगव-उवसमव। णविर वेदगे खबगपगदिभंगो णित्थ।

वाले जोवोंमें श्रोघके समान भक्त है। इतनी विशेषता है कि मोहनीयकर्ममें विशेषता जाननी चाहिए। कोधमें चार संज्वलन, मानमें तीन, मायामें दो श्रौर लोभमें एक कहना चाहिए।

६२६. मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, श्रसंयत, श्रभन्य श्रीर मिथ्यादृष्टि जीवोंमें सामान्य तिर्यञ्जोंके समान भक्त है। विभक्तज्ञानमें देवगतिका जघन्य स्थितिवन्ध सवसे स्तोक है। इससे यित्थितवन्ध सिथितवन्ध विशेष श्रिक है। इससे यित्थितवन्ध विशेष श्रिक है। इससे श्रीविवन्ध विशेष श्रिक है। इससे यित्थितवन्ध विशेष श्रिक है। इससे श्रीविवन्ध विशेष श्रिक है। इससे श्रीववन्ध विशेष श्रिक है। इससे श्रीववन्ध सिथितवन्ध सिथितवन्ध विशेष श्रिक है। इससे श्रीववन्ध विशेष श्रिक है। इससे श्रीववन्ध विशेष श्रिक है। इससे श्रीववन्ध सिथितवन्ध सिथितवन्ध विशेष श्रिक है। इससे श्रीववन्ध विशेष श्रीववन्ध विशेष श्रीववन्ध है। इससे श्रीववन्ध सिथितवन्ध सिथितवन्ध सिथितवन्ध विशेष श्रीववन्ध विशेष श्रीववन्ध विशेष श्रीववन्ध है। इससे श्रीववन्ध सिथितवन्ध सिथितवन्ध सिथितवन्ध विशेष श्रीववन्ध विशेष श्रीववन्ध है। इससे श्रीववन्ध सिथितवन्ध सिथितवन्ध सिथितवन्ध विशेष श्रीववन्ध विशेष श्रीववन्ध है। इससे श्रीववन्ध सिथितवन्ध सिथितवन्ध सिथितवन्ध विशेष श्रीववन्ध विशेष श्रीववन्ध विशेष श्रीववन्ध विशेष श्रीववन्ध है। इससे श्रीववन्ध विशेष श्रीववन्ध विशेष श्रीववन्ध विशेष श्रीववन्ध है। इससे श्रीववन्ध विशेष श्रीववन्य विशेष श्रीववन्य विशेष श्रीववन्य विशेष श्रीववन्य विशेष श्रीववन्य विशेष श्रीववन्य विशेष

६३०. श्रामिनिबोधिकश्चानी, श्रुतश्चानी श्रौर श्रविश्वानो जीवोंभें मनुष्यायुका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यहिस्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे देवायुका जघन्य स्थितिबन्ध श्रसंख्यातगुणा है। इससे यहिस्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। देवागितिका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यहिस्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे मनुष्यगतिका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यहिस्थितबन्ध विशेष श्रिधिक है। श्रेष प्रश्निवर्योका भङ्ग मनोयोगी जीवोंके समान है। इसी प्रकार श्रवधिदर्शनी, सम्यग्दिष चायिकसम्यग्दिष, वेदकसम्यग्दिष् श्रीर उपसमसम्यग्दिष्ठ जीवोंके जानना चाहिष्। इतनी विशेषता है कि वेदकसम्यग्दिष्ठ जीवोंमें चपक प्रश्निवर्योका भङ्ग नहीं है।

- ६३१. मण्यज्जवक सब्बत्थोवा सादाक-जिसगिक जविक । यदिक विसेक । असादाक-अजसक जविक असंर्केजिक । यदिक विसेक । मोहणीयं मणजोगिभंगो । एवं दंसणावरणीयं । सेसाणं सब्बत्थोवा जविक्ठ । यदिक विसेक । एवं संजद-सामाइक-छेदोक-परिहारक-संजदासंजदा ति । एवरि विसेसो णादक्वो । चक्खुदंक-तसपज्जनभंगो ।
- ६३२. किएणु-णील-काऊणं सव्वत्थोवा दोश्रायु० न०डि० । यडि० विसे० । देवायु० न०डि० संखेँज्ञगु० । यडि० विसे० । णिरयायु० न०डि० असंखेँज्ञ० । यडि० विसे० । सेसं अपज्जत्तभंगो । णवरि काऊए णिरय-देवायुणं सह भाणिदव्वं ।
- ६३३. तेऊए मोहणीय-णामं मणजोगिभंगो । एवरि संव्वत्थोवा पुरिस॰-हस्स-रिद-भय-दुगुं० ज॰हि॰ । यहि॰ विसे॰ । चदुसंज॰ ज०हि० विसे० । यहि॰
  विसे॰ । अरिद-सोग॰ ज०हि॰ संखेंजा० । यहि० विसे॰ । सेसं सोधम्मभंगो ।
  एवरि साद॰-जस०-उच्चा॰ सन्वत्थोवा ज॰हि॰ । यहि० विसे॰ । असाद॰-अजस०एीचा० ज०हि॰ संखेंजा॰ । यहि विसे॰ । एवं पम्माए ।
- ६३१. मनःपर्ययशानी जीवोंमें सातावेदनीय और यशःकीर्तिका जघन्य स्थितिवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे असातावेदनीय और श्रयशःकीर्तिका जघन्य स्थितिवन्ध श्रसंख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। मोहनीयका भङ्ग मनोयोगी जीवोंके समान है। इसी प्रकार दर्शनावरणीयका श्रख्यबहुत्व जानना चाहिए। शेष प्रकृतियोंका जघन्य स्थितिवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इसी प्रकार संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापनासंयत, परिहारविगुद्धिस्थित श्रीर संयतासंयत जीवोंके जानना चाहिए। किन्तु जहाँ जो विशेषता हो उसे जान लेना चाहिए। चशुदर्शनवाले जीवोंमें बसपर्यात जीवोंके समान मङ्ग है।

६३२. हुप्स, नील श्रीर कापीत लेश्यावाले जीवोंमें दो श्रायुश्चोंका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध सिवसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध सिवसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध सिशेप श्रधिक है। इससे नरकायुका जघन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुसा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेप श्रधिक है। शेप प्रहृतियोंका भक्ष श्रपर्यातकोंके समान है। इतनी विशेपता है कि कापीत लेश्यावाले जीवोंमें नरकायु श्रीर वेदायको एक साथ कहना चाहिए।

६३३. पीतलेश्यावाले जीवोंमें मोहनीय और नामकर्मका भक्क मनीयोगी जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि पुरुषवेद, हास्य, रित, भय और जुगुष्साका जधन्य स्थितिवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे श्ररित और शोकका जधन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्थितबन्ध विशेष अधिक है। शेष प्रश्तिवांका भक्क सौधर्म कल्पके समान है। इतनी विशेषता है कि सातावेदनीय, यशःकीर्ति और उच्चगीत्रका जधन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे प्रतिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे प्रतिबन्ध संख्यातगिणा अधिक है। इसी प्रकार पद्मलेश्यावाले जीवोंके जानना चाहिए।

६३४. मुकाए सब्बत्थोवा मणुसायु० जन्दि०। यदि० विसे०। देवायु० ज०द्वि० असंखेजक । यदि० विसे०। सब्बत्थोवा देवग० ज०दि०। यद्वि० विसे०। मणुसग० ज०दि० संखेजिए०। यदि० विसे०। सेसं ओघं।

६३५. सासणे सन्बत्थोवा सादावे० ज०डि० | यडि० विसे० | ऋसादा० ज०डि० विसे० | यडि० विसे० | सन्बत्थोवा तिषिणमदि० ज०डि० | यडि० विसे० | एवं धुविगाणं | संसाणं सादा०भंगो |

६३६. सम्मामि० सन्वत्थोवा सादा० ज०िह०। यहि० विसे०। श्रसादा० ज०िह० संखेंजा०। यहि० विसे०। एवं परियत्तमाणियाणं। सन्वत्थोवा पुरिस०- हस्स-रिद-भय-दुगुं० ज०िह०। यहि० विसे०। बारसक० ज०िह० विसे०। यहि० विसे०। श्ररिद-सोग० ज०िह० संखेंजा०। यहि० विसे०। सेसाणं सन्वत्थोवा ज०िह०। यहि० विसे०।

## ६३७. सिएए मणुसभंगो । असिएए० तिरिक्खोघं । एवं जहएएयं समत्तं एवं सत्थाएड्डिदिअप्पाबहुगं समत्तं

६३४. शुरुकलेश्यावाले जीवोंमें मनुष्यायुका जधन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे देवायुका जधन्य स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है। इससे यदिखतिबन्ध विशेष अधिक है। देवगितका जधन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यदिखतिबन्ध विशेष अधिक है। इससे मनुष्य गतिका जधन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यदिखतिबन्ध विशेष अधिक है। इससे मनुष्य गतिका जधन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यदिखतिबन्ध विशेष अधिक है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग क्रोधके समान है।

६३४. सासादनसम्यग्हिष्ठ जीवोंमें सातावेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे श्रसातावेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। तीन गतियोंका जघन्य स्थिति-बन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इसी प्रकार भ्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंका जानना चाहिए। शेष प्रकृतियोंका भन्न सातावेदनीय के समान है।

६३६. सम्यग्मिश्यादृष्टि जीवोंमें सातावेदनीयका जग्रन्य स्थितियन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्यितियन्ध विशेष श्रधिक है। इससे श्रसातावेदनीयका जग्रन्य स्थितियन्ध संख्या-तगुणा है। इससे यित्स्यितियन्ध विशेष श्रधिक है। इसी प्रकार परावर्तमान प्रकृतियोंका श्रल्यबहुत्व जानना चाहिए। पुरुषवेद, हास्य, रित, भय श्रीर जुगुन्सा इनका अग्रन्य स्थितियन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्यितियन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यात्स्यितियन्ध विशेष श्रधिक है। इससे श्ररित श्रीर श्रीकका जग्रन्य स्थितियन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितियन्ध विशेष श्रधिक है। इससे श्ररित श्रीर श्रीकका जग्रन्य स्थितियन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितियन्ध विशेष श्रिक है। श्रीय श्रक्तियोंका जग्रन्य स्थितियन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितियन्ध विशेष श्रिक है। श्रीय श्रीक है। इससे यित्स्थितियन्ध विशेष श्रीक है। श्रीय श्रीक है।

६३७. संक्षियोंमें मनुष्योंके समान भक्त है। तथा असंक्षियोंमें सामस्य तिर्यञ्जोंके समान भक्त है।

इस प्रकार जघन्य ऋत्पबहुत्व समाप्त हुआ। इस प्रकार स्वस्थान स्थिति ऋत्पवहृत्व समाप्त हुआ। ६३८, परत्थाणिहिदिश्रप्पावहुगं दुविधं---जहराणयं उक्तस्सयं च । उक्तस्सए पगदं । दुवि०--श्रोघे० श्रादे० । श्रोघे० सन्वत्थोचा तिरिक्ख--मणुसायूणं उक्तस्सश्रो हिदिवंभो । यहिद्वंभो विसेसाधियो । णिरय-देवायूणं उक्तस्सहि० संखें ज्ञ० । यहि० विसे० । प्रिस०-हस्स-रदि-देवगदि०- नस०--उचा० उक्त०हि० संखें ज्ञ० । यहि० विसे० । प्रिस०-हस्स-रदि-देवगदि०- नस०--उचा० उक्त०हि० संखें ज्ञ० । यहि० विसे० । सादा०--इत्थि०--मणुसग० उ०हि० विसे० । यहि० विसे० । णवुंस० श्ररदि०--सोग-भय--दुगुं०--णिरयगदि-- तिरिक्खगदि--चदुसरीर--श्रजस०---णीचा० उक्त०हि० विसे० । यहि० विसे० । सोलसक० उ०हि० विसे० । यहि० विसे० । सोलसक० उ०हि० विसे० । यहि० विसे० । सोलसक० उ०हि० विसे० । यहि० विसे० ।

६३६. ऐरइएस सन्वत्थोवा दोश्रायु० उ०िह०। यिह० विसे०। पुरिस०-इस्स--रिद--जस०--उचा० उ०िह० श्रसंखेंज्ज०। यिह० विसे०। सादावे०--इत्थि०-मणुसगदि० उ०िह० विसे०। यिह० विसे०। णुवुंस०-श्रादि-सोग--भय-दुगुं०--तिरिक्खगदि-तिरिणसरीर-अजस०-णीचा० उ०िह० विसे०। यिह० विसे०। उपरि श्रोषं। एवं याव इिह ति।

६३८. परस्थान स्थिति मल्पबहुत्व दो प्रकार का है—जधन्य और उत्रुष्ट । उत्रुष्टका प्रकरण है । उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे तिर्यश्चायु और मनुष्यायुका उत्रुष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यिस्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे वात्रुष्ठा अर देवायुका उत्रुष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यिस्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे आहारकद्विकका उत्रुष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यिस्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पुरुषवेद, हास्य, रित, देवगित, यशकीर्ति और उच्चगोत्रका उत्रुष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यिस्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे सातावेदनीय, स्रीवेद और मनुष्यगितका उत्रुष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे सातावेदनीय, स्रीवेद और मनुष्यगितका उत्रुष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यिस्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यित्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पत्रुपतिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यित्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पत्रिथितबन्ध विशेष अधिक है । इससे प्रत्थितबन्ध विशेष अधिक है ।

६३६. नारिकयों में दो श्रायुश्रोंका उत्ह्रप्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्यितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पुरुषवेद, हास्य, रित, यशकीर्ति श्रीर उच्चगोत्रका उत्ह्रप्ट स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे साता-वेदनीय, स्त्रीवेद श्रीर मनुष्यगितका उत्ह्रप्ट स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे विशेष श्रिक है। इससे नपुंसकवेद, श्ररित, शोक, भय, जुगुष्सा, तिर्यञ्चगित, तीन श्रिर, श्रयशःकीर्ति श्रीर नीचगोत्रका उत्ह्रप्ट स्थितिबन्ध विशेष श्रिधक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रिधक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रिधक है। इससे श्रोगेका श्रव्यबहुत्व श्रोधके समान है। इसी प्रकार इंदर्वी पृथिवी तक जानना चाहिए।

- ६४०. सत्तमीए सव्वत्थोवा तिरिक्खायु० उ०डि०। यहि० विसे०। मणुसग०-उचा० उक्त०डि० असंखें ज्ञा०। यहि० विसे०। पुरिस०-इस्स-रिद-जस०-उचा० उ०डि० संखें ज्ञा०। यहि० विसे०। सादा०-इत्थि० उ०डि० विसे०। यहि० विसे०। णु समिदिपंच-तिरिक्खगदि-तिरिण्णसरीर-अजस०-णीचा० उक्त०डि० विसे०। यहि० विसे०। उवरि ओषं।
- ६४१, तिरिक्षेसु सन्वत्थोवा तिरिक्ख-मणुसायु० उ० हि० । यष्टि० विसे० । देवायु० उक्त०हि० संखेळा० । यहि० विसे० । णिरयायु० उ० हि० विसे० । यहि० विसे० । णिरयायु० उ० हि० विसे० । यहि० विसे० । पुरिस०-इस्स-रदि-देवगदि-जस०-उचा० उ० हि० संखेळा० । यहि० विसे० । सादा०-इत्थ०-प्रसुसग० उ० हि० विसे० । यहि० विसे० । यहि० विसे० । तिरिक्खग०-त्रोरालि० उ० हि० विसे० । यहि० विसे० । णावुंसगादिपंच--णिरयगदि--वेउ विव०-तेजा०-क०- ग्रजस०--णीचा० उ० हि० विसे० । यहि० विसे० । उवरि श्रोषं । एवं पंचिदिय-तिरिक्ख०३ ।
- ६४२. पंचिदियतिरिक्खअपज्जत्तगेसु सन्वत्थोवा तिरिक्ख-मणुसायु० उ०हि० । यहि० विसे० | पुरिस०--उचा० उ०हि० असंखेँजा० | यहि० विसे० | इत्थि०
- ६४०. सातवीं पृथिवीमें तिर्यश्चायुका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे मनुष्यगित और उच्चगोत्रका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है। इससे यित्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे पुरुषवेद, हास्य, रित, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे यात्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे वर्षुं सकवेद आदि पाँच, तिर्यञ्चगित, तीन शरीर, अयशःकीर्ति और नीचगोत्रका उत्कृष्ट स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्थितबन्ध विशेष अधिक है।
- ६४१. तिर्यञ्चोमं तिर्यञ्चायु ग्रीर मनुष्यायुका उत्कृष्ट स्थितवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्ध्यितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे देवायुका उत्कृष्ट स्थितियन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्ध्यितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे प्रकायुका उत्कृष्ट स्थितियन्ध विशेष अधिक है। इससे प्रकायुका उत्कृष्ट स्थितियन्ध विशेष अधिक है। इससे प्रत्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे प्रत्थितवन्ध विशेष ग्रिष्क है। इससे प्रत्थितवन्ध विशेष ग्रिष्क है। इससे प्रत्थितवन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे प्रत्थितवन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे विश्वेश्वातवन्ध विशेष ग्रिष्का उत्कृष्ट स्थितवन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे तिर्यञ्चगित ग्रीर ग्रीदिक श्रीरका उत्कृष्ट स्थितवन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे विश्वेश ग्रीदिक श्रीरका उत्कृष्ट स्थितवन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे प्रत्थितवन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे प्रत्थितवन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे प्रत्थितवन्ध विशेष ग्रिपक ग्रिर, वैज्ञस श्रीर, कार्मण श्रीर, ग्रवशःकीर्ति ग्रीर नीचगीत्रका उत्कृष्ट स्थितवन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे प्रतिथितवन्ध ग्रधिक ग्रधिक है। इससे प्रतिथितवन्ध ग्रधिक ग्रधिक
- ६४२. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च श्रपयित्रकोंमें तिर्यञ्चायु श्रौर मनुष्यायुका उत्रुष्ट स्थिति वन्ध सबसे स्तोक है। इससे यहिस्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे पुरुषवेद और उच

उ०िह० विसे० | यहि० विसे० | जसगि० उ०िह० विसे० | यहि० विसे० | मणुः सग० उ०िह० विसे० | यहि० विसे० | सादा०--हस्स--रिद० उक्क०ि विसे० | यहि० विसे० | यहि० विसे० | पंचणोक०-तिरिक्खगिद-तिरिणसरीर--अजस०--णीचा० उक्क०ि० विसे० | यहि० विसे० | पंचणा०-णवदंसणा०--असादा०-पंचंत० उ०िह० विसे० | यहि० विसे० | सोत्तसक० उ०िह० विसे० | यहि० विसे० | एवं सव्वत्रपज्जत्तगाणं सव्वएइंदिय--सव्वविगत्तिद्य--पंचकायाणं च | एवरि सव्वएइंदिय---विगत्तिद्य० णीचागोदादो सादावे० उ०िह० विसे० | यहि० विसे० | पच्छा णाणावरणीयं भाणिदव्वं |

६४२. मणुसेसु०३ श्रोघं। स्वारि तिरिक्लगिद्-श्रोरालि० तिरिक्लभंगो। देवसु यात्र सहस्सार ति सेरइमभंगो। श्रास्तद् यात्र स्वानेत्रज्ञा ति सव्वत्थोवा मणुसायु० उ०द्वि०। यद्वि० विसे०। पुरिस०-इस्स-रदि-जसगि०-उच्चा० उ०द्वि० श्रसंखेजा०। यद्वि० विसे०। सादावे०-इत्थि० उ०द्वि० विसे०। यद्वि० विसे०। पंचसोक० मणुसग०-तिरिस्सरीर-अजस०-सीचा० उ०द्वि० विसे०। यद्वि० विसे०। उवरि सेरइगभंगो।

गोत्रका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध ग्रसंख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे ख्रीवेदका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे पत्स्थितिबन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे पत्स्थितिवन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे पत्स्थितिवन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे पाँच नीकपाय, तिर्यञ्चाति, तीन ग्रदीर, ग्रयशःकीर्ति ग्रौर नीचगोत्रका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे पाँच श्रानावरण, नौ दर्शनावरण, ग्रसातावेदनीय ग्रौर पाँच ग्रन्तरायका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे प्रकृतिबन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे व्रह्थितिवन्ध विशेष ग्रधिक है। तथा इसके वाद ज्ञानावरण्दिक कहने चाहिए।

६४२. मनुष्यित्रकमें श्रोघके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि तिर्यव्यगित श्रीर श्रीद।रिक शरीरका भङ्ग तिर्यव्योंके समान है। देवोंमें सहस्रार कल्पतक नारिक्योंके समान भङ्ग है। श्रानत कल्पसे लेकर नौ श्रेवेयक तकके देवोंमें मनुष्यायुका उत्कृष्ट स्थिति बन्ध सबसे स्तोक है। इससे प्रत्यवेद, हास्य, रित, यशःकीर्ति श्रीर उच्चगोत्रका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध श्रासंख्यातगुणा है। इससे यित्स्थिति बन्ध विशेष श्रीवेदका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध श्रीर श्रीवेदका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध श्रिषे श्रीवेदका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष श्रीक है। इससे पाँच नीकपाय, मनुष्यगित, तीन शरीर श्रीयश्रीति श्रीर नीचगोत्रका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष श्रीक है। इससे पाँच नीकपाय, सनुष्यगित, तीन शरीर श्रीयश्रीव श्रीप श्रीवक है। इससे स्रात्यवेदकी विशेष श्रीवक है। इससे प्रत्यविवन्ध विशेष श्रीवक है। इससे प्रत्यिन्ध विशेष श्रीवक है। इससे प्रत्यिन्ध विशेष श्रीवक है। इससे प्रत्यिन्ध विशेष श्रीवक है।

६४४. अणुदिस यात सन्बद्ध ति सन्बत्धोत्रा मणुसायु० उ०द्वि० । यद्वि० विसे० । इस्स--रदि--जसगि० उ०द्वि० [अ-] संखेंज्ञ० । यद्वि० विसे० । सादा० उ०द्वि० विसे० । पंचणोक०-मणुसग०-तिणिणसरीर--अजस०-उचा० उ०द्वि० विसे० । यद्वि० विसे० । पंचणा०--छदंसणा०--असादा०--पंचंत० उ०द्वि० विसे० । यद्वि० विसे० । वारसक० उ०द्वि० विसे० । यद्वि० विसे० ।

६४५. पंचिदिय-तसपज्जत्त ॰-पंचमण०-पंचवचि॰-कायजोगि०-इत्थिवे०-पुरिस॰-खबुंस०-कोघादि॰४-चक्खुदं०--अचक्खुदं०-भवसि०--सिएस--आहारए ति मूलोघं। ओरालियकायजोगि॰ मसुसिस्भिगो।

६४६. ओरालियमि० सन्वत्थोवा दोश्रायु० उ०िह०। यहि० विसे०। देवगदि-वेउन्विय• उ०िह० श्रसंखेजा•। यहि० विसे०। पुरिस०-उञ्चा• उ०िह० संखेजा•। यिह० विसे०। इत्थि• उहि० विसे०। यिह० विसे०। [संसा०] श्रपज्जत्तभंगो। वेउन्वियका०-वेउन्वियमि० देवोधं।

६४७. त्राहार०--त्राहारमि० सब्बत्थोवा देवायु॰ उ०द्वि॰ । यद्वि० विसे० । इस्स--रदि--जसगि० उ॰द्वि॰ संखेजा० । यद्वि० विसे० । सादा० उ०द्वि० विसे० ।

६४४. श्रमुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवों में ममुख्यायुका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे हास्य, रित श्रीर यशः कीर्तिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध श्रसंख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पाँच नोकपाय, ममुख्यगिति, तीन श्रीर, श्रयशःकीर्ति श्रीर उच्चगोत्रका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे पाँच श्रान्यरण, ग्रह्म विशेष श्रधिक है। इससे पाँच श्रान्यरण, ग्रह्म दर्शनावरण, श्रसातावेदनीय श्रीर पाँच श्रन्तरायका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है।

६४४. पञ्चेन्द्रिय, पञ्चेन्द्रियपर्याप्त, त्रस, त्रसपर्याप्त, पाँचीं, मनोयोगी पाँचीं, वचनयोगी, काययोगी, स्त्रीवेदी, पुरुषवेदी, नपुंसकवेदी, क्रोधादि चार कपायवाले, चत्तु-दर्शनी, त्रचत्तुदर्शनी, भव्य, संब्री और ब्राहारक जीवोंमें मृलोघके समान भङ्ग है। श्रीदारिक-काययोगी जीवोंमें मनुष्यिनियोंके समान भङ्ग है।

६४६. श्रीदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें दो श्रायुश्रोंका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रिधक है। इससे देवगित श्रीर वैकियिक शरीरका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध श्रसंख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रिधक है। इससे पुरुपचेद श्रीर उच्चगोत्रका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रिधक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रिधक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रिधक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रिषक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रिषक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रिषक है। वैकियिककाययोगी श्रीर वैकियिक मिश्रकाययोगी जीवोंमें सामान्य देवोंके समान भक्त है।

६४७. त्राहारक काययोगी और ब्राहारकिमश्रकाययोगी जीवोंमें देवायुका उत्छप्ट स्थितिबन्घ सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे हास्य, रित ब्रीर यशस्कीर्तिका उत्छप्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रिधक यिं विसे । पंचणोक ॰--देवगदि--तिषिणसरीर-श्रजस०-उचा ॰ उ०द्वि० विसे ॰ । यिं ॰ विसे ॰ । पंचणा०--छदंसणा०--श्रसादा०--पंचंत० उ०द्वि ॰ विसे ० । यिं ह० विसे ० । चदुसंज० उ०द्वि ॰ विसे ॰ । यिं ० विसे ० ।

६४=. कम्मइ० सन्वत्थोवा देवगदि-वेउन्वि० उ०हि०। यद्वि० विसे०। पुरिस०इस्स--रदि--जसगि०--उचा० उ०हि० संखें ज्ञ०। यद्वि० विसे०। सादा०--इत्थिवे०मणुसग० उ०हि० विसे०। यद्वि० विसे०। पंचणोक०--तिरिक्षवग०--तिरिणसरीरअजस०-णीचा० उ०हि० विसे०। यद्वि० विसे०। पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०पंचंत० उ०हि० विसे०। यद्वि० विसे०। सोलसक० उ०दि० विसे०। यद्वि०
विसे०। मिच्छ० उ०हि० विसे०। यद्वि० विसे०।

६४६. अवगदवेदे सन्वत्थोवा चदुसंजन उ०दिन । यदिन विसेन । पंचणान-चदुदंस०-पंचंतन उ०दिन संखेंज्जन । यदिन विसेन । जसगिन-उच्चान उ०द्विन 'संखेंज्जन । यदिन विसेन । सादान उन्द्विन विसेन । यदिन विसेन ।

है। इससे सातावेदनीयका उत्कृष्ट स्थितियन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे पाँच नोक नाय, देवगति, तीन शरीर, श्रयशःकीति श्रीर उच्च-गोत्रका उत्कृष्ट स्थितियन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितियन्ध विशेष श्रधिक है। इससे पाँच ब्रानावरण, छह दर्शनावरण, श्रसातावेदनीय श्रीर पाँच श्रान्तरायका उत्कृष्ट स्थिति-बन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितियन्ध विशेष श्रधिक है। इससे चार संज्ञ्ञलनका उत्कृष्ट स्थितियन्ध विशेष श्रधिक है।

६४ = कार्मणकाययोगी जीवोंमें देवगित और वैकियिकशरीरका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पुरुषवेद, हास्य, रित, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे सातावेदनीय, स्नीवेद और मनुष्यगितका उत्कृष्ट स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे यात्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे यात्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है।

६४९. अपगतवेदी जीवोंमें चार संज्वलनोंका उत्कृष्ट स्थितबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण और पाँच अन्तरायका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे सातावेदनीयका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे सातावेदनीयका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है।

९ मूलप्रतौ उ०द्वी० चसंखेळा० इति पाठः ।

६५०. मदि०-सुद् सन्वत्थोवा तिरिक्ख-मणुसायु उ०डि०। यहि० विसे०। देवायु० उ०डि० संखेंज्ज । यहि० विसे०। ि एरियायु० उ०डि० विसे०। यहि० विसे०। एरियायु० उ०डि० विसे०। यहि० विसे०। पुरिस०-इस्स-रदि देवगदि-जसिग०-उचा० उ०डि० संखेंज्ज०। यहि० विसे०। सादा०-इत्थि०--मणुस० उ०डि० विसे०। यहि० विसे०। उवरि छोयं। एस भंगो विभंगे असंज०-किएएले०--अन्भवसि०--मिन्छा०। एवरि किएए एएरियायु० संखेंज्जगु०।

६५१. आभि०-सुद०-ओधिणा० सन्तत्थोत्रा मणुसायुक उ०हि०। यहि० विसे०। देवायुक उठहि० [अ-] संखेँक्न०। यहि० विसे०। आहार० उ०हि० संखेँक्न०। यहि० विसे०। हस्स-रिद-नसिग० उ०हि० संखेँक्न०। यहि० विसे०। सादावे० उ०हि० विसे०। यहि० विसे०। पंचणोक०-दोगिद-चरुसरीर-अनस०- उच्चा० उ०हि० संखेँक्नगु०। यहि० विसे०। पंचणा०--छदंसणा०-असादा०-पंचत० उ०हि० विसे०। यहि० विसे०। वारसक० उ०हि० विसे०। यहि० विसे०। एवं एस भंगो ओधिदंस०-सम्मादि०-खइग०--वेदगस०--उवसम०-सम्मामिन्छादिहि ति।

६४०. मत्यद्वानी और श्रुताज्ञानी जीवोंमें तिर्यश्चायु और मनुष्यायुका उत्कृष्ट स्थिति बन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे देवायुका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे नरकायुका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पुरुष-वेद, हास्य, रित, देवगित, यशःकीर्त और उच्चगोत्रका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे सातावेदनीय, स्त्रीवेद और मनुष्यगितका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे आगेका अल्पबहुत्व ओघके समान है। यही अल्पबहुत्व विभक्षानी, असंयत, कृष्णलेश्यावाले, अभव्य और मिथ्यादिष्ट जीवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि कृष्णलेश्यावाले जीवोंमें नरकायुका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है।

६४१. श्राभितिबोधिकश्वानी, श्रुतशानी श्रोर श्रयधिश्वानी जीवोम मनुष्यायुका उत्सृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे देवायुका उत्सृष्ट स्थितिबन्ध श्रसंख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे श्राहरक श्ररीरका उत्सृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे पाँच नोकपाय, दो गति, चार शरीर, श्रयशःकीर्ति श्रीर उच्चगोश्रका उत्सृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे पाँच नोकपाय, दो गति, चार शरीर, श्रयशःकीर्ति श्रीर उच्चगोश्रका उत्सृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रिधक है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष श्रिधक है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष श्रिक है। इससे विशेष विशेष श्रिक है। इससे प्रकार यह श्रव्यविबन्ध विशेष श्रिक है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष श्रिक है। इससे व्रतस्थितबन्ध विशेष

एवरि खड्गे पंचर्णोक०--दोगदि--चदुसरीर--अजसगित्ति--उच्चा० उ०द्वि० विसे०। यहि० विसे०।

६५२. मणपज्जव० सन्वत्थोवा देवायु० उ०डि० | यहि० विसे० | आहार० उ०िह० संखेँज्ज० | यहि० विसे० | इस्स-रिद-जसगि० उ०िह० संखेँज्ज० | यहि० विसे० | सादा० उ०िह० विसे० | यहि० विसे० | पंचणोक०-देवगदि-तिणिणसरीर-अजस०-उच्चा० उक्क०डि० विसे० | यहि० विसे० | अथवा एदाओ संखेँज्जगुणाओ | उविरे ओथिभंगो | एवं संजद-सामाइ०-छेदो०-परिहार०-संजदासंजदा० |

पता है कि जायिकसम्यग्दष्टि जीवोंमें पाँच नोकपाय, दो गति, चार शरीर, श्रयशःकीर्ति श्रीर उच्चगोत्रका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है।

६४२. मनःपर्ययक्षानी जीवोंमें देवायुका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे आहारक शरीरका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे हास्य, रित और यशकीर्तिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे सातावेदनीयका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पाँच नोकपाय, देवगित, तीन शरीर, अयशकीर्ति और उच्चगोत्रका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पाँच नोकपाय, देवगित, तीन शरीर, अयशकीर्ति और उच्चगोत्रका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्थितवन्ध विशेष अधिक है अथवा इनका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे आगेका अल्पब्हुत्व अवधिक्षानी जीवोंके समान है। इसी प्रकार संयत, सामायिक संयत, छेदोपस्थापनासंयत, परिहारिवशुद्धिसंयत और संयतासंयत जीवोंके जानना चाहिए।

६५३. नीललेश्या श्रौर कापोतलेश्याचाले जीवोंमें तिर्यञ्चायु श्रौर मनुष्यायुका उत्कृष्ट स्थितियन्ध सवसे स्तोक है। इससे यत्स्थितियन्ध विशेष श्रधिक है। इससे देवायुका उत्कृष्ट स्थितियन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितियन्ध विशेष श्रधिक है। इससे नरकायुका उत्कृष्ट स्थितियन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितियन्ध विशेष श्रधिक है। इससे देवगितका उत्कृष्ट स्थितियन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितियन्ध विशेष श्रधिक है। इससे साता-वेदनीय, स्रोवेद श्रौर मनुष्यगितका उत्कृष्ट स्थितियन्ध विशेष श्रधिक है। इससे साता-वेदनीय, स्रोवेद श्रौर मनुष्यगितका उत्कृष्ट स्थितियन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितियन्ध विशेष श्रधिक है। इससे श्रोगेका उत्कृष्ट स्थितियन्ध विशेष श्रधिक है। इससे श्रोगेका श्रव्यवहत्व श्रोघके समान है।

६५४. तेऊए सन्वत्थोवा तिरिक्ख-मणुसायु० उ०िड । यष्टि॰ विसे०। देवायु॰ उ॰िड० असंखेँजज॰ । यिड० विसे०। आहार० उ॰िड० संखेँजज॰ । यिड० विसे०। देवगिद०-वेउिव्व० उ०िड० संखेँजज० । यिड० विसे० । पुरिस०--इस्स-रिद-जस०-उच्चा० उ०िड० संखेँजज० । यिड० विसे० । सादावे०--इत्थि०--मणुस० उ०िड० विसे० । यिड० विसे० । सादावे०--इत्थि०--मणुस० उ०िड० विसे० । यिड० विसे० । यिड० विसे० । यिड० विसे० । यिड० विसे० । उविरे औष्यं । एवं पम्माए ति ।

६४५. सुकाए सन्वत्थोवा मणुसायु० उ० हि॰ | यहि॰ विसे॰ | देवायु० उ० हि॰ असंखें जा॰ । यहि॰ विसे० । स्राहार॰ उ॰ हि० संखें जा० । यहि॰ विसे० । देवगदि-वेउन्वि० उ० हि० संखें जा० । यहि॰ विसे० । पुरिस॰-हस्स-रदि-जस०-उचा॰ उ० हि० विसे० । यहि॰ विसे० । सादावे॰-इस्थि उ० हि० विसे० । यहि॰ विसे० । पंचणोक॰-मणुसगदि-तिणिणसरीर-स्रजस०-णीचा० उ० हि० विसे० । यहि० विसे० । उवरि णवगेव जाभंगो ।

६५६. सासरो सन्वत्थोवा तिरिक्ख-मणुसायुक उक्डिक। यद्घिक विसेक।

६४४. पीतलेश्यावाले जीवोंमें तिर्यञ्चायु श्रीर मनुष्यायुका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक हैं। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक हैं। इससे देवायुका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध श्रसंख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे श्राहारकश्रिका उत्कृष्ट स्थितबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे देवगित श्रीर वैकियिक श्रिरका उत्कृष्ट स्थितबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे पुरुषवेद, हास्य, रित, यशकीर्ति श्रीर उच्चगोत्रका उत्कृष्ट स्थितबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे सातावेदनीय, स्त्रीवेद श्रीर मनुष्यगितका उत्कृष्ट स्थितबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे सातावेदनीय, स्त्रीवेद श्रीर मनुष्यगितका उत्कृष्ट स्थितबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे पत्स्थितबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे पत्स्थितबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे प्रतिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे प्रतिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे ग्राहण श्रधिक है। इससे ग्राहण श्रधिक है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे ग्राहण विशेष श्रधिक है।

६५५. शुक्ललेश्यावाले जीवोंमें मनुष्यायुका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध ख्रसंख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे ब्राह्मरक श्रीरका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे ब्राह्मरक श्रीरका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे विवादिक श्रीरका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे प्रत्यातवन्ध विशेष अधिक है। इससे प्रत्यातवन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे प्रत्यातवन्ध विशेष अधिक है।

६४६. सासादनसम्यग्दष्टि जीवोंमें तिर्यञ्चायु श्रौर मनुष्यायुका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे देवायुका उत्कृष्ट स्थिति देवायु॰ उ०िह० संखें जा॰ । यिह० विसे० । पुरिस० [-हस्स-रिद-] देवगिद०-वेउिव्य०-जसिग०-उच्चागो॰ उ०िह॰ संखें जा० । यिहि॰ विसे॰ । सादावे॰-मणुसग०-उ०िह० विसे॰ । यिह० विसे० । पंचणोक॰--तिरिक्खग०--तिरिणसरीर--श्रजस०-णीचा० उिह० विसे॰ । यिह० विसे० । पंचणा०--णवदंसणा०--श्रसादा०--पंचंत० उ०िह० विसे॰ । यहि० विसे० । सोलसक० उ०िह० विसे॰ । यिह० विसे॰ ।

६५७. श्रसगणीसु सन्वत्थोवा तिरिक्ख-मणुसायु० उ०हि०। यहि० विसे०। देवायु० उ०हि० श्रसंखें जा०। यहि० विसे०। णिरयायु० उ०हि० संखें जा०। यहि० विसे०। प्रिस०-देवगदि--उच्चागा० उ०हि० श्रसंखें जा०। यहि० विसे०। इत्थि० उ०हि० विसे०। यहि० विसे०। जसगि० उ०हि० विसे०। यहि० विसे०। मणुसग० उ०हि० विसे०। यहि० विसे०। इस्स--रिद उ०हि० विसे०। यहि० विसे०। यहि० विसे०। विसे०। पंचणोक०-णिरय-गदि-तिणिणुसरीर-श्राम-णीचा० उ०हि० विसे०। यहि० विसे०। सादा० उ०हि० विसे०। यहि० विसे०। सादा० उ०हि० विसे०। यहि० विसे०। पंचणा०--णवदंसणा०--श्रसादा०-पंचत० उ०हि० विसे०।

वन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे पुरुषवेद, हास्य, रित, देवगित, वैकियिकशरीर, यशःकीर्त और उच्चमोत्रका उत्कृष्ट स्थितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे सातावेदनीय और मनुष्यमितका उत्कृष्ट स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे पाँच नोकपाय, तिर्यञ्चमित, तीन शरीर, अयशःकीर्ति और नीचमोत्रका उत्कृष्ट स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय और पाँच अन्तरायका उत्कृष्ट स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे सोलह कपायका उत्कृष्ट स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे सोलह कपायका उत्कृष्ट स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे सोलह कपायका उत्कृष्ट स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे सोलह कपायका उत्कृष्ट स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है।

६४७. श्रसंक्षी जीवोंमें तिर्यञ्चायु श्रीर मनुष्यायुका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध सवसे स्तोक है। इससे यिस्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे देवायुका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध श्रसंख्यात्मुणा है। इससे यिस्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे नरकायुका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध संख्यातमुणा है। इससे यिस्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे पुरुषवेद, देवगति श्रीर उच्चगोत्रका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध वसंख्यातमुणा है। इससे यिस्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यिस्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यिस्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यश्यक्तिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे मनुष्यगतिका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे वावेक्ष्य विशेष श्रधिक है। इससे पाय, नरकगति, तीन शरीर, श्रयशक्तिति श्रीर नीचगोत्रका उत्कृष्ट स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है।

यद्वि॰ विसे०। सोलसक॰ उ०द्वि० विसे०। यद्वि॰ विसे०। मिच्छ० उ०द्वि० विसे०। यद्वि॰ विसे॰। ऋणाहार० कम्मइमभंगो ।

एवं उक्तस्सपरस्थाणहिदिऋष्पावहुगं समत्तं

६५८. जहराएए पगदं । दुवि०--श्रोघे० आदे० । आघे० सन्तत्थोवा तिरिक्खमणुसायूगां जहराण्यो हिद्विंघो । यहि० विसे० । लोभसंज० ज०हि०वं० संखेँ जारू० ।
यहि० विसे० । पंचणा०--चदुदंसणा०--पंचंत० ज०हि० संखेँ जा० । यहि० विसे० ।
जस०-उच्चा० ज०हि० संखेँ जा० । यहि० विसे० । सादा० ज०हि० विसे० । यहि०
विसे० । मायासंज० ज०हि० संखेँ जा० । यहि० विसे० । माण्संज० ज०हि० विसे० ।
यहि० विसे० । कोधसंज० ज०हि० विसे० । यहि० विसे० । पुरिस० ज०हि० संखेँ जा० ।
यहि० विसे० । शिरय-देवायु० ज०हि० संखेँ जा० । यहि० विसे० । इस्स-रदि-भयदुगुं०--तिरिक्ख--मणुसगदि--श्रोरालि०-तेजा०-क०--णीचागो० ज०हि० श्रसंखेँ जन० ।
यहि० विसे० । श्रादि-सोग-श्रास० ज०हि० विसे० । यहि० विसे० । इत्थि०
ज०हि० विसे० । यहि० विसे० । एवंस० ज०हि० विसे० । पंदि० विसे० । पंदि स्वान-श्रास० ज०हि० विसे० । यहि० विसे० । पंदि स्वान-श्रास० ज०हि० विसे० । प्रान्ति स्वान-स्वा

इससे यहिस्थितिबन्ध विशेष अधिक हैं। इससे सोलइ कषायका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यहिस्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे मिथ्यात्वका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यहिस्थितिबन्ध विशेष अधिक है। अनाहारक जीवोंमें कार्मणकाय-योगी जीवोंके समान भक्क है।

इस प्रकार उत्कृष्ट परस्थान स्थितिऋत्पबहुत्व समाप्त हुऋा ।

६४८. जघन्यका प्रकरण है। उसकी श्रपेत्रा निर्देश दो प्रकारका है—श्रोघ श्रौर क्रादेश । त्रोघसे तिर्यञ्चायु त्रौर मनुष्यायुका जघन्य स्थितिवन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थितवन्थ विशेष अधिक है। इससे लोभ संस्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिवन्ध विरोप ऋधिक है। इससे पाँच झानावरण, चार दर्शनावरण ऋौर पाँच ब्रन्तर।यका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यशःकीर्ति श्रीर उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे सातावेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे यहिस्यतिबन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे माया संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यहिस्यतिबन्ध विशेष अधिक है। इससे मानसंज्वलनका जघन्य स्थितिवन्घ विशेष ऋधिक है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष ऋधिक है। इससे क्रोधसंज्व लनका जघन्य स्थितियन्ध विशेष ग्रथिक है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे पुरुषयेदका जघन्य स्थितियन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है । इससे नरकायु श्रौर देवायुका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थिति-बन्ध विशेष ऋधिक है। इससे हास्य, रति, भय, जुगुन्सा, तिर्यत्र्चगति, मनुष्यगति, ऋौदा-रिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर श्रीर नीचगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध श्रसंख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष ऋधिक है। इससे अरित, शोक और अयशःकीर्तिका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे स्रीवेदका जधन्य स्थितिबन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे यस्थितिबन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे नपुंसकवेदका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष ऋधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष ऋधिक

ज॰िंड॰ विसे॰। यिंड॰ विसे०। असादा० ज०िंड० विसे॰। यिंड॰ विसे॰। बारसक० ज॰िंड॰ विसे०। यिंड॰ विसे०। मिच्छ० ज०िंडि॰ विसे०। येंडि॰ विसे०। देवगिंद-वेउन्वि० ज०िंड० संखेंडज०। यिंड० विसे०। गिरयग० ज०िंड० विसे०। यिंड० विसे॰। आहार० ज०िंड० संखेंडज०। यिंड० विसे॰।

६५६. णिरएस सन्वत्थोवा दोएणं आयु॰ ज॰हि॰ । यहि० विसे०। पंचणोक०मणुसग॰--तिएिणसरीर--जसगि०--उच्चा॰ ज०हि॰ असंखेँज्ज०। यहि॰ विसे०।
अरि-सोग--अजस० ज॰हि॰ विसे०। यहि॰ विसे॰। इत्थि॰ ज॰हि० विसे॰।
यहि० विसे०। एवुंस० ज॰हि॰ विसे०। यहि० विसे०। एचिणा॰ ज॰हि० विसे०।
यहि॰ विसे०। तिरिक्लग॰ ज०हि० विसे०। यहि॰ विसे०। पंचणा०-एवदंसए॥०सादावे०-पंचंत० ज॰हि० विसे०। यहि॰ विसे०। असादा॰ ज०हि० विसे०। यहि॰
विसे०। सोलसक॰ ज०हि० विसे॰। यहि० विसे॰। मिच्छ० ज॰हि॰ विसे॰।
यहि० विसे०। एवं पढमाए।

है। इससे पाँच दर्शनावरणका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे असातावेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पिथ्यात्वका जघन्य स्थितिबन्ध अधिक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे देवगति और वैकियिक शरीरका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे देवगति और वैकियिक शरीरका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितिन्ध विशेष अधिक है।

६४९. नारिकयों में दो आयुर्ग्नेका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पाँच नोकपाय, मनुष्यमित, तीन शरीर, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है। इससे यित्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे य्रात्य श्रीक क्षे। इससे य्रात्य श्रीक क्षे। इससे य्रात्य विशेष अधिक है। इससे यत्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे नीचगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे विर्यञ्चगितका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे वाँच झाना-वरण, नौ दर्शनावरण, साताबेदनीय और पाँच अन्तरायका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे मोलह कषायका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे मोलह कषायका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे मोलह कषायका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे मिथ्यात्वका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे प्रत्थितिबन्ध विशेष विशे

६६०. विदियादि यात छि ति सन्वत्थोत्रा दोश्रायु० ज०हि०। यष्ठि० विसे०। पंचणोक०--मणुसग०--तिणिणुसरीर--जसगि०--उच्चा० ज०हि० श्रसंखेंज्ज०। यहि० विसे०। यरदि-सोग-श्रजस० ज०हि० विसे०। यहि० विसे०। पंचणा०-छदंसणा०-सादा० -पंचंत० ज०हि० विसे०। यहि० विसे०। श्रसादा० ज०हि० विसे०। यहि० विसे०। श्राणाणिदि०३ ज०हि० विसे०। वारसक० ज०हि० विसे०। यहि० विसे०। यहि० विसे०। यहि० विसे०। यहि० विसे०। यहि० विसे०। यहि० विसे०। प्राण्वंपि०४ ज०हि० विसे०। यहि० विसे०। प्राण्वंपि०४ ज०हि० विसे०। यहि० विसे०। प्राण्वंपि० ज०हि० विसे०। यहि० विसे०। स्विक्ष्यग० ज०हि० विसे०। यहि० विसे०। सत्तमाए पुढवीए एसेव भंगो। एवरि सव्वत्थोवा विरिक्ष्यायु० ज०हि०। यहि० विसे०। एवं यात्र वारसकसा० ज०हि० विसे०। विशे०। यहि० विसे०। यहि० विसे०। यहि० विसे०। एवं यात्र वारसकसा० ज०हि० विसे०। विरिक्ष्यगदि-णीचा० ज०हि० संखेंज्ज०। यहि० विसे०। श्रीणाणिदि०३ ज०हि० विसे०। यहि० विसे०। श्राणाणिदि०३ ज०हि० विसे०। यहि० विसे०। अर्णाणाणिदि०३ ज०हि० विसे०। यहि० विसे०। अर्णाणाणुवंपि०४ ज०हि० विसे०।

६६०. ट्रसरीसे लेकर छटवीं तक दो ऋष्युश्चोंका जघन्य स्थितियन्ध सबसे स्तीक है। इससे यह्म्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे पाँच नोकपाय, मनुष्यगति, तीन शरीर, यशःकोर्ति और उच्चगोत्रका ज्ञघन्य स्थितिवन्ध श्रसंख्यातगुणा है । इससे यतिस्थितिवन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे ग्ररित, शोक ग्रीर ग्रथशकीर्तिका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिवन्य विशेष अधिक है। इससे पाँच बानावरण, छह दर्शनाः वरण. सातावेदनोय श्रीर पाँच श्रन्तरायका जघन्य स्थितियन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यतिस्यतिवन्ध विशोप श्रधिक है। इससे श्रसातावेदनीयका जधन्य स्थितिवन्ध विशोष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे बारह कपायका जधन्य स्थिति-वन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे स्यानगृद्धि तीनका जवन्य स्थितिवन्य संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिवन्य विशेष अधिक है। इससे अनः न्तानवन्धी चारका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे मिथ्यात्वका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितियन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे स्त्रीवेदका जघन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थिति-वन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे नपुंसकवेदका जधन्य स्थितवन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे यहिस्थतिबन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे नीचगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष ग्रधिक है। इत्त्रसे यहिस्थतिबन्ध विशेष अधिक है। इससे तिर्यञ्जगतिका जधन्य स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। सातवीं पृथिवीमें यही भङ्ग है। इननी विशेषता है कि तिर्यञ्चायुका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यितस्थितियन्ध विशेष अधिक है। इसी प्रकार बारह कपाय तक जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे तिर्वञ्चगति श्रीर नीच-गोलका जबन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष ऋधिक है। इससे स्त्यातगृद्धि तीनका जघन्य स्थितियन्ध विशेष ऋधिक है। इससे यत्स्थितियन्ध विशेष ऋधिक है। इससे श्रनस्तान्वन्धी चारका जघन्य स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितवस्य विशेष ग्रथिक है । इससे मिथ्यात्वका जघन्य स्थितवस्य विशेष ग्रधिक है । यिहि॰ विसे॰ । मिच्छ॰ ज॰िह विसे॰। यिहि॰ विसे०। इत्थि॰ ज०िह० संसेँजि०। यिह॰ विसे॰ । एवुंस० ज०िह० विसे०। यिहि॰ विसे०।

६६१. तिरिक्खेसु सम्बत्योवा दोश्रायु० ज॰हि॰ । यहि॰ विसे० । णिरयदेवायु० ज०हि॰ संखेँजज० । यहि० विसे० । पंचणोक्त०--दोगदि--तिणिणसरीरजसगि०-णीचागो०-उच्चा० ज०हि० श्रसंखेँजज० । यहि० विसे॰ । श्ररदि--सोग॰
श्रजस॰ ज०हि० विसे॰ । यहि० विसे॰ । इत्थि० ज०हि० विसे॰ । यहि॰
विसे० । णवुंस॰ ज०हि॰ विसे॰ । यहि० विसे० । पंचणा०-णवदंसणा०-सादा०पंचंत॰ ज०हि॰ विसे० । यहि० विसे॰ । श्रसादा० ज०हि० विसे॰ । यहि०
विसे॰ । सोलसक० ज०हि० विसे० । यहि० विसे॰ । मिच्छ० ज०हि० विसे॰ ।
यहि० विसे॰ । देवगदि--वेउन्वि॰ ज०हि॰ संखेँजा॰ । यहि० विसे० । णिरयग०
ज॰हि॰ विसे॰ । यहि० विसे० ।

६६२. पंचिंदिय--तिरिक्ख०३ सव्वत्थोवा तिरिक्ख--मणुसायु॰ ज०हि॰। यहि॰ विसे०। दोस्रायु॰ ज०हि॰ संखेंज्ज०। यहि॰ विसे॰। पंचणोक॰-देवगदि-तिरिणसरीर--जस॰--उचा॰ ज०हि॰ स्रसंखेंज्ज॰। यहि० विसे०। ऋरदि--सोग-

इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे स्त्रीवेदका जघन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे नपुंसकवेदका जघन्य स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है।

६६१. तिर्थञ्चोंमें दो आयुत्रोंका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यहिस्थ-तिबन्ध विशेष अधिक है। इससे नरकायु और देवायुका जबन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुरा। है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे पाँच नोकपाय, दो गति, तीन शरीर, यशःकीर्तिः नीचगोत्र श्रीर उद्यगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध श्रसंख्यातगुणा है। इससे यत्स्थि-तिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे श्ररति, शोक और अवशःकीर्तिका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष ऋधिक है । इससे यहिस्थतिबन्ध विशेष ऋधिक है । इससे स्त्रीवेदका जघन्य स्थिति-बन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे नपुंसकवेदका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पाँच श्वानावरण, नौ दर्शनावरण, सातावेदनीय और पाँच अन्तरायका जधन्य स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे ग्रसाता वेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यहिस्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे सोलह कषायका जघन्य स्थितिवन्ध विशेष ऋधिक है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष ऋधिक है। इससे मिथ्यात्वका जघन्य स्थितिवन्घ विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे देवगति और वैकियिक शरीरका जघन्य स्थितिबन्घ संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थि तिबन्ध विशेष अधिक है। इससे नरकगतिका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यरिस्थतिबन्ध विशेष श्रधिक है।

६६२. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च तीनमें तिर्यञ्चायु श्रौर मनुष्यायुका जधन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यहिस्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे हो श्रायुश्रोंका जधन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यहिस्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे पाँच नोकषाय, देवगित, तीन शरीर, यशकीर्ति श्रौर उच्चगीत्रका जधन्य स्थितिबन्ध श्रसंख्यातगुणा है। श्राम्य जिंदि विसे । यहि विसे । मणुसग - श्रोरालिय - जिंदि विसे । यहि विसे । एवं से जिंदि विसे । यि विसे । एवं से जिंदि विसे । एवं से जिंदि विसे । एवं से जिंदि विसे । यहि विसे । पंचिणा - विसे । यहि विसे । एवं से एवं प्राप्त प्रविद्या । यहि विसे । यहि विसे । प्राप्त । प्रविद्या । यहि विसे । श्री विसे । यहि विसे । मिन्द । प्राप्त । यहि विसे । यहि विसे । पिन्द । प्राप्त । यहि विसे । यहि विसे । यहि विसे । प्राप्त । प्राप्त

६६३. पंचिदियतिरिक्खत्रपज्जत्तगेसु पढमपुढिविभंगो । एवं सञ्बद्यपज्जत्तगाणं सञ्बिविय-पुढिवि०--त्र्याउ०--वर्णप्पदि०--बादरवर्णप्पदिपत्तेय०-सञ्बर्णियोदाणं पंचिदिय-तसञ्चपज्जताणं च । एइंदिएसु तिरिक्खोघं ।

६६४. तेउ०--वाउ० सव्वत्थोवा तिरिक्खायु॰ ज०डि०। यडि० विसे०। पंचणोक०--तिरिक्खग०--तिरिणसरीर--जस०-णीचा० ज०डि० असंसेंज्ज०। यडि० विसे०। अरदि-सोग-अजस० ज०डि० विसे०। यडि० विसे०। उवरि अपज्जत्तर्भगो।

इससे यत्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे अरित, शोक और अयशःकीर्तिका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे मनुष्यगति और औदारिक शरीरका जघन्य स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितबन्ध अधिक है। इससे स्त्रीवेदका जघन्य स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे नपुंसकघेदका जघन्य स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे नीचगोत्रका जघन्य स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे विर्यञ्चगतिका जघन्य स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे नरकगतिका जघन्य स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शन नावरण, सातावेदनीय और पाँच अन्तरायका जघन्य स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे असातावेदनीयका जघन्य स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे असातावेदनीयका जघन्य स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे असातावेदनीयका जघन्य स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे असातावेदनीयका अधिक है। इससे मिथ्यात्वका जघन्य स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे मिथ्यात्वका जघन्य स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है।

६६३. पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च श्रपयीतकोंमें पहली पृथ्वीके समान भङ्ग है। इसी प्रकार सब श्रपयीतक, सब विकलेन्द्रिय, पृथ्वीकायिक, जलकायिक, वनस्पतिकायिक, बाद्रवन-स्पतिकायिक, सब निगोद, पञ्चेन्द्रिय श्रपयीत श्रीर त्रस श्रपयीत जीवोंके जानना चाहिए। एकेन्द्रियोंमें सामान्य तिर्यञ्चोंके समान भङ्ग है।

६६४. अग्निक।यिक और वायुकायिक जीवोंमें तिर्यञ्चायुका जघन्य स्थितियन्ध सबसे स्तोक है। इससे यहिश्यतिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पाँच नोकवाय, तिर्यञ्चगति, तीन शरीर, यशःकीर्ति और नीचगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध असंख्यातगुण है। इससे यहिश्यतिबन्ध विशेष अधिक है। इससे अरित, शोक और अयशःकीर्तिका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे अरित, शोक और अयशःकीर्तिका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यहिश्यतिबन्ध विशेष अधिक है। इससे उपर अपर्याप्तकोंके समान भक्त है।

६६५. मणुस॰ ३ सव्वत्थांवा तिरिक्ख'-मणुसायु० ज॰ हि० । यहि० विसे॰ । लोभसंज॰ ज॰ हि० संसेंजा० । यहि॰ विसे॰ । पंचणा०-चदुदंसणा०--पंचंत० ज० हि० संसेंजा॰ । यहि० विसे० । जस०-उचा० ज० हि॰ संसेंजा॰ । यहि० विसे० । सादावे० ज० हि० विसे॰ । यहि॰ विसे॰ । मायासंज० ज॰ हि॰ संसेंजा॰ । यहि॰ विसे॰ । माणुसंज॰ ज० हि॰ विसे॰ । यहि॰ विसे॰ । कोध्रसंज॰ ज० हि० विसे॰ । यहि॰ विसे॰ । दोश्रायु॰ ज॰ हि० संसेंजा॰ । यहि॰ विसे॰ । दोश्रायु॰ ज॰ हि० संसेंजा॰ । यहि॰ विसे॰ । हस्स--रिद-भय-दुर्गुं०-मणुसगिद--तििण्णुसरीरं ज० हि० श्रसंसेंजा० । यहि॰ विसे॰ । श्रायु॰ ज॰ हि० श्रसंसेंजा० । यहि० विसे॰ । श्रायु॰ ज० हि० विसे॰ । यहि० विसे॰ । स्वायु॰ ज० हि० विसे॰ । यहि० विसे॰ । स्वायु॰ ज० हि० विसे॰ । स्वायु॰ जिल्वि॰ विसे॰ । स्वायु॰ जिल्वि॰ विसे॰ । स्वायु॰ ज० हि० विसे॰ । स्वायु॰ जिल्वि॰ व

६६४. मनुष्यत्रिकमें तिर्यञ्चायु श्रीर मनुष्यायुका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे लोभ संज्वलनका जधन्य स्थितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष ऋधिक है। इससे पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण श्रीर पाँच अन्तरायका जधन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थिति-बन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यशकीर्ति श्रीर उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुरा। है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष ऋधिक है। इससे सातावेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे माया संउवलनका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातग्रणा है ! इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष ऋधिक है । इससे मान संज्वसन-का जघन्य स्थितिबन्ध विशेष ऋधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष ऋधिक है। इससे कोध संज्वलनका जधन्य स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे पुरुषवेदका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे दो श्रायश्रोंका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुर्णा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे हास्य, रति, भय, जुगुप्सा, मनुष्यगति श्रीर तीन शरीरका ज्ञचन्य स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे ब्राति, शोक ब्रौर अयशःकोर्तिका जधन्य स्थितिबन्ध विशेष ब्राधिक है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष ऋधिक है। इससे स्त्रीवेदका जधन्य स्थितिबन्ध विशेष ऋधिक है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे नपुंसकवेदका ज्ञधन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे नीच गोत्रका जधन्य स्थितियन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितियन्ध विशेष अधिक है। इससे तिर्यञ्जगतिका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पाँच-दर्शनावरणका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्घ विशेष अधिक है। इससे असातावेदनीयका जगन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे बारह कपायका जधन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है । इससे मिथ्यात्वका जधन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है ।

६ मूलप्रती तिरिक्षेषु मणुसायु० इति पाठः।

विसे० | यद्वि० विसे० | देवगदि-वेउव्वि०--श्राहार० ज०द्वि० संखेँज्ञ० | यद्वि० विसे० | णिरयग० ज०द्वि० संखेँज्ञ० | यद्वि० विसे० |

६६६. देवा भवण ०--वाण्वंत ० िण रयोघं । जोदिसिय यात सहस्सार ति विदियपुढिविभंगो । आणद् याव णवगेवज्ञा ति सो चेव भंगो । णविर तिरिक्खायु०-तिरिक्खादी एिथ । अणुदिस याव सब्वद्दा ति सब्वत्थोवा मणुसायु० जब्द्वि० । यिढ विसे० । पंचणोक ०-मणुसग०-तिणिणसरीर-जस०-उच्चा० जब्दि० असंखेँ ज्ञा० । यिढ विसे० । अरिद-सोग--अजस० जब्दि० विसे० । यिद्व० विसे० । पंचणा०- अदंसणा०-सादा०-पंचंत० जब्दि० विसे० । यिद्व० विसे० । असादा० जब्दि० विसे० । यिद्व० विसे० ।

६६७. पंचिदिय-पंचिदियपज्जता० सब्बत्थोवा तिरिक्ख०-मणुसायुग० ज॰ द्वि० । यहि॰ विसे० । लोभसंज॰ ज० हि॰ संर्थेज्ज० । यहि० विसे० । पंचणा०-चदुदंसणा०-पंचंत॰ ज० हि॰ संर्थेज्ज० । यहि॰ विसे० । जस०-उचा० ज॰ हि॰ संर्थेज्ज० । यहि० विसे० । सादा० ज० हि॰ विसे० । यहि० विसे० । मायासंज० ज० हि॰

इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे देवगित, वैकियिक शरीर श्रौर श्राहारक शरीर-का जधन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यस्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे नरकगितका जधन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष श्रधिक है।

६६६. सामान्य देव, भवनवासी श्रीर ज्यन्तर देवोंमें सामान्य नारिकयोंके समान भक्त है। ज्योतिषियोंसे लेकर सहस्रार करण तकके देवोंमें दूसरी पृथिवींके समान भक्त है। श्रानतसे लेकर नी श्रेवेयक तक वही भक्त है। इतनी विशेषता है कि यहाँ तिर्यञ्चायु श्रीर तिर्यञ्चाति नहीं है। श्रानुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें मनुष्यायुका जघन्य स्थितिवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष श्रिवन्ध विशेष श्रीक है। इससे पाँच नोकषाय, मनुष्यगति, तीन शरीर, यशःकीर्ति श्रीर उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिवन्ध श्रमंख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष श्रीक है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष श्रीक है। इससे विशेष श्रीक है। इससे पाँच झानावरण, छह दर्शनावरण, साता वेदनोय श्रीर पाँच श्रन्तरायका जघन्य स्थितिवन्ध विशेष श्रीक है। इससे पत्स्थितिवन्ध विशेष श्रीक है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष श्रीक है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष श्रीक है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष श्रीक है। इससे वारह कषायका जघन्य स्थितिवन्ध विशेष श्रीक है।

६६७. पञ्चेन्द्रिय और पञ्चेन्द्रिय पर्याप्त जीवांमें तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे लोभ संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पाँच ज्ञानावारण, चार दर्शनावरण और पाँच अन्तरायका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यश्चित और उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे सातावेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे माया

संखेंज्ज । यहि० विसे० । माणसंज ० ज०हि० विसे० । यहि० विसे० । कोधसं-ज ० ज०हि० विसे० । यहि० विसे० । पुरिस० ज०हि० संखेंज्ज । यहि० विसे० । दो आयु० ज०हि० संखेंज्ज । यहि० विसे० । चदुणोक ०-देवगदि-तिष्णसरीर० ज०हि० संखेंज्ज । यहि० विसे० । उन्तरिं पंचिदियतिरिक्खभंगो ।

६६८. तस-तसपज्जत्तगेसु सन्बत्थोवा तिरिक्ख-मणुसायु० ज॰हि॰र । यहि०विसे० । लोभसंज० ज॰हि॰ संखेंज्ज० । यहि०विसे० । उवरि श्रोघं याव िएरय-देवायु॰ ज०हि० संखेंज्ज० । यहि० विसे० । चहुणोक०-मणुसग०-तिएण्सरीर० ज०हि० असंखेंज्ज० । यहि० विसे० । अरिद-सोग-अजस० ज०हि० विसे० । यहि० विसे० । यहि० विसे० । यहि० विसे० । एण्चंस० ज०हि० विसे० । यहि० विसे० । एण्चंस० ज०हि० विसे० । यहि० विसे० । यहि० विसे० । विरिक्खग० ज०हि० विसे० । यहि० विसे० । यहि० विसे० । विरिक्खग० ज०हि० विसे० । यहि० विसे० । यहि० विसे० । विरिक्खग० ज०हि० विसे० । यहि० विसे० । यहि० विसे० । विरिक्खग० ज०हि० विसे० । यहि० विसे० । यहि० विसे० । विरिक्खग० ज०हि० विसे० । विरिक्खण चण्डि० विसे० । विरिक्खण चण्डि० विसे० । विरिक्खण चण्डि० विसे० । विरिक्खण चण्डि० विसे० । विरिक्खण चण्डिण विसे० । विरिक्खण चण्डिण विसे० । विरिक्खण चण्डिण विसे० । विषेण चण्डिण विसे० । विसे० । विरिक्खण चण्डिण विसे० । विदिष्ण चण्डिण विसे० । विसे०

संज्वलनका जधन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे पुरुषवेदका जधन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे दो श्रायुओंका जधन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितबन्ध संख्यातगुणा है। इससे चार नोकपाय, देवगित श्रीर तीन शरीर का जधन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे श्रीर विवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे श्रीर विवन्ध विशेष श्रिष्ठक है। इससे श्रीर विवन्ध विशेष श्रीर तीन शरीर श्रीर विवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रीर्थक है। इससे श्रीर विवन्ध विशेष श्रीर्थक है। इससे श्रीर विवन्ध विशेष श्रीर स्थान भक्त है।

६६ प्रस और त्रस पर्यात जीवों में तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुका जघन्य स्थितिवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यिस्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे लोभ संज्वलनका जघन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यिस्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे आगे नरकायु और देवायुका जघन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इसके प्राप्त होने तक ओघके समान भक्क है। इससे यिस्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे चार नोकषाय, मनुष्यगित और तीन शरीरका जघन्य स्थितिवन्ध त्रसंख्यातगुणा है। इससे यिस्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे विशेष अधिक है। इससे यिस्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यिस्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यिश्यितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यिस्थितवन्ध विशेष

<sup>&</sup>lt;sup>र</sup> मूलप्रतौ ज० हि० विसे० । यहि**०** इति पाठः ।

यद्वि० विसे०। मिच्छ० ज०द्वि० विसे०। यद्वि० विसे०। देवगदि-वेउच्वि० ज०द्वि० संस्वैज्ञि०। यद्वि० विसे०। शिरयग० ज०द्वि० विसे०। यद्वि० विसे०। ऋहार०-ज०द्वि० संस्वेज्ञि० : यद्वि० विसे०।

६६६. पंचमण्ड-तिण्णिवचि सन्तरथोवा तिरिक्ख-मणुसायु जिल्हि । यिष्ठ विसे । लोभसंज जिल्हि संखेंजा । यिष्ठ विसे । पंचणा - चरु-दंसणा - पंचंत जिल्हे संखेंजा । यिष्ठ विसे । जस - उच्च जिल्हे संखेंजा । यिष्ठ विसे । जस - उच्च जिल्हे संखेंजा । यिष्ठ विसे । सामांज जिल्हे विसे । सामांज जिल्हे विसे । यिष्ठ विसे । सामांज जिल्हे संखेंजा । यिष्ठ विसे । माणसंज जिल्हे विसे । यिष्ठ विसे विसे यिष्ठ विषे यिष्ठ विषे यिष्ठ विषे यिष्ठ विष्ठ विषे । यिष्ठ विष्ठ विष्ठ

६६९. पाँच मनोयोगी ग्रौर तीन वचनयोगी जीवोंमें तिर्यञ्चायु ग्रौर मनुष्यायुका जधन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष ऋधिक है। इससे लोभ संज्व लनका जञन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण श्रीर पाँच श्रन्तरायका जघन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका जधन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशोप ऋधिक है। इससे सातावेद-नीयका जग्रन्य स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे माया संज्वलनका जघन्य क्थितिबन्ध संख्यातगुर्खा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है । इससे मानसंज्वलनका जघन्य स्थितियन्थ विशेष श्र<mark>धिक है । इससे य</mark>त्स्थिति-वन्ध विशेष ग्रधिक हैं। इससे कोधसंज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक हैं। इससे यत्स्थितियन्ध विशेष अधिक है। इससे पुरुषवेदका जधन्य स्थितियन्ध संख्यानगुणा है । इससे पत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक हैं । इससे दो श्रायुश्रोंका जघन्य स्थितिवन्ध संख्यात-गुणा है । इससे चित्स्थतिबन्ध विशेष ऋधिक है । इससे हास्य, रित, भय श्रीर जुगुप्साका ु जपन्य स्थितिबन्ध ग्रसंख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष ग्रिथिक है । इससे देवगति, वैक्रियिक शरीर, ब्राहारकशरीर,तैजसशरीर ब्रौर कार्मखशरीरका जवन्य स्थितियन्घ संख्यात-गुणा है। इससे युत्स्थितिबन्ध विशेष श्रीधिक है । इससे निद्राः श्रीर प्रचलाका ज्ञाचन्य स्थितिवन्ध संस्तातगुणा है । इससे यत्स्थितवन्ध विशेष ग्रधिक है । इससे श्ररति, शोक ग्रीर ग्रयशःकीर्तिका जघन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुर्ण है । इससे यत्स्थितवन्ध विशेष यक्षिक है । इससे यसात्विदर्भायका जयन्य स्थितिवन्ध विशेष यथिक है । इससे यत्स्थिति-

यहि० विसे० | पश्चक्खाणा०४ ज०हि० संखेँ ज्ञाः | यहि० विसे० | अपश्चक्खाः णा०४ ज०हि० संखेँ ज० | यहि० विसे० | मणुसगदि-श्रोरालि० ज०हि० संखेँ ज० | यहि० विसे० | यिणुगिद्धि०३ ज०हि० संखेँ ज० | यहि० विसे० | श्रणंताणु०४ ज०हि० विसे० | यहि० विसे० | मिन्द्य० ज०हि० विसे० | यहि० विसे० | यहि० विसे० | हिथ० ज०हि० संखेँ ज० | यहि० विसे० | इत्थि० ज०हि० संखेँ ज० | यहि० विसे० | एषुंस० ज०हि० विसे० | यहि० विसे० | एषुंस० ज०हि० विसे० | यहि० विसे० | एषुंस० ज०हि० विसे० | यहि० विसे० |

६७०. विचेत्रो०-असचमोस० तसपज्जत्तभंगो । कायजोगि०-स्रोरालियका०-अचक्खुदं०-भवसि०-स्राहारम ति स्रोघं । स्रोरालियमि० तिरिक्खोघं । देवगदि-वंउव्वि० ज०दि० संखेज्ज०। यदि० विसे० सन्त्रुवरिं । एवं कम्मइ०-स्राणा हारम ति ।

६७१. वेउव्वियका० सन्वत्थोवा दो आयु॰ ज०िछ०। यिष्ठ० विसे०। पंचणोक०-मणुसग०-तिरिणसरीर-जस॰-उच्चा० ज०िष्ठ० असंखेँजज०। यिष्ठ० विसे०। सेसं सत्तमाए पुढविभंगो। एवं वेउव्वियमि० आयु वज्ज०। एविरिन्

बन्ध विशेष श्रधिक है। इससे प्रत्याख्यानावरण चारका जघन्य स्थितियन्ध संख्यातगुण है। इससे यित्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे मनुष्यगित श्रीर श्रीदारिक शरीरका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे श्रीत्वन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे श्रीत्वन्ध विशेष श्रधिक है। इससे श्रीत्वन्ध विशेष श्रधिक है। इससे पित्थित्वन्ध विशेष श्रीवक है। इससे यित्थितिबन्ध विशेष श्रीवक है। इससे तिर्यञ्ज्याति श्रीर नीचगीत्रका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्थितिबन्ध विशेष श्रीवक है। इससे हिवेदका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्थितिबन्ध विशेष श्रीवक है। इससे हिवेदका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्थितिबन्ध विशेष श्रीवक है। इससे यित्थितिबन्ध विशेष श्रीवक है।

६००. यचनयोगी और असत्यमुपायचसयोगी जीयोंमें असपयिषकोंके समान भक्त है। काययोगी, श्रीदारिककाययोगी, अञ्चलदर्शनी, भन्य और आहारक जीवोंमें श्रीघके समान भक्त है। श्रीदारिक मिश्रकाययोगी जीवोंमें सामान्य तिर्यक्षोंके समान भक्त है। देव-गति और वैकियकशरीरका जघन्य स्थितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। ऐसा सबके अन्तमें कहना चाहिए। इसी प्रकार कार्मण काययोगी और अनाहारक जीवोंके जानना चाहिए।

६७१. वैकियिक काययोगी जीवोंमें दो आयुओंका जञ्चन्य स्थितिवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिवन्य विशेष श्रिक्ष है। इससे पाँच नोकषाय, मनुष्यगति, तीन शरीर, यशकीर्ति और उच्चगोत्रका जञ्चन्य स्थितिवन्ध श्रसंख्यातगुण है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष श्रिक्षिक है। शेष श्रह्मबहुत्व सात्रधीं पृथिवोवेः समान है। इसी प्रकार आयुकर्मको क्खग०-णीचा० ज ० हि॰ संखेँजज०। यहि॰ विसे०। इत्थि० ज॰हि० विसे०। यहि॰ विसे०। णवुंस० ज॰हि॰ विसे॰। यहि० विसे०। थीणगिद्धि०३ ज०हि॰ विसे०। यहि॰ विसे०। ऋणंताणुबंधि०४ ज॰हि॰ विसे०। यहि॰ विसे०। मिच्छ० ज॰हि० विसे०। यहि० विसे०।

६७२. ब्राहार०--ब्राहारिमस्सका० सन्वत्थोवा देवायु० ज०हि०। यहि० विसे०। पंचणोक०-देवगदि-तिणिणसरीर०--जस०--उच्चा० ज०हि संखेँज्ञ०। यहि० विसे०। ब्राहि-सोग-ब्रजस० ज०हि० विसे०। यहि० विसे०। पंचणा०-इदंसणा०-सादा०-पंचंत० ज०हि० विसे०। यहि० विसे०। ब्राहि० विसे०। यहि० विसे०। विहे० विसे०। यहि० विसे०।

६७३. इत्थिवे॰ सन्वत्थोवा तिरिक्ख-मणुसायु॰ ज०हि०। यहि॰ विसे०। दोत्रायु० ज०हि० संखेँज्जगु॰। यहि० विसे०। पुरिस॰ ज०हि० संखेँज्ज०। यहि० विसे०। चदुसंज० ज०हि० विसे०। यहि॰ विसे०। पंचणा॰-चदुदंस०--पंचंत०

छोड़ कर वैक्रियिक मिश्रकाययोगी जीवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि तिर्यश्चगति श्रीर नीचगोत्रका जघन्य स्थितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रिधिक है।

६७२. ब्राह्मरक काययोगी और ब्राह्मरक मिश्रकाययोगी जीवोंमें देवायुका जघन्य स्थितिवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष ब्रधिक है। इससे पाँच नोकषाय देवगित, तीनशरीर, यशःकीर्त ब्रीर उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष ब्रधिक है। इससे ब्राह्मर विशेष ब्रधिक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष ब्रधिक है। इससे पाँच ब्रानावरण, ब्रह्म दर्शनावरण, सातावेदनीय और पाँच ब्रन्तरायका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष ब्रधिक है। इससे पाँच ब्राह्मर है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष ब्रधिक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष ब्रधिक है। इससे ब्रह्मतावेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष ब्रधिक है। इससे ब्रह्मते व्यत्स्थितिबन्ध विशेष ब्रधिक है। इससे चार संज्यतनका जघन्य स्थिति बन्ध विशेष ब्रधिक है। इससे व्यत्स्थित ब्रधिक है। इससे व्यत्स्थित ब्रधिक है। इससे व्यत्स्थित बन्ध विशेष ब्रधिक है।

६७३. स्त्रीवेदी जीवोंमें तिर्यश्चायु श्रीर मनुष्यायुका जधन्य स्थितवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे दो श्रायुश्रोंका जधन्य स्थितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे पुरुषवेदका जधन्य स्थितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे पत्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे प्रतिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे पर्विच श्रानावरण चार दर्शनावरण श्रीर पर्विच श्रन्तरायका जधन्य स्थितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यशकीरित

जि॰ हि॰ संखेंजिन । यहि॰ विसे॰ । जस०--उच्चा॰ जि॰ असंखेंजिन । यहि॰ विसे॰ । सादा॰ जि॰ हि॰ विसे॰ । हस्स-रिह-भय-दुगुं० जि॰ हि॰ असंखेंजि॰ । यहि॰ विसे॰ । हस्स-रिह-भय-दुगुं० जि॰ हि॰ असंखेंजि॰ । यहि॰ विसे॰ । उबरिं पंचिदियभंगो ।

६७४. पुरिसेसु सन्वत्थोवा तिरिक्ख--मणुसायुक जब्हिक । यद्विक विसेक । पुरिसक जब्दिक संखेँज्ञक । यद्विक विसेक । चदुसंजक जब्दिक विसेक । यद्विक विसेक । चदुसंजक जब्दिक विसेक । यद्विक विसेक । दोआयुक जब्दिक संखेँज्जक । यद्विक विसेक । पंचिणाठ--चदुदंसणाक-पंचेतक जब्दिक संखेँज्जक । यद्विक विसेक । जसक--उच्चाक जब्दिक संखेँज्जक । यद्विक विसेक । सादाक जब्दिक विसेक । यद्विक विसेक । उवरिं इत्थिभंगो ।

६७५. एवुंस॰ सन्वत्थांवा तिरिक्स-मणुसायु० ज०हि॰ । यहि० विसे० । णिरय-देवायु॰ ज०हि० संखेज्ज० । यहि० विसे० । पुरिस॰ ज०हि० संखेज्ज० । यहि॰ विसे॰ । चदुसंज॰ ज०हि॰ विसे० । यहि० विसे० । पंचणा॰-चदुदंस०-पंचंत॰ ज०हि० संखेज्ज० । यहि॰ विसे० । जसगि०-उच्चा० ज॰हि॰ संखेज्ज० । यहि॰ विसे० । सादा० ज०हि० विसे॰ । यहि० विसे० । उवरि श्रोधभंगो ।

श्रीर उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध श्रसंख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे सातावेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे हास्य, रित, भय श्रीर जुगुष्साका जघन्य स्थितिबन्ध श्रसंख्यात-गुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे श्रागे पञ्चेन्द्रियोंके समान भक्न है।

६७४. पुरुषवेदी जीवोंमें तिर्यञ्चायु श्रीर मनुष्यायुका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पुरुषवेदका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे चार संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे प्रत्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे प्रत्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे प्रत्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे प्रत्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यशक्तिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे आगो स्नीवेदी जीवोंके समान भक्न है।

६७४, नणुंसकवेदी जीवोंमें तिर्यञ्चायु श्रीर मनुष्यायुका जघन्य स्थितिवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे नरकायु श्रीर देवायुका जघन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे पुरुषवेदका जघन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे चार संज्यलनका जधन्य स्थितिवन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे यित्स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यात्स्थितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे श्रितवन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे यशुःकीर्ति श्रीर उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे सातावेदनीयका जघन्य स्थितिवन्ध विशेष श्रिधक है। इससे श्रागे श्रीयके समान भङ्ग है।

६७६. श्रवगद्वे॰ सब्बत्थोवा लोभसंज॰ ज॰हि॰। यहि॰ विसे॰। पंचणा०-चदुदंस॰-पंचंत॰ ज०हि० संखेंज्ज॰। यहि॰ विसे०। जस०-उच्चा॰ ज०हि॰ संखेंज्ज०। यहि॰ विसे०। सादा० जहि॰ विसे०। यहि० विसे०। मायसंज० ज॰हि० संखेंज्ज०। यहि॰ विसे०। पाणसंज॰ ज०हि॰ विसे०। यहि॰ विसे॰। कोधसंज॰ ज०हि० विसे०। यहि० विसे०।

६७७. कोधकसा॰ सन्वत्थोवा तिरिक्ख-मणुसायु० ज०हि०। यहि॰ विसे॰। चदुसंज॰ ज०हि० संखेँजज०। [यहि॰ विसे०।] पुरिस० ज॰हि॰ संखेँजज०। यहि॰ विसे०।] पुरिस० ज॰हि॰ संखेँजज०। यहि॰ विसे०। पंचणा०-चदुदंस० पंचंत० ज०हि० संखेँजज०। यहि॰ विसे०। उच्चा० ज०हि० संखेँजज०। यहि॰ विसे०। एवं जसगित्ति०। सादावे० ज०हि० विसे०। यहि॰ विसे०। उनिर श्रोधभंगो।

६७८. माणकसाइ० सव्वत्थोवा तिरिक्ख-मणुसायु० ज०डि०। यडि० विसे०। तिषिणसंज्ञ० ज०डि० संखेंज्ज०। यडि० विसे०। कोधसंज्ञ० ज०डि० विसे०। यडि० विसे०। पुरिस० ज०डि० संखेंज्ज०। यडि० विसे०। दोत्रायु० ज०डि०

६७६. अपगतवेदी जीवोंमें लोम संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्वोक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पाँच झानावरण, चार दर्शनावरण और पाँच अन्तरायका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यशकीर्ति और उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे सातावेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे माया संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे माया संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे मान संज्वलनका जघन्य स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष अधिक है।

६७७. कोधकवायवाले जीवोंमें तिर्यक्षायु और मनुष्यायुका जधन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे चार संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पुरुषवेदका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे दो आयुओंका जधन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण और पाँच अन्तरायका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे उद्यानेश्रका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे प्रकार यशःकीर्तिका अख्यबहुत्व है। इससे साताबेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे अभी ओधके समान भक्ष है।

६७८. मानकपायवाले जीवोंमें तिर्यञ्चायु श्रोर ममुख्यायुका जघन्य स्थितिबन्ध सयसे स्तोक है। इससे यित्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे तीन संज्वलनोंका जघन्य स्थिति-बन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे कोधसंज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे पुरुष-वेदका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे ६७६. मायाए सच्वत्थोवा तिरिक्ख-मणुसायु० ज॰हि॰। यहि० विसे०। दोसंज० ज॰हि॰ संखेँज्ज०। यहि० विसे०। माएसंज० ज॰हि० विसे०। यहि० विसे०। माएसंज० ज॰हि० विसे०। यहि० विसे०। पुरिस० ज०हि० संखेँज०। यहि॰ विसे०। दोत्र्यायु० ज०हि॰ संखेँज्ज०। यहि० विसे०। पंचएा०-चढुदंस०-पंचत० ज०हि॰ संखेँजज०। यहि० विसे०। जसिग०-उच्चा० ज०हि॰ संखेँजज०। यहि० विसे०। सादा० ज०हि० विसे०। यहि० विसे०। इस्स-रिद-भय-दुर्गुं०-तिरिक्ख-मणुसगदि--श्रोरालिय०--तेजा०-क०-एीचा० ज०हि० श्रसंखेँजज०। यहि० विसे०। उन्तिं श्रोधभंगो। लोभे मुलोधं।

६६०. मदि०-सुद०-ग्रसंज०-तिष्णिले०-ग्रब्भवसि०--ाँमेच्छादि०-ग्रसणिण ति तिरिक्खोर्य । विभंगे सन्वत्थोवा तिरिक्ख-मणुसायु० ज०डि० । यहि० विसे० ।

दो आयुओंका अधन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पाँच झानावरण, चार दर्शनावरण और पाँच अन्तरायका अधन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यद्दाःकीर्ति और उद्यगोत्रका अधन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे साता-वेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे साता-वेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष अधिक है।

६ ५९. माया कषायवाले जीवोंमें तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे दो संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे मानसंज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे अप्तस्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध सिथितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे दो आयुओंका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे पाँच झानावरण, चार दर्शनावरण और पाँच अन्तरायका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यश्चिक शिर उद्योगिका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यश्चिक श्चीर उद्योगिका जघन्य स्थितबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे यात्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे हास्य, रित, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगित, मनुष्यगित, औदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर और नीचगोत्रका जघन्य स्थितबन्ध असंख्यातगुणा है। इससे यात्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे अगे ओघके समान मङ्ग है। लोभकषायवाले जीवोंमें ओघके समान मङ्ग है।

६८०. मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, ग्रसंयत, तीन लेश्यावाले, श्रभव्य, मिथ्यादिष्ट श्रौर श्रसंज्ञी जीवोंमें सामान्य तिर्यञ्चोंके समान भङ्ग है । विभङ्गद्वानी जीवोंमें तिर्येचायु श्रौर दोश्रायु० ज॰ हि० संखें जि॰ । यहि० विसे० । पंचणां क०--देवगदि--तिणिणसरीर-जस०-उचा० ज० हि० असंखें जि० । यहि० विसे० । पंचणा०--णवदंसणा॰-सादा०पंचंत० ज० हि० विसे० । यहि० विसे० । सोलसक० ज० हि० विसे० । यहि०
विसे० । मिच्छ० ज० हि० विसे० । यहि० विसे० । तिरिक्खगदि-मणुसगदि-श्रोरालि०णीचा० ज० हि० संखें जि० । यहि० विसे० । अरदि-सोग-अनस० ज० हि० संखें जि० ।
यहि० विसे० । असादा० ज० हि० विसे० । यहि० विसे० । इत्थि० ज० हि०
विसे० । यहि० विसे० । ण्युंस० ज० हि० विसे० । यहि० विसे० । शिरयग०
ज० हि० विसे० । यहि० विसे० ।

६=१. श्राभि॰-सुद्०-श्रोधि॰ सव्वत्थोवा लोभसंज॰ ज॰हि॰। यहि० विसे०। पंचणा०--चदुदंसणा०--पंचंत० ज०हि० संखेंज्ज॰। यहि० विसे०। जस॰-उच्चा० ज०हि० संखेंज्ज॰। यहि० विसे०। सादा० ज०हि॰ विसे०। यहि० विसे०। मायसंज० ज॰हि० संखेंज्ज॰। यहि॰ विसे०। माणसंज० ज०हि॰ विसे०। यहि॰

मनुष्यायुका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे दो श्रायश्रोंका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यासगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पाँच नोकपाय, देवगति, तीन शरीर, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध ग्रसंख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे पाँच इना-वरण, नौ दर्शनावरण, सातावेदनोय और पाँच ग्रन्तरायका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्म्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे सोल्ह कषायका जघन्य स्थिति-बन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे मिथ्यात्वका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष ऋधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष ऋधिक है। इससे तिर्यञ्च-गति, मनुष्यगति, श्रौदारिक शरीर श्रौर नीचगोत्रका जधन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे श्ररति, शोक श्रौर श्रयशःकीर्तिका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष ऋधिक है। इससे ऋसातावेदनीय-का जघन्य स्थितिबन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे स्त्रीवेदका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे नपुंसकवेदका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष अधिक हैं। इससे नरकगतिका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है।

६८१. श्राभिनिवोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी श्रीर श्रविधिज्ञानी जीवोंमें लोभसंडवलनका जग्रन्य स्थितिवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यह्मियितवन्ध विशेष श्रीधक है। इससे पाँच क्षानावरण, चार दर्शनावरण श्रीर पाँच श्रन्तरायका जघन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यह्मियेतवन्ध विशेष श्रीधक है। इससे यशःकीर्त और उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यह्मियेतवन्ध विशेष श्रीधक है। इससे सातावेदनीयका जघन्य स्थितिवन्ध विशेष श्रीधक है। इससे सातावेदनीयका जघन्य स्थितवन्ध विशेष श्रीधक है। इससे माया-संज्वलनका जघन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यह्मियेतवन्ध विशेष श्रीधक है। इससे यह्मियेतवन्ध विशेष श्रीधक है। इससे यह्मियेतवन्ध विशेष श्रीधक है।

विसे । काधमंत्र जिल्हि विसे । यहि विसे । पुरिस जिल्हि संखें जिल्हे । यहि विसे । सणुसायु जिल्हि संखें जिल्हे । यहि विसे । देवायु जिल्हि असंखें जिल्हे । यहि विसे । देवायु जिल्हि असंखें जिल्हे । यहि विसे । इस्स-रिह-भय-दुगुं जिल्हे । संखें जिल्हे । यहि विसे । पच्च स्वाणा । अ जिल्हे संखें जिल्हे । यहि विसे । पणुसग । यहि विसे । अपच्च स्वाणा । अ जिल्हे विसे । मणुसग । यहि विसे । यहि विसे । यहि विसे । पस्म भंगो अधिदंस --मम्मादि । खुग - उवसम ।

६८२. मण्पज्जव० सञ्बत्थोवा लोभसंज ज०िड०। यहि० विसे०। पंचणा०-चदुदंस०-पंचंत० ज०िड० संखेज्ज०। यहि० विसे०। जस०-उच्चा० ज०िड० संखेज्ज०। यहि० विसे०। सादा० ज०िड० विसे०। यहि० विसे०। मायसंज० ज०िड० संखेज्ज०। यहि० विसे०। माण्संज० ज०िड० विसे०। यहि० विसे०। कोधसंज०

श्रधिक है। इससे क्रोधसंज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थिति-बन्ध विशेष श्रधिक है। इससे पुरुषवेदका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष ऋधिक है। इससे मनुष्यायुका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे देवायुका जघन्य स्थितिबन्ध त्रसंख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे हास्य, रति, भय श्रौर जुगुप्साका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे देवगति श्रीर चार शरीरका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यहिस्थिति-वन्ध विशेष अधिक है। इससे निद्रा श्रीर प्रचलाका जधन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष ऋधिक है। इससे ऋरति, शोक और ऋयशःकीर्तिका जधन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे ऋसातावेदनीयः का जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे प्रत्याख्यानावरण चारका जधन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष क्रधिक है। इससे श्रप्रत्याख्यानावरण चारका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यस्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे मनुष्यगति श्रौर श्रौदारिक शरीरका ज्ञधन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष ग्रधिक है। यही अङ्ग अवधि-दर्शनी, सम्यग्हिष्ट, स्वायिकसम्यग्हिष्ट श्रीर उपशमसम्यग्हिष्ट जीवोंके जानना स्वाहिष्ट ।

६८२. मनःपर्ययज्ञानो जीवोंमें लोभसंज्वलनका जघन्य स्थितियन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे पाँच क्षानावरण, चार दर्शनावरण श्रीर पाँच अन्तरायका जघन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यशःकीर्त श्रीर उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यिस्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यात्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे मायासंज्वलनका जघन्य स्थितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे मायासंज्वलनका जघन्य स्थितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे मानसंज्वलनका जघन्य स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे क्रीध-

ज॰िंड विसेठ । यद्घिठ विसेठ । पुरिसठ ज॰िंड संखेंज्ञठ । यद्घि० विसेठ । देवायुठ ज॰िंड असंखेंज्ज० । यद्घि० विसेठ । इस्स-रिद-भय-दुगुंठ ज०िंड संखेंज्ज० । यद्घिठ विसेठ । देवगदि--चदुसरीरठ जठिंड संखेंज्ज० । यद्घिठ विसेठ । णिदा--पचलाणं ज०िंड संखेंज्जठ । यद्घि० विसेठ । अरिद-सोग-अजसठ जठिंड संखेंज्ज० । यद्घि० विसेठ । असादाठ ज०िंड विसेठ । यद्घि० विसेठ । एवं संजदाठ ।

६ द्वा सामाइ० -- छेटोव० सव्वत्थो० लोभसंज० ज०हि०। यष्टि० विसे०। पंचणा०--चढुदंस०-पंचंत० ज०हि० संखेजा०। यष्टि० विसे०। मायसंज० ज०हि० संखेजा०। यहि० विसे०। कोधसंज० ज०हि० विसे०। यहि० विसे०। कोधसंज० ज०हि० विसे०। यहि० विसे०। जस०--उच्चा० ज०हि० संखेजा०। यहि० विसे०। सादा० ज०हि० विसे०। यहि० विसे०। पुरिस० ज०हि० संखेजा०। यहि० विसे०। देवायु० ज०हि० असंखेजा०। यहि० विसे०। उविंदे मणवज्जवभंगो।

६=४. परिदार० सब्बत्थोवा देवायू० ज॰हि० विसे० । यहि० विसे० । पंच-

संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष ग्रिथिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष ग्रिधिक है। इससे पुरुषवेदका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे देवायुका जघन्य स्थितिबन्ध ग्रमंख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष ग्रिथिक है। इससे द्वार्यका जघन्य स्थितिबन्ध ग्राधिक है। इससे द्वार्यका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितबन्ध संख्यातगुणा है। इससे प्रतिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे प्रतिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे प्रतिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे ग्राधिक ग्रीप ग्राधिक है। इससे प्रतिवन्ध विशेष ग्राधक विशेष ग्राधक है। इससे प्रतिवन्ध विशेष ग्राधक विशेष ग्राधक विशेष ग्राधक विशेष ग्राधक विशेष ग्याधक विशेष ग्राधक ग्राधक ग्राधक विशेष ग्राधक ग्राधक ग्राधक ग्राधक विशेष ग्राधक ग्राधक ग्राधक ग्राधक ग्राधक ग्राधक

६८३. सामायिकसंयत और छेदोपस्थापनासंयत जीवोंमें लोभसंख्वलनका ज्ञघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यिस्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण और पाँच अन्तराय कर्मका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यिस्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे माथासंख्यलनका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यिस्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे मानसंख्यलनका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यिस्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे कोधसंख्यलनका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यश्चितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यिस्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यिस्थितिवन्ध विशेष अधिक है।

६८४. परिहारिबशुद्धिसंयत जीवोंमें देवायुका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यतिस्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे पाँच नोक्ताय, देवगति, चार श्रुरीर, णोक०-दंबगदि-चत्तारिसरीर०-जस०--उचा० ज०द्वि० संखेजे । यद्वि० विसे० । पंचणा०--छदंसणा०--सादा०--पंचंत० ज०द्वि० विसे० । यद्वि० विसे० । चदुसंज० ज०द्वि० विसे० । यद्वि० विसे० । छरदि--संग-अजस० ज०द्वि० संखेजे । यद्वि० विसे० । असादा० ज०द्वि० विसे० । यद्वि० विसे० ।

६८५. सुहुमसंपरा० सब्बत्थोत्रा पंचाा०--चदुदंस०-पंचंत० ज०हि० । यहि० विसे० । जस०--उच्चा० ज०हि० संखेंज्ञ० । यहि० विसे० । सादा० ज०हि० [ विसे० ] । यहि० विसे० ।

६=६. संजदासंजक सब्बत्थां ० देवायुक जक्ष्टिक। यद्विक विसेक। पंचणोक्षक-देवगदि-तिरिणसरीरक-जसक-उच्चाक जक्ष्विक संखें ज्ञक। यद्विक विसेक। पंचणाक-इदंसक-सादावेक--पंचंतक जक्ष्विक विसेक। यद्विक विसेक। अहकसाक जक्ष्विक विसेक। यद्विक विसेक। अरदि--सोग-अजसक जक्ष्विक संखेजिक। यद्विक विसेक। असादाक जक्ष्विक संखेजिक। यद्विक विसेक।

६०७. तेउले॰ सन्बत्थो॰ तिरिक्ख-मणुसायु० म०द्वि०। यहि० विसे०।

यशःकीतिं और उद्यगेत्रिका जयन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुरा है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष श्रिषक है। इससे पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनाधरण, सातावेदनीय और पाँच श्रन्तरायका जयन्य स्थितिवन्ध विशेष श्रिषक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रिषक है। इससे श्रदित, शोक श्रीर श्रयशाकीर्तिका जयन्य स्थितिबन्ध संख्या तगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रिषक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रिक है। इससे श्रिषक है।

६८४. सूक्ष्मसाम्परायिक संयत जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण और पाँच अन्तरायका जवन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यिस्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यशकीर्ति और उच्चगोवका जवन्य स्थितिबन्ध संख्यातमुणा है। इससे यिस्थिति-बन्ध विशेष अधिक है। इससे साताबेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यिस्थितिबन्य विशेष अधिक है।

६८६. संयनासंयत जीवोंमें देवायुका जयन्य स्थितिवन्ध सयसं स्तोक है। इससे यित्थितिवन्ध विरोप अधिक है। इससे पाँच नोकपाय, देवगित, तीन शरीर, यशकीर्ति और उच्चगीत्रका जयन्य स्थितिवन्ध संख्यात्मुणा है। इससे यित्थितवन्ध विरोप अधिक है। इससे पाँच जानावरण, छुद्द दर्शनावरण, सातावेदनीय और पाँच अन्तरायका जवन्य स्थितिवन्ध विरोप अधिक है। इससे यित्थितवन्ध विरोप अधिक है। इससे यित्थितवन्ध विरोप अधिक है। इससे यित्थितवन्ध विरोप अधिक है। इससे अरति, शोक और अथशकीर्तिका जवन्य स्थितिवन्ध विरोप अधिक है। इससे अरति, शोक और अथशकीर्तिका जवन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्थितवन्ध विरोप अधिक है। इससे यत्थितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्थितवन्ध विरोप अधिक है।

६८७. पीतलेश्यावाले जीवोंमें तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुका जधन्य स्थितिवन्ध सबसे स्तोक हैं। इससे यरिस्थितिवन्ध विशेष अधिक हैं। इससे देवायुका जधन्य स्थितिबन्ध देवायु० ज०डि० असंसें ज्ञा० । यहि० विसे० । पंचणोक०-देवगदि-चदुसरीर०-जस०-उच्चा० ज०डि० संसे ज्ञा० । यहि० विसे० । पंचणा०-छदंसणा०-साटा०-पंचंतरा० ज०डि० [ विसे० | ] यहि० विसे० । चदुसंज० ज०डि० विसे० । यहि० विसे० । अस्दि-सोग-अजस० ज०डि० संसे ज्ञा० । यहि० विसे० । असादा० ज०डि० विसे० । यहि० विसे० । पञ्चक्खाणा०४ ज०डि० संसे ज्ञा० । यहि० विसे० । अप्पच्चक्खाणा०४ ज०डि० संसे ज्ञा० । यहि० विसे० । अप्पच्चक्खाणा०४ ज०डि० संसे ज्ञा० । यहि० विसे० । मणुसगदि-अरेरालि० ज०डि० संसे ज्ञा० । यहि० विसे० । यहि० विसे

६८८. सुकाए सञ्बत्थो० लोभसंज० ज०हि० । यहि० विसे० । सेसं स्रोघं याव कोथसंज० ज०हि० [विसे० ] यहि० विसे० । मणुसायु० ज०हि० संखेजन० ।

त्रसंख्यातगुर्णा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष ऋधिक है। इससे पाँच नोकषाय, देवगति. चार शरीर, यशकोंतिं श्रीर उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्य-तिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पाँच क्षानावरण, छह दर्शनावरण, सातावेदनीय और पाँच ग्रन्तरायका जघन्य स्थितियन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे यत्स्थितियन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे चार संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे अरति, शोक और अयशःकीर्तिका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यरिस्थतिबन्ध विशेष अधिक है। इससे असाताबेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष क्रधिक है । इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष अधिक है । इससे प्रत्याख्यानावरण चारका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष ऋधिक है। इससे ऋप्रत्याख्यानावरण चारका जधन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष ऋधिक है। इससे मनुष्यगति श्रौर श्रौदारिक शरीरका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे स्त्यानगृद्धि तीनका ज्ञधन्य स्थितवन्ध संख्यात-गुणा है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष ऋधिक है। इससे ऋनन्तानुबन्धी चारका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे मिय्यात्वकः जघन्य स्थितिबन्ध विशेष ग्रधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष ग्रधिक है । इससे स्त्री-वेदका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुर्णा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे नपुंसकवेदका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे भीचगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष ऋधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष ऋधिक है। इससे तिर्यञ्चगतिका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यिन्धितिबन्ध विशेष अधिक है। इसी प्रकार पद्मलेश्यावाले जीवोंके जानना चाहिए।

६८८. शुक्ललेश्यावाले जीवोंमें लीभ संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इसी प्रकार क्रोध संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है यहाँ तक शेप अल्पबहुत्व ओघके समान है। इससे मनुष्यायुका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध यहि० विसे० | पुरिस० ज०हि० संखें ज० | यहि० विसे० | देवायु० ज०हि० असंखें जज० | यहि० विसे० | इस्स-रदि-मय-दुगुं० ज०हि० संखें जज० | यहि० विसे० |
देवगदि-चदुसरी० ज०हि० संखें जज० | यहि० विसे० | णिद्दा-पचला० ज०हि०
संखें जज० | यहि० विसे० | अरदि-सोग-अजस० ज०हि० संखें जज० | यहि० विसे० |
असादा० ज०हि० विसे० | यहि० विसे० | पचनखाणा०४ ज०हि० संखें जज० |
यहि० विसे० | अपचनखाणा०४ ज०हि० संखें जज० | यहि० विसे० | मणुसग०
ओरालि० ज०हि० संखें जज० | यहि० विसे० | थीणगिद्धितिग० ज०हि० संखें जज० |
यहि० विसे० | अणंताणुवंधि०४ ज०हि० विसे० | यहि० विसे० | मिच्छ० ज०हि० विसे० | यहि० विसे० | पार्वस० ज०हि० विसे० | यहि० विसे० | पार्वस०

६८९. चेदगसम्मा० सन्वत्थो० मणुसायु० ज०द्वि०। यद्वि० विसे०। देवायु० ज०द्वि० असंखेजज०। यद्वि० विसे०। पंचणोक०-देवगदि-चदुसरीर-जस०-उचा० ज०-द्वि० संखेज०। यद्वि० विसे०। पंचणा०-छदंसणा०-सादा०-पंचंत० ज०द्वि० [ विसे० ]

विशेष श्रधिक है । इससे पुरुपवेदका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष ऋधिक है। इससे देवायुका जघन्य स्थितिबन्ध असंस्थातगुणा है। इससे यिस्थितिबन्ध विशेष ऋधिक है। इससे हास्य, रति, भय और जुगुप्साका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यतिस्थतिबन्ध विशेष अधिक है। इससे देवगति और चार शरीरका जधन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे निद्रा और प्रचलाका जघन्य स्थिति-वन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे अरित, शोक और अयशः कीर्तिका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातराणा है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे असाता वेदनीयका जघन्य स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक हैं। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे प्रत्याख्यानावरण चारका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यहिस्थतिबन्ध विद्रोप श्रिधिक है। इससे श्रप्रत्याख्यानावरण चारका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यहिस्थितिबन्ध विशेष अधिक हैं । इससे मनुष्यगति श्रीर औदारिक शरीरका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक हैं। इससे स्त्यानगृद्धि तीनका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा हैं । इससे यरिस्थतिबन्ध विशेष श्रधिक हैं । इससे श्रनन्तानुत्रन्वी चारका जधन्य स्थितिबन्ध विशेष त्र्यथिक हैं। इससे यहिस्थतिवन्ध विशेष ऋधिक हैं। इससे मिध्यात्वका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे स्वीवेदका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यात-गुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष ऋधिक है। इससे नपुंसकवेदका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे नीचगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितबन्ध विशेष श्रिधिक है ।

६८. वेदकसम्यग्हिष्ठ जीवोमें मनुष्यायुका जयन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे देवायुका जयन्य स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पाँच नोकषाय, देवगति, चार शारीर, यशःकीतिं और उच्चगोत्रका जयन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, साता वेदनीय और पाँच ज्ञानावरण, ज्ञान्य स्थितिबन्ध विशेष

यद्वि० विसे०। चदुसंज्ञ० जब्हि० विसे०। यद्वि० विसे०। अरदि-सोग-अजस० जब्ब हि० संखेजि०। यद्वि० विसे०। असादा० जब्हि० विसे०। यद्वि० विसे०। पश्च-क्खाणाव्य जब्हि० संखेजिक। यद्वि० विसे०। अपनक्खाणाव्य जब्हि० संखेजिक। यद्वि० विसे०। मणुसग०-ओरालि० जब्हि० संखेजिक। यद्वि० विसे०।

- ६९०. सासणे सञ्बत्थो० तिरिक्ख०-मणुसायु० ज०हि०। यद्वि० विसे०। देवायुग० ज०हि० संखेर्जेज०। यद्वि० विसे०। पंचणोक्त०-तिण्णिगदि-चदुसरीर-जस०-णीचा०-उच्चा० ज०हि० असंखेर्जेज०। यद्वि० विसे०। अरदि-सोग-अजस० ज०हि० विसे०। यद्वि० विसे०। पंचणा०-णवदं-सणा०-सादा०-पंचंत० ज०हि० विसे०। यद्वि० विसे०। असादा० ज०हि० विसे०। यद्वि० विसे०। यद्वि० विसे०। यद्वि० विसे०। यद्वि० विसे०।
- ६६१. सम्मामिच्छादिष्टि ति सन्वत्थोवा पंचणोक०-दोगदि-चदुसरीर-जसगिति-उचागी० जहण्णद्विदिवंधो । यद्विदिवंधो विसेसाधियो । पंचणाणावरणीयाणं छदंसणा-वरणीयाणं सादावेदणीयं पंचंतराइगं० ज०डि० विसे० । यद्वि० विसे० । बारसक० ज०-

अधिक है। इससे यत्स्यितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे चार संज्यलनका जघन्य स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्यितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे अरित, शांक और अध्यशः कीर्तिका जघन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे असातावेदनीय-का जघन्य स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे प्रत्याख्यानावरण चारका जघन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे अप्रत्याख्यानावरण चारका जघन्य स्थितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे अप्रत्याख्यानावरण चारका जघन्य स्थितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे विशेष अधिक है। इससे प्रत्यावगुणा है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष अधिक है।

६६०. सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंमें तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुका जयन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक हैं। इससे यिस्थितिबन्ध विशेष अधिक हैं। इससे देवायुका जधन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा हैं। इससे यिस्थितिबन्ध विशेष अधिक हैं। इससे पाँच नोकपाय, तीन गति, चार शरीर, यशः कीति, नीचगांत्र और उच्चगोत्रका जधन्य स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है। इससे यिस्थितिबन्ध विशेष अधिक हैं। इससे अरित, शोक और अयशःकीतिका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक हैं। इससे अरित्र शोक और अयशःकीतिका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक हैं। इससे यिस्थितिबन्ध विशेष अधिक हैं। इससे खिलेदका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक हैं। इससे पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, साताबदनीय और पाँच अन्तरायका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक हैं। इससे अस्तावबदनीयक। जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक हैं। इससे यिस्थितिबन्ध विशेष अधिक हैं। इससे अस्तावबदनीयक। जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक हैं। इससे यिस्थितिबन्ध विशेष अधिक हैं।

६८१. सम्यग्मिण्यादृष्टि जीवोमि पाँच नोकपाय, दो गति, चार शरीर, यशःक्रीति और उच्चगोन्नका जयन्य स्थितियम्य सवसे स्ताक है। इससे यत्मिशतिदम्य विशेष अधिक है। इससे पाँच ज्ञानावरणीय, छद्द दर्शनावरणीय, सातावदनीय और पाँच अन्तराय का जयन्य स्थितियम्य विशेष अधिक है। इससे यत्मिथतिवन्य विशेष अधिक है। इससे वारह कपायका जवन्य स्थितिवन्य ष्ठि० विसे०। यहि० विसेसाधियो । अरति-सोग-अजसिगत्ति० ज०हि० संखेजँज०। यद्वि० विसे०। असादा० ज०द्वि० विसे०। यहि० विसेसाधियो। एवं बद्दण्णयं पुरत्थाण अप्पाबहुगं समर्त्तः।

## एवं अप्याबहुगं समत्तं एवं चदुवीसमणियोगदाराणि समत्ताणि

विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे अरित, शोक और अयशःकीर्तिका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे असाताबेदनीय का जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है।

इस प्रकार जघन्य परस्थान श्ररूपबहुत्व समाप्त हुन्ना । इस प्रकार अल्पबहुत्व समाप्त हुन्ना । इस प्रकार चौबीस ऋसुयोगद्वार समाप्त हुए ।

# मुजगारबंधो

६६२. एत्तो भुजगारबंधो ति । तत्थ इमं अद्वपदं मृत्यपगदिद्विदिभंगो कादव्वो । एदेण अद्वपदेण तत्थ इमाणि तेरस अणियोगदाराणि णादव्वाणि भवंति । तं जहा—सम्बक्तिणा याव अप्याबहुगे ति [१३]।

# समुक्तिचणाणुगमो

- ६६३. सम्रुक्तिमणाए दुनि०--ओघे० आदे०। ओघेण पंचणाणावरणीयाणं ऋत्थि भुजगारबंधगा अप्पदरबंधगा अविद्विदंधगा अवत्तव्ववंधगा य। चदुण्णं आयुगाणं अत्थि अवत्तव्ववं अप्पदर०। सेसाणं मिद्यावरणभंगो। एवं ओधभंगो मणुसा०३--पंचिदिय॰ तस०२--पंचमण०--पंचवचि०-कायजागि-ओरालिय०--चक्खुदं०-अचक्खुदं०-भवसिद्धि० सिण्ण-आहारग ति।
- ६६४. णिरएसु पंचणा०-छदंसणा०-बारसक०-भय-दु०-पंचिदि० ओरालि० तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-वण्ण०४-अगु०४-तस०४-णिमि०-पंचेत० अस्थि भुज०-अप्पद०-अबद्वि० । सेसं ओधं । एवं सत्तसु पुढवीसु ।
- ६६५. तिरिक्खेसु पंचणा०-छदंसणा०-अट्ठकसा०-अय-दुगुं०-तेजा०-कम्म०-वण्ण०४-अगु०-उप०-णिमि०-पंचंत० अत्थि भुज०-अप्पद०-अवट्टि०। सेसाणं ओघं। एवं

#### भुजगारबन्धप्ररूपणा

६८२. इससे आगे भुजगारबन्धका प्रकरण है। उसके विषयमें यह अर्थपद मूलप्रकृति स्थितिबन्धके समान करना चाहिए। इस अर्थपदके अनुसार यहाँ ये तेरह अनुयोगद्वार ज्ञातव्य हैं यथा—समुत्कीर्तनासे लेकर घटपबहुत्व तक १३।

#### सम्रत्कीर्तनानुगम

- ६८३. समुर्त्कार्तनाकी अपेदा निर्देश दो प्रकारका हैं—अंघ और आदेश। आंघसे पांच ज्ञानावरण प्रकृतियोंके भुजगारवन्थक जीव हैं, अल्पतर बन्धक जीव हैं, अवस्थित बन्धक जीव हैं और अल्पतर बन्धक जीव हैं। चार आयुओंके अवक्तव्य बन्धक जीव हैं और अल्पतर बन्धक जीव हैं। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग मतिझानावरणके समान है। इसी प्रकार ओघके समान मनुष्यांत्रक, पर्क्वन्द्रियद्विक, त्रसद्विक, पाँच मनोयोगी, पाँच वचनयोगी, कायशोगी, औदारिककाययोगी, चत्तु-दर्शनी, अच्छुदर्शनी, भव्य, संज्ञी और आहारक जीवोंके जानना चाहिए।
- ६६४. नारिकयोंमें पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, बारह कषाय, भय, जुगुरसा, पश्चेन्द्रिय-जाति, श्रोदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रोदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलछु-षतुष्क, त्रसचतुष्क, निर्माण श्रोर पाँच श्रन्तराय इनके भुजगारवन्धक जीव हैं, श्रन्पतरवन्यक जीव हैं ख्रोर श्रवस्थितवन्धक जीव हैं। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग श्रोधके समान है। इसी प्रकार सातों पृथिवियोंमें जानना चाहिए।
- ६६५. तिर्येक्नोंमें पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, आठ कपाय, भय, जुगुप्सा, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, वर्णचतुरक, अगुरुलघु, उपवात, निर्माण और पाँच अन्तराय इनके भुजगारवन्धक जीव हैं. अस्पतरबन्धक जीव हैं और सबस्थितबन्धक जीव हैं। शेष प्रकृतियोंका भक्क ओघके समान

पंचिदिय-तिरिक्ख०३ । पंचिदियतिरिक्खअपज्जता० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोल-सक०-भय-दुगुं०-ओरालि०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०-उप०-णिमि०-पंचंत० अस्थि धुज०-अप्पद०-अवद्वि० । सेस ओघं । एस भंगो सन्वअपज्जत्तगाणं एइंदिय-विगलिदिय-पंचकायाणं च । णवरि तेउ०-वाउ० तिरिक्खगदितियस्स अवत्तन्त्वं णस्थि ।

६६६,देवेसु पंचणा०-छदंसणा०-बारसक०-भय-दुगुं०-ओरालिय०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०४-बादर-पजत-पत्तेग०-णिमि०-तित्थय०-पंचंतरा० अत्थि भुज०-अप्पद०-अवद्वि०। सेसं ओधं। एवं भवणादि याव सोधम्मीसाण ति। सणकुमार याव सहस्सार ति णिरयोघो। आणद याव णवगेवजा ति पंचणा०-छदंसणा०-बारसक०-भय-दुगुं०-मणु-सग०-पंचिदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो-वण्ण०४-मणुसाणुपु०-अगु०४-तस्०४-णिमि०-तित्थय०-पंचंत० अत्थि भुज०-अप्पद०-अवद्वि०। सेसाणं ओघो। अणुदिस याव सवद्वा ति पंचणा०-छदंस०-बारसक०-पुरिसवे०-भय-दु०-मणुसग०-पंचिदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-समचदु०-ओरालि०अंगो०-वजारे०-मणुसाणु०-वण्ण०४-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदेज०-णिमि०-तिथय०-पंचंत० अत्थि भुज०-अप्पद०-अबद्वि०। सेसं ओघं।

है। इसी प्रकार पंचेन्द्रिय तियेक्किक जानना चाहिए। पक्केन्द्रिय तिर्येक्क अपयिप्तिकोमें पाँच झानावरण, नौ दर्शनावरण, मिण्यात्व, सोलहकपाय, भय, जुगुष्सा, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघात, निर्माण और पाँच अन्तराय इनके भुजगारवन्धक जीव हैं, अस्पतरवन्धक जीव हैं और अवस्थितवन्धक जीव हैं। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है। यही भङ्ग सब अपयोप्त, एकेन्द्रिय, विकलेन्द्रिय और पाँच स्थावरकायिक जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता हैं कि अग्निकायिक और वायुकायिक जीवोंमें तिर्यक्का अवक्तन्य भङ्ग नहीं है।

इहद. देवोंमं पाँच झानावरण, छह दर्शनावरण, बारह कथाय, भय, जुगुप्सा, श्रौदारिक-शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, वादर, पर्याप्त, प्रत्येक, निर्माण, नीयंद्वर और पाँच श्रन्तराय इनके मुजगारबन्यक जीव हैं, अल्पतरवन्धक जीव हैं और अवस्थिनवन्धक जीव हैं। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग श्रोधके समान है। इसी प्रकार भवनवासी देवोंसे लेकर सौधर्म श्रोर ऐशान कल्प तकके देवोंमं जानना चाहिए। सनत्कुमार कल्पसे लेकर सहस्नार कल्प- उकके देवोंमं सामान्य नारिकयोंके समान भङ्ग हैं। आनत कल्पसे लेकर नौयेवेयक तकके देवोंमं पाँच झानावरण, छह दर्शनावरण, वारह कपाय, भय, जुगुप्सा, मनुष्यगति, पञ्चेन्द्रियजाति, श्रौदारिकशारीर, तेजसरीर, कार्मणशरीर, श्रौदारिक अङ्गोपाङ्ग, चार वर्ण, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चार, त्रस चार, निर्माण, तीर्थङ्कर श्रोर पाँच श्रन्तरायके मुजगारवन्धक जीव हैं, अल्पतरबन्धक जीव हैं और अवस्थितवन्धक जीव हैं। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओधके समान है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें पाँच झानावरण, छह दर्शनावरण, वारह कपाय, पुरुषवेद, भय, जुगुप्सा, मनुष्यगति, पञ्चोन्द्रयजाति, श्रौदारिकशारीर, तेजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्तरंस्थान, श्रोदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, अश्रपेभनाराचसंहनन, मनुष्यगत्थानुपूर्वी, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगिति त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण, तीर्थङ्कर और पाँच श्रन्तराय इनके मुजगारबन्धक जीव हैं, श्रल्पतरबन्धक जीव हैं श्रोर श्रवस्थितवन्धक जीव हैं। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है।

६६७, ओरालियमिस्से पंचणा०-णवदंसणा०-सोलसक०-भय-दुगुं०-देवगदि-ओरालि०-वेउविवय०-तेजा०-क० वेउविव०अंगो०-वण्ण०४-देवाणुपु०-अगु०-उप०-णिमि०-विस्थय० पंचंत० अस्थि भुज०-अप्पद०-अवद्वि०। सेसाणं ओवं। वेउव्विय० देवोघं। णवरि तिस्थयरस्स अवत्तव्वं अस्थि। वेउविवयमि० पंचणा०-णवदंसणा०-सोलसक०-भय-दुगुं०-ओरालि०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०४-बादर-पज्जत्त-पत्तेय० - णिमि० - तिस्थय०-पंचंत० अस्थि भुज०-अप्पद०-अवद्वि०। सेसाणं ओघं। आहार०-आहारमिस्से धुविगाणं अस्थि भुज०-अप्पद०-अवद्वि०। सेसं ओघं। कम्मइगे० अणाहारगे० पंचणा०-णवदंसणा०-सोलसक०-भय-दुगुं०-देवगदि-ओरालि०-वेउविवय०-तेजा०-क०-वेउविव०अंगो०-वण्ण०४ देवाणु०-अगु०-उप०-णिमि०-तिस्थय०पंचंत० अस्थि भुज०-अप्पद०-अवद्वि०। सेसं ओघं।

६६८, इत्थि-पुरिस० णवुंस० पंचणा०-चदुदंस०-चदुसंज० पंचंत० अत्थि सुन०-अप्पद०-अवद्वि० | सेसं ओघं । अवगद० सन्त्राणं अत्थि सुज०-अप्पद०-अवद्वि०-अन्व-त्तन्वं० । एवं सुहुमसंप० । णवरि अवत्तन्वं णत्थि ।

६८८. कोधे पंचणा०-चढुदंस०-चढुसंज०-पंचंत० अत्थि भ्रुज०-अष्पद०-अवद्धि०।

६६७. श्रोदारिकमिश्रकाययांगी जीवोंमें पाँच ज्ञानायरण, नी दशेनावरण, सीलइ कपाय, भय, जुगुप्सा, देवगति, ऋौदारिकशरीर, बैक्किथिकशरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, वैकिथिक आङ्गापाङ्ग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघात, निर्माण, तीर्थङ्कर और पाँच अन्तराय इनके मुजगारवन्थक जीव हैं, ऋल्पतरबन्धक जीव हैं स्त्रीर अवस्थितवन्धक जीव हैं। शेप प्रऋतियोंका मुङ्ग खांघक समान है। वैक्रियिककायोगी जीवोंका भङ्ग सामान्य देवोंके समान हैं। इतनी विशे पता है कि इनमें तीर्थेङ्कर प्रकृतिका अवक्तव्य पद है। वैक्रियिकमिश्रकाय योगी जीवोंमें पाँच ज्ञाना-त्ररण, नो दर्शनावरण, सोलहकपाय, भय, जुगुप्सा, ख्रीदारिकशरीर, तेजसशरीर, कार्मणशरीर, चारवर्ण, अगुरलघु चतुष्क, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, निर्माण, नीर्शङ्कर और पाँच स्नन्तराय इनके भजगारवन्धक जीव है, ऋस्पतरबन्धक जीव हैं और अवस्थितबन्धक जीव हैं। शेष प्रकृतियोंका मङ्ग स्रोवक समान है। आहारककाययोगी और आहारकमिश्रकाययोगी जीवोंमें धववन्धवाली प्रकृतियोंके मुजगरवन्धक जीव हैं, अल्पतरवन्धक जीव हैं स्नौर अवस्थितवन्धक जीव हैं। राप प्रकृतियोका भक्त श्रायके समान है। कार्मणकाययोगी श्रीर अनाहारक जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावण, सालह कषाय, भय, जुगुप्सा, देवगति, ऋौदारिक शरीर, वैकियिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर. वैक्रियिक छ।ङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, देवरात्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघात, निर्माण, तीर्थङ्कर और पाँच अन्तराय इनके भुजगारयन्थक जीव हैं, अन्पनरबन्धक जीव हैं और अवस्थित बन्धक जीव हैं। शेव ब्रक्रतियोंका भङ्ग श्रोधक समान हैं।

६८ स्त्रीवदी, पुरुषवदी और नपुंसकवदी जीवोंमें पाँच झानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच अन्तरायके भुजगारबन्धक जीव हैं, अरुपतरबन्धक जीव हैं और अविध्यतबन्धक जीव हैं। शेष भङ्ग ओवके समान है। अपगतवेदी जीवोंमें सब प्रकृतियोंक भुजगार बन्धक जीव हैं, अरुपतरबन्धक जीव हैं, अरुपतरबन्धक जीव हैं। इसी प्रकार सूद्रमसीपरायसंयत जीवोंमें जानना चाहिय। इतनी विशेषता है कि इनमें अवक्तव्य पद नहीं है।

६८६. क्रोधकपायवाले जीवोंमें पाँच झानावरण, चार ख़्र्यनावरण, चार संज्वलन और

सेसं ओघं। माणे तं चेव । णवरि तिण्णि संज० । मायाए दोण्णि संज० । सेसं तं चेव । लोभे पंचणा०-चदुदंस०-पंचंत० अस्थि भुज०-अप्पद०-अवट्टि० । सेसं ओघं ।

७००, महि०-सुद० पंचणा०-णवदंसणा०-सोलमुक० भय-दुर्ग०-तेजा०-क०-वण्ण० ४-अगु०-उप०-णिमि०-पंचंत० अत्थि भुज०-अप्पद० अवद्वि० । सेसं ओर्घ । एस भंगो विभंगे। एवं चेव अब्भवसि०-मिच्छादि०-असण्णि त्ति। णवरि मिच्छत्त० अवत्तव्वं णत्थि।

७०१, आभि०-सुद्द०-ओधि०--मणपञ्जव०-संजद--ओधिदं०- सुक्रुले०-सम्मादि० खड्ड-ग० उबसम् अोर्घ । सामाइ०-छेदो० पंचणा०-चदुर्दस् ०-लोभसंज०-उचा०-पंचंत० अत्थि भुज ० अप्पद ० अवद्वि ० । सेसं ओघं । परिहार ० आहारकायजीगिभंगी । संजदासंजद ० पंचणा०--छदंसणा०-अहुकसा०--पुरिसत्रे०-भय-दुगुं०-देवगदि-पंचिंदि०-तिण्णिसरीर-समच-दु०-वेउव्वियअंगो०-वण्ण०४-देवाणु०-अगु०४-पसत्य०-तस०४-सुभग-सुस्सर्-आर्दे-ञ्ज०-णिमि०-उचा०-पंचंत० अतिथ भ्रज०-अप्पद०-अवट्टि० । सेसं ओघं ।

७०२. असंजदे० पंचणा०-छदंसणा०-बारसफ्र०-भय-दुग्० तेजा०-क० वण्ग०४-अगु०-उप०-णिमि०-पंचंत० अत्थि भुज०-अपद०-अवद्वि० । सेसं ओघं । तिण्णि लेस्साणं पाँच अन्तरायके मुजगार बन्धक जीव हैं, अरुपतरबन्धक जीव हैं और अवस्थितबन्धक जीव हैं। शेष सङ्ग स्रोघके समान हैं। मानकषायवाले जीवोंमें वही सङ्ग है। इतनी विशेषता है कि यहाँ तीन संज्यलन कहन। चार्टिय । मायामें दो संज्यलन कहने चाहिये । शेपै भङ्ग उसी प्रकार हैं। लोभकपायवाले जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण और पाँच अन्तरायके भुजगार बन्धक जीव हैं, श्रत्यतरबन्धक जीव हैं और अवस्थितबन्धक जीव हैं। शंव भङ्ग श्रोघके समान हैं।

७००. मत्यज्ञानी और श्रुताज्ञानी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, सोलह कपाय, भय, जुगुरसा, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, ऋगुस्तव्रु, उपवात, निर्माण और पाँच ऋन्तरायके मुजगार बन्धक जीव हैं, ऋस्पतर बन्धक जीव हैं और ऋबस्थित बन्धक जीव हैं। शेप भङ्ग त्रोघके समान हैं। यही भङ्ग विभङ्गज्ञानी जीवोंसे जानना चाहिये। तथा इसी प्रकार ऋभव्य, मिथ्यादृष्टि ऋौर ऋसंज्ञी जीवोंके जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि इनमें

मिध्यात्वका अवक्तव्य पद नहीं है।

७०१, आभिनियोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी, अवधिज्ञानी मनःपर्ययज्ञानी, संयत, अवधि दर्शनी, शुक्रलेश्यायाले, सम्यग्दष्टि, क्षायिक संम्यग्दष्टि और उपशम सम्यग्दष्टिजीयोंमें ओघके समान भङ्ग है । सामायिक संयत और छेदोपस्थापना संयत जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, लोभ संज्वलन, उच्च गोत्र ख्रौर पाँच अन्तरायके भुजगारवन्थक जीव हैं, अल्पतरवन्थक जीव हैं ऋौर ऋबस्थित बन्धक जीव हैं। शेप भङ्ग ओधके समान हैं। परिहारिविशुद्धि संयत जीवोंमें आहारक काययोगी जीवोंके समान भङ्ग हैं। संयतासंयत जीवोंमें पाँच झानावरण, छह दर्शनवरण, त्र्राठ कपाय, पुरुषवद, भय, जुगुप्सा, देवगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, तीनशरीर, समचतुरस्र संस्थान,वैक्रियिक आङ्कारपाङ्क, वर्ण चतुष्क, देवगत्यानुपूर्वां, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विद्यायोगति, त्रस चतुष्क, सुभग, मुस्बर, आदेय, निर्माण, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायके मुजगारबन्धक जीव हैं, अल्पनर बरधक जीव हैं और अवस्थितवस्थक जीव हैं। शेप भन्न ओवके समान हैं।

७०२, ऋसंयत जीवोंमें पाँच झानावरण, छह दर्शनावरण बारह कपाय, भय, जुगुप्सा, तैजस शरीर, कार्मणशरीर, वर्ण चतुष्क, अगुरुलघु. उपघात, निर्माण और पाँच अन्तरायके मुजगारवन्धक जीव हैं, अनुपत्तर बन्धक जीव हैं स्त्रीर स्त्रबम्धित बन्धक जीव हैं। शेप सङ्ग स्त्रीयक समान हैं। एवं चेव । णवरि किण्ण-णीलाणं तिस्थय० अवत्तव्वं णित्थ ।

७०३. तेऊए पंचणा०-छदंस०-चदुसंज०-भय-दुर्गु०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु० ४-बादर पञ्जत-पत्तेय०-णिमि०-पंचंत० अस्थि भ्रुज०-अप्पद०-अवद्वि०। सेसं ओघं। एवं पम्माए वि। णवरि पंचिदिय० तस० धुवं कादव्वं।

७०४. वेदगसम्मा० पंचणा०-छदंसणा०-चदुसंज०-पुरिस०-भय-दुगुं०-तेजा०-क०-पंचिदि०-समचदु०-वण्ण०४-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदे०-णिमि०-उचा०-पंचंत० अत्थि भुज०-अप्पद्०-अवट्टि० । सेसं ओघं ।

७०५, सासणे पंचणा०-णवदंसणा०-सोलसक०-भय-दुर्गु०-पंचिदि०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०४-तस०४-णिमि०-पंचंत० अत्थि भुज०-अप्पद्०-अवद्वि०।सेसं ओघं।

७०६, सम्मामि० दोवेदणीय-चदुणोक०-थिराथिर-सुभासुभ-जस०-अजस० अत्थि भुज०-अप्पद्०-अवद्धि०-अवसर्व्वं० । सेसाणं अत्थि भुज०-अप्पद्०-अवद्धि० ।

### एवं समुक्तिनणा समना सामित्ताणुगमो

७०७. सामित्राणुगरेण दुवि०-अधि० आदे०। ओघेण पंचणा० छदंसणा० चदु-

तीनलेश्यायाले जीवोंमें इसी प्रकार जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि ऋष्ण और नीललेश्या बाले जीवों में तीर्थक्कर प्रकृतिका अवक्तव्य पद नहीं है।

७०३. पतिलेश्यावाले जीवों में पांच ज्ञानावरण, छह दर्शनावण, चार संख्वलच, भय, जुगुष्सा, तैजस शरीर, कार्मणशरीर, वर्ण चतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, बादर, पर्याप्त, प्रयेक, निर्माण श्रोर पाँच अन्तरायके भुजगारबन्धक जीव हैं, अरुपतर बन्धक जीव हैं श्रोर अवस्थितवन्धक जीव हैं। शोप भङ्ग ओघके समान है। इस प्रकार पद्मलेश्यावाले जीवोंमें भी जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि इनमें पञ्चेन्द्रिय जाति स्रोर अस प्रकृतिको ध्रुव कहना चाहिये।

७०४. वेदक सम्यग्दृष्टि जीवोंमें पाँच झानावरण, छहँ दर्शनावरण, चार संज्वलन, पुरुष वेद, भय, जुगुष्सा, तैजसरारीर, कार्मणशरीर, पञ्चित्र्य जाति, समचतुरस्र संस्थान, वर्ण चतुष्क, अगुरुल वेदु चतुष्क, प्रशस्तविद्योगिति, अस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायके भुजगार्बन्धक जीव हैं। शेष भद्ग औषके समान है।

७०५. सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, नौ दरानावरण, सोलह कपाय, भय, जुगुत्सा, पश्चेन्द्रिय जाति, तैजसरारीर, कार्मणशरीर, वर्ण चतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, त्रस चतुष्क, निर्माण और पाँच अन्तरायके मुजगारवन्धक जीव हैं, अस्पतरवन्धक जीव हैं और अवस्थितवन्धक जीव हैं। शेष भङ्ग आपके समान है।

७०६. सम्यग्मिश्यादृष्टि जीवोंमें दो वेदनीय, चार नोकषाय, स्थिर, ऋस्थिर, शुभ, ऋशुभ, यशःकीर्ति और अयशःकीर्तिके मुजगारवन्यक जीव हैं, अरुपतरवन्यक जीव हैं, अरुपतरवन्यक जीव हैं। शोप प्रकृतियोंके मुजगारवन्यक जीव हैं, अरुपतरवन्यक जीव हैं। शोप प्रकृतियोंके मुजगारवन्यक जीव हैं, अरुपतरवन्यक जीव हैं।

इस प्रकार समुत्कीर्तना समाप्त हुई।

#### स्वामित्वानुगम

७०७. स्वाभित्वानुगमकी अपेता निर्देश दो प्रकारका है--श्रोध और आदेश। श्रोधसे

संज्ञ०-भय-दुगुं०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०-उप०-णिमि०-पंचंत० भुजगा०-अप्पद०-अविद्वदंधो कस्स ? अण्णदरस्स । अवत्तव्ववंधो कस्स ? अण्णदरस्स उवसमगस्स परि-वदमाणस्स मणुसस्स वा मणुसिणीए वा पढमसमए देवस्स वा। थीणगिद्धि० ३-अणंताणु-वंधि०४ भुज०-अप्पद०-अविद्वि० कस्स ? अण्णद० । अवत्त० कस्स ? संजमादो संजमासंजमादो सम्मामिच्छत्तादो वा परिवदमाणस्स पढमसमयमिच्छादिष्टिस्स वा । मिच्छत्त० भुज०-अप्प०-अविद्वि० कस्स ? अण्णदरस्स । अवत्तव्व० कस्स ? अण्णद० संजमादो वा संजमासंज० समत्त० सम्मामि० सासण० वा परिवदमाणस्स पढमसमयमिच्छादिष्टिस्स । अप्यचक्खाणा०४ तिण्णि पद० कस्स ? अण्णद० । अवत्त० कस्स० ? संजमादो वा संजमासंज० परिवदमाणस्स पढमसमय-मिच्छादिष्टिः सासण० । अवत्त० कस्स० ? संजमादो वा संजमासंज० परिवदमाणस्स पढमसमय-मिच्छादिष्टि० सासण० । अवत्त० कस्स० ? अण्णव० । संजमादो परिवदमाण० पढमसमय-मिच्छादि० सासण० सम्मामि० असंजदसं० । संजमादो परिवदमाण० पढमसमय-मिच्छादि० सासण० सम्मामि० असंजदसं० संजदासंजद० । चढुण्णं आयुगाणं अवत्त० कस्स० ? अण्ण० पढमसमय-आयुगवंध० । तेण परं अप्पदरवं० । आहार०-आहार०अंगो०-पर०-उस्सास०-आदाउजो० तित्थय० तिण्णिपद० कस्स० ? अण्ण० । अवत्तव्व० कस्स० ? अण्ण० पढम-

पाँच ज्ञानायरण, छह दर्शनावरण, चार संज्वलन, भय, जुगुष्सा, तैजस शरीर, कार्मणशरीर, वर्ण चतुष्क, अगुरुलघु, उपघात, निर्माण और पाँच अन्तराय इनके भुजगार, अस्पतर और अवस्थित बन्धकका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव उनका स्वामी है। अवक्तव्यवन्धका स्वामी कौन है ? श्रन्यतर गिरनेवाला उपशामक मनुष्य श्रीर मनुष्यनी या प्रथम समयवर्ती देव श्रवक्तव्यवन्धका स्वामी है। स्त्यानगृद्धि तीन, अनन्तानुबन्धी चारके मुजगार, ऋत्पतर श्रीर श्रवस्थितवन्धका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव उनका स्वामी है । अवक्तव्यवन्धका स्वामी कौन है ? संयमसे, संयमासंयमसे, संम्यक्त्वसे और सम्यग्मिध्यात्वसे गिरनेवाला प्रथम समयवर्ती मिध्यादृष्टि या सासादन सम्यन्दृष्टि जीव खवक्तव्यवन्धका स्वामी है। मिध्यात्वके भुजगार, अल्पतर और अवस्थितवन्धका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव उक्त बन्धका स्वामी है। अवक्तव्यवन्धका स्वामी कौन है ? संयमसे संयम।संयमसे, सम्यक्त्वसे, सम्यग्मिश्यात्वसे या सासादनसम्यक्त्वसे गिरनेवाला प्रथम समयवाला मिध्यादृष्टि जीव अवक्तव्यवन्धका स्वामी है। अप्रत्याख्यानावरण चारके तीन पर्दोका स्वामी कौन है ? श्रान्यतर जीव उक्त पदोंका स्वामी है । श्रावक्तव्यवन्धका स्वामी कौन है ? संयमसे या संयमा-संयमसे गिरनेवाला प्रथम समयवर्ती मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि, सम्यग्मिथ्यादृष्टि और ऋसंयतसम्यग्दृष्टि जीव अवक्तव्य पदका स्वामी है। प्रत्याख्यानावरण चारके भुजगार, ऋस्पतर त्रीर अवस्थितबन्धका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव उक्त बन्धका स्वामी है। अवक्तब्यबन्धका स्वामी कौन है ? संयमसे गिरनेवाला प्रथम समयवर्ती मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि, सम्यग्मि-भ्यादृष्टि, असंयतसम्यग्दृष्टि ऋौर संयतासंयत अन्यतर जीव अवक्तव्यवन्थका स्वामी है। चार ऋ।युत्रोंके ऋवक्तव्यवन्धका स्वामी कौन हैं ? प्रथम समयवर्ती ऋ।युकर्मका वन्ध करनेवाला ऋन्यतर जीव त्र्यवक्तव्यवन्धका स्वामी है। इससे त्रागे वह अल्पतर बन्धका स्वामी है। ब्राहारक शरीर. बाहारक श्राङ्गोपाङ्ग, परघात, उच्छास, आतप, उद्योत श्रीर तीर्थङ्कर प्रकृतिके तीन पद्योंका स्वासी कौन है ? अन्यतर जीव उक्त पदोंका स्वामी है । अवक्तव्य पद्का स्वामी कौन है ? प्रथम समयमें

समयबं ० १ सेसाणं तिण्णिपद् ० कस्स ० १ अण्णा ० । अवत्तव्य ० कस्स ० १ अण्णा ० परियत्त-माणपढमसमयबंध ० ।

- ७०८. णिरएसु धुविगाणं तिण्णिपदा० कस्त० ? अण्ण० । सेसाणं ओघादो साधे-दच्वं । णवरि सत्तमाए तिरिक्खग-तिरिक्खाणु०-णीचा० थीणगिद्धि०भंगो । मणुसग०-मणुसाणु०-उचा० तिण्णिपदा० कस्त० ? अण्ण० । अवत्त० कस्त० ? अण्ण० मिच्छ-त्तादो परिवद० पडमसमय सम्मामि० सम्मादिष्टि० ।
- ७०६. तिरिक्खेस धुविगाणं तिण्णिपदा कस्स० ? अण्ण० । सेसाणं ओघादो साधे-दन्यं । एवं पंचिंदियतिरिक्ख०३ । पंचिंदियतिरिक्खअपज्ञत्त० धुविगाणं तिण्णिपदा० कस्स० ? अण्ण० । सेसाणं ओघं । एवं सन्वअपज्जत्तगाणं एइंदिय-विगल्लिदिय-पंच-कायाणं च ।
  - ७१०. मणुसा०३ ओघं। णवरि अवत्त० देवो ति ण भाणिदव्वं।
- ७११. देवाणं णिरयोघो याव उवरिमगेवज्जा ति । णवरि विसेसो णाद्व्वो । उवरि पज्जत्तमंगो ।
- ७१२. पंचिदि०-तस०२-पंचमण०-पंचवचि०-कायजोगि-ओरालि०-आभि०-सुद०-वन्ध करनेवाला अन्यतर जीव अवक्तव्य पदका स्वामी हैं। शेष कर्मीके तीन पदोंका स्वामी कौन है १ अन्यतर जीव उक्त पदोंका स्वामी है। अवक्तव्य पदका स्वामी कौन है। परिवर्तमान प्रथम समयमें बन्ध करनेवाला अन्यतर जीव अवक्तव्यपदका स्वामी है।
- ७०८. नारिकयोंमें ध्रुवदन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पदोंका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव उक्त पदोंका स्वामी है। शेष प्रकृतियोंके यथासम्भव पदोंका स्वामित्व खोघसे साध लेना चाहिये। इतनी विशेषता है कि सातवीं पृथिवीमें नियंद्धगति, तिर्यद्धगत्यानुपूर्वी ख्रौर नीचगोत्रका भङ्ग स्त्यानुपृद्धित्रिकके समान है। मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी ख्रौर उच्चगोत्रके तीन पदोंका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव उक्त पदोंका स्वामी है। अवक्तव्यपदका स्वामी कौन है ? मिश्यात्वसे ऊपर चढ़नेवाला प्रथम समयवर्ती सम्यग्मिश्यादृष्टि या सम्यग्दृष्टि ख्रन्यतर जीव अवक्तव्य पदका स्वामी है।
- ७०९. तिर्श्रक्कोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके तीन परोंका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव उक्त परोंका स्वामी है। शेष प्रकृतियोंके परोंका स्वामित्व ओधके अनुसार साध लेना चाहिये। इसी प्रकार पश्चित्र्यतिर्यक्कित्रेविकके जानना चाहिये। पश्चित्र्यतिर्यक्क अपयप्तिकोंमें ध्रुववन्धवाली प्रकृतियों के तीन परोंका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव उक्त परोंका स्वामी है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग अोधके समान है। इसी प्रकार सब अपर्याप्तक, एकेन्द्रिय, विकलवय और पाँच स्थावरकायिक जीवोंके जानना चाहिये।
- ७१०, मनुष्यत्रिकमें त्रोचके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि इनमें ऋवक्तटय पदक। स्वामी देव हैं। यह नहीं कहना चाहिये।
- ७११. देवोंमें उपरिम प्रैवेयक तक नारिकयोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि वहाँ जो विशेष हो उसे जानकर कहना चाहिये। इससे आगे पर्यापके समान भङ्ग है।
  - ७१२, पञ्चोन्द्रियद्विक, असद्विक, पाँच सनोयोगी, पाँच वचनयोगी, काययोगी, आदारिक

ओधि० चक्खुदं०-अचक्खुदं०-ओधिदं०-सुक्कले०-भवसि०-सम्मादि०-खइगस०- उवसम०-सण्णि-आहारग ति ओघो । णवरि पंचमण० पंचवचि०-ओरालिय० मणुसभंगी ।

७१३. ओरालियमि० धुविगाणं भुज०-अप्पद्०-अवद्वि० कस्स०१ अण्ण० । सेसाणं ओघं । देवगदि०४-तित्थय० तिण्णिपदा० कस्स०१ अण्ण० । मिच्छ० तिण्णिपदा कस्स १ अण्ण० । अवत्त० कस्स०१ सासण० परिवदमाण० पढमसमयमिच्छादिद्विस्स ।

७१४. वेउ व्वियका० देव-णेरहगभंगो । वेउ व्वियमि० ध्रुविगाणं तिण्णिपदा० कस्स० ? अण्ण० देवस्स वा णेरइय० । मिच्छत्तस्स ओरालियमिस्सभंगो । सेसाणं ओषो । आहार०-आहारमि० ध्रुविगाणं तिण्णिपदा कस्स० ? अण्ण० । सेसं ओघं । कम्मइय० ध्रुविगाणं तिण्णि पदा० कस्स० ? अण्ण० । सेसाणं तिण्णि पदा० कस्स० ? अण्ण० । अवत्त० कस्स० ? अण्ण० परियत्तमा० पटमसमयवं० । मिच्छ०-देवगदि०४- तिस्थय० ओरालियमिस्सभंगो । एवं अणाहार० ।

७१५. इत्थि० पंचणा०-चदुदंस०-चदुसंज०-पंचंत तिण्णिपदा कस्स० ? अण्ण० । णिहा-पचला-भय-दुगुं०-तेजा०-क० याव णिमिण त्ति तिण्णि पदा कस्स० ?

काययोगी, आभिनियोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी, अवधिज्ञानी, चन्नुःदर्शनी, अचन्नुदर्शनी, अवधि-दर्शनी, ग्रुक्तेश्यावाले, भव्य, सम्यग्दष्टि, श्लायिकसम्यग्दष्टि, उपशमसम्यग्दष्टि, संज्ञी और आहा-रक जीवोंमें श्लोघके समान भज्ज है। इतनी विशोषता है कि पाँच मनोयोगी, पाँच वचनयोगी और औदारिककाययोगी जीवोंमें मनुष्योंके समान भज्ज है।

७१३. श्रोदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके भुजगार, श्रह्णतर श्रोर श्रवस्थित पद्का स्वामी कौन हैं ? श्रन्यतर जीव उक्त पदोंका स्वामी हैं। शेष प्रकृतियोंके पदोंका स्वामी श्रांवके समान है। देवगति चतुष्क श्रोर तीर्थद्वर प्रकृतिके तीन पदोंका स्वामी कौन है ? श्रन्यतर जीव उक्त पदोंका स्वामी है। मिण्यात्वके तीन पदोंका स्वामी कौन है ? श्रन्यतर जीव उक्त पदोंका स्वामी है। अवक्तव्य पदका स्वामी कौन है ? सासादन सम्यक्त्वसे गिरनेवाला प्रथम समयवर्ती मिण्यादृष्टि जीव अवक्तव्य पदका स्वामी है।

०१४. वैक्रियिककाययोगी जीवोंमें देवों और नारिकयोंक समान भन्न है। वैक्रियिकमिश्रका ययागी जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पर्दोका स्वामी कौन है ? अन्यतर देव और नारिक जीव उक्त पर्दोका स्वामी है। मिध्यात्वका भन्न औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंके समान है। शेष प्रकृतियोंका भन्न ओयके समान है। आहारककाययोगी और आहारकमिश्रकाययोगी जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पर्दोका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव उक्त पर्दोका स्वामी है। शेष प्रकृतियोंके तीन पर्दोका स्वामी है। कार्मणकाययोगी जीवोंमें ध्रुववन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पर्दोका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव उक्त पर्दोका स्वामी है। शेष प्रकृतियोंके तीन पर्दोका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव उक्त पर्दोका स्वामी है। शेष प्रकृतियोंके तीन पर्दोका स्वामी कौन है ? अन्यतर परिवर्तमान प्रथम समयमें बन्ध करनेवाला जीव अवक्तव्य पर्दका स्वामी है। मिध्यात्व, देवगित चार और तिथेङ्करका भन्न औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंके समान है। इसी प्रकार अनाहारक जीवोंके जानना चाहिए।

७१५. स्त्रीवेदी जीवोंमें पाँच झानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच स्तर-रायके तीन पदोंका स्वामी कौन हैं १ अन्यतर जीव तीन पदोंका स्वामी है। निद्रा, प्रचला, भय, अण्णाव तिगदियस्स ! अवत्तव कस्तव ? अण्णाव उवसमव परिवदमाव मणुसव मणुसिणीए वा । सेसाणं ओघादो साघेदव्वं । णवरि तिगदियस्स । एवं पुरिसव । णवरि णिदा-पचलादंडयस्स ओघो । सेसाणं वि ओघो । णवुंसमे इत्थिभंगो । अवगदवेव अजव अवत्तव कस्सव ? अण्णाव उवसमव परिवदमाव पढमसमयव । अप्यदव-अविद्वि कस्सव ? अण्णाव उवसमव । एवं सन्याणं ।

७१६. कोधे३ पंचणा०-चदुदंस०-पंचंत० तिण्णिपदा कस्स० १ अण्ण० । कोधे चदुसंज० माणे तिण्णि संज० मायाए दो संज० णिहा-पंचला-भय-दुगु० तेजइगादिणव० ओघो । सेसाणं ओघं । लोभे [१४] कोधभंगो । सेसं ओघं ।

७१७. मदि०-सुद० धुविगाणं तिण्णिपदा कस्त० ? अण्ण० । मिच्छ० अवत्त० ओरालियमिस्समंगो । सेसाणं ओघेण साधेदव्यं । एवं विमंग०-अब्भवसि०-मिच्छादि० । णवरि दोस्र मिच्छत्तस्स अवत्त० णत्थि ।

७१८. मणपज्जव असंजदे धुविगाणं मणुसर्भगो । एवं सेसाणं पि । सामाइ०-

जुगुत्सा, तैजसशरीर और कार्मणशरीरसे लेकर निर्माण तक प्रकृतियोंक तीन पदोका स्वामी कौन है ? अन्यतर तीन गतिका जीव उक्त पदोंका स्वामी है । अवक्तव्य पदका स्वामी कौन है ? उपशमश्रीणसे गिरनेवाला अन्यतर मनुष्य या मनुष्यनी अवक्तव्य पदका स्वामी है । शेष प्रकृति- बोंके पदोंका स्वामित्व ओधसे साथ लेना चाहिए। इतनी विशेषता है कि तीन गतिके जीवके स्वामित्व कहना चाहिए। इसी प्रकार पुरुषवेदी जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनके निद्रा और प्रचला दण्डकका भङ्ग ओधके समान है। शेष प्रकृतियोंके पदोंका स्वामित्व भी ओधके समान हैं। नपुंसकवेदी जीवोंमें खीवेदी जीवोंके समान भङ्ग है। अपगतवेदी जीवोंमें मुजगार और अवक्तव्य पदका स्वामी कौन है ? उपचमश्रीणसे गिरनेवाला प्रथम समयवर्ती अन्यतर जीव उक्त पदोंका स्वामी हैं। अल्पतर और अवस्थितपदका स्वामी कौन है ? अन्यतर उपशामक या क्षपक अन्यतर जीव उक्त पदोंका स्वामी है। इसी प्रकार सव प्रकृतियोंका स्वामित्व जानना चाहिए।

०१६. क्रोध, सान और माया कषायवाले जीवोमें पाँच झानावरण, चार दर्शनावरण और पाँच अन्तरायके तीन पदोंका स्वामी कौन हैं ? अन्यतर जीव तीन पदोंका स्वामी हैं। क्रोध-कषायवाले जीवोमें जार संज्वलन, मान कषायवाले जीवोमें तीन संज्वलन और मायाकषायवाले जीवोमें दो संज्वलन तथा निद्रा, प्रचला, भय, जुगुष्सा और तैजसशरीर आदि नी प्रकृतियोंका मङ्ग श्रोधके समान हैं। तथा शष प्रकृतियोंके पदोंका स्वामित्व औषके समान हैं। लोभ कषायवाले जीवोमें चौदह प्रकृतियोंका भङ्ग क्रोध कपायवाले जीवोके समान हैं। श्रेष प्रकृतियोंके पदोंका स्वामित्व आंघके समान हैं।

७१७. मत्यज्ञानी श्रोर श्रुताज्ञानी जीवोंमें श्रुववन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पर्तोका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव तीन पर्दोका स्वामी है। मिथ्यात्वके अवक्तव्य पर्का स्वामित्व श्रौदारिक मिश्रकाययोगी जीक्षेके समान है। शेष प्रकृतियोंके पर्दोका स्वामित्व ओघसे साथ लेना चाहिए। इसी प्रकार विभन्नज्ञानी, अभव्य और मिथ्यादृष्टि जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अभव्य और मिथ्यादृष्टि इन दो मार्गणाश्रोमें मिथ्यात्वका श्रवक्तव्य पर नहीं है।

७१८. सनःपर्ययक्कानी और संयत जीवोंमें ध्रवबन्यवाली प्रकृतियोंका भन्न मनुष्योंके समान

छेदो० धुनिगाणं तिण्णिपदा कस्त० ? अण्ण० । णिद्दा-पचला-तिण्णिसंज०-पुरिस०-भयदुगुं० देवगदि-पंचिदि०-तिण्णिसरीर-समचदु०-वण्ण०४-देवाणु०-अगु० ४-पसत्थ०-तस०
४-सुभग-सुस्सर-आदे०-णिमि०-तित्थय० तिण्णिपदा कस्त ? अण्ण० । अवत्तव्व० कस्त ?
अण्ण० उनसम० परिवद० पढमसमय मणुस० मणुसिणीए वा । सेसाणं ओघो । परिहार० आहारकायजोगिभंगो । [सहुमे भुज० कस्त० ? अण्ण० उनसम परिवद०। वेपदा
कस्त० ? अण्ण० उनस० खनग० । ]

७१६, संजदासंज०-सम्मामि०-[सासाद०] अणुदिसभंगो। णविर संजदासंजदस्स तित्थयरस्स अवत्तव्वं ओघेण साघेदव्वो। असंजदा० तिरिक्खोघं। एवं तिण्णिलेस्साणं। णविर किण्णा-णीलाणं तित्थयरस्स अवत्तव्वं णित्थ । तेउए ध्रुविगाणं तिण्णिपदा कस्स० ? अण्णा०। सेसाणं ओघादो साघेदव्वं। एवं पम्माएं। वेदगे ध्रुविगाणं तिण्णिपदा कस्स० ? अण्णा०। सेसं ओघं। असण्णीसु ध्रुविगाणं तिण्णि पदा कस्स० ? अण्णादरस्स। सेसाणं ओघादो साधेदव्वं। एवं सामित्तं समत्तं।

## कालाणुगमो

७२०. कालाणुगमेण दुवि०-ओघे० आदे०। ओघे० पंचणा० णवदंसणा० दोवेदहै। इसी प्रकार शंप प्रकृतियोंके विषयमें जानना चाहिए। सामायिकसंयत और छेदोपस्थापनासंयत जीवोंमें ध्रुववन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पदोंका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव उक्त पदोंका स्वामी है। निद्रा, प्रचलाः तीन संव्यलन, पुरुषवेद, भय, जुगुष्सा, देवगति, पश्चोन्द्रिय जाति, तीन शरीर, समचतुरक्र संस्थान, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूबी, अगुरुलधुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगित असचतुष्क, सुभग, मुस्वर, आदेय, निर्माण और तीयद्वर इनके तीन पदोंका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव उक्त पदोंका स्वामी है। अवक्तव्यपदका स्वामी कौन है ? उपशमश्रेणिसे गिरनेवाला प्रथम समयवर्ती अन्यतर मनुष्य या मनुष्यिनी अवक्तव्यपदका स्वामी है। होष प्रकृतियोंके पदोंका भक्न आधिक समान है। परिहारविशुद्धिसंयत जीवोंमें आहारककाययोगी जीवोंके समान भक्न है। सूर्मसाम्परायिक संयत जीवोंमें मुजगारपदका स्वामी कौन है ? उपशमश्रेणिसे गिरनेवाला अन्यतर जीव मुजगारपदका स्वामी है। अस्पतर और अवस्थितपदका स्वामी कौन है ? अन्यतर उपशामक और सपक उक्त दो पदोंका स्वामी है।

७१६. संयतासंयत, सम्यग्मिध्यादृष्टि और सासाद नसम्यग्दृष्टि जींगेंका भक्क अनुदिशके समान है। इतनी विशेषता है कि संयतासंयत जींगेंमें तीर्थक्कर प्रकृतिका अवक्तव्यपद ओंग्रसे साथ लेंगा चाहिए। असंयतोंमें सामान्य तिर्यक्कोंके समान भक्क है। इसीप्रकार तीन लेश्यायाले जींगोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि कृष्ण और नील लेश्यायाले जींगोंमें तीर्थक्करका अवक्तव्य पद नहीं है। पीत लेश्यायाले जींगोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पदोंका स्वामी कौन है ? अन्यतर जींग उक्त पदोंका स्वामी है। शेष प्रकृतियोंके पदोंका स्वामित्व आंग्रसे साथ लेना चाहिए। इसीप्रकार पद्मिन्वश्यायाले जींगोंके जानना चाहिए। वदकसम्यग्दृष्टि जींगोंमें ध्रुवयन्ध्याली प्रकृतियोंके तीन पदोंका स्वामी कौन है ? अन्यतर जींग उक्त पदोंका स्वामी है। असंज्ञी जींगोंमें ध्रुव प्रकृतियोंके तीन पदोंका स्वामी कौन है ? अन्यतर जींग उक्त पदोंका स्वामी है। असंज्ञी जींगोंमें ध्रुव प्रकृतियोंके तीन पदोंका स्वामी कौन है ? अन्यतर जींग उक्त पदोंका स्वामी है। शेष प्रकृतियोंके पदोंका स्वामित्व आंग्रसे साथ लेना चाहिए। इसप्रकार स्वामित्व समाप्त हुआ ?

७५०. कालानुगमकी अपेद्धा निर्देश दो प्रकारका है-आंध और आदेश। श्रोधसे पाँच

कालानुगम

णी० मिच्छ० सोलसक० णवणोक० तिरिक्खग० पंचिदि० ओरालि० नेजा० क० छस्संटा० अोरालि० अंगो० छस्संघ० वणा० ४ -- अगु०४ -- तिरिक्खाणु० उज्जो० -- दोविहा० -- तस वादर- एउजत अपज्जत पत्तेय० थिरादिछयुगल णिमि० णीचा० पंचंत० धुज० केवचिरं कालादो होदि? जह० एग०, उक्क० चत्तारि समया। अप्पद० केव०? जह० एग०, उक्क० तिण्णि सम०। अविहि० जह० एग, उक्क० खंतो०। अवत्त० जह० एग०, उक्क० एग०। चदुण्णं आयुगणं अवत्तव्य० जह० उक्क० एग०। अप्पद० जह० उक्क० अंतो०। वेउन्वियछ० आहार सुग-तित्थय० धुज० अपपद० जह० एग०, उक्क० वेसम०। अविहि० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० जहण्णु० एगस०। मणुसग० मणुसाणु० उच्चा० धुज० जह० एग०, उक्क० चत्तारि सम०। अप्पद० जह० एग०, उक्क० वेसम०। अविहि० जह० एग०, उक्क० चत्तारि सम०। अपत्व उक्क० एग०। एइंदिय आदाव थावर सुहुम-साधार० धुज० जह० एग०, उक्क० वेसम०। अवत्त० जह० एग०, उक्क० तिण्णिसम०। अवत्त० अविह० तिहिंदि० तीइंदि० चदुरिं० धुज० अप्पद० जह० एग०, उक्क० तिण्णि सम०। अविह० अवत० देवगदिभंगो। सेसाणं पगदीणं धुज० जह० एग०, उक्क० विण्य सम०। अपद० जह० एग०, उक्क० तिण्णि सम०। अपद० जह० एग०, उक्क० तिण्णि सम०। अपद० जह० एग०, उक्क० तिण्णि सम०। अपदि० जह० एग०, उक्क० तिण्णिसम०। अपद० जह० एग०, उक्क० विण्य सम०। अपद० जह० एग०, उक्क० तिण्णिसम०। अपद० जह० एग०, उक्क० विण्य सम०। अपद० जह० एग०, उक्क० तिण्य सम०। अपदि० जह० एग०, उक्क० तिण्य सम०। अपदि० जह० एग०, उक्क० तिण्य सम०। अपदि० जह० एग०, उक्क० विण्य सम०। अपदि० जह० एग०, उक्क० विण्य सम०। अपदि० जह० एग०, उक्क० विण्य सम०। अपदि० जह० एग०, उक्क०

ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, दो वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, नौ नोकषाय, तिर्यंचगति, पक्चे-न्द्रियजाति, स्रोदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, छह संस्थान, स्रोदारिक स्राङ्गोपाङ्ग, छह संहत्तन, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उद्योत, दो बिहायोगति, त्रस, बादर, पर्याप्त अपर्याप्त, प्रत्येक, स्थिर आदि छह युगल, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनके भुजगार-बन्धका कितना काल है ? जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल चार समय है । अरुपतरवन्धका कितना काल है ? जघन्यकाल एक समय है और उस्कृष्टकाल तीन समय है। अवस्थितपदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्यपदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल एक समय है। चार आयुत्रोंके श्रवक्तव्यपदका जधन्य और उत्कृष्टकाल एक समय है । अल्पतरपदका जघन्य स्रोर उत्कृष्टकाल अन्तर्मुहूर्त है । वैक्रियिक छह, स्राहारकद्विक और नीर्थ-द्धरके भुजगार त्र्यौर श्रल्पतर पदका जवन्यकाल एक समय है त्र्यौर उक्तप्टकाल दो समय है। श्रव-स्थितपद्का जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्यपदका जघन्य और उत्कृष्टकाल एक समय है। मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगोत्रके भुजगारपदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल चार समय है। अल्पतर पदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्ट-काल दो समय है। अवस्थितपदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल अन्तर्मुहूर्त है। अव-क्तव्यपद्का जघन्य त्र्यौर उत्कृष्टकाल एक समय है। एकेन्द्रियजाति, त्र्यातप, स्थावर, सूत्म ऋौर साधारणके भुजगारपदका जचन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल दो समय है। अस्पतरपदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल तीन समय है। अवक्तव्य और अवस्थित पदका भङ्ग देवगतिके समान है। द्वीन्द्रियजाति, त्रीन्द्रियजात त्रौर चतुरिन्द्रियजातिके भुजगार त्रौर अस्पतर पदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल तीन समय है। ऋवस्थित और ऋवक्तव्यपदका भङ्ग देवगतिके समान है। शेष प्रकृतियोंके भुजगारपदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल चार समय है। अल्पतरपदका जघन्यकाल एक समय है खोर उत्क्रष्टकाल तीन समय है। अवस्थित पदका जवन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल अन्तमुहूर्त है। अवक्तव्यपदका जवन्य और उत्कृष्ट अंतो० । अवत्त० जहण्यु० एगस० । एवं ओघभंगो कायजोगि-कोघादि०४-मदि०-सुद०-असंज०-अचक्खुदं०-तिण्णिले०-भवसि०-अब्भवसि०-मिच्छादि० ।

७२१. णिरएसु धुविगाणं भुजि अप्प व जह व एग व, उक्त व वेसम व । अवद्वि व जह व एग व, उक्त व अंतो व । एवं सेसाणं पि । णवरि अवस्ववगो यस्स अत्थि तस्स एय समयं । एवं सञ्बणिरयोणं ।

७२२. तिरिक्खेसु ओघो। णविर धुविगाणं अवत्तव्वं णित्य। मणुसग०-मणुसाणु०उचा० देवगदिभंगो। पंचिदियतिरिक्खेसु मणुसग०-चदुजादि-मणुसाणु०-थावर-आदावसुहुम-साधार०-उचा० देवगदिभंगो। सेसाणं सुज --अप्पद० जह० एग०, उक० तिण्णि
सम०। सेसं ओघं। पंचिदियपज्जत्त-जोणिणीसु एवं चेव। णविर अपज्जत्तणाम देवगदिभंगो। पंचिदिय०अपज्ज० धुविगाणं सुज०-अप्पद० जह० एग०, उक० तिण्णि
सम०। अवद्वि० जह० एग०, उक० अंतो०। सादासाद०-पंचणोक०-तिरिक्खग०पंचिदि०-हुंडसं०-ओरालि०अंगो०-असंप०-तिरिक्खाणु०-तस०-बादर-अपज्ज०-पत्ते०-अथिरादिपंच-णीचा० सुज०-अप्पद० जह० एग०, उक० तिण्णि सम०। अवद्वि० ओघं।
सेसं णिरयभंगो।

काल एक समय हैं। इसीप्रकार ऋोधके समान काययोगी, कोधादि चार कपायवाले, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, श्रसंयत, श्रचतुदर्शनी, तीन लेश्यावाले, भव्य, श्राभव्य श्रीर मिध्यादृष्टि जीवोंके जानना चाहिये।

७२१. नारिकयों में ध्रुववन्धवाली प्रकृतियों के मुजगार ख्रीर ख्रस्पतरपदका जघन्यकाल एक समय है ख्रीर उत्कृष्टकाल दो समय है। ख्रवस्थितपदका जघन्यकाल एक समय है ख्रीर उत्कृष्टकाल ख्रन्तर्मुहूर्त है। इसीप्रकार शेष प्रकृतियों के पदोंका काल जानना चाहिये। इतनी विशेषना है कि जिस प्रकृतिका ख्रवक्तव्यपद है उसका जघन्य ख्रीर, उत्कृष्टकाल एक समय है। इसीप्रकार सब नारिक्यों के जानना चाहिये।

७२२. तिर्यक्कोंमें ओघके समान काल है। इतनी विशेषता है कि श्रृ वबन्धवाली प्रकृतियोंका अवक्तव्यपद नहीं हैं। मनुष्यगित, मनुष्यगत्यानुषूर्वी और उच्चगोत्रका भद्ग देवगितके समान है। पक्कोन्त्रय तिर्यक्कोंमें मनुष्यगित, चार जाति, मनुष्यगत्यानुषूर्वी, स्थावर, आतप, सूदम, साधारण और उच्चगोत्रका भद्ग देवगितके समान है। शेष प्रकृतियोंके भुजगार और अल्पतरपदका जघन्य काल एक मय है और उत्कृष्टकाल तीन समय है। शेष भद्ग आघके समान है। पक्कोन्त्रय पर्याप्त तिर्यक्क और योनिनी जीधोंमें इसीप्रकार जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि इनमें अपर्याप्त नामका भद्ग देवगितके समान है। पक्कोन्त्रय तिर्यक्क अपर्याप्तकोंमें श्रृ वबन्धवाली प्रकृतियोंके भुजगार और अल्पतरपदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल तीन समय है। अवस्थित पदका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्टकाल तीन समय है। अवस्थित पप्त नोकपाय, तिर्यक्कगित, पक्कोन्त्रयजाति; हुण्डसंस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, असम्भाष्टासृप्रदिका संहनन, तिर्यक्कगत्तानुपूर्वी, त्रस, वादर, अपर्याप्त, प्रत्येक, अस्थिर आदि पाँच और नीचगोत्रके भुजागार और अल्पतरपदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल तीन समय है। अवस्थितपदका काल और समान है। शेष भङ्ग नरिकयोंके समान है।

- ७२३. मणुसा०३ सव्वाणं भुज०-अप्प० जह० एग०,उक्क०वेसम०। अवहि०-अवस्त्रं ओघं। एवं मणुसभंगो पंचमण०-पंचवचि०-ओरालि०-वेउव्वि०-वेउव्विपमि०-आहार०-आहारमि० विभंग०-आमि० सुद०-ओधि०-मणपज्ज०-संजद-सामाइ०-छेदो०-परिहार०-संजदासंजद-ओधिदं०-तेउ०-पम्म०-सुक्छे०-सम्मादि०-खइग०-वेदगस०-उवसम०-सासण०-सम्मामि०-सण्णि ति । मणुसअपज्ज० णेरइगभंगो । एवं देवाणं एइंदिय-विग-लिंदिय-पंचकायाणं च ।
- ७२४. पंचिद्यं २२ चतुआयु० ओषं । वेउ व्यियछक्त-आहारदुग-तित्थय०-चतुजादिआदाव-थावर सुहुम-साधार० ग्रुज० अप्पद० जह० एग०, उक्त० वेसम०। अवद्वि०-अवत्तव्वं
  ओषं । सेसाणं ग्रुज०-अप्प० जह० एग०, उक्त० तिष्णिसम०। अवद्वि०-अवत्त० श्रोषं ।
  मणुसग०-मणुसाणु० उच्चा० ग्रुज० जह० एग०, उक्त० तिष्णिसम०। अप्पद० जह०
  एग०, उक्त० वेसम०। अवद्वि०-अवत्त० ओषं। पज्जत्त०-अपज्जत्तणामाणं देवगदिमंगो।
  पंचिद्यअपज्ज० तिरिक्खअपज्जतमंगो। णवरि मणुसग०-मणुसाणु० ग्रुज० जह० एग०,
  उक्त० तिष्णिसम०। अप्पद० जह० एग०, उक्त० वेसम०। अवद्वि०-अवत्त० ओषं।
- उर्३. मनुष्यत्रिकमें सब प्रकृतियों के मुजगार और अस्पतरपदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल दो समय है। अवस्थित और अवक्तव्यपदका भङ्ग ओषके समान है। इसीप्रकार मनुष्यों के समान पाँच मनोयोगी, पाँच वचनयोगी, औदारिक काययोगी, वैक्रियिकयोगी, वैक्रियिक मिश्रकाययोगी, आहारककाययोगी, आहारकमिश्रकाययोगी, विभक्तहानी आभिनिवोधिकज्ञानी, श्रुत-ज्ञानी अवधिज्ञानी, मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापनासंयत, परिहारविद्युद्धिसंयत, संयतासंयत, अवधिदश्ती, पीतलेश्यावाले, पद्मलेश्यावाले, सम्यग्टिष्ट, न्यायिकसम्यग्टिष्ट, वेदकसम्यग्टिष्ट, उपशम सम्यग्टिष्ट, सासादनसम्यग्टिष्ट, सम्यग्निश्यादृष्टि और संज्ञी जीयोंके जानना चाहिये। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें नारिकयोंके समान भङ्ग है। इसीप्रकार देव, एकेन्द्रिय, विकलेन्द्रिय और पाँच स्थारकायिक जीयोंके जानना चाहिये।
- ७२४. पश्चेन्द्रियद्विकमं चार ऋायुश्चोंका भङ्ग श्रोधके समान है। वैकियिक छह, ऋहारकद्विक, तीर्थेङ्कर, चार जाति, आतप, स्थावर, सूद्धम श्रोर साधारणके भुजगार और अल्पतर पदका
  जधन्यकाल एक समय है श्रोर उत्कृष्टकाल दो समय है। अवस्थित श्रोर श्रवक्तव्य पदका काल
  श्रोधके समान है। श्रेष प्रकृतियोंके भुजगार श्रीर श्रवक्तव्य पदका जधन्यकाल एक समय है श्रोर
  उत्कृष्टकाल तीन समय है। अवस्थित श्रीर अवक्तव्य पदका भङ्ग श्रोधके समान है। मनुष्यगति,
  मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगोत्रके भुजगारपदका जधन्यकाल एक समय है श्रीर उत्कृष्टकाल तीन समय
  है। श्रवपतर पदका जधन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल दो समय है। श्रवस्थित और
  अवक्तव्य पदका भङ्ग श्रोधके समान है। पर्याप्त श्रोर श्रवप्राप्त नामका भङ्ग देवगितके समान है।
  पश्चेन्द्रिय अर्थाप्तकोंमें तिर्थेश्च श्रपर्याप्तकोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि मनुष्यगित श्रीर
  मनुष्यगत्यानुपूर्वीके मुजगार पदका जधन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्टकाल तीन समय है।
  अस्पतरपदका जधन्यकाल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल दो समय है। अवस्थित और श्रवक्तव्य
  पदका भङ्ग श्रोधके समान हैं।

७२५. तस-तसपन्जत्त० वेउव्विपछक-एइंदि०-आहारदुग-आदाव-थावर-सुहुम-साधार तित्थय० भुज०-अप्पद० जह० एग०, उक० वेसम०। अवद्वि०-अवत्त० ओधं। बेइंदि० भुज० जह० एग०, उक० वेसम०। अप्पद० जह० एग०, उक० तिण्णिसम०। अवद्वि० अवत्त० सेसाणं ओघं। पज्जताणं अपज्जत्तणामाणं च देवगदिमंगो।

७२६. तसअपज्ज० धुविगाणं भुज० जह० एग०, उक्क० चत्तारिसम०। अपपद० जह० एग०, उक्क० तिण्णिसम०। अविष्ठि० ओधं। दोवेदणीय०-पंचणोक०-तिरिक्खग०-पंचिदि०-हुंडसं०-ओरालि०अंगो०-असंपत्त०-तिरिक्खाणु०-तस-बादर-पज्जत्त-पत्तेय०-अधि-रादिपंच-णोचा० भुज० जह० एग०, उक्क० चत्तारिसम०। अप्पद० जह० एग०, उक्क० तिण्णिसम०। अविष्ठ०-अवत्त० ओधं। मणुसग०-मणुसाणु० भुज० जह० एग०, उक्क० चत्तारिसम०। अप्पद० जह० एग०, उक्क० चेसम०। [अविष्ठ०-अवत्त०] तिण्णिविगलिंदि०-तसणामाणं च ओधं। णवरि वेइंदि० भुज० चेसम०। सेसाणं भुज०-अप्प० जह० एग०, उक्क०-वेसम०। अविष्ठ०-अवत्त० ओधं।

७२७, ओरालियमि० मणुसग०-मणुसाणु०-उचा० भुज०-अप्पद्० जह० एग०,उक० तिण्णिसम० वेसम० । अवद्वि०-अवत्त० ओधं । देवगदि०४-तित्थय० भुज०-अप्पद०

७२५. त्रस और त्रस पर्याप्त जीवोंमें वैकियिक छह, एकेन्द्रियजाति, आहारकद्विक, आतप, स्थावर, सूदम, साधारण और तीथङ्कर प्रकृतिके भुजगार और अल्पतर पदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल दो समय है। अवस्थित और अवक्तव्य पदका भद्ग आंघके समान है। द्वीन्द्रिय जातिके भुजगार पदका जघन्य काल एक समय हैं और उत्कृष्टकाल दो समय है। अल्पतर पदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल तीन समय है। अवस्थित और अवक्तव्य पदका तथा शेप प्रकृतियोंका भङ्ग अधिके समान है।

७२६. त्रस अपर्याप्तकों में घुववन्धवाली प्रकृतियों के भुजगार पदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल वार समय है। अवस्थित पदका अवस्थित पदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल तीन समय है। अवस्थित पदका भङ्ग अधिक समान है। दो वेदनीय, पांच नोकषाय, तिर्यक्षगति, पक्षेत्रिय जाति, हुण्डसंस्थान, अौदारिक आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तास्पादिकासंहनन, तिर्यक्षगत्यानुपूर्वी, त्रस, वादर, पर्याप्त, प्रत्येक, अस्थिर आदि पांच और नीचगोत्रके भुजगार पदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल वार समय है। अस्पतर पदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल तीन समय है। अवस्थित और अवक्तव्यपदका भङ्ग ओघके समान है। मनुष्यगति और मनुष्यगत्यानुपूर्वीके भुजगार पदका जघन्यकाल एक समय है। अस्पतर पदका जघन्यकाल एक समय है। अस्पतर पदका जघन्यकाल एक समय है। अस्पतर पदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल दो समय है। अवस्थित और अवक्तव्यपदका तथा तीन विकलेन्द्रिय और त्रस नामकर्मका भङ्ग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि दीन्द्रियजातिक भुजगार पदका उत्कृष्टकाल दो समय है। अपि प्रकृतियों के भुजगार और अस्पतर पदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल दो समय है। अपि प्रकृतियों के भुजगार और अस्पतर पदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल दो समय है। अवस्थित और अवक्तव्य पदका अङ्ग ओघके समान है।

७२७. औदारिकिमश्रकाययोगी जीयोंमें मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी ऋौर उच्चगोत्रके भुजगार ऋौर ऋरपतरपद का जधन्यकाल एक समय है ऋौर उत्कृष्टकाल क्रमसे तीन समय श्रीर दो समय है। अधिस्थित और अवक्तव्य पदका भङ्ग श्रोधके समान है। देवगति चार और नीर्थ- जह०एग०, उक्क०, बेसम०। सेसाणं ओचं। णवरि जेसि चत्तारि समयं तेसि तिण्णि समयं। ७२८. कम्मइ० धुविगाणं थावरपगदीणं च अवहि० जह० एग०, उक्क० तिण्णि सम०। अवत्त० [जहण्णु०] एगस०। सेसाणं अविद्वि० जह० एग०, उक्क० बेसम०। अवत्त० जहण्णु० एग०। देवगदिपंचग० अविद्वि० जह० एग०. उक्क० बेसम०।

७२६. इत्थिवेदे पंचणा०-चदुदंस०-चदुसंज० पंचंतरा० पंचिदियतिरिक्खभंगो । पंच-दंस०-दोवेदणी०-मिच्छ०-चारसक०-इत्थिवे०-इस्स-रिद-अरिद-सोग-भय-दुगुं०-तिरिक्ख-ग०-पंचिदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-छस्संठाणं-ओरालि०अंगो०-छस्संघ०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-उजो०दोविहा०-तस०४-थिरादिछयुगत्त-णिमि०-णीचा० भुज०-अष्प० जह० एम०, उक० तिण्णिसम०। अवट्ठि०-अवत्त० ओघं। मणुसग०-मणुसाणु०-उचा० भुज० जह० एग०, उक० तिण्णिस०। अप्प०-अवट्ठि०-अवत्त० ओघं। सेसाणं भुज०-अप्प० जह० एग०, उक० तिण्णिस०। अवट्ठि०-अवत्त० ओघं। पुरिसवेदे सो चेव मंगो। णवरि पुरिस०दोपदा जह० एग०, उक० तिण्णिस०। अवट्ठि०-अवत्त० ओघं। णवुंसगे ओघं। णवरि इत्थि०-पुरिस० देवगदिभंगो। अवगदवे० सव्यपगदीणं भुज०-अप्प०-

ङ्कर प्रकृतिके मुजगार और ऋस्पतर पदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल दो समय है। शेष प्रकृतियोंके पदौंका काल ओधके समान है। इतनी विशेषता है कि जिनका झोधसे चार समय काल है उनका काल यहाँ तीन समय है।

७२८. कार्मणकाययोगी जीवोंमें ध्रुव और स्थावर प्रकृतियोंके अवस्थित पदका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्टकाल तीन समय है। अवक्तव्य पदका जघन्य और उत्कृष्टकाल एक समय है। शेष प्रकृतियोंके अवस्थित पदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल दो समय है। अवक्तव्य पदका जघन्य और उत्कृष्टकाल एक समय है। देवगतिपञ्चकके अवस्थित पदका जघन्य-काल एक समय है और उत्कृष्टकाल दो समय है।

७२६. स्त्रीवेदी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच अन्तरायका भक्त पद्मेन्द्रिय तिर्यक्कोंके समान हैं। पाँच दर्शनावरण, दो वेदनीय, मिध्यास्व, बारह कषाय, स्त्रीवेद, हास्य, रित, अरित, शोक, भय, जुगुप्सा, तिर्यक्कगित, पक्रोन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, छह संस्थान, श्रोदारि आङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, वर्णचतुष्क, तिर्यक्कगित्यानुपूर्वी, अगुरुलयुचतुष्क, उद्योत, दो विहायोगिति, त्रसचतुष्क, स्थिर आदि छह युगल, निर्माण और नीचगोत्रके भुजगार और अस्पतर पदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल तीन समय है। अवस्थित और अवक्तव्य पदका काल श्रोषके समान है। मनुष्यगित, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगोत्रके भुजगार पदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल तीन समय है। अस्पतर, श्रवस्थित और अवक्तव्य पदका काल श्रोषके समान है। शेष प्रकृतियोंके भुजगार श्रीर अस्पतर, श्रवस्थित और अवक्तव्य पदका काल श्रोषके समान है। श्रवस्थित और श्रवक्तव्य पदका काल श्रोषके समान है। इतनी विशेषता है कि प्रकृतवेदके दो पदोंका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल तीन समय है। श्रवस्थित और अवक्तव्य पदका काल ओघके समान है। नपुंसकवेदी जीवोंमें बही भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि श्रवक्तव्य पदका काल ओघके समान है। नपुंसकवेदी जीवोंमें श्रोषके समान है। श्रवनिथत श्रोर अवक्तव्य पदका काल ओघके समान है। नपुंसकवेदी जीवोंमें श्रोषके समान है। इतनी विशेषता है कि इनमें स्त्रीवेद और पुरुषवेदका भङ्ग देवगितिके समान है। अपगतवेदी जीवोंमें सब प्रकृतियोंके भुजगार, अस्पतर श्रीर श्रवक्तव्य पदका जवन्य पदका जवन्य श्रीर अवक्तव्य पदका जवन्य पदका जवन्य प्रविश्व के भुजगार, अस्पतर श्रीर श्रवक्तव्य पदका जवन्य प्रवक्त जवन्य विशेषत श्रीर अवक्तव्य प्रवक्त निर्मा स्वर्शक्त निर्मा है। श्रवस्थत श्रीर अवक्तव्य प्रवक्तव्य प्रवक्त जवन्य प्रवक्त जवन्य प्रवक्त निर्मा है। अपगतवेदी जीवोंमें सब प्रकृतियोंके भुजगार, अस्पतर श्रीर श्रवक्तव्य प्रवक्तव्य प्रवक्त जवन्य विशेषत श्रीर उत्कृत्य श्रीर अवक्तव्य प्रवक्त समय है। श्रवस्थत

अवत्तर एगर । अवद्विर ओवं ।

७३०. सुहुमसंप० सन्वाणं भुज०-अप्प० एग०। अवद्वि० जह० एग०, उक० अंतो०। [चक्खुदं० तसपञ्जतमंगो।णवरि तेइंदि०-चदुरि० भुज० जह० एग० उक्क० वे०।]

७३१. असण्णीसु वेउन्तियछ०-मणुसग०-मणुसाणु०-उचा० सुज०-अप्प० जह० एग०, उक्त० बेसम०। अवङ्गि०-अवत्त०ओधं। सेसाणं सुज०-अप्प० जह० एग०, उक्त० तिष्णिसम०। णवरि इत्थिनेदादिपंचिदियसंजुत्ताणं पगदीणं उक्तस्सं अप्पदरं बेसमयं। अवङ्गि०-अवत्त० ओघं। एइंदिय-आदाव-थानर-सुदूम-साधारणाणं ओघं।

७३२. आहारगेसु चदुआयु०-वेउव्वियद्ध०-आहारदुग-तित्थय० ओघो । मणुसग०-मणुसाणु०-उच्चा० भुज० जह० एग०, उक्क० तिष्णिसम० । अप्प० जह० एग०, उक्क० वेसम० । अवद्वि०-अवत्त० ओघं । एइंदिय-आदाव-थावर-सुहुम-साधारणं च ओघं । सेसाणं भुज०-अप्प० जह० एग०, उक्क० तिष्णिस० । अवद्वि०-अवत्त० ओघं । अणाहार० कम्मइगभंगो । एवं कालं समत्तं।

अंतराणुगमो

७३३, अंतराणुगमेण दुवि०-ओघे० आदे० । ओघे० पंचणा० हर्दसणा०-चदुसंज०-पदका काल खोघक समान है ।

७३०. सूच्मसाम्परायिक जीवोंमें सब प्रकृतियोंके भुजगार खोर अल्पतर पदका जधन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अवस्थित पदका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्त-र्मुहूर्त है। चन्नुदर्शनवाले जीवोंमें असपर्याप्तकोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि श्रीन्द्रिय और चतुरिन्द्रिय जातिके भुजगार पदका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल दो समय है।

७३१. असंही जीवोंमें वैकियिक छह, मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगोत्रके भुज-गार और अस्पतर पदका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल दो समय है। अवस्थित और अवक्तव्य पदका काल आघके समान है। शेष प्रकृतियोंके भुजगार और अस्पतर पदका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल तीन समय है। इतनी विशेषता है कि स्नीवेद आदि पञ्चेन्द्रियसंयुक्त प्रकृतियोंके अस्पतर पदका उत्कृष्ट काल दो समय है। अवस्थित और अवक्तव्य पदका काल ओघके समान है। एकेन्द्रियजाति, आतप, स्थावर, सूदम और साधारणका भड़ ओघके समान है।

७३२. श्राहारक जीवोंमें चार श्रायु, वैक्रियिक छह, श्राहारकद्विक श्रीर तीर्थह्नर प्रकृतिका भङ्ग आंघके समान है। मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी श्रीर उच्चगोत्रके भुजगार पदका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल तीन समय है। श्राह्मतर पदका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल दो समय है। श्राहम्थत श्रीर श्राहम काल श्राह्म श्रीर साधारणका भङ्ग श्रोघके समान है। शेष प्रकृतियोंके भुजगार श्रीर श्राहमत जावन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल तीन समय है। अवस्थित श्रीर श्राहमत्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल तीन समय है। अवस्थित श्रीर श्राहमत्य काल श्रीष समान है। अनाहारक जीवोंमें कार्मणकाययोगी जीवोंके समान भङ्ग है। इस प्रकार काल समाप्त हुश्रा।

अन्तरानुगम ७३३. अन्तरानुगमकी ऋषेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ ऋौर ख्रादेश । ओधने पाँच भय-दुगुं े तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०-उप०-णिमि०-पंचंत० शुज०-अप्पद०-अवद्वि० बंधंतरं केव० १ जह० एग०, उक० अंतो० । अवत्त० जह० अंतो०, उक० अद्ध्योंगाल० ।
धीणिविद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४ शुज०-अप्प०-अवद्वि० जह० एग०, उक०
बेछावद्वि० देख० । अवत्त० जह० अंतो०, उक० अद्ध्योंगाल० । सादासाद०-चदुणोक०धिराधिर-सुभासुम-जस०-अजस० तिण्णिपदा जह० एग०, उक० अंतो० । अवत्त० जह०
उक० अंतो० । एवमेदाणं पाव अणाहारग ति एस भंगो । अट्टक० तिण्णिपदा जह०
एग०, उक० पुञ्चकोडी दे० । अवत्त० णाणावरणमंगो । इत्थि० तिण्णिपदा जह० एग०,
उकक० बेछावद्वि० देख० । अवत्त० जह० अंतो०, उक० बेछावद्वि० देख० । पुरिस०
तिण्णिपदा० णाणा०मंगो । अवत्त० जह० अंतो०, उक० बेछावद्वि० सादिरे०। णवंस०पंचसंठा०-पंचसंघ०-अप्पसत्थ०-दूभग-दुस्सर-अणादे०तिण्णिपदा० जह० एग०, उक०
बेछावद्वि० सादि० तिण्णि पिलदो० देख०। अवत्त० जह० अंतो०, उक० बेछावद्वि० सादिरे०। स्वादि० तिण्णिपलदो० देख०। तिण्णिआयु० अवत्त० अस्पद० जह० अंतो०, उक० बेछावद्वि० सादि० तिण्णिपलदो० देख०। तिण्णिआयु० अवत्त० अस्पद० जह० अंतो०, उक० बेछावद्वि० सादि० तिण्णिपता० जह० एग०, अवत्त० अत्त० जह० अंतो०, उक० अणंतका०। तिरिक्खायु० अवत्त०-अप्पद० जह० अंतो०, उक० सागरोवमसदपुथत्त०।
बेउन्वियछ० तिण्णिपदा० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक० अणंतका०।

क्कानावरण, छह दर्शनावरण, चार संब्वलन, भय, जुगुप्सा, तेजस शरीर, कार्मणशरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुल्घु, उपघात, निर्माण श्रीर पाँच अन्तरायके गुजगार, श्रहपंतर और श्रवस्थितवन्धका अन्तर कितना है १ जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहर्त है। अवक्तव्य पदका जघन्य श्रम्तर अन्तर्मुहर्त है स्रोर उत्कृष्ट अन्तर अर्थपुदुगल परिवर्तन प्रमाण है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व त्रौर त्रानन्तानुबन्धी चारके भुजगार, ऋस्पतर त्रौर ऋवस्थित पदका जद्यन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो छवासठ सागरप्रमाण है। ऋवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्सुहूर्त है त्रौर उक्कष्ट ऋन्तर ऋर्धपुद्गल परिवर्तनप्रमाण है। सातावेदनीय, ऋसातावेदनीय, चार नोकषाय, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति और अयशःकीर्तिके तीन पदांका जधन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्भुहूर्त है। अवक्तव्य पदका जवन्य और उत्कृष्ट अन्तर श्चन्तर्महर्त है। इसीप्रकार इन प्रकृतियोंका अनाहारक मार्गणातक यही भङ्ग है। आठ कषायोंके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है। श्रीर उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि हैं । अवक्तव्यपदका भक्क क्वानावरणके समान है। स्त्रीवेदके तीन पदोंका जघन्य श्रन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो छ्यासठ सागर है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्भुहर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो छयासठ सागर है। पुरुषवेद्के तीन पदोंका अन्तर झानावरणके समान है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्महर्त हैं श्रीर उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो छ्यासहसागर है। नपुंसकवेद, पाँच संस्थान,पाँच सहमन, अप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग, दुःस्वर और अनादेयके तीन पदोंका जधन्य अन्तर एक समय है ऋौर उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो छथासठ सागर श्रौर कुछ कम तीन पत्य है। श्रवक्तज्य पदका जघन्य श्रम्तर श्रन्तमुहूर्त हैं और उरकृष्ट अन्तर साधिक दो छ्यासागर और कुछ कम तीन परुय है। तीन त्रायुत्रोंके अवक्तव्य और अल्पतर पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर अनन्त काल है । तिर्यद्वायुके अवक्तव्य श्रीर अस्पतर पद्का जघन्य अन्तर श्रन्तर्मुहूर्त है और उस्तृष्ट श्रन्तर सौ सागरपृथक्त्य है। वैक्रियिक छहके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्य पदका तिरिक्खग०-तिरिक्खाणु० तिष्णिपदा० जह० एग०, उक्क० तेबिंद्धसागरोवमसद०। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० असंखेजा लोगा। मणुसगदितिगं तिष्णिप० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० असंखेजा लोगा। चढुजादि-आदाव-धावरादि०४ तिष्णिपदा० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पंचासीदिसागरोवमसदं। पंचिदि०-पर०-उ० तस०४ तिष्णिप० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पंचासीदिसाग०सदं। ओरालि० तिष्णिप० जह० एग०, उक्क० तिष्णिपिलदो० सादि०। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० अणंतका०। आहारदुगं० तिष्णिप० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० अद्योग्गल०। समचदु०-पसत्थ०-सुभग-सुस्सर-आदंज० तिष्णिप० जह० एग०, उक्क० अत्रो०। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० वेद्यावद्वि० सादि० तिष्णि पिलदो० देद्य०। ओरालि०अंगो०-वज्जिरस० तिष्णिप० जह० एग०, उक्क० तिष्णि पिलदो० सादि०। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तेत्रीस साग० सादिरे०। उज्जो० तिष्णिपदा० तिरिक्खगदिभंगो। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तेविद्वसागरोवमसदं। पीचागो० तिष्णिपद० पावंसगभंगो। अवत्त० जह० उक्क० तिरिक्खगदिभंगो। तित्थय० तिष्णिप० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० जह० उक्क० तिरिक्खगदिभंगो। तित्थय० तिष्णिप० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० जह० अंतो, उक्क० तेत्रीसं साग० सादि०।

जधन्य अन्तर अन्तमुहूते हें और उत्कृष्ट अन्तर सबका अनन्त काल है। नियंख्वमति और तियञ्चमत्यानु-पूर्वीके तीन पदोंका जबन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर एक सी बेसठ सागर है। ्र अवक्तव्य पदका जघन्य ऋन्तर ऋन्तर्भुहूर्त है और उरकृष्ट ऋन्तर ऋसंख्यात लोक हैं। मनुष्यगति-त्रिकके तीन पर्केका जधन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्य पर्का जधन्य अन्तर अन्तर्महर्त है और उत्कृष्ट अन्तर असंख्यात लोकप्रमाण है। चार जाति, आतप और स्थावर आदि चारके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है अवक्तत्र्य पदका जघन्य ऋन्तर अन्तर्मुहूते हैं और उत्कृष्ट अन्तर एक सौ पचासी सागर है। पर्क्रोन्द्रिय जाति, परघात, उच्छास और त्रसचतुष्कके तीन पर्दोका जवन्य श्रन्तर एक समय है श्रीर उरकृष्ट अन्तर श्रन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य पदका जवन्य श्रन्तर अन्तर्मुहर्त है और उत्कृष्ट अन्तर एक सौ पचासी सागर है। अीदारिक शरीरके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक ... समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर साधिक तीन पस्य है। श्रवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर श्रन्तर्मुहर्त है श्रीर उत्कृष्ट अन्तर अनन्त काल है। आहारक द्विकके तीन पदोंका जयन्य अन्तर एक समय है. अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूत हैं और उत्कृष्ट अन्तर अर्थपुद्गल परिवर्तन प्रमाण है। समचतुरस्त्रसंस्थान, प्रशस्त विहायांगति, सुभग, सुस्वर श्रीर आदेयके तीन पदोका जघन्य ब्रन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्भृहर्त है। अवक्तव्य पदका जधन्य अन्तर अन्तर्भृहर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो द्वशासठ सागर और कुछ कम तीन परुव है। श्रीदारिक आङ्गोपाङ्ग और वर्ञर्षभनाराच संहननके तीन पद्दीका जबन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तीन पस्य है। अवक्तव्य पदका जधन्य अन्तर अन्तर्भुहुर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। उद्योतके तीन पदोंका अन्तर विर्यञ्चगतिके समान है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्त-र्मुहुर्त है श्रीर उत्कृष्ट अन्तर एक सौ त्रेसठ सागर है। नीचगोत्रके तीन पदीका भङ्ग नपुंसकवेदके समान है। अवक्तत्र्य पदका जवन्य और उत्कृष्ट अन्तर तिर्यक्ष्यगतिक समान है। तीर्यक्कर प्रकृतिके नीन पद्दोंका जवन्य ऋन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त हैं। अवक्तव्य पद्का जघन्य बन्तर बन्तर्भुहर्त है जोर उत्कृष्ट बन्तर साधिक तेतीस सागर है।

७३४. णिरएसु धुविमाणं सुज अप्प जह एग , उक अंतो । अवष्टि जह एग , उक वेसम । पुरिस -समच दु -व जिरिस पसत्थ -सुभग-सुस्सर-आंदें जिल तिणिपदा जह एग , उक अंतो । अवस्व जह अंतो , उक तें तीसं साग देखा । धुवभंगो तित्थयरं । णवरि अवस्व ं णिय अंतरं । सेसाणं पि पगदीणं तिण्णि पदा जह एग , अवस्व जह अंतो सु , उक तें तीसं साग देखा । दो आयु विषय जह अंतो , उक छम्मासं देखां। एवं सत्तमाए । सेसाणं पि तं चेव पुढ वि । णवरि मणुसग -मणुसाणु -उचा । पुरिस वेदेण समं काद व्यं।

७३५. तिरिक्खेसु धुविगाणं सुजि अप्पर्व जहर एगर, उक्कर अंतोर । अबद्धिर जहर एगर, उक्कर चत्तारिसमर । श्रीणिगिद्धिर निष्णे अवत्तर एगर, उक्कर चिण्णिपितदोर देस्र । अवत्तर्व झोघं । अपचक्खाणार किल्लिपित्र जहर एगर, उक्कर पुत्रकोडीर देस्र । अवत्तर ओघं । इत्थिवेर तिष्णिप्दार जहर एगर, अवत्तर जहर अंतोर, उक्कर तिष्णिपितदोर देस्र । णवुंसर तिरिक्खगर-चदुजादि-ओरालिर पंचसंठार-ओरालिर अंगोर-छस्संघर-तिरिक्खाणुर-आदा- उज्जोर-अपसत्थर थावरादिर अन्दुमग-दुस्सर-अणादेर जीचार तिष्णिपदार जहर एगर,

७३४. नारिकयों में ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियों के मुजगार और ऋल्पतर पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर इस्त अन्तर अन्तर क्रियों, उत्कृष्ट अन्तर दो समय है। पुरुषवेद, समचतुरक्तसंस्थान, वऋषभनाराचसंहनन, प्रशस्त विहायों-गित, सुभग, सुस्वर और आदेयक तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर सुन्तसंहे है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर सुन्तर्सहते हैं। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर सुन्तर्सहते हैं। इतनी विशेषता है कि इसके अवक्तव्य पदका अवस्य अन्तर अव्वत्योंके समान है। इतनी विशेषता है कि इसके अवक्तव्य पदका अन्तर अन्तर्सहते हैं और सबका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है, अवक्तव्य पदका अपनर अन्तर अन्तर्सहते हैं और सबका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। दो आयुआंके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्सहते हैं और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम छह महीना है। इसी प्रकार सातवीं पृथिवीमें जानना चाहिए। शेष पृथिवियोंमें भी यही भक्न है। इतनी विशेषता है कि इनमें मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगोत्रके पदोंका अन्तर पुरुपवेदके साथ कहना चाहिए।

७३५. तिर्यक्षोंमें श्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके मुजगार और अरुपतर पर्का जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित पर्का जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर आत्म स्त्रां है। अवस्थित पर्का जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पर्च है। अवक्तव्य परका भङ्ग आघके समान है। अप्रत्याख्यानावरण चारके तीन पर्दोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोदि है। अवक्तव्य पर्का अन्तर आधके समान है। स्त्रांवेदके तीन पर्दोंका जघन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्य पर्का अवन्य अन्तर अन्तर है। स्त्रांवेदके तीन पर्दोंका जघन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्य पर्का जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर मनका कुछ कम तीन पर्य है। नपुंसकवेद, तिर्यक्रगति, चार जाति, औदारक शरीर, पाँच संस्थान, औदारिक आङ्गापाङ, छह संहनन, तिर्यक्रगत्यानुपूर्वी, आतप, उचोत, अप्रशस्त विहायोगिति, स्थावर आदि चार, दुर्भग,दुरस्वर, अनादेय और नीच गोत्रके तीन पर्दोंका जघन्य अन्तर एक समय

अवस् जह अंतो , उक्क पुञ्चकोडी व देस् । णवरि तिरिक्खगदि-तिरिक्खाणु अोरालि - णीचा अवस् अोघं । पुरिस - समच दु - पंचिंदि - परघा - उस्सा - पसत्थ - तस ०४ - सुमग-सुस्सर-आर्दे विण्णिपदा जह ० एग ०, उक्क अंतो ० । अवस् ० जह अंतो ०, उक्क विण्णिपलिदो ० देस ० । जिल्लिआयुगाणं दो पदा जह ० अंतो ०, उक्क वुञ्चकोडि तिभागं देस णं ० । तिरिक्खाय ० दो पदा जह ० अंतो ०, उक्क वुञ्चकोडि तिभागं देस णं ० । तिरिक्खाय ० दो पदा जह ० अंतो ०, उक्क वुञ्चकोडी सादिरे ० । वेउन्वियस्क - मणुसग - मणुसाणु - उच्चा ० ओघं ।

७३६, पंचिदियतिरिक्स०३ धुविगाणं भुज०-अपप० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवष्ठि० जह० एग०, उक्क० तिण्णिसम०। श्रीणिगिद्धि०३-मिच्छ० अणंताणुबंधि०४-तिण्णिपदा० जह० एग०, उक्क० तिण्णिपिलदो० देस्व०। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तिण्णिपिलदो० पुन्वकोडिपुध०। अपचक्साणा०४ तिण्णिपदा० जह० एग०, उक्क० पुन्वकोडी देस्व०। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पुन्वकोडिपुध०। इत्थि० तिण्णिपदा० मिच्छ सभंगो। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तिण्णिपिलदो० देस्व०। णवुंस०-तिण्णिगिदि चदुजादि-ओरालि०-पंचसंठा०-ओरालि०अंगो०-छस्संघ०-तिण्णिआणु०-आदाउन्जो० अप्य-

७३६. पख्नेन्द्रियितर्यश्चित्रकमें ध्रुववन्धवाली प्रकृतियोंके भुजगार और अस्पतर पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्भृहूर्त है। अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिध्यात्व और अनन्तानुन्धी चारके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पत्य है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर मुद्रकोट प्रथक्त्व अधिक तीन पत्य है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर अन्तर है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर अन्तर कुछ अन्तर कुछ अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर

है। इतनी विशेषता है कि तिर्यक्षाति, तिर्यक्षात्मानुष्ट्वी है और उत्कृष्ट अन्तर सबका कुछ कम एक पूर्वकोटि है। इतनी विशेषता है कि तिर्यक्षाति, तिर्यक्षात्मानुष्ट्वी, औदारिक आङ्गोपाङ्ग और नीचगोत्रके अवक्तव्य परका भङ्ग अधिक समान है। पुरुपवेद, समचतुरस्त्रसंस्थान, पश्चित्रिय जाति, परचात, उन्छ्वास, प्रशस्त विहायोगिति, असचतुष्क, सुभग, सुस्त्रर और आदेयके तीन पदींका जयन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य परका जयन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पत्य है। तीन आयुओं के दो पदींका जयन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर एक पूर्वकोटिका कुछ कम त्रिभागप्रमाण है। तिर्यञ्चायुके दो पदींका जवन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर एक पूर्वकोटिका कुछ कम त्रिभागप्रमाण है। तिर्यञ्चायुके दो पदींका जवन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक एक पूर्वकोटि है। वैक्रियिक छह, मनुष्यगिति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उद्योजका भङ्ग ओघके समान है।

सत्थः शावरादि ०४-द्भग-दुस्सर-अणादें ०-णीचा० तिण्णिपदा० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पुन्यकोडी देस् ०। पुरिस० तिण्णिपदा० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तिण्णि पलिदो० देस् ०। चदुआयु० तिरिक्खोघं। देवगदि-पंचिंदि०-वेउन्वि०-समचदु०-वेउन्वि० अंगो०-देवाणुपु०-परघा० उस्सा० पसत्थ०-तस०४-सभग-सुस्सर-आदेज्ज०-उचा० तिण्णिपदा० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पुन्यकोडी देस् ०।

७३७. पंचिदियतिरिक्खअपज्जत्तमे धुविगाणं दो पदा० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अबिहु० जह० एग०, उक्क० तिण्णिसम०। सेसाणं तिण्णिपदा जह० एग०, उक्क० अंतो०, अवत्त० जह० उक्क० अंतो। दोआयु० दोपदा० जह० उक्क० अंतो०। एवं सब्बअप-ज्जत्ताणं एइंदिय-विगलिंदिय-पंचकायाणं च। णविर यो जम्स भुजगारकालो सो अबिहु-दस्स अंतरं होदि। यो अबिहुदकालो सो भुज०-अप्पद० अंतरं होदि। आयुगाणं दोण्णं पदाणं पगिद्अंतरं कादव्वं। किंचि विसेसो।

७३८, मणुसेसु पंचणा०-छदंसणा०-चदुसंज०-भय-दुर्गु०-णामणव-पंचंत० तिण्णि-पदा० ओघं । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पुव्यिकोडिपुघ० । आहारदुगं तिण्णिपदा० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पुव्यिकोडिपुघत्तं । तित्थय० विण्णिपदा

अन्तर एक समय हैं, अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तमुँहूर्त हैं और उत्कृष्ट अन्तर सक्का कुछ कम एक पूर्वकोटि हैं। पुरुषवेदके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय हैं और उत्कृष्ट अन्तर अन्तमुँहूर्त है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तमुँहूर्त हैं। और उत्कृष्ट अन्तर छुछ कम तीन पत्य है। चार आयुओंका भङ्ग सामान्य तिर्यक्कोंक समान है। देवगति, पख्रेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शारीर, सम-चतुरस्र संस्थान, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, देवगत्य। तुपूर्वी, परघात, उच्छ्वास, प्रशस्त विहायोगिति, असचतुरक, सुभग, सुस्वर, आदेय और उच्चगोत्रके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तमुँहूर्त हैं। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तमुँहूर्त हैं। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तमुँहूर्त हैं और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि है।

७३७. पश्चेन्द्रिय तिर्येक्च अपर्याप्तकोंमें ध्रुवनन्धवाली प्रकृतियोंके दो पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर तीन समय है। शेष प्रकृतियोंके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तत्र्य पदका जधन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। दो आयुओंके दो पदोंका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। दो आयुओंके दो पदोंका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। इसी प्रकार सब अपर्याप्तक, एकेन्द्रिय, विकलत्रय और पाँच स्थावरकायिक जीयोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि जो जिसका मुजगारवन्धका काल है वह उसके अवस्थितवन्धका अन्तरकाल होता है तथा जो अवस्थितवन्धका काल है वह भुजगार और अन्तरकर्मत अन्तर काल होता है। तथा आयुओंके दोनों पदोंका प्रकृतिबन्धके अन्तरके समान अन्तर करना चाहिए। इस विशेषता है।

७३८. भनुष्योंमें पाँच धानावरण, छह दर्शनावरण, चार संज्यलन, भय, जुगुष्मा, नामकी नौ प्रकृतियाँ और पाँच अन्तरायके तीन पर्दोका भङ्ग आघके समान है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर् अन्तर्भुहुते हैं और उत्कृष्ट अन्तर पृत्रीकोटिष्ट्यक्त्यप्रमाण है। आहारकदिकके तीन पदोंका णाणावरणमंगो । अवत्त० जह० अंतो०, उक्त० पुरुवकोडी देस्र० । सेसाणं पंचिदिय-तिरिक्खभंगो । मणुसायु० तिरिक्खायुभंगो ।

७३६. देवेसु धुविगाणं णिरयभंगो। थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४इत्थि०-णवुंस०-पंचसंठा०-पंचसंघ०-अप्पसत्थ० दूभग-दुस्सर-अणादेँ०-णीचा० चदुण्णं
पदाणं जह० एग०, उक्क० ऍकत्तीसं० देस्०। णविर अवत्त० जह० अंतो०। पुरिस०समचदु०-वज्जिर्स० पसत्थ०-सुभग-सुस्सर-आदेँज्ज०-उच्चा० तिण्णिपदा सादभंगो। अवत्तव्यं इत्थिवेदभंगो। दोआयु० णिरयभंगो। तिरिक्खगिद-तिरिक्खाणु०-उज्जो० तिण्णिपदा० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, चदुण्णं पि अट्ठारस साग० सादि०। मणुसग०-मणुसाणु० तिण्णिपदा सादभंगो। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० अट्ठारस सा०
सादि०। एइंदिय-आदाव थावर० तिण्णिपदा० जह० एगस०, अवत्त० जह० अंतो०,
उक्क० वेसागरोव० सादि०। पंचिदि०-ओरालि०अंगो०-तस० तिण्णिपदा० सादभंगो।
अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० वेसाग० सादि०। तित्थय० णःणावरणभंगो। एदेण

७४०. पंचिदिय-पंचिदियपज्ञता० तस०-तसपज्जता० पंचणा०-छदंसणा०-चदुसंज०-भय-दुगुं०-तेजइगादिणवणाम०-पंचंतराइ० तिण्णिप० औषं । अवत्त० जह० अंतो०, जघन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर सबका पूर्वकोटिपृथक्त्यप्रमाण है। तीर्थङ्कर प्रकृतिके तीन पदोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुद्र कम एक पूर्वकोटि है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग पञ्जोन्द्रय तिर्थङ्कोंके समान है। मनुष्यायुका भङ्ग तिर्थञ्चायुके समान है।

७३६. देवोंमें श्रुववन्धवाली प्रकृतियोंका भङ्ग नारिकयोंके समान है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिध्यास्व, श्रमनतानुबन्धी चार, खीनद, नपुंसकवेद, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, अप्रशस्त विहायोगित, दुर्भग, दुःस्वर, अनादेय और नीचगोत्रके चार पदोंका जवन्य अन्तर एक समयहै और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम इकतीस सागर है। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य पदका जवन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। पुरुषवेद, समचतुरस्त्रसंस्थान, वज्रषेभनाराचसंहनन, प्रशस्त विहायोगित, सुभग, सुस्वर, आदेय और उच्चगोत्रके तीन पदोंका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। अवक्तव्य पदका भङ्ग खीवेदके समान है। दो आयुओंका भङ्ग नारिकयोंके समान है। तिर्यञ्चगित, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और उद्योतके तीन पदोंका जवन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्य पदका जवन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और चारों पदोंका उद्युष्ट अन्तर साधिक अठारह सागर है। मनुष्यगित और मनुष्यगस्यानुपूर्वी तेन पदोंका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। अवक्तव्य पदका जवन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उद्युष्ट अन्तर साधिक अठारह सागर है। अवक्तव्य पदका जवन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्य पदका जवन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उद्युष्ट अन्तर साधिक दो सागर है। पश्चीन्द्रयज्ञाति, औदारिक आङ्गोपाङ्ग और असके तीन पदोंका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। अवक्तव्य पदका जवन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उद्युष्ट अन्तर साधिक दो सागर है। तीर्थङ्कर श्रुकृतिका भङ्ग झानावरणके समान है। इसी क्रमसे सब देवोंमें अन्तर प्राप्त करना चाहिए।

७४०. पश्चेन्द्रिय, पश्चेन्द्रिय पर्याप्त, त्रस और त्रस पर्याप्त जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, चार मंख्वलन, भय, जुगुप्सा, नैजम ऋादि नौ नामकर्म और पाँच ऋन्तरायके तीन उक्कः सगद्विदी । थीणगिद्धि २ - मिच्छ० - अणंताणुवंधि ०४ तिण्णिपदा ० ओघं । अवत्त ० णाणावरणभंगो । एवं इत्थि । णवरि अवत्त ० जह ० अंतो ०, उक्कः वेछाविद्धसाग ० देख्र । अद्वकः विण्णिपदा ० ओघं । अवत्त ० णाणावरणभंगो । णवुं स० - पंच संघ० - अप्पसत्थ ० - दूभग - दुस्सर - अणादें ० - णीचा ० तिण्णिपदा ० जह ० एग ०, उक्कः वेछा विष्ठि ० तिण्णि पित्र ० देख्र ० । अवत्तव्यं तं चेव । णवरि जह ० अंतो ० । पुरिस ० तिण्णिपदा ० णाणावरणभंगो । अवत्त ० ओघं । तिण्णिआयु ० दोपदा ० जह ० अंतो ०, उक्कः ० सागरोवमसदपुधत्तं ० । मणुसायु ० दोपदा ० जह ० अंतो ०, उक्कः ० सगद्विदी ० । पजत्ते गुस्स चुण्णं आयुगाणं दोपदा ० जह ० अंतो ०, उक्कः ० सागरोवमसदपुधत्तं । णवरि तसपज्जते मणुसायु ० जह ० अंतो ०, उक्कः ० सागरोवमसदपुधत्तं । णवरि तसपज्जते मणुसायु ० जह ० अंतो ०, उक्कः वेसागरोवमसहस्सा ० देख्र ० । णिरयगदि - णिरयणु ० - च दुजादि - आदाव - थावरादि ० ४ तिण्णिपदा ० जह ० एग ०, उक्कः ० पंचासीदि सागरोवमसदं । अवत्तव्यं तं चेव । णवरि जह ० अंतो ० । तिरिक्खण ० - तिर्ण ० - तिर्ण ० - तिर्ण ० - तिर्किष ० - तिरिक्खण ० - तिर्ण ० - तिर्व ० - तिर्व

पदोंका भक्क खोधके समान है। अवक्तव्य पदका जघन्य खन्तर अन्तर्भुहुर्त है खौर उःकृष्ट अन्तर श्रपत्नी स्थिति प्रमाण है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व श्रीर अनन्तानुबन्धी चारके तीन पदोंका भङ्ग त्रोघके समान है। अवक्तज्य पदका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। इसी प्रकार स्त्रीवेदके पदोंका अन्तरकाल जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसके अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्भुहुर्त है श्रीर उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो छयासठ सागर है। आठ कपायोंके तीन पदोंका अन्तर ओघके समान है। अवक्तज्य पदका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। नपुंसकवेद, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, अप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग, दुःस्वर, अनादेय ऋौर नीचगोत्रके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो छयासठ सागर और कुछ कम तीन परुष है। अवक्तव्य पदका वही ऋन्तर है । इतनी विशेषता है कि जघन्य अन्तर अन्तर्भृहूर्त है । पुरुषवेदके तीन पदों-का ज्ञानावरणके समान भङ्ग है। अवक्तव्य पदका भङ्ग स्रोघके समान है। तीन स्रायुत्रोंके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्भुहर्त है और उत्कृष्ट अन्तर सौ सागरपृथक्त है। मनुष्यायुके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहर्त है और उत्कृष्ट अन्तर अपनी स्थिति प्रमाण है। पर्याप्तकोंमें चार आयुओं-के दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्भुहूर्त है त्रौर उत्कृष्ट त्रन्तर सौ सागरपृथक्त्वप्रमाण है। इतनी विशेषता है कि त्रसपर्याप्तकोंमें मनुष्यायुका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है श्रीर उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो हजार सागर है। नरकगित, नरकगत्यानुपूर्वी, चार जाति, त्र्यातप त्रीर स्थावर त्रादि चारके तीन पदोंका जधन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर एक सौ पचासी सागर है। अवक्तव्य पदका वही ऋन्तर है। इतनी विशेषता है कि इसका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहर्त है। तिर्थेक्नगति, तिर्यक्र्यगस्यानुपूर्वी त्र्यौर उद्योतके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट ऋन्तर एक सौ त्रेसठ सागर है। अवक्तव्य पदका वही अन्तर है। इतनी विशेषता है कि इसका जघन्य श्चन्तर अन्तर्मुहर्त है। मनुष्यगति, देवगति, वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक त्राङ्गोपाङ्ग और दो श्चानपूर्वीके तीन पदोंका जबन्य अन्तर एक समय है और उक्कष्ट अन्तर साधिक तैतीस सागर है।

पर० उस्सा०-तस०४ तिण्णिपदा० णाणावरणभंगो । अवत्तन्त्रं ओधं । ओरालि०-ओरा-लि०अंगो० वज्ञारिस० तिण्णिपदा० त्रोघं । अवत्त० जह० अंतो०, उक० तेत्रीसं साग० सादि० । आहारदुगं तिण्णिपदा० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक० काय-द्विदी० । समचदु०-पसत्थ०-सुभग-सुस्सर-आदेँ० तिष्णिपदा० णाणावरणभंगो । अवत्त० ओघं । तित्थय० ओघं । उच्चा० तिष्णिपदा देवगदिभंगो । अवत्त० समचदु०भंगो ।

७४१. पंचमण ०-पंचवचि० पंचणा०-णवदंसणा०—मिच्छ० सोलसक०—भय-दुगुं०तेजइगादिणव-आहारदुग-तित्थय०-पंचंत० भुज०-अष्प० जह० एग०, उक्क० अंतो० ।
अवड्ठि० जह० एग०, उक्क० वेसम० । अवत्त० णित्थ अंतरं । चदुआयु० दोपदा० णित्थ अंतरं । सेसाणं पगदीणं तिण्णिपदा० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवत्त० णित्थ अंतरं । एस भंगो ओरास्ति० वेउच्चि०-आहार० । णविर ओरास्तिए ओरास्ति०-वेउच्चिय-छक्कं वज्ज परियत्तीणं अवत्त० जहण्णु० अंतो० । दोआयु० दोपदा० जह० अंतो०, उक्क० पगदिअंतरं०।

७४२. कायजोगीसु पंचणा • -छदंसणा ० -चदुसंज ० भय-दुगुं ० -तेजहगादिणव वेउन्विय-

श्रवक्तव्य पदका वही श्रन्तर है। इतनी विशेषता हैं कि इसका जधन्य श्रन्तर श्रन्तमुंहूर्त है। पञ्चिन्त्रिय जाति, परधात, उच्छुास और असचतुष्कके तीन पदोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। श्रवक्तव्य पदका भङ्ग श्रोधके समान है। श्रीदारिक शरीर, श्रीदारिक शाङ्गोपाङ्ग श्रीर विश्वभ नाराच संहननके तीन पदोंका भङ्ग श्रोधके समान है। श्रीदारकद्विकके तीन पदोंका जधन्य श्रम्तर श्रन्तर है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर साधिक तेतीस सागर है। श्राहारकद्विकके तीन पदोंका जधन्य श्रम्तर एक समय है, श्रवक्तव्य पदका जधन्य श्रम्तर श्रम्तमुंहूर्त है श्रीर उत्कृष्ट श्रम्तर कायस्थित प्रमाण है। समजतुरक्ष संस्थान, प्रशस्त विहायोगित, सुभग, सुस्वर श्रीर आदेयके तीन पदोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्य पदका भङ्ग श्रीधके समान है। उच्चगोत्रके तीन पदोंका भङ्ग देवगितके समान है। श्रवक्तव्य पदका भङ्ग समचतुरस्र संस्थानके समान है।

७४१. पाँच मनोयोगी और पाँच बचनयोगी जीवोंमें पाँच झानावरण, नौ दर्शनावरण, मिध्यात्व, सोलह कपाय, भय, जुगुप्सा, तैजस शरीर आदि नौ, आहारकद्विक, तीर्थङ्कर और पाँच अन्तरायके मुजगार और अल्पतर पदका जयन्य अन्तर एक समय हैं और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त हैं। अवस्थित पदका जयन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है। अवक्तत्र्य पदका अन्तरकाल नहीं है। चार आयुओं के दो पदोंका अन्तरकाल नहीं है। शेष प्रकृतियों के तीन पदोंका जयन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तरकाल नहीं है। शेष प्रकृतियों के तीन पदोंका जयन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तत्र्य पदका अन्तरकाल नहीं है। यही भङ्ग औदारिककाययोगी, वैकियिककाययोगी और आहारककाययोगी जीवों के जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि औदारिककाययोगी जीवोंमें औदारिक शरीर और वैकियिक छहको छोड़कर परिवर्तमान प्रकृतियोंके अवक्तत्र्य पदका जयन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। दो आयुओं के दो पदोंका जयन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर प्रकृतियन्थके अन्तरके समान है।

७४२. काययोगी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, चार संज्वलन, भय, जुगुप्सा,

छक्क ओरालि०-तित्थय०-पंचंत० तिण्णिपदा० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवत्त० णित्थ अंतरं । थीणिगद्धि०३--मिच्छ०-बारसक०-आहारदुगं भ्रज०-अप्प० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अबिहि० जह० एग०, उक्क० चत्तारिस० । णवरि आहारदुग० अबिहि० जह० एग०, उक्क० वेसम० । अवत्तव्व० पत्थि अंतरं । दोआयु० दोपदा० पत्थि अंतरं । तिरिक्खायु० दोपदा० जह० अंतो०, उक्क० बाबीसं वाससहस्साणि सादि० । मणुसायु०-मणुसग०-मणुसाणु०-उच्चा० ओघं । तिरिक्खगदि-तिरिक्खाणु०-णीचा० तिण्णिपदा साद-भंगो । अवत्तव्वं ओघं । दोवेदणी०-सत्तणोक०--पंचजादि-छस्संठा०--ओरालि०अंगो०-छस्संघ०-पर०-उस्सा०-आदाउजो०-दोविहा०-तस-थावरादिदसयुगलं तिण्णिप० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवत्त० जह० उक्क० अंतो० ।

७४३. ओरालियमि० धुविगाणं दोपदा० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० तिण्णिसम०। दोआयु० अपजत्तभंगो। देवगदि०४-तित्थय० दोपदा० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० वेसम०। सेसाणं तिण्णिपदा० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० जह० उक्क० अंतो०। णवरि मिच्छत्तस्स अवत्त० णित्थ अंतरं। ७४४. वेउव्वियमिस्सका० धुविगाणं दोपदा० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवट्ठि०

तैजसरारि श्रादि नी, वैकिषिकषद्क, श्रौदारिकशरीर, तीर्श्वहर श्रीर पाँच अन्तरायक नीन पर्नेका जयन्य अन्तर एक समय है श्रौर उत्कृष्ट श्रन्तर श्रन्तर्महर्त है। अवक्तव्य पदका अन्तरकाल नहीं है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्य, बारह कषाय और श्राहारिद्वकंक मुजगार और श्रन्पतर पदका जयन्य अन्तर एक समय है श्रौर उत्कृष्ट श्रन्तर अन्तर्महर्त है। श्रवस्थित पदका जयन्य श्रन्तर एक समय है श्रौर उत्कृष्ट श्रन्तर चार समय है। इतनी विशेषता है कि श्राहारकद्विकंक श्रवस्थित पदका जयन्य श्रन्तर एक समय है श्रौर उत्कृष्ट श्रन्तर दो समय है। अवक्तव्य पदका अन्तरकाल नहीं है। दो श्रायुश्चोंके दो पदोंका अन्तरकाल नहीं है। तियंश्रायुक्त हो पदोंका जयन्य श्रन्तर अन्तर्महर्त है श्रौर उत्कृष्ट अन्तर साधिक बाईस हजार वर्ष है। मनुष्यायु, मनुष्यगित्, मनुष्यगत्यानपूर्वी श्रौर उत्कृष्ट अन्तर साधिक बाईस हजार वर्ष है। मनुष्यायु, मनुष्यगित्, मनुष्यगत्यानपूर्वी श्रौर जीचगात्रके तीन पदोंका भङ्ग साताबंदनीयके समान है। श्रवक्तव्य पदका भङ्ग श्रोषके समान है। दो बंदनीय, सात नोकषाय, पाँच जाति, छह संस्थान, श्रौरारिक श्राङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, परघात, उच्छ्वास, श्रातप, उद्योत, दो विहायोगिति श्रौर वस स्थावर दस युगलक तीन पदोंका जघन्य श्रन्तर एक समय है और उत्कृष्ट श्रन्तर श्रन्तर्मुहर्त है। अवक्तव्य पदका जघन्य और उत्कृष्ट श्रन्तर श्रन्तर्मुहर्त है।

७४३. श्रीदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके दो पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर अन्तर्मुहूर्त है। श्रवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर तीन समय है। दो आयुश्रोंका भङ्ग श्रपर्याप्तकोंके समान है। देवगतिचतुष्क श्रीर तीर्थङ्कर प्रकृतिके दो पदोंका जघन्य श्रन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर श्रन्तर्मुहूर्त है। श्रवस्थितपदका जघन्य श्रन्तर एक समय है और उत्कृष्ट श्रन्तर दो समय है। शेष प्रकृतियोंके तीन पदोंका जघन्य श्रन्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट अन्तर श्रन्तर्मुहूर्त है। श्रवक्य पदका जवन्य श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर अन्तर्मुहूर्त है। श्रवक्य पदका जवन्य श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर श्रन्तर्मुहूर्त है। श्रवक्य पदका जवन्य श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर अन्तर्मुहूर्त है। श्रवत्य जवन्य श्रन्तर श्रव्य श्रव्य श्रव्य श्रव्य श्रव्य श्रव्य श्रव्य श्रिप्त विश्रपक्ष स्थान श्रव्य श्रय्य श्रव्य श्य

जह० एग०, उक्क० बेसम०। एवं तित्थय०। सेसाणं तिण्णिपदा० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० जह० उक्क० अंतो०। एवं आहारमि०। कम्मइग० सन्वाणं अवद्वि०-अवत्त० णत्थि अंतरं।

७४५. इत्थिवे० पंचणा० चदुदंस०-चदुसंज० पंचंत० दोपदा० जह० एग०, उक्क० श्रंतो० । अवद्वि० जह० एग०, उक्त० तिण्णि सम० । थीणगिद्धि०-मिच्छ०-अणंताणुबंधि४ तिण्णि पदा० जह० एग०, उक्क० पणवण्णं पलिदो० देस्०। अवत्त० जह० ऋंतो०, उक्क० पलिदो० सदपुधत्तं०। णिहा-पयला-भय-दुगुं०-तेजहमादिणव तिण्णि पदा णाणावरण-भंगो । अवत्त ० णस्थि श्रंतरं । सादादिबारसण्णं ओघं । अडुक ० तिण्णि पदा ओघं । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पलिदोवमसदपुधत्तं०। इत्थि०-णबुंस०--तिरिक्खगदि--एइंदि०-पंचसंठा०-पंचसंघ०-तिरिक्खाणु०-आदाउज्जो०-अप्पसत्थ०- थावर-दूभग-दुस्सर-अणादें जिचा तिण्णि पदा वजह एग , उक्त पणवण्णं पलिदो देस् । एवं अवत्तः । णवरि जहः अंतोः । पुरिसः -पंचिदिः -समचदुः -पसत्थः तस-सुभगः सुस्सर-आदे०-उचा० तिण्णि पदा० जह० एग०, उक्क० श्रंतो० । अवत्त० जह० श्रंतो०, उक्क० पणवण्णं पलिदो० देस्र० । णिरयायु० दोषदा० जह० त्रंतो०, उक्क० पुच्वकोडितिभागं एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित पदका जवन्य अन्तर एक समय है त्र्योर उत्कृष्ट अन्तर दो समय हैं । इसी प्रकार तीर्थङ्कर प्रकृतिके पदोंका अन्तरकाल जानना चाहिए । शेष प्रकृतियोंके तीन पदोंका जधन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहर्त है। अव-क्तज्य परका जयन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहर्त है। इसी प्रकार आहारकमिश्रकाययोगी जीवोंमें जानना चाहिये । कार्मणकाययोगी जीवोंमें सब प्रश्नुतियोंके अवस्थित और अवक्तव्य पदका अन्तरकाल नहीं है ।

७४५. स्त्रीवेदी जीवोंमें पाँच ज्ञातावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच ऋन्तरायके दो पदोंका जंधन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्भृहूर्त है। अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर तीन समय है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिश्यात्व और अनन्ता-नुबन्धी चारके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम पचवन पस्य है। अवक्तत्र्य पदका जधन्य अन्तर अन्तर्भृहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर सौ परुयपृथक्त्व है। निद्रा, प्रचला, भय, जुगुप्सा ऋौर तैजसशर्रार ऋादि नो प्रकृतियोंके तीन पदोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान हैं। अवक्तव्य पदका अन्तरकाल नहीं है। साता वंदनीय आदि वारह प्रकृतियोंका भङ्ग आधिक समान है। आठ कपायोंके तीन पदोंका भङ्ग त्रोचके समान है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर सौ पल्यपुथक्त्य है। स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय-जाति, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, निर्येक्कगत्यानुपूर्वी, छातप, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगित, स्थावर, दुर्भग, दुःस्वर, अनादेय और नीचगोत्रके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उक्तृष्ट अन्तर कुछ कम पचवन पत्य है। इसी प्रकार अवक्तत्र्य पदका अन्तरकाल है। इतनी विज्ञे-षता है कि इसका जधन्य अन्तर अन्तर्भुहूर्त है । पुरुषवेद, पञ्चेन्द्रियजाति, समचतुरस्रसंस्थान, प्रशस्त विहायोगति, त्रस, सुभग, सुस्वर, आदेय और उच्चगोत्रके तीन पदोंका जबन्य अन्तर एक समय है त्रीर उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त हैं। ऋवक्तव्य पदका जचन्य ऋन्तर अन्तर्मुहूर्त है श्रीर उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम पंचवन परुष है। नरकायुके दो पदोंका जबन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है आपेर उत्कृष्ट अन्तर देस् । तिरिक्खायु मणुसायु दोपदा । जह अंतो ०, उक्क ० पिलदोनमसदपुध नं । देवायु ० दोपदा ० जह ० अंतो ०, उक्क ० अट्टावण्णं पिलदो ० पुन्व को डिपुध नेण न्मिहियाणि । वेडिव्वयछ ० — तिण्णि जादि सहुम अपज्ञत्त — साधार ० तिण्णि पदा ० जह ० एग ०, उक्क ० पणवण्णं पिलदो ० सादिरे ० । एवं अवत्त ० । णविर जह ० अंतो ० । मणुसगदि पंचग ० तिण्णि पदा ० जह ० एग ०, उक्क ० तिण्णि पिलदो ० देस ० । अवत्त ० जह ० अंतो ०, उक्क ० पणवण्णं पिलदो ० देस ० । णविर ओरालि ० अवत्त ० जह ० अंतो ०, उक्क ० पणवण्णं पिलदो ० सादि ० । आहारदुग ० तिण्णिपदा ० जह ० एग ०, उक्क ० सगद्विदी ० । एवं अवत्त ० । णविर जह ० अंतो ० । पर ० - उस्सा ० - वादर पज्जत्त पत्ते थ ० तिण्णि पदा ० जह ० उक्क ० अंतो ० । अवत्त ० जह ० अंतो ० । उक्क ० पणवण्णं पिलदो ० सादि ० । तिरथ य ० अज्ञ ० अक्त ० उक्क ० अंतो ० । अवत्त ० जह ० एग ०, उक्क ० वेसम ० । अवत्त ० णिल्थ अंतरं ।

७४६. पुरिसवे० अद्वारसण्णं इत्थिभंगो । थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४ तिण्णिपदा० जह० एग०, उक्क० बेछाबद्धि० देस्च० । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० सगिद्धिदी० । णिद्दा-पचला-भय-दुगुंछ-तेजइगादिणव तिण्णि पदा ओघं । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० कायद्विदी० । अद्वक० ओघं । णविर अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० काय-

एक पूर्वकोटिका कुछ कम त्रिभागप्रमाण है। तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर सो पर्व्यपृथक्त्व प्रमाण है। देवायुके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटि पृथक्त्व अधिक अट्ठावन पत्य है। वैक्रियिक छह, तीन जाति, सूद्रम, अपर्याप्त और साधारणके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक पचवन पत्य है। इसी प्रकार अवक्तव्य पदका अन्तरकाल है। इतनी विशेषता है कि उसका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। मनुष्यगतिपञ्चकके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पत्य है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम पचवन पत्य है। इतनी विशेषता है कि औदारिक शरीरके अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक पचवन पत्य है। आहारकद्विकके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक पचवन पत्य है। आहारकद्विकके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अपनी स्थिति प्रमाण है। इसी प्रकार अवक्तव्य पदका अन्तरकाल है। इतनी विशेषता है कि इसका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक पचवन पत्य है। तीर्थङ्कर प्रकृतिके भुजगार और अत्यत्र पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक पचवन पत्य है। तीर्थङ्कर प्रकृतिके भुजगार और अत्यत्र पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है। अवक्तव्य पदका अन्तरकाल नहीं है।

७४६. पुरुषवेदी जीवोंमें अठारह प्रकृतियोंका भङ्ग स्त्रीवेदी जीवोंके समान है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धी चारके तीन पदोंका जधन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो छयासठ सागर है। अवक्तव्य पदका जधन्य अन्तर अन्तर्भुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर अपनी स्थितिप्रमाण है। निद्रा, प्रचला, भय, जुगुप्सा और तैजस शरीर आदि नौ प्रकृतियोंके तीन पदोंका भङ्ग श्रोधके समान है। अवक्तव्य पदका जधन्य अन्तर अन्तर्भृहूर्त है और उत्कृष्ट

ष्ठिदी । इत्थि ० णवुं स० पंचसंठा० पंचसंघ० अप्यसत्थ० - दूसग-दुस्सर-अणादे० णीचा० पंचिंदियपञ्जनभंगो । पुरिस० तिण्णि पदा णाणावरणभंगो । अवत्त० जह० अंतो०, उक्त० वेछाविष्ठ० सादि० । समचदु० पसत्थ० सुमग-सुस्सर-आदे० - उच्चा० पुरिस० मंगो । णि रय - तिरिक्ख-मणुसायूणं इत्थिभंगो । णविर सागारोव० सदपुधत्तं० । देवायु० दोषदा० जह० अंतो०, उक्त० तेचीसं सा० सादि० । णिरय तिरिक्खग० - चदुजादि - दोआणु० - आदा० - उज्जो० - थावरादि० ४ तिण्णि पदा० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्त० तेविष्ठसागरो० सदं। देवगदि० ४ - आहारदुगं पंचिंदियपञ्जत्तभंगो । मणुस०दुग० - ओरालि० ओरालि० अंगो० - वज्जिरस० तिण्णि पदा० जह० एग०, उक्त० तिण्णि पलिदो० सादि० । अवत्त० जह० अंतो०, उक्त० तेचीसं सा० सादि० । पंचिंदि० पर० - उस्सा० - तस० ४ तिण्णि पदा० तेजइगभंगो । अवत्त० णिरयगदिभंगो । तित्थय० तिण्णिप० जह० एग०, उक्क० श्रंतो० । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पुठ्यकोडी देव० ।

७४७. णवुंसमे धुविमाणं अद्वारसण्णं दो पदा० जह० एम०, उक्क० श्रंतो०। अवद्वि० जह० एग०, उक्क० चत्तारि सम० । थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अर्णताणुर्बधि०४-इत्थि-णिवुं स-पंचसंठा०-पंचसंघ०-उज्जो०-अप्पसत्थ०-दुभग-दुस्सर-अणादे० तिण्णिपदा० अन्तर कायस्थितिप्रमाण है। आठ कषायोंका भङ्ग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि अवक्तज्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूत है और उत्कृष्ट अन्तर कायस्थितिप्रमाख है। स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, अप्रशस्त विहायोगिति, दुर्भग, दुःस्वर, अना-देय और नीच गोत्रका भङ्ग पछ्चेन्द्रिय पर्याप्त जीवोंके समान है । पुरुषवेदके तीन पदोंका भक्त ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्यपदका जघन्य अन्तर अन्तर्भृहर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो छ्रवासठ सागर है। समचतुरस्रसंस्थान, प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर, त्रादेय त्रीर उचगोत्रका भङ्ग पुरुषवेदके समान है । नरकायु, तिर्यक्रायु त्रीर मनुष्यायुका भङ्ग स्त्रीवेदी जीवोंके समान है । इतनी विशेषता है कि उत्कृष्ट अन्तर सौ सागर पृथक्त प्रमाण है । देवायुके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। नरकगति, तिर्येक्क्रगति, चार जाति, दो आनुपूर्वी, आतप, उद्योत और स्थादर आदि चारके तीन पदोंका जधन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्य पदका जधन्य अन्तर धान्तर्भृहते है और उत्कृष्ट अन्तर एकसी त्रेसठ सागर है। देवगतिचतुष्क और आहारकद्विकका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय पर्याप्त जीवोंके समान है। मनुष्यगतिद्विक, श्रौदारिकशरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग श्रौर वश्रर्पम नाराचसंहननके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तीन परुष है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। पञ्चेन्द्रिय जाति, परघात, उच्छवास श्रीर त्रसचतुष्कके तीन पर्दोका भङ्ग तैजस शरीरके समान है। स्रवक्तव्य पदका भङ्ग नरकगतिके समान है। तीर्थद्वर प्रकृतिके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहर्त है। अवक्तव्य पदका अघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि है।

७४७. नपुंसकवेदी जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली अठारह प्रकृतियोंके दो पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्भृहूर्त है। अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्भृहूर्त है। अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर चार समय है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धी चार, स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगित, दुर्भग, दुःस्वर और अनिदेयके तीन

जह० एग०, उक्क० तेत्तीसं० देस्क०। एवं अवत्त०। णवरि जह० अंतो०। णवरि थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुवंधि०४ ओघं। पुरिस०-समचदु०-पसत्थ०-सुभग-सुस्सर
आदे० तिण्णिपदा सादमंगो। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तेत्तीसं देस्क०। णिदापचला-भय दुगुं०-तेजइगादिणव तिण्णिप० णाणावरणभंगो। अवत्तव्व० णित्थ अंतरं।
तिण्णिआयु०-वेउव्वियछ०-मणुस०३-आहारदुगं ओघं। देवायु० दो पदा० जह० अंतो०,
उक्क० पुन्वकोछितिभागं देस्क०। तिरिक्खगदि-तिरिक्खाणु०-णीचागो० तिण्णि पदा०
इत्थिभंगो। अवत्त० ओघं। चदुजादि-आदाव-थावरादि०४ तिण्णि पदा० जह० एग०,
उ० तेत्तीसं सा० सादि०। एवं अवत्त०। णवरि जह० अंतो०। पंचिदि०-पर०-उस्सा०तस०४ तिण्णि पदा सादभंगो। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तेत्तीसं सा० सादि०।
ओरालि०-ओरालि०अंगो० वज्जरिस० तिण्णिप० जह० एग०, उक्क० पुन्वकोडी दे०।
ओरालि० अवत्त० ओघं। ओरालि०अंगो० अवत्त० जह० पंति, उक्क० तेत्तीसं०
सादि०। वज्जरिस० अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तेत्तीसं० सादि०। तित्थय० तिण्णिप०
जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पुन्वकोडितिभागं देस०।

पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। इसी प्रकार <del>ब्रायक्तव्य पदका अन्तरकाल हैं । इतनी विशेषता हैं कि अवक्तव्य पदका जवन्य अन्तर अन्तर्गुहूर्त</del> है। इतनी और विशेषता है कि स्त्यानगृद्धि तीन, मिध्यात्व खार खनन्तानुबन्धी चारका भक्न खोघके समान है। पुरुषवेद, समचतुरस्त्र संस्थान, प्रशस्त विद्यायोगित, सुभग, सुस्वर और आदेयके तीन पर्दोका भक्त सातावेदनीयके समान है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट श्रन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। निद्रा, प्रचला, भय, जुगुप्स। श्रीर तैजस शरीर श्रादि नौंके तीन पर्दोका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्य पदका अन्तरकाल नहीं है। तीन आयु, वैक्रियिक छह, मनुष्यत्रिक और आहारकद्विकका भङ्ग ओघके समान है। देवायुके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर एक पूर्वकोटिका कुछ कम त्रिभागप्रमाण है। तिर्यक्क्याति, तिर्यक्क्ष्यात्यात्-पूर्वी और नीचगोत्रके तीन पदोंका सङ्ग स्त्रीवेदके समान है। अवक्तव्य पदका सङ्ग ओघके समान है। चार जाति, त्यातप और स्थावर त्यादि चारके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट श्चन्तर साधिक तेतीस सागर है। इसी प्रकार अवक्तव्य पदका अन्तरकाल है। इतनी विशेषता है कि इसका जघन्य अन्तर ऋन्तर्भृहूर्त है। पञ्चेन्द्रिय जाति, परघात, उच्छवास श्रीर श्रसचतुष्कके तीन पदोंका भङ्ग सातावेदनीयक समान है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। खीदारिक शरीर, श्रीदारिक आङ्गोपाङ्ग श्रीर व ऋषभनाराच संहतनके तीन पदोंका जबन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि है। श्रीदारिक शरीरके अवक्तव्य पदका अन्तर ओघके समान है। औदारिक श्राङ्गोपाङ्गके श्रवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्भृहर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। वक्रर्पभनाराच संहनतके अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त हे और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। तीर्थङ्कर प्रकृतिके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्भुहूर्त हैं और उत्कृष्ट अन्तर एक पूर्वकोटिका कुछ कम त्रिभाग-प्रमाण है। ऋषगतवेदवाले जीवोंमें सब प्रकृतियोंके भुजगार और अल्पतर पदका जघन्य और अवगद्वे० सन्वाणं भुज०-अप्प० जह० उक्क० अंतो०। अवद्वि० जह० एग०, उक्क० श्रंतो०। अवच० पत्थि अंतरं।

७४८. कोघे धुविगाणं अद्वारसण्हं दोपदा० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अविडि० जह० एग०, उक्क० चत्तारि सम० । थीणगिद्धि०३—मिच्छ०-बारसक० दोपदा० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अविडि० जह० एग०, उक्क० चत्तारि सम० । अवत्त० णित्य अंतरं । णिद्दा-पचला-भय-दुर्गु०-तेजइगादिणव-तित्थय०तिण्णिपदा० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवत्त० णित्थ अंतरं । चदुआयु० दोपदा० णित्थ अंतरं । सेसाणं तिण्णि पदा० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवत्त० जह० उक्क० अंतो० । एवं माणे । णविर धुवि-याणं सत्तारसण्णं । कोधसंज० णिद्दाए भंगो । एवं माणाए वि । णविर दोसंज० णिद्दाए भंगो । एवं चेव लोभे । णविर चत्तारि संज० णिद्दाए भंगो । आहारदुगं मणजोगिभंगो । सेसं कोधभंगो ।

७४९. मदि०-सुद० धुविगाणं दो पदा जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० चत्तारि सम०। सादासाद०-छण्णोक० ओघं सादमंगो। मिच्छ० णाणावरणभंगो। णवरि अवत्त० णत्थि अंतरं। णवुंस०-पंचसंठा०-पंचसंघ०-अप्पसत्थ०-

उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित पदका जवन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य पदका अन्तरकाल नहीं है।

०४८ कोधकषायवाले जीवोंमें ध्रुववन्धवाली अठारह प्रकृतियोंके दो पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर चार समय है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिध्यात्व और बारह कषायके दो पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर चार समय है। अवक्तव्य पदका अन्तरकाल नहीं है। निद्रा, प्रचला, भय, जुगुप्सा, तैजस शरीर आदि नौ और तीर्थकर प्रकृतिके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य पदका अन्तरकाल नहीं है। चार आयुओं के दो पदोंका अन्तरकाल नहीं है। चार आयुओं के दो पदोंका अन्तरकाल नहीं है। शेष प्रकृतियोंके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य पदका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। इसी प्रकार मानकषायवाले जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनके ध्रुवबन्धवाली सत्रह प्रकृतियोंका अन्तरकाल कहना चाहिए। कोधसंज्वलनका भङ्ग निद्राके समान है। इसी प्रकार मायाकषायवाले जीवोंके भी कइना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनके दो संज्वलनका भङ्ग निद्राके समान है। इसी प्रकार लोभकषायवाले जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनके दो संज्वलनका भङ्ग निद्राके समान है। इसी प्रकार लोभकषायवाले जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनके दो संज्वलनका भङ्ग निद्राके समान है। आहारकदिकका भङ्ग मनोवोगी जीवोंके समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग कोधके समान है। आहारकदिकका भङ्ग मनोवोगी जीवोंके समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग कोधके समान है।

७४६. मत्यज्ञानी और श्रुताज्ञानी जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली शक्कतियोंके दो पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर चार समय है। सातावेदनीय, असातावेदनीय और छह नोकषायका भङ्ग ओघके सातावेदनीयके समान है। मिध्यात्वका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। इतनी विशेषता है कि इनके अवक्तत्र्य पदका अन्तरकाल नहीं है। नपुंसकवेद, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, अप्रशस्त विहायोगित, दुर्भग, दुःस्वर और

द्भग-दुस्सर-अणादे विण्णिप जह एग , उक्क विण्णि पिलदो देस् । एवं अवत्त । णवरि जह अंतो । चहुआयु - वेडिव्वयळ - मणुसगदितिगं ओघं । तिरि क्खगिदि-तिरिक्खाणु विण्णि पदा जह एग , उक्क एक तीसं सादि । अवत्त अंघं । चढुजादि-आदाव-थावरादि । तिण्णिपदा जह एग , अवत्त अव्यंतो , उक्क तें तीसं सादि । पंचिंदि - पर - उस्सा - तस अ तिण्णि पदा - साद मंगो । अवत्त जह अंतो , उक्क ते तीसं सा सादि । अोरालि विण्णिप जह एग , उक्क तिण्णिप पिलदो देस् । अवत्त अोघं । समच दु - पसत्थ - सुभग सुस्सर-आदें विण्णिप साद मंगो । अवत्त जह अंतो , उक्क तिण्णिप पिलदो देस । ओरालि अंगो - [वज्जरिस ] ओरालिय मंगो । णवरि अवत्त जह अंतो , उक्क ते तीसं सा सादि । उज्जो विण्णिप पदा तिरिक्खगदिमंगो । अवत्त जह अंतो , उक्क एक तीसं सा सादि । उज्जो विण्णिप पदा विरिक्खगदिमंगो । अवत्त जह अंतो , उक्क एक तीसं सा सादि । णीचा विण्णिप णवुंसगभंगो । अवत्त व्हं ओघं ।

७५०. विभंगे धुविगाणं दोपदा० जह० एग०, उक्त० झंतो०। अवद्वि० जह० एग०, उक्त० बेसम०। एवं मिच्छ०। णवरि झवत्त० णत्थि झंतरं। णिरय देवायूणं दोपदा० णत्थि झंतरं। तिरिक्ख-मणुसायूणं दोपदा० जह० झंतो०, उक्त० छम्मासं

अनादेयके तीन पदांका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन परुय है। इसी प्रकार श्रावक्तव्य पदका श्रान्तरकाल है। इतनी विशेषता है कि इसका जघन्य श्रान्तर श्रान्त-र्मुहर्त है। चार त्रायु, वैक्रियिक छह और मनुष्यगतित्रिकका भङ्ग ओघके समान है। तिर्यक्रगति श्रीर तिर्युद्धगत्यानुपूर्वीके तीन पदोंका जधन्य अन्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट अन्तर साधिक इकतीस सागर है। अवक्तव्य पदका अन्तर ओघके समान है। चार जाति, आतप और स्थावर श्रादि चारके तीन पदोंका अन्तर एक समय है। अवक्तव्य पदका जधन्य अन्तर अन्तर्भृहर्त है श्रीर सबका उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीसन्तागर है। पक्चेन्द्रिय जाति, परघात, उच्छ्वास श्रीर बस चतुष्कके तीन पर्दोका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहर्त है श्रीर उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। श्रौदारिक शरीरके तीन पर्नेका जघन्य अन्तर एक समय है त्रौर उत्क्रष्ट अन्तर कुछ कम तीन परुय है। अवक्तव्य पदका अन्तर श्रोधके समान है। समचतुरस्र संस्थान, प्रशस्त विहायोगित, सुभग, सुस्वर अौर आदेयके तीन पदोंका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। अवक्तञ्य पदका जवन्य अन्तर अन्तर्भुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पत्य है । श्रीदारिक श्रङ्गोपाङ्ग श्रीर वश्रऋष्यनाराच संहननका भङ्ग श्रीदारिक शरीरके समान है । इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मृहर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। उद्योतके तीन पदोंका भङ्ग तिर्यञ्चगतिके समान है। अवक्तव्यपदका जधन्य अन्तर श्रन्तर्महर्त है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर साधिक इकतीस सागर है। नीचगोत्रके तीन पदोंका भङ्ग नपुंसक वेदके समान है। अवक्तव्यपदका श्रन्तर श्रोघके समान है।

७५०. विभक्तज्ञानी जीवोंमें ध्रु वबन्धवाली प्रकृतियोंके दो पदोंका जधन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मृहूर्त है। अवस्थित पदका जधन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है। इसी प्रकार मिध्यास्व प्रकृतिका जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि इसके अवक्तव्य पदका अन्तर काल नहीं है। नरकायु और देवायुके दो पदोंका अन्तर काल नहीं है। तिर्यक्कायु और मनुष्यायुके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्महूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर इख कम देस् । सेसाणं ओराज्ञि ॰ भंगो । णवरि तिण्णिजा ०-सुहुम-अपन्जत्त-साधारण० तिण्णि पदा० जह० एग०, उ० अंतो० । अवत्त० णत्थि अंतरं ।

७५१. आभि सुद् अधि पंचणा - छदं सणा - चतु संज - पुरिस - भय-दु गुं - पंचिद् ि तेजा - कि समच दु - वण्ण ०४ - अगु ०४ - पसत्थ ० - तस ०४ - सु भग-सु स्सर - आदें ० - णिमि - उच्च ० तिण्णिपदा ओषं। अवत्त ० जह ० श्रंतो ०, उक्क ० के जिस साग ० सादि ०। अहक ० तिण्णिप ० ओषं। अवत्त ० जह ० अंतो ०, उक्क ० तेनी संसाग ० सादि ०। दो आयु ० दो पदा ० जह ० अंतो ०, उक्क ० तेनी संसा ० सादि ०। मणुसगदि पंच ग ० तिण्णि पदा ० जह ० एग ०, उक्क ० पु व्वको डि० सादि ०। अवत्त ० जह ० पि ते । सादि ०, उक्क ० तेनी संसा ० सादि ०। उक्क ० तेनी संसा ० सादि ०। अवत्त ० जह ० पेति साद । सादि ०। अवत्त ० जह ० वेनी संसा ० सादि ०। अवत्त ० जह ० अंतो ०, उक्क ० तेनी संसा ० सादि ०। आहार दुगं देवगदि भंगो। तित्थय ० चत्तारि पदा ओषं। एवं ओषि दंस ० सम्मादि ०।

७५२. मणपज्जव० पंचणा०-छदंसणा०-चढुसंज०-पुरिस०-भय-दुगुं०-देवगदि-पंचिदि०-तिण्णिसरीर०-समचदु०-वेउव्वि०अंगो०-वण्ण०४-देत्राणु०-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदेंज्ज०-णिमि०-तित्थय०-उचा०-पंचंत० तिण्णि प० जह० एग०,

छह महीना है। शेष प्रकृतियोंका सङ्ग श्रीदारिक शारीरके समान है। इतनी विशेषता है कि तीन जाति, सूद्रम, श्रपर्याप्त और साधारणके तीन पदोंका जघन्य श्रन्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर श्रन्तर्मुहूर्त है। श्रवक्तव्य पदका श्रन्तर काल नहीं है।

७५१. श्रामिनिनोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी श्रीर श्रविज्ञानी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, छ्रह दर्शनावरण, चार संज्वलन, पुरुषवेद, भय, जुगुप्सा, प्रश्चन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरह्मसंस्थान, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलयुचतुष्क, प्रशस्तिविहायोगिति, त्रस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेश, निर्माण और उद्यात्रिके तीन पदोंका अन्तरकाल ओघके समान है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है श्रीर उत्कृष्ट अन्तर साधिक लेतीस सागर है। वो आयुओंके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है श्रीर उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। दो आयुओंके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है श्रीर उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। मनुष्यगितपञ्चकके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट अन्तर साधिक एक पूर्वकोटि है। श्रवक्तव्य पदका जचन्य अन्तर साधिक एक पस्य है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। देवगिति चतुष्कके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। देवगिति चतुष्कके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। इवगित चतुष्कके तीन पदोंका जघन्य अन्तर श्रक्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। श्रवक्ति चतुष्कके दीन पदोंका जघन्य अन्तर श्रक्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। आहारकद्विकका भङ्ग देवगितिके समान है। तीर्थङ्कर प्रकृतिके चार पदोंका भङ्ग ओघके समान है। इसीप्रकार अवधिदर्शनी और सम्यग्दिष्ठ जीवोंके जानना चाहियं।

अ.२. मनःपर्ययद्वानी जीवोंमें पाँच झानावरण, छह दर्शनावरण, चार संज्वलन, पुरुषवेद, भय, जुगुप्सा, देवगति, पञ्चद्वियजाति, तीन शरीर, समचतुका संस्थान, विकियिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुक्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्तविहायोगति, असचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण, तीर्धद्वर, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायके तीन पदोंका जवन्य अन्तर एक समय है और उक्का

उक्कः अंतोः । अवत्तः जहः अंतोः, उक्कः पुच्यकोडी देसः । देवायुः दोपदाः पगदिअंतरं । सेसाणं तिष्णि पदाः जहः एगः, उक्कः श्रंतोः । अयत्तः जहः उक्कः श्रंतोः । एवं संजदाः ।

७५३, सामाइ०-छेदो० पंचणा०-चहुदंसणा०-लोभसंज०-उचा०-पंचंत० दोपदा० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अविष्ठि० जह० एग०, उक्क० बेसम०। आहारदुग० सादभंगो। शिहा-पचला-तिश्णिसंज०-पुरिस०-भय-दु०-देवगदि-पसत्थपणुबीस-तित्थय० दो पदा० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अविष्ठि० जह० एग०, उक्क० बेसम०। अवच० णित्थ अंतरं। सेसाणं संजदभंगो।

७५४. परिहार ० धुविगाणं दो पदा० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० बेसम०। आहारदुगं चत्तारि पदा० जह० अंतो०, उक्क० अंतो०। तित्थय० तिण्णि पदा० णाणावरणभंगो। अवत्त० णत्थि अंतरं। सुहुमसंप० सन्वाणं० भ्रुज०-अप्प० जह० उक्क० अंतो०। अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० एग०। संजदासंजदा० परिहारभंगो।

७५५. असंजदे धुविगाणं दो पदा ओघं। अवद्वि० जह० एग०, उक्क० चत्तारि सम०। थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४-णवुंस०-पंचसंठा०-पंचसंघ० उज्जो०-

अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अयक्तव्य पद्का जधन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त हैं और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि है। देवायुके दो पदोंका अन्तर प्रकृतिबन्धके अन्तरके समान है। रोप प्रकृतियोंके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य पदका जधन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। इसी प्रकार संयत जीवोंके जानना चाहिये।

७५३. सामायिकसंयतं और छेदोपस्थापनासंयत जीवोंमें पाँच झानावरण, चार दर्शनावरण, लोभ संज्यलन, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायके दो पदोंका जयन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मृहूर्त है। अवस्थित पदका जयन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है। आहारक द्विकका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। निद्रा, प्रचला, तीन संज्यलन, पुरुषवेद, भय, जुगुप्सा, देवगति आदि प्रशस्त पच्चीस प्रकृतियाँ और तीर्थङ्कर इनके दो पदोंका जयन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वो समय है। अवस्थित पदका जयन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है। अवक्रव्य पदका अन्तर काल नहीं है। शेप प्रकृतियोंका भङ्ग संग्रतोंके समान है।

ज्यश्व. परिहारिवशुद्धि संयत जीवोंमें ध्रुयबन्धवाली प्रकृतियोंके दो पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्भु हूर्त है। अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है। आहारकद्विकके चार पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्भु हूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्भु हूर्त है। तीर्थक्कर प्रकृतिके तीन पदोंका भङ्ग झानावरणके समान है। अवक्तव्य पदका अन्तर काल नहीं है। सूक्त्मसांपराय संयत जीवोंमें सब प्रकृतियोंके भुजगार और अस्पतर पदका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर अन्तर अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है। संयतासंयत जीवोंका भङ्ग परिहारिवशुद्धि संयत जीवोंके समान है।

७५५. ऋसंयत जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके दो पदोंका भङ्ग स्रोधके समान हैं। श्रव-स्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय हैं और उत्कृष्ट अन्तर चार समय है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिश्यात्व, अनन्तानुबन्धी चार, नपुंसकवेद, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, उद्योत, अप्रशस्त विहायो- अप्पसत्थि द्भग-दुस्तर-अणार्दे णबुंसभभंगो । पुरिस -समचदु -पसत्थ -सुभग-सुस्सर-आदे विष्णि पदा सादमंगो । अवत्त व जह व अतो व, उक्त व तेत्तीसं साव देस्व । ओरालि -ओरालि व अगो व नज जिल्ला पदा ओर्घ । अवत्त व णबुंसगभंगो । सेसं मदिभंगो । चक्खु व तसपज्जत्तभंगो । अचक्खुदं व ओर्घ ।

७५६. किण्ण-णील-काउलेस्सा० धुविगाणं दो पदा जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवट्टि० जह० एग०, उक्क० चत्तारि सम० । थीणगिद्धि०३--मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४-इत्थि-णवुंस०-दोगाद-पंचसंठा-पंचसंघ०-दोआणु०-उज्जो०-अप्पसत्थ०-दूभग-दुस्सर अणादें०-णीचुचागो० तिण्णि प० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तेत्तीसं सा० सत्तारस० सत्त साग० देख्०। पुरिस०-समचढु०-वज्जरिसभ०-पसत्थ०-सुभग-सुस्सर-आदे० तिण्णि पदा सादभंगो । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तेंत्तीसं० सत्तारस० सत्त-साग० देस्र० । णिरय-देवायु० दोपदा० णत्थि अंतरं । तिरिक्ख-मणुसायु० णिरयगदिभंगो । णिरयः देवगदि-पंचजादि-ओरालि०-ओरालि०अंगो०-दोआणु०-पर०-उस्सा०-तस-थावर-चदुयुगलं तिण्णि पदा० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवत्त० णिर्ध्य अंतरं । वेउच्चि०-वेउन्वि०अंगो० तिष्णि पदा जह० एग०, उक्क० बाबीसं सत्तारस० सत्त साग० गति, दुर्भग, दुस्वर और अनादेयका भङ्ग नपुंसकवेदक समान है। पुरुषवेद, समचतुरस्र संस्थान, प्रशस्त विहायोगित, सुभग, सुस्वर और आदेयके तीन पदोंका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्भृहूर्त है और उरकुष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। औदा-रिक शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग श्रीर वजऋषभनाराचसंहननके तीन पदोंका भङ्ग ओघके समान है। अवक्तव्य पदका भङ्ग नपुंसकवेदके समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग मत्यज्ञानी जीवोंके समान है। चुत्तुदर्शनवाले जीवोंमें त्रसपर्याप्तकोंके समान भङ्ग है। ऋचत्तुःदर्शनवाले जीवोंमें स्रोधके समान भङ्ग हैं।

अद्द. कृष्ण, नील और कापोतलेश्यावाले जीवोंमें प्रुववन्धवाली प्रकृतियोंके दो पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर चार समय है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धी चार, स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, दो गित, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, दो आनुपूर्वी, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगिति, दुर्मग दुस्वर, अनादेय, नीचगोत्र और उच्चगोत्रके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कमसे कुछ कम तेतीस सागर, कुछ कम सत्तरह सागर और कुछ कम सात सागर है। पुरुषवेद समचतुरस्र संस्थान, वअऋषभनाराचसंहनन, प्रशस्त विहायोगित, सुभग, सुस्वर और आदेयके तीन पदोंका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कमसे कुछ कम तेतीस सागर, कुछ कम सत्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कमसे कुछ कम तेतीस सागर, कुछ कम सत्तरह सागर और कुछ कम सात सागर है। नरकायु और देवायुके दो पदोंका अन्तर काल नहीं है। तिर्यक्रायु और मनुष्यायुका भङ्ग नरकगितके समान है। नरकगित, देवगित, पाँच जाति, औदारिक शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, दो आनुपूर्वी, परघात, उद्युवास, त्रस स्थावर चार युगलके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य पदका अन्तर काल नहीं है। वैक्रियिक शरीर और वैक्रियिक आङ्गोपाङ्गके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर काल नहीं है। वैक्रियिक शरीर और वैक्रियिक आङ्गोपाङ्गके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर सार और साधिक समय है और उत्कृष्ट अन्तर हमार और साधिक

सादि०। अवत्त० किण्णाए जह० सत्तारस० सादि०, उक्क० वाबीसं० सादि०। णीलाए जह० सत्तसाग० [सादि०, उक्क०] सत्तारस० सादिरे०। काऊए जह० दसवस्ससहस्साणि सादि०, उक्क० सत्त साग० सादि०। तित्थय० धुवभंगो। णविर अवद्वि० जह० एग०, उक्क० वेसम०। काऊए तित्थय० णिरयभंगो। णील-काऊए मणुस०-मणुसाणु०-उच्चा० पुरिसवेदभंगो।

७५७. तेउले० धुविगाणं दो पदा जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० बेसम०। थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४-इत्थि०-णवुंस०-तिरिक्खगण्०-णइंदि०-पंचसंठा०-पंचसंघ० तिरिक्खाणु०-आदाउज्जो० -अप्पसत्थवि०-थावर-द्भग-दुस्सर-अणादेँ० णीचा० तिण्णिप० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० बेसाग० सादि०। पुरिस०-मणुसग०-पंचिदि० समचदु०-ओरालि०अंगो०-वज्जरिस०-मणुसाणु०-पसत्थवि०-तस-सुभग-सुस्सर-आदेँ०-उच्चा० सोधम्मभंगो। अट्ठक० [ओराखि०-] आहारदुग-तित्थय० दोपदा जह० एग०, उक्क० अंता०। अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० बेसम०। अवत्त० णिर्य अंतरं। देवायुग० दोपदा णिर्य अंतरं णिरंतरं। दोआयु० देवभंगो। देवगदिचदुक्क० तिण्णिपदा० जह० एग०, उक्क० बेसाग० सादि०। अवत्त०

सात सागर है। अवक्तःय पदका कृष्णलेश्यामें जघन्य अन्तर साधिक सन्नह सागर है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक वाईस सागर है। नीललेश्यामें जघन्य अन्तर साधिक सात सागर है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक सन्नह सागर है। कापोतलेश्यामें जघन्य अन्तर साधिक दस हजार वर्ष है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक सन्नह सागर है। कापोतलेश्यामें जघन्य अन्तर साधिक दस हजार वर्ष है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक सात सागर है। तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग ध्रुववन्धवाली प्रकृतियोंके समान है। इतनी विशेषता है कि अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है। कपोतलेश्यामें तीर्थङ्कर प्रकृतिका नारिकयोंके समान मङ्ग है। नील और कपोतलेश्यामें मनुष्य-गित, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगोत्रका भङ्ग पुरुषवेदके समान है।

७४७. पीतलेश्यावाले जीवोंमं ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके दो पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मूहूर्त है। अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धी चार, स्निवेद, नपुंसकवंद, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, पाँच संस्थान, पाँच संस्थान, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, आतप, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगिति, स्थावर, दुर्भग, दुःस्वर, अनादेय और नीचगोत्रके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मूहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर सबका साधिक दो सागर है। पुरुषवंद, मनुष्य ति, पञ्चेन्द्रियजाति, समचतुरस्रसंस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वअर्षभनाराच संहतन, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, प्रशस्त विहायोगिति, त्रस, सुभग, सुस्वर, आदेय और उच्चगोत्रका मङ्ग सौधर्मकरूपके समान है। आठ कषाय, औदारिक शरीर, आहारकिद्विक और तीर्थङ्कर प्रकृतिके दो पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मूहूर्त है। अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मूहूर्त है। अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर स्वाच अन्तरकाल नहीं है। देवा-युके दो पदोंका अन्तरकाल नहीं है, वे निरन्तर हैं। दो आयुक्चोंका भङ्ग देवोंके समान है। देव-गति चतुष्कके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो सागर है। अवक्तव्य पदका अन्तरकाल नहीं है। इसीप्रकार पद्मतेश्व जीवोंमें भी जानना चाहिए। इतनी

णत्थि अंतरं । एवं पम्माए वि । णवरि ओरालि०-आहारदुग-'ओरालि०अंगो०-अद्वक्त०— तित्थय० दोपदा० जह० एग०, उक्त० अंतो० । अवड्ठि० जह० एग०, उक्त० बेसम० । अवत्त० णत्थि अंतरं । देवगदि०४ तिण्णिपदा० जह० एग०, उक्त० अद्वारस साग० सादि० । अवत्त० णत्थि अंतरं० ।

७५८. सुकाए पंचणा०-छदंसणा०-चदुसंज०-भय-दुगुं०-पंचिदि०-तेजा०-क० वण्ण० ४-अगु०४-णिमि०-तित्थय०-पंचंत० तिण्णिप० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवत्त० णित्थ अंतरं०।थीणिगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४-इत्थि-णवुंसगवेदादि० णवगेवज्ञ-भंगो । दोवदणीय चदुणोक०-श्राहारदुग-थिरादितिण्णियुगलं तिण्णिपदा० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवत्त० जह० उक्क० अंतो० । अइक०-मणुसगदिपंचगं दोपदा जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवद्वि० जह० एग०, उक्क० नेसम० । अवत्त० णित्य अंतरं । पुरिस०-समचदु०-वज्जिरिस०-पसत्थ०-सुमग-सुस्सर आदें०-उच्चा० तिण्णिपदा सादभंगो । अवत्तव्वं देवमंगो । देवगदि०४ तिण्णिप० जह० एग०, उक्क० तेंत्तीसं साग० सादि०। अवत्तव्व० जह० अद्वारस साग० सादि०, उक्क० तेंत्तीसं साग० सादि०। अवत्तव्व० जह० अद्वारस साग० सादि०, उक्क० तेंत्तीसं साग० सादि०। अवत्तव्व० जह० अद्वारस साग० सादि०, उक्क० तेंत्तीसं साग० सादि०। अवत्तव्व० जह० अद्वारस साग० सादि०, उक्क० तेंत्तीसं साग० सादि०। अवत्तव्व० जह० अद्वारस साग० सादि०, उक्क० तेंत्तीसं साग० सादि०। अवत्तव्व० जह० अद्वारस साग० सादि०, उक्क० तेंत्तीसं साग० सादि०।

७५६. खइगे अं।धिर्मगो । णवरि तेँचीसं साग० सादि० । आयुग० पगदि अंतरं ।

विशेषता है कि औदारिक शरीर, आहारकद्विक, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, आठ कपाय और तीर्थङ्कर प्रकृतिके दो पदोंका जवन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित पदका जवन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है। अवक्तव्य पदका अन्तरकाल नहीं है। देवगति चतुष्कके तीन पदोंका जवन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक अठारह सागर है। अवक्तव्य पदका अन्तरकाल नहीं है।

७५०. शुक्ललेश्यायाले जीयोंमें पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, चार संज्वलन, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, ते प्स शरीर, कार्मण शरीर, वर्ण चतुष्क, अगुरूलघु चतुष्क, निर्माण, तीर्थकर और पाँच अन्तरायके तीन परोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य पदका अन्तरकाल नहीं है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिध्यात्व, अनन्तानुबन्धी चार, खीवेद और नपुंसकवेद आदिका भङ्ग नीयेवेयकके समान है। दो वेदनीय, चार नोकषाय, आहारक-दिक और स्थिर आदि तीन युगलके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। आठ कषाय और मनुष्यगतिपञ्चकके दो पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। आठ कषाय और मनुष्यगतिपञ्चकके दो पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अविषयत पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अवक्वय पदका अन्तरकाल नहीं है। युरुषवेद, समचतुरहासंस्थान, वर्ज्ञर्पभनाराच संहनन, प्रशस्त विहायोगित, सुभग, सुस्वर, आदेय और उच्चगीत्रके तीन पदोंका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। अवक्तव्य पदका मङ्ग देवोंके समान है। देवगित चतुष्कके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अठारह सागर है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अठारह सागर है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अठारह सागर है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अठारह सागर है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अठारह सागर है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अठारह सागर है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अठारह सागर है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। अवक्तव्य पदका सम्यन्तर अविकार के समान है। इतनी विशेषता है

मणुसगिद्धिंचग० दोण्णिप० जह० एग० उन्क० अंतो०। अवद्वि० जह० एग०, उन्क० बेसम०। अवत्त० णित्थ अंतरं। देवगिद्ध०४-आहारदुगं तिण्णिपदा जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उन्क० तेंनीसं साग० सादि०। तित्थय० ओघं।

७६०. वेद्गे धुविगाणं तिण्णिपदा परिहार०भंगो । अद्वक०-मणुसगदिपंचग० ओधि-भंगो । देवगदिचदुक्क० तिण्णिप० ओधिभंगो । अत्रत्त० जह० पलिदो० सादि०, उक्क० तेत्तीसं साग० सादि० । दोब्रायु०-आहारदुगं ओधिभंगो । तित्थय० दोपदा० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवद्वि० जह० एग०, उक्क० बेसम० । अवत्त० पत्थि अंतरं ।

७६१. उनसम० पंचणा०-छदंसणा० नारसक०-पुरिस०-भय-दु० देनगदि०४-पंचि-दि०-तेजा०-क०-न्वणा०४-अगु०४-पसत्थ० -तस०४-सुभग-सुस्सर-आदेँज०-णिमि० तित्थय०-उचा०-पंचंत० तिण्णिप० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अन्त० णित्थि अंतरं०। मणुसगदिपंचग० दोपदा जह० एग०, उक्क० अंतो०। अन्दि० जह० एग०, उक्क० वेसम०। अन्त० णित्थ अंतरं। सादादिनारस ओघं। एवं आहारदुगं।

७६२. सासणे धुविगाणं णिरयोघं । तिण्णिआयु० दोपदा० णत्थि अंतरं । सेसाणं

कि यहाँ साधिक तेतीस सागर कहना चाहिए। ऋायुकर्मका अन्तर प्रकृतिबन्धके अन्तरके समान है। मनुष्यगतिपञ्चकके दो पदोंका जधन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्महूर्त है। अविस्थत पदका जधन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर है। अविकर्य पदका अन्तरकाल नहीं है। देवगतिचतुष्क और आहारकद्विकके तीन पदोंका जधन्य अन्तर एक समय है, अविकर्य पदका अविकर्य अन्तर समय है। तीर्थंद्वर प्रकृतिका मङ्ग औधके समान है। तीर्थंद्वर प्रकृतिका मङ्ग ओधके समान है।

७६०, वेदकसम्यग्दृष्टि जीवोंमें ध्रुववन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पदोंका भङ्ग परिहारिवशुद्धि संयत जीवोंके समान है। आठ कषाय और मनुष्यगतिपञ्चकका भङ्ग अवधिज्ञानी जीवोंके समान है। देवगतिचतुष्कके तीन पदोंका भङ्ग अवधिज्ञानी जीवोंके समान है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर साधिक एक पत्य है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। दो आयु और आहारकि द्विकना भङ्ग अवधिज्ञानी जीवोंके समान है। तीर्थेङ्कर प्रकृतिके दो पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है। अवक्त्य पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है। अवक्त्य पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है। अवक्त्य पदका जघन्य अन्तर एक समय है। अवक्त्य पदका जघन्य अन्तर एक समय है। अवक्त्य पदका अन्तर हो।

७६१. उपशमसम्यग्दृष्टि जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, बारह कषाय, पुरुषवेद, भय, जुनुष्सा, देवगतिचतुष्क, पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण, तीर्थङ्कर, उच्चगोत्र घौर पाँच अन्तरायके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मृहूर्त है। अवक्तत्र्य पदका अन्तरकाल नहीं है। मनुष्यगतिपञ्चकके दो पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मृहूर्त है। अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है। अवक्तव्य पदका अन्तरकाल नहीं है। साता आदि बारह प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है। इसी प्रकार आहारकद्विकका मङ्ग है।

७६२. सासादनसम्यग्द्रष्टि जीवोंमें ध्रुववन्धवाली प्रकृतियोंका भक्क सामान्य नारिकयोंके

सादादीणं भुज ०-अप्प० जह० एग०. उक्क० अंतो०। अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० बेसम०। अवच० णित्थ अंतरं। सम्मामि० सादासाद०-चढुणोक०-थिरादितिण्णियुग० ओघं। सेसाणं धुविगाणं भुज ० अप्प० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० बेसम०।

७६३. सिष्णि० पंचिदियपज्ञत्तमंगी ! असण्णी० घुषिगाणं भुज०-अष्प० जह० एग०, उक्क, अंतो० ! अवड्ठि० जह० एग०, उक्क० तिष्णि सम० ! तिष्णिआयु० दो पदा० जह० अंतो०, उक्क० पुन्यकोडितिमागं देस० ! तिरिक्खायु० दो पदा जह० अंतो०, उक्क० पुन्यकोडी सादि० ! वेउन्त्रिय०छ०-मणुस०तिग० ओघं ! तिरिक्खमदि दुग-णीचा० तिष्णिपदा सादमंगो ! अवत्तन्त्रं ओघं ! ओराछि० तिष्णिपदा सादमंगो ! अवत्तन्त्रं ओघं ! सेसाणं सादमंगो ! आहार० मूलोघं ! णविर जिम्ह अणंतका० अद्व-पोग्गलपरि० तिम्ह अंगुलस्स असंखेंज्ज० ! अणाहार० कम्माइगमंगो । एवं अंतरं समत्तं ।

## भंगविचयाणुगमो

७६४. णाणाजीवेहि भंगविचयाणुगमेण दुवि ---ओघे० आदे० । ओघे० पंचणा०-

समान है। तीन त्रायुत्रों के दो पदों का अन्तरकाल नहीं है। शेष साता त्रादि प्रकृतियों के भुजगार त्रोंर श्रन्पतर पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है। अवक्तव्य पदका अन्तरकाल नहीं है। सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवों में सातावेदनीय, असातावेदनीय, चार नोकषाय और स्थिर आदि तीन युगलका भङ्ग ओघके समान है। शेष धुवयन्धवाली प्रकृतियों के भुजगार और अल्पतर पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मूहूर्त है। अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मूहूर्त है। अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है।

७६३. संज्ञी जीवोंका भङ्ग पर्छ्वेन्द्रिय पर्याप्त जीवोंके समान हैं। असंज्ञी जीवोंमें ध्रुववन्धवाली प्रकृतियोंके मुजगार और अल्पतर पदका जयन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्त-मुंहूर्त हैं। अवस्थित पदका जयन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर तीन समय है। तीन आयुओंके दो पदोंका जयन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर एक पूर्वकोटिका कुछ कम त्रिभागप्रमाण है। तिर्यञ्चायुके दो पदोंका जयन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक एक पूर्वकोटि है। वैक्रियिक छह और मनुष्यगति त्रिकका भङ्ग आधके समान हैं। तिर्यञ्चगतिद्विक और नीचगोत्रके तीन पदोंका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। अवक्तव्य पदका भङ्ग ओघके समान है। खोदारिक शरीरके तीन पदोंका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। अवक्तव्य पदका भङ्ग ओघके समान है। खोदारिक शरीरके तीन पदोंका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। आहारक जीवोंका भङ्ग मूलोघके समान है। इतनी विशेषता है कि जहाँ पर अनन्तकाल और अर्धपुद्गल परिवर्तन काल कहा है, वहाँ पर अङ्गलके असंख्यातवें भागप्रमाण काल कहना चाहिए। अनाहारक जीवोंका भङ्ग कार्मणकाययोगी जीवोंके समान कहना चाहिए। इस प्रकार अन्तरकाल समाप्त हुआ।

### भक्क विचयानुगम

७६४. नाना जीवोंका त्रालम्बन लेकर भङ्ग-विचयातुगमकी ऋषेत्रा निर्देश दो प्रकारका है—

णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसंक०-भय-दु०-ओरालि० तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०-उप०णिमि०-पंचंत० भुज०-अप्प०-अवद्वि० णियमा अत्थि । सिया एदं य अवत्तमे य । सिया एदं य अवत्तमे य । सिया एदं य अवत्तमे य । सिया एदं य अवत्तमा य । तिण्णिआयुगाणं दो पदा भयणिज्जा । तिरिक्खायु० दो पदा णियमा अत्थि । वेउन्त्रियछ०-आहारदुग-तित्थय० अवद्वि० णियमा अत्थि । सेसाणि पदाणि भयणिज्जाणि । सेसाणं सन्त्रपादीणं भुज०-अप्प०-अवद्वि०-अवत्त० णियमा अत्थि । एवं ओधभंगो तिरिक्खोधं कायजोगि-ओरालियका०-णवुंस०-कोधादि०४ मदि०-सुद०-असंज०-अचक्खुदं०-तिण्णिले०-भवसि०-अब्भवसि०-मिच्छा०-असण्णि आहारग ति ।

७६५. मणुसअपज्जत्त-वेउव्वियमि ०-आहार०--आहारमि०--अवगदवे०-सुहुमसंप०-उवसम०-सासण०-सम्मामि० सन्वाणं पगदीणं सन्वपदा भयणिज्जा ।

७६६. एइंदिएस ध्रुविगाणं तिष्णि पदा सेसाणं चत्तारि पदा तिरिक्खायु० दो पदा णियमा अत्थि । मणुसायु० दो पदा भयणिज्जा । एवं पुढवि०-आउ०-तेउ०-वाउ०-वादरवणफदिपत्तेय० एदेसि बादराणं तेसि चेव वादरअपज्ज० तेसि सन्वसुदुम० वणफदि-णियोद एइंदियमंगो ।

७६७. ओरालियमि ० - कम्मइग० - ऋणाहारगेसु देवगदि०४ - तित्थय ० तिण्णि पदा

श्रोघ श्रोर श्रादेश। श्रोघसे पाँच झानावरण, नौ दर्शनावरण, मिण्यात्व, सोलह कपाय, भय, जुगुप्सा, औदारिक शरीर, तैंजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघात, निर्माण श्रोर पाँच अन्तरायके भुजगार, अल्पतर श्रीर अवस्थित पदके बन्धक जीव नियमसे हैं। कदाचित् इन पदोंके बन्धक जीव हैं। तीन आयुश्रोंके दो पदवाले जीव भजनीय हैं। तिर्यक्षायुक्षे दो पदवाले जीव नियमसे हैं। वैक्रियिक छह, आहारक द्विक, श्रोर तीर्यहुर प्रकृतिके अविस्थित पदवाले जीव नियमसे हैं। शेष पदवाले जीव भजनीय हैं। शेष सब प्रकृतियोंके भुजगार, अल्पतर, अवस्थित श्रीर अवक्तव्य पदवाले जीव नियमसे हैं। इस प्रकार श्रोघके समान सामान्य तिर्यक्र, काययोगी, श्रीदारिक काययोगी, नपुंसकवेदी, कोधादि चार कघायवाले, मस्यज्ञानी, श्रुताझानी, असंयत, अच्छादर्शनी, तीन लेश्यावाले, भव्य, श्रभव्य, मिण्यादृष्टि, श्रसंज्ञी श्रीर श्राहारक जीवोंके जानना चाहिये।

७६५. मनुष्यत्रपर्याप्त, वैक्रियिकमिश्रकाययोगी, आहारककाययोगी, आहारकमिश्रकाय-योगी, अपगतवेदी, सूद्रमसाम्पराथसंयत, सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिण्यादृष्टि जीवोंमें सब पद भजनीय हैं।

७६६. एकेन्द्रियों में ध्रुवधन्धवाली प्रकृतियों के तीन पद, रोप प्रकृतियों के चार पद और तिर्यक्षायुके दो पदवाले जीव नियमसे हैं। मनुष्यायुके दो पदवाले जीव नियमसे भजनीय हैं। इसी प्रकार पृथियीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक, वादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शारीर, इनके वादर तथा इन्हीं के बादर अपर्याप्त और इन्हीं के सब सूदम, वनस्पतिकायिक और निगोद जीयों के एकेन्द्रियोंके समान भझ हैं।

७६७. श्रीदारिकमिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी श्रीर श्रनाहारक जीवों में देवगति चतुष्क

भयणिङ्जा । सेसाणं ओघं । णिरयादि याव सण्णि त्ति संखेडज्ज-असंखेडजरासीणं अवट्वि० णियमा अत्थि । सेसाणि पदाणि भयणिङजाणि । एवं भंगविचयं समत्तं ।

### भागाभागाणुगमो

७६८, भागाभागं दुवि० — ओघे० आदे० । ओघे० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०सालसक०-भय-दुगुं०-ओरालिय०-तेजा० क०-चण्ण०४-अगु०-उप०-णिमि०-पंचंत० भुज०अप्प० केविडियो भागो । असंखेंजिदिभागो ? अविडि० केव० ? असंखेंजिज भागा । अवत्त०
सव्व० केव० ? अणंतभागो । चदुण्णं आयु० अवत्त० सव्वजी० केव० ? असंखेंजिज० ।
अप्प० सव्व० केव० ? असंखेंजिजाभा० । आहारदुगं भुज०-अप्प०-अवत्त० सव्व० केव० ?
संखेंजिति० । अविडि० सव्व० केव० ? संखेंजिजा भा० । सेसाणं सव्वपग० भुज०-अप्प०अवत्त० सव्व० केव० ? असंखेंजिज । अविडि० सव्व० केव० ? असंखेंजिजा भागा ।
एवं ओघभंगो तिरिक्खोधं कायजोगि-ओरालियका०-ओरालियमि०-कम्मइ०-णवुंस०कोधादि०४-मदि०-सुद०-असंज०-अचक्खुदं०ितिण्णिले०भवसि० - अब्भवसि०-मिच्छादि०असण्णि—आहार०-अखाहारग ति । णवरि ओरालियमि०-कम्मइ०-अणाहारगेसु

श्रीर तीर्थक्कर प्रकृतिके तीन पदवाले जीव भजनीय हैं। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग श्रोध के समान है। नरक गति से लेकर संज्ञी मार्गणातक संख्यात श्रीर असंख्यात राशिवाली मार्गणाश्रोंमें अवस्थित पदवाले जीव नियम से हैं। शेष पदवाले जीव भजनीय हैं। इस प्रकार भङ्गविचय समाप्त हुआ।

#### भागाभागानुसम

७६८. भागाभाग दो प्रकार का है—श्रीय श्रीर श्रादेश । श्रीय से पाँच ज्ञानावरण, नी दर्शनावरण, मिध्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुष्सा, ऋौदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुरक, अगुरुलघु, उपघात, निर्माण और पाँच अन्तरायके भुजगार और अल्पतर पदवाले जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? असंख्यातवें भाग प्रमाण हैं। अवस्थित पदवाले जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? असंख्यात बहुभाग प्रमाण हैं। अवक्तव्य पदवाले जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं। अनुस्तवें भाग प्रमाण हैं। चार आयुत्रोंके अवक्तव्य पदवाल जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? असंख्यातवें भाग प्रमाण हैं ? अस्पतर पदचाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? असंख्यात बहुभाग प्रमाण हैं। आहारकद्विकके भुजगार, अस्पतर ऋौर अवक्तव्य पदवालं जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? संख्यातवें भाग प्रमाण हैं। अवस्थितपद्वाले जीव सव जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? बहुभाग प्रभाण हैं। रोप सब प्रकृतियों के भुजगार, अल्पतर और अबक्तव्य पदवाले जीव सब जीवोंक कितने भागप्रमाण हैं १ ऋसंख्यातवे भागप्रमाण हैं । ऋवस्थितपदवाले जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं १ ऋसंख्यात बहुभाग प्रमाण हैं । इस प्रकार ओघके समान सामान्य तिर्यञ्ज. काययांगी. ओदारिक काययांगी, श्रीदारिक मिश्रकाययोगी, कार्मण काययोगी, नपुंसक वेदी, क्रोधादि चार कपायवाले, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, श्राचचुदर्शनी, तीन लेरयावाले, भव्य, अभव्य, मिण्यादृष्टि, ऋसंज्ञी, ऋाहारक ऋौर अनाहारक जीवोंके जानना चाहिये । इतनी विशेषता है कि क्रोंदारिक मिश्रकाययोगी, कार्मण काययोगी और अनाहारक जीवोंमें देवगति पद्धकके भुजगार देवगदिपंचग० भुज० अप्प० सव्व० केव०१ संसेंज्जदिभा०। अवद्वि० सव्व० केव०१ संसेंज्जा भा०।

७६९. अवगदवे० सन्वाणं भ्रुज०-अप्पद०-अवत्त० सन्व० केव० १ संखेजज० । अविद्वि० सन्व० केव० १ संखेजजा भा० । सेसाणं णिरयादि याव सिण्णि ति सन्वेसिं असंखेजजरासीणं ओघं सादमंगो कादन्वो । एसिं संखेजजरासिं तेसिं ओघं आहारसरीर-भंगो कादन्वो । एवं भागाभागं समत्तं ।

# परिमाणाणुगमो

७७०. पारिमाणाणुगमेण दुवि०—ओघे० आदे०। ओघे० पंचणा०-छदंसणा०-अहक०-भय-दुगुं०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०-उप०-णिमि०-पंचंत० भुज०-अप०-अवहि० केसिया ? अणंता। अवत्त० केतिया ? संखेंज्जा। थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अहक०-ओरालि० तिण्णिपदा केतिया ? अणंता। अवत्त० केतिया ? असंखेंज्जा। तिण्णि आयु० दो पदा केसिया ? असंखेंज्जा। तिरिक्खायु० दो पदा केतिया ? अणंता। वेउव्वियछ० चत्तारि पदा केति० ? असंखेंज्जा। आहारदुगं चत्तारि पदा केतिया ? संखेंज्जा। तिरथय० तिण्णिपदा केतिया ? असंखेंज्जा। अवत्त० केति० ? संखेंज्जा। सेसाणं सन्व-पगदीणं चत्तारि पदा केतिया ? अणंता। एवं ओघमंगो तिरिक्खोघो कार्यजोगि-ओरालि-

त्रोर अल्पतर पदवाले जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? संख्यातवें भाग प्रमाण हैं । अव-स्थित पदवाले जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? संख्यात बहुभाग प्रमाण हैं ।

७६६. ऋषगत वेदवाले जीवोंमें सब प्रकृतियोंके भुजगार अल्पतर और अवक्तव्य पदवाले जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? संख्यातवें भाग प्रमाण हैं । अवस्थित पदवाले जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? संख्यात बहुभाग प्रमाण हैं । शेष नरक गतिसे लेंकर संज्ञी मार्गणा तक सब असंख्यात राशिवाली मार्गणाओं में ओवसे सातावेदनीयके समान भङ्ग जानना चाहिये। तथा जिन मार्गणाओंकी संख्यात राशि है उन मार्गणाओंमें आवसे आहारक शरीरके समान भङ्ग जानना चाहिये।

### परिमाणाजुगम

७००. परिमाणानुगमकी अपेद्या निर्देश दो प्रकारका है—आंघ और आदेश। श्रोघसे पाँच ज्ञानावरण, बह दर्शनावरण, श्राठ कथाय, भय, जुगुफ्सा, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्ण चतुष्क, अगुरुलघु, उपघात, निर्माण और पाँच अन्तरायके मुजागार, अल्पतर और अवस्थित पदवाले जीव कितने हैं ? अनन्त हैं। अवक्तव्य पदवाले जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व, आठ कथाय और औदारिक शरीरके तीन पदवाले जीव कितने हैं ? अनन्त हैं। अवक्तव्य पदवाले जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। तीन श्रायुओं के दो पदवाले जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। तीन श्रायुओं के दो पदवाले जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। तिर्यक्रायुके दो पदवाले जीव कितने हैं ? अनन्त हैं। विकिथिक इहके चार पदवाले जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। श्राह्यात हैं। श्राह्यात हैं। श्राह्यात हैं। अवक्तव्याद वाले जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। वीर्यकर प्रकृतिके तीन पदवाले जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। अवक्तव्याद वाले जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। श्रेष सब प्रकृतियोंक चार पदवाले जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। इस प्रकार श्रोधके समान सामान्य तिर्यक्र

यका०-णवुंस० कोधादि०४-मदि०-सुद०-असंज०-अचक्खुदं०-तिष्णिले०- भवसि०- अब्म-वसि०-मिच्छादि० सण्णि-आहारग ति एदे सच्वे असरिसा ओधेण साधेदच्वं। केसिं च धुविगाणं अवत्तव्वं अत्थि केसिं च णत्थि।

७७१. ओरालियमि०-कम्मइ०-अणाहार० देवगदि०४-तित्थय० तिण्णिपदा के० ? संखेंज्जा । सेसं ओघं । ओरालियै०-वेउ व्वियमि०-इत्थिवेद-संजदासंबद-किण्ण-णीलासु उवसमसम्मादिष्टीसु तित्थय० चत्तारि पदा के० ? संखेंज्जा । णवरि किण्ण-णीलासु अवत्त० णित्थ । सेसाणं णिरयादि याव सण्णि ति संखेंज्ज-असंखेंज्जरासीणं अणंतरासीणं च ओषेण साधेदव्यं । एवं परिमाणं समत्तं ।

## खेँताणुगमो

७७२. खेँनाणुगमेण दुवि०-ओघे० आदे०। ओघे० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दु०-ओरालि०-तेजइगादिणव-पंचंत० अज०-अप्प०-अविड केविड खेंचे ! सञ्वलोगे। अवत्त० केविड खेँचे ! ला० असंखेँ०। वेउव्विय०-आहारदुग-तित्थय० चत्तारि पदा केव० खेँचे ! लो० असंखेँ०। तिण्णिआयुगाणं [दोपदा०]केव० खेँचे ! लो० असंखेँ०। सेसाणं सञ्वपग० सञ्वपदा केव० खेँचे ! सञ्चलोगे। एवं तिरिक्खोधं

काययोगी, श्रोदारिक काययोगी, नपुंसक वेदी, क्रोधादि चार कषायवाले, मस्यझानी, श्रुताझानी, श्रसंयत, अचलुदर्शनी, तीन लेश्यावाले, मध्य, अभव्य, मिध्यादृष्टि, संझी और श्राहारक जीवों तक ये सब श्रासदश पद्बाले जीव श्रोधके श्रानुसार साथ लेना चाहिये। इनमेंसे किन्हींके ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंका श्रावक्तव्य पद है श्रीर किन्हींके नहीं है।

७७१. औदारिक मिश्रकाययोगी, कार्मण काययोगी और श्रनाहारक जीवोंमें देवगित चतुष्क श्रीर तीर्थकर प्रकृतिके तीन पदवाले जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। शेष मङ्ग ओघके समान है। श्रीदारिक मिश्रकाययोगी, वैकियिक मिश्रकाययोगी, खीवेदी, संयतासंयत, कृष्णलेश्यावाले, नील लेश्यावाले और उपशाम सम्यग्दृष्टि जीवोंमें तीर्थकर प्रकृतिके चार पदवाले जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। इतनी विशेषता है कि कृष्ण श्रीर नील लेश्यावाले जीवोंमें श्रवक्तव्य पद नहीं है। शेष नरकगतिसे लेकर संज्ञी तक संख्यात, श्रसंख्यात श्रीर अनन्त राशिवाली मार्गणात्रोंमें ओघके समान साध लेना चाहिये। इस प्रकार परिमाण समाप्त हुआ

### क्षेत्राजुगम

७५२. त्त्रानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका हं—श्रोध और आदेश। श्रांघसे पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिध्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, श्रोदारिक शरीर, तैजसशरीर आदि नौ और पाँच अन्तरायके भुजगार, अल्पतर और अवस्थित पदके बन्धक जीवोंका कितना तेत्र हैं ? सब लोक तेत्र हैं । अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका कितना तेत्र हैं ? लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण क्षेत्र हैं । वैक्रियिकद्विक, आहारकद्विक और तीर्थक्करंक चार पदोंके बन्धक जीवोंका कितना क्षेत्र हैं ? लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्र हैं । तीन आयुओंके दो पदोंके बन्धक जीवोंका कितना त्रेत्र हैं ? लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्र हैं । तीन आयुओंके दो पदोंके बन्धक जीवोंका कितना त्रेत्र हैं ? लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्र हैं । शेष सब प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीवोंका कितना त्रेत्र हैं ? सब लोक क्षेत्र हैं । इसी प्रकार सामान्य विर्यक्क, काययोगी,

कायजोगि-ओरालि०-ओरालियमि०-कम्मइ०-णबुंस०-कोघादि०४ - मदि०-सुद०-असंज० अचक्खुदं० तिष्णिले०—भवसि०—अब्भवसि०-मिच्छा०—असण्णि-आहार—अणाहारगाति । णवरि ओरालियमि०-कम्मइ०-अणाहार० देवगदि०४ तित्थय० सव्वपदा लोग० असंखे० ।

७७३. एइंदिएसु मणुसायु० ओघं। सेसाणं पगदीणं सन्वपदा सन्वलोगे। एवं सुहुम०। बादरपञ्जत्त-अपज्जत्त० धुविगाणं सादादौणं च दसपगदीणं सन्वपदा सन्व-लोगे। इत्थि०-पुरिस०-चदुजादि-पंचसंठा०-ओरालि०अंगो०-छस्संघ०-आदाउज्जो०-दोविहा०-तस-बादर-सुमग-दोसर०-आदे० जसगि० चत्तारिपदा लोग० संक्षेंज्ज०। एवं तिरिक्खायु० दोपदा०। मणुसायु०-मणुसग०-मणुसाणु०-उच्चा० सन्वपदा लो० असंखें०। णवुंस०-एइंदि०-हुंडसं०-पर०-उस्सा०-थावर सुहुम०-पज्जत्तापज्जत्त-पत्त० साधार०-दूभग-अणादेँ०-अजस० तिण्णिप० सन्वलोगे। अवत्त० लोग० असंखें०। तिरिक्खग०-तिरिक्खाणु०-णीचा० तिण्णिप० सन्वलो०। अवत्त० लोग० असंखें०।

७७४. पुढवि०-आउ० तेउ० वाउ० सन्वसुहुमाणं च एइंदियभंगो । बादरपुढवि-आउ० तेउ०-वाउ०-तेसि अपञ्ज० धुविगाणं तिण्णि प० सन्वलो० । सादादीणं दसण्हं पगदीणं

श्रीदारिक काययांगी, श्रीदारिक मिश्रकाययांगी, कामंणकाययांगी, नपुंसकवेदी, क्रांघादि चार कषाय-वाले, मध्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, श्रासंयत, श्राचलुदर्शनी, तीन लेश्यावाले, भव्य, श्राभव्य, मिथ्यादृष्टि, श्रामंज्ञी, श्राहारक श्रीर श्रानाहारक जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि औदारिक मिश्रकाययोंगी, कामंण काययोगी श्रीर श्रानाहारक जीवोंमें देवगति चार और तीर्थक्कर प्रकृतिके सब पत्निक वन्धक जीवोंका चेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है।

७७३. एकेन्द्रियोंमं मनुष्यायुका भङ्ग आघके समान है। रोप प्रकृतियोंके सब पदोंके वन्धक जीवोंका स्त्र सब लोक है। इसी प्रकार सूदम एकेन्द्रिय जीवोंके जानना चाहिए। बादर एकेन्द्रिय और उनके पर्याप्त-अपर्याप्त जीवोंमं अप्रवत्भवाली और साता आदि दस प्रकृतियोंके सब पदोंके वन्धक जीवोंका सेत्र सब लोक है। क्षीवेद, पुरुपवेद, चार जाति, पाँच संस्थान, औदारिक आङ्गोनपाङ्ग, छह संहनन, आलप, उद्यात, दो बिहायोगिति, त्रस, बादर, सुभग, दो स्वर, आदेय और यशकीतिंके चार पदोंक बन्धक जीवोंका सेत्र लोकके संख्यातवें भागप्रमाण है। इसी प्रकार तिर्ध्वायुके दो पदोंक बन्धक जीवोंका सेत्र जानना चाहिए। मनुष्यायु, मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगात्रके सब पदोंके बन्धक जीवोंका सेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है। नपुंसकवेद, एकेन्द्रिय जाति, हुण्डसंस्थान, परधान, उच्छूास, स्थावर, सूद्म, पर्याप्त, अपर्याप्त, प्रत्येक, साधारण, दुर्भग, अनादेय और अयशक्तितिंके तीन पदोंके बन्धक जीवोंका सेत्र सब लोक है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका सेत्र लोकके संख्यातवें भागप्रमाण है। तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और नीचगोत्रके तीन पदोंके बन्धक जीवोंका सेत्र सब जीवोंका सेत्र सब जीवोंका सेत्र सब जीवोंका सेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है।

७७४. पृथिबीकायिक, जलकायिक, श्रिप्तिकायिक श्रीर वायुकायिक तथा इनके सब सूहम जीवोंमें एकेन्द्रियोंके समान भड़ हैं। बादर प्रथिवीकायिक, वादर जलकायिक, बादर श्रिप्तिकायिक श्रीर बादर वायुकायिक तथा उनके अपर्याप्त जीवोंमें ध्रुववन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पदीके बन्धक चत्तारि पदा सव्वले । णवंस०-तिरिक्खग०-एइंदि०-हुंडसं०-तिरिक्खाणु०-पर०-उस्सा०-थावर-मुहुम-पज्जतापञ्जत्त-साधार०-दूभग०-अणादें ०-अजस०-णीचा० तिण्णिप०सव्वलो०। अवत्त० लो० असंखे०। सेसाणं सव्वपदा लोग० असंखें ज०। एवं बादरवण०-णियोद-पञ्जतापञ्ज०। णवरि वाऊणं जिम्ह लोगस्स असंखें ज० तिम्ह लोगस्स संखें ज० कादव्वो। बादरवणप्फदिपत्तेय० तस्सेव अपञ्ज० बादरपुढवि०अपञ्जत्तमंगो। सेसाणं णिरयादि याव सण्णि ति संखें ज-असंखें जरासीणं सव्वभंगो लोग० असंखें । एवं खेतं समत्तं।

## फोसणाणुगमो

७७५. फोसणाणुगमेण दुवि०-ओघे० आँदे०। ओघे० पंचणा०-छदंसणा०-अहुक०-भय-दु०-तेजइगादिणव-पंचंत० भुज०-अप्प०-अवद्वि०वंधगेहि केवडियं खेतं फोसिदं ? सन्बलो०। अवत्त० खेतं। थीणगिद्धि०३-अणंताणुवैधि०४ तिण्णिपदा णाणावरणमंगो। अवत्त० अहुचीँ०। मिच्छ० तिण्णिपदा णाणा०मंगो। अवत्त० अहु-बारह०। अपच-कखाणा०४ तिण्णपदा णाणा०मंगो। अवत्त० छचोँह०। णिरयु देवायु०-आहारदुगं सच्च०

जीवोंका चेत्र सब लोक हैं। सातावेदनीय आदि दस प्रकृतियोंके चार पदोंके बन्धक जीवोंका चेत्र सब लोक है। नपुंसकवेद, तिर्यक्रगति, एकेन्द्रिय जाति, हुण्ड संस्थान, तिर्यक्रगत्यानुपूर्वी, परघात, उच्छास, स्थायर, सूदम, पर्याप्त, अपर्याप्त, साधारण, दुर्भग, अनादेय, अयशाकीति और नीच-गोत्रके तीन पदोंके बन्धक जीवोंका चेत्र सब लोक है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें आगप्रमाण है। शेष प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें आगप्रमाण है। इसी प्रकार बादर बनस्पतिकायिक, बादर निगोद और इनके पर्याप्त-अपर्याप्त जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि बायुकायिक जीवोंके, जहाँ लोकका असंख्यातवाँ आगप्रमाण क्षेत्र कहा है, वहाँ लोकके संख्यातवें आगप्रमाण क्षेत्र कहना चाहिए। बादर बनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर अते अपर्याप्त जीवोंके समान भन्न है। शेष नरकगतिसे लेकर संशी मार्गणातक संख्यात और असंख्यात संख्यावाली राशियोंमें सब पदोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें आगप्रमाण है। इस प्रकार क्षेत्र समाप्त हुआ।

### स्पर्शानानुगम

७७५. स्पर्शनानुगमकी अपेला निर्देश दो प्रकारका है—आंघ और आदेश। श्रोधसे पाँच झानावरण, छह दर्शनावरण, स्नाठ कपाय, भय, जुगुष्मा, तैजसशरीर स्नादि नय और पाँच झन्त-रायके मुजगार, अल्पतर और स्नवस्थित पदके बन्धक जीवोंने कितने लेत्रका स्पर्शन किया है ? सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है । स्रवक्तव्य पदका भंग लेत्रके समान है । स्त्यानगृद्धि तीन और स्नाननानुवन्धी चारके तीन पदोंके बन्धक जीवोंका मंग झानावरणके समान है । स्रवक्तव्य पदके वन्धक जीवोंने कुछ कम स्नाठवटे चौदह राजू लेत्रका स्पर्शन किया है । मिथ्यात्वके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम स्नाठवटे चौदह राजू स्नोतका मंग झानावरणके समान है । स्नवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम स्नाठवटे चौदह राजू और कुछ कम बारहवटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । स्नप्रत्याख्यानावरण चारके तीन पदोंके बन्धक जीवोंका भंग झानावरणके समान है । स्नवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम छहबटे चौदह राजू केत्रका स्पर्शन किया है । तरकायु, देवायु और स्नाहारक दिकके सव पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन लेत्रके समान है । इसी प्रकार स्नाहारक मार्गणा तक इन प्रकृतियोंके सव पदोंका स्पर्शन

पदा खेर्चभंगो । एवमेदाणं यात्र आहारम ति । [तिरिक्खायु० दोपदा सव्वलो० । ] मणुसायु० दोपदा अड्डचों६० सन्त्रलोगो० । णिरयगदि-देवगदि-दोआणुपु० तिण्णि प० छचीं६० । अवत्त० खेर्चभंगो । ओरालिय० तिण्णिपदा सन्त्रलोगो । अवत्त० बारहचौं६-स० । वेउव्य०-वेउव्व०अंगो० तिण्णिपदा बारहचों६स० । अवत्त० खेर्चभंगो । तित्थय० तिण्णिप अड्डचों० । अवत्त० खेर्च० । सेसाणं कम्माणं सन्त्रपदा सन्त्रलोगो ।

७७६. णिरएसु धुविगाणं तिष्णिपदा सादादीणं बारसण्णं चत्तारिपदा० छचोँह्स० । दोआयु०-मणुसग०-मणुसाणु०-तित्थय०-उचा० सच्वप० खेँतभंगो । सेसाणं तिष्णिप० छचोँह० । अवत्त० खेँतभंगो । एवं सच्चिणरयाणं अष्पप्पणो फोसणं कादव्वं । णविर मिच्छ० अवत्त० पंचचोँह० ।

७७७. तिरिक्खेसु धुविगाणं तिण्णिपदा० सव्बक्तोगो। शीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अट्टक०-ओरास्ति० तिण्णिप० सव्बस्तो०। अवत्त० स्रो० असंखेंज०। णवरि मिच्छ० अवत्त० सत्तचो०। सेसाणं ओषे०।

जानना चाहिए। तिर्येश्च श्रायुके दो पदोंके बन्धक जीवोंने सब लोक संत्रका स्पर्शन किया है। मनुष्य आयुके दो पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और सब लोक संत्रका स्पर्शन किया है। नरकगति, देवगति और दो श्रानुपूर्वींके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम छहबटे चौदह राजू संत्रका स्पर्शन किया है। श्रावक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। औदारिक शारीरके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। श्रावक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम बारहबटे चौदह राजू सेत्रका स्पर्शन किया है। विक्रियिक शारीर और वैक्रियिक आंगोपांगके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम बारहबटे चौदह राजू सेत्रका स्पर्शन किया है। श्रावक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठबटे चौदह राजू सेत्रका स्पर्शन किया है। श्रावक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठबटे चौदह राजू सेत्रका स्पर्शन किया है। श्रावक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने सब लोक सेत्रका स्पर्शन किया है। श्रावक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने सब लोक सेत्रका स्पर्शन किया है। श्रावक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। श्रावक्तव्य है। सेष कमोंके सब पदोंके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

७७६. नारिकयों में ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियों के तीन प्रोंके बन्धक जीवोंने और साता आदि बारह प्रकृतियों के चार प्रोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। दो आयु, मनुष्यगति, मनुष्यानुपूर्वी, तीर्थंकर प्रकृति और उच्चगोत्रके सब प्रदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। शेष प्रकृतियों के तीन प्रदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम छहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। इसी प्रकार सब नारिकयों के अपना-अपना स्पर्शन करना चाहिए। इतनी विशेषता है कि मिण्यान्त्रके अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछकम पाँचबटे चौदह राजू तेत्रका स्पर्शन किया है।

७००. तिर्यक्कोंमें ध्रुवचन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिध्यात्व, आठ कषाय और औदारिक शरीरके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि मिध्यात्वके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम सातवटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। शेष प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन ओषके समान है।

७७८. पंचिदियतिरिक्ख०३ धुविगाणं तिण्णिपदा सादादिदसण्णं पगदीणं चतारि पदा० लोग० असंखँ० सन्वलो०। थीणगिद्धि०३-मिन्छ०-अहुक० णवुंस०-तिरिक्खग०[ दुग- ] एइंदि०-ओरालि०-हुंडसं० - पर०-उस्सा०-थावर-सुहुम०-पञ्जत्तापञ्जत्त-पत्तेय०-साधार०-दूमग०-अणादेँ०-अजस०-णीचा० तिण्णिप० लोग० असंखे० सव्वलो०। अवत्त० लो० असंखे० । णवरि मिन्छ०-अजस० अवत्त० सत्तचो०। इत्थिवे० तिण्णिप० दिवहुचोँ६०। अवत्त० खेँत्त०। पुरिस०-णिरयगदि-देवगदि-समचदु० दोआणु०-दोविहा०-सुभग-दोसर-आदेँज०-उचा० तिण्णिप० छचो०। अवत्त० खेँत्त०। पंचिदि०-वेउव्व०- वेउव्व०-अंगो०-तस० तिण्णिप० बारहचो०। अवत्त० खेँत्त०। पंचिदि०-वेउव्व०- वेउव्व०-अंगो०-तस० तिण्णिप० बारहचो०। अवत्त० खेँत्त०। उजो० जसगि० चत्तारिप० सत्तचो०। चदुआयु०-मणुसग०-तिण्णिजादि-चदुसंठा०-ओरालि०अंगो०-छस्संघ०मणुसाणु०-आदावं खेँत्तभंगो। बादर०तिण्णिप० तेरह०। अवत्त० खेँत्त०।

७७६. पंचिदियतिरिक्खअपञ्जत्तेसु धुविमाणं तिण्णिपदा सादादीणं चत्तारिप० लो० असंखेँ० सन्बलो०। णवंस०-तिरिक्ख०-हुंडसं०-एइंदि-तिरिक्खाणु०-पर०-उस्सास-थावर-सुहुम-पञ्जत्तापञ्ज०-पत्तेय० साधार०-दूभग०-अणादेँ०-णीचा० तिण्णिपदा लो० असंखे०

৩৩८. पंचेन्द्रियतिर्यश्च त्रिकमं ध्वबन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने तथा साता त्रादि दस प्रकृतियोंके चार पदोंके बन्धक जीवोंने लोकके त्रसंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक नेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिश्यात्व, त्राठ कषाय, नपुंसक वेद, तिर्यंचगति-द्विक, एकेन्द्रियजाति, अौदारिक शरीर, हुंडसंस्थान, परघात, उच्छ्वास, स्थावर, सूदम, पर्याप्त, अपर्याप्त, प्रत्येक, साधारण, दुर्भग, अनादेय, अयश:कीर्ति और नीच गोत्रके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण अौर संबलोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीयोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि मिथ्याख और अयशःकीर्तिके अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम सात्रबटे चौदह राजु नेत्रका स्पर्शन किया है। स्वीवेदके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम डेढ़ बटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है । पुरुपवेद, नरकगति, देवगति, समचतुरस्र संस्थान, दो आनुपूर्वी, दो विहायोगति, सुभग, दो स्वर, ब्रादेय ब्रीर उच्चगोत्रके तीन परींक बन्धक जीवोंने कुछ कम छहबदे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। पंचेन्द्रियजाति, वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक आंगोपांग और त्रस प्रकृतिके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम बारह यटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान हैं। उद्योत और यशःकीर्तिके चार पद्येके बन्धक जीवोंने कुछ कम सातबटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। चार आयु, मनुष्यगति, तीन जाति, चार संस्थान, श्रीदारिक अंगोपांग, छह संहत्तन, मनुष्यगत्यानुपूर्वी श्रीर आतपके सब पदोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। बादर प्रकृतिके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम तेरहबटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया हैं। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है।

७७९. पंचेन्द्रिय निर्येख अपर्याप्तकोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पदोंके और सातादि प्रकृतियोंके चार पदोंके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातमें भाग प्रमाण और सवलोक चेत्रका स्पर्शन किया है। नपुंसक वेद, तिर्यंचगति, हुण्ड संस्थान, एकेन्द्रिय जाति, निर्यंचगत्यानुपूर्वी, परघान, उच्छ्वास, स्थावर, सूद्म, पर्याप्त, अपर्याप्त, प्रत्येक, साधारण, दुर्भग, अनादेय और नीच-

सन्वलो । अवत्त ० खेँत ० । उज्जो ० जसिंग ० चत्तारिप ० सत्तचोँ ६ । बादर ० तिण्णिप ० सत्तचो ० । अवत्त ० खेँत्त ० । अजस ० तिण्णिप ० सादमंगो । अवत्त ० सत्तचो ० । सेसाणं इत्थिवेदादीणं चत्तारिप ० खेँतभंगो । एस भंगो सन्वअपज्जत्तगाणं विगलिंदियाणं बादर-पुढवि०-आउ०-तेउ० वाउ०-बादरवणप्फदिपत्तेय ० पज्जताणं च ।

७८०. मणुस०३ पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्तभंगो । णवरि विसेसो णादन्त्रो ।सिच्छ० अवत्त० सत्तत्त्रोहरू । दोआयु०-वेउन्त्रियछ०-आहारदुग-तित्थय० सन्त्रपदा खेँत० ।

७८१. देवेसु धुविगाणं तिण्णिपदा० अट्ट-णवचौँ६०। सादादीणं बारसण्णं मिच्छ०-उज्जो० चत्तारिपदा० अट्ट-णवचौँ०। एइंदिय-थावरसंज्ञत्त० [तिण्णिपदा] अट्ट-णव-चो६०। [अवत्त०] सेसाणं [सन्वपदा] अट्टचौँ०। एदेण बीजेण णेदव्वं। सव्वदेवाणं अप्पप्पणो फोसणं णेदव्वं।

७८२. एइंदि० सन्वसुहुम०-पुढवि०-आउ०-तेउ०-वाउ०-वणप्रदि-णियोद० मणु-सायुगं मोत्तूण धुविगाणं तिष्णिप० सेसाणं चत्तारिप० सन्वलो० । मणुसायु० दोपदा०

गांत्रके तीन पदोंके वन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातं माग प्रमाण और सवलोक चेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तत्र्यपदके वन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। उद्योत और यशःकीर्तिके चार पदोंके वन्धक जीवोंने कुछ कम सातवटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। वादर प्रकृतिके तीन पदोंके वन्धक जीवोंने कुछ कम सातवटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके वन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। अयशःकीर्तिके तीन पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन सातवेदनीयके समान है। अवक्तव्यपदके वन्धक जीवोंने कुछ कम सातवटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। श्रेष खोवेद आदि प्रकृतियोंके चार पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन देत्रके समान है। यही मंग सव अपर्याप्तक, विकलिन्द्रिय, वादर पृथिवीकायिक, वादर जलकायिक, बादर अप्रिक्तायिक, बादर वायुकायिक, वादर वनस्पितिकायिक प्रत्येकशारीर और इनके पर्याप्तक जीवोंके जानना चाहिए।

७५०, मनुष्यत्रिकमें पंचेन्द्रिय तिर्यंच अपर्याप्तकोंके समान भंग है। किन्तु यहाँ जो विशेष हो, वह जान लेना चाहिए। मिश्यात्वके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम सातबटे चौदह राजू नेत्रका स्पर्शन किया है। दो आयु, बैक्रियिक छह, आहारक द्विक और तीर्थंकर प्रकृतिके सब पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है।

७८१. देवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और कुछ कम नौबटे चौदह राजू केत्रका स्पर्शन किया है। साता आदिक बारह प्रकृतियाँ, मिध्यात्व और उद्योतके चार पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और कुछकम नौ बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। स्थावर सिंहत एकेन्द्रिय जातिके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और कुछ कम नौ बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इनके अवक्तव्य पदके तथा शेष प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसी वीजपदके अनुसार शेष प्रकृतियोंके बन्धक जीवोंक। स्पर्शन भी जानना चाहिए। तथा सब देवोंके अपना-अपना स्पर्शन जानना चाहिए।

७⊏२. एकेन्द्रिय, सब सूच्म, पृथिवीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक, वनस्पतिकायिक और निगोद जीवोंमें मनुष्यायुको छाङ्कर ध्रुववन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पदीके लो॰ असं सन्वलो॰ । बादरएइंदिय-पञ्जतापञ्जत ० धुनिगाणं तिण्णिप॰ सादादीणं दसण्णं चत्तारिप॰ सन्वलो॰ । इत्थि॰ पुरिस० चदुजादि पंचसंठा० ओरालि०अंगो० छस्संघ० आदा० दोविहा॰ तस सुभग दोसर-आदें० चत्तारिपदा॰ लो॰ संखें ज० । णवुंस० एइंदि० हुंडसं० पर० – उस्सा० - यावर - सुहुम - पज्जत्त – अपज्जत्त – पत्तेय० साधार० – दूभग० अणादें० तिण्णिप० सन्वलो० । अवत्त० लोग० संखें ज० । मणुसाधु० दोपदा० लोग० असंखें ज० । तिरिक्खाणु० - णीचा० तिण्णिप० सन्वलो० । अवत्त० लोग० संखें ज० । तिरिक्खाणु० - णीचा० तिण्णिप० सन्वलो० । अवत्त० लोग० असंखें ० । मणुस० - मणुसाणु० - उचा० चत्तारिप० लोग० असंखें ० । उज्जो० - जसगि० चत्तारिप० सत्तचों ० । बादर० तिण्णिप० सत्तचों ० । अवत्त० खेत्त० । अजत० तिण्णिप० सन्वलो० । अवत० सत्तचों ० । एस मंगो बादरपुढवि० - आउ० तेउ० वाउ० तेसं च अपज्ज० । वादरवणण्यदि – णियोदाणं च पज्जत्त। पज्जत्त – वादरवणण्यदि – पत्तेय० तस्सेव अपज्ज० । णवरि विसेसो णादवो । जिम्ह वादरएइंदि० लोग० संखें ज० तिम्ह वाउ० खेलाणं लोग० असंखें ० कादव्वं ।

वन्धक जीवोंने तथा शेष प्रश्नुतियांके चार पद्दिके बन्धक जीवोंने सब लीक क्षेत्रका स्वशंन किया है। मनुष्यायुके दो पदोंके बन्धक जीबोंने लोकके ऋसंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। बादर एकेन्द्रिय खौर इनके पर्याप्त अपर्याप्त जीवोंमें श्रावयन्थवाली प्रकृतियोंक तीन पदोंके श्रौर सातादि दस प्रकृतियोंके चार पदोंके बन्धक जीवोंने सबलोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। स्नीवंद, पुरुपवेद, चार जाति, पौँच संस्थान, श्रौदारिक आंगोपांग, छह संहनन, आतप, दो विहायोगति, अस, सुभग,दो स्वर ऋौर आदेयके चार पदोंके बन्धक जीवोंने लोकके संख्यातवें भाग प्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । नपुंसकवेद, एकेन्द्रियजाति, हुण्ड संस्थान, परघात, उच्छ्यास, स्थावर, सूद्रम, पर्याप्त, अपर्याप्त, प्रत्येक, साधारण, दुर्भग और अनादेयके तीन पदोंके वन्धक जीवोंने सत्र लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अबक्तव्यपद्के बन्धक जीबोंने लोकके संख्यातवें भाग प्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। मनुष्यायुके दो पदोंके बन्धक जीवोंने लोकके ऋसंख्यातवें भाग प्रमाण क्षेत्रका स्परीन किया है। तिर्थंच आयुके दो पदोंके बन्धक जीवोंने लोकके संख्यातवें भाग प्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । तिर्यचगति, तिर्यख्रगत्यानुपूर्वी और नीचगोत्रके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने सव-लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। श्रवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने लोकके श्रासंख्यातवें भाग प्रमाण चेत्रकः स्पर्शन किया है । मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगोत्रके चार पर्दोके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। उद्योत और यशः कीर्तिके चार परोंके बन्धक जीवोंने कुछकम सातवटे चौदह राजू चेत्र का स्पर्शन किया है। वादर प्रकृतिके तीन पदोंके बन्धक जीयोंने कुछ कम सात बटे धौदह राजु दोन्नका स्पर्शन किया है। अन्नकन्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। अथशःकीर्तिके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपद्के बन्धक जीवोंने कुछ कम सातबटे चौदह राज नेबका स्पर्शन किया है। यही भंग बादर पृथिवीकायिक, बादरजलकायिक, वादर अग्निकायिक, बादर बायुकायिक और उनके अपर्याप्तक जीवोंके जानना चाहिए। बादरवनस्पतिकायिक श्रौर निगाद्जीय तथा उनके पर्याप्त और अपर्याप्त, बादर बनस्पतिकायिक प्रत्येकशारीर तथा उनके अपर्याप्त जीवोंमें इसी प्रकार जानका चाहिए । किन्तु इनमें जो विशेष हो, यह जानना चाहिए । जिन धादर एकेन्द्रियोंमें लोकके संख्यातवें भाग स्पर्शन कहा है, उनमें वायुकायिक जीवोंको छोड़कर लांकके असंख्यातवें भाग प्रमाण स्परोन ऋहना चाहिए ।

७८३. पंचिदिय तस०२ पंचणा०-छदंसणा०-अद्वक०-भय-दुगुं०-तेजा०-क० वण्ण०४-अगु०४-पज्जत्त-पत्तेय०-णिमि०-पंचंत० तिण्णिप० लो० असंखेँ० अद्वचोँ६० सव्व लो०।
अवत्त० खेँत०। शीणगिद्धि०३-अणंताणुवंधि०४-णवुंस०-एइंदि०-तिरिक्ख०-हुंडसं०तिरिक्खाणु०-थावर-दूभग-अणादेँज०-णीचा० तिण्णिप० लोग० असंखेँ०ज० अद्वचोँ६०
सव्वलो०। अवत्त० अद्वचोँ६०। सादादीणं दसण्णं चत्तारिप० लोग० असंखेँ० अद्वचोँ०
सव्वलो०। मिच्छ० तिण्णिप० सादमंगो। अवत्त० अद्व-वारह०। अपचक्खाणा०४
तिण्णिप० अद्वचोँ० सव्वलो०। अवत्त० छचोँ६०। इत्थि०-पुरिस०-पंचिदि०-पंचसंठा०ओरालि०अंगो०-छरसंघ०-दोविहा०-तस-सुभग-दोसर० आदेँ० तिण्णिप० अद्व वारह०।
अवत्त० अद्वचोँ०। णिरय-देवायु-तिण्णिजा०-आहारदुगं खेँत्तमंगो। दोआयु-मणुसग०मणुसाणु०-'आदाउचा० चत्तारिप० अद्वचोँ०। उज्जो०-जसगि० चत्तारिप० अद्व-तेरह०।
वादर० तिण्णिप० अट्व-तेरह०। अवत्त० खेँत्त०। ओरालि० तिण्णिप० अट्व-तेरह०।

७५३. पंचेन्द्रियद्विक और ब्रसद्विक जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, ब्राठ कषाय, भय, जुगुप्सा तैजसशरीर, कार्मणशरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, पर्याप्त, प्रत्येक, निर्माण स्नौर पाँच अन्तरायके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण, कुछ कम आठवटे चौदह राज् श्रीर सब लोक रोत्रका स्पर्शन किया है। स्रवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन रोत्रके समान है। स्त्यानगृद्धि तीन, अनन्तानुबन्धी चार, नपुंसकवेद, एकेन्द्रियजाति, तिर्यक्क्षगति, हुण्डसंस्थान, तिर्यक्रगत्यानुपूर्वी, स्थावर, दुर्भग, अनादेय, और नीचगोत्रके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण, आठबटे चौदह राजू और सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। न्न्राबक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे ेचौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। साता आदि दस प्रकृतियोंके चार पदोंके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातमें भाग प्रमाण. आठ बटे चौदह राजु और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। मिध्यात्वके तीन पद्देके बन्धक जीवोंका स्पर्शन सातावेदनीयके समान है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू और कुछ कम बारह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अप्रत्याख्यानावरण चारके तीन पदोंके वन्धक जीवोंने कुछ कम आठ वटे चौदह राजू और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अधक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह वटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्रीवेद, पुरुषवेद, पञ्चेन्द्रिय जाति, पाँच संस्थान, औदारिक आंगोपांग, छह संहनन, दो विहायो-गति, त्रस, सुभग, दो स्वर ऋौर ऋादेयके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम ऋाठ बटे चौदह राजू और कुछ कम बारह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अधक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ यटे चौदह राज् क्षेत्रका स्पर्शन किया है। नरकायु, देवायु, तीन जाति स्रोर आहा-रक द्विकके सब पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान हैं । दो आयु, मनुष्यगति, मनुष्यगत्या-नुपूर्वी, आतप श्रीर उच्चगोत्रके चार पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। उद्योत और यशःकीर्तिके चार पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ-बटे चीदह राजू और कुछ कम तेरहबट चौदह राजू केत्रका स्पर्शन किया है। बादर प्रकृतिके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम अ।ठवटे चौदह राजू और कुछ कम तेरहबटे चौदह राजू केन्नका

१ मूलमती स्त्रादाउडगो० इति पाठः ।

सन्वलो० । अवत्त० बारह० । सुहुम-अपज्ञ०-साधार० तिण्णिप० लोग० असंर्खे० सन्बलो० । अवत्त० खेँत० । अजस० तिण्णिप० सादभंगो । अवत्त० अट्ट-तेरह० । वेउन्तियलक-तित्थय० ओद्यं । एस भंगो पंचमण०-पंचवचि०-विभंग०-चक्खुदं०-सिण्णि ति । णवरि जोगेसु ओरालि० अवत्त० खेँत० । विभंग० देवगदि-देवाणुपु० तिण्णिप० पंचचो० । अवत्त० खेँत० । ओरालि०-वेउन्वि०-वेउन्वि०अंगो०तिण्णिप० प्कारह० । अवत्त० खेँत० ।

७८४. कायजोगि०-ओरालि०-अचक्खु०-भवसि०-आहारग ति मुलोघं। णवरि किंचि विसेसो। ओरालिय० तिरिक्खोघं। वेउन्तिय० धुविगाणं साददीणं वारसण्णं उज्जो० सन्वप० अट्ठ-तेरह०। थोणगिद्धि०३-अणंताणुवंधि०४-णवुंस-तिरिक्खग० हुंड०-तिरिक्खाणु०-दूभग-अणादेँ०-णीचा० तिण्णिप० अट्ठ-तेरह०। अवत्त० अट्ठचोँ०। एवं मिच्छ०। णवरि अवत्त० अट्ठ-मारह०। इत्थि०-पुरिस०-पंचिदि०-पंचसंठा०-ओरालि०

स्पर्शन किया है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन लेवके समान हैं। ओंदारिक शारिके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राजू और सबलोक लेवका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम वारहवटे चौदह राजू नेवका स्पर्शन किया है। सूहम अपर्याप्त और साधारण प्रकृतिके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक लेवका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन लेवके समान है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन लेवके समान है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राजू और कुछ कम तरहवटे चौदह राजू चेवका स्पर्शन किया है। वैकियक छह और तीर्थकर प्रकृतिक सब पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन ओयके समान है। यही भंग पाँच मनोयोगी, पाँच बचनयोगी, विभंगज्ञानी, चजुदर्शनी, और संज्ञी जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि योगोंमें औदारिक शरीरके अवक्तव्य पदका स्पर्शन चेवके समान है। विभंगज्ञानी जीवोंमें देवगति और देवगत्यानुपूर्विक तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम पाँचक्रेट राजू नेवका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेवके समान है। औदारिक शरीर, वैक्रियक शरीर श्रीर वैक्रियक आंगोपांगके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम पाँचक्रेट राजू नेवक्रेट राजू चेवका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेवके समान है। औदारिक शरीर, वैक्रियक शरीर श्रीर वैक्रियक आंगोपांगके तीन पदोंके बन्धक जीवोंको स्पर्शन चेवके समान है।

७८४ काययोगी, श्रौदारिककाययोगी, श्रचनुदर्शनी, भव्य श्रौर श्राहारक जीवोंमें मूल श्रोघक समान भन्न है। किन्तु यहाँ पर कुछ विशेषता है। श्रौदारिक काययोगी जीवोंमें सामान्य तिर्यक्कोंके समान भन्न है।वैक्रियिककाययोगी जीवोंमें ध्रुववन्धवाली प्रकृतियाँ, साता श्रादि वारह प्रकृतियाँ श्रौर उद्योतके सब पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठबंदे चौदह राजू श्रौर कुछ कम तेरह बटे चौदह राजू बेन्नका स्पर्शन किया है। स्त्यानगृद्धि तीन, श्रनन्तानुबन्धी चार, नपुंसकवेद, तिर्यक्कगति, हुण्डसंस्थान, तिर्यक्चगत्यानुपूर्वी, दुर्भग, श्रनादेय श्रौर नीचगोन्नके तीन पदोंक बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठबंदे चौदह राजू चेन्नका स्पर्शन किया है। श्रवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठबंदे चौदह राजू चेन्नका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार मिण्यात्वका स्पर्शन जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि इसके श्रवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठ बटे चौदह राजू चेन्नका स्पर्शन किया है। किया

श्रंगो ०-छस्संघ ०-दोविहा ० तस-सुभग-दोसर०-आर्दे ० तिण्णिप० अट्ट-बारह० । अवत्त० अट्टचोहॅ० । दो आयु दोपदा मणुसग० मणुसाणु०-आदा० उच्चा० सन्वप० अट्टचोहॅ० । एइंदि०-थावर० तिण्णिप० अट्ट-णव० । अवत्त० अट्टचोॅ० । तित्थय० ओघं ।

७८५. ओरालियमि० वेउव्वियमि० आहार०-आहारमि० कम्मइ० अणाहार० खेँच-भंगो । णवरि ओरालियमि० मणुसायु० दोप० लोग० असंखेँ० सव्वलो० । कम्मइ०-अणाहार० मिच्छत्तं अवत्त० ऍकारह० ।

७८६, इत्थिवदे धुविगाणं तिण्णिप० सादादीणं दसण्णं चत्तारिपदा अडुचोँ० सव्वलो० । श्रीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४-णवुंस-तिरिक्ख०-हुंड०-तिरिक्खाणु०-द्भग-अणादेँ०-णीचा० तिण्णिप० अडुचोँ० सव्वलो० । अवत्त० अडुचोँ० । णवरि-मिच्छ० अव० अडु-णवचोँ० । णिदा-पचला अडुकोँ० सथ-दुर्गु-ओरालि०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०४-पञ्जत-पत्ते०-णिमि० तिण्णिप० अडुचोँ० सव्वलो० । अवत्त० खेँत्त० ।

है। स्नीवेद, पुरुषवेद, पक्लेन्द्रिय जाति, पाँच संस्थान, श्रोदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, दो विहायोगिति, त्रस, सुभग, दो स्वर श्रोर श्रादेयके तीन पदोंके बन्यक जीवोंने छुछ कम श्राठबटे चौदह राजू श्रोर छुछ कम बारह बटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। श्रवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछकम आठबटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। दो श्रायुश्चोंके दी पदोंके बन्धक जीवोंने तथा मनुष्यगित, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, श्रातप श्रोर उच्चगोत्रके सत्र पदोंके बन्धक जीवोंने तथा मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, श्रातप श्रोर उच्चगोत्रके सत्र पदोंके बन्धक जीवोंने छुछ कम आठबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। एकेन्द्रियजाति श्रीर स्थावर प्रकृतिके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने छुछ कम श्राठबटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। श्रवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने छुछ कम श्राठबटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। त्रीर्थङ्कर प्रकृतिके सब पदोंके बन्धक जीवोंने छुछ कम श्राठबटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। त्रीर्थङ्कर प्रकृतिके सब पदोंके बन्धक जीवोंने छुछ कम श्राठबटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है।

७८५. श्रीदारिकमिश्रकाययोगी, वैक्रियिकमिश्रकाययोगी, श्राहारककाययोगी, आहारक-मिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी, श्रीर श्रनाहारक जीवोंमें अपनी-श्रपनी सब प्रकृतियोंके सब पदोंका स्पर्शन सेत्रके समान है। इतनी विशेषता है कि श्रीदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें मनुष्यायुके दो पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन लोकके श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक है। कार्मणकाययोगी श्रीर श्रनाहारक जीवोंमें मिथ्यात्वके श्रवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम

ग्यारहवटे चौदह राजू त्तेत्रका स्पर्शन किया है।

७८६. स्नीवेदी जीवोंमें ध्रुव बन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पदोंके और साता आदि दस प्रकृतियोंके चार पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और सवलोक तेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिध्यात्व, अनन्तानुबन्धी चार, नपुंसक वेद, तियंख्रगति, हुण्डसंस्थान, तिर्यश्चगत्यानुपूर्वी, दुर्भग, अनादेय और नीचगोत्रके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राजू और सब लोक तेत्रका स्पर्शन किया हैं। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राजू तेत्रका स्पर्शन किया हैं। इतनी विशेषता है कि मिध्यात्वके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राजू त्रोत्रका स्पर्शन किया है। निद्रा, प्रचला, आठ कपाय, भय, जुगुप्सा, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्ण चतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, पर्याप्त, प्रत्येक और निर्माणके तीन पदोंक बन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राजू और सब लोक त्रेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम

[ णविर ओरालि० अवत्त० दिवहुचोई० ! इत्थि०-पुरिसवे०-पंचसंठा-ओरालि० अंगो०-छस्संघ०-पसत्थ०-सुभग-सुस्सर—आदेँ० चत्तारिपदा अहुचोँ० । दो आयु०-तिण्णिजादि—आहारदुग-तित्थय खेँत्त० । दोआयुगस्स दोपदा मणुसग०—मणुसाणु०-आदाव-उच्चा० चत्तारिप० अहुचोँ० । एइंदि० धावर० तिण्णिप० अहुचोँ० सव्वलो० । अवत्त० अहुचोँ० । उज्जो०-जसगि० चत्तारिप० अहु-णवचोँ० । बादर तिण्णिप० अहु-तेरहचोई० । अवत्त० खेँत्तमंगो । खेउन्विय० ओघं । अजस० तिण्णिप० लो० असंखेँ० सव्वलो० । अवत्त० खेँत्तमंगो । बेउन्विय० ओघं । अजस० तिण्णिप० अहुचोई० सव्वलो० । अवत्त० अहु-णवचोँ६० । एवं पुरिस० वि । [ णविर ] अपचक्खाणा०४-स्रोरालि० अवत्त० छचोँ६० । तित्थय० ओघं ।

७८७. णवुंसमे अद्वारसण्णं तिण्णि पदा सन्वलोगो। पंचदंस० मिन्छत्त० बारसक०-भय-दुगुं०-ओरालि०-तेजा० क० वण्ण०४ अगु० उप० [णिमि० ] तिण्णिप० सन्बलो० ।

स्पर्शन चेत्रके समान है। इतनी विशेषता है कि स्पीदारिकके स्रयक्तत्र्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम डेढ़बटे चौदह राजू केत्रका स्पर्शन किया है। स्त्रीवेद, पुरुषवेद, पाँच संस्थान, श्रीदारिक आङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, प्रशस्तविहायोगति, सुभग, सुस्वर, आदेयके चारपदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू त्रेत्रका स्पर्शन किया है। दो आयु, तीन जाति, आहारकद्विक और तीर्थक्कर प्रकृतिके सब पदोंके बन्धक जीबोंका स्पर्शन चेत्रके समान हैं। दो ऋायुऋोंके दो पदोंक श्रीर मनुष्यगति, मनुष्यगस्यानुपूर्वी, त्रातप और उच्चगोत्रके चार पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। एकेन्द्रिय जाति और स्थावरके तीन पर्शेक वन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू और सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राज़ू चेत्रका स्पर्शन किया है। उद्योत श्रीर यशः-कीर्तिके चार पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राजू और कुछ कम नौबटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। बादर प्रकृतिके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राजू और कुछ कम तेरहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अबक्कज्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन नेत्रके समान है। सूर्म, अपर्याप्त और साधारण प्रकृतिके तीन पर्दोंके बन्धक जीवोंने लोकके असं-ख्यातर्वे भाग प्रमाण ऋौर सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। ऋबक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। वैकियिक शरीरके सब पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन स्रोधके समान है। अयशःकीर्तिके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजु स्रौर सबलोक चेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और कुछ कम नौबटे चौदह राजु सेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार पुरुपवेदी जीवोंके भी जानना चाहिये। इतनी विशेषता हैं कि अपस्याख्यानावरण चार ऋौर औदारिकशरीरके अवक्तव्य पदके बन्धक जीयोंने कुछ कम छहवटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। तीर्थंकर प्रकृतिके सब पदोंके वन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है।

७६७. नपुंसकवेदी जीवोंमें ऋठारह प्रकृतियोंके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। पाँच दर्शन।वरण, मिश्रयात्व, बारह कषाय, भय, जुगुप्सा, ऋौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्ण चतुष्क, अगुरुलघु, उपघात ऋौर निर्माणके तीन पदोंके बन्धक अवत्त० खेँत्त० । णवरि मिच्छत्त० अवत्त० बारहचो० । ओरालिय० अवत्तव्वं छचोँद्द० । दोआयु०-वेउव्वियछकं-[ आहारदुग-] तित्थय० अोरालियकायजोगिभंगो । सेसाणं चत्तारि पदा सव्वलो० ।

७८८. कोधादि०४-मदि०-सुद० ओधं। णवरि मदि०-सुद० देवगदि-देवाणुपु० तिण्णिप० पंचचोँ०। अवत्त० खेँतमंगो। वेउव्व०-वेउवि०श्रंगो० तिण्णि पदा ओरालि० [अवत्त०] ऍक्कारह०। [वेउवि०दुग०] अवत्त० खेँतमंगो।

७८६. आभि०-सुद०-ओधि० पंचणा०-छदंसणा०-अहुक-पुरिस०-भय-दुगुं०-मणुसगिदपंचग०-पंचिदि०-तेजा०-क०-समचदु०-वण्ण०४-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदेँ०-णिमि०-तित्थय०-उच्चा०-पंचंत० तिण्णि पदा अहुचोहूँ०। अवत्त० खेँत्तभंगो। णवरि मणुसगिदपंचग० अवत्त० छचोहूँ०। सादादीणं बारस० चत्तारि पदा अहु०। मणुसायु० दो पदा अहुचोहूँ०। देवायु-आहारदुगं खेँत्तभंगो। अपच-क्खाणा०४ तिण्णि पदा अहुचोँ०। अवत्त० छचोहूँ०। देवगदि०४ तिण्णि पदा छचोँ०।

जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तत्र्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। इतनी विशेषता है कि मिध्यात्यके अवक्तत्र्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम बारहबटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। अौदारिक शारीरके अवक्तत्र्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। दो आयु, बैक्तियक छह, आहारक दो और तीर्थकर प्रकृतिके सब पदोंका मंग औदारिककाययोगी जीवोंके समान है। शेष प्रकृतियोंके चार पदोंके वन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है।

०५६. कोधादि चार कपायवाले, मत्यद्यानी, श्रीर श्रुताज्ञानी जीवोंका भंग ओवके समान है। इतनी विशेषता है कि मत्यज्ञानी और श्रुताज्ञानी जीवोंमें देवगित श्रीर देवगत्यानुपूर्वीके तीन पदींके बन्धक जीवोंने कुछ कम पौंचबटे चौदहराजू चेत्रका स्पर्शन किया है। श्रवक्तत्र्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान हैं। वैक्रियकशारीर श्रीर वैक्रियकश्रागोपांगके तीन पदींके तथा श्रीदारिकशरीरके अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम ग्यारहबटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया हैं। वैक्रियकद्विकके श्रवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चित्रके समान हैं।

७६. आभिनियोधिकहानी, श्रुतहानी और अवधिहानी जीवोंमें पाँच हानावरण, छद्दर्शनावरण, आठ कपाय, पुरुपवेद, भय, जुगुप्सा, मनुष्यगित पंचक, पंचेन्द्रियज्ञाति, तैजसशरीर कार्मणशरीर, समचतुरक्रसंस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुतयु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगिति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्यर, आदेय, निर्माण, नीर्थङ्कर, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायक तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदहराजू चत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह वटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। साता आदि बारह प्रकृतियोंके चार पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम अठबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। साता आदि बारह प्रकृतियोंके चार पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। मनुष्यायुके दो पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। देवायु और आहारकिहकके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। देवायु और आहारकिहकके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू चित्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू चित्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू चित्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू चित्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू चित्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू चित्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह यटे चौदह राजू चित्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह यटे चौदह राजू चित्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह यटे चौदह राजू चित्रका स्पर्शन किया है। क्षेत्रका स्पर्शन किया किया है। क्षेत्रका स्पर्शन

अवत्त ० खेँत्त ० । मणपञ्जवादि याव सुदुमसंपराइगा ति खेँत्त भंगो ।

७९०, संजदासंजदा० देवायु-तित्थय० खेँत०। धुविगाणं तिण्णि पदा वि सेसाणं चत्तारि पदा छचो०। असंजदे ओघं। ओधिदं०-सम्मादि०-खइग०-वेदग०-उवसम० आभिणि०भंगो। णवरि खइगे उवसम० देवगदि०४ चत्तारिपदा मणुसगदिपंचग० अवत्त० खेँत०।

७६१. किण्ण०-णील०-काउसु धुविगाणं तिष्णि पदा सव्वलो० । श्रीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४ तिष्णि पदा सव्वलो० । अवत्त० खेँत्त० । णविर मिच्छ० अवत्त० पंच-चत्तारि-बेचोँद० । णिरय-देवायु-देवगदिदुगं खेँत्त० । णिरयगदि-वेउव्व०-वेउव्व०अंगो०-णिरयाणु० तिष्णिपदा छ-चत्तारि-बेचोँ६० । अवत्त० खेँत्त० । सेसाणं चत्तारि पदा सव्वलो० । तित्थय० चत्तारिपदा खेत्त० ।

७९२. तेऊए धुविमाणं तिण्णि पदा अट्ट-णवर्चोद्दः । थीणगिद्धि०३-अणंताणु-बंधि०४-णवुंस०-तिरिक्खग०-एइंदि०-हुंड०-तिरिक्खाणु०-थावर-दूभग-अणादेँ०-

बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। मनःपर्ययज्ञानी जीवोंसे लेकर सूद्ध्मसाम्परायिकसंयत्त जीवों तक स्पर्शन चेत्रके समान है।

७६०. संयतासंयत जीवोंमं देवायु श्रोर तीर्थंकर प्रकृतिके बन्धक जीवोंक। स्पर्शन चेत्रके समान हैं। ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने श्रोर शेष प्रकृतियोंके चार पदोंके बन्धक जीवोंने कुछकम छहबटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। असंयत जीवोंमें स्पर्शन श्रोधके समान है। अवधिदर्शनी, सम्यन्दृष्टि, क्षायिकसम्यन्दृष्टि, वेदकसम्यन्दृष्टि श्रोर उपशम सम्यन्दृष्टि जीवोंमें आभिनिबोधिकज्ञानी जीवोंके समान मंग है। इतनी विशेषता है कि चायिक सम्यन्दृष्टि श्रोर उपशमसम्यन्दृष्टि जीवोंमें देवगित चतुक्कके चार पदोंके और मनुष्यगित पंचकके अवक्रव्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है।

७६१. कृष्ण, नील और कापोत लेश्यावाले जीवोंमें ध्रुववन्याली प्रकृतियोंके तीन पर्दोंके वन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्यानगृद्धि तीन मिध्यात्व और अनन्तानुबन्धी चारके तीन पर्दोंके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवों का स्पर्शन चेत्रके समान है। इतनी विशेषता है कि मिध्यात्वके अवक्तव्यपदके बन्धक जीवों ने कमसे कुछ कम पाँचबटे चौदह राजू, कुछ कम चारबटे चौदह राजू, और कुछ कम दोबटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। नरकायु, देवायु और देवगतिद्विकके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। नरकगति, वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक आंगोपांग और नरकगत्यानुपूर्विक तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कमसे कुछ कम झहबटे चौदह राजू, कुछ कम चारबटे चौदह राजू और कुछ कम दोबटे चौदह राजू होने समान है। शेष प्रकृतियोंके चार पदोंके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। तीर्थङ्कर प्रकृतियोंके चार पदोंके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। तीर्थङ्कर प्रकृतियोंके चार पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है।

७६२. पीतलेश्यावाले जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके तीन परोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और कुछ कम औं वटे चौदह राजू चौदह राजू और कुछ कम औं वटे चौदह राजू चौदक स्पर्धन किया है। स्त्यानगृद्धि तीन, अनन्तानुबन्धी चार, नपुंसकवेद, तिर्थचगित, एकेन्द्रिय जानि, हुण्डसंस्थान, तिर्थछ्यगस्यानु-पूर्वी, स्थावर, दुर्भग अनादेय और नीचगोत्रके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे

णीचा० तिण्णिप० अहु-णवचो० । अवच० अहुचो० । सादादिवारह-मिच्छत्त-उज्जो० चत्तारि पदा अहु-णवचो० । अपचक्खाणा०४-ओरालि० तिण्णि प० अहु-णवचो६० । अवच० दिवहुचो६० । इत्थिवे० चत्तारि पदा अहुचो६० । एवं पुरिस० । मणुसगदि-पंचिदि०-पंचसंठा०-ओरालि०अंगो०-छस्संघ०-मणुसाणु०-आदाव-दोविहा०-[तस०] सुभग-दोसर आदे०-उच्चा०-देवगदि०४ तिण्णि पदा दिवहुचो६० । अवत्त० खेत्त० । णवरि मणुसदुग०-वज्जरिस०-ओरालि०अंगो० दिवहुचो० । पचक्खाणा०४-आहारदुग-तित्थय० ओघं । पम्माए तेउभंगो । णवरि याणि पदाणि दिवहुं तेसिं पंचचो० । सेसाणं अहुचो० । एवं सुकाए वि । णवरि छचो६० ।

७६३. सासणे धुगिगाणं तिण्णि पदा अट्ट-बारह०। इत्थि०-पुरिस०-पंचसंठा-पंच-संघ०-दोत्रिहा०-सुभग-दोसर-आर्दे० तिण्णि पदा अट्ट-ऍकारह०। अवत्त० अट्टचो०। तिरिक्खगदिदुग दूभग अणादें०णीचागो० तिण्णिपदा अट्ट-बारह०। अवत्त० अट्टचो०।

चौदह राजू और इल्ल कम नौं यटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अयक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। साता आदि बारह प्रकृतियाँ, मिध्यात्व और उद्योतके चार पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राजू और कुछ कम नेरेवटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। अप्रत्याख्यानावरण चार अौर औदारिक शरीरके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने छुछकम आठवटे चौदह राजू श्रीर कुछ कम नी बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कमें डेढ़बटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्रीवेदके चार पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राजू चीत्रेका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार पुरुषचेदके चार पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शान जानना चाहिए। मनुष्यगति, पंचेन्द्रिय जाति, पाँच संस्थान, ऋौदारिक ऋांगोपांग, छह संहनन, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, ऋातप, दो विहा-बोगति, त्रस, सुभग, दो स्वर, आदेय, उच्चगोत्र छौर देवगतिचतुष्कके तीन पदीके वन्धक जीवोंने कुछ कम डेढ़ बटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। अथक्तव्य पदके बन्धक जीयोंका स्पर्शन क्षोत्रके समान है। इतनी विशेषता है कि मनुष्यगतिद्विक, वक्रर्षभनाराचसंहनन ऋौर ऋौदारिक ऋांगोपांगके ऋवक्तत्र्यपदके बन्धक जीवोंने कुछकम डेढ़बटे चौदहराज़ू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। प्रत्याख्यानावरण चार, स्राहारकद्विक और तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग ओघके समान है। पद्मलेश्यायाले जीवोंमें पीतलेश्यायाले जीवोंके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि जिन पदोंका कुछ कम डेढ़ बटे चीदह राजू स्पर्शन कहा है,उनका कुछ कम पाँचबटे चौदह राजू क्षेत्र प्रमाण स्पर्शन कहना चाहिए। शेष पदोको छुछ कम आटबटे चौदह राज्य चेत्र प्रमाण स्पर्शन कहना चाहिए। इसी प्रकार शुक्रलेश्यावाले जीवोंमें भी जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि यहाँपर कुछ कम छह्बटे चौदहराजु क्षेत्र प्रमाण स्पर्शन कहना चाहिए ।

७६३. सामादनसम्यग्दृष्टि जीवों में ध्रुयवन्धवाली प्रकृतियों के तीन पदों के बन्धक जीवोंने जुझ कम आठबटे चौदह राजू और कुछ कम बारहवटे चौदहराजू चेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्रीवेद, पुरुषवेद, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, दो विहायांगति, सुभग, दो स्वर और आदेयके तीन पदों के वन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और कुछ कम ग्यारहवटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। तिर्यक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है।

सादादीणं परियत्तमाणियाणं उज्जो० चत्तारिप० अट्ट-बारह०। दोआयु०-मणुसग०-मणुसाणु०-उचा० चत्तारिपदा अट्टचोईस०। [देवायु० खेत्तमंगो ] देवगदि०४ तिष्णि-पदा पंचचोईस०। भवत्त० खेत्त०। ओरालि० तिष्णिपदा अट्ट-बारह०। अवत्त० पंचचोई०।

७६४. सम्मामि० धुविगाणं तिण्णिपदा अड्डचो० । सादादीणं चत्तारिपदा अड्डचो० । [ णवरि देवगदि४ लोग० असंखे० । ] असण्णीसु णिरय देवायु०-वेउव्विय० [ छ ] ओरालि० खेर्त्तभंगो । सेसाणं एइंदियभंगो । एवं फोसणं समत्तं।

### कालाणुगमो

७६५. कालाणुग्मेण दुवि०-ओघे० आदे० । ओघे० भ्रुज०-अप्पद्०-अवत्त० एसिं परिमाणे अणंता असंखेजा लोगरासीणं तेसिं सन्बद्धा । असंखेजरासिं जहण्णेण एयस०, उक्क० आवित्याए असंखेज । जेसिं संखेजजीवा तेसिं जह० एग०, उक्क० संखेज समय० । अबद्वि० सन्वेसिं सन्बद्धा० । णवरि जेसिं भयणिजरासिं तेसिं अबद्विद-

चौदह राजू और कुछ कम बारहबटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। साता आदि परिवर्तमान प्रकृतियाँ और उद्योत प्रकृतिके चार पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और कुछ कम बारह बटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। दो आयु, मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्च-गोत्रके चार पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। देवायु-के बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। देवाति चतुष्कके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम पाँचबटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। औदारिकरारीरके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और कुछ कम बारहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम पाँचबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

७६४. सम्यग्मिश्यादृष्टि जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठबटे चौदह राजू चीत्रका स्पर्शन किया है। साता श्रादि प्रकृतियोंके चार पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठबटे चौदह राजू चीत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि देवगति चतुष्कके चार पदोंके बन्धक जीवोंने लोकके श्रासंख्यातवें भाग प्रमाण चीत्रका स्पर्शन किया है। श्रासंब्री जीवोंमें नरकायु, देवायु, वैक्रियक छह श्रीर श्रीदारिक शरीरके सब पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन एकेन्द्रिय जीवोंके समान है। श्रेष प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन एकेन्द्रिय जीवोंके समान है। इस प्रकार स्पर्शन समाप्त हुआ।

#### कालानुगम

७६५. कालानुगमकी श्रपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है-श्रोध और ब्रादेश। श्रोधसे जिन मार्ग-णाओंमें भुजगार, श्रहपतर और अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका परिमाण अनन्त और श्रसंख्यात लोक प्रमाण है, उनका काल सर्वदा है। जिनका परिमाण श्रसंख्यात है, उनका जघन्यकाल एक समय है और उत्क्रष्टकाल श्रावलीके श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण है। जिनका परिमाण संख्यात है, उनका जघन्यकाल एक समय है और उत्क्रष्टकाल संख्यात समय है। श्रवस्थितपदवाले सब जीवोंका काल कालो अप्पप्पणो पगदिकालो काद्व्वो । णवरि जह० एग० । तिण्णिआयुगाणं अवत्त-स्वगा जह० एग०, उक्क० आवलि० असंखर्० । अप्पद० ज० अंतो०, उक्क० पलिदो० असंखर्० । तिरिक्खायु० दोपदा सन्बद्धा । एवं याव अणाहारग ति णेदव्वं ।

एवं कालं समत्तं।

### अंतराणुगमो

७९६. अंतराणुगमेण दुवि०-ओवे० आदे०। ओवे० पंचणा०-णवदंस०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुं०-ओरालि०-तेजा०-क०-वण्ण०४- अगु०-उप०-णिमि०-पंचंत० भुज०-अण्पद०-अवद्वि० णित्थ श्रंतरं। अवत्त० ज० एग०, उक्कस्सेण श्रीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुवंधि०४ सत्त रादिंदियाणि। अपचक्खाणा०४ चोह्स रादिंदियाणि। पचक्खाणा०४ पण्णारस रादिंदियाणि। ओराखि० अंतो०। सेसाणं वासपुधत्तं०,। वेउव्वियछ०-आहारदुगं भुज०-अप्पद०-अवत्त० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवद्वि० णित्थ अंतरं। तिण्णि आयुगाणं अवत्त०-अप्पद० जह० एग०, उक्क० चंदुवीस मुदु०। तिरिक्खायुगस्स दोपदा० णित्थ श्रंतरं। तित्थय० दो पदा जह० एग०, उक्क० अंतो०।

सर्बदा है। इतनी विशेषता है कि जिन मार्गणाओं की राशि भजनीय है, उनके स्रवस्थित पदके वन्धक जीवोंका काल स्रपने - स्रपने प्रकृतिवन्धके कालके समान कहना चाहिए। इतनी विशेषता है कि जघन्यकाल एक समय है। तीन स्रायुत्रोंके स्रवक्तव्यपदके वन्धक जीवोंका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल स्रावलीके स्रसंख्यातवें भाग प्रमाण है। स्रव्यतर पदके वन्धक जीवोंका जघन्यकाल पत्रवेंका अन्तर्मुहूर्त है स्रोर उत्कृष्टकाल पत्यके स्रसंख्यातवें भाग प्रमाण है। तिर्यंच स्रायुके दो पदोंके वन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिये।

इस प्रकार काल समाप्त हुन्ना।

#### अन्तरानुगम

उद्द. अन्तरानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका हैं — श्रोघ श्रीर आदेश। आंघसे पाँच क्रानावरण; नेहें दश नावरण, मिण्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, श्रीदारिक शरीर, तें असशरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघु, उपघात, निर्माण श्रीर पाँच अन्तरायके भुजगार, श्राहप्तर श्रीर अवस्थित पदके बन्धक जीवोंका अन्तरकाल नहीं हैं। अवस्क्रत्यपदके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट अन्तर स्त्यानगृद्धि तीन, मिण्यात्व श्रीर अनन्तानुबन्धी चारका सात दिनरात हैं। अप्रत्याख्यानवरण चारका चौदह दिनरात हैं। प्रत्याख्यानवरण चारका पन्द्रह दिनरात हैं। प्रत्याख्यानावरण चारका पन्द्रह दिनरात हैं, श्रीदारिकशरीरका अन्तर्मुहूर्त हैं श्रीर शेष प्रकृतियोंका वर्षपृथक्तव है। वैक्रियिकछह, श्राहा-स्कृद्धिक भुजगार, अरूपतर श्रीर अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय हैं श्रीर उत्कृष्ट अन्तर अन्तमुहूर्त हैं। अवस्थितपदके बन्धक जीवोंका अन्तरकाल नहीं हैं। तीर्य श्रापुक्ति अवक्तव्य और अरूपतरपदके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय हैं और उत्कृष्ट अन्तर चौबीस मुहूर्त हैं। तिर्यंच श्रायुके दो पदोंके बन्धक जीवोंका अन्तरकाल नहीं हैं। तीर्थंद्वर प्रकृतिके दो पदोंके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर श्रन्तर्मुहूर्त हैं। अवस्थित त्युके बन्धक जीवोंका जघन्य जातर श्रन्तर श्रन्तर श्रन्तर श्रन्तर श्रन्तर श्रन्तर काल नहीं हैं। अवस्थित वर्षक बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर श्रन्तर श्रन्त वर्ष वर्ष श्राह स्तर्म क्राह श्रन्तर श्राह श्रन्तर श्रन्तर श्रन्तर श्राह श्रा

अवद्वि० णत्थि अंतरं । अवत्त० जह० एग०, उक्क० वासपुधत्तं० । सेसाणं चत्तारि पदा णत्थि अंतरं ।

७६७. णिरएस धुविगाणं दो पदा जह० एग०, उक्क० श्रंतो०। अवष्टि० णित्थि श्रंतरं। थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४ तिण्णिपदा णाणावरणभंगो। अवत्त० जह० एग०, उक्क० सत्त रादिंदियाणि। तित्थय० दो पदा जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवष्टि० णित्थ अंतरं। अवत्त० जह० एग०, उक्क० पिलदो० असं०भागो। अथवा जह० एग०, उक्क० वासपुधत्तं०। दो आयु० पगदिअंतरं। सेसाणं तिण्णिपदा जह० एग० उक्क० अंतो। अवष्टि० णित्थि श्रंतरं। एवं सच्विणरयाणं। णवरि सत्तमाए दोगदि—दोआणु०-दोगोदं थीणगिद्धिमंगो।

७६ = तिरिक्खेसु ओघं। पंचिदिय तिरिक्ख ०३ धुविगाणं तिण्णिपदा णिरयगिदभंगो। थीणगि०३-मिच्छ०-अद्वक० ओघं। सेसाणं णिरयगिदभंगो। आयुगाणं पगिदअंतरं। पंचिदियतिरिक्खअपज्ञ० णिरयोघं। एवं सन्वअपज्ज०-विगिलिदि०-बादरपुढवि०-आउ०-तेउ०-वाउ०-वणफिदिपत्तेय०पज्जता। णविरि मणुसअपज्ज० धुविगाणं

समय है और उत्कृष्ट अन्तर वर्षप्रथक्तव हैं। शेष प्रकृतियों के चार पदों के बन्धक जीवोंका अन्तर-काल नहीं है।

७६७. नारिकयोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके दो पदोंके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थितपदके बन्धक जीवोंका अन्तरकाल नहीं है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिण्यात्व और अनन्तानुबन्धी चारके तीन पदोंके बन्धक जीवोंका मंग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर सात दिन्रात है। तीर्थङ्कर प्रकृतिके दो पदोंके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पत्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है, अथवा जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पत्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है, अथवा जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त है। दो आयुओं के दो पदोंके बन्धक जीवों का अन्तरकाल प्रकृतिबन्धके अन्तरकालके समान है। शैप प्रकृतियोंके तीन पदोंके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित पदके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित पदके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित पदके बन्धक जीवोंका अन्तरकाल नहीं है। इसी प्रकार सब नारिकयोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि सातवीं पृथिवीमें दो गति, दो आनुपूर्वी और दो गोत्रका मङ्ग स्त्यानगृद्धि प्रकृतिके समान है।

७६८. तिर्यक्रोंमें कोचके समान मङ्ग हैं। पर्खेन्द्रिय तिर्यक्रित्रिक्से ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पर्दोके बन्धक जीवोंका भङ्ग नरकगतिके समान है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिध्यास्व और त्राठ कषायका भङ्ग अधिके समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग नरकगतिके समान है। आयुओंका भङ्ग प्रकृतिबन्धके अन्तरके समान है। पर्छोन्द्रिय तिर्यक्ष अपर्याप्तकोंमें सामान्य नारिकयोंके समान भङ्ग है। इसी प्रकार सब अपर्याप्तक, विकलेन्द्रिय, बादर प्रथिवीकायिक पर्याप्त, बादर जलकायिक पर्याप्त, बादर अप्रिकायिक पर्याप्त, बादर वायुकायिक पर्याप्त, बनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर पर्याप्त जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि मनुष्य अपर्याप्तकोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पर्दोके बन्धक जीवोंका जवन्य अन्तर एक समय है और उरकृष्ट अन्तर पत्थके असंख्यातवें भाग प्रमाण है।

तिण्णि पदा ज॰ ए॰, उ॰ पिनदो॰ असंखेँ॰ । सेसाणं चत्तारि प॰ ज॰ ए॰, उ॰ पिनदो॰ असंखेँ॰ ।

७६६. मणुस०३ धुनिगाणं दो पदा ज० ए०, उ० अंतो०। अवद्वि० णित्थ अंतरं। अवत्त० ओघं। सेसाणं तिष्णि प० ज० ए०, उ० अंतो०। अवद्वि० णित्थि अंतरं। [आउगाणं पगदिअंतरं।] एवं पंचिदिय-तस०२ पंचमण०-पंचवचि०-इत्थि०-पुरिस०-चक्खुदं०। देवेसु विभंगे णिरयभंगो। कायजोगि-ओरालिय०-णवुंस०-कोधादि०४—मदि०—सुद०-असंज०-अचक्खु०— तिष्णिले०-भवसि०-अव्भवसि०-मिच्छादि०-आहार० ओघं। णवरि धुविगाणं विसेसो णादन्त्रो।

८००. ओरालियमिस्से देवगदि०४ तिष्णि प० ज०ए०, उ० मासपुघ०। तित्थय० तिष्णिप० ज० ए०, उ० वासपुघ०। मिच्छ० अवत्त० ज०ए०, उ० पिछदो० असंखे०। सेसाणं सन्वपदा णित्थ अंतरं। एवं कम्मइ०। वेउन्वियका० णिरयभंगो। वेउन्वियमि० तित्थय० तिष्णिपदा जह० एग०, उक्क० वासपुघ०। सेसाणं सन्वपदा जह० एग०, उक्क० बारस मुहु०। एइंदियतिगस्स चदुवीस मुहु०। मिच्छ० अवत्त० जह० एग०,

होष प्रकृतियोंके चार पदोंके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय हैं ऋौर उत्कृष्ट श्रन्तर पर्ल्यके ऋसंख्यातवें भाग प्रमाण हैं।

०६६. मनुष्यत्रिक्षमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियों के दो पदों के बन्धक जीवोंका जयन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित पदके बन्धक जीवोंका अन्तरकाल नहीं है। अवस्थित पदके बन्धक जीवोंका अन्तरकाल नहीं है। अवस्थित पदके बन्धक जीवोंका ज्ञचन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थितपदके बन्धक जीवोंका अन्तरकाल नहीं है। आयुओंका भक्त प्रकृतिबन्धके अन्तरके समान है। इसी प्रकार पश्चेन्द्रिय-द्विक, त्रसद्विक, पाँच मनोयोगी, पाँच वचनयोगी, स्त्रीवेदी, पुरुषवेदी और चन्नुःदर्शनी जीवोंके जानना चाहिये। देवोंमें और विभक्तकानी जीवोंमें नारिकयोंके समान भक्त है। काययोगी, औदारिक काययोगी, नपुंसकवेदी, क्रोधादि चार कषायवाले, मत्यक्तानी, श्रुताक्कानी, असंयत, अचन्नुः-दर्शनी, तीन लेश्यावाले, भव्य, अभव्य, मिध्यादृष्टि और आहारकोंमें क्रोधके समान भक्त है। इतनी विशेषता है कि ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंका विशेष जानना चाहिये।

प्रवत् श्रीदारिकिमिश्रकाययोगी जीवोंमें देवगति चतुष्कके तीन पदोंके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर मास प्रथक्त है। तीर्थकर प्रकृतिके तीन पदोंके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वर्षप्रथक्त है। मिण्यात्वके अवक्त्यपदके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पर्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। शेष प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीवोंका अन्तरकाल नहीं है। इसीप्रकार कार्मणकाययोगी जीवोंके ज्ञानना चाहिये। वैकियिककाययोगी जीवोंमें नारिकयोंके समान भङ्ग है। वैकियिकिमिश्रकाययोगी जीवोंमें तीर्थकर प्रकृतिके तीन पदोंके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वर्षप्रथक्त है। शेष प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वर्षप्रथक्त है। शेष प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वर्षप्रथक्त बारह मुहूर्त है। एकेन्द्रियित्रकका चौबीस मुहूर्त है। मिण्यात्वके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पत्यके असंख्यातर्थे

उक्क० पलिदो० असंखेँ०। आहार०-आहारमि० सध्वाणं सब्वे भंगा जह०एग०, उक्क० वासपुघ०।

- ८०१. अवगदे० सन्वक्तम्मा० भुज०-अवत्त० जह० एग०, उक्त० वासपुघ०। अप्पद०-श्रवद्वि० जह० एग०, उक्त० छम्मासं०। एवं सुहुमसंप०। णवरि अवत्तव्वं णस्थि अंतरं।
- ८०२. आभि०- सुद०-ओधिणाणी० धुविगाणं तित्थयः मणुसभंगो। दोगदि-दोसरीर-दोअंगो०-वज्जरिस०-[ दो आणु० ] दोण्णि पदा जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० जह० एग०, उक्क० मासपुघ०। सेसाणं तिण्णि प० जह० एग०, उक्क० अंतो०। सन्वाणं अवद्वि० णितथ अंतरं। एवं ओधिदंस०-सम्मादि०-वेदग्सम्मा०। मणपञ्ज० धुविगाणं मणुसि०भंगो। सेसाणं ओधिभंगो। एवं संजदा संजदा संजदा।
- ्र ८०३. सामाइ०-छेदो० धुविगाणं विसेसो णादन्त्रो । परिहारे धुविगाणं भुज०-अप्प० ज० एग०, उक्क० अंतो० । अवद्वि० णत्थि अंतरं । सेसाणं पि एस भंगो० । णवरि अवत्त० विसेसो ।
  - ८०४. तेउए देवगदि०४ भ्रुज०-अप्प० जद्द० एग०, उक्त० अंतो०। अवट्ठि०

भाग प्रमाण है। आहारककाययोगी और आहारकमिश्रकाययोगी जीवोंमें सब प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीवोंका जवन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वर्षग्रथकृत्व है।

- प्तर्श. अपगतवेदी जीवोंमें सब कर्मों के भुजगार और अवक्तव्य पदके वन्धक जीवोंका जयन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वर्ष प्रथक्त हैं। अल्पतर और अवस्थित पदके वन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर छह महीना हैं। इसीप्रकार सूद्रमसाम्परा-यिक संयत जीवोंके जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य पदका अन्तरकाल नहीं है।
- प्रशासिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी ख्रौर ख्रविधिज्ञानी जीवोंमें श्रुववन्यवाली प्रकृतियाँ ख्रौर तीर्थकर प्रकृतिके बन्धक जीवोंका भङ्ग मनुष्योंके समान हैं। दो गित, दो शारीर, दो आङ्गापाङ्ग, बक्षक्रध्यमनाराचसंहनन ख्रौर दो खानुपूर्विक दो पदोंके बन्धक जीवोंका जधन्य अन्तर एक समय है ख्रौर उत्कृष्ट खन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका जधन्य अन्तर एक समय है ख्रौर उत्कृष्ट अन्तर मास पृथक्त्य है। श्रेष प्रकृतियोंके तीन पदोंके बन्धक जीवोंका जधन्य अन्तर एक समय है ख्रौर उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। सब प्रकृतियोंके श्रवस्थित पदका अन्तरकाल नहीं है। इसी प्रकृत अवधिद्रश्ती, सम्यग्दृष्टि ख्रौर वेदकसम्यग्दृष्टि जीवोंके जानना चाहिये। मनःपर्ययज्ञानी जीवोंके ध्रुव बन्धवाली प्रकृतियोंका भङ्ग मनुष्यनियोंके समान है। श्रेष प्रकृतियोंका भङ्ग अवधिद्रश्ती जीवोंके समान है। इसी प्रकार संयत ख्रौर संयतासंयत जीवोंके जानना चाहिये।
- =०३. सामायिकसंयत त्रौर छेदोपस्थापनासंयत जीवोंमें ध्रुववन्धवाली प्रकृतियोंक का विशेष जानना चाहिये। परिहारिवशुद्धि संयत जीवोंमें ध्रुववन्धवाली प्रकृतियोंके भुजगार और अल्पतर पदके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्भुहूर्त है। अवस्थितपदके बन्धक जीवोंका अन्तरकाल नहीं है। शेष प्रकृतियोंके बन्धक जीवोंका भी यही भङ्ग है। किन्तु अवक्तव्य पदमें कुछ विशेषता है।
  - ८०४. पीतलेश्यावाले जीवोंमें देवगति चतुष्क के मुजगार और अल्पतर पदके बन्धक

णित्य अंतरं । अवस्त जह एग ०, उक्क मासपुध । ओरालिय ० अवस्त जह ० एग ०, उक्क अडदालीसं ग्रुहु ० । मिन्छ ० अवस्त जह ० एग ०, उक्क अस्स रादिंदि-याणि । सेसाणं मणुसोघो । विसेसो णाद न्वो । पम्माए देवगदि ०४ तेउभंगो । ओरालि ०-ओरालि ० अंगो ० अवस्त जह ० एग ०, उक्क ० दिवसपुध ० । सेसाणं च तेउ-भंगो । सुकाए मणुसगदि-देवगदि-दोसरीर-दोअंगो ० —दो आणु ० ओधिभंगो । सेसाणं मणुसि ० भंगो ।

८०५. खड्गे धुविगाणं मणुसगदि-देवगदि-दोसरीर-दोअंगो०-वज्जरिस०-दो आणु० अवत्त० जह० एग०, उक्क० वासपुध० । सेसाणं ओधिभंगो । उवसम० पंचणा-णावरणा० तिण्णि पदा जह० एग०, उक्क० सत्त रादिंदियाणि । एवं सन्वाणं । णवरि आहार०-आहार०अंगो०-तित्थय० भुज०-अप्पद०-अविष्ठ०-अवत्त० जह० एग०, उक्क० वासपुध० । सेसाणं अवत्त० ओधं ।

८०६. सासग्रे धुविगाणं तिण्णिप० जह० एग०, उक्क० पलिदो० असंखे०। सेसाग्रं चत्तारि प० ज० एग०, उक्क० पलिदो० असंखे०। एवं सम्मामि०। सण्णि०

जीवोंका ज्ञान्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित पदके बन्धक जीवोंका अन्तरकाल नहीं है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका ज्ञान्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर मासपृथक्त्व है। औदारिक शरीरके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका ज्ञान्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर मासपृथक्त्व है। औदारिक शरीरके अवक्तव्य पदके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका ज्ञान्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर सात दिन-रात है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य मनुष्योंके समान है। यहाँ पर जो विशेष हो वह जानना चाहिये। पद्मलेश्यावाले जीवोंमें देवगति चतुष्कका भङ्ग पीत लेश्याके समान है। औदारिक शरीर और औदारिक आङ्गोपाङ्गके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका ज्ञान्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दिवस पृथक्त्व है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग पीतलेश्याके समान है। शुक्ललेश्यावाले जीवोंमें मनुष्यगति, देवगति, दो शाङ्गोपाङ्ग और दो आनुपूर्वीका भङ्ग अवधिज्ञानी जीवोंके समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग पातलेश्याके समान है।

द्वाप्यकसम्यग्दृष्टि जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियों, मनुष्यगित, देवगित, दो शारीर, दो आङ्गोपाङ्ग, वल्रऋषभनाराचसंहनन श्रीर दो आनुपूर्वीके श्रवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर वर्षपृथकत्व है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग श्रवधिज्ञानी जीवोंके समान है। उपशम सम्यग्दृष्टि जीवोंमें पाँच ज्ञानावरणके तीन पदोंके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर सात दिन-रात है। इसी प्रकार सब प्रकृतियोंका जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि श्राहारक शरीर, आहारक श्राङ्गोपाङ्ग श्रीर तीर्थङ्कर प्रकृतिके भुजगार, श्रव्यतर, श्रवस्थित श्रीर श्रवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका जघन्य श्रन्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथकत्व है। शेष प्रकृतियोंके श्रवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका श्रन्तरकाल ओषके समान है।

५०६. सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पदोंके बन्धक जीवोंका जधन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। शेप प्रकृतियोंके

पंचिंदियमंगो । असण्णीसु वेउव्वियछ०-ओरासि० तिरिक्सोघं । सेसाणं ओषं । अणाहार० कम्मइगमंगो । एवं अंतरं समत्तं ।

# भावाणुगमो

८०७. भावाणुगमेण दुवि०-ओघे० आदे० । श्रोघे० पंचणा० चत्तारिपदा बंधमा ति को भावो ? ओदइगो भावो। एवं सञ्वपगदीणं सञ्वत्थ खेदव्वं याव अणाहारण ति । एवं भावं समत्तं

# अपाबहुआणुगमो

८०८. अप्पाबहुगं दुवि०-ओघे० आदे०। ओघे० पंचणा०-णवदंसणा-मिच्छ०-सोस्तरक०-भय-दु०-ओरालि०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०-उप०-णिमि०- पंचंत० सच्वत्थोवा अवत्तव्वबंधगा। अप्पद० अणंतगु०। श्रुजागारबंध० विसे०। अवद्वि० असंखे०। दोवेदणी०-सत्तणोक०-दोगदि-पंचिदि०-छस्संठा०-ओरालि० अंगो०-छस्संघ०-दोआणु०-पर०-उस्सा०-उज्जो०-दोविहा०-तस-बादर-पज्जतापज्जत-पत्ते०-थिरा-दिछयुग०-दोगोद० सव्वत्थोवा अवत्त०। अप्पद० संखेज्ज०। श्रुज० विसे०। अवद्वि० असंखेज्ज०। चदुआयु० सव्वत्थोवा अवत्त०। अप्पद० असंखेठ। वेडव्वियछ० सव्व-

चार पदोंके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पत्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। इसी प्रकार सम्यग्मिध्यादृष्टि जीवोंके जानना चाहिये। संक्षियोंमें प्रक्लेन्द्रियोंके समान भङ्ग है। असंक्षियोंमें नैक्रियिक छह और औदारिक श्रीरका भङ्ग सामन्य तिर्यक्कोंके समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओधके समान है। अनाहारकोंमें कार्मणकाययोगी जीवोंके समान भङ्ग है। इस प्रकार अन्तरकाल समाप्त हुआ।

#### भावातुगम

८०७. भावानुगमकी अपेता निर्देश दो प्रकारका है—श्रोघ और आदेश। श्रोधसे पाँच ज्ञानावरणके चार पदिके बन्धक जीवोंका कौनसा भाव है ? औदियक भाव है। इसी प्रकार सब प्रकृतियोंका सर्वत्र श्रनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिये। इसप्रकार भावानुगम समाप्त हुआ।

#### अल्पबहुत्वानुगम

प्रवाद स्वाद दो प्रकारका है— स्रोघ और स्रादेश । स्रोघसे पाँच झानावरण, नौ दर्शनावरण, मिध्यास्व, सोलह कपाय, भय, जुगुण्सा, स्रोदारिक शरीर, तैंजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्ण-चतुष्क, स्रगुरुलघु, उपघात, निर्माण और पाँच स्नन्तरायके स्रवक्तव्यपदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे अल्पतरपदके बन्धक जीव स्रात्म स्रोदक हैं। इनसे स्रवस्थित पदके बन्धक जीव स्रातं स्रोतं हैं। इनसे स्रवस्थित पदके बन्धक जीव स्रातं स्रोतं हैं। दो वेदनीय, सात नोकषाय, दो गति, पद्धी-निद्रयज्ञाति, छह संस्थान, औदारिक खाङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, दो स्रातुपूर्वी, परघात, उच्छ्वास, उद्योत, दो विहायोगिति, त्रस, बादर, पर्याप्त, स्रायंत्र, प्रत्येक, स्थिर आदि छह युगल श्रीर दो गोत्रके स्रवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे स्रवस्थित पदके बन्धक जीव संख्यात गुणे हैं। इनसे भुजगार पदके बन्धक जीव विशोध अधिक हैं। इनसे स्रवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। चार स्रायुस्त्रोंके स्रवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे स्रवस्थत पदके सन्धक जीव

त्योगा अवस्त । भुज - अप्पद ० दो वि सस्सि। संखेंज्ज ० । अवडि ० असंखें ० । तिकिन जादी देवगदिभंगो । एइंदि ० - आदाव - थावर - सुदुम - साधार ० सन्वत्थो ० अवस्त ० । भुज ० संखेंज्ज ० । अप्पद ० थिसे ० । अवडि ० असंखेंज्ज ० । [ आहार ० -] आहार ० अंगो ० सन्वत्थो ० अवस्त ० । दोपदा ० संखेंज्ज ० । अवडि ० संखेंज्ज ० । तित्थय ० सन्वत्थो ० अवस्त ० । दोपदा ० संखेंज्ज ० । अवडि ० असंखेंज्ज ० ।

८०६. णिरए धुविगाणं सन्वत्थोवा धुज०-अप्पद०। अवद्वि० असंखे०। थीणगिद्धि०२-मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४-तित्थय० सन्वत्थोवा अवत्त०। धुज०-अप्पद०
असंखेज्ज०। अवद्वि० असंखे०। सेसाणं सन्वत्थोवा अवत्त०। धुज०-अप्पद० संखेजि०।
अवद्वि० असंखेज्ज०। तिरिक्खायु० ओघं। मणुसायु० सन्वत्थो० अवत्त०। अप्पद०
संखेज्ज०। एवं सत्तसु पुढवीसु। णवरि सत्तमाए दोगदी-दोआणु०-दोगोद०
थीणगिद्धिभंगो।

८१०. तिरिक्खेसु धुविगाणं सन्वत्थो० अप्पद० । सुज० विसे० । अवट्टि० असं-खेर्ज्ज० । सेसाणं ओघं । पंचिदियतिरिक्खेसु धुविगाणं णिरयभंगो । थीणगिद्धि०३-

पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। वैक्रियिक छहके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे मुजगार और अल्पतर पदके बन्धक जीव दोनों ही समान होकर संख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। तीन जातियोंका भक्त देवगतिके समान है। एके-निद्रय जाति, आतप, स्थावर, सूद्म और साधारण प्रकृतिके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे भुजगार पदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे अल्पतर पदके बन्धक जीव विशेष अधिक हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। आहारकशारीर और आहारक आङ्गोपाङ्गके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे दो पदोंके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। तीर्थद्वर प्रकृतिके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। तीर्थद्वर प्रकृतिके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक डें। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं।

८०६. नारिकयों में प्रुवबन्धवाली प्रकृतियों के मुजगार और अल्पतर पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। स्त्यानगृद्धि तीन, मिध्यात्व, अनन्ता- नुबन्धी चार और तीर्थंकर प्रकृतिके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे भुजगार और अल्पतर पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। शेष प्रकृतियों के अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे भुजगार और अल्पतर पदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। तिर्थंकायुका मक्त ओधके समान है। मनुष्यायुके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे अल्पतर पदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इसी प्रकार सातों प्रथिवियों जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि सातवीं प्रथिवीमें दो गति, दो आनुपूर्वी और दो गोत्रका भक्त स्त्यानगृद्धिके समान है।

म्१०. तिर्यक्रोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके अस्पतर पदके वन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे भुजगार पदके बन्धक जीव विशेष अधिक हैं। इनसे अवस्थित पदके वन्धक जीव असंख्यात गुणे हैं। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग अधिक समान है। पद्मेन्द्रिय तिर्यक्रोंमें ध्रुववन्धवाली प्रकृतियोंका मिन्छ०-अडुक०-ओरालि० सन्वतथो० अवत्त०। भुज०-अप्पद० असंखेर्जज०। अवद्वि० असंखेर्जज०। सेसाणं सन्वतथो० अवत्त०। दोपदा संखेर्जजगु०। अवद्वि० असंखेर्जज०। पंचिदियतिरिक्खपज्ज०-पंचिदियतिरिक्खोणिणीसु ध्विनाणं पंचिदियतिरिक्खोणं। णवरि ओरालि० सादभंगो। सेसाणं पि सादभंगो। पंचिदियतिरिक्खअपज्जत्तगेसु ध्विनगणं सेसाणं च णिरयोणं।

- ८११. मणुसेसु धुविगाणं ओरालि० सन्वत्थो० अवत्त०। भुज०-अप्पद० असंखेर्जज०। असंखेर्जज०। सेसाणं पंचिदियतिरिक्सभंगो। वेउन्वियष्ठ०- आहारदुग-तित्थय० संखेर्जजगुणं कादव्वं। मणुसपन्जत्त-मणुसिणीसु तं चेव। णविर संखेर्जजगुणं कादव्वं। मणुसपन्जत्त-मणुसिणीसु तं चेव। णविर संखेर्जज०। मणुसअपज्ज०-सव्वएइंदि०-सव्वविगलिंदि०-पंचकायाणं पंचिदि०अपज्ज० तिरिक्सअपज्जत्तमंगो। देवाणं णिरयमंगो।
- ८१२. पंचिदिएसु धुविगाणं ओरालि० सञ्बत्यो० अवत्त०। शुज०-अप्प० दोपदा असंखे० । अवद्वि० असंखे० । मणुसग०-मणुसाणु०-उचा० ओर्घ । सेसं पंचिदियति-रिक्खभंगो । पंचिदियपज्जत्तगेसु ओरालि० सादमंगो। सेसं तं चेव।

भङ्ग नारिकयों के समान है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यास्त्र, आठ कषाय और औदारिक शरीरके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे भुजगार और अल्पतर पदके बन्धक जीव असंख्यातगुरो हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुरो हैं। शेष प्रकृतियों अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे वो पदों बन्धक जीव संख्यातगुरो हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव सांख्यातगुरो हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुरो हैं। एख्रेन्द्रिय तिर्यक्क्षपर्याप्तक और पद्धेन्द्रिय तिर्यक्क्षयोगिनी जीवोमें ध्रुव बन्धवाली प्रकृतियोंका भङ्ग सामन्य पद्धेन्द्रिय तिर्यक्क्षोंके समान है। इतनी विशेषता है कि औदानिक शरीरका भङ्ग साता वेदनीयके समान है। शेष प्रकृतियोंका भा भङ्ग साता वेदनीयके समान है। प्रवचिद्रय तिर्यक्क्ष अपर्याप्तकोंमें ध्रुवबन्धवाली और शेष प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य नारिकयोंके समान है।

- दश् मनुष्योंमें ध्रुववन्धवाली प्रकृतियों और श्रोदारिक शरीरके श्रवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे भुजगार और श्रवपतर पदके बन्धक जीव श्रसंख्यातगुर्ण हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव श्रसंख्यातगुर्ण हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव श्रसंख्यातगुर्ण हैं। शेष प्रकृतियोंका सङ्ग प्रश्लेन्द्रिय तिर्यक्रोंके समान है। किन्तु वैकियिक छह, श्राहारकद्विक श्रोर तीर्थङ्करके पदोंको संख्यातगुणा करना चाहिये। मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनयोंमें इसी प्रकारसे ही जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि यहाँ संख्यात गुणा कहना चाहिये। मनुष्य अपर्याप्तक, सब एकेन्द्रिय, सब विकलेन्द्रिय, पाँच स्थावरकाय श्रीर पश्चेन्द्रिय श्रपर्याप्तकोंका भङ्ग तिर्यक्च श्रपर्याप्तकोंके समान है। देवोंमें नारिकयोंके समान सङ्ग है।
- =१२. पद्मेन्द्रियों में ध्रुयबन्धवाली प्रकृतियों और श्रौदारिक शरीरके श्रवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे भुजगार और अल्पतर इन दो पदोंके बन्धक जीव श्रसंख्यातर्गुणे हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव श्रसंख्यातर्गुणे हैं। मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगोत्र का भङ्ग श्रोचके समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग पञ्चन्द्रिय तियेश्चोंके समान है। पञ्चन्द्रिय पर्याप्रकोंमें श्रौदारिक शरीरका भङ्ग साता बेदनीयके समान है। शेष भंग उसी प्रकार हैं।

- ८१३. तसेसु वेउव्वियल ०-आहारदुगं [ मणुसभंगो । ] आदाव-धावर-सुदुम-साधार ० देवगदिभंगो । सेसाणं ओघं । णवरि यम्हि अणंतगुणं तम्हि असंखेज्ज ० । एवं पज्जत्त । णवरि ओरालि० सादभंगो ।
- ८१४. तसअपञ्चत्त० धुविगाणं सन्वत्थो० धुज०। अप्प० विसे०। अवहि० असंखेंज्ज०। सादासादा०-पंचणोक०-तिरिक्खग०-पंचिदि०-हुंडसं०-ओरालि०अंगो०-असंपत्त०-तिरिक्खाणु०-तस०-बादर-पज्जत-पत्ते०-अधिरादिपंच-णीचा० सम्बत्थो० अवत्त०। अप्पद० संखेंज्ज०। भुज० विसे०। अवहि० असंखें०। मणुसगदि-मणुसाणु० ओघं। बीहंदि० सम्बत्थो० अवत्त०। भुज० संखेंज्ज०। अप्पद० विसे०। अवहि० असंखेंज्ज०। सेसं तिरिक्खमंगो।
- ८१५. पंचमण०-तिष्णिवचि० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुं०-देवगदि-ओरालि०-वेउच्चि०-तेजा०-क०-वेउच्चि०अंगो० वण्ण०४-देवाणु०-अगु०-[ उप०-] बादर-पज्जत्त-पत्तेय०-णिमि०-तित्थय०-पंचंत० सव्वत्थो० अवत्त०। भ्रज०-अप्पद० असंखेंज्ज०। अवद्वि० असंखेंज्ज०। चदुआयु०-आहारदुगं ओघं। सेसाणं सव्वत्थो०

८१३. त्रसोमं वैकियिक छह और आहारक द्विकेश भङ्ग मनुष्योंक समान है। आतप, स्थावर, सूद्म और साधारण प्रकृतिका भङ्ग देवगितके समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग आंघके समान है। इतनी विशेषता है कि जहाँ पर अनन्तगुणा कहा है, वहाँ पर असंख्यातगुणा कहना चाहिये। इसी प्रकार पर्याप्त असोंके जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि औदारिक शरीरका भङ्ग साता-वेदनीयके समान है।

दश्यः त्रस अपर्याप्तकों में ध्रुव बन्धवाली प्रकृतियों के भुजगार पदके बन्धक जीव सबसे स्तीक हैं। इनसे अल्पतर पदके बन्धक जीव विशेष अधिक हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुऐ। हैं। सातावेदनीय, असातावेदनीय, पाँच नोकषाय, तिर्येख्वगति, पख्रोन्द्रिय जाति, दुण्ड संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासुपाटिका संहनन, तिर्येख्वगत्यानुपूर्वी, त्रस, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, अस्थिर आदि पाँच और नीचगोत्रके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे अल्पतर पदके बन्धक जीव संख्यातगुऐ। हैं। इनसे मुजगार पदके बन्धक जीव विशेष अधिक हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुऐ। हैं। मनुष्य गति और मनुष्य गत्यानुपूर्वीका भङ्ग श्रोधके समान है। द्वीन्द्रिय जातिके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे भुजगार पदके बन्धक जीव संख्यातगुऐ। हैं। इनसे अल्पतर पदके बन्धक जीव विशेष अधिक हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव संख्यातगुऐ। हैं। इनसे अल्पतर पदके बन्धक जीव विशेष अधिक हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव श्रमंख्यातगुऐ। हैं। श्रेष प्रकृतियोंका भङ्ग तिर्यक्रोंके समान है।

द्वारा हुन देश, पाँच मनोयोगी और तीन वचनयोगी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, नी दर्शनावरण, मिध्यास्व,सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, देवगित, औदारिक शरीर, वैकियिक शरीर, तैजस शरीर,कार्मण शरीर, वैकियिक आङ्गोपांगं, वर्णचतुष्क, देवगित्यासुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघात, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, निर्माण, तीर्थंकर और पाँच अन्तरायके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे भुजगार और अल्पतर पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। चार आयु और आहारकद्विकका भंग आघके समान है। शेप प्रकृतियोंके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे भुजगार और अल्पतर पदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे भुजगार और अल्पतर पदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थित

अवत्तः । भ्रुज्ञः अप्पदः संवेज्जः । अवद्विः असंवेज्जः । दोवचिः तसपज्जत्तमंगो । णवरि भ्रुजगार-अप्पदरं समं कादव्वं ।

=१६. कायजोगि अोगं। ओरालिय वितिक्खोगं। णगरि भुज ०-अप्पद ० सिरसं । णगरि तित्थय ० मणुसिमंगो। ओरालियमि ० धुनिगाणं पंचिदियतिरिक्सभंगो। एइंदि ० आदाव-थावर-सुदुम-साधार ० सञ्जत्थो ० अवत्त ०। भुज ० संखें ज्ज ०। अप्पद ० विसे ०। अगद्दि ० असंखें ०। मणुस ०-मणुसाणु ०-उच्चा ० ओघं ०। सेसाणं पंचिदियति - रिक्सभंगो। णगरि देवगदि ० ४ सन्वत्थोगा भुज ०। अप्पद ०-अगद्दि ० संखें ज्ज ०। एवं तित्थय ०। अवत्त ० णिरथ।

८१७, वेउव्वि०-वेउव्वियमिस्स० देवोघं। णवरि थीणगिद्धि०३-अणंताणुवंघि०४ अवत्त० णित्थ । आहार०-आहारमि० सच्वट्ठभंगो । कम्मइ० ओरालियमिस्सभंगो । णवरि अत्थढो विसेसो० ।

८१८. इत्थिवे० धुवि० तिरिक्खअपज्जन्तमंगो । पंचदंस०-मिच्छ०-बारसक०-भय-दुगुं०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०-उप०-णिमि० सन्त्रत्थोवा अवत्त०-भुज० । अण्पद० पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं । दो बचनयोगी जीवोंका मंग त्रस पर्यप्तिकोंके समान हैं । इतनी

विशेषता है कि इनमें भूजगार श्रीर श्रन्पतरपदकी मुख्यतासे श्रन्पबहत्व एक समान कहना चाहिए।

म्१६. काययोगी जीवोंमें श्रह्भबहुत्व श्रोषके समान है। श्रीदारिक काययोगी जीवोंमें सामान्य तिर्यक्कोंके समान है। इतनी विशेषता है कि इनमें मुजगार श्रोर श्रह्मतर पदकी मुख्यतासे श्रह्मबहुत्व एक समान कहना चाहिए। उसमें भी इतनी विशेषता श्रोर है कि तीर्थंकर प्रकृतिका भंग मनुष्यिनियोंके समान है। श्रीदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें ध्रुववन्धवाली प्रकृतियोंका भंग पंचेन्द्रिय तिर्यक्कोंके समान है। एकेन्द्रिय जाति, श्रातप, स्थावर, सूद्धम श्रोर साधारण प्रकृतिके श्रवक्तव्यपदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे भुजगार पदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे श्रवस्थित पदके बन्धक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। इनसे श्रवस्थित पदके बन्धक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी श्रोर उच्चगोत्रका मंग ओधके समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग पश्चेन्द्रिय तिर्यक्कोंके समान है। इतनी विशेषता है कि देवगतिचतुष्कके भुजगार पदके बन्धक जीव सबके स्ताक हैं। इनसे श्रव्यतर और श्रवस्थित पदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इसी प्रकार तीर्थंकर प्रकृतिकी श्रपेक्षा अस्पबहुत्व जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसका श्रवक्त्रय पद नहीं है।

=१७. वैकियिककाययोगी और वैकियिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें श्रास्पबहुत्व सामान्य देवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि स्त्यानगृद्धि तीन और श्रामन्तानुबन्धी चारका श्रावक्तव्य पद नहीं है। श्राहारक काययोगी और श्राहारक मिश्रकाययोगी जीवोंमें सर्वार्थसिद्धिके देवोंके समान श्राह्मबहुत्व है। कार्मणकाययोगी जीवोंमें औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंके समान अल्पबहुत्व है। इतनी विशेषता है कि इस विषयमें वस्तुतः जो विशेषता हो वह जान लेनी चाहिये।

५१८. स्विवेदी जीवोंमें ध्रुववन्धवाली प्रकृतियोंका मङ्ग तिर्येख्न अपर्याप्तकोंके समान है। पाँच दर्शनावरण, मिथ्यात्व, बारह कषाय, भय, जुगुरसा, तैजसरारीर, कार्मणशरीर, वर्णचतुरक, अगुरुल्या, उपचात और निर्माणके अवक्तव्य और भुजगार पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे अस्पतर पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे

असंखें । अवड्डि० असंखेर्जेज०। आहारदुग-तित्थय० मणुसभंगो । सेसाणं पंचिदियभंगो । एवं पुरिसवेदे वि । णवरि तित्थयरस्स ओघं ।

=१९. णवुंसमे धुविमाणं सव्वत्थो० अप्प० । भुज० विसे० । अवद्वि० असंखे० । पंचदंस० मिच्छ० बारसक० भय-दुर्गु० ओरालि० तेजा० क० वण्ण०४ अगु० उप० - णिमि० सम्बत्थो० अवत्त० । अप्पद० अणंतगु० । भुज० विसे० । अवद्वि० असंखेज्ज० । इत्थिवे० पुरिस० णिरयभंगो । सेसाणं ओधं । अवगदवे० सम्बपगदीणं सम्बत्थो० अवत्त० । भुज० संखेज्ज० । अप्पद० संखेज्ज० । अवद्वि० संखेज्ज० ।

८२०. कोधकसाए धुविगाणं णवुंसगभंगो । सेसाणं ओघं । एवं माण-माया-सोभाणं ।

८२१. मदि०-सुद्द० धुविगाणं तिरिक्खोघं। मिच्छ० ओरालि० सन्तरथो० अवत्त०। अप्पद० अणंतगु०। भुज० विसे०। अवद्वि० असंखेंज्ज०। सेसाणं ओघं। विभंगे धुविगाणं देवोघं। मिच्छ०-देवगदि०-ओरालि०-वेउच्वि०-नेउच्विअंगो०-देवाणु०-पर०- उस्सा०-बादर-पज्जत्त-पत्तेय० सच्चत्थो० अवत्त०। भुज०-अप्प० असंखेंज्जगु०। अवद्वि०

हैं। आहारकद्विक और तीर्थंकर प्रकृतिका भङ्ग मनुष्योंके समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग पर्छ्वन्द्रियोंके समान है। इसी प्रकार पुरुषवेदी जीवोंमें भी जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि इनमें तीर्थंकर प्रकृतिका भङ्ग त्रोघके समान है।

दश्ह. नपुंसकवेदी जीवोंमें घुववन्धवाली प्रकृतियोंके अरुपतर पदके बन्धक जीव सबसे हतोक हैं। इनसे अजार पदके बन्धक जीव विशेष अधिक हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। पाँच दर्शनावरण, मिथ्यात्व, बारह कषाय, भय, जुगुप्सा, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुतचु, उपघात और निर्माणके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे हतोक हैं। इनसे अरुपतर पदके बन्धक जीव अनन्तगुणे हैं। इनसे अजगार पदके बन्धक जीव विशेष अधिक हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। खीवेद और पुरुष-वेदका मङ्ग नारिकयोंके समान है। शेष प्रकृतियोंका मङ्ग ओघके समान है। अपगतवेदी जीवोंमें सब प्रकृतियोंके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे हतोक हैं। इनसे अजगार पदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे अल्पतर पदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे अल्पतर पदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं।

द्दरः क्रोध कषायवाले जीवोंमें ध्रुवक्धवाली प्रकृतियोंका मङ्ग नपुंसकोंके समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है। इसी प्रकार मान, माया त्रौर लोभ कषायवाले जीवोंके जानना चाहिये।

दर मत्यझानी और श्रुताज्ञानी जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंका भक्न सामान्य तिर्युक्रोंके समान है। मिथ्यात्व और औदारिक शरीरके अवक्तन्य परके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे अल्पतर परके बन्धक जीव अनन्तगुणे हैं। इनसे भुजगार परके बन्धक जीव विशेष अधिक हैं। इनसे अवस्थित परके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। शेष प्रकृतियोंका भक्न ओघके समान है। विभक्षज्ञानी जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंका भक्न सामान्य देवोंके समान है। मिथ्यात्व, देवगति, औदारिक शरीर, वैक्रियिक शरीर, वैक्रियक आक्नोपाक्न, देवगत्यानुपूर्वी, परघात, उच्छ्वास, बादर, पर्याप्त और प्रत्येकके अवक्तन्य परके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे भुजगार और अल्पतर परके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थित परके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। शेष

## असंर्के । सेसाणं पंचिदियमंगी ।

- ८२२. आभि०-सुद्०-ओधि० पंचणा०-छदंसणा०-बारसक०-पुरिस०-भय०-दु०-दोगदि-पंचिदि० चत्तारिसरीर-समचदु०-दोअंगो० वज्जरि०-वण्ण०४-दोआणु०-अगु०४ पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदेँ०-णिमि०-तित्थय०-उचा० पंचंत० सम्बन्धो० अवत्त०। भुज०-अप्पद० असंखेँ०। अवट्टि० असंखेँ०। सादादिबारस० मणुसमंगो। मणुसायु०-देवायुग-आहारदुगं ओधं।
- ८२३. मणपज्जन० सन्त्रकम्माणं सन्त्रतथो० अवत्त०। दोपदा० संखेजज०। अवद्वि० संखेजज०। दो आयु० मणुसि०भंगो। एवं संजद०।
- ८२४. सामाइ० छेदोव० धुविगाणं सञ्बत्यो० भुज०-अप्पद०। अवद्वि० संखेज ० १ सेसाणं मणपज्जवभंगो । परिहार०[ आहार-] कायजोगिभंगो । णवरि आहारदुगं अत्थि । सुद्धुमसंप० सञ्चाणं सञ्बत्थो० भुज०। अप्प० संखेज्ज०। अवद्वि० संखेज्ज०। संजदा-संजद० धुविगाणं सञ्बत्थो भुज०-अप्पद०। अवद्वि० असंखेज्ज०। सेसाणं ओधिभंगो । णवरि तित्थय० मणुसि०भंगो । असंजद० सञ्चपगदीणं ओघं।

#### प्रकृतियोंका भङ्ग पञ्चोन्द्रयोंके समान है।

दर्शनावरण, बारह कपाय, पुरुषवेद, भय, जुगुप्सा,दो गति,पश्चेन्द्रिय जाति,चार शरीर, समयतुरस्तरं-स्थान, दो आङ्गोपाङ्ग, बअऋषभनाराचसंहनन, वर्णचतुष्क, दो आनुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, त्रस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण, तीर्थंकर, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे भुजगार और अस्पतर पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। साता आदि बारह प्रकृतियोंका मङ्ग मनुष्योंके समान है। मनुष्यायु, देवायु और आहारकद्विकका मङ्ग ओघके समान है।

५२३. मनःपर्ययज्ञानी जीवोंमें सब कमोंके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे दो पदोंके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। दो श्रायुओंका भङ्ग मनुष्यनियोंके समान है। इसी प्रकार संयत जीवोंके जानना चाहिये।

५२४. सामायिकसंयत और ह्रेदोपस्थापनासंयत जीवोंमें ध्रुववन्धवाली प्रकृतियोंके भुजगार और अल्पतर पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग मनःपर्ययद्यानी जीवोंके समान है। परिहारविशुद्धि संयत जीवोंका भङ्ग आहारक काययोगी जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि इनमें आहारकि है। सूद्रमसाम्परायिक संयत जीवोंमें सब प्रकृतियोंके भुजगार पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे अल्पतर पदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। संयतासंयत जीवोंमें ध्रुववन्धवाली प्रकृतियोंके भुजगार और अल्पतर पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग अवधिज्ञानी जीवोंके समान है। इससंयतोंमें सब प्रकृतियोंका भङ्ग आंघके समान है। असंयतोंमें सब प्रकृतियोंका भङ्ग आंघके समान है।

८२५. दक्खुदंस० तसपज्जत्तर्भगो । अचक्खुदं० श्रोघं । ओधिदं० ओधि-णाणिभंगो ।

८२६. किण्ण णील काऊसु तिरिक्खोघं । णवरि किण्ण-णीलासु तित्थय० मणुसि-भंगो । काऊए णिरयभंगो ।

८२७. तेऊए धुविगाणं सन्वत्थो० भुज०-अप्प०। अवट्टि० असंखेज्ज०। थीण-गिद्धि०३-मिन्छ०-बारसक०-देवगदि०४-ओरालि०-तित्थय० सन्वत्थो० अवत्त०। भुज०-अप्प० असंखे०। अवट्टि० असंखे०। सेसाणं सन्वत्थोवा अवत्त०। भुज०-अप्प० संखेज्ज०। अवट्टि० असंखेज्ज०। आहारदुगं ओषं। तिरिक्ख-देवायु० विभंग-भंगो। मणुसायु० देवभंगो। एवं पम्माए वि। णवरि ओरालि०अंगो देवगदिभंगो।

द्धरः, सुक्षाए पंचणा०-णवदंस०-मिच्छत्त ०-सोलसक०-भय-दुगुं०-दोगदि-पंचिदि०-चदुसरीर-दोश्रंगो० वण्ण०४-दोशाणु०-अगु०४-णिमि० तित्थय०-पंचंत० सञ्वत्थोवा अवत्त० । भुज०-अप्पद० असंखेज० । अवट्टि० असंखेज० । सेसाणं पम्माए भंगो । दोशायु० मणुसि०भंगो ।

मर्प. चत्तुदर्शनवाले जीवोंमें त्रसपर्याप्तकोंके समान भङ्ग है। अवज्ञःदर्शनवाले जीवोंमें स्रोघके समान भङ्ग है। अवधिदर्शनवाले जीवोंमें अवधिज्ञानी जीवोंके समान भङ्ग है।

८२६. कृष्ण, नील और कापोत लेश्यावाले जीवोंमें सामान्य तिर्यख्रोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि कृष्ण और नील लेश्यावाले जीवोंमें तीर्थंकर प्रकृतिका भङ्ग मनुष्यिनियोंके समान है। कापोत लेश्यावाले जीवोंमें तीर्थंकर प्रकृतिका भङ्ग नारिकयोंके समान है।

द्रश्. पीत लेश्यावाले जीवोंमें ध्रुववन्धवाली प्रकृतियोंके भुजगार श्रीर अल्पतर पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे श्रवस्थित पदके बन्धक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व, वारह कवाय, देवगित चतुष्क, श्रीदारिक शरीर श्रीर तीर्थकर प्रकृतिके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे भुजगार श्रीर श्रहित प्रकृतियोंके श्रवक्तव्य पदके बन्धक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। शेष प्रकृतियोंके श्रवक्तव्य पदके बन्धक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। शेष प्रकृतियोंके श्रवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे भुजगार श्रीर अल्पतर पदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे श्रवस्थित पदके बन्धक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। श्राहारकद्विकका भद्ग श्रोधके समान है। तिर्यक्रायु श्रीर देवायुका भद्ग विभन्नशानियोंके समान है। तिर्यक्रायु श्रीर देवायुका भद्ग विभन्नशानियोंके समान है। इसी प्रकार पद्मलेश्याव जीवोंमें भी जानना चाहिये। इतनी विशोषता है कि श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्गका भद्ग देवगितिके समान है।

दश्द. शुक्रलेश्यावाले जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, नो दर्शनावरण, मिध्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुष्सा, दो गति, पश्चेन्द्रिय जाति, चार शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, दो आनुपूर्वी, आगुरुलघु चतुष्क, निर्माण, तीर्थकर और पाँच अन्तरायके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे भुजगार और अल्पतर पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। शोप प्रकृतियोंका भङ्ग पद्म लेश्याके समान है। दो आयुओंका भङ्ग मनुष्यि-नियोंके समान है।

प्रदेश मनसि० ओघं । अब्भवसि० मदि०मंगो । णवरि मिच्छ० अवत्तव्वं णस्थि ।

=२०. सम्माइ०-खइगस० ओधिमंगो । णवरि खझ्गे देवायु०मणुसि०मंगो । वेदगे धुविगाणं सन्वत्थो० भुज०-अप्पद० । अवडि० असंखेंज्ज० । सेसं ओधिमंगो । उवसम० ओधिमंगो । णवरि तित्थय० मणुसि०मंगो । सासणे धुविगाणं देवमंगो । सेसाणं साद-भंगो । णवरि ओरालि०-ओरालि०श्रंगो० सन्वत्थो० अवत्त०। भुज०-अप्पद० असंखेंज्ज० । अवडि० असंखेंज्ज० । सम्मामि० सासण० मंगो । किंचि विसेसो । मिच्छादिडि० मदि० मंगो ।

८३१, सण्णि० मणजोगिभंगो । असण्णीसु ओरालि०-ओरालि०अंगो० ओघं । सेसं मदि०भंगो । आहार० ओघं । अणहार० कम्मइगभंगो ।

## एवं अप्पाबहुगं समत्तं। एवं भुजगारबंधो समत्तो।

८२६. भव्य जीवोंके खोधके समान भङ्ग हैं। अभव्य जीवोंमें मत्यझानियोंके समान भङ्ग हैं। इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्वका अवक्तव्य पद नहीं हैं।

द्रश्व. सम्यन्दृष्टि और क्षायिकसम्यन्दृष्टि जीवोंमें अविधिन्नार्ग जीवोंके समान भन्न हैं। इतनी विशेषता है कि क्षायिकसम्यन्दृष्टि जीवोंमें देवायुका भन्न मनुष्यितियोंके समान है। वेदक सम्यन्दृष्टि जीवोंमें भुजगार और अल्पतर पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। शेष प्रकृतियोंका भन्न अविधिन्नाती जीवोंके समान है। उपश्रम सम्यन्दृष्टि जीवोंमें अवधिन्नानी जीवोंके समान मन्न हैं। इतनी विशेषता है कि तीर्थकर प्रकृतिका भन्न मनुष्यितियोंके समान है। सासादनसम्यन्दृष्टि जीवोंमें ध्रुववन्धवाली प्रकृतियोंका भन्न देवोंके समान है। शेष प्रकृतियोंका भंग साता वेदनीयके समान है। इतनी विशेषता है कि औदारिक शरीर और औदारिक आन्नोपान्नके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे भुजगार और अल्पतर पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अविधित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। सम्यग्मिध्यादृष्टि जीवोंमें सासादनसम्यन्दृष्टि जीवोंके समान भन्न है। किन्तु यहाँ कुन्न विशेषता है। मिध्यादृष्टि जीवोंमें मत्यज्ञानी जीवोंके समान भन्न है।

प्तरेश, संज्ञी जीवोंमें मनोयोगी जीवोंके समान भङ्ग हैं। असंज्ञी जीवों में ऋौदारिक शरीर श्रीर श्रीदारिक आङ्गोपाङ्ग का भङ्ग श्रोचके समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग मस्यज्ञानी जीवोंके समान है। श्राहारक जीवोंमें श्रोधके समान भङ्ग है। श्राहारक जीवोंमें कार्मणकाययोगी जीवोंके समान भङ्ग है।

इस प्रकार अल्पबहुत्व समाप्त हुआ। इस प्रकार भुजगारबन्ध समाप्त हुआ।



# पदणिक्खेवो

८३२. पदणिक्खेवे तिष्णि अणियोगहाराणि । तत्थ इमाणि सम्रक्तित्तणा सामित्तं अप्पाबहुगे ति ।

समुक्कित्तणा

८३३. समुक्तित्तणाए दुविधं-जहण्णयं उकस्सयं च। उकस्सए पगदं। दुवि०-ओषे० आदे०। ओघे० सन्वाणं पगदीणं अत्थि उक्तस्सिया बङ्की उक्तस्सिया हाणी उक्तस्सय-मवट्ठाणं। एवं अणाहारग ति ।

८३४. जहण्णए पगदं। दुवि०-ओघे० आदे०। ओघे० सव्वाणं पगदीणं अत्थि जहण्णिया बह्यो जहण्णिया हाणी जहण्णयमवद्वाणं। एवं याव अणाहारम ति।

एवं समुक्तित्तणा समत्ता।

सामित्तं

८३४. सामित्तं दुविधं — जहण्णयं उकस्सयं च । उक्कस्सए पगदं । दुवि०-ओघे० आदे०। ओघे० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०-तिरिक्खगदि-एइंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंडसं०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-आदाउओ०-थावर बादर पज्जत-पत्ते०-अधिरादिपंच०-णिमि०-णीचा०-पंचंत०उक०वड्डी कस्स होदि? यो चदुट्ठाणिययवमज्झस्स उवरि अंतोकोडाकोडी द्विदिबंधमाणो तप्पाओग्ग-उक्कस्ससंकिलेसेण उक्कस्सयं दाहं गदो तत्तो उक्कस्सयं द्विदिबंधो तस्स उक्कस्सिया बड्डी।

पदनिक्षेप

=३२. पदनिदेषमें तीन अनुयोग द्वार हैं जो ये हैं—समुल्कीर्तना, स्वामिस्त्र और ऋल्पबहुत्व।

समुत्मितना

=३३. समुत्कीर्तना दो प्रकारका है—जर्धन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । उसकी
अपेना निर्देश दो प्रकारका है—आघ और आदेश । ओघसे सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट वृद्धि, उत्कृष्ट
हानि और उत्कृष्ट अवस्थान है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिये ।

८३४. जघन्यका प्रकरण है। उसकी श्रपेचा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ स्रौर स्रादेश। स्रोधसे सब प्रकृतियोंकी जघन्य वृद्धि, जघन्य हानि स्रौर जघन्य श्रवस्थान है। इसी प्रकार स्रनाः हारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

इस प्रकार समुत्कीर्तेना समाप्त हुई । स्वामित्व

प्रश्र. स्वामित्व दो प्रकारका है—जयन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । उसकी अपेचा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे पाँच झानावरण, नौ दर्शनावरण, असाता-वेदनीय, मिश्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसकवेद, अरित, शोक, भय, जुगुष्सा, तिर्यक्चगित, एकेन्द्रिय-जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्डसंस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यक्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, आतप, उद्योत, स्थावर, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, अस्थिर आदि पाँच, निर्माण, नीचगीत्र और पाँच अन्तरायकी उत्कृष्ट वृद्धिका स्वामी कौन है १ जो चतुःस्थानिक यवसध्यके अपर अन्तःकोडाकोडी स्थितिका बन्ध करनेवाला तत्यायोग्य उत्कृष्ट संक्लेशसे उत्कृष्ट दाहको प्राप्त

उक्षस्सिया हाणी कस्स० ? यो उक्षस्सयं द्विदिवंघमाणो मदो एइंदिए जादो तत्याओग्गाजहण्णए पिडदो तस्स उक्षिसया हाणी । उक्षस्सयमवद्वाणं कस्स० ? यो उक्षस्सयं द्विदिवंघमाणो सागारक्खयेण पिडमग्गो तत्पाओग्गजहण्णाए पिडदो तस्स उक्षस्सयमवद्वाणं ।
सादावे०-हस्स-रिद-थिर सुम-जसिंग एदाणं णाणावरणमंगो । णवि तत्पाओग्गमंकिखिद्वा
ति भाणिदव्वं । इत्थि०-पुरिस०-मणुस० देवगदि-तिष्णिजादि ओरालियसरीरअंगोवंगपंचसंठा०-पंचसंघ०-दोआणु०-पसत्थ०-सुहुम-[अ-] पज्जच-साधार०-सुभग-सुस्सर-आदेँ०उच्चा० उक्षस्सया वड्ढी कस्स० ? यो यवमञ्चस्स उवि अंतोकोडाकोडी द्विदिवंघमाणो
तप्पाओग्गासंकिलेसेण तप्पाओग्गउक्षस्सदाहं गदो तप्पाओग्गउक्षस्सद्विदिवंघो तस्स उक्षस्सया वड्ढी । उक्षस्सया हाणी कस्स० ? यो उक्षस्सिष्टिदिवंघमाणो सागारक्खएण पिडभग्गो तप्पाओग्गजहण्णए पिडदो तस्स उक्षस्सिया हाणी । तस्सेव से काले उक्षस्सयमवद्वाणं । णिरयगदि-पंचिदि०-वेउव्विञ्चेविञ्चेगो०-असंपत्त०-णिरयाणु०-अप्पत्तथ०तस-दुस्सर० उक्षस्सिया वड्ढी कस्स० ? यो चदुद्वाणिययवमञ्चस्स उविर अंतोकोडाकोडी
द्विद्वंघमाणो उक्षस्सयं दाहं गदो तदो उक्षस्सयं द्विद्वंघो तस्स उक्ष० वड्ढी । उक्ष०
हाणी० कस्स होदि ? यो उक्षस्सयं द्विद्वंघमाणो सागारक्खयेण पिडभग्गो तप्पाओग्मजहण्णए पिडदो तस्स उक्षिस्सया हाणी। तस्सेव से काले उक्षस्सयमवद्वाणं। आहार०-

होकर उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करता है,वह उत्कृष्ट युद्धिका स्वामी है। उत्कृष्ट हानिका स्वामी कीन है 🤈 जो उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला मरकर एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न होकर तत्प्रायोग्य जघन्य स्थितिका बन्ध करने लगता है,वह उत्कृष्ट हानिका स्वामी है। उत्कृष्ट अवस्थानका स्वामी कौन है ? जो उल्कुष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला साकार उपयोगका क्षय होनेसे प्रतिमग्न होकर तस्त्रायोग्य जवन्य स्थितिका बन्ध करता है,वह उस्कृष्ट अवस्थानका स्वामी है। सातावेदनीय, हास्य, रति. स्थिर, शुभ श्रीर यशःकीर्ति इनका ज्ञानावरणके समान भन्न है। इतनी विशेषता है कि यहाँ तत्प्रा-योग्य संक्रिष्ट जीव स्वामी होता है,ऐसा कहना चाहिए। स्वीवेद, पुरुषवेद, मनुष्यगति, देवगति, तीन जाति, औदारिक शरीर आङ्गोपाङ्ग, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, दो त्रानुपूर्वी, प्रशस्त विहायो-गति, सूच्म, श्रपर्याप्त, साधारण, सुभग, सुस्वर, आदेय और उच्चगोत्रकी उत्कृष्ट वृद्धिका स्वामी कौन है ? जो यवमध्यके उपर अन्तःकौडाकोडी स्थितिका वन्ध करनेवाला तत्प्रायोग्य संक्रोशके कारण तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट दाहको प्राप्त होकर तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करता है वह उत्कृष्ट वृद्धिका स्वामी है। उत्कृष्ट हानिका स्वामी कौन है ? जो उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला साकार उपयोगका क्षय होनेसे प्रतिमम होकर तत्प्रायोग्यं जधन्य स्थितिका बन्ध करता है,वह उत्कृष्ट हानिका स्वामी है। तथा वही तदनन्तर समयमें उत्कृष्ट अवस्थानका स्वामी है। नरकगति, पञ्चेन्द्रियजाति, वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, श्रासम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, नरकगत्यानुपूर्वी, श्राप्रशस्त विहायोगित, त्रस और दुःस्वरकी उत्कृष्ट वृद्धिका स्वामी कौन है १ जो चतुःस्थानिक यसमध्यके उपर अन्तःकोडाकोडी स्थितिका बन्ध करनेवाला उत्कृष्ट दाहको प्राप्त होकर उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करता है,वह उस्कृष्ट वृद्धिका स्वामी है। उस्कृष्ट हानिका स्वामी कौन है १ जो उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला साकार उपयोगका क्षय होनेसे प्रतिभन्न होकर तत्प्रायोग्य जघन्य स्थितिका बन्ध करता है, वह उत्क्रष्ट हानिका स्वामी है । तथा वही तद्नन्तर समयमें उत्क्रष्ट अवस्थानका स्वामी है । आहारक

आहार०अंगो०-तित्थय० उक्क० वङ्की कस्स० ? यो तप्पाओग्गजहण्णयं द्विदिवंधमाणी तप्पाओग्गजहण्ण्यादो संकिलेसादो तप्पाओग्गजकस्सयं संकिलेसं गदो तप्पाओग्गजक० द्विदि० तस्स उक्किस्स्या वङ्की । उक्क० हाणी कस्स० ? यो तप्पओग्गजकस्सयं द्विदिवंध-माणो सागारक्खयेण पडिभग्गो तप्पाओग्गजहण्णए पडिदो तस्स उक्किस्स्या हाणी । तस्सेव से काले उक्कस्सयमवड्ठाणं । एवं ओधभंगो कायजोगि-कोधादि०४-मदि०-सुद०-असंज०-अचक्खुदं०-भवसि०-अब्मवसि०-मिच्छादि०-आहारग त्ति ।

८३६. णिरएसु पंचणाणावरणादीणं उकस्सयं संकिलिङ्वाणं ओघं णिरयगदिणाम-भंगो । सादादीणं तप्पाओग्गसंकिलिङ्वाणं ओघं इत्थिवेदभंगो । तित्थय० ओघभंगो । एवं सञ्चणिरयाणं । णवरि सत्तमाए मणुसग०-मणुसाणु०-उचा० तित्थयरभंगो ।

८३७. तिरिक्खेसु णिरयोघभंगो । मणुस०३-पंचिदि०२-तस०२-पंचमण०-पंच-विच०-ओरालि०-इत्थि०-पुरिस०-णवुंस०-विभंग०-चक्खुदं०-पम्मले०-सण्णि ति एदाणं उकस्ससंकिलिहाणं ओघं णिरयगदिभंगो । तृष्पाओग्गसंकिलिहाणं ओघं इत्थि०भंगो ।

८३८, सन्वअपज्जत्त० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०-तिरिक्खग०-एइंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंडसं०-वण्ण०४ - तिरि-क्खाणु०-अगु०-उप०-थावरादि०४-अथिरादिपंच-णिमि०-णीचा०-पंचंत० उक० बहुी०

शरीर, आहारक आङ्गोपाङ्ग और तीर्थंकर प्रकृतिकी उत्कृष्ट वृद्धिका स्वामी कीन हं ? जो तत्प्रायोग्य जघन्य स्थितिका वन्ध करनेवाला तत्प्रायोग्य जघन्य संक्रीशसे तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट संक्लेशको प्राप्त होकर तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करता है, वह उत्कृष्ट वृद्धिका स्वामी है। उत्कृष्ट हानिका स्वामी कौन हैं ? जो तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला साकार उपयोगका क्षय होनेसे प्रतिभग्न होकर तत्प्रायोग्य जघन्य स्थितिका बन्ध करता है, वह उत्कृष्ट हानिका स्वामी हैं तथा वही तदनन्तर समयमें उत्कृष्ट अवस्थानका स्वामी हैं। इसी प्रकार ओघके समान काययोगी, कोधादि चार कषायवाले, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, अचजुदर्शनी, भव्य, अभव्य, मिथ्यादृष्टि और आहारक जीवोंके जानना चाहिए।

द्रेश्. नारिकयोंमें पाँच झानावरण आदि उत्कृष्ट संक्लेशसे वैधनेवाली प्रकृतियोंका भङ्ग आंघमें कही गयी नरकगति नामकर्मकी प्रकृतिके समान है। तत्थायांग्य संक्लेशसे वैधनेवाली साताआदि प्रकृतियोंका भङ्ग आंघके अनुसार कहें गये स्नीवंदके समान है। तीर्थंकर प्रकृतिका भङ्ग आंघके समान है। तीर्थंकर प्रकृतिका भङ्ग आंघके समान है। इसी प्रकार सब नारिकयोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि सातवीं पृथिवीमें मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगोत्रका भङ्ग तीर्थंद्वर प्रकृतिके समान है।

≒३७. तियेश्वीमें सामान्य नारिकयोंके समान भङ्ग है। मनुष्यत्रिक, पश्चेन्द्रियद्विक, त्रसिद्वक, पाँच मनायोगी, पाँच वचनयोगी, श्रीदारिक काययोगी, श्रीवदी, पुरुषवदी, नपुंसकवेदी, विभङ्गज्ञानी, चजुदर्शनी, पद्मलेरयावाले श्रीर संज्ञी इनमें उत्कृष्ट संक्लेशसे वॅधनेवाली प्रकृतियोंका भङ्ग आंधमें कही गई नरकगतिके समान है। तत्प्रयोग्य संक्लेशसे वॅधनेवाली प्रकृतियोंका भङ्ग आंधमें कहे गये ब्रीवेदके समान है।

दश्द. सब ऋषयोप्त जीवोंमें पाँच झानावरण, नी दशनावरण, ऋसाना वेदनीय. मिण्यात्व, सोलह कपाय, नपुंसकवेद, ऋरति, शोक, भय, जुगुप्सा, नियञ्चगति, एकेन्द्रियज्ञाति, ऋोदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्डसंस्थान, वर्णचतुष्क, नियञ्चगस्यानुपूर्वी, ऋगुरूलघु, उपचात, कस्स० १ यो जहण्णगादो संकिलेसादो उक्कस्सयं संकिलेसं गदो उक्कस्सयं द्विदिं पि वंधो तस्स उक्क० वड्ढी । उक्क० हाणी कस्स होदि १ यो उक्कस्सयं द्विदिवं० सामारक्खएण० पिडिभगो तप्पाश्रोगगजहण्णए पिडिदो तस्स उक्किस्सया हाणी। तस्सेय से काले उक्कस्सयमबद्धाणं । सेसाणं सादादीणं तं चेव । णविर तप्पाश्रोगम ति भाणिदव्वं । एवं आणदादि याव सव्वद्वा ति सव्वएइंदि०-विमलिंदि० पंचकायाणं च । देवा याव सहस्सार ति णिरयभंगो । शोरालिय०-वेउव्वियमि०-आहारमि० अपज्जत्तभंगो। वेउव्विय०-आहारका० देवभंगो । कम्मइगा० शोरालियमिस्सभंगो । णविर अवद्वाणं बादरएइंदियस्स कादव्वं ।

८३६. अवगदवे० पंचणा०-चढुदंसणा०-सादा०-चढुसंज०-जसिग०-उचा०-पंचंत० उक्क० वड्डी कस्स० ? अण्णद० उवसामगस्स अणियद्वीबादरसांपराइगस्स दुचिरमादो द्विदिबंधादो चिरमे द्विदिवंधे वद्वमाणगस्स तस्स उक्क० वड्डी । उक्क० हाणी कस्स० ? अण्णदरस्स खवगस्स अणियद्वि० पढमादो द्विदिवंधादो विदिए द्विदिवंधे वद्वमाण० तस्स० उक्क० हाणी । तस्सेव से काले उक्क० अवद्वाणं ।

८४०. आभि०-सुद्०-ओधि० पंचणा०-छदंसणा०-असादा० बारसक०-पुरिस०-अरदि-सोग-भय दुर्गु०-दोगदि-पंचिंदि०-चदुसरी०-समचदु०-[ दो ] अंगो०-त्रज्ञरिस०

स्थावर ऋदि चार, ऋस्थिर ऋदि पाँच, तिमाण, नीचगांत्र और पाँच अन्तरायकी उत्कृष्ट वृद्धिका स्वामी कीन है ? जो जपन्य संक्लेशसे उत्कृष्ट संक्लेशको प्राप्त होकर उत्कृष्ट स्थितिका वन्य करने वाला साकार उपयोगका क्षय होनेसे प्रतिभन्न होकर तत्त्रायोग्य जघन्य वन्य कर रहा है वह उत्कृष्ट हानिका स्वामी है । तथा वह तदनन्तर समयमें उत्कृष्ट अवस्थानका स्वामी है । तथा वह तदनन्तर समयमें उत्कृष्ट अवस्थानका स्वामी है । तथा वह तदनन्तर समयमें उत्कृष्ट अवस्थानका स्वामी है । श्रेष सातादि प्रकृतियोंका यही भन्न है । इतनी विशेषता है कि तत्त्रायोग्यके कहना चाहिए । इसी प्रकार आनत कल्पसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंके तथा सब एकेन्द्रिय, विकलेन्द्रिय और पाँच स्थावरकायिक जीवोंके कहना चाहिए । सामान्य देव और सहस्रार कल्पतकके देवोंमें नारिक्योंके समान भन्न है । औदारिक मिश्रकाययोगी, बैक्तियिकमिश्रकाययोगी और आहारकमिश्रकाययोगी जीवोंमें अपर्याप्तकोंके समान भन्न है । वीकियिक काययोगी और आहारक काययोगी जीवोंमें देवोंके समान भन्न है । कार्मणकाययोगी जीवोंमें औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंके समान भन्न है । इतनी विशेषता है कि अवस्थान वाद्य एकेन्द्रियके कहना चाहिए ।

#३६. ऋषगतंत्रदी जीवोंमं पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, सातावेदनीय, चार संज्वलन, यशःकीर्ति, उच्चगेत्र और पाँच अन्तरायकी उत्कृष्ट दृद्धिका स्वामी कौन है ? जो अन्यतर उपशामक अनिवृत्तिवादरसाम्परायिक जीव द्विचरम स्थितिवन्धसे अन्तिम स्थितिवन्धमें अवस्थित है वह उत्कृष्ट दृद्धिका स्वामी हैं। उत्कृष्ट हानिका स्वामी कौन हैं ? जो अन्यतर क्षपक अनिवृत्तिकरण जीव प्रथम स्थितिवन्धसे द्वितीय स्थितिवन्धमें विद्यमान है, वह उत्कृष्ट हानिका स्वामी हैं। तथा वहीं तदनन्तर समयमें उत्कृष्ट अवस्थानका स्वामी हैं।

=४०. आभिनिवाधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, असाता वंदनीय, वारह कषाय, पुरुषवंद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, दो गति, पञ्च-

१ मूलप्रती-लिदि० पीचांद-तसपजन पंच-इति पाठः।

वण्ण०४—दोआण०—अगु०४—पसत्यवि०-तस०४-अथिर—असुम—सुभग—सुस्सर—आर्दे०—
अज०-णिमि०—उच्च।०-पंचंत० उक्क० बड्डी कस्स० १ यो जहण्णयं द्विदिबंधमाणो
तप्पाओग्गजहण्णगादो संकिलेसादो उक्कस्सयं संकिलेसं गदो उक्कस्सयं द्विदिबंधो तस्स
निच्छत्तामिम्रहस्स चिरमे उक्कस्सए द्विदिबंधे बट्टमाण० तस्स उक्क० बट्टी। उक्क० हाणी
कस्स० १ उक्कस्सयं द्विदिबंधमाणो सागारक्खयेण पिडभग्गो तप्पाओग्ग० जह० द्विदी०
तस्स उक्क० हाणी। बट्टीए चेव उक्कस्सयं अबद्वायं। सादावे०-हस्स-रिद-आहारदुग-थिरसुभ०-जसिग० आहार०भंगो। एवं मणपज्जव-संजद-सामाइयच्छेदो०-पिरहार०-संजदासंज०-छोधिदं०-सम्मादि०-खइग०-वेदग०-उवसम०-सम्मामिच्छा०। णविर खहगे उक्कस्सयं संकिलेसं काद्व्वं। सुदुमसंप० अवगद०भंगो। किण्ण० णील काउ० णिरयभंगो।
तेउए सोधम्मभंगो। सुक्काए ] णवगेवज्जभंगो। सासणे पेरहगभंगो। अस्रिणि० तिरिक्खोधं। अणाहार० कम्महगुभंगो।

एवं उकस्ससामित्तं समत्तं

८४१, जहण्णए पगदं। दुवि०-ओघे० आदे०। ओघे० पंचणा० णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुं०-तिरिक्खंदुग-पंचिंदि०-ओरालि०-वेउच्वि०-तेजा०-क०-दो-अंगो०-वण्ण०४ अगु०४-उज्जोव-तस०४-णिमि०-णीचा०-पंचंत० जह० कस्स० १

न्द्रिय जाति, चार शरीर, समचतुरस्र संस्थान, दो ऋाङ्गोपाङ्ग, वऋषभनाराच संहनन, वर्णचतुष्क, दो आनुपूर्वी, अगुरुलयु चतुरूक, प्रशस्त विहायोगति, असचतुरक, अस्थिर, अशुभ, सुभग, सुस्वर, त्रादेय, त्रयशःकीर्ति, निर्माण, उच्चगोत्र और पाँच श्रन्तरायकी उत्कृष्ट बृद्धिका स्वामी कौन है **१** जो जघन्य स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तस्प्रायोग्य जघन्य संक्लेशसे उत्कृष्ट संक्लेशको प्राप्त होकर उत्कृष्ट स्थितिबन्ध करता है श्रीर जो मिध्यात्वके अभिमुख होकर अन्तिम उत्कृष्ट स्थितिबन्धमें विद्यमान है, वह उत्कृष्ट वृद्धिका स्वामी है। उत्कृष्ट हातिका स्वामी कौन है ? जो उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव साकार उपयोगका क्षय होनेसे प्रतिभन्न होकर तत्प्रायोग्य जपन्य स्थितिका बन्ध करता है, वह उत्क्रष्ट हानिका स्वामी है। श्रीर वृद्धिके होनेपर ही उत्कृष्ट अवस्थान होता है। सातावेदनीय, हास्य, रति, आहारकद्विक, स्थिर, शुभ और यशःकीर्तिका भङ्ग त्र्याहारककाययोगी जीवोंके समान है। इसी प्रकार मनःपर्ययज्ञानी संयत, सामायिक संयत. झेदोपस्थापना संयत, परिहारविशुद्धि सैयत, संयतासंयत, अवधिदर्शनी, सम्यग्दृष्टि, श्लायिक सम्यग्दृष्टि, वेदकसम्यग्दृष्टि, उपशम सम्यग्दृष्टि ऋौर सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके जानना चाहिये । इतनी विशेषता है कि श्लायिक सम्येक्स्वमें उत्कृष्ट संक्लेश करना चाहिये । सूच्मसाम्परायिकसंयत जीवोंमें श्रपगत-वेदी जीवोंके समान भक्क हैं। कृष्ण, नील और कापोतलेश्यावाले जीवोंमें नारिकयोंके समान भक्क है। पीतलेश्यावाले जीवोंमें सौधर्म करपके समान भङ्ग है। शुक्तलेश्यावाले जीवोंमें नौमैवेयकके समान भक्त है । सासाद न सन्यग्दष्टिजीवोंमें नारिकयोंके समान भक्त है । ऋसंज्ञी जीवोंमें सामान्य तिर्यक्कोंके समान भक्त है। अनाहारक जीवोंमें कार्मणकाययोगी जीवोंके समान भक्त है।

इस प्रकार उस्कृष्ट स्वामित्व समाप्त हुन्त्रा।

८४५. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और श्रादेश। श्रोघसे पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चिद्विक, पश्चे न्द्रिय जाति, भौदारिक शरीर, वैकियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, दो श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, श्रागुरू-

अण्ण को समयूणं उकस्सिद्धिदिं वंधमाणो पुण्णाए द्विदिवंधगद्धाए उकस्सए संकिलेसं गदो तदो उक्कस्सर्य द्विदिं पबद्धो तस्स जह० वड्डी। जहण्णिया हाणी कस्स० ? यो समजुत्तरं सव्वजह० ड्विदि० पुण्णाए द्विदिवंधगद्धाए उक्तस्सयं विसोधि गदो तदो दाह० द्विदि० तस्स जहण्णिया हाणी । एकदरत्थमवट्टाणं । सादावे० पुरिस०-हस्स-रदि-दो-गदि–समचदु०–वजरिसः–दोआणु०–पसत्थ०-थिरादिछ०–उचा० जह० बङ्घी कस्स १ यो समयूणं तप्पाओग्गउकस्सयं द्विदिं बंध० तप्पाओग्गउक० संकिले० तदो उक० द्विदिबंध० तस्स जहण्णिया बड्डी । जह० हाणी कस्स० ? यो समजुत्तरं तथ्पाओगाजह० माणो उकस्सं विसोधिं गदो तदो सन्व जह० तस्स जह० हाणी । एकदरत्थमवट्ठाणं । अस!दा०-णवुंस०-अरदि-सोग-णिरयगदि-एइंदि०-हुंड०-असंपत्त० जिरयाणु०-अप्प सत्यवि०-आदाव-थावर-अयिरादिछ० जह० वड्डी कस्स०१ यो समयूणं उकस्सयं द्विदि बंध० पुण्णाए द्विदि बंध० उक्कस्सियं संकिलेसं गदो तदो उक्क० द्विदि० तस्स जह० बङ्की । जह० हाणी० कस्स०१ यो तप्पाओग्गजह० समजुत्तरं द्विदि० तप्पाओगा विसोधि गदो तदो जह० द्विदि० तस्स जह० हाणी। एगट्रत्थमवद्वाणं। इत्थिवे०-तिष्णिजादि-चदुसंठा०-चदुसंघ०-सुदुम-अपज्ज०-साधार० जह० बड्ढी कस्स १ यो समयूणं तप्पात्रोग्गउक ्र हिदि०माणो पुष्णाए हिदिबंधगद्वाए तप्पात्रोग्गउक० लघुचतुष्क, उद्योत, त्रस चतुष्क, निर्माण, नीचगोत्र, श्रीर पाँच श्रन्तरायकी जघन्य वृद्धिका स्वामी कौन हैं ? अन्यतर जो एक समय कम उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव उत्कृष्ट स्थितिबन्ध कालके पूर्ण हो जानेपर उत्कृष्ट संक्लेशको प्राप्त होकर उत्कृष्ट स्थितिबन्ध करता है,वह जघन्य वृद्धिका स्वामी है। जघन्य हानिका स्वामी कौन है १ जो एक समय अधिक सबसे जघन्य स्थितिबन्ध करने-वाला स्थितिबन्धके कालके पूर्ण होनेपर उत्कृष्ट विशुद्धिको प्राप्त होकर जघन्य स्थितिबन्ध करता है वह जघन्य हानिका स्वामी हैं तथा इनमेंसे किसी एकके जघन्य अवस्थान होता है। सातावेदनीय, पुरुषवेद, हास्य, रति, दो गति, समचतुरहा संस्थान, वज्रऋषभनाराच संहनन, दो ऋानुपूर्वी. प्रशस्त विहायोगति, स्थिर आदि छह और उच्चगोत्रकी जधन्य वृद्धिका स्वामी कौन है ? जो एक समय कम तत्त्रायोग्य उत्कृष्ट स्थितिवन्ध करनेवाला जीव तत्त्रायोग्य उत्कृष्ट संक्लेशको प्राप्त होकर उत्कृष्ट स्थितिवन्ध करता है,वह जधन्य वृद्धिका स्वामी है। जधन्य हानिका स्वामी कौन है ? जो एक सगय ऋधिक तंत्र्यायोग्य जवन्य स्थितिवन्ध करनेवाला जीव उत्कृष्ट विशुद्धिको प्राप्त होकर सबसे जघन्य स्थितिबन्ध करता है, वह जघन्य हानिका स्वामी है तथा इनमेंसे किसी एकके जघन्य अवस्थान होता है। असातावेदनीय, नपुंसकवेद, अरति, शोक, नरकगति, एकेन्द्रियजाति, हण्ड-संस्थान, श्रसम्प्रप्रास्त्रपाटिका संहतन, नरकगत्यानुपूर्वी, श्रप्रशस्तिबहायोगति, श्रातप, स्थावर श्रीर श्रिस्थिर श्रादि छहकी जघन्य युद्धिका स्वामी कौन है ? जो एक समय कम उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव स्थितिवन्ध कालके पूर्ण हो जानेपर उत्कृष्ट संक्लेशको प्राप्त होकर उत्कृष्ट स्थितिबन्ध करता है,वह जयन्य बृद्धिका स्वामी है। जघन्य हानिका स्वामी कौन है। जो एक समय ऋधिक तत्त्रायोग्य जवन्य स्थितिवन्ध करनेवाला जीव तत्त्रायोग्य विशुद्धिको प्राप्त होकर जघन्य स्थितिबन्ध करता है, वह जघन्य हानिका स्वामी है। तथा इतमें से किसी एकके जघन्य अवस्थान होता है। क्षीवेद, तीन जाति, चार संस्थान, चार संहतन, सूच्म, अपर्याप्त और साधारणकी जघन्य बृद्धिका स्वामी कौन है ? जो एक समय कम तत्त्र।योग्य उत्कृष्ट स्थितिबन्ध करनेवाला जीव स्थितिबन्ध

द्विदि० तस्स जह० वहुं। जह० हाणी कस्स० १ समज्ञत्तरं तप्पाओग्गज० द्विदि० पुण्णाए द्विदिवं० तप्पाओग्गजक० विसोधं गदो तप्पाओग्गजह० द्विदि० तस्स जह० हाणी। एकदरत्थमवद्वाणं। आहार०-आहार०अंगो०-तित्थय० जह० वहुं। कस्स० १ यो समज्जतरं तप्पाओग्गउक० द्विदो० पुण्णाए द्विदिवं० तप्पाओ० उक्कस्ससंकिले० वदो तप्पाओ० उक्क० द्विदि० तस्स जह० वहुं। जह० हाणी कस्स० १ यो समज्जतरं सब्व जह० द्विदि० पुण्णाए द्विदिवंधगद्वाए उक्कस्सिया विसोधं गदो तदो सब्व जह० वंधो तस्स जह० हाणी। एकदरत्थमवद्वाणं। एवं ओधभंगो पंचिदिय-तस०२-पंचमण०-पंचवचि०-कायजोगि-कोधादि०४-मदि०-सुद०-असंज०-चक्खुदं०-अचक्खुदं०-भवसि०-अब्भवसि०-मिच्छा०-सण्णि-आहारग ति।

८४२. णेरइएसु पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुं०-पंचिदि०-ओरालि० तेजा० क० ओरालि०अंगो० वण्ण०४-अगु०४-तस०४-णिमि० पंचंत० जह० वड्डी हाणी अवद्वाणं ओघं णाणावरणीयभंगो। साद० पुरिस० हस्स रदि मणुसग० समचदु० वङ्घरिस०-मणुसाणु०-पसत्थ० -थिरादिछ० उचा० जह० वड्डि हाणि अवद्वाणं ओघं। असादा० णवुंस० - अरदि-सोग-तिरिक्खंग० - हुंड० - असंपत्त० - तिरिक्खाणु० - उज्जो० - अप्य

कालके पूर्ण हो जानेपर तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट संक्लेशको प्राप्त होकर तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट स्थितियन्य करता है, वह जयन्य बृद्धिका स्वामी है। जयन्य हानिका स्वामी कीन है ? जो एक समय अधिक तत्प्रायोग्य जयन्य स्थितियन्य करनेवाला जीव स्थितियन्य कालके पूर्ण हो जानेपर तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट विशुद्धिको प्राप्त होकर तत्प्रायोग्य जयन्य स्थितियन्य करता है, वह जयन्य हानिका स्वामी है तथा इनमेंसे किसी एकके जयन्य अवस्थान होता है। आहारक शरीर, आहारक आङ्गेपाङ्ग और तीर्थंकर प्रकृतिकी जयन्य बृद्धिका स्वामी कीन है ? जो एक समय अधिक तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट स्थितियन्य करनेवाला जीव स्थितियन्य कालके पूर्ण हो जानेपर तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट संक्लेशको प्राप्त होकर तथायाय वृद्धिका स्वामी है। जयन्य हानिका स्वामी कीन है ? जो एक समय अधिक सबसे अधिक जयन्य स्थितियन्य करनेवाला जीव स्थितिवन्य कालके पूर्ण हो जानेपर उत्कृष्ट विशुद्धिको प्राप्त होकर जयन्य स्थितियन्य करनेवाला जीव स्थितिवन्य कालके पूर्ण हो जानेपर उत्कृष्ट विशुद्धिको प्राप्त होकर जयन्य स्थितियन्य करनेवाला जीव स्थितिवन्य कालके पूर्ण हो जानेपर उत्कृष्ट विश्वविद्यात्र, असद्धिक, पाँच मनोयोगी, पाँच यचनयोगी, काययोगी, कोथादि चार कपाययाले, मत्यज्ञानी, श्रुताञ्चानी, असंयत, चज्जुदर्शनी, अव्यक्षर्शनी, अव्यक्षर्शनी, स्थ्याहिष्ट, संज्ञी और आहारक जीवोके जानना चाहिये।

५४२. नारिकयों में पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिश्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रियजाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, त्रस चतुष्क, निर्माण श्रौर पाँच अन्तरायकी जवन्य वृद्धि, जघन्य हानि श्रौर जघन्य अवस्थानका स्वामी श्रोधमें कहे गये ज्ञानावरणीयके समान है। सातावदनीय, पुरुषवद, हास्य, रित, मनुष्यगित, समचतुरस्न संस्थान, वर्त्रपंभनाराचसंहनन, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, प्रशस्त विहायोगित, स्थिर आदि छह श्रौर उच्चगोत्रकी जघन्य वृद्धि, जघन्य हानि श्रोर जघन्य श्रवस्थानका स्वामी ओधके समान है। श्रसातावदनीय, नपुंसकवद, श्ररित, शाक, तिर्यक्रगित, हुण्डसंस्थान, श्रस-स्यामास्रपाटिका संहनन, तिर्यक्रगत्यानुपूर्वी, उद्योत, श्रप्रशस्त विहायोगित, श्रस्थिर श्रादि छह श्रौर

सत्य ०-अथिरादिछ ० णीचा ० ओघं असादभंगो । इत्थिवे० चदुसंठा० चदुसंघ० ओघं इत्थिभंगो । तित्थय० ओघं । एवं सञ्वणिरयाणं । णवरि सत्तमाए मणुस० – मणुसाणु० – उच्चा० तित्थय० भंगो ।

= ४३. तिरिक्खेसु ओघेण साधेद्वं। पंचिंदियतिरिक्खअपज्ञत्त० पंचणा०-णवदं-सणा०-सोलसक०-भिच्छ०-भय- दुगुं०-ओरालि०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०-उप०-णिमि०-पंचंत०ज्ञहण्णि० तिण्णि वि ओघभंगो। साद०-पुरिस०-हस्स-रिद-मणुसगदि-पंचिंदि०-समचदु०-ओरालि०अंगो०—वज्ञरिस०—मणुसाणु०—पर०-उस्सा-०पसत्थ०—तस०४—थिरा-दिछ०—उचा० ओघं आहारसरीरभंगो। असादा०-णवुंस०—अरदि-सोग-तिरिक्खगदि-एइंदि०-हंडसं०—तिरिक्खाणु०—थावरादि०४—अथिरादिछ० णीचा० ओघं असादभंगो। इत्थिवे०—तिण्णिजादि—चदुसंठा०-चदुसंघ०—आदाउज्जो०—अप्पसत्थ०-दुस्सर० ओघं इत्थि-भंगो। एवं सव्वअपज्ञत्त्वनाणं आणद याव उवरिमाणं देवाणं। हेद्वाणं णिरयभंगो।

≈४४. मणुस०३ तिरिक्खभंगो । एइंदिय-पंचकाथाणं विगलिदियाणं च अपज्रत्त-भंगो । ओरालियका०-ओरालियमि० तिरिक्खोघं । वेउन्विय० वेउन्वियमि० देवोघं । णवरि मिस्से आणदभंगो । आहार०-आहारमिस्स० णिरयभंगो । कम्मइग० अवट्ठाणं

नीचगोत्रका भङ्ग श्रोधमें कहं गये श्रसातावेदनीयके समान है। स्वीवेद, चार संस्थान श्रीर चार संहननका भङ्ग श्रोधके श्रनुसार कहे गये स्वीवेदके समान है। तीर्थकर प्रकृतिका भङ्ग श्रोधके समान है। इसी प्रकार सब नारिकयोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि सातवीं प्रथिवीमें मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगोत्रका भंग तीर्थक्कर प्रकृतिके समान है।

=४३. तिर्यक्चोंमं श्रोधकं अनुसार साध लेना चाहिए। पक्कोन्द्रय तिर्यक्च अपर्याप्तकोंमं पाँच इति। वरण, नो दर्शनायरण, सोलह कषाय, मिश्र्यात्व, भय, जुगुष्सा, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलधु, उपधान, निर्माण श्रोर पाँच अन्तरायके ज्ञयन्य तीनों ही स्रोधके समान हैं। सातावदनीय, पुरुषवद, हास्य, रित, मनुष्यगित, पश्चित्रियजाति, समचतुरक संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वश्र्यभेनाराचसंहनन, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, परधात, उच्छास, प्रशस्त विहायोगित, त्रसचतुष्क, स्थिर आदि छह श्रोर उच्चगोत्रका भङ्ग श्रोधमें कहे गये आहारक शरीरके समान है। असातावदनीय, नपुंसकवद, अरित, शोक, तिर्यक्चगति, एकेन्द्रियजाति, हुण्डसंस्थान, तिर्यक्चगत्यानुपूर्वी, स्थावर आदि चार, अस्थिर श्रादि छह श्रोर नीचगोत्रका भङ्ग श्रोधमें कहे गये असातावदनीयके समान है। स्त्रीवद, तीन जाति, चार संस्थान, चार संहनन, श्रातप, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगित श्रौर दुःस्वरका भङ्ग श्रोधमें कहे गये स्त्रीवदके समान है। इसी प्रकार सव अपर्याप्तकोंके तथा आनत कल्पसे लेकर उपरिभ भैवेयक तकके देवोंके जानना चाहिए। नीचेके देवोंके नारिकयोंके समान भङ्ग हैं।

प्रथात मनुष्यित्रिकमें तिर्यञ्जीके समान भङ्ग हैं। एकेन्द्रिय, पाँच स्थावरकायिक श्रीर विकलेन्द्रियोंमें अपर्याप्तकोंके समान भङ्ग हैं। श्रीदारिक काययोगी श्रीर श्रीदारिक मिश्रकाययोगी जीवोंमें समान्य तिर्यञ्जीके समान भङ्ग हैं। वैकियक काययोगी श्रीर वैक्रियिक मिश्रकाययोगी जीवोंमें सामान्य देवोंके समान भङ्ग हैं। इतनी विशेषता है कि वैक्रियिक मिश्रकाययोगी जीवोंमें श्रानत कल्पके समान भङ्ग हैं। श्राहारक काययोगी श्रीर श्राहारक मिश्रकाययोगी जीवोंमें नारिकयोंके

### एइंदियमंगो । सेसाणि णत्थि ।

८४५. इत्थि०-पुरिस० पंचिदियतिरिक्खभंगी । णबुंसगे तिरिक्खोघं । अवगदवे० सम्बक्षमणं जह ० बहुी कस्स० ? अण्णदरस्स उवसमग० परिवद० पढमिट्ठिदिबंघादो विदिए द्विदिबंघे वहुमा० तस्स जहण्णिया वड्डी । जह ० हाणी कस्स० ? अण्णद० खवग० सुहुमसंप० दुचरिमादो द्विदिबंधादो चरिमे द्विदिबंधे वहुमा० तस्स जह ० हाणी । तस्सेव से काले जह ० अवद्वाणं । चदुसंज० अवद्विदस्स कादव्वं । एवं सुहुमसंप० । [ विभंगे णिरयमंगो ]

८४६. आभि०-सुद०-ओधि० मणपञ्ज०-संजद्-सामाइ०-छेदो०-परिहार-संजदा-संजद-ओधिदंस०-सम्मादि०-खइग०-वेदगस०-उवसम०-सासण०-सम्मामि० णाणा-वरणादि-सादासाद-आहारदुग-तित्थय० एदे अप्पप्पणो द्विदिवंधेण ओधेण साधेदव्वं। किण्ण णील-काउ० णिरयोघं। तेउ० सोधम्मभंगो। पम्माए सहस्सारभंगो। सुकाए णवगेवञ्जभंगो। असण्णि० तिरिक्खोधं। अणाहार० कम्मइगभंगो।

### एवं जदण्णसामित्तं समत्तं।

८४७. एत्तो जहण्णुक्कस्ससामित्तसाधणद्वं जहण्णुकस्समद्भच्छेदादो उकस्स-संकिलिद्वं तप्पाओग्गसंकिलिद्वं उकस्सविसोधि-तप्पाओग्गविसोधीहि जहण्णुक्कस्स-

समान भक्न हैं। कार्मण कायरोगी जीवोंमें अवस्थानका भक्न एकेन्द्रियोंके समान है। शेष पद नहीं हैं। ८४५. स्त्रीवेदी और पुरुषवेदी जीवोंमें पक्कोन्द्रिय तिर्यक्कोंके समान भक्न है। नपुंकसवेदी जीवोंमें समान्य तिर्यक्कोंके समान भंग है। अपगतवेदी जीवोंमें सब कमोंकी जयन्य बुद्धिका स्वामी कौन है १ जो शिरनेबाला अन्यतर उपशामक प्रथम स्थितिबन्धसे आकर द्वितीय स्थितिबन्धमें अवस्थित हैं, वह जयन्य बृद्धिका स्वामी है। जयन्य हानिका स्वामी कौन है १ जो अन्यतर क्षपक सूद्म-साम्परायिक जीव दिचरम स्थितिबन्धसे अन्तिम स्थितिबन्धमें अवस्थित हैं, वह जयन्य हानिका स्वामी है। तथा वही तदनन्तर समयमें जयन्य अवस्थानका स्वामी है। चार संब्वलनका भंग अवस्थितक कहना चाहिए। इसी प्रकार सूद्म साम्परायिक संयत जीवोंके जानना चाहिए। विभंगज्ञानी जीवोंमें नारिकयोंके समान मंग है।

दश्रद्दः आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी, अविधिज्ञानी, मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिक-संयत, छेदोपस्थापनासंयत, परिहारविद्युद्धिसंयत, संयतासंयत, अविधिदर्शनी, सम्यग्दृष्टि, चायिक-सम्यग्दृष्टि, वेदकसम्यग्दृष्टि, उपशमसम्यग्दृष्टि, सासादनसम्यदृष्टि और सम्यग्निश्यादृष्टि जीवोंमं ज्ञानावरणादि, सातावेदनीय, असातावेदनीय, आहारकद्विक और नीर्थक्कर इन प्रकृतियोंकी जघन्य शृद्धिवन्ध आदिका स्वामित्व अपने-अपने स्थितवन्धको ध्यानमें रखकर औषके अनुसार साध लेना चाहिए। कृष्ण, नील और कापोतलेश्यावाले जीवोंमें सामान्य नारिकयोंके समान भङ्ग है। पीत-लेश्यावाले जीवोंमें सौधर्म करणके समान भङ्ग है। पद्मलेश्यावाले जीवोंमें सहस्रार करणके समान भङ्ग है। श्रुक्तलेश्यावाले जीवोंमें सामान्य सिर्यक्वोंके समान भङ्ग है। असंज्ञी जीवोंमें सामान्य तिर्यक्वोंके समान भङ्ग है। अनाहारक जीवोंमें कार्मणकाययोगी जीवोंके समान भङ्ग है।

#### इस प्रकार जघन्य स्वामित्व समाप्त हुआ।

=४७. इसके आगे जघन्योत्कृष्ट स्वामिध्वकी सिद्धि करनेके लिए जघन्य उत्कृष्ट अद्धाच्छेदके अनुसार उत्कृष्ट संक्षिष्ट, तर्शायोग्य संक्षिष्ट, उत्कृष्ट विशुद्धि और तरप्रायोग्य विशुद्धिको जहाँ जो

#### सामित्तं साधेदव्वं।

# एवं सामित्तं समत्तं । अप्पाबहुगं

८४८. अप्पाबहुगं दुविधं-जहण्णयं उक्कस्सयं च । उक्कस्सए पगदं । दुविधं-ओषे० आदे०। ओषे० पंचणा०-णवदंसणा० दोवेदणी०-मिच्छ० सोलसक०-णवुंस०-चदुणोक०-भय-दु०-तिरिक्खग०-एइंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-इंडसं०-वण्ण०४ तिरिक्खाणु०-अगु०४-आदाउजो० -थावर-वादर-पज्ञत-पत्तेय०-थिराथिर-सुभासुम द्भग-अणादे०-जस०-अजस०-णिमि०-णीचा०-पंचंत० सव्वत्थोवा उक्क० वड्ढी । उक्क० अवद्वाणं विसे० । उक्क० हाणी विसे० । आहारदुगं सव्वत्थोवा उक्क० हाणी अवद्वाणं च । वड्ढी संखेंजगु० । तित्थय० सव्वत्थोवा उक्क० हाणी अवद्वाणं च । वड्ढी संखेंजगु० । तित्थय० सव्वत्थोवा उक्क० हाणी अवद्वाणं च । उ० वड्ढी संखेंजगु० । सेसाणं सव्वत्थोवा उक्क० वड्ढी । हाणी अवद्वाणं च दो वि तुल्लाणि विसे० । एवं ओधभंगो कायजोगि-कोधादि०४-मदि०-सुद०-असंज०-अवक्खुदं०-भवसि०-अव्यवस्थि०-भिच्छादि०-आहारग ति ।

८४६. अवगदवे ०-सुहुमसंप० सन्वाणं सन्वत्थोवा उक्क० हाणी अवद्वाणं च दो वि तुल्ला। उक्क० वङ्की संर्वेजगु०। आभि०-सुद०-ओधि०-मणपज्जव-संजद-सामाइ०-स्नेदो०-परिहार०-संजदासंजद०-ओधिदं०-सम्मादि०-खइग०-वेदग०-उवसम०-सम्मामि०

सम्भव हो,ध्यानमें रखकर जधन्योत्कृष्ट स्वामित्व साध लेना चाहिए। इस प्रकार स्वामित्व समाप्त हुन्ना।

#### अस्पवहुत्व

न्ध्रनः ऋल्पबहुत्व दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—अपेच और आदेश । श्रोघसे पाँच झानावरण, नो दर्शनावरण, दो वेदनीय, मिध्यात्व, सोलह कपाय, नपुंसकवेद, चार नोकपाय, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रियजाति, श्रोदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मणशरीर, हुण्डसंस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु चतुष्क, श्रातप, उद्योत, स्थावर, वादर, पर्याप्त, प्रत्येक, स्थिर, अस्थिर, श्रुभ, श्रग्रुभ, दुर्भग, श्रनादेय, यशःकीर्ति, अयशःकीर्ति, निर्माण, नीचगोत्र श्रौर पाँच श्रन्तरायकी उत्कृष्ट वृद्धि सबसे स्तोक है । इससे उत्कृष्ट श्रवस्थान विशेष श्रिषक है । श्राहारकद्विककी उत्कृष्ट हानि श्रौर उत्कृष्ट श्रवस्थान सबसे स्तोक है । इससे उत्कृष्ट वृद्धि संख्यातगुणी है । तीर्थक्कर प्रकृतिकी उत्कृष्ट हानि श्रौर उत्कृष्ट श्रवस्थान सबसे स्तोक है । इससे उत्कृष्ट वृद्धि संख्यातगुणी है । श्रेष प्रकृतिकी उत्कृष्ट हानि श्रौर उत्कृष्ट श्रवस्थान सबसे स्तोक है । इससे उत्कृष्ट हानि श्रौर उत्कृष्ट अवस्थान दोनों ही तुल्य होकर विशेष श्रिधक हैं । इसी प्रकार ओषके समान काय-योगी, क्रोधादि चार कथायवाले, सत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, श्रुताज्ञानी, श्रच्यत, श्रचजुदर्शनी, भन्य, श्रमन्य, मिध्यादृष्टि श्रौर श्राहरक जीवोंके जानना चाहिए।

=४६. अपगतवेदी श्रौर सूत्त्मसाम्परायिक संयत जीवोमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट हानि स्रोर उत्कृष्ट अवस्थान दोनों ही तुल्य होकर सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट पृद्धि संख्यातगुणी है। श्राभिनिवोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी, अवधिज्ञानी, मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिक संयत, छेदो• पस्थापनासंयत, परिहारविशुद्धि संयत, संयतासंयत, अवधिदर्शनी, सम्यग्दष्टि, स्नायिकसम्यग्दिष्ट, सन्नत्थोवा उकस्सिया हाणी अवद्वाणं च दो वि तुल्ला । उ० वड्डी संखें जगु० । सादादीणं एसि सत्थाणं उक्तस्सियं तेसि सन्वत्थोवा उक्त० बड्डी । उक्त० हाणी अवद्वाणं च दो वि तुल्ला विसे० । सेसाणं णिश्यादि याव असण्णि ति सन्वत्थोवा उक्त० बड्डी । उक्त० हाणी अवद्वाणं च दो वि तुल्ला विसे० । णवरि कम्मइग-अणाहारगेसु सन्वत्थोवा उक्त० अवद्वाणं । वड्डी संखें जगु० । उ० हाणी विसेसाहिया ।

### एवं उकस्सयं समत्तं

८५०, जहण्णए पगदं । दुवि०-ओघे० आदे० । ओघे० सन्वकम्माणं जह० वड्डि-हाणि-अवट्ठाणं च तिष्णि वि तुस्ला । एवं धोरइगादि याव अणाहारग त्ति धोदन्वं । णवरि अवगदवे० सन्वत्थोवा जह० हाणी अवट्ठाणं च दो वि तुद्धा । जह० बह्वी संर्वेज्जगु० । एवं सुदुमसंप० ।

> एवं अप्याबहुगं समत्तं। पदणिक्खेवे ति समत्तं।

# विश्ववंधो

८५१. वड्डिबंधे ति तत्थ इमाणि तेरसेव अणियोगदाराणि। तं यथा—समुक्तित्तणा याव अप्पाबहुगे ति ।

वेदकसम्यग्दृष्टि, उपरामसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिण्यादृष्टि जीवोंमें उत्कृष्ट हानि और उत्कृष्ट अवस्थान दोनों ही तुस्य हाकर सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट युद्धि संख्यातगुणी है। सातादिमेंसे जिनका स्वस्थान उत्कृष्ट होता है, उनकी उत्कृष्ट युद्धि सबसे स्तोक है। इससे उत्कृष्ट हानि और उत्कृष्ट अवस्थान दोनों ही तुस्य होकर विशेष अधिक हैं। शेष नारिकयोंसे लेकर असंज्ञी तककी मार्गणाओंमें उत्कृष्ट युद्धि सबसे स्तोक है। इससे उत्कृष्ट हानि और उत्कृष्ट अवस्थान दोनों ही तुस्य होकर विशेष अधिक हैं। इतनी विशेषता है कि कार्मणकाययोगी और अनाहारक जीवोंमें उत्कृष्ट अवस्थान सबसे स्तोक है। इससे उत्कृष्ट युद्धि संख्यातगुणी है। इससे उत्कृष्ट हानि विशेष अधिक है।

इस प्रकार उत्कृष्ट अरुपबहुत्व समाप्त हुआ।

न्थ्र०. जघन्यका प्रकरण है। उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकार है— श्रोघ और आदेश। श्रोघसे सब कर्मोंकी जघन्य वृद्धि, जघन्य हानि और जघन्य अवस्थान तीनों ही तुस्य हैं। इसी प्रकार नारिक्योंसे लेकर अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए। इतनी विशोपता है कि अपगत-वंदी जीवोंसे जघन्य हानि और जघन्य अवस्थान दोनों ही तुस्य हो कर सबसे स्तोक हैं। इनसे जघन्य वृद्धि संख्यानगुणी है। इसी प्रकार सूद्मसाम्परायिक जीवोंके जानना चाहिए।

इस प्रकार ऋरूपबहुत्व समाप्त हुऋा । इस प्रकार पदिनेचेप समाप्त हुऋा ।

#### वृद्धिबन्ध

६५१. ऋष वृद्धिपन्धका प्रकरण है। वहाँ ये तेरह ऋनुयोगद्वार हैं। यथा-समुर्त्कार्तनासे लेकर ऋरपबहुत्व तक ।

# समुक्तिना

- ८५२. सप्रक्षित्तणाए दुवि० ओघे० आदे० । ओघे० खवगपगदीणं अस्थि चत्तारि वड्डी चत्तारिहाणी अवद्विद-अवत्तव्वबंधगा य । चदुण्णं आयुगाणं मूलपगदिमंगो । सेमाणं पगदीणं अस्थि तिण्णिवड्डि-हाणि-अवद्वि० अवत्तव्वबंधगा य । एवं ओघमंगो मणुस०३-पंचिदिय-तस०२-पंचमण०-पंचवचि०-कायजोगि-ओरालि०-चक्खुदं०-अच॰ क्खुदं०-भवसि०-सण्णि-आहारग ति ।
- ८५३. णेरइएसु धुवियाणं अस्थि तिण्णिवङ्कि-हाणि-अवद्विद-बंधगा य । सेसाणं तित्थयरेण सह अस्थि तिण्णिवङ्कि-हाणि-अवद्विद-अवत्तव्य-बंधगा य । दो आयु० अस्थि असंखेंजभागहाणि-अवत्तव्यबंधगा य । एवं सव्यणिरय सव्वतिरिक्ख-मणुसअपज्ञ०-सव्य-देव० पंचिदिय-तसअपज्जत्तगाणं च ।
- ८५४. एइंदिय-पंचकाएस धुविगाणं अत्थि एकवड्डि-हाणि-अवट्टिद-बंधमा य । सेसाणं अत्थि एक-वड्डि-हाणि-अवट्टिदअवत्तव्वबंधगा य । विगलिंदिय-पज्जत्त-अपञ्जत्तेसु धुविगाणं अत्थि बे वड्डि-हाणि-अवट्टिदबंधगा य । सेसाणं अत्थि बे-बड्डि-हाणि-अवट्टिद-अवत्तव्वबंधगा य ।
- ८५५. ओरालियमि० पंचणा०-णवदंसणा०-सोलसक०-भय-दुर्गु०-देवगदि-ओरासि०-वेउव्वि०-तेजा०-क०-वेउव्वि०अंगो०-वण्ण०४-देवाणु०-अगु०-उप०-णिमि०-

## सम्रुत्कीर्तना

- प्रश्. समुरकितिनाकी अपेचा निर्देश दा प्रकारका हैं—श्रांध श्रार आदेश। श्रोधसे क्षपक प्रकृतियोंकी चार वृद्धि, चार हानि, अवस्थित श्रोर अवक्तव्य पदके बन्धक जीव हैं। चार आयु-श्रोका भक्त मूल प्रकृतिबन्धके समान हैं। शेष प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित श्रोर अवक्तव्य पदके बन्धक जीव हैं। इसी प्रकार ओघके समान मनुष्यित्रक, पञ्चेन्द्रियद्विक, त्रसद्विक, पाँच मनोयोगी, पाँच वचनयोगी, काययोगी, औदारिककाययोगी, चक्षुदर्शनी, अचक्षुदर्शनी, भव्य, संज्ञी श्रोर श्राहारक जीवोंके जानना चाहिए।
- न्पर. नारकी जीवोंमें ध्रुववन्धवाली अक्रुतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि, और अवस्थित पदके बन्धक जीव हैं। तीर्थक्कर प्रकृतिके साथ शेष प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तश्य पदके बन्धक जीव हैं। दो आयुओंकी असंख्यात भागहानि और अवक्तश्य पदके बन्धक जीव हैं। इसीप्रकार सब नारकी, सब तिर्यक्क, मनुष्य अपर्याप्त, सब देव, पश्चेन्द्रिय अपर्याप्त और अस अपर्याप्त जीवोंके जानना चाहिए।
- न्पष्ट. एकेन्द्रिय और पाँच स्थावरकायिक जीवोंमें ध्रवनन्धवाली प्रकृतियोंकी एक वृद्धि, एक हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीव हैं। रोष प्रकृतियोंकी एक वृद्धि, एक हानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव हैं। विकलेन्द्रिय और इनके पर्याप्त और अपर्याप्त जीवोंमें ध्रव-बन्धवाली प्रकृतियोंकी दो वृद्धि, दो हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीव हैं। शेष प्रकृतियोंकी दो वृद्धि, दो हानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव हैं।
- ५५४. श्रौदारिक भिश्रकाययोगी जीवोंमें पाँच झानावरण, नौ दर्शनावरण, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, देवगति, श्रौदारिक शरीर, वैक्रियिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, वैक्रियिकआं-

तित्थय ० पंचंत ० अत्थि तिष्णिवङ्कि -हाणि-अवद्विद ० । सादादीणं मिच्छत्तस्स च सन्व पगदीणं अत्थि तिष्णिवङ्कि -हाणि-अवद्वि ० अवत्तन्ववं ० ।

८५६. वेउन्वि० देवोघं । वेउन्वियमि० पंचणा०-णवदंसणा०-सोत्तसक० भय-दु०-ओरास्ति० तेजा० क० वण्ण०४-अगु०४- बादर-पञ्जत्त-पत्तेय०-णिमि०-तित्थय०-पंचंत० अत्थि तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि० । सेसाणं० तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठिद-अवत्तव्व-बंधगा य ।

८५७. आहार०-आहारमि० धुविगाणं अत्थि तिण्णिवद्धि-हाणि-अवद्विदबं० । सेसाणं अत्थि तिण्णिवद्धि-हाणि-अवद्विद अवत्तव्वबं० । कम्मइ० धुविगाणं देवगदि०४-तित्थय० तिण्णिवद्धि-हाणि-अवद्वि०वं० । सेसाणं अत्थि तिण्णिवद्धि-हाणि-अवद्विद-अवत्त० ।

८५८, इत्थि-पुरिस-णवुंसगेसु अद्वारसण्णं अत्थि चत्तारिवह्नि-हाणि-अवद्विदवं । सादावे ०-पुरिस ०-जस ०-उचा ० अत्थि चत्तारिवद्गि-हाणि-अवद्वि ०-अवत्त ० । सेसाणं तिण्णिवद्गि-हाणि-अवद्वि ०-अवत्त ० । अवगदवे ० पंचणा ०-चदुदंसणा ०-पंचंत ० अत्थि संखें जभागविद्गि-हाणि-संखें जगुणविद्गि-हाणि-अवद्वि ०-अवत्त ० । सादावे ०-जसिग ०-उचा ० अत्थि संखें जभागविद्गि-हाणि-संखें जगुणविद्गि-हाणि-अवद्वि ०-अवत्त ० ।

क्नोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु, उपघात, निर्माण, तीर्यक्कर श्रौर पाँच अन्तरायकी तीन वृद्धि, तीन हानि श्रौर अवस्थित पदके वन्धक जीव हैं। साता आदि श्रौर मिथ्यात्वसे लेकर सब प्रकृतियोकी तीन वृद्धि, तीन हानि, श्रावस्थित श्रौर श्रावक्तव्य पदके बन्धक जीव हैं।।

च्पद. वैकियिककाययोगी जीवोंमें सामान्य देवोंके समान भङ्ग है। वैकियिकिमस्त्रकाययोगी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, सोलह कषाय, भय, जुगुष्ता, खोदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, वर्ण चतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, निर्माण, तीर्थङ्कर ख्रोर पाँच अन्तरायकी तीन बृद्धि, तीन हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीव हैं। शेष प्रकृतियोंकी तीन बृद्धि, तीन हानि, अवस्थित ख्रोर अवक्तव्य पदके बन्धक जीव हैं।

द्ध, त्याहाककाययोगी और आहारकिमश्रकाययोगी जीवोंमें ध्रुव बन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि श्रोर श्रवस्थित पदके बन्धक जीव हैं। रोष प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन-हानि, श्रवस्थित और श्रवक्तव्य पदके बन्धक जीव हैं। कार्मणकाययोगी जीवोंमें ध्रुष बन्धवाली प्रकृतियाँ, देवगति चतुष्क और तीर्थङ्कर प्रकृतिकी तीन वृद्धि, तीन हानि श्रोर श्रवस्थितपदके वन्धक जीव हैं। रोष प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और श्रवक्तव्य पदके बन्धक जीव हैं।

म्ह्रमः स्त्रीवेदी, पुरुषवेदी और नपुंसकवेदी जीवोंमें अठारह प्रकृतियोंकी चार वृद्धि, चार हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीव हैं। सातावेदनीय, पुरुषवेद, यशःकीर्ति, और उच्चगात्रकी चार वृद्धि, चार हानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके वन्धक जीव हैं। शेष प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव हैं। अपगतवेदी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण और पाँच अन्तरायकी संख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागहानि, संख्यात-गुणवृद्धि, संख्यातगुणहानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव हैं। सातावेदनीय, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रकी संख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागहानि, संख्यातगुण-हिति, असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव हैं।

चदुसंज ० अत्थि संसेंजभागवड्डि-हाणि-अवट्टि०-अवत्त ०।

८५६. कोधे पंचणा०-चदुदंसणा०-चदुसंज०-पंचंत० अस्थि चत्तारिवड्डि-हाणि-अवद्वि० । सादावे० पुरिस०-जस०-उच्चा० अस्थि चत्तारिवड्डि-हाणि-अवद्वि० अवत्त० । सेसाणं ओधं । माणे पंचणा०-चदुःस०-तिण्णिसंज०-पंचंत० अस्थि चत्तारिबड्डि-हाणि-अवद्वि० । कोधसंजलण० सादमंगो । सेसं ओधं । मायाए पंचणा०-चदुदंस०-दोसंज०-पंचंत० अस्थि चत्तारिबड्डि-हाणि अवद्वि० । सेसाणं ओधं । लोभे ओधं । णवार् चोँह्स० अवत्तव्यं णस्थि ।

८६०. मदि०-सुद० धुविभाणं अस्थि तिष्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि०। चदुआयु० ओघं।मिच्छ० सेसाणं अस्थि तिष्णिवड्ढि हाणि-अवट्ठि० अवत्त०।एवं विभंग०-अब्भवसि०-मिच्छादि०। णवरि अब्भवसि०-मिच्छादि० शिच्छत्तस्स अवत्त० परिथ।

द्धः अभिणिव्सुद्द्धः भेषिव पंचणाव्यदुदंसणाव्यद्धाः चदुसंजव-पुरिसव्यस्मिव्यद्धः चर्तां विश्विष्यः चर्तां विश्विः चर्तां विश्वेः चर्तां चर्तां विश्वेः चर्तां विश्वेः चर्तां विश्वेः चर्तां विश्वेः चर्तां विश्वेः चर्तां चर्तां चर्तां चर्तां चर्तां चर्तां चर्तां चर्तां चर्तां चर्यां चर्तां चर्यां चर्तां चर्तां चर्तां चर्तां चर्तां चर्तां चर्तां चर्तां चर्यां चर्तां चर्यां चर्तां चर्यां चर्तां चर्यां चर्यां

चार संज्वलनकी संख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागहानि, श्रवस्थित श्रीर श्रवक्तव्य पदके बन्धक जीव हैं।

द्धि. क्रोध कपायवाले जीवों में पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन श्रीर पाँच अन्तरायकी चार बृद्धि, चार हानि श्रीर श्रवस्थित पदके बन्धक जीव हैं। सातावेदनीय, पुरुषवेद, यशकीति, श्रीर उच्चगोत्रकी चार बृद्धि, चार हानि, श्रवस्थित श्रीर श्रवस्थव्य पदके बन्धक जीव हैं। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग श्रीघके समान है। मान कषायवाले जीवों में पाँच ज्ञानावरण चार दर्शनावरण, तीन संज्वलन श्रीर पाँच श्रन्तरायकी चार बृद्धि, चार हानि श्रीर श्रवस्थित पदके बन्धक जीव हैं। क्रोध संज्वलनका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग श्रीघके समान है। ग्रीय कषायवाले जीवों में पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, दो संज्वलन श्रीर पाँच श्रन्तरायकी चार वृद्धि, चार हानि श्रीर श्रवस्थित पदके बन्धक जीव हैं। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग श्रोधके समान है। लोभ कषायवाले जीवों से श्रोधके समान है। इतनी विशेषता है कि चौदह प्रकृतियोंका अवक्तव्य पद नहीं है।

प्हिं. मत्यज्ञानी और श्रुताज्ञानी जीयोंमं ध्रुययन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन दृद्धि, तीन दृति और अवस्थित पदके बन्धक जीव हैं। चार आयुओंका भङ्ग ओघके समान है। मिथ्यात्व श्रौर शेष प्रकृतियोंकी तीन दृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव हैं। इसी प्रकार विभङ्गज्ञानी, अभव्य और मिथ्यादृष्टि जीयोंके जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि अभव्य और मिथ्यादृष्टि जीयोंके ज्ञानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि

५६१. श्रामिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और श्रावधिज्ञानी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, सातावेदनीय, चार संज्वलन, पुरुषवेद, यशकीित, उच्चगोत्र और पाँच श्रम्तरायकी चार वृद्धि, चार हानि, श्रवस्थित श्रौर श्रवक्तव्य पदके बन्धक जीव हैं। सेष प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि, श्रवस्थित श्रौर श्रवक्तव्य पदके बन्धक जीव हैं। इसी प्रकार मनःपर्ययज्ञानी, संयत, श्रवधिदर्शनी, सम्यग्दष्टि, ज्ञायिकसम्यग्दिष्ट श्रौर उपशमसम्यग्दिष्ट जीवोंके जानना चाहिये।

द्दर, सामाइ०-छेदो० पंचणा०-चदुदंस०-लोभसंअ०-उचा०-पंचंत० अत्यि चत्तारिवड्ढि-हाणि-अवट्टि०। सेसाणं ओघं। परिहार०-संजदासंजदा० आहारकाय-जोगिमंगो।सुहुमसंप० पंचणा०-चदुदंस०-सादावे०-जस०-उचा०-पंचंत० अत्थि संखेँ- जभागवड्ढि-हाणि-अवट्टि०। असंजदे पंचणा०-छदंसणा०-बारसक०-भय०-दु०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०-उप०-णिमि० पंचंत० अत्थि तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्टि०। सेसाणं अत्थि तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्टि०-अवत्त०। एवं किण्ण-णील-काऊणं। णवरि किण्ण-णीलाणं तित्थय० अवत्त० णिथि।

८६३. तेऊए पंचणा०-छदंसणा०-चदुसंज०-भय-दु०-तेजासरीरादि-पंचंतरा० अत्थि तिण्णिवङ्गि-हाणि-अवद्वि०। सेसाणं अत्थि तिण्णिवङ्गि-हाणि-अवद्वि० अवत्त ०। पम्माए पंचणा०-छदंसणा०-चदुसंज०-भय०-दु०-पंचिदियादिपण्णरस-पंचंत० अत्थि-तिण्णिवङ्गि हाणी०-अवद्वि०। सेसाणं तिण्णिवङ्गि-अवद्वि०-अवत्त ०। सुकाए ओघं।

८६४. वेदगस० धुविगाणं अत्थि तिण्णिवड्डि-हाणि-अवहि०। सेसाणं अत्थि तिण्णिवड्डि-हाणि-अवद्धि०-अवत्त०। सासणे धुविगाणं अत्थि तिण्णिवड्डि-हाणि-अवद्धि०। सेसाणं० तिण्णिवड्डि-हाणि-अवद्धि०-अवत्त०। सम्मामिच्छा० पंचणा०-छदंसणा०-

द्दर. सामायिक और छेदोपस्थापना संयत जीवोंमें पाँच झानावरण, चार दर्शनावरण, लोम संज्वलन, उच्चगोत्र स्रोर पाँच अन्तरायकी चार वृद्धि, चार हानि, स्रोर स्रवस्थित पदके बन्धक जीव हैं। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग स्रोधके समान है। परिहारिवसुद्धि संयत और संयतासंयत जीवोंमें स्राहारककाययोगी जीवोंके समान भङ्ग है। सूच्मसान्परायिक संयत जीवोंमें पाँच झाना-वरण, चार दर्शनावरण, सातावेदनीय, यशःकीर्ति, उच्चगोत्र स्रोर पाँच स्रन्तरायकी संख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागहानि और अवस्थितपदके बन्धक जीव हैं। स्रसंयत जीवोंमें पाँच झानावरण, श्रह दर्शनावरण, बारह कषाय, भय, जुगुप्सा, तेजसशरीर, कार्मणशरीर, वर्णचतुष्क, स्रगुरुलघु, उपचात, निर्माण और पाँच स्रन्तरायकी तीन वृद्धि, तीन हानि स्रोर स्रवस्थित पदके बन्धक जीव हैं। शेष प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि, स्रवस्थित स्रोर स्रवक्तव्य पदके बन्धक जीव हैं। शेष प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि, स्रवस्थित स्रोर स्रवक्तव्य पदके बन्धक जीव हैं। इसी प्रकार कृष्ण, नील स्रोर कापोतलेश्यावाले जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशोपता है कि कृष्ण स्रोर नीललेश्यावाले जीवोंके तीर्थक्कर प्रकृतिका स्रवक्तव्य पद नहीं है।

द्द पीतलेश्यावाले जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, चार संज्वलन, भय, जुगुप्सा, तैजसशरीर त्रादि और पाँच अन्तरायकी तीन वृद्धि, तीन हानि और त्रावस्थित पदके बन्धक जीव हैं। शेष प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीय हैं। पद्मलेश्यावाले जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, चार संज्वलन, भय, जुगुप्सा, पद्मीन्द्रय जाति त्रादि पन्द्रह और पाँच अन्तरायकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीव हैं। शेष प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि, श्रवस्थित और अवक्तव्यपदके बन्धक जीव हैं। शुक्रलेश्यावाले जीवोंमें श्रोधके समान भक्क है।

प्रश्त वेदकसम्यग्दिष्ठ जीवोंमं ध्रुववन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि श्रौर अविस्थित पर्के वन्धक जीव हैं। रोप प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्ष्य पर्के बन्धक जीव हैं। सासादनसम्यग्दिष्ठ जीवोंमें ध्रुववन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि श्रीर अवस्थित पर्के वन्धक जीव हैं। रोष प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अव-

बारसक०-पुरिस०-भय०-दु०-दोगदि पंचिदि०-चदुसरीर-समचदु ०-दोअंगो०-वजिरस०-वण्ण०४-दोआणु०-अगु०४-पसत्थवि०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदेँ०-णिमि०-पंचंत० अत्थि तिण्णिवड्डि-हाणि-अवद्वि०। सेसाणं अत्थि तिण्णिवड्डि-हाणि-अवद्वि०-अवत्त०।

८६५. असण्णीसु धुविगाणं अत्थि तिण्णिबड्डि-हाणि-अवट्टि०। सेसाणं अत्थि तिण्णिबड्डि-हाणि-अवट्टि०-अवत्त०। अणाहार० कम्मइगर्मगो। एवं सम्रक्तितणा समत्ता।

# सामित्तं

८६६. सामित्ताणुगमेण दुवि०-ओधे० आदे०। ओघे० पंचणा०-चदुदंस०चदुसंज०-पंचंत० असंखें जभाग-वड्डि-हाणि-अवट्ठि० कस्स० ? अण्णद० एइंदियस्स वा
बीइंदियस्स वा तीइंदि० चदुरिंदि० पंचिंदि० सिण्णि० असिण्णि० वादर० सुहुम० पज्जता
अपज्जत्त०। संखें जभागवड्डि-हाणिबंधो कस्स० ? अण्ण० बेइंदि० तीइंदि० चदुरिंदि०
पंचिंदि० सिण्णि० असिण्णि० पज्जत्त० अपज्ज०। संखें जगुणवड्डि-हाणि० कस्स० ? अण्ण०
पंचिंदि० सिण्ण० असिण्णि० पज्जत्त० अपज्जत्त०। असंखें जगुणवड्डि-हाणि० कस्स० ? अण्ण०
पंचिंदि० सिण्ण० असिण्ण० पज्जत्त० अपज्जत्त०। असंखें जगुणवड्डिबंधो कस्स० ? अण्ण०
अणियद्विवादर० उवसमणादो परिवदमाणस्स मणुसस्स वा मणुसिएणी वा पढमसमय
देवस्स वा। असंखें जगुणहाणिबंधो कस्स० ? अण्ण० उवसामगस्स वा खवगस्स वा

स्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव हैं। सम्यग्निध्यादृष्टि जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, बारह कथाय, पुरुषवेद, भय, जुगुप्सा, दो गति, पब्न्चेन्द्रिय जाति, चार शरीर, समचतुरस्र संस्थान, दो आङ्गोपाङ्ग, वऋषभनाराचसंहनन, वर्णचतुष्क, दो आनुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगिति, त्रसचतुष्क, सुमग, सुस्वर, आदेय, निर्माण और पाँच अन्तरायकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीव हैं। श्रेष प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव हैं।

८६५. असंज्ञी जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीव हैं। शेष प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव हैं। अनाहारक जीवोंमें कामणकाययोगी जीवोंके समान भक्त हैं।

इस प्रकार समुत्कीर्तना समाप्त दुई।

#### स्वामित्व

द्द. स्वामित्वानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—आंघ और आदेश। ओघसे पाँच झानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच झन्तरायकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्या तभागहानि और अवस्थित पदका स्वामी कौन है ? अन्यतर एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रोन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, एक्कोन्द्रिय, संझी, असंझी, बादर, सूक्ष्म, पर्याप्त या अपर्याप्त जीव स्वामी है। संख्यातभागवृद्धि और संख्यातभागहानिका स्वामी कौन है ? अन्यतर द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, पख्नेन्द्रिय, पख्नेन्द्रिय, संझी, असंझी, पर्याप्त या अपर्याप्त जीव स्वामी है। संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिका स्वामी कौन है ? अन्यतर पद्धोन्द्रिय संझी-असंझी पर्याप्त या अपर्याप्त जीव स्वामी है। असंख्यात गुणवृद्धिवन्धका स्वामी कौन है ? अन्यतर उपशामकोणिसे गिरनेवाला अनिवृत्तिवादरसाम्परायिक मनुष्य या मनुष्यनी अथवा प्रथम समयवर्ती देव स्वामी है। असंख्यातगुणहानिवन्धका स्वामी कौन है ? अन्यतर उपशामक या क्षपक अनिवृत्तिवादरसाम्परायिक जीव स्वामी है। अवक्तव्य

अणियद्विषाद्रसांपराइगस्स । अवत् ० कस्स होदि १ उवसमणादो परिवदमाणस्स मणुसस्स वा मणुसिणीए वा पढमसमयदेवस्स वा । थीणिगिद्धि०३-मिन्छ०-अणंताणुवंधि०४ तिण्णिवह्वि-हाणि-अवद्वि० णाणावरणभंगो । अवत्त ० कस्स० १ अण्ण० संजमादो वा सम्मासिज्ञादो वा परिवदमाणगस्स पढमसमय-मिन्छादिद्विस्स वा सम्मादिद्विस्स वा । णवरि मिन्छत्तस्स सासणादो वा पढम समयमिन्छादिद्विस्स वा । साद०-पुरिस०-जस०-उचा० चत्तारिवद्वि हाणि-अवद्वि० णाणावरणभंगो । अवत्त ० कस्स० १ अण्ण० परियत्त ० । णिहा-पचसा-भय०-दु०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०-उप०-णिमि०तिण्णिवद्वि-हाणि-अवद्वि०-अवत्त० णाणावरणभंगो । असाद०-हित्थ०-णवुंस०-चदुणोक०-तिरिक्ख-मणुसग०-पंचजादि-छस्संठा०-छस्संघ०-दोश्राणु०-दोविह्या०-तस-थावरादिणवयुगल-अजस०-णीचा० तिण्णिवद्वि-हाणि-अवद्वि० णाणावरणभंगो । अवत्त० सादभंगो । अवचक्खाणा०४-तिण्णिवद्वि-हाणि-अवद्वि० णाणावरणभंगो । अवत्त० संजमादो वा संजमासंजमादो वा परिवदमा० पढमस० मिन्छादि० सासण० सम्मामिन्छादिद्विस्स वा असंजद० वा । पचक्खाणा०४-तिण्णिवद्वि-हाणि-अवद्वि० णाणावरणभंगो । अवत्त० संजमादो परिवदमा० पढम० मिन्छा० सासण० सम्मामि० असंज० संज्ञदारंगे । वदुआयु० अवत्त० कस्स० १ अण्ण० पढमसमय-आयुग० वंधमा-

बन्धका स्वामी कौन है ? उपशमश्रेणिसे गिरनेवाला मनुष्य या मनुष्यिती अथवा प्रथम समयवर्ती देव स्वामी है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्याव, श्रौर श्रानन्तानुबन्धी चारकी तीन वृद्धि, तीन हानि श्रौर श्रवस्थित बन्धका स्वामी ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्य बन्धका स्वामी कौन है ? अन्यतर संयमसे संयमासंयमसे, सम्यक्विसे या सम्यग्मिश्यात्वसे गिरनेवाला प्रथम समयवर्ती मिश्यादृष्टि श्रौर सासा-दनसम्यग्दृष्टि जीव स्वामी है । इतनी विशेषता है कि मिण्यास्व प्रकृतिकी अपेसा अवक्तव्य बन्धका स्वामी संयमादि चार स्थानोंसे गिरनेवाला प्रथम समयवर्ती मिथ्यादृष्टि जीव तो है ही। साथ ही सासादनसम्यव्यवस्य भिरनेवाला प्रथम समयवर्ती मिध्यादृष्टि भी है। सातावेदनीय, पुरुषवेद, यशः कीर्ति और उच्चगोत्रकी चार वृद्धि, चार हानि और अवस्थित बन्धका स्वामी ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्य बन्धका स्वामी कौन है ? अन्यतर परिवर्तमान जीव स्वामी है। निद्रा, प्रचला, भय, जुगुप्सा, तैजसरारीर, कार्मणशरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघात और निर्माणकी तीन वृद्धि, तीन हानि, श्रवस्थित श्रीर श्रवक्तव्य बन्धका स्वामी ज्ञानावरणके समान है। श्रसातावेदनीय, खीवेद, नपुंसकवेद, चार नोकषाय, तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति, पाँच जाति, छह संस्थान, छह संहनन, दो आनुपूर्वी, दो विद्वायोगति, त्रस और स्थावर आदि नौ युगल, अयशःकीर्ति और मीचगोत्रकी तीन वृद्धि, तीन हानि श्रौर अवस्थित बन्धका भङ्ग ज्ञान।वरणके समान है। श्रवक्तव्यबन्धका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। अप्रत्याख्यानायरणचारकी तीन वृद्धि, तीन हानि श्रीर अवस्थित बन्धका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्य बन्धका स्वामी संयम या संयमासंयमसे गिरनेवाला प्रथम समयवर्ती मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि, सम्यग्मिथ्यादृष्टि या असंयतसम्यग्दृष्टि जीव है । प्रत्या-ख्यानावरण चारकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित वन्धका स्वामी ज्ञानावरणके समान है । श्चवक्तव्य बन्धका स्वामी संयमसे गिरनेवाला प्रथम समयवर्ती मिथ्यादृष्टि, सासा**दनसम्यग्दृष्टि**, सम्यग्निश्यादृष्टि, असंयतसम्यग्दृष्टि या संयतासंयत जीव है। चार आयुओंके अवक्तव्यवस्था णस्त । तेण परं असंखें अभागहाणी । वेउन्वियछ० तिण्णिवड्डि-हाणि-अवद्वि० कस्त० ! अण्णि० सण्णि० असण्णि० । णवित संखें अगुणवड्डि-हाणि० सण्णिपअत्त० । अवत्तन्व० सादमंगो । आहारदुग-पर०-उस्ता०-आदाउ जो०-तित्यय० तिण्णिवड्डि-हाणि-अवद्वि० कस्त० ! अण्णद० पढमसमयबंधमा० । ओरास्ति०-ओरासि०-अंगो० तिण्णिवड्डि-हाणि-अवद्वि० णाणावरणभंगो । अवत्त० कस्त० ! अण्ण० पढम-समयबंध० । एवं ओघभंगो कायजोगि-अचक्खु०-भवसि०-आहारग ति ।

८६७. णेरइएस धुनिगाणं तिष्णिनड्डि-हाणि-अन्दिश्च कस्स० १ अण्ण० । सेसं ओघादो साधेदन्वं । णविर सत्तमाए तिरिक्खग०-तिरिक्खाणु०-णीचा० थीणगिद्धिभंगो । मणुस०-मणुसाणु०-उचा० तिष्णिवड्डि-हाणि-अन्दिश्च णाणावरणभंगो । अवत्त० कस्स० १ अण्ण० मिच्छत्तादो परिवद० पढम० असंज० सम्मामि०।

८६८. तिरिक्खेसु धुविमाणं तिष्णिवड्डि-हाणि-अवङ्घि० कस्स० ? अण्ण० । सेसाणं ओघं । एवं पंचिदियतिरिक्ख०३ । पंचिदि०तिरिक्खअपञ्जत्त० धुविमाणं तिष्णिवड्डि-हाणि अवड्डि० कस्स० ? अण्ण० । सेसं ओघं । एवं सञ्वअपञ्ज० अणुदिसदेवाणं च । मणुसेसु

स्वामी कौन है ? अन्यतर प्रथम समयमें आयुकर्मका वन्ध करनेवाला जीव स्वामी है। उसके बाद असंख्यातभागहानि होती है। वैकियिक छहकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका स्वामी कौन है ? अन्यतर संही और असंही जीव स्वामी है। इतनी विशेषता है कि संख्यात-गुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिका स्वामी संही पर्याप्त जीव है। अवक्तव्यवन्धका स्वामी सातावेद-नीयके समान है। आहारकद्विक, परघात, उच्छास, आतप, उद्योत और तीर्थकरकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव स्वामी है। अवक्तव्य बन्धका स्वामी कौन है ? अन्यतर प्रथम समयमें वन्ध करनेवाला जीव स्वामी है। औदारिकशारीर और औदारिकशाङ्गोपाङ्गकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका स्वामी ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्य बन्धका स्वामी कौन है ? अन्यतर प्रथम समयमें वन्ध करनेवाला जीव स्वामी है। इसी प्रकार औवके समान काययोगी, अच्छाक्शीनी, भव्य और आहारक जीवोंके जानना चाहिए।

द्ध. नारिकयों में ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियों की तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित पदका स्वामी कीन है ? अन्यतर जीव स्वामी है। शेष औषके अनुसार साथ लेना चाहिए। इतनी विशेषता है कि सावधी पृथिवीमें तिर्यक्कगति, तियक्कगत्यानुपूर्वी और नीचगोत्रका मङ्ग स्त्यानगृद्धिके समान है। मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगोत्रकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका स्वामी झानावरणके समान है। अवक्तव्य बन्धका स्वामी कीन है ? अन्यतर मिथ्यात्वसे असंयत सम्यग्दिष्ट या सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त होनेवाला प्रथम समयवर्ती नारकी जीव स्वामी है।

द्धः तिर्यक्तोंमें ध्रुववन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितवन्धका स्वामी कौन है श अन्यतर जीव स्वामी है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओषके समान है। इसी प्रकार पञ्चीन्द्रिय तिर्यक्तिश्विकके जानना चाहिए। पञ्चीन्द्रिय तिर्यक्त अपर्याप्तकोंमें ध्रुववन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका स्वामी कौन है श अन्यतर जीव स्वामी है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओषके समान है। इसी प्रकार सब अपर्याप्त और अनुदिश देवोंके जानना चाहिए। मनुष्योंमें श्रोषके समान है। इतनी विशेषता है कि इनमें अवक्तव्य बन्धका स्वामी प्रथम समय-

ओघं। णवरि अवत्त ० देवो ति ण भाणिद्व्वं। एवं पंचमण०-पंचवचि०। देवेसु

द्ह. एइंदिय-पंचकाएस धुविगाणं एक्कबिहु-हाणि-अबिहु० कस्स० ? अण्णद० । सेसाणं एक्कबिहु-हाणि-अबिहु० कस्स० ? अण्ण० । अवत्त० कस्स० ? अण्ण० परियत्त० पढम० । विगलिदिएस धुविगाणं दोबिहु-हाणि-अबिहु० बंधो कस्स० ? अण्ण० । सेसाणं दोण्णिबिहु हाणि-अबिहु० णाणावरणभंगो । अवत्त० कस्स० ? अण्ण० परियत्त० पढम० । पंचिदि० तस्सेव पञ्जता ओघं । णविर पंचिदि० सिण्ण०-असिण्ण०-पञ्जत्त०-अपञ्जत ति भाणिद्व्वं । तस-तसपञ्जता ओघं । णविर बीइंदि० तीइंदि० चदुरिंदि० पंचिदि० सिण्ण० असिण्ण० पञ्जता ति भाणिद्व्वं ।

८७०. ओरालिका० अधि । णवरि देवी ति ण भाणिदव्वं । ओरालियमि० तिरिक्सोघं । णवरि मिच्छ० कस्स० ? अण्ण० सासणः एविवद० पढम० मिच्छादिष्ठि० । देवगदि०४-तित्थय० अवत्त० णत्थि । वेउव्विय० उक्केवयमि० देवोघं । आहार०-आहारमि० धुविगाणं तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवद्धि० कस्स० ? अण्णद० । सेसाणं तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवद्धि० कस्स० ? अण्णद० । सेसाणं तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवद्धि० णाणावरणभंगो । अवत्त० ओघं सादभंगो । कम्मइग० धुविगाणं देवगदि

वर्ती देव होता है,यह नहीं कहना चाहिए। इसी प्रकार पाँच मनोयोगी और पाँच वचनयोगी जीबोंक जानना चाहिए। देवोंमें नारकियोंके समान भङ्ग है।

्दृह. एकेन्द्रियों में और पाँच स्थावर कायिक जीवों में ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी एक युद्धि, एक हानि और अवस्थित बन्धका स्वामी कौन हैं ? अन्यतर जीव स्वामी हैं । शेष प्रकृतियोंकी एक बुद्धि, एक हानि और अवस्थितबन्धका स्वामी कौन हैं ? अन्यतर जीव स्वामी हैं । अवक्तव्य बन्धका स्वामी कौन हैं ? अन्यतर परिवर्तमान प्रथम समयवर्ती जीव स्वामी हैं । विकलेन्द्रियों में ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी दो वृद्धि, दो हानि और अवस्थित बन्धका स्वामी कौन हैं ? अन्यतर जीव स्वामी हैं । शेष प्रकृतियोंकी दो वृद्धि, दो हानि और अवस्थित बन्धका भङ्ग ज्ञानावरणके समान हैं । अवक्तव्यबन्धका स्वामी कौन हैं ? अन्यतर परिवर्तमान प्रथम समयवर्ती जीव स्वामी हैं । पर्छेन्द्रिय और पर्छेन्द्रिय पर्याप्त जीवोंमें खोघके समान मङ्ग हैं । इतनी विशेषता हैं कि पर्छेन्द्रिय संजी-असंज्ञी पर्याप्त और अपर्याप्त ऐसा कहना चाहिए । त्रस और त्रसपर्याप्त जीवोंमें ओघके समान मंग हैं । इतनी विशेषता है कि द्रीन्द्रिय, जीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय और पर्छेन्द्रिय संजी-असंज्ञी पर्याप्त कहना चाहिए ।

द्वारा काययोगी जावोंमें खोचके समान मंग हैं। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य वन्धका स्वामी प्रथम समयवर्ती देव होता है, ऐसा नहीं कहना चाहिए। खौदारिक मिश्रकाययोगी जीवोंमें सामान्य तिर्येख्वोंके समान मंग है। इतनी विशेषता है कि मिश्यात्वके अवक्तव्य वन्धका स्वामी कौन है १ अन्यतर सासादन सम्यक्त्वसे गिरकर प्रथम समयमें मिश्यादृष्टि हुआ जीव स्वामी है। देवाति चतुष्क खौर तीर्थंकर प्रकृतिका अवक्तव्य बन्ध नहीं है। वैक्रियक शरीर खौर वैक्रियिक खांगोपांगका मंग सामान्य देवोंके समान है। आहारककाययोगी खौर आहारकमिश्रकाययोगी जीवोंमें ध्रुववन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि खौर अवस्थित बन्धका स्वामी कौन है १ अन्यतर जीव स्वामी है। शेष प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका स्वामी कौन है १ अन्यतर जीव स्वामी है। शेष प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका स्वामी कान है।

पंचगस्स च अवड्डि० कस्स० १ अण्ण० । सेसाणं अवड्डि०-अवत्त० कस्स० १ अण्ण० । एवं अणाहार० ।

८७१. इत्थि० पंचणा०-चदुदंसणा०-चदुसंज०-पंचंत० तिण्णिबहु-हाणि-अबद्धि० कस्स० १ अण्ण० । णवि असंखेँ अगुणबिहु-हाणि० अणियिद्धि० । णिहादंडस्स अवत्त० देवो त्ति ण भाणिदव्वं । सेसाणं ओघं । पुरिसेस ओघं । णवुंसमे धुविगाणं इत्थिभंगो । सेसाणं ओघं । अवगदवे० पंचणा०-चदुदंसणा०-पंचंत० संखेँ अभागबिहु-संखेँ अगुणबिहु-अवत्त० कस्स० १ अण्णद० उवसम परिवद० । तेसि हाणि-अबिहु० कस्स० १ अण्ण० उवसम० खवग० । सादावे०-जस०-उचा० संखेँ अभागबिहु-संखेँ अगुणविहु-असंखेँ अगु०-अवत्त० कस्स० १ अण्ण० उवसम० परिवद० । तेसि हाणि-अबिहु० कस्स० १ अण्ण० उवसाम० खवग० । चदुसंज० संखेँ अभाग०-अवत्त० कस्स० १ अण्ण० उवसाम० परिवद० । संखेँ अभागहाणि-अबिहु० कस्स० १ अण्ण० उवसाम० परिवद० । संखेँ अभागहाणि-अबिहु० कस्स० १ अण्ण० उवसाम० परिवद० । संखेँ अभागहाणि-अबिहु० कस्स० १ अण्ण० उवसाम० ।

८७२. कोधेसु पंचणा०-चदुदंसणा० चदुसंज०-पंचंत० तिण्णिवड्डि-हाणि-असंखेंज्जगु-णवड्डि हाणि-अवट्ठि० ओघं। अवत्त० णित्थ। सेसाणं च ओघं। माणे तिण्णिसंजलणं,

कार्मणकाययोगी जीवोंमें ध्रुवधन्धवाली और देवगत्तिपञ्चकके अवस्थितबन्धका स्वामी कीन है ? अन्यतर जीव स्वामी है। शेष प्रकृतियोंके अवस्थित और अवक्तव्य बन्धका स्वामी कीन है ? अन्यतर जीव स्वामी है। इसी प्रकार अनाहारक जीवोंके जानना चाहिए।

म्०१. स्त्रीवेदी जीवोमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्यलन और पाँच अन्तरायकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका स्वामी कौन हैं ? अन्यतर जीव स्वामी है। इतनी विशेषता है कि असंख्यातगुणवृद्धि और असंख्यातगुणहानिका स्वामी अनिवृत्तिकरण जीव है। निद्रादण्डकके अवक्तव्य बन्धका स्वामी देव हैं ऐसा नहीं कहना चाहिए। शेष प्रकृतियोंका भंग ओघके समान है। पुरुषवेदी जीवोंमें आघके समान भंग है। नपुंसकवेदी जीवोंमें श्रुववन्धवाली प्रकृतियोंका भंग स्त्रीवेदी जीवोंमें श्रुववन्धवाली श्रुविद्यातगुणवृद्धि, स्त्रिवालाक्ष्य वन्धका स्वामी कौन हैं ? अन्यतर गिरनेवाला उपशामक जीव स्वामी हैं। साता-वेदनीप, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रकी संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि और अवक्तव्य वन्धका स्वामी कौन हें ? अन्यतर गिरनेवाला स्वामी कौन हें । सात्रानेवाला स्वामी कौन हें ? अन्यतर श्रुवक्तवेदी कौन संख्यातभागवृद्धि और अवक्तव्य वन्धका स्वामी कौन हें । सर्वतर गिरनेवाला उपशामक जीव स्वामी हैं। संख्यातभागवृद्धि और अवक्तव्य वन्धका स्वामी कौन हें ? अन्यतर गिरनेवाला उपशामक जीव स्वामी हैं। संख्यातभागवृद्धि और अवक्तव्य वन्धका स्वामी कौन हें ? अन्यतर उपशामक और स्वक्त कीव स्वामी हैं।

५७२. क्रोधकपायवाले जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच अन्तरायकी तीन वृद्धि, तीन हानि, असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि और अवस्थित बन्धका भग स्रोवक समान है। यहाँ अवक्तव्य वन्ध नहीं है। शेष प्रकृतियोंका मंग ख्रोधके समान है। मानमें तीन संज्वलन और मायामें दो संज्वलनोंके तीन पद कहने चाहिये। शेष भक्न ख्रांचके समान मायाए दोसंज॰ तिण्णि भाणिदव्वं । सेसं ओघं । लोमे पंचणा॰-चदुदंस॰-पंचंत॰ अक्तव्वं णत्थि । सेसाणं ओघं ।

८७३, मदि०-सुद० धुविगाणं अत्थि तिष्णिवड्डि-हाणि-अवट्टि० तिरिक्खोघं। सेसाणं ओघं। एवं विभंग०-अब्भवसि०-मिच्छा०। णवरि अब्भवसि०-मिच्छादि० मिच्छत्त० अवत्त० णित्थ।

८७४. आभि०-सुद् ओघि० पंचणा०-चदुदंस०-चदुसंज०-पुरिस०-उचा०-पंचंत० तिष्णिविद्ध-हाणि-अवद्धि० कस्स० १ अण्ण० । असंखें ज्ञगुणविद्ध-हाणि-अवद्य० ओघं । मणुसगिद्दिंचगस्स तिष्णिविद्ध-हाणि-अवद्धि० कस्स० १ अण्ण० । अवत्त० कस्स० १ अण्ण० पृद्धमस० देवस्स वा णेरहगस्स वा । सादावे०-जस० असंखें ज्ञगुणविद्ध-हाणि० ओघं । सेसाणं णाणावरणभंगो । णिद्दा पचलादीणं अवत्त० ओघं । सेसाणं णाणावरणभंगो । णविर अवत्त० कस्स० १ अण्ण० परियत्तमा० । णविर देवगदि०४-तिण्णिविद्ध-हाणि॰ अवद्धि०-अवत्त० कस्स० १ अण्ण० । एवं ओधिदंस-सम्मादि० खइग०-वेदग०-उवसम० । णविर वेदगे किंचि विसेसो । उचसमे वि असंखें ज्ञगुणविद्ध० कस्स० १ अण्ण० उवसाम-गस्स परिवदमा० पढमस० देवस्स वा । असंखें ज्ञगुणहाणि० कस्स० १ अण्ण० उवसाम०

हैं। लोभ कवायवाले जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण और पाँच अन्तरायका श्रवक्तव्य बन्ध नहीं है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग श्रोघके समान हैं।

क्षेत्र. मत्यज्ञानी श्रीर श्रुताज्ञानी जीवोंमें ध्रुववन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन षृद्धि, तीन हानि श्रीर श्रावस्थितवन्धका स्वामी तिर्थञ्जोंके समान है। शेष प्रकृतियोंका भक्त श्रीघके समान है। इसी प्रकार विभक्तज्ञानी, श्रभव्य श्रीर मिथ्यादृष्टि जीवोंके जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि स्रभव्य श्रीर मिथ्यादृष्टि जीवोंमें मिथ्यात्क्का अवक्तव्यवन्ध नहीं है।

मार्थित वोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और श्रवधिज्ञानी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन, पुरुषवेद, उच्चगोत्र और पाँच श्रान्तरायकी तीन वृद्धि, तीन हानि और श्रवस्थितबन्धका स्वामी कीन है ? श्रान्यतर जीव स्वामी है । श्रामंख्यातगुणवृद्धि, श्रामंख्यातगुणवृद्धि, श्रामंख्यातगुणवृद्धि, तीन हानि और अवस्थितबन्धका स्वामी कीन है ? श्रान्यतर जीव स्वामी है । श्रवक्तव्यवन्धका स्वामी कीन है ? श्रान्यतर प्रथम समयवर्ती देव और नारकी जीव स्वामी है । सातावेदनीय और यशः कीर्तिकी असंख्यातगुणवृद्धि और श्रामंख्यातगुणहानिका स्वामी श्रोधके समान है । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है । निद्रा और प्रचला आदिकके श्रवक्तव्यवन्धका स्वामी श्रोधके समान है । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है । इतनी विशेषता है कि इनके श्रवक्तव्यवन्धका स्वामी कीन है ? श्रान्यतर परिवर्तमान जीव स्थामी है । इतनी विशेषता है कि देवगित चतुष्ककी तीन वृद्धि, तीन हानि, श्रवस्थित और अयक्तव्यवन्धका स्वामी कीन है ? श्रान्यतर जीव स्वामी है । इसी प्रकार श्रवधिदर्शनी, सम्यग्दृष्टि, क्षायिकसम्यग्दृष्टि, वेदकसम्यग्दृष्टि, और उपशामसम्यग्दृष्टि जीवोंके जानना चाहिये । इतनी विशेषता है कि वेदकसम्यन्त्वमें कुछ विशेषता है । उपशामसम्यग्दृष्टि जीवोंके जानना चाहिये । इतनी विशेषता है कि वेदकसम्यन्द्यमें कुछ विशेषता है । उपशामसम्यवस्थ में भी श्रासंख्यातगुणवृद्धिका स्वामी कीन है ? श्रान्यतर उपशामक श्रविवृत्तिकरण

अणियहि॰। मणपञ्जव-संजदे ओधिभंगो। णवरि खइगाणं पगदीणं असंखेँ अगुणवहि-हाणि-अवत्त॰ मणुसिभंगो।

८७१. सामाइ०-छेदोव० पंचणा०-चदुदंस०-लोभसंज०-उचा०-पंचंत० अवत्त० णित्य । सेसाणं मणवज्जवभंगो । परिहार० आहारकायजोगिभंगो । सुदृमसंप० पंचणा०-चदुदंस०-सादावे०-जस०-उचा०-पंचंत० संखेंजभागवड्ढि० कस्स० ! अण्णदरस्स उवसाम० परिवद० । संखेंजभागहा०-अवद्वि० कस्स० ! अण्णद० उवसाम० वा खवगस्स वा । संजदासंजदेस ध्विगाणं तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवद्वि० कस्स० ! अण्ण० । सेसाणं परिहार-मंगो । असंजदे ध्विगाणं तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवद्विदं कस्स० ! अण्ण० । सेसाणं तिरिक्षों । णवरि तित्थयरं ओघं । एवं किण्ण-णीज-काउ० ।

८७६. चक्खुदं० तसपजन्मंगो। किंचि विसेसो। तेऊए पंचणा० छदंसणा०-चदुसंजल०-भय०-दु०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०४-बाद्र-पज्जत्त-पत्तेय०-णिमि०-पंचंत० तिण्णिवड्डि-हाणि-अवद्वि० कस्स० ? अण्ण०। शीणगिद्धितिग-मिच्छत्त-बारसक० अवत्तन्वं ओघं। सेसं णाणावरणभंगो। सेसाणं पगदीणं तिण्णिवड्डि-हाणि-अवद्वि०

जीव स्थामी है। मनःपर्ययज्ञानी और संयत जीवोंमें अवधिज्ञानी जीवोंके समान भक्त है। इतनी विशेषता है कि चायिक प्रकृतियोंकी असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यवन्धका स्वामी मनुष्यिनियोंके समान है।

म्ज्य. सामायिकसंयत और हेदीपस्थापनासंयत जीवोंमें पाँच हानावरण, चार दर्शनावरण, लोभ संख्वलन, उच्चगोत्र श्रीर पाँच अन्तरायका अवक्तव्यवन्ध नहीं है। शेष प्रकृतियोंका भक्त मनःपययद्यानी जीवोंके समान है। परिहारविशुद्धिसंयत जीवोंमें त्राहारककाययोगी जीवोंके समान मक्त है। सूद्मसाम्परायिक संयत जीवोंमें पांच हानावरण, चार दर्शनावरण, सातावेदनीय, यशःकीतिं, उच्चगोत्र और पांच अन्तरायकी संख्यातभागवृद्धिका स्वामी कौन है ? अन्यतर गिरनेवाला उपशामक जीव स्वामी है ! संख्यातभागवृद्धिका स्वामी कौन है ? अन्यतर उपशामक और चपक जीव स्वामी है । संयतासंयत जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितवन्धका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव स्वामी है । शेष प्रकृतियोंका मक्त परिहारविशुद्धिसंयत जीवोंके समान है । असंयत जीवोंमें ध्रुववन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितवन्धका स्वामी कौन है ! अन्यतर जीव स्वामी है । शेष प्रकृतियोंका मक्त परिहारविशुद्धिसंयत जीवोंके समान है । असंयत जीवोंके ध्रुववन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितवन्धका स्वामी कौन है !अन्यतर जीव स्वामी है । शेष प्रकृतियोंका मक्त सामान्य तिर्यक्कोंके समान है । इतनी विशेषता है कि तीर्थक्कर प्रकृतिका भक्त स्वामक समान है । इसी प्रकार कृष्ण, नील और कापोत लेश्यावाले जीवोंके जानना चाहिये।

न्०६. चक्षुदर्शनी जीवों में त्रसपर्याप्तकों के समान भङ्ग है। कुछ विशेषता है। पीतलेश्यावाले जीवों में पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, चार संज्यलन, भय, जुगुप्सा, तेजसशरीर, कार्मणशरीर, वर्णचतुष्क, अगुरूलयुचतुष्क, बादर,पर्याप्त, प्रस्येक, निर्माण और पाँच अन्तरायकी तीन वृद्धि तीन हानि और अवस्थितवन्यका स्वामी कीन हैं ? अन्यतर जीव स्वामी हैं । स्त्यानगृद्धि तीन, मिश्यास्व और बारह कषायके अवक्तव्यवन्थका स्वामी ओघके समान हैं । शेष ज्ञानावरणके समान भङ्ग है । शेष प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितवन्धका स्वामी कीन हैं ? अन्यतर जीव स्वामी है । अवक्तव्यवन्थका स्वामी आघके समान हैं । इसी प्रकार पद्मालेश्यावाले जीवोंमें जानना चाहिये।

कस्स० १ अण्ण० । अवत्तव्यं ओघं । एवं पम्माए । सुक्काए खवगपगदीणं असंसेंज्जगुण-वड्डि-हाणि-अवत्तव्यं ओघं । सेसाणं तेउभंगो ।

८७७. सासणे धुविगाणं तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवद्वि० कस्स० १ अण्ण० । सेसाणं तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवद्वि०-अवत्व० विभंगभंगो । सम्मामि० धुविगाणं तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवद्वि० कस्स० १ अण्ण० । सेसाणं तिण्णिवड्ढि हाणि-अवद्वि० कस्स० १ अण्ण० । अवत्त० कस्स० १ बंधगस्स पढमसम० ।

८७८. सण्णीसु पंचिदियमंगो । णवरि सण्णि ति भाणिदव्वं । असण्णीसु धुविगाणं दोवड्डि-हाणि-अवड्डिं कस्स० १ अण्ण० । सेसाणं दोवड्डि-हाणि-अवद्धिदं कस्स० १ अण्ण० । अवत्तव्वं कस्स० १ परिय० । मणुसगदिदुग—वेउव्विगछ०—उच्चागोद विज्ञत्ता सेसाणं-संर्वेज्ञगु० कस्स० १ अण्ण० एइंदि० विगिर्छिदियस्स वा विगिर्छिदिएसु असण्णिपंचिदिएसु उवव० पढमसम० । संर्वेज्जगुणहाणी कस्स० १ अण्ण० विगिर्छिदि० असण्णिपंचिदि० एइंदिएसु वा विगर्छिदिएसु उवव० पढम० । णविर एइंदि० आदाव थावर-सुदुम-साधार० वड्डी णित्थ ।

### एवं सामित्तं समत्तं

शुक्रलेश्यावाले जीवोंमें चपक प्रकृतियोंकी असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्य-वन्धका स्वामी श्रीघके समान है। शेष प्रकृतियोंका मङ्ग पीतलेश्यावाले जीवोंके समान है।

५००. सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंमें श्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितबन्धका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव स्वामी है। शेव प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्यवन्धका स्वामी विभन्नज्ञानी जीवोंके समान है। सम्यग्मिण्यादृष्टि जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितबन्धका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव स्वामी है। शेष प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितबन्धका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव स्वामी है। अवक्तव्यवन्धका स्वामी कौन है ? प्रथम समयमें बन्ध करने-वाला जीव स्वामी है।

नज्न. संज्ञी जीवोंमें पञ्चेन्द्रियोंके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि संज्ञी ऐसा कहना चाहिए। असंज्ञी जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी दो गृद्धि, दो हानि और अवस्थित बन्धका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव स्वामी है। शेष प्रकृतियोंकी दो गृद्धि, दो हानि और अवस्थित वन्धका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव स्वामी है। अवक्तत्र्य वन्धका स्वामी कौन है ? परिवर्तमान प्रथम समयवर्ती जीव स्वामी है। मनुष्यगतिद्विक, वैक्रियिक छह और उच्चगोत्रको छोड़कर शेष प्रकृतियोंकी संख्यातगुणगृद्धिका स्वामी कौन है ? अन्यतर एकेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय जीव मरकर जब विकलेन्द्रियों और असंज्ञी पञ्चेन्द्रियोंमें उत्पन्न होता है, तो ऐसा जीव पहले समयमें स्वामी है। संख्यातगुणगृहानिका स्वामी कौन है ? अन्यतर विकलेन्द्रिय और असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय जीव जब मरकर एकेन्द्रियों और विकलेन्द्रियोंमें उत्पन्न होता है, तब उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें वह स्वामी है। इतनी विशेषता है कि एकेन्द्रियोंमें आतप, स्थायर, सूक्त और साधारण प्रकृतिकी वृद्धि नहीं है।

इस प्रकार स्वामित्व समाप्त हुन्या ।

# कालो

८७६. कालाणुगमेण दुवि०-ओषे० आदे०। ओषेण खवगपगदीणं 'चत्तारिवड्डि-तिण्णिहाणिवंघ० केवचि० ? जह० एग०, उक्क० बेसमयं। असंखेँज्जगुण हाणि-अवत्तव्वं केव० ? एग०। अवद्विद० जह० एग०, उक्क० अंतो०। चटुण्णं आयुगाणं अवत्तव्वं एग०। असंखेँज्जभागहाणी जहण्णुकस्सेण अंतो०। सेसाणं तिण्णिबड्डि-हाणी जह० एग०, उक्क० बेसमयं। अवद्वि० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्तव्वं एग०। एवं ओघभंगो पंचिदिय-तस०२-कायजोगि-पुरिस०-कोघादि०४-म्नाभि०-सुद०-ओघ०-चक्खु०-अचक्खु० ओघिदं०-मुक्कले०-भवसि०-सम्मादि०-खइग०-उवसम०-सण्णि-आहारग ति। मणुस-तिण्णि-पंचमण०-पंचवचि०-म्नोरालिय० ओघं। णवरि असंखेँज्जगुणवङ्गी वे समयंण लभदि। एगसमयं भवदि। मणपञ्जवसंजद-सामाइ०-छेदोवट्ठावण० मणुसभंगो।

८८०. अवगदवेदे पंचणा०-चदुदंस०-चदुसंज० सन्वत्थ संखेंज्जभागवड्डि-हाणी संखेंज्जगुणवड्डि-हाणी अवत्त० एग० । अवद्विदं ओघं । सादावे०-जस०-उचा० संखेंज्ज-भागवड्डि-हाणी संखेंज्जगुणवड्डि-हाणि असंखेंज्जगुणवड्डि-हाणी अवत्तव्वं एग० । अवद्वि०

#### काल

म्७६. कालानुगमकी अपेचा निर्देश दो प्रकारका है—आंघ और आदेश। ओघसे चपक प्रकृतियोंके चार वृद्धिनन्ध और तीन हानिनन्धोंका कितना काल है ? जधन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल दो समय है। असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यवन्धका कितना काल है ? जधन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अवस्थितवन्धका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। चारों आयुआंके अवक्तव्यवन्धका जघन्य और उत्कृष्टकाल एक समय है। असंख्यात-भागहानिवन्धका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। शेष प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि और तीन हानियोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। शेष प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि और तीन हानियोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। शेष प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि और तीन हानियोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्यवन्धका जघन्य और उत्कृष्टकाल एक समय है। इसी प्रकार ओवके समान पद्मेन्द्रियद्विक, त्रसिक्क, काययोगी, पुरुषवेदी, कोधादि चार कथाय-वाले, आभिनिवोधिकज्ञानी, अनुज्ञानी, अवधिज्ञानी, चजुदर्शनी, अचुदर्शनी, अवधिदर्शनी, शुक्कतेश्यावाले, भव्य, सम्यग्रहि, चायिकसम्यग्रहि, उपशामसम्यग्रहि संज्ञी और आहारक जीवोंके जानना चाहिए। मनुष्यत्रिक, पाँच मनोयोगी, पाँच वचनयोगी और औदारिक काययोगी जीवोंमें आघके समान काल है। इतनी विशेषता है कि इन मार्गणाओंमें असंख्यातगुणवृद्धिका दो समय काल उपलब्ध नहीं होता, किन्तु जधन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। मनःपर्ययक्वानी, संयत सामायिकसंयत और छेशपस्थापनासंयत जीवोंमें मनुष्योंके समान भक्क है।

८८०. श्रपगतवेदी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण और चार संज्वलनकी सर्वत्र संख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागद्दानि, संख्यातगुणवृद्धि, संख्यातगुणदृानि श्रीर श्रवक्तव्य बन्धका जधन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय है। श्रवस्थित बन्धका काल श्रोधके समान है। सातावेदनीय, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रकी संख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागद्दानि, संख्यातगुणवृद्धि संख्यात गुणदृानि, श्रसंख्यातगुणवृद्धि, श्रसंख्यातगुणदृानि भौर श्रवक्तव्यबन्धका जवन्य और उत्कृष्ट काल

१ मूलप्रती चत्तारितिण्यविद्वहाणि इति पाठः । १ मूलप्रती गुणविद्वहाणि० इति पाठः ।

बं० ओघं । सुहुमसंप० सन्वपग० संखेर्जेजभागबङ्घि-हाणी एगस० । अबद्घि० ओघं ।

द्र शिरएसु धुविगाणं सेसाणं च सब्वे भंगा ओद्यं णिरयगदीणामभंगो। णविर पगिदिविसेसं णाद्व्यं। एवं याव अणाहारग ति णेद्व्यं। णविर कम्मइ०-अणाहा० धुवि-गाणं अविद्धं जह० एग०, उक्क० तिण्णिसमयं। देवगदिपंचगस्स अविद्धं जह० एग०, उक्क० वेसमयं। सेसाणं थावरपगदीणं अविद्धं जह० एग०, उक्क० तिण्णिसमयं। इत्थि०-पुरिस०-मणुसग०-चदुजादि-पंचसंठाण-ओरालि०अंगो०-छस्संघडण-मणुसाणु० दोविहा०-तस-सुभग-दोसर-आर्दंज्ज०-उच्चागो० अविद्धि० जह० एग०, उक्क० वेसम०। अवक्त० एग०।

### एवं कालं समत्तं।

## अंतरं

८८२. अंतराणुगमेण दुवि०-श्रोघे० आदे०। ओघे० पंचणा०-चदुदंसणा०-चदुसंज०-पंचंतरा० असंखेंज्जभागवड्डि-हाणि-अवट्ठि० अंतरं केव०१ जह० एग०, उक्क० अंतो०। वेवड्डि-हाणीबंध० जह० एग०, उक्क० अणंतकालं । असंखेंज्जगुणवड्डि-हाणि-अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० अद्धपोर्गल०। णवरि असंखेंजगुणव० जह०

एक समय है। तथा अवस्थितवन्धका काल आंचके समान है। सूद्मसाम्परायिक संयत जीवोंमें सब प्रकृतियोंकी संख्यातभागवृद्धि और संख्यातभागहानिका जबन्य और उक्तृष्ट काल एक समय है। तथा अबस्थितवन्धका काल ओचके समान है।

द्रवर्श. नारिक्यों में ध्रुववन्धवाली तथा शेष प्रकृतियों के सब भन्न श्रोवके श्रनुसार नरकगित नामकर्मके समान है। इतनी विशेषता है कि प्रकृतिविशेष जानना चाहिए। इसी प्रकार श्रनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि कामणकावयोगी श्रोर श्रनाहारक जीवों ध्रुववन्धवाली प्रकृतियों के श्रवस्थितबन्धका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल तीन समय है। देवगित पश्चकके श्रवस्थितबन्धका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल दा समय है। श्रेष स्थावरप्रकृतियों के श्रवस्थितबन्धका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल तीन समय है। श्रीवेद, पुरुषवेद, मनुष्यगित, चार जाति, पाँच संस्थान, श्रीदारिक श्राङ्गीपाङ्ग, छह संहनन, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, दो विहायेगित, त्रस, सुभग, दो स्वर, आदेय श्रीर उच्चगात्रके श्रवस्थित बन्धका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल दो समय है। श्रयक्तव्य बन्धका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय है।

इस प्रकार एक जीवकी अपेक्षा काल समाप्त हुन्छा ।

#### अन्तर

६८२. अन्तरानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओय और आदेश। ओपसे पाँच झानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच अन्तरायकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यात भागहानि और अवस्थित बन्धका अन्तरकाल कितना है ? जवन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर पूर्व समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अनन्तरकाल है। असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्य बन्धका

एग० । थीणगि०३-मिच्छ०-अणंताणु०४ असंखें ज्ञमागविष्ट्व-हाणि-अविष्ट० जह० एग०, उक्क० बेछाविट्ठ० देस्० । बेविष्ट्व-हाणि-अविच्छं णाणावरणभंगो । णिदा-पचला-भय०-दुगुं०-तेजहगादिणव तिण्णिविष्ट्व-हाणि-अविद्धि०-अवत्त० णाणावरणभंगो । सादावेदणीय-जसगि० चत्तारिविद्ध-हाणि-अविद्धिदं णाणावरणभंगो । अवत्तव्वं जहण्णु० अंतो० । असाद०-चदुणोकसाय-थिराथिर-सुमासुभ-अजस० तिण्णिविष्ट्व-हाणि-अविद्धिद-अवत्तव्वं सादभंगो । अहकसा० असंखें०भागविष्टु-हाणि-अविद्धि० जह० एग०, उक्क० पुन्वको० देस्व० । बेविष्टु-हाणि-अविद्ध० जह० पंग०, उक्क० पुन्वको० देस्व० । बेविष्टु-हाणि-अविद्धं जाणावरणभंगो । इत्थिवे० तिण्णिविष्टिः हाणि-अविद्धं चत्तारिविष्टिः हाणि-अविद्धं णाणावरणभंगो । अवत्तव्वं जह० अंतो०, उक्क० बेछाविद्धसाग० सादिरे० । णवंस०-पंचसंठा०-पंचसंघ०-अप्पतत्थ०-द्भग-दुस्सर-अणादे० असंखेजज०विद्ध-हाणि-अविद्ध० एग०, उक्क० बेछाविद्धसागरो० सादि० तिण्णिपिलदोवमाणि देस० । बेविष्टु-हाणि० णाणावरणभंगो । अवत्तव्वं जहण्णेण अंतो०, उक्क० बेछाविद्ध० सादि० तिण्णि-पिलदो० देस० । णिरय-मणुस-देवायुणं असंखेजजभागहाणि-अवत्ववं जह० अंतो०, उक्क० विर्वाविष्ठ सादि० तिण्णि-पिलदो० देस० । णिरय-मणुस-देवायुणं असंखेजजभागहाणि-अवत्ववं जह० अंतो०, उक्क०

जयन्य अन्तर अन्तर्मृहर्त है और उत्कृष्ट अन्तर अर्धपुद्गलपरिवर्तन प्रमाण है। इतनी विशेषता है कि असंख्यातगुणवृद्धिका जघन्य अन्तर एक समय है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिध्यात्व श्रीर श्रन-न्तानुबन्धी चारकी असंख्यात्रभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो छियासठ सागर है। दो बृद्धि, दो हानि और अव-क्तव्यवन्धका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। निद्रा, प्रचला, भय, जुगुप्सा श्रीर तैजसशरीर आदि नौकी तीन बृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्यवन्धका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। साता-वेदनीय और यशःकीर्तिकी चार वृद्धि, चार हानि और अवस्थित बन्धका भङ्ग झानावरणके समान है। अवक्तत्र्य बन्धका जधन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मृहर्त है। असातावेदनीय, घार नोकषाय. स्थिर, श्रास्थिर, ग्रुभ, श्रशुभ और श्रयशाकीर्तिकी तीन वृद्धि, तीन हानि, श्रवस्थित और श्रव-क्तव्यवन्थका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। आठ कषायोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभाग हानि और श्रवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट श्रान्तर कुछ कम एक पूर्व-कोटि है। दो वृद्धि, दो हानि श्रीर अवक्तव्य बन्धका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। स्रीवेदकी तीन वृद्धि, तीन हानि श्रौर अवस्थित पदका भङ्ग स्त्यानगृद्धिके समान है। अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्भुहर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो छिद्यासठ सागर है। पुरुषवेदकी चार वृद्धि, चार हानि स्रौर स्रवस्थित पदका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्य बन्धका जघन्य श्चन्तर अन्तर्भुक्ति है और उत्कृष्ट त्रान्तर साधिक दो छियासठ सागर है। नपुंसकवेद, पाँच संस्थान. पाँच संहनन, अप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग, दुस्वर और अनादेयकी धर्सख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उक्तृष्ट अन्तर साधिक दोक्षियासठ सागर श्रीर कुछ कम तीन परूष है। दो इद्धि श्रीर दो हानियोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तञ्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्भुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो **छियासठ** सागर **ऋौर कुछ कम तीन पर्न्य है। नरकायु, मनुष्यायु और देवायुके असंख्यातभाग हानि और अव-**क्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्भृहुर्त है और उत्कृष्ट अन्तर अनन्त काल है जो असंख्यात अणंतका० असं० ! तिरिक्खायु० असंखेर्जभागहाणि-अवत्तव्वं जह० अंतो०, उक्क० सागरो०सदपुधत्तं । वेडिव्वयछकं तिण्णिचिह्न-हाणि-अविद्वि० जह० एग०, उक्क० अणंतका० । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० अणंतका० असंखे० पिर० । तिरिक्खग०-तिरिक्खाणुपु० असंखेर्जभागविद्व-हाणि-अविद्वि० जह० एग०, उक्क० तेविद्वसागरो० सदं०' । वेबिह्न-हाणि० णाणावरणभंगो । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० असंखेर्जजा लोगा । मणु-सगदि-मणुसाणु० असंखेर्जभागविद्व-हाणि-अविद्विदं जह० अंतो०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० असंखेर्जजा । वेबिह्व० वेहाणि० णाणावरणभंगो । चदुजादि-आदाव-थावरादि०४ असंखेर्जजभागविद्व-हाणि-अविद्विदं जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पंचासीदिसागरोवमसदं । वेबिद्व-हाणी० णाणावरणभंगो । पंचिदि० पर० उस्सा० तस०४ तिण्णिविद्वि-हाणि-अविद्वि० णाणावरणभंगो । अवत्तव्वं जह० अंतो०, उक्क० पंचासीदिसागरोवमसदं । ओरालि० असंखेर्जजभागविद्व-हाणि-अविद्वं जह० एग०, उक्क० तिण्णिपिलदोव-माणि सादि० । वेबिद्व०-हाणि० णाणावरणभंगो । अवत्तव्वं जह० अंतो०, उक्क० अंतो०, उक्क० अंतो०, उक्क० अंतो०,

पुरुगलपरिवर्तन प्रमाण है। तिर्येक्षायुकी असंख्यात भागहानि और अवक्तव्य बन्धका जधन्य श्रम्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर सौ सागर पृथक्तव प्रमाण है। वैक्रियिक छहकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित वन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अनन्तकाल है। अवक्तव्य बन्धका जधन्य अन्तर अन्तर्भृहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर अनन्तकाल है जो असंख्यात पुद्गत परिवर्तन प्रमाण है। तिर्थेख्वगति और तिर्येख्वगत्यानुपूर्वीकी श्रसंख्यात भागवृद्धि, श्रसंख्यात भागहानि स्त्रीर अवस्थित क्च्यका जबन्य स्नन्तर एक समय है स्त्रीर उस्कृष्ट स्नन्तर एक सौ त्रेसठ सागर है। दो वृद्धि और दो हानियोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। ऋवक्तव्य बन्धका जघन्य त्रान्तर अन्तर्मुहूर्त है और उल्कृष्ट त्रान्तर त्रासंख्यात लोक प्रमाण है। मनुष्यगति और मनुष्यग-त्यानुपूर्वीकी असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि स्त्रीर स्रवस्थित बन्धका जघन्य स्नन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर असंख्यात लोक प्रमाण है। दो वृद्धि और दो हानियोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। चार जाति, आतप और स्थावर त्रादि चारकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि श्रौर श्रवस्थित वन्धका जघन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर इन सबका एक सौ पचासी सागर है। दो बृद्धि ऋौर दो हानियोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। पञ्चेन्द्रिय जाति, परघात, उच्छास और त्रस चतुष्कके तीन वृद्धि, तीन हानि त्रीर द्यवस्थित बन्धका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्य बन्धका अधन्य अन्तर अन्तर्मुहर्त है और उत्कृष्ट अन्तर एक सौ पचासी सागर है। श्रौदारिकशरीरकी श्रसंख्यातभागवृद्धि, श्रसंख्यातभागहानि श्रौर अव-स्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय हैं और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तीन पत्य है। दो वृद्धि और दो हानियोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तत्रय बन्धका जधन्य अन्तर अन्तर्मुहर्त है श्रीर उत्कृष्ट अन्तर श्रानन्तकाल हैं जो श्रासंख्यात पुद्गल परिवर्तन प्रमाण है। श्राहारकद्विककी तीन बृद्धि, तीन हानि और अबस्थितबन्धका जघन्य अन्तर एक समय है। अबक्तव्य बन्धका

१ मूलप्रतौ साग० सत्त वे इति पाठः।

उक ० अद्धपोरंगल । समचदु ०-पसत्थवि०-सुभग-सुस्सर-आदेँ ० तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि० णाणावरणभंगो । अवत्त० जह० अंतो०, उक ० बेछावट्ठि० सादि० तिण्णिपिलदो० देस्० । ओरालि०अंगो०-वज्जरि० तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि० ओरालियसरीरभंगो । अवत्तव्वं जह० अंतो०, उक ० तेँत्तीसं साग० सादि० । उज्जो० तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि० तिरिक्खगदिगंगो । अवत्त० जह० अंतो०, उक ० तेँत्तीसं तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, उक ० अंतो० । अवत्तव्वं जह० अंतो०, उक ० तेँत्तीसं साग० सादि० । उचागो० तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि० मणुसगदिभंगो । अवत्तव्वं तं चेव । असंखेजजगुणवड्डि-हाणि० णाणावरणभंगो । णीचागो० असंखेजजभागवड्डि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, उक ० बेछावट्डिसाग० सादि० तिण्णिपिलदोवमाणि देस्० । बेवड्डि हाणी० णाणावरणभंगो । अवत्तव्वं जहण्णेण अंतो०, उक ० असंखेजजा लोगा ।

८८३. णिरएसु धुविगाणं तिष्णिवड्ढि हाणी० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अबद्धि० जह० एग०, उक्क० बेसम०। थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणु०४-इत्थि० णवुंस०-दोगदि०-पंचसंठा०-पंचसंघ०- दोआणु०-उज्जो०-अप्पसत्थवि०-द्मग-दुस्सर-अणादे० णीचुचागोदं तिष्णिवड्ढि-हाणि-अबद्धि० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क०

जबन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर इन सबका अर्धपुद्गाल परिवर्तन प्रमाण है। सम-चतुरस्र संस्थान, प्रशस्त विहायोगित, सुभग, सुस्वर श्रीर श्रादेयकी, तीन वृद्धि, तीन हानि श्रीर श्रवस्थित बन्धका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्य बन्धका जघन्य श्रन्तर श्रन्तर्महर्त है और उत्क्रष्ट अन्तर साधिक दो छियासठ सागर और कुछ कम तीन पत्य है। श्रौदारिक श्राङ्गो-पाङ्ग श्रौर वज्रर्षभनाराचसंहननकी तीन वृद्धि, तीन हानि श्रौर ऋवस्थित बन्धका भङ्ग औदारिक शरीरके समान है। अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्भृहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। उद्योतकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका भङ्ग तिर्येक्कगतिके समान है। अवक्तव्य बन्धका जबन्य अन्तर अन्तर्भृहूर्त है श्रीर उत्कृष्ट अन्तर एक सी त्रेसठ सागर है। तीर्थक्कर प्रकृतिकी तीन वृद्धि, तीन हानि और श्रवस्थित बन्धका जघन्य श्रन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्भृहूर्त है। अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्भृहर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। उच्चगोत्रकी तीन वृद्धि, तीन हानि श्रीर अवस्थित बन्धका भङ्ग मनुष्यगतिके समान है। अवक्तव्य वन्धका वही भङ्ग है। असंख्यातगुणवृद्धि और त्रसंख्यातगुणहानिका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। नीचगोत्रकी श्रसंख्यातभागवृद्धि, असंख्यात भागहानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो छियासठ सागर और कुछ कम तीन पल्य है। दो वृद्धि और दो हानियोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्भुहूर्त हैं और उत्कृष्ट अन्तर असंख्यात लोक प्रमाण है।

८६३. नारिकयोंमें धुववन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि और तीन हानियोंका अधन्य श्रान्तर एक समय है और उत्कृष्ट श्रान्तर श्रान्तमुंहूर्त हैं। श्रावस्थितवन्धका अधन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिध्यात्व, अनन्तानुबन्धी चार, स्नीवेद, नपुंसक्वेद, दो गति, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, दो श्रानुपूर्वी, उद्योत, श्राप्रशस्त विहायोगिति, दुर्भग, दुस्वर, श्रानादेय,

१ मूरूप्रती दोअंगो० उज्जो० इति पाठः ।

तेंचीसं साग० देस्०। सादादिवारस० तिष्णिवड्डि-हाणि-श्रवद्विदं जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० जह० उक्क० अंतो०। पुरिस०-समचदु० वज्जरि०-पसत्थ०-सुमग-सुस्सर-आदेँ० तिष्णिवड्डि-हाणि अवद्वि० सादमंगो। अवत्तव्वं हित्थमंगो। दोआयु० दोपदा जह० अंतो०, उक्क० छम्मासं देस्२। तित्थय० तिष्णिवड्डि-हाणि० ज० एग०, उक्क० अंतो०। अवद्वि० जह० एग०, उक्क० वंसमयं। अवत्त० णित्थ अंतरं। एवं तीसु पुढवीसु तित्थक०। णवरि पढमाए अवत्त० णित्थ। छसु उवरिमासु मणुस०-मणु-साणुपुव्वीणं उचा० पुरिसमंगो। सेसाणं अप्यप्णो अंतरं माणिदव्वं। सत्तमाए णिरयोघं।

८८४. तिरिक्षेस धुनिगाणं तिण्णिनिहु-हाणि० ओघं। अनिह जह० एग०, उक्क० चत्तारि समयं। थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुकंधि०४ असंखेंडज०निडु-हाणि-अनिह जह० एग०, उक्क० तिण्णि पिलदो० देस्र०। बेनिहु-हाणि-अनत्त० ओघं। सादादिबारस ओघं। इत्थिने० तिण्णिनिहु-हाणि-अनिह थीणगिद्धिभंगो। अनत्त० जह० श्रंतो०, उक्क० तिण्णि पिलदो० देस्र०। अपचक्काणा०४-णवुंस०-पंचसंठा-

तीचगोत्र श्रीर उच्चगोत्रकी तीन वृद्धि, तीन हानि और श्रवस्थितवन्धका जधन्य श्रन्तर एक समय है, श्रवक्तव्यवन्धका जधन्य अन्तर श्रन्तर्मुहूर्त है और उन्छष्ट श्रन्तर इन सबका कुछ कम तेतीस सागर है। साता श्रादि बारह प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और श्रवस्थितवन्धका जधन्य श्रन्तर एक समय है श्रीर उन्छष्ट अन्तर श्रन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्यवन्धका जधन्य श्रीर उन्छष्ट श्रन्तर श्रन्तर्मुहूर्त है। पुरुष्वद, समचतुरह्मसंस्थान, पश्रश्चकानाराचसंहनन, प्रशस्त विहायोगित, सुभग, सुस्वर और आदेयकी तीन वृद्धि, तीन हानि और श्रवस्थितवन्धका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। अवक्तव्यवन्धका भङ्ग स्त्रीवेदके समान है। दो श्रायुओंके दो पदोंका जधन्य अन्तर श्रन्तर्मुहूर्त है श्रीर उन्छष्ट अन्तर श्रुह्त कम छह महीना है। तिथंकर प्रकृतिकी तीन वृद्धि श्रीर तीन हानियोंका जधन्य अन्तर एक समय है श्रीर उन्छष्ट अन्तर दो समय है। श्रवक्तव्यवन्धका श्रन्तर काल नहीं है। इसी प्रकार तीन पृथिवियोंमें तिथंकर प्रकृतिका श्रन्तर काल है। इतनी विशेषता है कि पहली पृथिवीमें अवक्तव्यपद नहीं है। श्रामेकी छह पृथिवियोंमें मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी श्रीर उच्चगोत्रका भङ्ग पुरुष्वेदके समान है। श्रेष प्रकृतियोंका अपना-श्रपना श्रन्तर काल कहना चाहिये। सातवीं पृथिवीमें सामान्य नारियोंके समान भङ्ग है।

द्र तिर्यक्रों भें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि और तीन हानियोंका भङ्ग श्रोधके समान है। श्रवस्थितबन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर चार समय है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिध्यात्व और अनन्तानुबन्धी चारकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागवानि और अवस्थितबन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पत्य है। दो वृद्धि, दो हानि और अवक्तव्यवन्धका अन्तर काल ओघके समान है। साता आदि वारह प्रकृतियोंका भङ्ग शोधके समान है। स्रविद्का तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितबन्धका भङ्ग स्त्यानगृद्धिके समान है। अवक्तव्यवन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पत्य है। अप्रत्याख्यानावरण चार, नपुंसकवेद, पाँच संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, आतप,

१ मुखप्रती जह ० एग० उक्क इति पाठः।

अतिरिश्चंगो० - छस्संघडण-आदाउउजो०-अप्यसत्यवि०-द्भग-दुस्सर-अणादेँ० असंसैंडजभागविद्व-हाणि-अविद्विदं जह० एग०,उक० पुन्तकोडी देस्व०। वेबिद्व-हाणी० ओधं। अवत्त०
जह० श्रंतो०, उक० पुन्तकोडि०। णविरि अपचक्ताणा० अवत्त० उक० अद्ध्योग्ग०
लगिर०। पुरिस० तिण्णिविद्व-हाणि-अविद्वि० णाणावरणभंगो। श्रवत्त० जह० श्रंतो०,
उक० तिण्णि पिलदो० देस्व०। तिण्णिआयुगाणं दोपदा जह० अंतो०, उक० पुन्तकोडितिमागं देस्रणं। तिरिक्खायुगस्स दोपदा जह० अंतो०, उक० पुन्तकोडी० सादि०।
वेउन्त्रियछक-मणुसगदि-मणुसाणु०-उचागो० ओघं। पंचिदि० समचदु०-पर०-उस्सा०पसत्य०-तस०४-सुमग-सुस्सर-आदेँ० तिण्णिविद्व-हाणि-अविद्व० पुरिसवेदभंगो। अवत्तन्वं
जह० अंतो०, उक० पुन्तकोडी देस्रणं। तिरिक्खाग०-चदुजादि-ओराखि०-तिरिक्खाणु०थावरादि०४-णीचागो० णवुंसगभंगो। णविरि तिरिक्खगिद-ओरालि०-तिरिक्खाणु०णीचा० अवत्तन्वं ओघं।

८८५. पंचिदि०तिरिक्ख०३ धुनिगाणं बेनड्डि हाणी० जह० एग०, उक्क० अंती०। संसैंअगुणबड्डि हाणी० जह० एग०, उक्क० पुन्त्रकोडिपुधत्तं । अबट्टि० जह० एग०, उक्क० तिण्णिसम० । थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४ तिण्णिबड्डि हाणि-अबट्टिदं जह०

उद्योत, अप्रशस्तविद्दायोगति, दुर्भग, दुस्वर और अनादेयकी असंख्यातभागनृद्धि, असंख्यात-भागहानि श्रीर अवस्थितवन्धका जघन्य श्रान्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रान्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि है। दो वृद्धि श्रौर दो हानियोंका भङ्ग श्रोघके समान है। श्रवक्तव्यवन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि है। इतनी विशेषता है कि अप्रत्याद्याना-वरण चारके श्रवक्तव्यवन्धका उत्कृष्ट श्रन्तर कुछ कम अर्धपुद्गल परिवर्तन प्रमाण है। पुरुषवेदकी तीन वृद्धि, तीन हानि श्रौर श्रवस्थितवन्धका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्यवन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्भृहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन परुय है। तीन आयुत्रोंके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्भुहूर्त हैं श्रोर उरकृष्ट अन्तर एक पूर्वकीटिका कुछ कम त्रिभाग प्रमाण है। तिर्यक्रायुके दो पदोंका जर्बन्य अन्तर अन्तर्भुहर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक एक पूर्वकोटि है। वैक्रियिक छह, मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी श्रीर उच्चगोत्रका भङ्ग ओघके समान है। पक्रोन्द्रियजाति, समचतुरस्रसंस्थान, परघात, उच्छ्वास, प्रशस्तविद्दायोगित, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर श्रीर श्रादेयकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका भङ्ग पुरुषवेदके समान है। अवक्तव्य बन्धका जघन्य अपन्तर अपन्तर्मुहूर्त है अपीर उल्कुष्ट अप्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि है। तिर्यक्रागति, चार जाति श्रीदारिकशरीर, तिर्यक्क्षगत्यानुपूर्वी, स्थावर त्रादि चार श्रीर नीचगोत्रका भङ्ग नपुंसकवेदके समान हैं। इतनी विशेषता है कि तिर्येख्यगति, श्रीदारिकशरीर, तिर्येख्यगत्यानुपूर्वी श्रीर नीचगोत्रके श्रवक्तव्यवन्धका भङ्ग ओघके समान है।

प्रस्था. पञ्चेन्द्रिय तिर्यक्कितिकमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी दो वृद्धि और दो हानियोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। संख्यातराणवृद्धि और संख्यातराणहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटि पृथक्तव प्रमाण है। अवस्थितबन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर तीन समय है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिध्यात्व और अनन्तानुबन्धी चारकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है

एग०, उक्क० तिण्णिपिलदो० देस्०। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तिण्णिपिलदो० देस्० पुन्वकोडिपुघ०। अपचक्खाणा०४ णवुं सगभंगो। णविर अवत्तन्त्रं जह०अंतो०, उक्क० पुन्वकोडिपुघनं। सादादिवारस वेबङ्घि-हाणि-अबिद्धि-अवत्त० णिरयभंगो। संखेडिगुणविङ्घि-हाणि-जह० एग०, उक्क० पुन्वकोडिपुघ०। इत्थिवे० तिण्णिविङ्ग-हा०-अबिद्धि० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तिण्णिपिलदो० देस०। पुरिसवे० तिण्णिविङ्ग-हाणि-अबिद्धि० सादभंगो। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तिण्णिपिलि० देस०। णवुंसकवे०-तिण्णिगिति-चदुजादि-ओरालि०-पंचसंठा०-ओरालि० अंगो०-छस्संघ०-तिण्णिआणु०-आदा-उन्जो०-अप्पतत्थिव०-थावरादि०४-दूभग-दुस्सर-अणादे०-णीचागो०वेबिङ्ग-हाणि-अबिद्धि० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पुन्वकोडी० देस०। संखे०गुणविङ्ग-हाणि० जाणावरणभंगो। चदुण्णं आयुगाणं तिरिक्खोघो। देवगदि०४-पंचिदि० समचदु० पर०-उस्सास-पसत्थवि० तस०४-सुभग सुस्सर-आर्दे०-उचा० तिण्णिबङ्गि-हाणि-अबिद्ध० साद-भंगो। अवत्त० णवुंसगभंगो।

८८६. पंचिदियतिरिक्खअपज्जत्तमेसु धुविगाणं तिण्णिवड्डि-हाणि० जद्द० एग०,

और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन परय है। अवक्तज्य बन्धका जवन्य अन्तर अन्तर अन्तर्महर्त है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटि पृथक्त अधिक कुञ्जकम तीन परुव है। अप्रत्याख्यानावरण चारका भङ्ग न्तुंसक वेदके समान है। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य बंधका जधन्य अन्तर अन्तमृहुर्त है। और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम पूर्वकोटि पृथक्त प्रमाण है। साता आदि वारह प्रकृतियोंकी दो वृद्धि, दो हानि, अवस्थित श्रीर श्रवक्तव्यवस्थका भङ्ग नारिकयोंके समान है। संख्यातगुणविद्ध श्रीर संख्यात-गुणहानिका जचन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम पूर्वकोटि पृथकत्व प्रमाण है। स्त्रीवेदकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितबन्धका जघन्य अन्तर एक समय है अवक्तव्य-वन्धका जवन्य अन्तर अन्तर्भृहूर्त है और इन सबका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पत्य है। पुरुष-वेदकी तीन बद्धि, तीन हानि स्रोर अवस्थितवन्यका भङ्ग सातावेदनीयके समान है । अवक्तव्यवन्यका जयन्य अन्तरं अन्तर्भुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य है। नपुंसकवेद, तीन गति. चार जाति, औदारिकशरीर, पाँच संस्थान, औदारिकआङ्गोपांग, छह संहनन, तीन आनुपूर्वी, आतप उद्योत, अप्रशस्तविहायोगति, स्थायर आदि चार, दुर्भग, दुस्वर, अनादेय और नीचगोत्रकी दो वृद्धि, दो इ।िन और अवस्थितवस्थका जयस्य अन्तर एक समय है, अवक्तज्यवस्थका जयस्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर इन सबका कुछ कम एक पूर्वकोटि है। संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिका भंग ज्ञानावरणके समान है। चार त्रायुत्रोंका भङ्ग सामान्य तिर्यक्रोंके समान है। देवगतिचतुष्क, पञ्चेन्द्रियजाति, समचतुरस्रसंस्थान, परघात, उच्छुास, प्रशस्तविहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, अ।देव और उच्चगोत्रकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितदन्यका भङ्ग साताबेदनीयके समान है। अवक्त व्यवन्धका भङ्ग न्युंसकवेदी जीवोंके समान है।

मम्ह. पश्चेन्द्रियतिर्यश्च अपर्याप्तकों में ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि और तीन हानियोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्भुंहुर्त । अवस्थितबन्धका उक्क अंतो । अवडि अहर एग ०, उक्क विष्णिसमयं । सेसाणं णिरयसादमंगी । एघं सञ्जञ्जनाणं ।

८८७. मणुस०३ पंचिदियतिरिक्खमंगो । णवरि संखेजजगुणविद्विन्हाणि० उक्क० अंतो०। खिवयाणं असंखेजजगुणविद्वि-हाणि-अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पुष्वकोिडिपुधत्तं। मणुसअप० धुवियाणं तिरिक्खअपज्जत्तमंगो । णवरि अवद्वि० जह० एग०, उक्क० वेसम०। सेसाणं सादमंगो ।

८८८. देवेसु धुविगाणं णिरयमंगो। थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुवंधि०४इत्थि०-णवंस०-पंचसंठा० पंचसंघ०-अप्पसत्थ०-दूभग दुस्सर-अणार्दें० णीचा० तिण्णिविद्धहाणि-अविद्वि० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० ऍकत्तीसं साग० देस्व०। सादादिवारस० णिरयमंगो। पुरिस०-समचदु०-वज्जिरि०-पसत्थ० सुमग-सुस्सर आर्देज्ज०-उच्चा०
तिण्णिविद्वि हाणि-अविद्वि० सादमंगो। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० ऍकत्तीसं सा०
देस्व०। दोआयु० णिरयमंगो। तिरिक्खगिद-तिरिक्खाणुपु०-उज्जोवं तिण्णिविद्वि-हाणि-अविद्वि० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० अद्वारस सागरोवमाणि सादि०।
मणुसगिद-मणुसाणु० तिण्णिविद्व-हाणि-अविद्वि० सादमंगो। अवत्त० तिरिक्खगिदभंगो।
एइंदिय-आदाव-थावर० तिण्णिविद्व-हाणि-अविद्व० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०,

जधन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर तीन समय है। शेप प्रकृतियोंका भङ्ग नारिकयोंमें सातावेदनीयके समान है। इसी प्रकार सब् अपूर्याप्तक जीवोंके जानना चाहिये।

द्रपण मनुष्यत्रिकमें पञ्चिन्द्रियतिर्यञ्चोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि संख्यात गुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिका उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। चपक प्रकृतियोंकी असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्य बन्धका जधन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटि पृथक्त प्रमाण है। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंका भङ्ग तिर्यक्ष अपर्याप्तोंके समान है। इतनी विशेषता है कि अवस्थित बन्धका जधन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग साता वेदनीयके समान है।

द्या देवों में ध्रुयवन्धवाली प्रकृतियोंका भङ्ग नारिकयोंके समान है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिध्यात्व, अनन्तानुबन्धी चार, स्वीवेद, नपुंसकवेद, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, अप्रशस्त विहार्योगित, दुर्भग, दुस्वर, अनादेय और नीचनोत्रकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका जवन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्यवन्धका जवन्य अन्तर अन्तर्महूर्त है और इन सबका उत्कृष्ट अन्तर दुख कम इकतीस सागर है। साता आदि बारह प्रकृतियोंका मङ्ग नारिकयोंके समान है। पुरुपवेद, समचतुरस्रसंस्थान, वज्रक्षणभनाराच संहनन, प्रशस्त्रविहायोगित, सुभग, सुस्वर, आदि और उच्चगोत्रकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका मङ्ग सातावेदनीयके समान है। अवक्तव्यवन्धका जवन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम इकतीस सागर है। दो आयुओंका भङ्ग नारिकयोंके समान है। तिर्यञ्जगित, विर्यञ्जगत्यानुपूर्वी और उद्योतकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्महूर्त है और इन सबका उत्कृष्ट अन्तर साधिक अठारह सागर है। मनुष्यगति, और मनुष्य-गत्यानुपूर्वीकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। अव-क्त्यवन्धका भङ्ग तिर्येद्धगतिके समान है। एकेन्द्रियज्ञाति, आतप और स्थावरकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। अव-क्त्यवन्धका भङ्ग तिर्यद्धगतिके समान है। एकेन्द्रियज्ञाति, आतप और स्थावरकी तीन वृद्धि, तीन क्रिंत, तीन

इक्क विसामती व स्नादि । पंचिदि - औराखि - अंगो - न्तस व तिण्णिविश्व - हाणि - अविद्व । सादमंगो । अवत्त व एइंदियमंगो । तित्थय व धुवमंगो । एवं सब्वदेवाणं अप्पप्पणो अंतरं कादन्वं ।

८८९. एइंदिएसु धुवियाणं एक्कविष्टु-हाणी जह० एग०, उक्क० अंतो०। अविष्टु॰ जह० एग०, उक्क० बेसम०। एवं सव्वएइंदियाणं णादव्वं। णविर तिरिक्खगिद-तिरिक्खाणु०-णीचा० अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० असंखें ज्जलोगा। बादरे कम्मिट्टदी। पज्जत्ते संखें ज्जाणि वाससहस्साणि। सुदुमे असंखें ज्जा लोगा। मणुसगिदिद्ग-उच्चागो० एक्कविट्ट-हाणि-अविट्टि० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० असंखें ज्जा लोगा। बादरे कम्मिट्टदी। पज्जत्ते संखें ज्जाणि वाससहस्साणि। सुदुमे असंखें ज्जा लोगा। सेसाणं अपज्जत्तमंगो। णविर दो आयुगं पगिद अंतरं। विगि लिंदि० दो आयु० पगिद अंतरं। सेसाणं मणुसअपज्जत्तमंगो।

८६०. पंचिदिय०२ पंचणा०-चदुर्दसणा०-चदुर्सज०-पंचंतरा० वेवड्डि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०. उक्क० अंतो० । संखेँजजगुणवड्डि-हाणी० जह० एग०, उक्क० पुन्तकोडि-पुधर्च । असंखेँजजगुणवड्डि-हाणि-अवत्तव्वं जह० अंतो०, उक्क० कायद्विदी० । णवरि

हानि स्रोर स्रवस्थित बन्धका जघन्य स्रन्तर एक समय है, स्रवक्तन्य बन्धका जघन्य स्रन्तर स्रन्त-मुंहूर्त है स्रोर इन सबका उत्कृष्ट स्रन्तर साधिक दो सागर है। पंक्रिन्द्रिय जाति, स्रोदारिक स्राङ्गी-पाङ्ग स्रोर त्रसकी तीन वृद्धि, तीन हानि धौर स्रवस्थित बन्धका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। स्रवक्तन्य बन्धका भङ्ग एकेन्द्रियके समान है। तीर्थेङ्कर प्रकृतिका भङ्ग ध्रुप्तवन्यवाली प्रकृतियोंके समान है। इसी प्रकार सब देवोंके, स्रपना-स्रपना श्रान्तर काल जान लेना चाहिये।

दन्ह. एकेन्द्रियोंमें ध्रुववन्धवाली प्रकृतियोंकी एक वृद्धि, और एक हानिका जवन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मृहूर्त है। अवस्थित बन्धका जवन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है। इसी प्रकार सब एकेन्द्रियोंके जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि तिर्यक्काति, तिर्यक्कारत्मानुपूर्वी और नीचगोत्रके अवक्तव्य बन्धका जवन्य अन्तर अन्तर्मृहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर असंख्यात लोक प्रमाण है। बादर एकेन्द्रियोंमें कर्मस्थिति प्रमाण है। पर्यानकोंमें संख्यात हजार वर्ष है। सूदम एकेन्द्रियोंमें असंख्यात लोक प्रमाण है। मनुष्यगति दिक और उच्चगोत्रकी एक वृद्धि, एक हानि और अवस्थित बन्धका जवन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्य बन्धका जवन्य अन्तर अन्तर्मृहूर्त है और इन सबका उत्कृष्ट अन्तर असंख्यात लोक प्रमाण है। बादर एकेन्द्रियोंमें कर्मस्थिति प्रमाण है। पर्याप्तकोंमें संख्यात हजार वर्ष है। सूदम एकेन्द्रियोंमें असंख्यात लोक प्रमाण है। वादर एकेन्द्रियोंमें कर्मस्थिति प्रमाण है। पर्याप्तकोंमें संख्यात हजार वर्ष है। सूदम एकेन्द्रियोंमें असंख्यात लोक प्रमाण है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग अपर्याप्तकोंके समान है। इतनी विशेषता है कि दो आयुओंका भङ्ग प्रकृतिबन्धके अन्तरके समान है। विकलेन्द्रियोंमें दो आयुओंका भङ्ग प्रकृतिवन्धके अन्तरके समान है। विकलेन्द्रियोंमें दो आयुओंका भङ्ग प्रकृति बन्धके अन्तरके समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग मनुष्य अपर्याप्तकोंके समान है।

द्धः पद्धेन्द्रियद्विकमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच अन्तरायकी दो वृद्धि, दो हानि और अवस्थितबन्धका जधन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिका जधन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटि पृथक्त प्रमाण है। असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानिऔर अवक्तव्यवन्धका जधन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कायस्थिति प्रमाण है। इतनी विशेषता है कि असंख्यातगुणवृद्धिका

असंखें जगुणवड्डि० जह० एग०। थीणगिद्धि०३—मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४ तिण्णिवड्डिहाणि-अवट्ठि० जह० एग०, उक० बेछाबद्धिसाग० देस०। अवत्त० णाणावरणमंगो।
सादा० जस० चतारिवड्डि-हाणि-अवट्ठि० णाणावरणमंगो। अवत० जह० उक० अंतो०।
णिहा-पचला-भय०-दुगुं०-तेजा०-कम्मइगादिणव० तिण्णिबड्डि—हाणि-अवट्ठि०-अवत्तवं च
णाणावरणमंगो। असादादिदस० तिण्णिबड्डि—हाणि-अवट्ठि०-अवत्त० सादावे०मंगो।
अद्धक०दोवड्डि-दोहाणि०-अवट्ठि० जह० एग०, उक० पुव्वकोडी देस०। संखें जगुणवड्डि-हा०अवत्तव्वं० णाणावरणमंगो। इत्थिवे० तिण्णिबड्डि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, अवत्त०
जह० अंतो०, उक० बेछाबट्ठि० देस०। पुरिस०४बड्डि-हाणि-अवट्ठि० णाणावरणमंगो।
अवत्त० जह० अंतो०, उक० बेछाबट्ठि० सादि० दोहि पुच्यकोडीहि०। णवंस०-पंचसंठा०पंचसंघ०—अप्पसत्य०-दूभग दुस्सर—अणादे० तिण्णिबड्डि—हाणि-अवट्ठि० जह० एग०,
अवत्त० जह० अंतो०, उक० बेछाबट्ठि० सादिरे० तिण्णिपिहदो देस०। तिण्णिआयु०
दोपदा० जह० अंतो०, उक० सागरो०सदपुध०। मणुसायु० दोपदा० जह० अंतो०,
उक० सागरोवमसहस्सा० पुच्यकोडिपुधत्तं। पञ्जत्तगे चहुण्णंआयुगाणं दोपदा० जह०
अंतो०, उक० सागरो०सदपु०। णिरयगदि-चदुजादि-णिरयाणु०-आदाव-थावरादि०४
तिण्णिबड्डि-हाणि-अबट्ठि० जह० एग०, अवत्त० अंतो०, उक० पंचासीदिसागरो०-

जघन्य अन्तर एक समय है। स्त्यानगृद्धि तीन मिध्यात्व श्रीर श्रनन्तानुबन्धी चारकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितबन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो छथ।सठसागर है । श्रवक्तव्यवस्थका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है । सातावेदनीय और यशःकीर्तिकी चार वृद्धि, चार हानि और स्रवस्थितवस्थका भद्ध ज्ञानावरणके समान है । स्रवक्तव्यवस्थका जवस्य श्रीर उत्कृष्ट स्रस्तर अन्तर्मुहूर्त है। निद्रा, प्रचला, भय, जुगुप्सा, तैजसशरीर श्रीर कार्मणशरीरादि नौ प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्यवन्धका भङ्ग झानावरणके समान है। असाता ऋादि दस प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तत्र्यवन्धका सङ्ग सातावेदनीयके समान हैं। त्राठ कषायोंकी दो वृद्धि, दो हानि और अवस्थितवन्धका जवन्य अन्तर एक समय है और उस्कृष्ट श्रम्तर कुछ कम् एक पूर्वकोटि है । संख्यातगुणवृद्धि, संख्यातगुणहानि श्रौर श्रवक्तव्यवन्धका मंग झाना-वरणके समान है। स्त्रीवेदकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितवन्धका जवन्य अन्तर एक समय हैं, ऋयक्तब्यवन्धका जबन्य अन्तर् खेन्तर्मुहूर्त है खोर इन सबका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो छथासठ सागर है। पुरुषवेदकी चार वृद्धि, चार हानि और अवस्थितवन्धका भंग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्यवन्यका जवन्य श्रन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर दो पूर्वकोटि अधिक दो ख्रयासठ सागर है। नपुंसकवेद, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, अप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग, दुस्वर ऋौर ऋनादे-यकी तीन बुद्धि, तीन हानि ऋौर श्रवस्थितबन्धका जघन्य अन्तर एक समय है, श्रवक्तव्यबन्धका जघन्य श्चन्तर अन्तेर्मुहूर्त है और इन सबका उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो खबासठ सागर और कुछ कम तीन पत्य हैं। तीन आयुओंके दो पदोंका जबन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर सौ सागर पृथक्त प्रमाण है । मनुष्यायुके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्भुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटि प्रथक्त अधिक एक हजार सागर है। पर्याप्तकोंमें चारों आयुओंके दो पर्दोका जवन्य अन्तर अन्त-मुंहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर सौ सागर पृथक्त्व प्रमाण है। नरकगति, चार जाति, नरकगत्यानुपूर्वी, आतप श्रीर स्थावर श्रादि चारकी तीन वृद्धि, तीन हानि श्रीर श्रवस्थितबन्धका जवन्य अन्तर एक

सद० । तिरिक्खगदि-तिरिक्खाणु०-उज्जो० तिण्णिबड्डि-हाणि-अबट्ठि० जह० एम०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तेबिट्ठसाम०सदं० । मणुसग०-देवग०-वेउव्वि०-वेउव्वि०-अंगो०-वेआणु० तिण्णिबड्डि-हा०-अबट्ठि० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तेंसीसं साग० सादि० । पंचिदि०-पर०-उस्सास-तस०४ तिण्णिबड्डि-हा०-अबट्ठिणाणावरणभंगो । अवत्त० जह० श्रंतो०, उक्क० पंचासीदिसाग०सद० । ओरालि०-ओरालि०अंगो०-वजारस० तिण्णिबड्डि-हाणि-अबट्ठि० जह० एग०, उक्क० तिण्णिपलिदो० सादि० । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तेंसीसं सा० सादि० । आहारदुगं तिण्णिबड्डि-हाणि-अबट्ठि० जह० कायट्ठिदी० । समचदु०-पसत्थ० सुभग-सुस्सर-आदें० तिण्णिबड्डि-हाणि-अबट्ठि० णाणावरणभंगो । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० बेटाबट्टिसाग० सादि० तिण्णिपलिदो० देस्च० । तित्थय० ओघं । णीचा० णवंस-गभंगो । उच्चा० तिण्णिबड्डि-हाणि-अबट्ठि० देयादिभंगो । असंखें अगुणबड्डि-हाणी० सादभंगो । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० बेटाबट्टिस तिण्णपलिदो० देस्च० । स्वत्यक्ति तिण्णिपलिदो० देस्च० । एवं तस-तसपञ्चत्ते । णवरि सगद्दिदी भाणिदच्या ।

८६१. तसअपरजत्तगेसु धुत्रिगाणं तिष्णिवड्डि-हाणी० जह० एग०, उक्क० अंतो० ।

समय हैं, अवक्तव्यबन्यका जबन्य श्रन्तर श्रन्तमुंहूर्ते हे और उख्दृष्ट श्रन्तर एकसौ पचासा सागर हे । तिर्येख्वगति, तिर्येख्वगत्यानुपूर्वी श्रौर उद्योतकी तीन वृद्धि, तीन हानि श्रौर अवस्थितवन्धका जघन्य श्रम्तर एक समय है, श्रवक्तव्यबन्धका जवन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है श्रौर इन सबका उत्कृष्ट अन्तर एकसौ त्रेसठ सागर है। मनुष्यगति, देवगति, वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिकत्रांगोपाङ्ग, स्रौर दो आनु-पूर्वीकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितवन्धका जघन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्यवन्धका जघन्य अन्तरअन्तर्भुहूर्त है और इन सत्रका उक्कष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है । पञ्चेन्द्रिय जाति. पर्धात, उच्छवास और त्रसचतुष्ककी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितवन्थका भङ्ग ज्ञानावरणके समात है। अवक्तव्यवन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त हे और उक्षुष्ट अन्तर एकसौपचासी सागर हैं । औदारिकशरीर, श्रौदारित्रांगोपांग श्रौर वज्रऋषभनाराच संहतनकी तीन वृद्धि, तीन हानि श्रौर श्रवस्थितवन्धका जघन्य अन्तर एक समय हैं और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तीन पह्य हैं । श्रवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर श्रन्तर्भुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। आहारकद्विककी तीन शृद्धि, तीन हानि और अवस्थितवन्धका जवन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्यवन्धका जवन्य अन्तर अन्तर्मेहर्त है और इन सबका उल्कृष्ट अन्तर कायस्थिति प्रमाण हैं | समचतुरस्र संस्थान, प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर श्रीर आदेयकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितबन्धका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्यबन्धका जवन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो छियासठ सागर और कुछ कम तीन पत्य हैं। तीर्थंकर प्रकृतिका भंग ज्योचके समान हैं। नीचगोत्रका भंग नपुंसकवेदके समान है। उच्चगोत्रकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित-बन्धका भक्क देवगतिके समान है। असंख्यातगुणवृद्धि और असंख्यातगुणहानिका भक्क साता-वेदनीयके समान है । अवक्तव्यवन्थका जयन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है स्त्रीर उःकृष्ट अन्तर साधिक दो क्रियासठ सागर और कुछ कम तीन पत्य हैं। इसी प्रकार त्रस ख्रौर त्रसपर्याप्त जीवोंके जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि अपनी-अपनी स्थिति कहनी चाहिये।

८६१. त्रस अपर्याप्तकोंमें ध्रुववन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन युद्धि और तीन हानियोंका जधन्य

अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० चत्तारि स० । सेसाणं तिरिक्खअपजत्तभंगो ।

८९२. पंचमण०-पंचवचि० पंचणा०अद्वारस० तिण्णिवड्डि-हा० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० बेसमयं। असंखेंज्जगुणवड्डि हाणि० जहण्णु० अंतो०। अवच० णित्य अंतरं। पंचदंस०-मिच्छ० वारसक०-भय दुगु०-तेजइगादिणव-आहारदुग-तित्थयर० तिण्णिवड्डि—हा०-अवट्ठि०-अवच० णाणावरणभंगो। सादा० - पुरिस०-जस०-उचा० तिण्णिवड्डि—हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० अंतो०। असंखेंज्जगुणवड्डि-हा० जह० उक्क० अंतो०। अवच० णित्थ अंतरं। इत्थि०-णवुंस०-हस्स-रिद-अरिद-सोग-चदुगदि-पंचजादि-ओरालि०-वेउच्चि०-छस्संठाण-दोअंगो०-छस्संघ०-चदुआणु०-पर०-उस्सा०-आदाउज्जो०-दोविहा०-तस-थावरादिणवयुगल-अजस०-णीचा० तिण्णवड्डि हा०-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवच० णित्थ अंतरं। चदुण्णं आयुगाणं दोपदा० णित्थ अंतरं। एवं ओरालि० वेउच्चि०-आहार०। णविर ओरालि० काईसु० विसेसो। परियत्तमाणिगाणं अवच० जहण्णु० अंतो०।

८९३. कायजोईसु पंचणा०-चदुदंस०-चदुसंज्ञ०-पंचंत० तिण्णिवहिन्हा०-अवहि० ओषं । असंखेजनगुणविद्विन्हा० जह० उक्क० अंतो०। णविर बिद्वि० जह० एग०। श्रवत्त० श्रम्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थितबन्धका जघन्य

श्चन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट श्चन्तरकाल चार समय है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान है।

६६२. पाँच मनोयोगी और पाँच बचनयोगी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण श्रादि अ'ठारह प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि और तीन हानियोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उद्ध्रष्ट श्रन्तर काल श्रन्तर्मुहूर्त है। अवस्थितवन्धका जघन्य श्रन्तर काल एक समय है और उक्कर अन्तरकाल दो समय है। असंख्यातगुणरुद्धि और असंख्यात गुणहानिका जधन्य श्रीर उत्कृष्ट अन्तर काल श्रन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य बन्धका अन्तर काल नहीं है। दर्शनावरण, मिथ्यात्व, बारह कषाय, भय, जुगुत्सा, तैजसशरीर श्रादि नी, श्राहारकद्विक श्रीर तीर्थद्वर प्रकृतिकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्य बन्धका भङ्ग झानावरणके समान है। सातावेदनीय, पुरुपवेद, यशःकीर्ति और उच्चगात्रकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्यका जयन्य अन्तर काल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है। ऋसंख्यातगुणवृद्धि श्रीर असंख्यात गुणहानिका जधन्य और उक्ष्कृष्ट श्रन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य बन्धका अन्तर काल नहीं है। स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, हास्य, रति, अरति, शोक, चारगति, पाँच जाति, ऋौदारिक-शरीर, वैक्रियिकरारीर, छह संस्थान, दो आङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, चार आनुपूर्वी, परघात, उच्छवास, स्रातप, उद्योत, दो विहायोगति, त्रस और स्थावर स्रादि नी युगल, स्रयशःकीर्ति और नीचगोत्रकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्भुहूर्त है। अवक्तव्य बन्धका अन्तर काल नहीं है। चार आयुत्रोंके दो पदोंका श्रान्तर काल नहीं है। इसीप्रकार श्रीदारिक काययोगी, वैक्रियिक काययोगी श्रीर श्राहारककाय-योगी जीवोंके जानना चाहिये। इतनी विशेषता हैं कि ऋौदारिककाययोगी जीवोंमें परिवर्तमान प्रकृतियोंके श्रावक्तव्य बन्धका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर काल श्रान्तर्मुहर्त हैं।

८६३. काययोगी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच श्रन्त-रायकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका भङ्ग श्रोघके समान है। श्रसंख्यातगुणवृद्धि णित्य अंतरं । थीणिगिद्धितिग-मिच्छ०-नारसक० तिण्णिबिहु-हा० णाणावरणभंगो । अविहि० जह० एग०, उक्क० चत्तारिसम० । णिद्दा-पचला-भय-दु० ओरालि०-तेजइगादि-णव असंखेँज्जभागविहु-हाणि-अविहि० जह० एग०, उक्क० अंतो० । वेबिहु-हा० जह० एग०, उक्क० अणंतकालं असंखेँ० । अवत्त० णित्थ अंतरं । साद०-पुरिस०-जस० चता-रिविहु-हा०-अविह० णाणावरणभंगो । अवत्त० जह० उक्क० अंतो० । आसाद०-छण्णो-कसाय-पंचजादि-छस्पंठा०-ओरालियंगो०-छस्पंघ० पर०-उस्सा० आदाउज्जो०-दोविहा०-तस-थावरादिणवयुगल-अजस० तिण्णिविहु-हाणि० णाणावरणभंगो । अवत्त० जह० उक्क० अंतो० । णिरय देवायुगस्स दोपदा० णित्य अंतरं । तिरक्खायु० दोपदा० ज० अंतो०, उक्क० बावीसं वाससहस्ता० सादि०।मणुसायु० दो वि पदा ओघं । मणुसग०-मणुसाणु० ओघं । वेडिव्वयछक्क-आहारदुग-तित्थयरं तिण्णि-विहु-हाणि-अविह० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवत्त० णित्थ अंतरं । तिरिक्खग०-तिरिक्खाणु०-णीचा० संखेजजभागविहु-हाणि-अविह० जह० एग०, उक्क० अंतो० । वेबिहु हाणि-अवत्त० मणुसगदिभंगो । उचा० मणुसगदिभंगो । णविर असंखेजजगुणविहु० जह० एग०, उक्क० अंतो० । असं-

श्रीर असंख्यातगुणहानिका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट अन्तर काल श्रम्तर्मुहूर्त है। इतनी विशेषता है कि श्रसंख्यातगुणवृद्धिका जघन्य श्रन्तर काल एक समय है। श्रव्नक्तज्य बन्धका श्रन्तर काल नहीं है। रुखानगृद्धि तीन, मिध्यात्व श्रौर बारह कषायकी तीन वृद्धि श्रौर तीन हानियोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर चार समय है। निद्रा, प्रचला, भय, जुगुप्सा, श्रीदारिकशरीर और तैजसशरीरादि नौ प्रकृतियोंकी श्रसं-ख्यातभागवद्धि, असंख्यातभागहानि और ऋषिस्थत वन्धका जघन्य ऋन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। दो वृद्धि और दो हानियोंका जवन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अनन्त काल है जो असंख्यात पुद्गल परिवर्तन प्रमाण है। अवक्तव्य बन्धका अन्तर काल नहीं है। सातावेदनीय, पुरुषवेद और यशःकीर्तिकी चार वृद्धि, चार दानि और अवस्थित बन्धका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्य बन्धका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मृहर्त है। श्रसाता वेदनीय, ब्रह नोकषाय, पाँच जाति, ब्रह संस्थान, श्रीदारिक आङ्गोपाङ्ग, ब्रह संहनन, परघात, उच्छवास, आतप, ज्योत, दो विहायोगित, त्रस और स्थावर आदि नौ युगल और अयशःकीर्तिकी तीन वृद्धि और तीन हानियोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्य बन्धका जचन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्भुहूर्त है। नरकायु और देवायुके दो पदोंका अन्तर काल नहीं है। तिर्बद्धायके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मृहर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक बाईस हजार वर्ष है। मनुष्यायुके दोनों ही पदोंका सङ्ग श्रोघके समान है। मनुष्यगति श्रीर मनुष्यगत्यानुपूर्वीकाः भङ्ग खोघके समान है। वैक्रियिक छह, श्राहारकद्विक और तीर्थंड्सर प्रकृतिकी तीन वृद्धि, तीन हानि श्रीर अवस्थित बन्धका जयन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्महूर्त है। अवक्तव्य बन्धका अन्तर काल नहीं है। तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और नीचगोत्रकी संख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागहानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट अन्तर अन्त-र्महर्त है । दो वृद्धि, दो हानि श्रौर अवक्तव्य बन्यका भङ्ग मनुष्यगतिके समान है । उच्चगोत्रका अब्द मनुष्यगतिके समान है। इतनी विशेषता है कि श्रासंख्यातगुणवृद्धिका जवन्य श्रन्तर एक

खेंज्जगुणहा० जह० उक्क० अंतो०। एवं सन्वाणं असंखेंज्जगुणवड्खि-हाणी०।

्हेश्व. ओरालियमिस्सका० धुविमाणं तिण्णिवड्डि-हा० जह० एम०, उक्क० अंतो०। अवड्ठि० जह० एम०, उक्क० तिण्णि सम०। देवगदि०४-तित्थय० तिण्णिवड्डि-हा० णाणावरणमंगो। अवड्ठि० जह० एम०, उक्क० बेसम०। दोआयु० दोपदा० अपज्जत्त-भंगो। सेसाणं परियत्तमाणियाणं तिण्णिवड्डि-हाणि-अवड्ठि० जह० एम०, उक्क० अंतो०। अवत्त० जहण्णु० अंतो०।

८६५. वेउव्वियमि० वेउव्वियकायजोगिभंगो । णवरि परियत्तमाणियाणं अवत्त० जह० उक्ष० श्रंतो० । एवं आहारमि० । कम्मइ० सच्वाणं णत्थि अंतरं । अथवा वेउव्वि-यमि०-ओरालियमि०-कम्मइ० अवत्त० णत्थि श्रंतरं ।

८०६. इत्थिवे० पंचणा०-चदुदंस०-चदुसंज०-पंचंत० वेबङ्कि-हाणी० जह० एग०, उक्त० अंतो०। संखेज्जगुणबङ्कि-हा० जह० एग०, उक्त० पुन्तकोडिपुघ०। असंखेजजनगुणबङ्कि-हा० जह० एग०, उक्त० प्रा० उक्त० तिण्णि समयं। थीणगिद्धि०३ मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४ तिण्णिबङ्कि-हा०-अबद्घि० जह० एग०, उक्क० पणवण्णं पितदो० देस्र०। अवत्त० जह० संतो०, उक्त० पितदोवमसद्पुघ०। णिद्दा-

समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। असंख्यातगुणहानिका जवन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। इसी प्रकार सब जीवोंके असंख्यातगुणवृद्धि और असंख्यातगुणहानिका अन्तर काल जानना चाहिये।

न्ध्य. श्रीदारिकिमिश्रकाययोगी जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि श्रीर तीन हानियोंका जवन्य अन्तर एक समय हैं और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्भुहूते हैं। अवस्थित बन्धका जवन्य अन्तर एक समय हैं और उत्कृष्ट अन्तर तीन समय हैं। देवगति चार श्रीर तीर्थङ्कर प्रकृतिकी तीन वृद्धि और तीन हानियोंका भङ्ग झानावरणके समान हैं। अवस्थित बन्धका जवन्य अन्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट अन्तर दो समय है। दो आयुआंके दो पदोंका भङ्ग अपर्याप्तकोंके समान हैं। श्रेप परिवर्तमान प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि श्रीर अवस्थित वन्धका जवन्य अन्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्भुहूर्त हैं। अवक्तत्र्य बन्धका जवन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्भुहूर्त हैं।

मह्य. वैक्रियिकमिशकाययोगी जीयोंका भङ्ग वैक्रियिककाययोगी जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि परिवर्तमान प्रकृतियोंके अवक्तव्य वन्धका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। इसीप्रकार आहारकमिश्रकाययोगी जीवोंके जानना चाहिये। कार्मणकाययोगी जीवोंमें सब कर्मोंका अन्तर काल नहीं है। अथवा वैक्रियिकमिश्रकाययोगी, औदारिकमिश्रकाययोगी और कार्मणकाययोगी जीवोंमें अवक्तव्य वन्धका अन्तरकाल नहीं है।

५६६. स्त्रीवेदी जीवंभि पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्यलन और पाँच श्रन्त-रायकी दो वृद्धि और दो हानियोंका जवन्य अन्तर एक समय है और उन्छृष्ट अन्तर अन्तर्भृहूर्त है। संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिका जवन्य अन्तर एक समय है और उन्छृष्ट अन्तर पूर्वकोटि पृथक्तव प्रमाण है। असंख्यातगुणवृद्धि और असंख्यातगुणहानिका जवन्य और उन्छृष्ट अन्तर अन्तर्भुहूर्त है। अवस्थित बन्धका जवन्य अन्तर एक समय है और उन्छृष्ट अन्तर तीन समय है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचारकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित पचला-भय-दुर्गुं०-तेजइमादिणवि तिण्णिविद्व-हाणि-अविद्वि णाणावरणभंगो। अवत्त०णिख अंतरं। सादा०-जसिगि० तिण्णि-विद्व-हा० णाणावरणभंगो। असंखेँ जमुणविद्व-हा०-अवत्त० जह० उक्क० अंतो०। अविद्वि जह० एग०, उक्क अंतो०। असादादिदस० पंचिदियमंगो। अष्टकसा० वेविद्वि हा०-अविद्वि० जह० एग०, उक्क० पुन्वकोडी देस्व०। संखेँ जमुणहाणी० णाणावरणभंगो। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पित्रवेवमसदपुष्वत्तं। इत्थि०-णवुं स० तिरिक्खग०-एइंदि०-पंचसंठा०-पंचसंघ०-तिरिक्खाणु०-आदाउज्जो०-अप्पसत्थ० थावर-दूभग-दुस्सर-अणादेँ० णीचा० तिण्णिविद्वि-हाणि-अविद्वि० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पणवण्णं पित्रदेशे० देस्व०। णिरयायु० दोपदा० जह० अंतो०, उक्क० पुन्वकोडितिभागं देस्व०। तिरिक्ख-मणुसायु० दोपदा० जह० अंतो०, उक्क० पित्रवे०। दिवायु० दोपदा० जह० अंतो०, उक्क० प्रत्वे०। दिवायु० दोपदा० जह० अंतो०, उक्क० पात्रवे०। पित्रवे०। पित्रवे०। स्वपुष्व०। विश्विणविद्वि-हाणि अविद्वि० जह० एग०, उक्क० [तिण्णि] पित्रवे० देस्व०। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पणवण्णं पित्रवे० देस्व०। णवरि आरा-तिथ्यविद्वि० सादि०। वेउिव्वयछ० तिण्णिजादि-सुदुम-अपज्ज०-साधार० तिण्णिविद्वि-हाणि अविद्वि० जह० यंतो०, उक्क० पणवण्णं

बन्धका जवन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर बुळ कम पवपन पत्य है। अवक्तञ्य बन्धका जवन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त हैं और उत्हृष्ट अन्तरसी पत्य पृथक्त्व प्रमाण है। निद्रा, प्रचला, भय, जुगुष्सा और तैजसशरीर ऋादि नी प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और ऋवस्थितवन्यका भक्न ज्ञानवरणके समान है। अवक्तव्य बन्धका अन्तर काल नहीं है। सातावेदनीय और यश:-कीर्तिको तीन वृद्धि और तीन हानियोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। असंख्यातगुणवृद्धि, असं-ख्यातगुणहानि और अवक्तव्य बन्धका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उन्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। असाता आदि दस प्रकृत तियोंका भक्न पञ्चेन्द्रियोंके समान है। आठ कपायोंकी दो वृद्धि, दो हानि ऋौर अवस्थित बन्धका जचन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि है। संख्यातगुणहानिका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्यवस्थका जघन्य अन्तर अन्तर्मुदूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर सौ पत्य प्रथक्त्य प्रमाण है। स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, तिर्यक्रगति, एकेन्ट्रियजाति, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, तिर्येक्चगत्यानुपूर्वी, आतप, उद्योत, श्रप्रशस्त विहायोगति, स्थावर, दुर्भग, दुस्वर, श्रनादेय श्रीर नीचगोत्रकी तीन वृद्धि, तीन हानि श्रीर अयस्थित बन्धका जघन्य श्रन्तर एक समय है, श्रय-क्तत्र्य बन्धका जघन्य अन्तर् अन्तर्मुहूर्त है और इन सबका उत्कृष्ट अन्तर छुळ कम पचपन परुव है। नरकायुके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्भुहूर्त है और उन्कृष्ट अन्तर एक पूर्व कोटिका कुछ कम त्रिभाग-प्रमाण है। तिर्यक्कायुत्रीर मनुष्यायुके दो पदोंका जघन्य अन्तरर्मुहूर्त है। त्रीर उत्कृष्ट अन्तर सो पत्य पृथक्त्व प्रमाण है। देव।सुके दो पर्दोका जवन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्व कोटि पृथकःव अधिक अष्टायन परुष है। मनुष्यगतिपञ्चककी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका जबन्य अन्तर एक समय है और उक्तुष्ट अन्तर छुळ कम तीन पस्य है। अवक्ताय वन्धका जबन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम पचपन पल्य है । इतनी विशेषता है कि ऋौदारिक-शरीरका साधिक पचपन परुय हैं। वैक्रियिक छह, तीन जाति, सूद्भ, अपर्याप्त और साधारणकी

पित्रे० सादि० । पुरिस०-उच्चा० चतारिविङ्कि हाणि-अविद्वि० णाणावरणभंगो । अवस० जह० अंतो०, उक्क० पणवण्णं पित्रदो० देस्व० । [ पंचिदि-समच०-पसत्थ० तस०सुमग० सुस्सर०-आदेँ० ] तिण्णिविङ्कि-हाणि-अविद्वि० 'सादभंगो । अवस० जह० अंतो०, उक्क० पणवण्णं पित्रदो० देस्व० । आहारदुगं तिण्णिविङ्कि-हाणि-अविद्वि० जह० एग०, अवस० जह० अंतो०, उक्क० सगद्विदी० । पर०-उस्सा०-बादर-पज्जच-पर्से० तिण्णिविङ्कि-हाणि-अविद्वि० सादभंगो । अवस० जह० अंतो०, उक्क० पणवण्णं पित्रदो० सादि० । तित्थय० तिण्णिविङ्कि-हा० जह० एग०, उक्क० श्रंतो० । अविद्वि० जह० एए०, उक्क० बेसम० । अवस० णित्थ अंतरं ।

८६७. पुरिस० पंचणा०-चदुदंस०-चदुसंज०-पंचंत० चत्तारिवड्डि-हाणि-अबट्टि० पंचिंदियपञ्जत्तभंगो । णवरि अवद्वि० जह० एग०, उक्क० तिष्णि सम०। अवत्त० णत्थि अंतरं । सेसाणं सन्त्राणं पंचिद्यपज्जत्तभंगो । यो विसेसो तं भणिस्सामो । प्रिरेसे अवत्त० जहू० अंतो०, उक्क० बेळाबद्धिसाग० सादि०। णिखायु० दोपदा० जहू०-अंतो ०, उक्क ० पुन्त्रकोडितिभागं देस्र० । देवायु० दोपदा० जह० अंतो ०, उक्क ० तेंत्तीसं तीन बृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका जधन्य अन्तर एक समय है। अबक्तव्य उन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मृहर्त है और इन सबका उत्कृष्ट अन्तर साधिक पचपन परुष है। पुरुपवेद श्रीर उच्चगोत्रकी चार वृद्धि, चार हानि और अवस्थित वन्धका भङ्ग झानावरणके समान है। अनक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्महर्त है और उत्हृष्ट अन्तर कुछ कम पचपन परुष है। पद्धेन्द्रिय-जाति, समचतुरस्रसंस्थान, प्रशस्तिबहायोगिति, त्रस, सुभग, सुस्वर और आदेयकी तीनवृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका भङ्ग साताबेदनीयके समान है। अवक्तत्र्य बन्धकाजधन्य अन्तर अन्त-र्मुहर्त है श्रीर उत्कृष्ट अन्तर हुझ कम पचपन परंप है। आहारकद्विककी तीनवृद्धि, तीन हानि श्रीर श्रवस्थित बन्धका जबन्य श्रन्तर एक समय है, श्रवक्तव्य बन्धका जबन्य श्रन्तर श्रन्तर्मुहूर्त है और इन सबका उत्कृष्ट अन्तर अवनी स्थिति प्रमाण है। परघात, उच्छ्षास, वादर, पर्याप्त और प्रत्येक-की तीन बृद्धि, तीन हानि और अवस्थित वन्धका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। अवक्तव्य बन्धका जचन्य त्रान्तर त्रान्तर्मृहर्त है ज्यौर उत्कृष्ट त्रान्तर साधिक पचपन परुय है। तीर्थक्कर प्रकृतिकी तीन वृद्धि और तीन हानियोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्महुर्त है। अब-स्थित वन्धका जवन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है। अवक्तव्य बन्धका ऋन्तरकाल नहीं है ।

म्हण, पुरुपवेदी जीवोंमें पाँच झानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच अन्तरायकी चार वृद्धि, चार हानि और अवस्थितवन्धका भन्न पश्चीन्द्रिय पर्याप्तक जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि अवस्थितवन्धका जवन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर तीन समय है। अवक्तव्यवन्धका अन्तर काल नहीं है। शेष सब प्रकृतियोंका भन्न पञ्चेन्द्रिय पर्याप्तक जीवोंके समान है। जो विशेषता है उसे कहते हैं—पुरुपवेदके अवक्तव्यवन्धका जयन्य अन्तर अन्तर साधिक दो दियासठ सागर है। नरकायुके दो पदोंका जयन्य अन्तर अन्तर् अन्तर् अन्तर साधिक दो दियासठ सागर है। नरकायुके दो पदोंका जयन्य अन्तर अन्तर् अन्तर अन्तर्भृह्तं है और उत्कृष्ट अन्तर एक पूर्वकोटिका कुछ कम त्रिमाग प्रमाण है। देवायुके दो

१ मुलप्रती देस्० । सेसाणं ओघं । ओरालि०अंगो० तिण्णि० इति पाठः । २ मूलप्रती भवद्धि० मणुसगदिभंगो इति पाठः ।

साग० सादि०। मणुसगदिपंचगस्स तिष्णिवड्ढि-हाणि-अवट्टि० जह० एग०, उक्क० तिष्णि पिलदो० सादि०। अवच० जह० श्रंतो०, उक्क० तेंनीसं साग० सादि०। समचदु०-पसत्थ०-सुभग-सुस्सर-आदें० तिष्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० सादभंगो। अवच० जह० श्रंतो०, उक्क० बेछावट्टि सा० सादि० तिष्णि पिलदो० देस्च०। उच्चा० चचारि-वड्डि-हाणि-अवट्ठि० सादभंगो। अवच० समचदु०भंगो। एसिं० असंखेंजजगुणहाणि-वंधतरं कायट्टिदी० तेसि तेंनीसं सा० सादि० पुन्वकोडी सादिरे०।

८६ ट. णवुंस० पंचणा०-चदुदंसणा०-चदुसंजल०-पंचंत० तिण्णित्रह्नि-हाणी० ओघं। असंखेंज्जगुणविद्वि हाणी० जह० उक्क० श्रंतो०। अवद्वि० जह० एग०, उक्क० चत्तारि सम०। थीणगिद्धिश्च-मिच्छ०-अणंताणुवंधि०४ असंखेंजभागविद्वि-हाणि-अवद्वि० जह० एग०, उक्क० तेंत्तीसं सा० देस्र०। बेबिंद्वि हाणि-अवत्त० ओघं। णिहा-पचला-भय-दुगुं० तेजहगादिणव० तिण्णिविद्वि हाणि-अवद्वि० णाणावरणभंगो०। अवत्त० णित्य श्रंतरं। सादावे०-जसिग० तिण्णिविद्वि हाणि-अवद्वि० अवत्त० ओघं। असंखेंज्ज-गुणविद्वि-हाणी० जह० उक्क० श्रंतो०। असादादिदस-अहकसा०-तिण्णिआय०-वेउ-वियछ०-मणुसगदिदुग०-आहारदुग० ओघं। देवायु० तिरिक्खभंगो। इत्थि०-णवुंस०-पंचसंघ०-उज्जो०-अप्पसत्थ०-दूभग-दुस्सर-अणादे० असंखेंज्जभागविद्वि-

पदींका जघन्य अन्तर अन्तर्भुहूर्त हैं और उद्धृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। मनुष्यगित पख्नकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितवन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उद्धृष्ट अन्तर साधिक तीन पत्य है। अवक्तव्यवन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्भुहूर्त है और उद्धृष्ट अन्तर साधिक तेनीस सागर हैं। समचतुरहा संस्थान, प्रशस्त विहायोगिति, सुभग, सुस्वर और आदेयकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितवन्धका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। अवक्तव्यवन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्भुहूर्त है और उद्धृष्ट अन्तर साधिक दो छियासठ सागर और कुछ कम तीन पत्य है। उच्चगोत्रकी चार वृद्धि, चार हानि और अवस्थितवन्धका भङ्ग सातावेदनीयके सगान है। अवक्तव्यवन्धका भङ्ग समचतुरहा संस्थानके समान है। जिनके असंख्यात गुणहानिवन्धका अन्तर कायस्थित प्रमाण है, उनके वह पूर्वकोटि अधिक साधिक तेतीस सागर है।

दश्न, नपुंसकवेदी जीवों में पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्यलन ऋौर पाँच अन्तरायकी तीन वृद्धि और तीन हानियों का भङ्ग अग्रंघके समान है। असंख्यातगुणवृद्धि ऋौर असंख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्भुहूते हैं। अवस्थितवन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर चार समय है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्य और अनन्तानुचन्धी चारकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितवन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। दो वृद्धि, दो हानि और अवक्तव्यवन्धका भङ्ग ओवके समान है। निद्रा, प्रचला, भय, जुगुरसा और तैजसशरीर आदि नौ प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितवन्धका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्य बन्धका अन्तरकाल नहीं है। सातावेदनीय और यराःकीर्तिकी तीन वृद्धि, तीन हानि अवस्थित और अवक्तव्यवन्धका अन्तरकाल खोघके समान है। असंख्यात गुणवृद्धि और असंख्यातगुणहानिका जधन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्भुहूत है। असातावेदनीय आदि दस, आठ कषाय, तीन आयु, वैकियिक छह, मनुष्यगतिद्विक और आहारकद्विकका भङ्ग छोघके समान है। देवायुका भङ्ग तिर्थक्कोंके समान है। स्निवेद, नपुंसकवेद, पाँच संस्थान, पाँच

हाणि-अविद्धि जह एगि , उक्क े तेंचीसं सा० देस् । बेविड्डि-हाणी० ओघं। अवत्त जह ० अंतो०, उक्क े तेंचीसं सा० देस ०। पुरि०-समच०-पसत्थ०-सुभग०-सुस्सर०-आदें० तिण्णिविड्डि-हाणि० सादमं०। अवत्त ० जह ० अंतो, उक्क े तेंचीसं सा० देस ०। तिरिक्खग०-तिरिक्खाणु०-णीचा० असंखेंज्जभागविड्डि-हाणि-अविड्डि० हिथवेदमंगो। बेविड्डि-हाणी-अवत्त ० ओघं। चदुजादि-आदाव-थावरादि०४ ऍक्क ड्डि-हाणि-अविड्डि० जह० एग०, उक्क० तेंचीसं सा० सादि०। बेविड्डि-हा० ओघं। अवत्त ० जह० अंतो०, उक्क० तेंचीसं सा० सादि०। पंचिदि०-पर०-उस्सा०-तस०४ तिण्णिविड्डि-हाणि-अविड्डि० सादमंगो। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तेंचीसं साग० सादि०। ओरालि०-ओरालि०-येजि०-येजि०-वज्जिरस० असंखेंज्जभागविड्डि-हाणि-अविड्डि० जह० एग०, उक्क० पुष्वकोडी० देस०। बेविड्डि-हा० ओघं। ओरालि० अवत्त० जह० अंतो०,उक्क० तेंचीसं० सा० सादि०। वज्जिरस० देस०। तित्थय० तिण्णिविड्डि-हाणि-अविड्डि० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पुष्वकोडि-हाणि-अविड्डि० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पुष्वकोडि-हाणि-अविड्डि० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पुष्वकोडि-हाणि-अविड्डि० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पुष्वकोडि-हाणि-अविड्डि० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० जह० अंतो०, इक्क० पुष्पकोडि-हाणि-अविड्डि० उचा० मणुसगदिभंगो। णविरि असंखेंजजगुणविड्डि-हाणी० इत्यि०भंगो।

संहनन, उद्योत, अप्रशस्तविहायोगित, दुर्भग, दुस्वर और श्रनादेयकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितबन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। दो वृद्धि और दो हानियोंका भङ्ग स्रोचके समान है अवक्तज्यबन्धका जघन्य अन्तर श्रन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट श्रन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। पुरुषवेद, सगचतुरस्र संस्थान, प्रशस्तिबहायोगित, सुभग, सुस्वर और आदेयकी तीन वृद्धि और तीन हानियोंका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। अवक्तव्यवन्धका जयन्य अन्तर् अन्तर्महूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और नीचगोत्रकी असंख्यात भागवृद्धि, श्रसंख्यात भागहानि और अवस्थितवन्धका भङ्ग स्त्रीवेदके समान है। दो वृद्धि, दो हानि श्रीर त्रवक्तज्यवन्धका भङ्ग त्रोघके समान हैं। चार जाति, त्रातप और स्थावर त्रादि चारकी एक बृद्धि, एक हानि और अवस्थितवन्धका जवन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर हैं । दो वृद्धि और दो हानियोंका भङ्ग ओवके समान है । ऋवक्तव्यवन्यका जघन्य ऋन्तर श्रन्तर्मुहूर्त है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर साधिक तेतीस सागर है। पक्केन्द्रियजाति, परधात, उच्छास और त्रस चतुष्ककी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितवन्धका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। श्रवक्तव्यवन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्भुहूर्त हैं और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है । औदारिक शरीर. श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग श्रीर वत्रऋषभनाराच संहतनकी श्रसंख्यातभागवृद्धि, श्रसंख्यातभाग-हानि और अवस्थितवन्धका जवन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि हैं । दो वृद्धि और दो हानियोंका भङ्ग ओघके समान है । ऋौदारिक शरीरका भङ्ग ऋोघके समान है । स्रौदारिक स्राङ्गोपाङ्गके स्रवक्तःयवन्धका जधन्य स्रन्तर अन्तर्मुहूर्त है स्रौर उत्कृष्ट श्रन्तर साधिक तेतीस सागर है। तथा वज्रऋषभनाराच संहननका कुछ कम तेतीस सागर है। तीर्थंकर प्रकृतिकी तीन वृद्धि, तीन हानि श्रीर अवस्थितबन्धका जधन्य अन्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर श्रन्त-र्मुहूर्त है। श्रवक्तव्यवन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है श्रीर उत्कृष्ट अन्तर एक पूर्वकोटिका कुछ कम त्रिभाग प्रमाण है। उच्चगोत्रका भङ्ग मनुष्यगतिके समान है। इतनी विशेषता है कि असं-ख्यात गुणवृद्धि और ऋसंख्यात गुणहानिका भक्न स्त्रीवेदके समान है।

८६६. अवगद्वे० सव्वपगदीणं वड्डि-हाणी० जह० उक्क० अंतो० । अवद्वि० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवत्त० णत्थि अंतरं । एवं सुहुमसंपराइ०। णवरि अवद्वि० जह० उक्क० एग० । अवत्त० णत्थि श्रंतरं ।

९००. कोघे पंचणाणावरणादिअद्वारसण्णं तिण्णिबह्नि-हाणि०-असंखेँज्ञगुणबङ्गी जह० एग०, उक्क अंतो० । असंखेँजगुणहाणी जह० उक्क अंतो० । अबद्वि० जह० एग०, उक्क० चत्तारि समयं । श्रीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४ तिण्णिबह्नि-हाणि० अबद्वि० णाणावरणमंगो । अवत्त० णित्थ अंतरं । चदुआयु-आहारदुगं मणजीगिमंगो । सेसाणं तिण्णिबह्नि-हाणि-अबद्वि० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवत्त० णित्थ अंतरं । एसि असंखेँजजगुणबङ्गि-हाणि-अबद्वि० तेसि० णाणावरणमंगो । एवं माण-माया-छोमाणं । णवरि माणे कोधसंज० अवत्त० भाणिद्व्वं । मायाए दो संज० अवत्त० । लोमे चदुसंज० अवत्त० भाणिद्व्वं ।

६०१. मदि०-सुद० धुविगाणं तिरिक्खोघं। सादादिवारस०-इत्थि०-पुरिस० तिण्णिबड्डि-हाणि-अबद्धि० ओघं सादमंगो। अवत्त० जह० उक्त० श्रंतो०। णचुंस०-पंचसंटा०-छस्संघ०-अप्पसत्थ०-दूभग-दुस्सर-अणादेँ० असंखेजभागवड्डि-हाणि-अबद्धि०

्रहर्, अपगतवेदी जीवोंमें सब प्रकृतियोंकी वृद्धि और हानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थितवन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्यवन्धका अन्तरकाल नहीं है। इसी प्रकार सूद्मसाम्परायसंयत जीवोंके जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि अवस्थितवन्धका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है। अवक्तव्यवन्धका अन्तर काल नहीं है।

६००. क्रोधकषायवाले जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण आदि अठारह प्रकृतियोंकी तीन पृद्धि, तीन हाति और असंख्यात गुणवृद्धिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। असंख्यात गुणवृद्धिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थितवन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर चार समय है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिण्यात्व और अनन्तानुबन्धी चारकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितवन्धका भन्न ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्यवन्धका अन्तरकाल नहीं है। चार आयु और आहारकद्विकका भंग मनोयोगी जीवोंके समान है। शेष प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितवन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तरमुंहूर्त है। अवक्तव्यवन्धका अन्तरकाल नहीं है। जिनका असंख्यातगुणकृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि, अप्रतिवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि, अप्रतिवृद्धि, अप्रतिव

८०१. मध्यज्ञानी और श्रुताज्ञानी जीवोंमें श्रुववन्यवाली प्रश्नतियोंका भङ्ग सामान्य तिर्य-ख्रोंके समान है। साता आदि बारह प्रश्नतियाँ, खीवेद और पुरुपवेदकी तीन दृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका भङ्ग ख्रोधके अनुसार सातावेदनीयके समान है। अवक्तव्य वन्धका जधन्य

९ मूळप्रती-गुणवड्टिहाणी इति पाठः । २ मूळप्रती जह० एग० अवटि० इति पाठः ।

जह० एग०, उक्क० तिण्णिपित्रदो० देस्व० । वेबिहु-हाणी० णाणाव०भंगो । अवत०जह० अंतो०, उक्क० तिण्णि पित्रदो० देस्व० । चदुआयु-वेउन्वियछ०-मणुसगिददुग-उचा० ओघं । तिरिक्खग०-तिरिक्खाण० असंखेंज्जभागविहु-हाणि-अविह० जह० एग०, उक्क० ऍक्कतीसं सा० सादि० । वेबिहु-हाणी-अवत्त० ओघं । चदुजादि-आदाव-धाव-धाव-धादि०४ णवुंसगभंगो । पंचिदि०-पर०-उस्सा०-तस०४ णवुंसगभंगो । ओरालि०-ओरालि०अंगो० ऍक्कविहु-हाणि-अविह० जह० एग०, उक्क० तिण्णि पित्रदो० देस्व० । सेसं ओघं । समचदु०-[ पसत्थ०-] सुभग-सुस्सर-आदेँ० अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तिण्णिपिलिदो० देस्व० । सेसं सादभंगो । उज्जो० ऍक्कविहु-हाणि-अविह० जह० एग०, उक्क० ऍक्कतीसं सा० सादि० । बेबिहु-हाणी० ओघं । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० एकत्तीसं सा० सादि० । बेविहु-हाणी० ओघं । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० एकत्तीसं सा० सादि० । णीचा० एक्कविहु-हाणि-अविह० जह० एग०, उक्क० एकतीसं सा० सादि० । णीचा० एक्कविहु-हाणि-अविह० जह० एग०, उक्क० पिल्विदो० देस्व० । वेबिहु-हाणि-अवत्व० ओघं । विभंगे स्रजगारभंगो ।

९०२. आभि०-सुद० ओधि० पंचणा०-चदुदंस०-चदुसंज०-पुरिस०-उचा०-पंचंत० तिण्णिवट्टि-हाणि अवद्वि० जह० एग०, उक्क० अंतो० । असंखें अगुणवट्टी जह० एग०,

और उक्कष्ट अन्तर अन्तर्महूर्त है। नपुंसक्षेद, पाँच संस्थान, छह संहनन, अप्रशस्त विहायोगित, दुर्भग, दुस्वर और श्रनार्देयकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थित बन्धका जवन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन परुष है। दो वृद्धि और दो हानियों का भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्य बन्धका जवन्य अन्तर अन्तर्मृहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुत्र कम तीन पत्य है। चार आयु, वैक्रियिक छह, मनुष्यगतिद्विक और उचगोत्रका भङ्ग ओघके समान है। तिर्यञ्जगति त्रौर तिर्यञ्जगत्यानुपूर्वीकी श्रासंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात शागहानि त्रौर त्रवस्थित बन्धका जवन्य त्रान्तर एक समय है त्रीर उत्कृष्ट त्रान्तर साधिक इकतीस सागर है। दो बृद्धि, दो हानि और अवक्तत्र्य बन्धका अन्तर खोधके समान है। चार जाति, आतप और स्थावर त्रादि चारका भङ्ग नपुंसकवेदके समात है। पञ्चेन्द्रिय जाति, परघात, उच्छवास और त्रस चतुष्कका भक्त नपुंसकत्रेदके सँमान है। खौदारिकशरीर और खौदारिक खाङ्गोपाङ्गकी एक बृद्धि, एक हानि और अवस्थित बन्धका जधन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ तीन पत्य है। शेष भङ्ग श्रोधके समान है। समचतुरस्रसंस्थान, प्रशस्तविहायोगति, सुभग, सुस्यर श्रौर श्च।देयके श्चवक्तज्य वस्थका जधस्य व्यस्तर त्र्यस्तर्महूर्त है और उत्कृष्ट व्यस्तर कुछ कम तीन परंय हैं। शेष भङ्ग सातावेदनीयके समान है । उद्योतकी एक वृद्धि, एक हानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है ज्यौर उत्कृष्ट अन्तर साधिक इक्तीस सागर है। दो वृद्धि और दो हानियोंका भङ्ग ओघके समान है। अवक्तव्य बन्धका जधन्य अन्तर अन्तर्मृहूर्त हैं और उत्कृष्ट अन्तर साधिक इकतीस सागर है। नीचगोत्रकी एक वृद्धि, एक हानि और अवस्थित वन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर बुद्ध कम तीन पत्य है। दो वृद्धि, दो हानि और अवक्तव्य बन्धका भङ्ग श्रोधके समान है। विभन्नज्ञानी जीवोंमें अपनी सब प्रकृतियोंका भङ्ग भुजगार बन्धके समान है।

हे०२. आभिनियोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी, स्प्रौर अवधिज्ञानी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन, पुरुपवेद, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायकी तीन वृद्धि, तीन हानि स्प्रौर अवस्थित बन्धका जघन्य स्रन्तर एक समय है स्प्रौर उत्कृष्ट स्नन्तर स्नन्तर्भुहुर्त है। स्रसंख्यातगुण-

वृद्धिका जधन्य अन्तर एक समय है, असंख्यात गुण्हानि और अवक्तव्य बन्धका जधन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और इन सबका उत्कृष्ट अन्तर साधिक छियासठ सागर है । सातावेदनीय और यशः कीर्तिकी चार वृद्धि, चार हानि त्रौर अवस्थित बन्धका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तञ्य बन्धका जघन्य स्त्रीर उत्कृष्ट स्त्रन्तर सन्तर्मुहूर्त हैं। स्त्रसाता स्नादि दस प्रकृतियोंका भङ्ग सातावेदः नीयके समान है। आठ कषायोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि ऋौर ऋवस्थित वन्धका भक्न मनुष्योंके समान है। अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। दो आयुओं के दो पदोंका जवन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। मनुष्यगति पञ्चककी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितबन्थका जघन्य ऋन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक एक पूर्वकोटि है। अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर साधिक एक पत्य है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। देवगति चतुष्क श्रीर श्राहारक द्विककी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्य बन्धका जबन्य अन्तर ान्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर इन सबका साधिक तेतीस सागर है। तैजसशरीर ऋादि ध्रवबन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि, खबस्थित और अवक्तव्य बन्धका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग त्रोधके समान है। इसी प्रकार श्रवधि दर्शनी, सम्यग्टष्टि ऋौर चायिक सम्यग्द्रष्टि जीवोंके जानना चाहिये । इतनी विशेषता है कि चायिक सम्यग्दृष्टि जीवोंमें मनुष्यायुके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम छह महीना है। देवायुके दी पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मृहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर एक पूर्व-कोटिका कुछ कम त्रिभाग प्रमाण है। मनुष्यगति पञ्चककी तीन वृद्धि श्रौर तीन हानियोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उरकुष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है ऋौर उत्कृष्ट अन्तर दो समय है। अवक्तव्य बन्यका ऋन्तर काल नहीं है। शेष प्रकृतियोंका जहाँ छियासठ सागर अन्तर काल कहा है, वहाँ तेतीस सागर कहना चाहिये।

६०३. मनःपर्ययज्ञानी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन, पुरुषवेद,

भ मूलप्रती मणुसाणु० दो -इति पाठः । २ मूलप्रती काद्व्यं मणुसपजाते पंच-इति पाठः ।

बहु-हाणि-अवहुि जह एगि , उक्क अंतो । असंखें अगुणवहि – हाणि – अवत्त श्रंतो , उक्क पुन्वको ही देस् । सादावे - जस णाणावरण मंगो । णवरि अवत्त जह उक्क अंतो । णिहा – पचला – भय-दुर्गु - देवगदि – पंचिदि - चेउ विव - तेजा कि – समच दु - चेउ विव अंगो - चण्ण ०४-देवाणु - अगु ०४-पसत्थ - तस ०४ - सुभग – सुस्सर – आदे - णिमि - तित्थय ० तिण्णिवहि - हाणि - अवहि - जह ० एग ०, उक्क अंतो ०। अवत्त ० जह ० अंतो ०, उक्क पुव्यको ही देस ०। असादा ० - च दुणो क ० थिराथिर सुभासुम - अजस ० तिण्णिवहि - हाणि - अवहि ० जह ० अंतो ०। अवत्त ० जह ० उक्क अंतो ०। विव एग ०, उक्क ० अंतो ०। विव एग ० जह ० उक्क ० अंतो ०। देवायु ० मणुसि ० मंगो । एवं संजदा ०।

६०४. सामाइ०-छेदो० पंचणा०-चढुदंस०-लोभसंज०-उच्चा०-पंचंत० तिण्णिवड्डिहा० जह० एग०, उक्क० अंतो० । असंखेँ अगुणवड्डि-हा० जह० उक्क० अंतो० । अवड्ठि०
जह० एग०, उक्क० बेसम० । णिद्दा-पचला तिण्णिसंज०-पुरिस०-भय-दुगुं०-देवगदिपंचिदि०-वेउन्वि० तेजा०-क०-समचदु० वेउन्वि०अंगो०—वण्ण०४—देवाणु०-अगु०४
पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदेँ०-णिमि०-तित्थय० तिण्णिवड्डि-हाणि० जह० एग०,
उक्क० अंतो० । अवद्वि० जह० एग०, उक्क० बेसम० । णवरि तिण्णिसंज०-पुरिस०

उच्चगेश्व और पाँच अन्तरायकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित वन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त हैं। असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त हैं और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि हैं। सातावेदनीय और यशःकीर्तिका भङ्ग झानावरणके समान है। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य बन्धका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। निद्रा, प्रचला, भय, जुगुप्सा, देवगति, पर्झीन्द्रयजाति, वैक्रियिकशारीर, तैजसशरीर, कामणशरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, वर्ण चतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुष्वतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, त्रसचतुष्क, गुभन, सुस्वर, आदेय, निर्माण और तीर्थङ्करकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर स्थर्म सुरूर्त है। अयात्वदनीय, चार नोकपाय, स्थिर, अस्थिर, ग्रुभ, अग्रुभ और अयशःकीर्तिकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित वन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अधक्तव्य बन्धका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। इसीप्रकार संयत जीवोंके जानना चाहिये।

६०४. सामायिकसंयत और छेदोपस्थापनासंयत जीवोंमं पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, लोभ संज्वलन, उच्चगोत्र, और पाँच अन्तरायकी तीन दृद्धि और तीन हानियोंका ज्ञधन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। असंख्यातगुणदृद्धि और असंख्यातगुणहानिका ज्ञधन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अयस्थित बन्धका ज्ञधन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है। निद्रा, प्रचला, तीन संज्ञ्चलन, पुरुपवेद, भय, जुगुप्सा, देवगित, पञ्चिन्द्रय-जाति, वैक्रियिकशारीर, तैजसशारीर, कार्मणशारीर, समचतुरस्रसंस्थान, वैक्रियिकशारीर, तेजसशारीर, कार्मणशारीर, समचतुरस्रसंस्थान, वैक्रियिकशाङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुरक, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलद्यचतुरक, प्रशस्तिवहायोगित, अस चतुष्य, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण और तीर्थङ्गरकी तीन वृद्धि और तीन हानियोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर

असंखें जगुणविद्धि-हाणी० णाणावर०भंगो। सदावे०-जस० णाणाव०भंगो। णवरि अवत्त० ज० उक्क० ऋंतो०। सेसाणं णिद्दादीणं अवत्त० णित्य अंतरं। असादादिदस-आहारदुगं तिण्णिविद्धि-हाणि-अविद्धि० ज० ए०, उक्क० अंतो०। अवत्त० जह० उक्क० अंतो०। परिहारे धुविगाणं सेसाणं च भ्रजगारभंगो। एवं संजदासंजदे।

९०५. असंजदे धुविगाणं मदि०मंगो। थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४इत्थि०-णवुंस०-पंचसंठा०-पंचसंघ०-अप्पसत्थ०-दूभग-दुस्सर-अणादेँ० णवुंसगभंगो।
सादादिबारस मदि०भंगो। पुरिस०-समचदु०-पसत्थ०-सुभग-सुस्सर-आदेँ० अवत्त०
ज० अंतो०, उक्त० तेंचीसं सा० देस०। सेसाणं सादमंगो। चदुआयु०-वेउव्वियछ०मणुसगिददुग-उचा० ओघं। तिरिक्खग०-तिरिक्खाणु०-उज्जो०-णीचा० णवुंस०भंगो।
ओरालि०-ओराछि०अंगो०-यज्जरिस० ओघं। णवरि वज्जरि० अवत्त० उक्त० तेंचीसं
सा० देस०। चदुजादिदंडओ पंचिंदियदंडओ णवुंसगभंगो। तित्थय० णवुंस०भंगो।

६०६, तिण्णिले० धुविमाणं तिण्णिवड्ढि-हाणी० जह० एग०, उक्क० अंती०। अवद्वि० ज० ए०, उ० चत्तारि सम∞। णिरय-देवायु० दोपदा०णित्थ श्रंतरं । तिरिक्ख-

अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित वन्धका जयन्य अन्तर एक समय हे और उत्कृष्ट अन्तर दें। समय है। इतनी विशेषता है कि तीन संज्वलन और पुरुपवेदकी असंख्यातगुणहृद्धि और असंख्यातगुणहानिका भङ्ग ज्ञानायरणके समान है। सातावेदनीय और यशःकीर्तिका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य बन्धका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। शेप निद्रा आदिकके अवक्तव्य बन्धका अन्तर काल नहीं है। असाता आदि दस और आहारकद्विककी तीन पृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य वन्धका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर भ्रम्तर्मुहूर्त है। परिहारिवशुद्धिसंयत जीवोंमें ध्रुयबन्धन वाली और शेप प्रकृतियोंका भङ्ग मुजगारवन्धके समान है। इसी प्रकार संयतासंयत जीवोंके जानना चाहिये।

६० ४. असंयत जीवोंमें श्रुपवन्धवाली प्रकृतियोंका भङ्ग मत्यज्ञानी जीवोंके समान है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धी चार, स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, अप्रशस्तविद्दायोगित, दुर्भग, दुस्वर और अन्तदेयका भङ्ग नपुंसकवेदके समान है। साताआदिक वारह प्रकृतियोंका भङ्ग मत्यज्ञानी जीवोंके समान है। पुरुपवेद, समचतुरस्रसंस्थान, प्रशस्तविद्दायोगित, सुभग, सुस्वर और आदेयके अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्भुदूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। चार आयु, वैक्रियक छह, मनुष्यगतिद्विक और उच्चगोवका भङ्ग आघके समान है। तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उद्योत औरनीचगोवका भङ्ग नपुंसकवेदी जीवोंके समान है। औरारिकशरीर, औदारिक आङ्गोपङ्ग और वज्रऋषभनाराचसंहननका भङ्ग आधके समान है। इतनी विशेषता है कि वज्रऋषभनाराच संहननके अवक्तव्य वन्धका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। चार जातिदण्डक और पञ्चिन्द्रयदण्डकका भङ्ग नपुंसकवेदके समान है। तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग नपुसकवेदके समान है।

है०६. तीन लेश्यावाले जीयोंमें ध्रुववन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि और तीन हानियोंका जधन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्महूर्त है। अवस्थित बन्धका जधन्य अन्तर

मणुसायु० णिरयभंगो | दोगदि-पंचिदि०-ओरालि०-ओरालि०आंगो०-दोश्राणु०-पर०- उस्सा०-आदाव-तस-थावरादिचदुयुगलं तिण्णिचिह्न-हाणि-अबिहि० जह० एगक, उक्क० श्रंतो० । अवत्त० णित्थ अंतरं । वेउव्व०-वेउव्व०अंगो० तिण्णिबिह्न-हाणि- अबिहि० जह० एग०, उक्क० बावीसं सत्तारस सत्त सागरो० सादि० । अवत्त० किण्णाए जह० सत्तारससा० सादि०, उक्क० बावीसं सा० सादि० । णीलाए जह० सत्त साग० सादि०, उक्क० सत्तारस साग० सादि०, उक्क० सत्तारस साग० सादि०, उक्क० सत्तारस साग० सादि० । काऊए जह० दसवस्त्रसहस्ता० सादि०, उक्क० सत्ताराण सादि०, उक्क० सत्ताराण सादि० । तित्थय० तिण्णिबिह्न-हाणी० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अबिह० जह० एग०, उक्क० वेसमयं । सेसाणं णिरयोघं । णवरि णील-काऊए मणुसग०-मणुसाणु०-उच्चा० पुरिसभंगो । काऊए० तित्थय० अवत्त० णित्थ अंतरं ।

६०७, तेऊए धुविगाणं तिण्णिवड्ढि-हाणी० जह० एग० उक्क० अंती०। अवद्वि० जह० एग०, उक्क० बेसमयं। अद्वक०-ओरालि०-आहारदुग-तित्थय० धुविगाण मंगो। णवरि अवत्त० णित्थ अंतरं। देवायु० दोपदा णित्थ अंतरं। देवगदि०४ तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवद्वि० जह० एग०, उक्क० बेसाग० सादि०। अवत्त० णित्थ अंतरं। थीण-

एक समय हैं और उरकृष्ट अन्तर चार समय हैं। नरकायु और देवायुके दो पदोंका अन्तरकाल नहीं हैं। तिर्थक्कायु और सनुष्यायुका भक्ष नारिक्योंके समान हैं। दो गित, पक्षेन्द्रियजाति, औदारिक्शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्क, दो आनुपूर्वी, परत्रात, उच्छ्यास, आतप, त्रस और स्थावर आदि वार युगलकी तीन युद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उरकृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त हैं। अवक्तव्य वन्धका अन्तर काल नहीं हैं। वैक्रियिकशरीर और वैक्रियिकशङ्गोपाङ्ककी तीन युद्धि, तीन हानि और अवस्थित वन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उरकृष्ट अन्तर कमसे साधिक बाईस सागर, साधिक सत्तरह सागर और साधिक सात सागर हैं। अवक्तव्य वन्धका कृष्णलेश्यामें जघन्य अन्तर साधिक सत्तरह सागर और उरकृष्ट अन्तर साधिक सत्तरह सागर हैं। नीललेश्यामें जघन्य अन्तर साधिक सात सागर हैं। कापोतलेश्यामें जघन्य अन्तर साधिक दसहजार वर्ष और उरकृष्ट अन्तर साधिक सात सागर हैं। तीर्थङ्कर प्रकृतिकी तीन युद्धि और तीन हानियोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उरकृष्ट अन्तर साधिक सात सागर हैं। तीर्थङ्कर प्रकृतिकी तीन युद्धि और तीन हानियोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उरकृष्ट अन्तर दो समय है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग नारिक्योंके समान हैं। इतनी विशेषता है कि नील और कापोत लेश्यामें मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगोत्रका भङ्ग पुरुषवेदके समान हैं। कापोतलेश्यामें तीर्थङ्कर प्रकृतिके अवक्वय बन्धका अन्तर काल नहीं हैं।

६०७. पीतलेश्यावाले जीवोंमें प्रवानस्याली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि और तीन हानियोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उन्कृष्ट अन्तर अन्तर्महूर्त है। अवस्थित वन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उन्कृष्ट अन्तर अन्तर्महूर्त है। अवस्थित वन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उन्कृष्ट अन्तर दो समय है। आठ कपाय, औदारिक शरीर, आहारकद्विक और तीर्यद्वर प्रकृतिका मझ धुववन्धवाली प्रकृतियोंके समान है। इतनी विशेषता है कि अवक्तत्र्य वन्धका अन्तर काल नहीं है। देवगति चतुष्ककी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित वन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उन्कृष्ट अन्तर साधिक

६ मूलप्रतौ–भंगो तित्थय० अवस० णिथ अंतर् । काऊए० तेऊए इति पाठः ।

गिद्धि०३दंडओ साददंडओ इत्थिदंडओ पुरिसदंडओ तिरिक्ख मणुसायुग० सोधम्मभंगो । एवं पम्माए वि। णवरि ओरालि०-ओरालि० अंगो० अहुक० मंगो । सेसाणं सहस्सारमंगो ।

ह०द्र. सुकाए पंचणा०अद्वारसण्णं चत्तारिवड्डि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० अंतो० । असंखें अगुणहाणी० जह० उक्क० अंतो० । अवत्त० णित्थ अंतरं । थीणिगिद्धि०३ दंडओ णवगेत्रज्ञवभंगो । णिदा-पचला-भय-दु०-पंचिदि०-तेजा०-क०-चण्ण०४-अगु०४-तस०४-णिमि०-तित्थय० तिण्णिबट्डि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवत्त० णित्थ अतरं । साद०-जस० णाणावरणभंगो । णवरि अवत्त० जह० उक्क० अंतो० । असादादिदस-आहारदुगं तिण्णिबट्डि-हाणि-अवट्ठि०-अवत्त० सादभंगो। णवरि आहारदुगं अवत्त० णित्थ अंतरं । अट्ठकसा०-मणुसग०-ओरालि०-ओरालि० अंगो०-वज्जरिस०-मणुसाणु० सादभंगो । णवरि अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० वेसम०। अवत्त० णित्थ अंतरं । पुरिस०-उचा० अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० ऍक्कतीसं सा० देस० । सेसाणं णाणावरणमंगो । देवगदि०४ तिण्णिबट्डि-हाणी-अवट्ठि० जह० एग०,

दो सागर है। अवक्तव्य बन्धका अन्तर काल नहीं है। स्त्यानगृद्धित्रकदण्डक, सातावेदनीयदण्डक, स्रिवेददण्डक, पुरुषवेददण्डक, तिर्यक्चायु और मनुष्यायुका भङ्ग सीर्धमकल्पके समान है। इसी-प्रकार पद्मलेश्यावाले जीवोंके भी जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि खोदारिकशरीर और खौदारिक खङ्गोपाङ्गका भङ्ग खाठ कपायके समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग सहस्रारकल्पके समान है।

६०८. शुक्रलेश्यावाले जीवोंमें पाँच झानावरणादि अठारह प्रकृतियोंकी चार वृद्धि, चार हानि श्रीर अवस्थित बन्धका जधन्य अन्तर एक समय है और एकुष्ट अन्तर अन्तर्मृहूर्त है। असं-ख्यातगुणहानिका जवन्य स्त्रौर उत्कृष्ट अन्तर स्त्रन्तर्महूर्त है। स्रवक्तव्य बन्धका स्त्रन्तर काल नहीं है । स्त्यानगृद्धित्रिकदण्डकका भङ्ग नौ यैथेयिकके समान है । निद्रा, प्रचला, भय, जुगुष्सा, पश्चेन्द्रिय जाति, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, वर्ण चतुष्क, ऋगुरुलघु चतुष्क, त्रस चतुष्क, निर्माण और तीर्थङ्कर प्रकृतिकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका जवन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर् अन्तर्भेहर्त है। अवक्तव्य बन्धका अन्तरकाल नहीं है। सातावेदनीय और यशःकीर्तिका भङ्ग ज्ञानावरणके समान हैं। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य बन्धका जधन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्महतं है। असातावेदनीय आदि दस और आहारकद्विककी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित श्रीर त्र्यवक्तज्य बन्धका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। इतनी विशेषता कि आहारकद्विकके अवक्तव्य बन्धका अन्तरकाल नहीं हैं। आठ कपाय, मनुष्यगति, औदारिकशरीर, औदारिक द्याङ्कोपाङ्ग, वञ्चऋषभनाराचसंहनन ऋौर मनुष्यगत्यानुपूर्वीका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। इतनी विशेषता है कि अवस्थित बन्धका जवन्य अन्तर एक समय है। श्रीर उत्कृष्ट अन्तर दो समय है। अप्रकार्य वस्थका अस्तर काल नहीं है। पुरुष्त्रेद और उच्चगोत्रके अवक्तव्य बस्थका जघन्य श्चन ३१ अन्तर्महूर्त है। और उरकृष्ट अन्तर कुछ कम इकतीस सागर है। शेप प्रकृतियोंका भङ्ग ज्ञाना-बरणके समान है। देवगति चतुष्ककी तीन बृद्धि, तीन हानि और ऋवस्थित वन्धका जघन्य ऋन्तर एक समय है और उरकुष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। अवक्तव्य बन्धका जबन्य अन्तर साधिक उक्क० तेंत्तीसं सा० सादि०। अवत्त० जह० अट्टारस साग० सादि०, उक्क० तेंत्तीसं साग० सादि०। सेसाणं भ्रुजगारमंगो। भवसि० ओघं। अब्भवसि० मदि०मंगो।

६०६. वेदगे धुविगाणं सादादिवारस० परिहारमंगो । अड्डक०-दोआयु०-मणुस-गदिपंचग-आहारदुगं ओधिमंगो । देवगदि०४ तिण्णित्रड्डि-हाणि-अवद्धि० ओधिमंगो । अवच० जह० पितदो० सादि०, उक्क० तैंचीसं० सादि० । तित्थय० तेउमंगो ।

६१०. उनसम० पंचणा०अद्वारस० चत्तारिवाङ्गि-हाणि-अवद्वि० जह० एग०, उक० अंतो०। णवरि असंखेंज्जगुणहाणी जह० उक० अंतो०। अवत० णित्थ अंतरं। णिहा-पचला-भय-दुगुं०-देवगदि-पंचिदि०-वेउव्वि०-तेजा०-क०-समचदु०-वेउव्विय० अंगो०-वण्ण०४-देवाणु०-अगु०४--पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आईँ०-णिनि० तित्थय० णाणावरणभंगो। सादावे०-जस० अवत० जह० उक० अंतो०। सेसाणं णाणावरणभंगो। असादा०-अद्वक०-चदुणोक०-आहारदुग-थिरादिपंच सादभंगो। मणुसगदिपंचग० तिण्णिवङ्गि-हाणी० जह० एग०, उक० अंतो०। अवद्वि० जह० एग०, उ० वेसम०। अवत्त० णित्थ अतरं।

९११. सासणे धुविगाणं वेदगभंगो । सेसाणं मणजोगिभंगो । सम्मामि० धुविगाणं

अठारह सागर है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। शेप भङ्ग मुजगारके समान है। भव्य जीवोंमें श्रोधके समान भङ्ग है। अभव्य जीवोंमें मत्यझानी जीवोंके समान भङ्ग है।

६०६. वेदक सम्यदृष्टि जीवोंमें ध्रुववन्धवाली श्रौर सातावेदनीय आदि वारह प्रकृतियोंका भङ्ग परिहारविशुद्धि संयतोंके समान है। आठ कषाय, दो त्रायु, मनुष्यगति पञ्चक और श्राहारक-द्विकका भङ्ग श्रवधिक्वानी जीवोंके समान है। देवगति चतुष्ककी तीन वृद्धि, तीन हानि श्रौर श्रवस्थित बन्धका भङ्ग श्रवधिक्वानी जीवोंके समान है। श्रवक्तव्य बन्धका जधन्य श्रन्तर साधिक एक पत्य है श्रौर उत्कृष्ट श्रन्तर साधिक वेतीस सागर है। तीर्थेङ्कर प्रकृतिका भङ्ग पीतलेश्यावाले जीवोंके समान है।

ह१०. उपशमसम्यग्दृष्टि जीवोंमें पाँच झानावरण आदि अठारह प्रकृतियोंकी चार वृद्धि, चार हानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त हैं। इतनी विशेषता है कि असंख्यात गुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य बन्धका अन्तरकाल नहीं है। निद्रा, प्रचला, भय जुगुष्सा, देवगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, वैकिथिक-शारीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्तरंस्थान, बैक्रियिक आङ्गापाङ्ग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण और तीर्थ-द्वार, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण और तीर्थ-द्वार, प्रकृतिका भङ्ग झानावरणके समान है। सातावेदनीय और वर्ष्युष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। शेष पदोंका भङ्ग झानावरणके समान है। आसातावेदनीय, आठ क्षाय, चार नोकषाय, आहारकद्विक और स्थिर आदि पाँचका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। मनुष्यगितिपञ्चककी तीन वृद्धि और तीन हानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित वन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वन्धका अपन्तर काल नहीं है।

६११. सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंमें ध्रुववन्धवाली प्रकृतियोंका भङ्ग वेदकसम्यग्दृष्टि जीवोंके

वेदगभंगो । सेसाणं तिष्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि० ज० ए०, उ० अंतो० । अवत्त० जह० एग०, उ० श्रंतो० । मिच्छ० मदि०भंगो । सिष्णि० पंचिदियपञ्जतभंगो ।

६१२. असण्णीस धुविगाणं असंखेंज्जभागविद्ध-हाणि० जह० एग०, उ० अंतो०। संखेंज्जभागविद्ध-हाणि० जह० एग०, उ० अणंतका०। एवं संखेंज्जगुणविद्ध-हाणि०। णविर जह० खुदा० समयू०। एसं संखेंज्जगुणविद्ध-हाणि० अत्थि तेसिं सच्वेसिं पि एवं चेव। अविद्ध० जह० एग०, उ० बे-तिण्णि सम०। चदुआयु०-बेउव्वियछ०-मणुसग०-मणुसाण०-उचा० तिरिक्खोघं। तिरिक्खग०-तिरिक्खाणु०-णीचा० असंखेंजभागविद्ध-हाणि-अविद्ध० जह० एग०, उ० अंतो०। संखेंजभागविद्ध-हाणि० णाणावरणभंगो। अवत्त० जह० अंतो०, उ० असंखेंजा लोगा। सेसाणं असंखेंजभागविद्ध-हाणि-अविद्ध० जह० एग०, उ० अंतो०। संखेंजभागविद्ध-हाणी० णाणावरणभंगो। अवत्त० जह० एग०, उ० अंतो०। संखेंजभागविद्ध-हाणी० णाणावरणभंगो। अवत्त० जह० उ० अंतो०।

६१३. अहारा० ओघं। णवरि यम्हि अणतका० तम्हि अगुल० असंखेंजज० कादच्यो। सेसं ओघं। अणाहार० कम्मइगर्भगो। एवं अंतरं समत्तं।

समान है। शेष प्रकृतियोंका भन्न मनायोगी जीवींक समान है। सम्बग्निश्यादृष्टि जीवोंमें ध्रुवबन्ध-वाली प्रकृतियोंका भन्न वेदकसम्यग्दृष्टि जीवोंके समान हैं। शेष प्रकृतियोंकी तीन बृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका जबन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तमुदूर्त है। अवक्तश्य बन्धका जबन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुदूर्त है। मिश्यादृष्टि जीवोंमें मध्य-बानी जीवोंके समान भन्न है। संज्ञी जीवोंमें पञ्चेन्द्रियपर्योग्न जीवोंके समान भन्न है।

६५२. श्रसंबी जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी श्रसंख्यातभागवृद्धि श्रोर श्रसंख्यात भागहानिका जघन्य श्रन्तर एक समय है और उत्कृष्ट श्रन्तर श्रन्तमुँहूर्त है। संख्यात भागवृद्धि, और संख्यातभागहानिका जयन्य श्रन्तर एक समय है श्रोर उत्कृष्ट श्रन्तर श्रन्तर काल है। इसी प्रकार संख्यातगुणवृद्धि श्रोर संख्यातगुणहानिका श्रन्तर काल जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि इनका जघन्य श्रन्तर एक समय कम जुड़क भवषहण प्रमाण है। जिनकी संख्यातगुणवृद्धि श्रोर संख्यातगुणवृद्धि श्रोर संख्यातगुणवृद्धि श्रोर संख्यातगुणवृद्धि श्रोर संख्यातगुणवृद्धि श्रोर उत्कृष्ट श्रन्तर दो नतीन समय है। चार श्रायु, वैक्रियिक छह, मतुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी श्रोर उत्कृष्ट श्रन्तर दो नतीन समय है। चार श्रायु, वैक्रियिक छह, मतुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी श्रोर उत्कृष्ट श्रन्तर दो नतीन समय है। चार श्रायु, वैक्रियिक छह, मतुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी श्रोर उत्कृष्ट श्रन्तर दो नतीन समय है। चार श्रायु, वैक्रियिक छह, मतुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी श्रोर उत्कृष्ट श्रन्तर दो नतीन समय है। चार श्रायुह्न है। तिर्वश्चगति, निर्वश्चगत्यानुपूर्वी और नीचगोत्रकी श्रसंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि श्रोर अवस्थित वन्धका जघन्य श्रन्तर श्रन्तर श्रन्तर श्रव्यातभाग है। श्रेप प्रकृतियोंकी श्रसंख्यात भागवृद्धि, श्रमंख्यात भागवृद्धि, श्रमंख्यात भागवृद्धि श्रोर उत्कृष्ट श्रन्तर श्रम्तर श्रम्तर है। संख्यात भागवृद्धि श्रोर संख्यात भागवृद्धि श्रोर संख्यात भागवृद्धि श्रोर संख्यात भागवृद्धि श्रोर संख्यात भागवृद्धि हो। संख्यात भागवृद्धि हो। संख्यात भागवृद्धि हो। संख्यात भागवृद्धि श्रोर संख्यात भागवृद्धि श्रोर संख्यात भागवृद्धि हो। संख्यात भा

६५३. आहारक जीवोंमें आंघके समान भङ्ग हैं। इतनी त्रिशेषता है कि जहाँ अनन्तकाल कहा है, वहाँ अङ्गलका असंख्यातवाँ भाग प्रमाण अन्तर कहना चाहिये। शेप भङ्ग आंघके समान है। अनाहारक जीवोंको भङ्ग कार्मणकाययोगी जीवोंके समान है। इसप्रकार अन्तर काल समाप्त हुआ।

# णाणाजीवेहि भंगविचओ

६१४, णाणाजीवेहि भंगविचयाणुगमेण दुवि०-ओघे० आदे० | ओघे० पंचणा०णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय०-दुगुं०-ओरालि०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०-उप०णिमि०-पंचंत० असंखेँजभागविड्ड हाणि-अविड्डि० वं० णियमा अत्थि | सेसाणि पदाणि
भयणिजाणि | तिण्णिआयु० पदा० भयणिजाणि | वेउव्विय्छ०-आहारदुग-तित्थय०
अविड्डि० णियमा अत्थि | सेसपदाणि भयणिजाणि | सेसाणं असंखेँजभागविड्डि-हाणिअविड्डि०-अवत० णियमा अत्थि | सेसपदाणि भयणिजाणि | एवं ओघभंगो कायजोगिओरालि०-ओरालि०मि० कम्मइ०-णवुंस०-कोधादि० ४-मदि०-सुद्०असंज०-अचक्खुदं०तिण्णिले०-भवसि०-अब्भवसि०-मिच्छा०-आहार०-अणाहारग ति | णवरि ओरालियमि०कम्मइ०-अणाहार० मिच्छ० अवत्त० देवगदिपंचग० अविड्डि० भयणिजा | सेसाणं
अविड्डि० अवत्त० णियमा अत्थि |

९१५, तिरिक्खेसु ओघं। मणुसअपज्जत्त०-वेउन्वियमि०-आहार०-आहारमि०-अवगदवे०-सुहुमसंप०-उवसम०-सासण०-सम्मामि० सन्वपदा भयणिजा। एइंदिय-वणफदि-णियोद-बादरपज्जत्तापञ्ज०-पुढवि०-आउ०-तेउ०-वाउ०-सन्वसुहुमबादरपुढवि-आउ०-तेउ०-वाउ०-वादरवणप्फदिपत्तेय० तेसिं अपञ्ज० सन्वपदा णियमा अत्थि।

### नाना जीवोंकी अपेक्षा भङ्गविचय

हिरश्व. नाना जीवोंकी अपेना भङ्गविचयानुगमसे निर्देश दो प्रकारका है—श्रोघ और आदेश। श्रोघसे पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिध्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, औदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघात, निर्माण और पाँच अन्तरायकी असंख्यात भागद्यद्वि, असंख्यात भागद्यानि और अबस्थित पदके वन्धक जीव नियमसे हैं। शेष पद भजनीय हैं। तीन आयुओंके पद भजनीय हैं। बैकियिक छह, आहारकिद्विक और तीर्थङ्कर प्रकृतिके अवस्थित पदके बन्धक जीव नियमसे हैं। शेष पद भजनीय हैं। शेष प्रकृतिके अवस्थित पदके बन्धक जीव नियमसे हैं। शेष पद भजनीय हैं। शेष प्रकृतिके अवस्थित भागद्याने, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव नियमसे हैं। शेष पद भजनीय हैं। इसी प्रकार ओवके समान काययोगी, औदारिककाययोगी, औदारिक मिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी, नपुंसकवेदी, क्रोधादि चार कषायवाले, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, अचजुदर्शनी, तीन लेश्यावाले, भव्य, अभव्य, मिध्यादृष्टि, आहारक और अनाहारक जीवोंके जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि औदारिकमिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी और अनाहारक जीवोंके जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि औदारिकमिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी और अनाहारक जीवोंके प्रवस्थित पदके अवक्तव्य पदके और देवगित पञ्चकके अवस्थित पदके बन्धक जीव भजनीय हैं। शेष प्रकृतियोंके अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव नियमसे हैं।

६१५. तिर्यख्रोंमें श्रोघके समान भङ्ग है। सनुष्य श्रपर्याप्त, वैक्रियिकमिश्रकाययोगी, श्राहारक काययोगी, श्राहारकमिश्रकाययोगी, श्रपातवेदी, सूद्तमसाम्परायसंयत, उपशमसम्यग्दृष्टि, सासादन सम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिध्यादृष्टि जीवोंमें सब पद भजनीय हैं। एकेन्द्रिय, वनस्पतिकायिक, निगोद श्रीर इनके बादर पर्याप्त श्रीर श्रपर्याप्त, पृथिवीकायिक, जलकायिक, श्रीप्रकायिक, वायुकायिक, सबसूद्रम, बादर पृथिवीकायिक, वादर जलकायिक, बादर श्रीप्रकायिक, बादर वायुकायिक, बादर

सेसाणं णिरयादि यात्र सण्णि ति असंखेंझ-संखेंझरासीणं आयुगवजाणं अवद्वि० णियमा अत्थि । सेसपदा भयणिजा । आयु० सञ्चपदा भयणिजा ।

### एवं भंगविचयं समत्तं

# भागाभागो

ह१६. भागाभागाणु० दुवि०-अघे० आदे०। अघे० पंचणा० चदुदंस० चदुसंज०पंचंत० असंखें जभागवड्डि-हाणिबंधगा सञ्वजीवाणं केविडियो भागो १ असखें ज०भागो।
तिण्णिवड्डि-हाणि-अवत्त०बंध० सञ्जजी० अणंतभा०। अविडि० सञ्जजी० केव० १
असंखें०भा०। पंचदंसणा० — मिच्छ० — बारसक० — भय० — दु० — ओराठि० — तेजहगादिणव०
तिण्णिवड्डि-हाणि — अविडि० — अवत्त० णाणावरणभंगो। सादावे० पुरिस० - जसिग० - उचा०
असंखें जभागवड्डि-हाणि - अवत्त० सञ्वजी० केव० १ असंखें जिदिभा०। तिण्णिवड्डि-हाणी०
सञ्च० केव० १ अणंतभाग०। अविडि० सञ्च० केव० १ असंखें जभा०। असादा० - इत्थि०णवुंस० - चदुणोक० दोगदि-पंचजादि० छस्संठा० - ओरालि० अंगो० - छस्संघ० दोआणु० - पर०उस्सा० अदाउजो० - दोविहा० — तसथावराठिणवयुगळ — अजस० - णीचा० सादभंगो। चदु-

वनस्पतिकायिक, प्रत्येकशरीर श्रीर इनके अपर्याप्त जीवोंमें सव. पदवाले जीव नियमसे हैं। नरक-गतिसे लेकर संज्ञीतक शेष सब श्रासंख्यात श्रीर संख्यात राशिवाली मार्गणाश्रोंमें श्रायुकर्मको छोड़कर श्रवस्थित पदवाले जीव नियमसे हैं। शेष पदवाले जीव भजनीय हैं। श्रायुकर्मके सब पदवाले जीव भजनीय हैं।

इस प्रकार भङ्गविचय समाप्त हुन्ना ।

#### भागाभाग

ह१६. भागाभागानुगमकी अपेक्षा निर्देश दा प्रकारका है— छोघ और आदेश। आघसे पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच अन्तरायकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यात वहुभाग प्रमाण हैं। तीन वृद्धि, तीन हानि और अवक्तव्य पदके वन्धक जीव सब जीवोंके अनन्तवें भाग प्रमाण हैं। पाँच दर्शनावरण, मिथ्यात्व, बारह कषाय, भय, जुगुप्सा, औदारिकशरीर और तैवृसशरीर आदि नी प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका भङ्ग ज्ञानामणके समान है। सातावेदनीय, पुरुषवेद, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यात बहुभाग अमाण हैं। असस्थितपदके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं। असंख्यात बहुभाग प्रमाण हैं। असातावेदनीय, खीवेद, नपुंसकवेद, चार नोकघाय, दो गति, पाँच जाति, छह संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, छह सहनन, दो आनुपूर्वी, परचात, उच्छात, उच्चोत, दो विहायोगित, त्रस और स्थावर आदि नो युगल, अयरा-

आयु० अवत्त० सन्व० केव० ? असंखें अदिभागो । असंखें अदिभागहाणी सन्व० केव० ? असंखें असंखें आभागा । वेउन्वियक्ष०-तित्थय तिण्णिविहु-हाणि-अवत्त० सन्व० केव० ? असंखें अदिभागो । अविहु० सन्व० केव० ? असंखें आभागा । आहारदुगं तिण्णिविहु हा०-अवत्त० सन्व० केव० ? संखें अभागो । अविहु० सन्व० केव० ? संखें आभागा । एवं तिरिक्खोघं कायजोगि-ओरालि०-ओरालियमि०-णवुं स०-कोधादि०४-मदि०-सुद०-असंज०-अवक्खुदं०-तिण्णिले०-भवसि०-अव्भवसि०-मिच्छा०-आहारग ति एदेसिं ओधेण साधेद्ण अप्पप्पणो पगदी णाद्ण काद्वं । एसिं असंखें अजिविगा तेसिं ओधे देवगदि-मंगो । ए संखें अजीविगा ते आहारसरीरमंगो । ए अणंतजीविगा ते असादमंगो । णविर एइंदिय-वण्कादि-णियोदाणं धुविगाणं असंखें भागविहु-हाणी केव० ? असंखें अदिभागो । अविह० असंखें आ भागा । सेसाणं एगविहु-हाणि-अवत्त० सन्व० केव० ? असंखें अदिभागो । अविह० सन्व० केव० ? असंखें आ

६१७. कम्मइग० परियत्तमणियाणि अवत्त० सव्व० केव० १ असंखेर्ज्जिदिभागो । अवद्वि० सव्व० केव० १ असंखेर्ज्जा भागा । एवं अणाहारा० ।

कीर्ति और नीचगोत्रका भंग सातावेदनीयके समान है। चार आयुओंक अवक्तव्यपद्के बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। असंख्यात भागहानिके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? इयसंख्यात बहुभाग प्रमाण हैं । वैक्रियिक छह श्रीर तीर्थंकर प्रकृतिकी तीन बृद्धि. तीन हानि श्रीर श्रवक्तव्यपदके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? ऋसंख्यातर्वे भागप्रमाण हैं। अवस्थितपद्के वन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं १ ऋसंख्यात बहुभाग प्रमाण हैं । ऋाहारकद्विककी तीन वृद्धि, तीन हानि ऋोर ऋवक्तव्य-पदके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? संख्यातवें भाग प्रमाण हैं । ऋबस्थितपदके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? संख्यात वहुआग प्रमाण हैं । इसी प्रकार सामान्य तिर्युद्ध, काययोगी, औदारिक काययोगी, औदारिक मिश्रकाययोगी, नपंसकवेदी, क्रांधादि चार कषायवाले, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, अचलुःदर्शनी, तीन लेश्यावाले, भव्य, अभव्य, मिध्यादृष्टि और आहारक इनके ओघसे साधकर अपनी अपनी प्रकृतियोंको जानकर भागाभाग कहना चाहिये । जिन मार्गणार्ख्योंका प्रमाण ऋसंख्यात है,उनमें खोचके अनुसार देवगतिके अनुसार भंग ज्ञानना चाहिये। तथा जिन मार्गणाओंका प्रमाण संख्यात है उनका क्रोंघके अनुसार ब्राहारक शरीरके समान संग जानना चाहिये। और जिन मार्गणाओंका प्रमाण अनन्त है उनका असाता-वेदनीयके समान भंग जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि एकेन्द्रिय, वनस्पतिकायिक और निगोद जीवोंमें भ्रववन्यवाली प्रकृतियोंकी ऋसंख्यात भागवृद्धि और ऋसंख्यात भागहानिके वन्धक जीव कितने हैं ? ऋसंख्यातवें भाग प्रमाण हैं । ऋवस्थितपदके बन्धक जीव ऋसंख्यात वह भाग प्रमाण हैं। रोप प्रकृतियोंकी एक वृद्धि, एक हानि और अवक्तव्यपद्के बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? असंख्यातवें भाग प्रमाण हैं । अवस्थितपदके वन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण है १ ऋसंख्यात बहुभाग प्रमाण हैं ।

८१७. कार्मणकाययोगी जीवोंमें परिवर्तमान प्रकृतियोंके अवक्तव्यपदके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? असंख्यातवें भाग प्रमाण हैं । अवस्थितपदके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं । इसी प्रकार अनाहारक जीवोंके जानना चाहिये ।

हर्द्र. अवगदवे० पंचणा०-चदुदंस० चदुसंज०-पंचंतरा० संखेजजभागविहु-हाणी संखेजजगुणविहु हाणि अवत्त० सञ्ब० केत० र संखेजजिदिभागो । अविद्धि० सञ्बजी० केव० र संखेजजि भागा । सादावे०-जसिग०-उचा० तिण्णिविहु-हाणि-अवत्त० संखेजजि-दिभागो । अविद्धि० संखेजजा भागा । सहुमसंप० सञ्बाणं संखेजजभागविहु-हाणी संखे-जजिदिभागो । अविद्धि० संखेजजा भागा ।

### एवं भागाभागं समत्तं

# परिमाणं

ह१६. परिमाणाणुगमेण दुवि०-ओघे० आदे०। ओघे० पंचणा० चदुदंसणा०-चदुमंज०-पंचंत० असंखेंज्जभागवड्डि हाणि-अवद्धि० केविडया ? अणंता। बेविड्डि-हाणी केव० ? असंखेंज्जा। असंखेंज्जगुणविड्डि हाणि-अवत्त० केव० ? संखेंज्जा। थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुवंधि०४-अपचक्खाणा०४-ओरालिय० णाणाव०भंगो। णविर अवत्त० असंखेंज्जा। णिहा-पचला-पचक्खाणा०४-भय०-दुगुं०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०-उप०-णिमि० असंखेंज्जभागविड्डि-हाणि-अविड्डि० अणंता। बेविड्डि-हाणि केव० ? असंखेंज्जा। अवत्त० संखेंज्जा। तिण्णिआयु० दोपदा० असंखेंज्जा। तिरिक्खायु० दोपदा अणंता।

ह१८. अपगतवेदी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्यलन और पाँच अन्तरायकी संख्यात भागवृद्धि, संख्यात भागवृद्धि, संख्यात भागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, अवक्तव्यपदेके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? संख्यात बहुभाग प्रमाण हैं । स्रातावेदनीय, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवक्तव्यपदेके बन्धक जीव संख्यातचें भाग प्रमाण हैं । स्रावस्थितपदेके बन्धक जीव संख्यात बहुभाग प्रमाण हैं । सूद्मसाम्परायसंयत जीवोंमें सब प्रकृतियोंकी संख्यात भागवृद्धि और संख्यात भागहानिके बन्धक जीव संख्यातवें भाग प्रमाण हैं । स्रावस्थितपदेके बन्धक जीव संख्यात बहुभाग प्रमाण हैं । इस प्रकार भागाभाग समाप्त हुआ ।

#### परिमाण

ह१६. परिमाणानुगमकी अपेदा निर्देश दो प्रकारका है— अधि और आदेश। श्रोधसे पाँच आनावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच अन्तरायकी असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात निर्माके बन्धक जीव कितने हैं ? असंख्यात गुणवृद्धि, असंख्यात गुणवृद्धि, असंख्यात गुणवृद्धि, असंख्यात गुणवृद्धि, अनन्तानुबन्धी चार, अप्रत्याख्यानावरण चार और औदारिक शरीरका भंग ज्ञानावरणके समान है ! इतनी विशेषता है कि अवक्तव्यपदके वन्धक जीव असंख्यात हैं । निद्रा, प्रचला, प्रत्याख्यानावरण चार, भय, जुगुप्सा, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, उपघात और निर्माणकी असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात के वन्धक जीव संख्यात हैं । तीन

वेउन्वियछकं तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्टि०-अवत्त० केव० १ असंखें जा । आहारदुगं तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्टि०-अवत्त० केव० १ संखें जा । तित्थय तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्टि० असंखें जा । अवत्त० संखें जा । सेसाणं असंखें जागावड्ढि-हाणि-अवट्टि० केव० १ अणंता । सेसपदा केव० १ असंखें जा । एवं ओघभंगो तिरिक्खो वं कायजोगि-ओराखि०-ओराखि०-यमि०-णवुं स०-कोधादि०४-मदि०-सुद०-असंज०-अचक्खुदं०-तिण्णिले०-भवसि०-अब्मवसि०-मिच्छादि०-असण्णि-आहारग ति । णवरि ओराखियमि० देवगदिपंचम० तिण्णिवड्डि-हा०-अवट्टि० केव० १ संखें जा । सेसाणं पि किंचि विसेसो णाद्व्यो ।

- ६२०. णिरएसु मणुसायु० दोपदा तित्थय० अवत्त० संखेँज्जा । सेसाणं सञ्बपदा असंखेँज्जा । एवं सञ्चणेरइय-देवाणं वेउवि० । णवरि सञ्बद्धे संखेँजा ।
- ६२१, सञ्चर्यचिदियतिरिक्ख० सञ्चपगदीणं सञ्चपदा असंखेँजा । एवं मणुसअपज्जत्त-सञ्चविगर्छिदि०-सञ्चपुढवि०-आउ०-तेउ०-बाउ०-बाद्खणण्कदिपत्ते०-पंचिदिय-तसअपज्जत्त-वेउन्बियमि०-विभंग०।
  - ६२२. मणुसेसु पंचणा० णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दु०-तेजा० क०-

आयुओं के दी परोंके बन्धक जीव असंख्यात हैं। तिर्यक्षायुके दो परोंके बन्धक जीव अनन्त हैं। विक्रियिक छहकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्यपदके बन्धक जीव कितने हैं? असंख्यात हैं। आहारकिंद्धककी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्यपदके बन्धक जीव कितने हैं? संख्यात हैं। तीर्यंकरकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितपदके बन्धक जीव असंख्यात हैं। अघ प्रकृतियोंकी असंख्यात मागवृद्धि, असंख्यात हैं। इसी प्रकार ओघके समान सामान्य तिर्यक्क, काययोगी, औदास्कि काययोगी, औदारिकिमिश्रकाययोगी, नपुंसकवेदी, क्रोधादि चार कषायवाले, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, अचचुदर्शनी, तीन लेश्यावाले, भव्य, अभव्य, मिश्यादृष्टि, असंज्ञी और आहारक जीवोंके जानना चाहिय। इतनी विशेषता है कि औदारिकिमिश्रकाययोगी जीवोंमें देवगतिपञ्चककी तीन वृद्धि, तीन हान और अवस्थितपदके बन्धक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। शेषमें भी कुछ विशेषता जाननी चाहिये।

६२०. नारिकयोंमें मनुष्यायुके दो पदोंके और तीर्थङ्कर प्रकृतिके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव संख्यात हैं। होप प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीव असंख्यात हैं। इसी प्रकार सब नारकी, देव, और वैक्षियिककाययोगी जीवोंके जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि सर्वार्थसिद्धिमें सब प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीव संख्यात हैं।

६२१. सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंमें सब प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीव असंख्यात हैं। इसी प्रकार मनुष्य अपर्याप्त, सब विकलेन्द्रिय, सब पृथ्वी कायिक, सब जलकायिक, सब अप्रिकायिक, सब वायुकायिक, बाद्र वनस्पति काथिक प्रत्येकशरीर, पञ्चेन्द्रिय अपर्याप्त, त्रस अप-र्याप्त, बैकियिकमिश्रकाययोगी और विभङ्गज्ञानी जीवोंमें जानना चाहिये।

६२२. मनुष्यमि पाँच ज्ञानावरण नौ दर्शनावरण, मिध्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, तैजसरारीर, कार्मणशरीर, वर्णचतुष्क, ऋगुरुलघु, उपघात, निर्माण स्रोर पाँच अन्तरायकी तीन-

वण्ण ०४-अगु ० उप० - णिमि ० - पंचंत ० तिष्णिबड्ढि - हाणि - अबद्धि ० केव० १ असंखें जा । सेसपदा संखें ज्ञा । दोआयु ० - वेउ विवयछ ० - आहारदु ग - तित्थय ० तिष्णिबड्ढि - हाणि - अबद्धि ० अवत्त ० संखें ज्ञा । सेसाणं सन्वपदा असंखें ज्ञा । णवि साद ० - जस० - उचा० असंखें ज्ञा । णवि साद ० - जस० - उचा० असंखें ज्ञा । णवि स्वया संखें ज्ञा । एवं एस भंगो आहार ० - आहारमि ० - अवगद वे० - मणपज्ञ ० - संजद - सामाइ ० - छेदो० - परिहार ० - सुदू म० ।

६२३. सञ्बएइंदिय वणप्फदि-णियोदेसु मणुसायुगस्स दोपदा असंर्सेज्जा । सेसाणं सञ्जपदा अणंता ।

६२४. पंचिदिय-तस०२ पंचणा०-चदुदंस०-चदुसंज० पंचंत० असंखें अगुणबिहुहाणी-अवत्त० केव० ? संखें ज्ञा। सेसपदा असंखें ज्ञा। णिद्दा-पचला-भय-दु०-पचकखाणा०४-तेजइगादिणव तित्थय० अवत्त० केव० ? संखें ज्ञा। सेसपदा असंखें ज्ञा।
आहारदुगं ओघं। सेसाणं सन्वपगदीणं सन्वपदा केव० ? असंखें ज्ञा। एवं पंचमण०-पंचवचि०-इत्थि०-पुरिस०-चक्खुदं०-सण्णि ति। णवरि इत्थि० तित्थय०
सन्वपदा संखें ज्ञा०।

९२५, कम्मइग०-अणाहार० देवगदिपंचगस्स अवट्ठि० केवडिया ? संखेज्जा। सेसाणि अवट्ठि०-अवत्त० केव० ? अणंता। मिच्छत्त० अवत्त० असंखेजा।

युद्धि, तीन हानि और अवस्थित पदके वन्धक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । शेष पदोंके बन्धक जीव संख्यात हैं । दो आयु, वैक्षियिक छह, आहारकद्विक और तीर्थक्कर प्रकृतिकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित, और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव संख्यात हैं । शेष प्रकृतियोंके सब पदोंके वन्धक जीव असंख्यात हैं । इतनी विशेषता है कि सातावेदनीय, अशःकीति और उच्चगोत्रकी असंख्यात गुणवृद्धि और अरांख्यात गुणहानिके बन्धक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं । मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें सब पदोंके बन्धक जीव संख्यात हैं । इसी प्रकार यह भक्क आहारककाययोगी, आहारक मिश्रकाययोगी, अपगतवेदी, मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापना संयत, परिहारविशुद्धिसंयत और सूक्तमसम्परायिक संयत जीवोंके जानना चाहिये।

हर३. सब एकेन्द्रिय, वनस्पतिकायिक और निगोद जीवोंमें मनुष्यायुके दो पदोंके बन्धक जीव श्रासंख्यात हैं। रोष प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीव श्रानन्त हैं।

हिरश्व. पञ्चेन्द्रियद्विक और त्रसद्विक जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच अन्तरायकी असंख्यातगुणगृद्धि, असंख्यात गुणहानि और अवक्तव्य पद्के बन्धक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं । रोष पदोंके बन्धक जीव असंख्यात हैं । निद्रा, प्रचला, भय, जुगुप्सा, प्रत्याख्यानावरण चार, तैजसशरीरादि नौ और त्रिक्षंद्धर प्रकृतिके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं । रोप पदोंके बन्धक जीव असंख्यात हैं । आहारकद्विकका भङ्ग ओपके समान है । रोष प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । इसी प्रकार पाँच मनोयोगी, पाँच वचनयोगी, स्रविदी, पुरुपवेदी, च्छःदर्शनी और संज्ञी जीवोंके जानना चाहिये ! इतनी विशेषता है कि स्रविदी जीवोंमें तीर्थङ्कर प्रकृतिके सब पदोंके बन्धक जीव संख्यात हैं ।

हर्य. कार्मण काययोगी और अनाहारक जीवोंमं देवगति पद्धकके अवस्थित पदके बन्धक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। शेष प्रकृतियोंके अवस्थित और अवक्तत्र्य पदके बन्धक जीव कितने हैं ? अनन्त हैं। मिण्यात्वके अवक्तत्र्य पदके बन्धक जीव असंख्यात हैं।

१२६. आमि०-सुद०-ओधि० पंचणा०-चदुदंस०-चदुसंज०-पुरिस०-उचा० पंचंत० तिण्णिवड्डि-हाणि-अवद्वि० असंखेंज्जा। असंखेंज्जगुणवड्डि-हाणि-अवत्त० केव० १ संखेंजा। णिद्दा-पचला-पचक्खाणा०४-भय-दु०-देवगदि-पंचिदि०-वेउन्वि०-तेजा०-क०-समचढु०-वेउन्वि०अंगो०--वण्ण०४-देवाणु०--अगु०४-पसत्थ०-तस०४--सुमग-सुस्सर-आदे०-णिमि०-तित्थय० तिण्णिवड्डि-हाणि-अवद्वि० असंखेंज्जा। अवत्त० संखेंज्जा। सादावे०-जस० तिण्णिवड्डि-हाणि-अवद्वि०-अवत्त० असंखेंज्जा। असंखेंज्जा। सादावे०-जस० तिण्णिवड्डि-हाणि-अवद्वि०-अवत० असंखेंज्जा। असंखेंज्जा। असादा०-अपचक्खाणा०४-चदुणोक०-मणुसग०-ओराज्ञि०-ओरालि०अंगो० वज्जरिस०-मणुसाणु०-थिराथिर-सुभासुभ-अजस० तिण्णि-बड्डिहाणि-अवद्वि०-अवत० असंखेंज्जा। मणुसायु० दोपदा आहारदुगं सञ्चपदा संखेंज्जा। देवायु० दोपदा असंखेंज्जा। एवं ओथिदंस०-सम्मादि०। संजदासंजदे तित्थय० सञ्चपदा संखेंज्जा। सेसा असंखेंज्जा।

६२७. तेऊए पचक्खाणा०४-देवगदि-तित्थय० अवत्त० संखेज्जा। सेसा असं-खेज्जा। मणुसायु० दोपदा० असंखेज्जा। आहारदुगं ओघं। सेसाणं सव्यपदा असं-खेज्जा। एवं पम्माए वि। सुकाए वि असादवे०-थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अट्ठक०-छण्णोक०-छस्संठा०-छस्संघ०-दोविहा०-थिरादिपंचयुगल-अजस०-णीचा० तिण्णिवड्डि-

६२६. आभिनिवोधिक झानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनवरण, चार संज्वलन, पुरुषवेद, उद्धगोत्र श्रीर पाँच श्रन्तरायकी तीन वृद्धि, तीन हानि श्रीर अवस्थित पदके बन्धक जीव ऋसंख्यात हैं । ऋसंख्यातगुणवृद्धि, ऋसंख्यातगुणहानि और ऋवक्तव्य पदके बन्धक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं । निद्रा, प्रचला, प्रत्याख्यानावरण चार, भय, जुगुष्सा, देव-गति, पञ्चोन्द्रिय जाति, वैकियिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वैकियिक त्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, देवगस्यानुपूर्वी, त्रागुरुलघुचतुष्क, प्रशस्तविहायोगति, त्रसचनुष्क, सुभग, सुस्वर आदेय, निर्माण और तीर्थङ्कर प्रकृतिकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित पदके वन्धक जीव असंख्यात हैं। अवक्तव्य पद्के बन्धक जीव संख्यात हैं। साताबेदनीय और यशःकीर्तिकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित ऋौर अवक्तव्य पदके बन्धक जीव ऋसंख्यात हैं । ऋसंख्यातगुणवृद्धि श्रीर असंख्यातगुणहानिके बन्धक जीव संख्यात हैं। ऋसातावेदनीय, ऋपत्याख्यानावरण चार, चार नोकषाय, मनुष्यगति, श्रीदारिकशरीर, श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वन्नवृषभनाराच संहनन, मनुष्य-गत्यानुपूर्वी, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ और अयशःकीतिकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित, श्रीर त्र्यवक्तव्य पदके बन्धक जीव त्र्रासंख्यात हैं। मनुष्यायुके दो पदों श्रीर श्राहारकद्विकके सब पदोंके बन्धक जीव संख्यात हैं। देवायुके दो पदोंकं बन्धक जीव ऋसंख्यात हैं। इसी प्रकार श्रवधिदर्शनी श्रौर सम्यग्द्रष्टि जीवोंके जानना चाहिये। संयतासंयत जीवोंमें तीर्थद्वर प्रकृतिके सव पदोंके बन्धक जीव संख्यात हैं। शेष प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीव असंख्यात हैं।

६२७. पीत लेश्यावाले जीवोंमें प्रत्याख्यानावरण चार, देवगति श्रीर तीर्थक्कर प्रकृतिके अव-क्तव्य पदके बन्धक जीव संख्यात हैं। शेष पदोंके बन्धक जीव असंख्यात हैं। मनुष्यायुके दोनों ही पदोंके बन्धक जीव असंख्यात हैं। आहारकद्विकका मङ्ग श्रोधके समान है। शेष प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीव असंख्यात हैं। इसी प्रकार पदालेश्यावाले जीवोंमें भी जानना चाहिये। शुक्तलेश्यावाले जीवोंमें असातावेदनीय, स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व, आठ क्याय, छह नो कषाय, छह संस्थान, छह संहनन, दो विहायोगित, स्थिर आदि पाँच युगल, अयशःकीर्त, और नीच- ६२८. खइग० पंचणा०-चदुदंस०-चदुसंज-पुरिस-उच्चा०-पंचंत-सादादिबारसओधि-भंगो । दोआयु०-आहारदुगं सव्वपदा संखेँज्जा । सेसाणं अवत्त० संखेँज्जा । सेसपदा असंखेँज्जा । वेदगे सादादिबारस-अपचक्खाणा०४-मणुसगदिपंचग० तिण्णिबह्नि हाणि-अबिहु०-अवत्त० असंखेँज्जा । सेसाणं अवत्त० संखेँज्जा । सेसाणं सव्वपदा असंखेँज्जा । उत्तसम० पंचणा चदुदंस-चदुसंज-पुरिस-उच्चा० ओधिमंगो । सादावे० जसिग० असंखेँज्जाणबह्नि हाणी-संखेँज्जा । सेसं असंखेँज्जा । असादादिदस०-अपचक्खाणा०४ सव्वपदा असंखेँज्जा । आहारदुग-तित्थय० सव्वपदा संखेँज्जा । सेसाणं पगदीणं अवत्त० संखेँज्जा । सेसं० असंखेँज्जा । सादावे० तित्थय० सव्वपदा संखेँज्जा । सेसाणं पगदीणं अवत्त० संखेँज्जा । सेसं० असंखेँज्जा । सम्मामि०, सव्वेसिं सव्वपदा असंखेँज्जा । सम्मामि०, सव्वेसिं सव्वपदा असंखेँज्जा ।

#### एवं परिमाणं समत्तं।

गोत्रकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित आंर अवक्तत्र्य पदके बन्धक जीव असंख्यात हैं। सातावेदनीय, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका भङ्ग अविधिज्ञानी जीवोंके समान है। दो आयु और आहारकदिकका भङ्ग मनुष्यनियोंके समान हैं। शेष प्रकृतियोंकी असंख्यात गुणवृद्धि, असंख्यात गुणहानि और अवक्तव्यपदके बन्धक जीव संख्यात हैं। शेष पदोंके बन्धक जीव असंख्यात हैं।

हरदः. चायिक संन्यग्रदृष्टि जीवोंमें पाँच ज्ञानायरण, चार दर्शनावरण, चार संज्यलन, पुरुष-वेद, उच्चगोत्र पाँच अन्तराय और साता आदिक पाँच प्रकृतियोंका मङ्ग अवधिज्ञानी जीवोंके समान हैं। दो आयु और आहारकि क्रिक सब पदोंके बन्धक जीव संख्यात हैं। शेष प्रकृतियोंके अवक्तव्यपदके बन्धक जीव संख्यात हैं। शेष पदोंके बन्धक जीव असंख्यात हैं। वेदकसम्यग्रदृष्टि जीवोंमें साता आदिक वारह, अप्रत्याख्यानावरण चार और मनुष्यगति पृष्णककी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्यपदके बन्धक जीव असंख्यात हैं। शेष प्रकृतियोंके अवक्तव्यपदके बन्धक जीव संख्यात हैं। शेष प्रकृतियोंके अवक्तव्यपदके बन्धक जीव संख्यात हैं। शेष सब पदोंके बन्धक जीव असंख्यात हैं। उपशामसम्यग्रदृष्टि जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, पुरुषवद और उच्चगोत्रका मङ्ग अवधिज्ञानी जीवोंके समान है। सातावेदनीय और यशक्तितिकी असंख्यात गुणवृद्धि और असंख्यात गुणवृद्धि और अत्रत्याख्यानावरण चारके सब पदोंके बन्धक जीव असंख्यात हैं। आहारकि इक और तिथंकर प्रकृतिके सव पदोंके बन्धक जीव संख्यात हैं। शेष प्रकृतियोंके अवक्तव्यपदके बन्धक जीव संख्यात हैं। शेष पदोंके बन्धक जीव संख्यात हैं। सासादनसम्यग्रदृष्टि जीवोंमें मनुष्यायुके दो पदोंके बन्धक जीव संख्यात हैं। सासादनसम्यग्रदृष्टि जीवोंमें मनुष्यायुके दो पदोंके बन्धक जीव संख्यात हैं। सासादनसम्यग्रदृष्टि जीवोंमें सब प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीव असंख्यात हैं। सम्यग्निक्याहिट जीवोंमें सब प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीव असंख्यात हैं।

इस प्रकार परिमाण समाप्त हुआ।

# खेंतं

६२९. खेताणुगमेण दुवि०-श्रोषे० आदे०। ओघे० पंचणा०-चदुदंसणा०-चदुसंज-पंचंत० असंखेंज्ज-भागविद्व-हाणि-अविद्वि० केविड खेते १ सव्वलोगे। सेसपदा लोगस्स असंखेंज्जदिभागे। पंचदंस०-मिच्छ० बारसक०-भय-दुगुं०-तेजइगादिणव०णाणावरणभंगो। सादावे०-पुरिस०-जस० उचा० असंखेंज्जभागविद्वि-हाणि अविद्वि०-अवत्त० सव्वलोगे। सेसपदा लोगस्स असंखेंज्जदिभागे। तिण्णिआयु०-वेउव्वियछ०-आहारदुग-तित्थय० सव्वपदा लोगस्स असंखेंज्जदिभागे। तिण्णिआयु०-वेउव्वियछ०-आहारदुग-तित्थय० सव्वपदा लोगस्स असंखेंज्जितिभागे। तिण्णिआयु०-वेउव्वियछ०-आहारदुग-तित्थय० असंखेंज्जभागविद्वि-हाणि-अविद्वि०-अवत्त० सव्वलोगे। दोविद्वि-हाणी लोगस्स असंखेंज। एवं ओघमंगो तिरिक्खोघो कायजोगि-ओरालियका०-ओरालियमि०-णव्यंस०-कोघादि०४-मदि०-सुद०-असंज०-अचक्खुदं०-तिण्णिले०-भवसि०-अब्भवसि०-मिच्छा०-असण्णि-आहा-रग ति। तं पि खेंत्रं ओघेण साधेदव्वं।

६३०. एइंदिय-सुहुमएइंदिय-पज्जत्तापज्जत्ता पुढवि०-आउ० तेउ०-वाउ० तेसिं सुहुम-पज्जत्त-अपज्जत्त-वणप्फदि-णियोद० तेसिं च सुहुम पज्जत्तापज्जत्ताणं मणुसायु० दोपदा लोगस्स असंखे० । सेसाणं सन्वपगदीणं सन्वपदा सन्वलोगे । सन्ववादरेइंदिए

### क्षेत्र

हरहे. क्षेत्रानुगमकी अपेचा निर्देश दो प्रकारका है— आंघ और आदेश। श्रोयसे पाँच हानावरण, चार दर्शनावरण, चार संख्वलन और पाँच अन्तरायकी असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि और अयस्थितपद्के बन्धक जीवोंका कितना चेत्र है ? सब लोक क्षेत्र है । शेप पदोंके बन्धक जीवोंका लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण चेत्र है । पाँच दर्शनावरण, मिध्यात्व, बारह कपाय, भय, जुगुप्साऔर तैजसहारीरादि नौ पकृतियोंका भंग ज्ञानावरणके समान है । सातावेदनीय, पुरुपवंद, यशःकीति और उच्चगोत्रकी असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि, अवस्थित और अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका सब लोक चेत्र है । शेष पदोंके बन्धक जीवोंका लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण चेत्र है । तीन आयु, वैक्रियिक छह, आहारकद्विक और तीर्थकर प्रकृतिके सब पदोंका लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण चेत्र है । तीन आयु, वैक्रियिक छह, आहारकद्विक और तिर्थकार प्रकृतिके सब पदोंका लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण चेत्र है । तीन आयु, वैक्रियिक छह, आहारकद्विक और तिर्थकार प्रकृतिके सब पदोंका लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण चेत्र है । तीन आयु, वैक्रियक छह, आहारकद्विक और तिर्थकार और अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका सब लोक चेत्र है । दो बृद्धि और दो हानिके वन्धक जीवोंका लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण चेत्र है । इसी प्रकार ओयके समान सामान्य तिर्थक्क, काययोगी, औदारिक काययोगी, औदारिक मिश्रकाययोगी, नपुंसकवेदी, कोधादि चार कपायवाले, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, अचलुदर्शनी, तीन लॅश्यावाले, भन्य, अभन्य, मिश्यादृष्टि, असंज्ञी और आहारक जीवोंके जानना चाहिये । यह चेत्र भी श्रोपके समान साध लेना चाहिये ।

६३०. एकेन्द्रिय, सूद्रम एकेन्द्रिय, उनके पर्याप्त और अपर्याप्त पृथिवीकायिक, जलकायिक, अपिकायिक, वायुकायिक तथा इनके सूद्रम तथा पर्याप्त और अपर्याप्त, वनस्पतिकायिक, निगोद तथा इनके सूद्रम तथा पर्याप्त और अपर्याप्त जीवोंमें मनुष्यायुके दो पदोंका चेत्र लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। रोप सब प्रकृतियोंक सब पदोंका चेत्र सब लोक है। सब बाद्र एकेन्द्रिय जीवोंमें

धुतिगाणं असंखेज भागविद्व-हाणि-अविद्वि० सन्वलो० । सादादिदस० ऍक विद्व-हाणि-अविद्वि०-अवत्त० सव्वलो० । इतिथ०-पुरिस०-चदु आदि-पंचसंठा-ओरालि०अंगो० छस्संघ०-आदाउन जो०-दोविहा० तस-बादर-सुभग-दोसर० आदें ज०-जसिग० ऍक विद्वि-हाणि-अविद्वि०-अवत्त० केविड खें ते १ लोग० संखें ज० । णवुंस०-एइंदि०-हुंड०-पर०-उस्सा-०थावर-सुहुम-पन्जत्त अपन्जत्त-पत्तेय०-साधार०-दूभग०-अणादें०-अजस० ऍक विद्वि-हाणि अविद्वि० सन्वलो० । अवत्त० लोग० संखें ज० । तिरिक्खाय० दोपदा लोग० संखें ज० । मणुसायु० दोपदा लोग० संखें ज० । मणुसायु० दोपदा ओषं । तिरिक्खाग०-तिरिक्खाणु० णीचा० ऍक विद्वि-हाणि-अविद्वि०-अवत्त० लोग० असंखें० । मणुसगइदुग०-उचा० ऍक विद्वि-हाणि-अविद्वि०-अवत्त० लोग० असंखें० । मणुसगइदुग०-उचा० ऍक विदिक्ख गइतिगं धुवं कादन्वं ।

९३१. बादरपुढवि०-आउ०- तेउ० तेसिं च अपन्त धुविगाणं एकवड्ढि-हाणि अवड्ढि०-सादादिदसण्णं ऍकवड्डि-हाणि-अवड्ढि०-अवत्त० सन्वलो०। णवुंस०-तिरिक्खग०-एइंदि०-हुंड०-तिरिक्खाणु०-पर०-उस्सा०-थावर-सुहुम-पज्जत्तापन्त०-पत्तेय०-साधार०-दुमग०-अणादेँ०-अजस०-णीचा० ऍकवड्डि-हाणि-अवड्डि० सन्वलो०। अवत्त० लो०

ध्रवबन्धवाली प्रकृतियोंकी असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि श्रौर अवस्थितपद्के बन्धक जीवोंका सब लोक त्तेत्र हैं। साता ऋादि दस प्रकृतियोंकी एक वृद्धि, एक हानि, ऋवस्थित और अयक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका सब लोक क्रेंच हैं। स्वीवेद, पुरुषवेद, चार जाति, पाँच संस्थान, श्रीदारिक आङ्गोपाञ्ज, छह संहनन, आतप, उद्योत, दो विहायोगित, त्रस, वादर, सुमग, दो स्वर, आदेय और यशःकीर्तिकी एक वृद्धि, एक हानि, अवस्थित और अवक्तव्यपद्के बन्धक जीवोंका कितना चेत्र है ? लोकके असंख्यातचें भाग प्रमाण चेत्र है। नपुंसकवेद, एकेन्द्रिय जाति, हण्ड-संस्थात, परघात, उच्छास, स्थावर, सूच्म, पर्याप्त, अपर्याप्त, प्रत्येक, साधारण, दुर्भग, अनादेय श्रीर श्रायशाकीतिकी एक बृद्धि, एक हानि श्रीर श्रावस्थितपदके बन्धक जीवोंका सब लोक क्रेन्र है। अवक्तव्यपद्के बन्धक जीवोंका लोकके संख्यातवें भाग प्रमाण क्रेत्र है। तिर्यञ्चायके दो पदोंके वन्धक जीवोंका लोकके संख्यातवें भाग प्रमाण त्रेत्र है। मनुष्यायुके दो पदोंके बन्धक जीवोंका श्रोघके समान देत्र है। तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और नीचगोत्रकी एक वृद्धि, एक हानि, अवस्थित श्रीर श्रवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका लोकके श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण चेत्र है। मनुष्य-गतिद्विक, और उच्चनोत्रकी एक दृद्धि, एक हानि, अवस्थित और अवक्तव्यपद्के बन्धक जीवोंका लोकके ऋसंख्यातवें भाग प्रमाण चेत्र है। इसी प्रकार बादर वायुकायिक और बादर वायुकायिक क्रपर्याप्त जीवोंके जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि इनमें तिर्यक्क्षगति त्रिकको ध्रव करना चाहिये ।

६३१. बादर पृथिवीकायिक, बादर जलकायिक श्रीर वादर अग्निकायिक तथा इनके अपर्याप्तक जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी एक वृद्धि, एक हानि श्रीर अवस्थितपदके बन्धक जीवोंका तथा साला आदि दस प्रकृतियोंकी एक वृद्धि, एक हानि, अवस्थित श्रीर अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका सब लोक क्षेत्र है। नपुंसकवेद, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रियजाति, हुण्डसंस्थान, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, परघात उच्छास, स्थावर, सूदम, पर्याप्त, अपर्याप्त, प्रत्येक, साधारण, दुर्भग, अनादेय, अयशाकीतिं श्रीर नीचगोत्रकी एक वृद्धि, एक हानि श्रीर अवस्थितपदके बन्धक जीवोंका सब लोक क्षेत्र है। अवक्तव्य

असंखें । सेसाणं सञ्चपगदीणं सञ्चपवदा लो॰ असंखें । एवं बादरवणफदि-णियोद-पज्जत्त-अपज्जत्त बादरवणफदिपत्तेय ० तेसि अपज्जत्त ।

९३२. कम्मइ० अणाहारगेसु देवगइपंचगस्स सञ्वपदा लो असं०। सेसाम् सम्ब-पगदीणं सञ्वपदा सञ्वलो०। सेसाणं णिरयादि यात्र सण्णि ति संखेज्ज-असंखेज-जीविगाणं सञ्वासि पगदीणं सञ्वपदा लोगस्स असंखेज्ज०।

# एवं खेंत्तं समत्तं।

### फोसणं

६३३. फोससाणुगमेण दुनि०-ओघे० आदे०। ओघे० पंचणा०-चदुदंसणा-चदुसंज०-पंचंत० असंखेजभागवड्डि-हाणि अवद्वि०बंधगेहि केवडियं खेत्तं फोसिदं ? सव्वलो०। बेवड्डि-हाणि० लोग० असंखे० अद्वचो० सव्वलोगो वा। असंखेजगुणवड्डि-हाणि-अवत्त० लो० असंखे०। थीणगिद्धि०३-अणंताणुबंधि०४ अवत्त० अवद्वचोँहस०। सेसपदा णाणावरणभंगो। णिद्दा-पचला-पचक्खाणा०४-भय०-दु० तेजहगादिणव० अवत्त० खोग० असंखेंज्ज०। सेसपदा णाणावरणभंगो। सादावे० अवत्त० सव्वलो०। सेसपदा णाणा-

पदके बन्धक जीवोंका लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण चेत्र हैं। शेष सब प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीवोंका लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण चेत्र है। इसी प्रकार वादर वनस्पतिकायिक, निगोद और इनके पर्याप्त, अपर्याप्त, बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर और इनके अपर्याप्त जीवोंके जानना चाहिये।

8३२. कार्मणकाययोगी और अनाहारक जीवोंमें देवगति पक्कके सब पदोंके बन्धक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। शेष सब प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीवोंका क्षेत्र सब लोक है। शेष नरकगतिसे लेकर संज्ञी मार्गणातक संख्यात और असंख्यात जीव राशि-वाली मार्गणाओं में सब प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण है।

#### इसप्रकार चेत्र समाप्त हुआ। स्पर्शन

हरह. स्पर्शनानुगमकी अपेचा निर्देश दो प्रकारका है—ओध. और आदेश। खोधसे पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच अन्तरायकी असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यातभाग हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीवोंने कितने चेत्रका स्पर्शन किया है ? सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है । दो वृद्धि और दो हानियोंके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवेंभाग प्रमाण, कुछ काम आठवटे चौदह राजू और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है । असंख्यात गुणवृद्धि, असंख्यात गुणवृद्धि, असंख्यात गुणवृद्धि, असंख्यात गुणवृद्धि, असंख्यात गुणवृद्धि, असंख्यात गुणवृद्धि तीन और अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवेंभाग प्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । स्यानगृद्धि तीन और अनन्तानुबन्धी चारके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है । शेष पदोंका भक्त ज्ञानावरणके समान है । निद्रा, प्रचला, प्रत्याख्यानावरण चार, भय, जुगुण्सा और तैजसरारीरादि नौ प्रकृतियोंके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवेंभाग प्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है । शेष पदोंका भक्त ज्ञानावरणके समान है । होष पदोंका भक्त ज्ञानावरणके समान है । सातावेदनीयके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने

वरणभंगो । असादादिदस० अवत्त० सन्वलो० । सेसं णाणावरणभंगो । मिन्छ० अवत्त० अट्ट-नारह० । सेसं णाणावरणभंगो । अपचक्खाणा०४ अवत्त० छचोँ६० । सेसाणं णाणा-वरणमंगो । इत्थिवे०-पंचिदि० पंचसंठा०-ओरालि०अंगो०-छस्सं०-दोविहा०-तस-सुभग-दोसर-आर्देजन्असंखेँजनगगविद्ध-हाणि अविद्धि०-अवत्त० सन्वलो० । दोविद्ध-हाणी०लो० असंखेँ० अट्ट-नारहचोँ० । पुरिसवे० दोविद्धि-हाणी हत्थिवेदभंगो । सेसपदा सादमंगो । णवुंस०-तिरिकखग०-एइंदि०-हुंड०-तिरिकखाणु०-पर०-उस्सा०-थावर-पज्जत्त-पत्ते०द्भ०-अणादेँ० -णीचा० ऍक्कविट्ध-हाणि-अविट्ठ०-अवत्त० सन्वलो० । दोविद्ध-हाणि० अट्टचौँ६० सन्वलो० । णिरय-देवायु० दोपदा खेँत० । तिरिकखायु० दोपदा सन्वलो० । मणुसायु० दोपदा अट्टचौँ६० सन्वलो० । णिरय-देवायु० दोपदा खेँत० । तिरिकखायु० दोपदा सन्वलो० । मणुसायु० दोपदा अट्टचौँ६० सन्वलो० । मणुसायु० न्यादाव० सन्वलो० । सणुसग०-मणुसाणु०-आदाव० एक्कविट्ध-हाणि-अविट्ठ०-अवत्त० सन्वलो० । दोविद्ध-हाणि०-अट्टि० छचोँ६० । वेइंदि०-तेइंदि०-चदुरिंदि० दोविद्ध-हा० लोग०

सब लोक चेत्रका स्पर्शनिकया है। शेष पदोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। असाताबेदनीय आदि दस प्रकृतियोंके अवक्तव्य पदके वन्धक जीवोंने सब लोक नेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंका भक्त ज्ञानावरणके समान है। मिध्यास्त्रके अवक्तत्र्य पदके बन्धक बीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजु और कुछ कम बारहबटे चौदह राजु देशका स्पर्शन किया है। शेष पदोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। अप्रत्याख्यानायरण चारके अवक्तन्य पदके बन्धक जीवीने कुछ कम छःबटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेव पदोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। स्त्रीवेद, पञ्चेन्द्रिय जाति. पाँचे संस्थान, ऋौदारिक ऋाङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, दो विहायोगति, त्रस, सुभग, दो स्वर और आदेयकी ऋसंख्यात भागवृद्धि, ऋसंख्यात भागदानि, ऋवस्थित और ऋवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। दो वृद्धि और दो हानियोंके बन्धक जीवोंने लोकके ऋसंख्यातवें भागप्रमाण, कुछ कम आठबटे चौदह राजू और कुछ कम बारहबटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। पुरुषवेदकी दो वृद्धि और दो हानियोंका भन्न स्तिवेदके समान है। शेष पदोंका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। नपुसंकवेद, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, हुण्ड संस्थान, तिर्य-<u>ब्र्यात्यानुपूर्वी, परघात, उच्छ्रास, स्थावर, पर्याप्त, प्रत्येक, दुर्भग त्र्यनादेय त्रौर नीचगोत्रकी एक वृद्धि,</u> एक हानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने सब लोक देवका स्पर्शन किया है। दो वृद्धि और दो हानियोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राजु और सब लोक नेत्रका स्पर्शन किया है ! नरकायु श्रीर देवायुके दो पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। तिर्यक्रायुके दो पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन सब लोक है। मनुष्यायुक्ते दो पदोंके बन्धक जीबोंका स्पर्शन कुछ कम आठबटे चौदह राजू और सब लोक है। नरकगति, देवगति और दो अ।तपूर्वीकी तीन बृद्धि, तीन हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन कुछ कम छह-बटे चौदह राजु है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। मनुष्यगित, मनु-च्यगत्यानुपूर्वी, और आतपकी एक दृद्धि, एक हानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीबोंका स्पर्शन सब लोक है। दो बुद्धि और दो हानियोंके बन्धक जीबोंका स्पर्शन कुछ कम <del>ब्राठबटे चौदह राजू है। द्वीन्द्रिय जाति, ब्रीन्</del>द्रिय जाति श्रीर चतुरिन्द्रिय जातिकी दो बृद्धि

९ मूलप्रतौ अणादे० अजस० णीचा० इति पाटः ।

असं । सेसं णाणानरणमंगो । वेउन्वि ०-वेउन्वि ० अंगोवंग ० सन्वपदा केव० फो० १ लो० असं ० भा० बारहचों इस० देस् ० । अवत्त ० खेँतं ० । ओरालि० अवत्त ० बारह० । सेसपदा तिरिक्खगदिभंगो । आहारदुगं खेँतं ० । उज्जो०-बादर०-जस० दोवड्डि-हा० अट्ट-तेरह० । सेसं सादभंगो । सहुम-अपज्ञ०-साधार० दोवड्डि-हा० लो० असंखेँ ज० सन्वलो० । सेसं तिरिक्खगदिभंगो । तित्यय० तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्टि० अट्टचोँ० । अवत्त० खेँत्त० । उचा० असंखें जभागनड्डि-हाणि-अवट्टि०-अवत्त० सन्वलो० । बेवड्डि-हाणि० अट्टचोँ ६० । असंखें जभागनड्डि-हाणि० अवट्टि०-अवत्त० सन्वलो० । बेवड्डि-हाणि० अट्टचोँ ६० । असंखें जगुणवड्डि-हाणि० खें त्रमंगो । एवं ओघभंगो कायजोगि-कोधादि०४-अचक्खदं० भवसि०-आहारग ति ।

६३४. णेरइएसु धुविगाणं तिष्णिवड्ढि हाणि अवद्वि० सादादिबारस-उछो० सञ्चपदा छचोँ६०। दोआयु०-मणुसगदिदुग-तित्थय०-उचा० सञ्चपदा खेर्ते०। मिच्छत्त० अवत्त० पंचचोँइस०। सेसाणं अवत्त० खेर्त्तभंगो। सेसाणं सञ्चपदा छचोँ६०। एवं सञ्चणेरइगाणं

श्लीर दो हानियोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण है । शेष पदींके बन्धक जीवोंका स्पर्शन ज्ञानावरणके समान हैं । वैक्रियिक शरीर और वैक्रियिकत्राङ्गोपाङ्गके सब पदोंके बन्धक जीवोंने कितने चेत्रका स्पर्शन किया है ? लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण श्रीर कुछ कम बारहवटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। अयवक्तव्य पदका भङ्ग चेत्रके समान हैं। आँदा-रिकशरीरके अवक्तव्य पर्के बन्धक जीवोंने कुछ कम बारहबटे चौदह राजु चेत्रका स्वर्शन किया है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंका भङ्ग तिर्यक्रगतिके समान है। आहारकद्विकका भङ्ग चेत्रके समान है। उद्योत, बादर और यशःकीर्तिकी दो वृद्धि और दो हानियोंके वन्यक जीवोंने कुछ कम आठ-बटे चौदह राजु और कुछ कम तेरहबटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। सूच्म, अपर्याप्त और साधारणकी दो वृद्धि और दो हानियों के बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया हैं। शेष पदींका भक्क तिर्यञ्चगतिके समान है। वीर्यङ्कर प्रकृतिकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम त्र्याठवटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। श्रवक्तत्र्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन दोत्रके समान हैं। उच्चगोत्रकी असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि, अव-स्थित और अवक्तज्य पदके वन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। दो वृद्धि और दो हानियोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। असंख्यात-गुणवृद्धि स्रोर असंख्यात गुणहानिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। इसीप्रकार श्रोधके समान काययोगी, क्रोधादि चार कपायवाले, अचलुदर्शनी, भन्य श्रीर श्राहारक जीवोंके जानना चाहिये ।

हिश्श. नारिकयों में ध्रुववन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि श्रीर अवस्थित पर्के बन्धक जीवोंने तथा सातात्रादि वारह श्रीर उद्योतके सब पर्दोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम छहवटे चौदह राजू नेत्रका स्पर्शन किया है। दो श्रायु, मनुष्यगतिद्धिक, तीर्थद्धर श्रीर उच्चगोत्रके सब पर्दोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन नेत्रके समान है। मिण्यात्वके अवक्तव्य पर्के बन्धक जीवोंने कुछ कम पाँचबटे चौदह राजू नेत्रका स्पर्शन किया है। शेप प्रकृतियोंके श्रवक्तव्य पर्के बन्धक जीवोंका स्पर्शन नेत्रके समान है। शेप प्रकृतियोंके वन्धक जीवोंने कुछ कम छहवटे

#### अप्पप्पणी फोसणं कादव्वं।

६३५. तिरिक्खेस धुविगाणं एकवड्डि-हाणि-अवड्डि० सन्त्रलो० । बेबड्डि हा० लो० असं० सन्त्रलो० । सादादिएँकारह० एँकवड्डि-हाणि-अवड्डि०-अवन० सन्त्रलो० । बेबड्डि-हा० लो० असं० सन्त्रलो० । थीणगिद्धि०३—अड्डक० अवत्त० खेर्न० । मिन्छ० अवत्त० सक्त्रलो० । सेसणं सादभंगो । इत्थिवे० बेबड्डि हा० दिड्डचोँ६० । सेसाणं सादभंगो । पुरिस०-समचदु०-दोविहा०-सुभग-दोसर-आदे०-उच्चा० दोबड्डि-हाणि लो० असं० छचोँ६० । सेसं इत्थिवेदमंगो । णवुंस०-तिरिक्खग०-एइंदि०-हुंड०-तिरिक्खाणु०-पर०-उस्सा०-थावर-सुदुम-पज्जत्तापज्जत्त-पत्तेय-साधार०-दूभग०-अणादेँ०-णीचागो० दोबड्डि-हा० ली० असं० सन्वलो० । अवत्त० खेर्न० । सेसं सादभंगो । णिरय-देवायु०-वेउन्वियछ० ओघं । तिरिक्खायु० खेर्तमंगो । मणुसायुगस्स दोपदा लो० असंखे० सन्वलो० । भणुसगदिदुग-तिणिजादि—चदुसंठा०-ओरालि०अंगो०-छस्संघ०-आदात० दोबड्डि-हाणो सत्तवोई० । णविर

चौदह राजु चेत्रका रूपर्शन किया है। इसीप्रकार सब नारिकयोंका अपना-अपना स्पर्शन कहना चाहिये।

६३५. तिर्यञ्जोंमें भ्रव बन्धवाली प्रकृतियोंकी एक वृद्धि, एक हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। दो वृद्धि और दो हानियोंके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। साता आदि ग्यारह प्रकृतियोंकी एक वृद्धि, एक हानि, अवस्थित और अयक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने सब लोक न्नेत्रका स्पर्शन किया है। दो वृद्धि और दो हानियोंके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवेंभाग प्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। स्यानगृद्धि तीन और आठ क्षायके अवक्तत्र्य पदके बन्धक जीघोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। मिण्यात्वके अवक्तत्र्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम सातबटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन सातावेदनीयके समान है। स्त्रीवेदकी दो वृद्धि और दो हानिके बन्धक जीवोंने कुछ कम डेड्बटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। पुरुषवेद, समचतुरहासंस्थान, दो विहायोगित, सुभग, दो स्वर, आदेय और उच्चगोत्रकी दो वृद्धि और दो हानिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवेंभागप्रमाण और कुछ कम छहबटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंका भन्न स्त्रीवेदके समान है। नपुंसकवेद, विर्येख्यगति, एकेन्द्रिय जाति, हुण्डसंस्थान, तिर्यञ्जगत्यानुपूर्वी, परघात, उच्छवास, स्थावर, सृहम, पर्याप्त, अपर्याप्त, प्रत्येक, साधारण, दुर्भग, अनादेय और नीचगोत्रकी दो युद्धि, दो हानिके बन्धक जीघोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण श्रीर सब लोक ब्रेन्नका स्पर्शन किया है। अवक्तज्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चैत्रके समान है। दीव पदोंका भन्न सातावेदनीय है समान है। नरकायु, देवायु और वैक्रियिक छहका भन्न ऋोधके समान है। तिर्पश्चायका भक्क चोत्रके समान है। मनुष्यायके दो पदोंके बन्यक जीवोंने लोक हे अनं इयातवें भाग प्रयाण अंदि सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। मनुष्यगतिद्विक, तीन अति, चार संस्थान, औदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, छह संहनन श्रीर श्रातपकी दो वृद्धि श्रीर दो हातिके बन्धक जीवीने लीकके अजंख्यतवें भाग प्रमाण क्षेत्रका स्वर्शन किया है 1 शेव भङ्ग सातावे-दनीयके सप्तान हुँ। उपात, बादर श्रीर यराःकीर्तिको दो वृद्धि श्रीर हो हानिके बन्धक जीवोंने बादरे तेरह० । पंचंदि०—तस० दोनड्डि-हाणी० लो० असंखेर्जेज० बारहचोर्द० । ओरालि० दोबड्डि-हाणि०सब्बेसि अणंतजीवाणं असंखेर्जेजभागबड्डि-हाणि-अवर्डि०-अवत्त० सब्बेली० । ओरालियसरीर० अवत्तक्वं खेर्ते० ।

९३६, पंचिंदियतिरिक्ख०३ ध्रुविमाणं तिण्णिवङ्गि-हाणि-अवद्वि० लोग० असंखे० सन्वलो० । थोणगिद्धि०३-मिच्छ०-अहुक०-णवुंसग०-तिरिक्खग०-एइंदि०-ओरालि०-हुंड०-तिरिक्खाणु०-परघा०- उस्सा०-थावर-सुहुम-पञ्जत्तापञ्जत्त-पत्ते०-साधार० दुभग०-अणार्दे०-अजस० णीचा० तिण्णिवड्डि-हाणि-अवद्वि० लोग० असंखे० सच्वलो० । अवत्त० खेर्त्त०। णवरि मिच्छ०-अजस० अवत्त० सत्तर्चोद्द०। इत्थिवे० अवत्त० खेर्त्त०। सेसं दिवड्डचौँइस० । सादादिदस० सञ्चपदा लोगस्स असंखे० सञ्चलो० । पुरिसवे०-णिरय-देवगदि-समचदु०-दोआणु० दोविहा०-सुभग-दोसर-आर्दे०-उच्चा० अवत्त० खेत्त० । सेस-पदा छचोह् ० । चदुआयु० खेत्तं० । मणुसगदि-तिष्णिजादि-चदुसंठा०-ओराल्वि०अंगो०-छम्संघ०-आदाव० सर्व्वपदा खेँत्त० । पंचिंदि०-वेउव्विय० बेउव्वियअंगो०-तस० अवत्त० खेंत्र । सेसपदा बारहचोई ० । उज्जो ०-जस० सब्बपदा सत्तचोंई ० । बादर० अवत्त० कुछ कम सातबटे चौदह राजू चैत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि बादर प्रकृतिकां श्रपेक्षा कुत्र कम तेरहबटे चौदह राजू सेत्रका स्पर्शन किया है। पख्रेन्ट्रियजाति श्रौर त्रसकी दो बृद्धि ऋौर दो हानियोंके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग ऋौर बारहबटे चौदह राजुतेत्रका स्पर्शन किया है। स्रौदारिक शरीरकी दो वृद्धि स्रौर दो हानि तथा सब स्ननन्त जीवोंके स्रसंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भाग हानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके दन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। श्रौदारिकशारीरके श्रवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है।

१३६. पद्मेन्द्रिय तिर्येद्धत्रिकमें ध्रवबन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यानवें भाग प्रमाण और सबलोक चेत्रका स्पर्शन किया हैं। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व, त्राठ कषाय, नपुंसक वेद, तिर्यक्रगति, एकेन्द्रियजाति, स्रौदारिक शरीर, हुण्डसंस्थान, तिर्यञ्जगत्यानुपूर्वी, परधात, उच्छुास, स्थावर, सूचम, पर्याप्त, अपर्याप्त, प्रत्येक, साधारण, दुर्भग, अनादेय, अयशःकीर्ति और नीचगोत्रकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित-पदके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण श्रीर सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। श्रवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। इतनी विशेषता है कि मिध्यात्व ऋौर अयशःकीर्तिके अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम सातवटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है । स्त्रीवेदके अवक्तज्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है । शेप स्पर्शन कुछ कम डेढ़ बटे चौद्ह राजु है। साता आदि दस प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग-प्रमाण और सब लोक त्रेत्रका स्पर्शन किया है। पुरुषवेद, नरकगति, देवगति, समचतुरस्रसंस्थान, दो आनुपूर्वी, दो विहायोगित, सुभग, दो स्वर, आदेय और उच्चगोत्रके अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन त्रेत्रके समान है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन कुछ कम छहबटे चौदह राजू है। चार ऋायुर्ओका भङ्ग चेत्रके समान है । मनुष्यगति, तीन जाति, चार संस्थान, ऋौदारिकआङ्गोपाङ्ग, छह संहनन और त्रातपके सब पदोंके बन्धक जीयोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। पञ्चेन्द्रियजाति, वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिकआङ्गोपाङ्ग श्रौर त्रसके श्रवक्तव्यपद्के बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। शेष पदोंके बन्धक जीबोंने कुछ कम बारहबटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। उद्योत और यशःकीर्तिके सब पर्नेके बन्धक जीवोंने दुख कम सातबटे चीवह राजू देत्रका स्पर्शन

## खेंत्रमंगो । सेसपदा तेरहचोंह० ।

६३७. पंचिदियतिरिक्खअपन्जत्तमेसु धुविमाणं तिण्णिवड्ढि-हाणि-अबद्धि० लोग० असंखेँ० सन्वलो० । सादादिदस० सन्वपदा लोग० असंखेँ० सन्वलो० । णवुंस० तिरिक्खग० एइंदि०-हुंडसं० तिरिक्खाणु० परघादुस्सा० श्वावर सुहुम पन्जत्त अपन्जत्त पत्तेय० साधार० दूमग-अणादेँ० णीचा० अवत्त० खेँत्त० । सेसपदा लोग० असंखेँ० सन्वलो० । उन्जो० जसिग० सन्वपदा सत्तचोँ६० । बादर० अवत्त० खेँत्त० । सेसपदा सत्तचोँ६० । अज० अवत्त० सत्तचोँ० । सेसं णवुंसगभंगो । सेसाणं सन्वपदा खेर्त्त० । एवं मणुसअपन्ज० सन्वविगलिदि ० पविदिय तसअपन्ज० बादरपुढवि० आउ० तेउ० वाउकाइयपन्जत्त नादरवणप्यदिपत्तेयपन्जत्त ति ।

६३८. मणुस०३ धुवियाणं असंस्नेज्जगुणबड्डि-हाणि-अवत्त० स्नेत्त०। सेसाणं च पंचिदियतिरिक्त्वभंगो। तसपगदीणं स्नेत्त०।

६३६. देवेसु धुविगाणं तिष्णिवड्डि-हाणि-श्रवट्टि० सादादिवारस०-मिच्छ०-उज्जोव० सब्बपदा अट्ट-णवचोँइसभागा वा देखणा। इत्थिवे०-पुरिसवे०-तिरिक्खायु०-मणुसायु०-

किया है। वादर प्रकृतिके व्यवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन त्तेत्रके समान है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम तेरहवटे चौदह राज़ू त्तेत्रका स्पर्शन किया है।

£३७. पञ्चेन्द्रिय तिर्यक्ष अपर्याप्तकों में ध्रुववन्धवाली प्रकृतियों की तीन वृद्धि, तीन हानि श्रोर श्रविस्थितपदके बन्धक जीवोंने लोकके श्रमंख्यातयें भागप्रमाण और सबलोक चेत्रका स्पर्शन किया है। साता आदि दस प्रकृतियों के सब पदों के बन्धक जीवोंने लोकके श्रमंख्यातवें भागप्रमाण और सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। नपुंसकवेद, तिर्यक्षणित, एकेन्द्रियजाति, हुण्डसंस्थान, तिर्यक्षणित्यानुपूर्वी, परधात, उच्छुवास, स्थावर, सूच्म, पर्याप्त, श्रपर्याप्त, प्रत्येक, साधारण, दुर्भण, अनादेय और नीचगोत्रके श्रवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंने लोकके श्रमंख्यातवें भागप्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। उद्योत, और यशक्तितिके सब पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम सातबटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। शोष पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम सातबटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। शोष पदोंके श्रवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम सातबटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। शोष पदोंका भक्त नपुंसकवेदके समान है। शोष प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम सातबटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। शोष पदोंका भक्त नपुंसकवेदके समान है। शोष प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। इसी प्रकार मनुष्य अपर्याप्त, सब विकलेन्द्रिय, पञ्चेन्द्रिय श्रपर्याप्त, त्रस अपर्याप्त, वादरप्रियविकायिक पर्याप्त, बादर वास्पर्तिक पर्याप्त, वादर वास्पर्तिक प्रयोप्त, प्रत्येक शरीर पर्याप्त जीवोंके जानना चाहिये।

€३८. मनुष्यत्रिकमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी ऋसंख्यात गुणवृद्धि, असंख्यात गुणहानि और अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका भङ्ग चेत्रके समान है। शेष पदोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यक्चोंके समान है। त्रस प्रकृतियोंका भङ्ग चेत्रके समान है।

E३E. देवोंमें प्रुवयन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि स्रौर अवस्थितपदके बन्धक जीवोंने तथा साता स्रादि बारह, मिध्यात्व स्रौर उद्योतके सब पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम स्राठ बटे चौवह राजू और कुछ कम नौबटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। स्रोवेद, पुरुषवेद, मणुसगदि-पंचिदिय०-पंचसंठा०-ओरालि०अंगो०-छम्संघ०-मणुसाणु०-'आदाव०-दोवि-हा०-तस-सुभग-दोसर-आदेँज्ज०-तित्थय०-उचा० सव्वपदा अट्टचौँ६०। सेसपगदीणं अवत्त० अट्टचौँ०। सेसपदा अट्ट-णवचौँ६०। एवं सव्वदेवाणं अप्पप्पणो फोसणं णेदव्वं।

६४०, एइंदिय-वणफिद-णियोद पुढ्वीकाइय-आउ०-तेउ०-वाउ०-सन्वसुहुमाणं मणुसायु० तिरिक्खोघं। सेसाणं सन्वपगदीणं सन्वलो०। बादरएइंदियपज्जत्त-अपज्ज० धुतिगाणं सादादीण दस० च सन्वपदा सन्वलो०। इत्यिवे०-पुरिस०-चदुजादि-पंचसंठा०-ओरालि०अंगो०-छस्संघ०-आदाव-दोविहा०-तस सुभग दोसर-आदेँज्ज० ,सन्वपदा लोगस्स संखेँज्जदिभागो। णवुंस०-एइंदि०-हुंडसं० परघा०-उस्सा०-थावर-सुहुम-पज्जत्त अपज्ज०-पत्तेप०-साधार०-दूभग० अणादेँ० ऍक्वविह्नि-हाणि-अविद्वि० सन्वलो०। अवत्त० लो० असंखेँ०। दोआयु० मणुसगदिदुग-उचा० सन्वपदा खेँच०। तिरिक्खगदितिगं अवत्त० लोग० असंखेँ०। सेसपदा असादभंगो। बादर-उज्जो०-जसिग० सन्वपदा सत्त्वोई०। एवं णविर बादर-अवत्त० खेँच०। अजस० अवत० सत्त्वोई०। सेसपदा सन्वलो०। एवं

तिर्यक्षायु, मनुष्यायु, मनुष्यगित, पञ्चेन्द्रियजाति, पाँच संस्थान, खाँदारिक आङ्गोपाङ्ग, छह संहतन, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, खातप, दो विहायोगिति, बस, सुभग, दो स्वर, आदेय, तीर्थकर और उच्चगोन्नके सब परोंके बन्धक जीवींने छुछ कम खाठबटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। शेष प्रकृतियोंके खबक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने छुछ कम आठबटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। शेप पदोंके बन्धक जीवोंने छुछ कम आठबटे चौदह राजू और छुछ कम नीवटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार सब देवोंके खपना-खपना स्पर्शन जानना चाहिये।

९४०. एकेन्द्रिय, वनस्पतिकायिक, निगोद, पृथिवीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, बायुका-यिक और सब सूदम जीवोंमें मनुष्यायुका भङ्ग सामान्य तिर्यक्रोंके समानहै । शेव सब प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। बादर एकेन्द्रिय पर्याप्त और बादर एकेन्द्रिय अपर्याप्त जीवोंमें धववन्ववाली प्रकृतियाँ और साता ऋादिदस प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। स्नीवेद, पुरुषवेद, चार जाति, पाँच संस्थान, श्रौदारिक आङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, आतप, दो विहायोगित. त्रस, सुभग, दो स्वर, श्रीर त्रादेयके सब पदोंके बन्धक जीवोंने लोकके संख्यातवें भागप्रमाण चेत्रका स्परीन किया है। नपुंसकवेद, एकेन्द्रियजाति, हुण्ड-संस्थान, परघात, उच्छ्वास, स्थावर, सूद्रम, पर्याप्त, अपर्याप्त, प्रत्येक, साधारण, दुर्भग और त्रानादेयकी एक वृद्धि, एक हानि और श्रावस्थितपदके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है । ऋवक्तव्यपद्के बन्धक जीबोंने लोकके ऋसंख्यातवें भागप्रमाण त्तेत्रका स्पर्शन किया है । दो आयु मनुष्यगतिद्विक श्रौर उच्चगोत्रके सब पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। तिर्थेञ्चगतित्रिकके स्रवक्तव्यपद्के बन्धक जीधोंने लोकके असंस्थातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंका भङ्ग असातावेदनीयके समान है। बादर, उद्योत ऋौर यशः कीर्तिक सब पदोंके बन्धक जीवोंने इन्छ कम सातबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विरोपता है कि बादरके श्रवक्तव्यपदके वन्यक जीवोंका स्पर्शन बेत्रके समान है। अयशःकीर्तिके श्रवक्तन्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम सातवटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंने सब लोक च्रेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार बादर-

१ मूळप्रती मणुसायु० आदाव-इति पाठः ।

बादरवाउका० बादरवाउकाइयअपज्जत्त । बादरपुढवी०-श्राउका०-तेउका० तेसि बादर-अपज्जत्त बादरवणप्फदिपत्तेय०अपज्जत्त वादरएइंदियभंगो । णवरि जम्हि लोगस्स संखेजनिद्भागो तम्हि लोगस्स असंखेजिदिभागो कादव्यो ।

९४१. पंचिदिय तस०२ पंचणा० चदुदंस० चदुसंज० पंचंतराइगाणं तिण्णिबड्डि हाणि अट्टचोद्द० सन्वलो० । असंखेज गुणबड्डि हाणि अवत्त० खेल भंगो । थीणिगद्धि० ३ मिच्छ० अणंताणुबंधि०४ - णवुंस० - तिरिक्खग० - ग्रहंदि० हुंडसं० तिरिक्खाणु० - थावर - दूभग अणादें० णीचा० तिण्णिबड्डि हाणि - अबद्धि० अट्टचोद्द० सन्वलो० । अवत्त० अट्टचोद्द० । णविर मिच्छ० अवत्त० अट्टचारहचोद्दस० । णिद्दा - पचला - भय दुगुं० तेजइगा दिणव - परघादुस्सा० पज्जत पत्ते० अवत्त० खेल भंगो । तिण्णिबड्डि हाणि अबद्धि० अट्टचोद्द० सन्वलो० । सादावे० तिण्णिबड्डि हाणि - अबद्धि० - अवत्त० अट्टचोद्द० सन्वलो० । सादावे० तिण्णिबड्डि हाणि - अबद्धि० - अवत्त० अट्टचोद्द० सन्वलो० । असंखे ज्जगुणबड्डि हाणी खेल्ल० । असादादिदस० तिण्णिबड्डि - हाणि - अबद्धि० - अवत्त० अट्टचोद्द० सन्वलो० । णविर अजसिग० अवत्त० अट्टचोद्द० । इत्थि० - पंचसंठा० - औराठि० अंगो० - णाणावरणभंगो । णविर अवत्त० छचोद्द० । इत्थि० - पंचसंठा० - औराठि० अंगो० -

वायुकायिक और वाद्रवायुकायिक अपर्याप्त जीवोंके जानना चाहिये। बादर पृथिवीकायिक, वाद्र जलकायिक और बादर अग्निकायिक तथा उनके वाद्र अपर्याप्त और बाद्रवनस्पतिकायिक प्रत्येक अपर्याप्त जीवोंका भक्त बाद्र एकेन्द्रियोंके समान है। इतनी विशेषता है कि जहाँ लोकका संख्यात-याँ भाग कहा है, वहाँ लोकका असंख्यातयाँ भाग कहना चाहिये।

९४१. पञ्चेद्रियद्विक और त्रसद्विक जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन श्रीर पाँच अन्तरायकी तीन वृद्धि श्रीर तीन हानि पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू श्रौर सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। असंख्यात गुणवृद्धि, असंख्यात गुणहानि और अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका भङ्ग चेत्रके समान है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धी चार, नपुंसकवेद तिर्यब्ज्यगति, एकेन्द्रियजाति, हुण्डसंस्थान, तिर्यख्रगत्यानुपूर्वी, स्थावर, दुर्भग, अनादेय श्रौर नीच गोत्रकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राजु और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि मिध्यात्वके ऋवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राज़ू और कुछ कम बारहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। निद्रा, प्रचला, भय, जुगुप्सा, तैजस शरीर त्यादि नौ, परवात, उच्छ्वास, पर्याप्त त्रीर प्रत्येकके अवक्तव्यपदके वन्धक जीवोंका मङ्ग चेत्रके समान है। तीन वृद्धि, तीन हानि श्रौर अवस्थितपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम अगठबटे चौदह राजू और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। साता-वेदनीयकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजु ऋौर सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है । ऋसंख्यात गुणवृद्धि ऋौर ऋसंख्यात गुणहानिके वन्यक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान हैं। असाताबेदनीय आदि दसकी तीन वृद्धि, तीन हानि, **ऋवस्थित और ऋक्कव्य पदके बन्धक जीवोंने** कुछ कम आठवटे चौदह राजु और सब लोक न्नेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि अयशःकीर्तिके अवक्तव्यं पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राज और कुछ कम तेरहबटे चौदह राज चेत्रका स्पर्शन किया है। अप्रत्याख्यानावरण चारके सेव पदोंका भक्त ज्ञानावरणके समान है। इतनी विशेषता

छस्संघ०-दोविहा० पंचिदि० तस-सुभग-दोसर-आदें तिण्णिविह हाणि अवहि० अहुबारह० । अवत्त० अहु-चोंद्द० । पुरिसे तिण्णिविह हाणि अवत्त० इत्थिमंगो । असंखेजजगुणविह हाणो० णाणावरणमंगो । णिरय-देवायुग-तिण्णिजादि आहारदुगं खेंत्त० ।
तिरिक्ख-मणुसायु० दोपदा अहुचोंद० । वेजविवयछ० तित्थय० ओघं । मणुसगदि मणुसाणु०-आदाव० सव्वपदा अहुचोंद० । उज्जो० सव्वपदा अहु-तेरह० । एवं बादर० ।
णविर अवत्त० खेंत्त० । सुहुम-अपज्जत्त-साधारण० तिण्णिविह हाणि अविह० लो०
असंखें० सव्वलो० । अवत्त० खेंत्त० । जसि० असंखेंजजगुणविह हाणी० खेंत्त० ।
सेसपदा अहु-तेरहचों० । [उचा० असंखेंजजगुणविह हाणी खेत्त० । सेसपदा अहुचों० ।] एवं
पंचिदियमंगो पंचमण० पंचविवि० चक्खुदं०-सण्णि ति ।

६४२. ओरालियकायजोगीसु पंचणा०-चदुदंस०-चदुमंज० पंचंत० असंखेँजजभागवङ्कि-हाणि-अवद्वि० सञ्चलो० । दोवड्डि–हा० लोगस्स असंखेँ० सञ्चलो०। असंखेँजज्ञगुणवड्डि-

है कि ऋयक्तब्यपदके वस्थक जीवोंने कुछ कम छह वटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। स्रीवेद, पाँच संस्थान, श्रौदारिक श्रोगोपाङ्ग, छह संहनन, दो विहायोगित, पञ्चेन्द्रियजाति, त्रस् मुभग, दो स्वर ऋौर आदेयकी तीन वृद्धि, तीन हानि ऋौर ऋवस्थितपदके बन्धक जीवोंने कुळ कम आठवटे चीदह राज् और कुछ कम बारह बटे चौदह राजू चैत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके वन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राजु अन्नका स्पर्शन किया है। पुरुषवेदकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका भङ्ग स्त्रीवेदके समान है। असंख्यात गुणवृद्धि और असंख्यात गुणहानिका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। नरकायु, देवायु, तीन जाति और ब्राहारक-द्विकका भङ्ग क्षेत्रके समान है। तिर्यञ्चायु त्र्यौर मनुष्यायुके दो पदोंके वन्धक जीवोंने कुछ कम अ।ठवटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। वैक्रियिक छह और तीर्थंकर प्रकृतिका भङ्ग स्रोघके समान है। मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और आतपके सब पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया हैं। उद्योतके सब पर्दोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राजू और कुछ कम तेरह बटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार बादर प्रकृतिकी अपेचा स्पर्शन जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्यपद्के वन्धक जीवोंका स्पर्शन श्रेत्रके समान है। सुद्दम, अपर्याप्त ऋौर साधारणकी तीन वृद्धि, तीन हानि ऋौर अवस्थित पदके बन्धक जीवाने लोकके अपसंख्यातवें भागप्रभाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंक। स्पर्शन क्षेत्रके समान है। यशःकीर्तिकी असंख्यात गुणदृद्धि और असंख्यात गुणहानिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान हैं। शेष पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे वीरह राजु और छुछ कम तेरहवटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। उच्चगोत्रकी असंस्यात गुणवृद्धि और असंस्यात गुणहानिका भङ्ग क्षेत्रके समान है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंने दुळ कम आठवटे चोदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार पञ्चेन्द्रियोंके समान पाँच मनोन योगी, पाँच वचनयोगी, चलुःदेशीनी और संज्ञी जीवोंके जानना चाहिये।

6४२. औदारिककाययोगी जीवोंमें पाँच ज्ञानाघरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच अन्तरायकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यात भागहानि और अवस्थित पदके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। दो वृद्धि और दो हानियोंके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्या-

हाणि-अवत्त वेर्त्त । पंचदंसणा०-बारसक०-भय-दुगुं०-ओरालि०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०-उप० णिमि० अवत्त खेत्तमंगो । सेसपदा० णाणावरणमंगो । मिच्छ० अवत्त सत्त्वोह् । सेसपदा० णाणावरणमंगो । सादावे० असंखेजजभागवड्डि०-हाणि०-अवद्धि०-अवत्त स्व्वलो० । सेसपदा० णाणावरणमंगो । असादादिएँकारस० सादमंगो । हित्यवे० दोवड्डि-हाणी दिवड्डचोह् ० । सेसाणं णाणावरणमंगो । पुरिस० दोवड्डि-हाणी छचोह् ० । सेसपदा सादमंगो । णवुंस०-तिरिक्खग०-एइंदि०-हुंडसं०-तिरिक्खाणु०-परघादुस्सा०-थावर-सहुम-पज्जत्त-अपजत्त-पत्तेय०-साधार०-दूमग-अणादेँ०-णीचा० सव्वपदा असाद-भंगो । चादुआयु०-वेउव्वियछ०-मणुसगदिदुग-चदुजादि-पंचसंठा०-ओरालि०अंगो०-छस्संघ०-आदाउज्जो० दोविहा०-तस-वादर-सुभग-दोतर-आदे०-उचा० तिरिक्खोघं । आहारदुग० तित्थय० खेत्त ० ।

हँ४३. ओरालियमिस्से धुविगाणं दोबहि-हा० लोग० असंस्नेंज्ज० सञ्बलोगो वा। सेसपदा सन्बलोगो । णवरि मिच्छ० अवत्त० स्नेत्तमंगो । देवगदिपंचगस्स तिण्णिबहि-हाणि-अबद्धि० स्नेत्त० । सादादिएँकारसपगदीणं असंस्नेंज्जभागबहि-हाणि-अबद्धि०-अबत्त०

त्वें भागप्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यात गुणहानि श्रीर श्रवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। पाँच दर्शनावरण, बारह कषाय, भय, जुगुरसा श्रौद।रिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुरुक, श्रागुरुलघु, उपघात श्रौर निर्माणके अवक्तव्यके बन्धक जीवोंका भङ्ग क्षेत्रके समान है। रोव पदोंके बन्धक जीवोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। निध्यात्वके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने छुछ कम सातबटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। दोव पदोंके बन्धक जीवोंका भन्न ज्ञानावरणके समान है। साता-वेदनीयकी ऋसंख्यातभागवृद्धि, असंख्यात भागहानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंके बन्यक जीवोंका भक्त ज्ञानावरणके समान है। असाता आदि ग्यारह प्रकृतियोंका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। स्त्रीवेदकी दो वृद्धि और दो हानियोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम डेढ्वटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। रोष पदोंके बन्धक जीवोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। पुरुपवेदकी दो वृद्धि और दो हानियोंके बन्धक जीवोंने छुछ कम छह्यटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। नपुंसकवेद, तिर्यद्भगित, एकेन्द्रिय जाति, हुण्डसंस्थान, तिर्यद्भगत्यानु-पूर्वी, परघात, उच्छ्वास, स्थावर, सूच्म, पर्याप्त, अपर्याप्त, प्रस्येक, साधारण, दुर्भग, अनादेय और नीचगोत्रके सब पदोंके बन्धक जीवोंका भङ्ग आसातावेदनीयके समान है। चार श्रायु, वैक्रि-यिक छह, मनुष्यगतिद्विक, चार जाति, पाँच संस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, श्रातप, उद्योत, दो विहायोगित, त्रस, बादर, सुभग, दो स्वर, आदेय और उच्चगोत्रके सब पदोंका भङ्ग सामान्य तिर्यक्रोंके समान है। आहारकद्विक और तीर्थद्वर प्रकृतिके सब पदोंके वन्धक जीवोंका भङ्ग क्षेत्रके समान है ।

हिश्वे. औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली और श्रौदारिक शरीरकी दो वृद्धि और दो हानिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक नेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंने सब लोक नेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि भिध्यात्वके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका भङ्ग क्षेत्रके समान है। देवगति पद्धककी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीवोंका भङ्ग क्षेत्रके समान है। साता आदि ग्यारह

सन्वलो । दोबङ्कि-हाणी लोगस्स असंखें ज्जिदिभागो सन्वलो । णवुंस ०-तिरिक्खग ०- एइंदि ०- हुंडसं ०-तिरिक्खाणु ०-पर ०- उस्सा ०-थावर-सुहुम-पज्जित्त-अपज्जित-पत्ते य ०-साधार ०- दूभग ०-अणादें ०-णीचा ० ऍक बड्ढि –हाणि-अबद्धि ० सन्वलो ० । दोबङ्कि-हाणी लो ० असंखें ० सन्वलो ० । अवत्त ० सेंत्र ० । दोआयु ० तिरिक्खो चं । इत्थि ० — पुरिस ० — मणुसगदिदुग — चदुजादि-पंचसंठा ०-ओरालि ० अंगो ० - छस्संघ ० - आदाव-दोविहा ० — तस-सुभग-दोसर-आदें जिच्चा ० दोबङ्कि-हाणि ० लोग ० असंखें ० । सेसं सन्वलो ० । उज्जो ० - जसिग ० - बादर ० दोबङ्कि-हाणि ० सत्तचों ६० । सेसाणं सन्वलो ० ।

९४४. वेउव्वियकायजोगीसु धुविगाणं तिण्णिवड्डि-हाणि-अवड्डि० अट्ड-तेरह०। सादा-दिबारस०-उज्जोव० सव्वपदा अट्ड-तेरहचो०। थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-ऋणंताणुबंधि०४-णबुंस०-तिरिक्खग०-हुंडसं०-तिरिक्खाणु०-दूभग-अणादे०-णीचा० तिण्णिवड्डि-हाणि-अवद्धि० अट्ड-तेरह०। अवत्त० अट्डचोह्०। णवरि मिच्छ० अवत्त० अट्ड-बारह०। इत्थि०-

प्रकृतियोंकी असंख्यातभाग वृद्धि, असंख्यातं भागहानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके वन्धक जीवोंने सब लोक खेंत्रका स्पर्शन किया है। दो वृद्धि और दो हानिके वन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। नपुंसकवेद, तिर्यक्चगति, एकेन्द्रिय जाति, हुण्डसंस्थान, तिर्यक्चगत्यानुपूर्वी, परघात, उख्वास, स्थावर, सूद्ध्म, पर्याप्त, अपर्याप्त, प्रत्येक, साधारण, दुर्भग, अनादेय और नीचगोत्रकी एक वृद्धि, एक हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। दो वृद्धि और दो हानिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य पदके वन्धक जीवोंने भङ्ग क्षेत्रके समान है। दो आयुका भङ्ग सामान्य तिर्यक्चोंके समान है। स्रीवेद, पुरुपवेद, मनुष्यगतिद्धिक, चार जाति, पाँच संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, आतप, दो विहायोगति, त्रस, सुभग, दो स्वर, आदेय और उच्चगोत्रकी दो वृद्धि और दो हानिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेप पदोंके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। उद्योत, यशःकीर्ति और वादरकी दो वृद्धि और दो हानिके बन्धक जीवोंने कुछ कम सातवदे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। शेप पदोंके वन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

हिश्श. वैक्रियिककाययोगी जीवोंमें ध्रुव बन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम जाठ वटे चौदह राजू और कुछ कम तेरह बटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। साता आदि बारह और उद्योतके सब पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राजू और कुछ कम तेरहवटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्यानपृद्धि तीन, मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धी चार, नपुंसकबद, तिर्यञ्चगति, हुण्डसंस्थान, तिर्यञ्चगत्यानपुर्द्धी, दुर्भग, अनादेय और नीचगोत्रकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राजू और कुछ कम तरहबटे चौदह राजू खेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राजू खेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्वके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्वके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन वीदह राजू और कुछ कम आठवटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन वीदह राजू क्षेत्रका है। इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्वके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन वीदह राजू क्षेत्रका है। क्षिय है। क्षिय

पुरिस०-पंचिदि०-पंचसंठा०-ओरालि०अंगो०-छस्संघ०-दोविहा०-तस०-सुभग-दोसर-आर्दें अ० तिष्णिवह्नि हाणि-अवद्वि० अट्ट-बारह० । अवत्त० अट्टचों० । दोआयु० दोपदा अट्टचोंह० । मणुसग०-मणुसाणु०-आदा०-उच्चागो० सन्वपदा अट्टचोंह० । एइंदि०-थावर-अवत्त० अट्टचोंह० । सेसाणं पदा अट्ट-णवचों० । तित्थय० अवत्त० खेंत्त० । सेसपदा अट्टचोंह० ।

९४५, वेउन्विमि०-आहार०-आहारमि०-कम्मइ०-अवगद्वे०-मणपञ्जव०-संजद-सामाइ०-छेदो०-परिहार०-सुहुमसंप० खेँच०। णवरि कम्मइ० मिच्छच० अवच० ऍकारइ०।

६४६. इत्थिवे० पंचणा-चदुदंसणा०-चदुसंज०-पंचंत० पंचिदियभंगो। णविर अवत्त० णित्थ। थीणि गिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुवंधि०४-णवुंस०-तिरिक्खिग०-एइंदि०-हुंडसं०-तिरिक्खाणु०-थावर-दूमग-अणादेँ०-णीचा० अवत्त० अट्टचोँ६०। सेसपदा अट्टचोँ६० सन्वलो०। णविर मिच्छत्त० अवत्त० अट्ट-णवचोँ०। णिद्दा-पचला-अट्टकसाय-भय०-

पाँच संस्थान, ख्रौदारिक आङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, दो विद्दायोगित, त्रस, सुमग, दो स्वरो और ख्रादेयकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीवोंने छुछ कम आठवटे चौदह राजू श्रोत छुछ कम बारहबटे चौदह राजू श्रेत्रका स्पर्शन किया है। बा आयुओं के दो पदोंके वन्धक जीवोंने छुछ कम आठवटे चौदह राजू लेत्रका स्पर्शन किया है। वो आयुओं के दो पदोंके वन्धक जीवोंने छुछ कम आठवटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, श्रातप और उच्चगोत्रके सत्र पदोंके वन्धक जीवोंने छुछ कम आठवटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। एकेन्द्रिय जाति और स्थायरके अवक्तव्य पदके वन्धक जीवोंने छुछ कम आठवटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। एकेन्द्रिय जाति और स्थायरके अवक्तव्य पदके वन्धक जीवोंने छुछ कम आठवटे चौदह राजु और छुछ कम नौ बटे चौदह राजू बोत्रका स्पर्शन किया है। तीर्थङ्कर प्रकृतिके अवक्तव्य पदके वन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। शेप पदोंके बन्धक जीवोंने छुछ कम आठवटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

६४५. वैकियिकभिश्रकाययोगी, आहारककाययोगी, आहारकमिश्रकाययोगी, कार्मणकाय-योगी, अपगतवेदी, मनःपर्ययहानी, संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापनासंयत, परिहारविशुद्धि-संयत और सूद्मसाम्परायसंयत जीवोंका भङ्ग क्षेत्रके समान है। इतनी विशेषता है कि कार्मण-काययोगी जीवोंमें मिथ्यात्वके अवक्तत्र्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम ग्यारहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

88६. स्त्रीवेदी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संख्यलन ख्रौर पाँच अन्तरायका भन्न पञ्चेन्द्रियोंके समान है। इतनी विशेषता है कि यहाँ इनका अवक्तव्य पद नहीं है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिश्यात्व, अनन्तानुवन्धी चार, नपुंसकवेद, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, हुण्ड संस्थान, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, स्थावर, दुर्भग, अनादेय और नीचगोत्रके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राजू चोत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंके वन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राजू और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि मिश्यात्वके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राजू और एछ कम नौबटे चौदह राजू स्त्रीत किया है। निद्रा, प्रचला, आठ कपाय, भय, जुगुत्सा, औदारिक शरीर, तैजस-

दुगुं०-ओरालि०-तेजा०-क०-वणा०४-अगु०४-पज्जत्त-पत्तय०-णिमि० अवत्त० खेत्त० । सेसपदा णाणावरणभंगो । णवरि ओरालिय० अवत्त० दिवहुचोह्० । सादावे० असंखे-ज्जगुणवहु-हा० खेत्त० । सेसं अद्वचों० सव्वलो० । असादादिणव० तिण्णिवहु-हाणि-अवद्वि०-अवत्त० अद्वचोंह० सव्वलो० । इत्थि०-पुरिस०-मणुसगदि-पंचसंठा०-ओरालि०-अंगो०-छस्संघ०-मणुसाणु०-आदाव-पसत्थवि०-सुभग-सुस्सर-आदे०-उच्चागो० सव्वपदा अद्वचों० । [णवरि उच्चा असंखे०गुणवहु-हाणि०खेत्त० ।]दोआयुग०-तिण्णिजादि-आहारदूग-तित्थय० खेत्त० । दोआयु० दोपदा अद्वचों० । वेउव्वियछ० ओषं । पंचिदि०-तस-अप्यस्थि०-दुस्सर० तसभंगो । उज्जोव० सव्वपदा अद्व-णवचों० । बादर० तिण्णिवहु-हाणि-अवद्वि० अद्व-तेरह० । अवत्त० खेत्त० । सुदुम-अपज्ज०-साधार० अवत्त० खेत्तं०। सेसपदा लो० असंखे० [सव्वलोग० ।] जसगि० उज्जोवभंगो । णवरि असंखेज्जगुणवहु-हाणी सादभंगो । अजस० अवत्त० अट्व-णवचों० । सेसपदा सादभंगो । [एवं पुरिस० ।]

शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, पर्याप्त, प्रत्येक और निर्माणके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। शेप पदोंके बन्धक जीवोंका भङ्ग झानावरणके समान है। इतनी विशेषता है कि ऋौदारिकशरीरके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम डेढ़-बटे चौदह राजु चोत्रका स्पर्शन किया है। सातावेदनीयकी असंख्यातगुण वृद्धि और असंख्यात-गुणहानिके बन्धक जीवोंक। भङ्ग क्षेत्रिके समान है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजु और सब लोक श्रोत्रका स्पर्शन किया है। असाता आदि नौ प्रश्रुतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्य पद्के बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजु और सब लोक चोत्रका स्पर्शन किया है। स्त्रीवेद, पुरुपवेद, मनुष्यगति, पाँच संस्थान, ख्रौदारिक ख्राङ्गो-पाङ्ग, छह संहनन, मनुष्यगत्यानुपूर्वीं, त्रातप, प्रशस्तविद्दायोगित, सुभग, सुस्वर, त्रादेय और उच्चगोत्रके सब पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि उच्चगोत्रकी असंख्यात्गुणवृद्धि और असंख्यात्गुणहानिका स्पर्शन द्योत्रके समान है। दो ऋाय, तीन जाति, स्त्राहारकद्विक और तीर्थद्वर प्रकृतिका भङ्ग क्षेत्रके समान है। दो ऋायुयोंके दो पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम ऋाठ बटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। वैक्रियिक छहका भङ्ग अग्रेवके समान है। पञ्चेन्द्रिय जाति, त्रस, अप्रशस्त विहायो-गति श्रीर दुस्वरका भङ्ग त्रस जीवोंके समान है। उद्योतके सव पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठबटे चौरह राजु और कुछ कम नौबटे चौरह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। बादर प्रकृतिकी तीन वृद्धि, तीन हानि और श्रवस्थित पदके वन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राजु और कुछ कम तेरहबटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंको भन्न चोत्रके समान है। सूदम, अपर्याप्त और साधारणके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चीत्रके समान है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। यशःकीतिका भङ्ग उद्योतके समान है। इतनी विशेषता है कि असंख्यातगुण-वृद्धि ऋोर असंख्यातगुणहानिका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। अयशाकीर्तिके अवकव्य पदके बन्धक जीवांने कुछ कम आठवंट चीदह राजु और छुछ कम नौबंटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। इसी प्रकार पुरुषवेदी जीवोंके जानना चाहिये । इतनी विशेषता है कि अप्रत्याख्यानाघरण चार स्रौर स्रौदारिक शरीरके अवक्तव्य पदके बन्धक

णवरि अपचक्खाणा०४-ओरालि० अवत्त० छचोई०। तित्थय० ओघं।

६४७. णवुंस० पंचणा०-चदुदंस०-चदुसंज०-पंचंत० असंसें अभागविद्व-हाणि अविद्वि० सक्तलो० । दोविद्व-हाणी लो० असंसें ए सन्वलो० । असंसें जगुणविद्व-हाणी सें त० । अवत्त० णित्य । पंचदंस०-मिच्छ०-बारसक०-भय०-दुर्गु०-ओरािछ०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०-उप०-णिमि० अवत्त० सें त० । सेसपदा णाणावरणभंगो । णविर मिच्छ० अवत्त० बारहचो० । ओरािछ० अवत्त० छचोई० । सादावे० अवत्त० सन्वलो० । सेसपदा णाणावरणभंगो । असादािददस० ऍक्तविद्व-हाणि-अविद्वि०-अवत्त० सन्वलो० । वेविद्व-हाणि लोगस्स असंखे० सन्वलोगो वा । णवुंस०-तिरिक्खग०-एइंदि०-हुंडसं०-तिरिक्खाणु०-पर०-उस्सा०-थावर-सुहुम-पज्जतापज्जत्त-पत्तेय०-साधार०-दुभग-अणादे० णीचा० दोविद्व-हाणी लोग० असं० सन्वलो० । सेसपदा सन्वलोगो । इत्थिबे० दोविद्व-हाणि० लोग० असं० सन्वलो० । सेसपदा सन्वलोगो । इत्थिबे० दोविद्व-हाणि० लोग० असं० सन्वलो० । सेसपदा सन्वलोगो । चुरेस० सम्बद्धानिक्ल कम इहवटे चोदह राजु के त्रका स्वर्शन किया है । त्रिक्टरका मङ्ग आधिक समान है ।

हेप्र७. नपुंसकवेदी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संक्वलन ऋौर पाँच अन्तरायकी असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि और अवस्थितपद्के बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। दो बृद्धि और दो हानिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। असंख्यात गुणवृद्धि और असंख्यात गुणहानिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चोत्रके समान है। अवक्तव्यपद नहीं है। पाँच दर्शनावरण, मिथ्यात्व, बारह कषाय, भय, जुगुप्सा, त्रौकारिकशरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, ऋगुरुलघु, उपचात श्रीर निर्माणके श्रवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। शेष पदोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। इतनी विशेषता है कि भिथ्यात्वके अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम बारहबटे चौदह राज़ू चेत्रका स्पर्शन किया है। ख्रौदारिकशरीरके अवक्तव्यपदके बन्धक जीबोंने कुछ कम छहबटे चौरह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सातावेदनीयके अवक्तव्यपद्के वन्धक जीवोंने सब लोक चोत्रका स्परोन किया है ! शेप पदोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है । असाता स्नादि दसकी एक बृद्धि, एक हानि, अवस्थित और अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया हैं । दो वृद्धि और दो हानिके बन्धक जीवोंने लोकके ऋसंख्यातवें भागप्रमाण ऋौर सव लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया हैं । नपुंसकवेद, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रियजाति, हुण्डसंस्थान, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, परघात उच्छ्वास, स्थावर, सूद्रम, पर्याप्त, अपर्याप्त, प्रत्येक, साधारण, दुर्मग, अनादेय और नीचगोत्रकी दो बुद्धि और दो हानिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। स्नीवेद की दो वृद्धि श्रौर दो हानिके वन्धक जीवोंने लोकके ऋसंख्यातवें भाग श्रमाण श्रौर सब लोक क्रेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। चार संस्थान, स्रौदारिक स्राङ्गोपाङ्ग स्रौर छह संहननकी दो वृद्धि स्रौर दो हानिके बन्धक जीवोंने लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण त्र्योर कुछ कम छहवटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंके वन्धक जीवोंने सब लोक चोत्रका स्पर्शन किया है। पुरुषवेद, समचतुरस्रसंस्थान, दो विहायोगति, सभग, दो स्वर और आदेयकी दो वृद्धि और दो हानिके बन्धक जीवोंने कुछ कम बारहवटे चौदह

सन्वलो० । चदुआयु०-वेउन्वियछ० मणुसगदि-तिण्णिजादि मणुसाणु० आदाव० - उञ्चा० तिरिक्लोघं । पंचिदिय-तस० दोवड्डि-हाणी लोग० असंखे० बारहचो० । सेसं सन्वलो० । आहारदुगं तित्थय० खेर्त्तभंगो । उज्जोव० दोवड्डि-हाणी तेरहचो० । सेसं सादभंगो । एवं जसगित्ति बादरणामं पि ।

६४८, कोधकसाइसु पंचणा०-चदुदंस०-चदुसंज०-पंचंत० ऍक्कविहु-हाणि-अविद्धि० सन्वलो० | दोविहु-हाणी अट्ठचोंद० सन्वलो० | असंखेंज्जगुणविद्ध-हाणी खेंत्त० | सेसं ओघं | माणे पंचणा०-चदुदंस०-तिण्णिसंज०-पंचंत०कोधभंगो | सेसं ओघं | मायाए पंचणा०-चदुदंसणा०-दोसंज०-पंचंत० कोधभंगो | सेसं ओघं | लोभे मुलोघं |

९४९. मदि०-सुद० खबगपगदीणं असंस्वेज्जगुणबङ्घि-हाणि-अवचन्ववज्जाणि सेसाणि [य सन्वपदा] ओघं। णवरि देवगदि-देवाणुपु० अवच०स्वेच् ०। सेसपदा पंचचोंह्०। ओरालिय० अवच० ऍकारह०। वेउन्वि०-वेउन्वि०अंगो० सन्वपदा ऍकारहचों०। अवच० खेच् ०।

राजू चे त्रका स्पर्शन किया है। शेष परोंके बन्धक जीवोंने सब लोकचे त्रका स्पर्शन किया है। चार आयु, वैक्रियिक छह, मनुष्यगति, तीन जाति, मनुष्यानुपूर्वी, आतप और उच्चगोत्रका भङ्ग सामान्य तियेख्योंके समान है। पछ्लेन्द्रियजाति और त्रसकी दो वृद्धि और दो हानिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और कुछ कम वारहवटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंने सब लोक चे त्रका स्पर्शन किया है। आहारकद्विक और तीर्थकर प्रकृतिका भङ्ग चात्रके समान है। उद्योतकी दो वृद्धि और हानिके बन्धक जीवोंने कुछ कम तरहवटे चौदह राजू चोत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। इसी प्रकार यशाकीर्ति और वादर नामकर्मकी मुख्यतासे स्पर्शन जानना चाहिये।

हिश्द. कोधकषायवाले जीवोंमं पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनाघरण, चार संज्वलन और पाँच अन्तरायकी एक वृद्धि, एक हानि और अवस्थितपदके बन्धक जीवोंने सब लोक चेन्नका स्पर्शन किया है। दो वृद्धि और दो हानिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राजू और सब लोक चेन्नका स्पर्शन किया है। असंख्यातगुणवृद्धि और असंख्यात गुणहानिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेन्नके समान है। शेष भक्त ओघके समान है। मान कषायवाले जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शना वरण, तीन संख्वलन और पाँच अन्तरायके बन्धक जीवोंका भक्त कोधकषायवाले जीवोंके समान है। शेष भक्त ओघके समान है। शेष भक्त कोधक समान है। शेष भक्त कोधक समान है। शेष भक्त कोधक बन्धक जीवोंका भक्त कोधकषायवाले जीवोंके समान है। शेष भक्त श्रीघके समान है। लोभकषायवाले जीवोंमें अपनी सब प्रकृतियोंके बन्धक जीवोंका भक्त मूल ओघके समान है।

हिश्ह. मत्यज्ञानी और श्रुताज्ञानी जीवोंमं त्तपक प्रकृतियोंकी असंख्यात गुणवृद्धि, असंख्यात गुणहानि और अवक्तव्यपदको छोड़कर तथा शेष सब प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीवोंका भक्त ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि देवगति और देवगत्यानुनूर्वीके अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका भक्त क्षेत्रके समान है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम पाँचबटे चौदह राजू चित्रका स्पर्शन किया है। औदारिकशरीरके अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम ग्यारहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। बैकियिकशरीर और चैकियिकआङ्गोपाङ्गके सब पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम ग्यारहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। वैकियका स्पर्शन किया है। वैकियका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है।

ह५०, विभंगे घुविगाणं तिण्णिविहु-हाणि-अविहु० अहुचोहँ० सन्वलो०। सादादि दस० सन्वपदा लोग० असंखे० अहुचोहँ० सन्वलो०। मिन्छत्त० अवत्त० अहु-बारह०। सेसपदा णाणावरणभंगो। इत्थि०-पुरिस०-पंचिदि०-पंचसंठा०ओरालि०अंगो०छस्संघ०-दोविहा०-तस०-सुभग-दोसर आदे० तिण्णिविहु-हाणि-अविहु० अहु-बारहचो०। अवत्त० अहुचो०। णवुंस०-तिरिक्ख०-एइंदि०-ओरालि०-हुंडसं०-तिरिक्खाणु०-थावर-दूभग-अणादे०-णीचागो० तिण्णिविहु-हाणि-अविह० अहुचो० सन्वलो०। अवत्त० अहुचोह०। णविर ओरालि० अवत्त० स्वेत्त०। दोआधु०-तिण्णिजादि० खेत्त०। मणुसायु-मणुसगदि॰ मणुसाणु०-आदाव-उचा० सन्वपदा अहुचोह०। वेउव्वियछ० मदिभंगो। उज्जोव-असगि० सन्वपदा अहु-तेरहचो०। पर०-उस्सा०-पज्जत्त-पत्ते० सन्वपदा सादभंगो। णविर अवत्त० खेत्त०। बादर० अवत्त० खेत्त०। सेसपदा अहु-तेरह०। सहुम-अपज्जत्त-साघार० तिण्णिविहु-हाणि-अविह० लोग०-असंखे०-सन्वलो०। अवत्त०-खेत्त०। अजस० अवत्त० अहु-तेरह०। सेसं सादभंगो।

९५०. विभङ्गज्ञानी जीवोंमें ध्रुववन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन बृद्धि, तीन हानि ऋौर श्रवस्थित-पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठबटे चौदह राजु और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। साता श्रादि दस प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण, कुछ कम आठबटे चौदह राजू और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। मिध्यात्वके श्रवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राजू और कुछ कम बारहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। स्वीवेद, पुरुषवेद, मख्रेन्द्रियजाति, पाँच संस्थान, श्रौदारिकत्राङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, दो विहायोगति, त्रसं, सुभग, दो स्वर श्रीर श्रादेयकी तीन बृद्धि, तीन हानि श्रौर श्रवस्थित पदकेबन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठबटे चौदह राजू श्रौर कुछ कम बारह बटे चौदहराजु चेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके वन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजु होत्रका स्पर्शन किया है। नपुंसकवेद, तिर्येक्क्षगति, एकेन्द्रियजाति, ऋौदारिकशरीर, हुण्डसंस्थान, तिर्येख्वगत्यानुपूर्वी, स्थावर, दुर्भग, अनादेय और नीचगोत्रकी तीन वृद्धि, तीन हानि ब्रौर ब्रावस्थितपरके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राजू और सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। स्रवक्तत्र्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम स्राठ बटे चौदह राजू सेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि श्रीदारिकशरीरके श्रवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। दो श्रायु और तीन जातिके सब पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। मनुष्यायु, मनुष्यगति, मनुष्यगत्यातुपूर्वी, श्रातप श्रौर उच्चगोत्रके सब पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठबटे चौदह राजू चोत्रका स्पर्शन किया है। वैक्रियिक छह्के सब पदोंके बन्धक जीवोंका भङ्ग मत्यज्ञानी जीवोंके समान है। उद्योत श्रोर यशःकीर्तिके सब पदोंके बन्धक जीयोंने कुछ कम श्राठवटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। परघात, उच्छुास, पर्याप्त और प्रत्येकके सब पदोंके बन्धक जीवोंका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका भङ्ग संत्रिके समान है। बादर प्रकृतिके ऋवक्तञ्यपदके बन्धक जीवोंका भङ्ग च्रेत्रके समान है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम ऋाठबंटे चौदह राजु और कुछ कम तेरह बटे चौदह राजु दोत्रका स्पर्शन किया है। सूच्म, अपर्याप्त श्रौर साधारणकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितपदके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग-प्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। ऋयशाकीर्तिके अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राज और कुछ कम तेरहबटै चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष भन्न सातावेदनीयके समान है।

६५१. आमि०-सुद०-ओघि० पंचणा०-चदुदंस०-चदुसंज०-पुरिस०-सादा०जमगि०-उचा० पंचंत० तिण्णिबड्ढि-हाणि-अबद्धि० अहचोँ६० । असंखेजजगुणबङ्ढि-हाणिअबत्त० खेन् । णबरि सादावे०-जसगि० अबत्त० अहचोँ६० । णिहा-पचला-पचक्खाणा०४-भय-दुगुं० पंचिंदि०-तेजा०-क०-समचदु०-वण्ण०४-अगु०४-पसत्थ०-तस०४सुभग-सुस्सर-आदेंज्ज०-णिमि०-तित्थय० तिण्णिबङ्ढि-हाणि-अबद्धि० अहचोँ० । अवत्त०
खेन् । अपच्चक्खाणा०४-मणुसगदिपंच० तिण्णिबङ्ढि-हाणि-अबद्धि० अहचोँ० । अवत्त०
छचोँ६० । असादादिदस-[अपज्ज०] सव्वपदा अहचोँ६० । मणुसायु० दोपदा अहचोँ६० ।
देवायु-आहारदुगं खेन् ० । देवगदि०४ सव्वपदा छचोँ६० । अवत्त० खेन् ० । एवं
ओधिदंस०-सम्मादि०-खइग० वेदगस०-उवसम० । णबरि खइगे उवसमे च अपचक्खाणा०४-मणुसगदिपंचग० अवत्त० खेन् । देवगदि०४ सव्वपदा छन् ।

९५२. संजदासंजदे देवायु०-तित्थय० सञ्वपदा खेर्च० । सेसाणं सञ्वपदा छचोह् ० ।

६५१.ऋाभिनियोधिकज्ञानी, श्रतज्ञानी ऋौर अवधिज्ञानी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दश्रीनावरण, चार संज्वलन, पुरुषवेद, सातावेदनीय, यशःकीर्ति, उच्चगोत्र खौर पाँच अन्तरायकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। श्रसंख्यातगुणवृद्धि, श्रसंख्यातगुणहानि स्रौर श्रवक्तव्यपद्के बन्धक जीवोंका भङ्ग चोत्रके समान है। इतनी विशेषता है कि साता वेदनीय श्रीर यशःकीर्तिके श्रवक्तव्यपद्के बन्धक जीवोंने कुछ कम ऋाठबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। निद्रा, प्रचला, प्रत्याख्याना-वरण चार, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रियजाति, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्तविहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, श्रादेय, निर्माण श्रौर तीर्थंकरकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तञ्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। अप्रत्याख्यानावरण चार और मनुष्यगतिपञ्चककी तीन वृद्धि, तीन हानि, श्रीर अवस्थितपद्के बन्धक जीवोंने कुछ कम त्राठबटे चौदह राजू चे प्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम छहबटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। असातावेदनीय आदि दस और अपर्याप्तके सब पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। मनुष्यायुके दो पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राज़् क्षंत्रका स्परीन किया है। देवायु और आहारक-द्विकके सब पदोंके वन्धक जीवोंका स्पर्शन सोत्रके समान है। देवगतिचतुष्कके सब पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम छहवटे चौदह राज क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि श्रवक्तव्य पदके बन्धक जीयोंका स्पर्शन चे त्रेके समान है। इसीप्रकार श्रवधिदर्शनी, सम्यन्दृष्टि, क्षायिकसम्यग्दष्टि, वेदक सम्यग्द्ष्टि, और उपशामसम्यग्द्ष्टि जीवोंके जानना चाहिये। इतनी विशे-पता है कि क्षायिकसम्यग्दृष्टि और उपशमसम्यग्दृष्टि जीवोंमें अप्रत्याख्यानावरण चार और मनुष्य-गतिपख्रकके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है तथा देवगतिचतुष्कके सब पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है।

६५२. संयतासंयत जीवोंमें देवायु और तीर्थङ्करके सब पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। शेष प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम छहवटे चौदह राजू चेत्रका स्पर्शन किया है। असंयतोंमें धूव बन्धवाली प्रकृतियोंका मङ्ग मत्यज्ञानी जीवोंके समान है। असंजदे धुवियाणं मदिभंगो । श्रीणगिद्धि०३-अणंताणुबंधि०४ अवत्त० अद्वचीँ०। सेसं ओघं।

६५३. किण्ण-णील-काऊणं धुविगाणं ऍक्कविड्ड-हाणि-अविड्डि० सब्बलो०। बेविड्ड-हाणी लोग० असंखें० सब्बलो०। णिरयगदि-वेउव्बि०-[बेउव्बि०] अंगो०-णिरयाणु० अवत्त० खेत्त०। सेसपदा छ-चत्तारि-वेचोह्स०। णिरय-देवायु०-देवगदि-देवाणुप०-तित्थय० खेत्त०। सेसं तिरिक्खोधं। णवरि इत्थि-पुरिस०-पंचिदि०-पंचसंठा०-ओरालि०-अंगो०-छस्संघ०-उज्जो०-दोविहा०-तस-सुभग-दोसर-आदेज्ज० दोविड्ड-हाणी० छ-चत्तारि-वेचोह्स०। मिच्छत्त० अवत्त० पंच-चत्तारि-वेचोह्स०।

८५४. तेऊए मिच्छत्त० सव्वपदा अट्ट-णवचीँ० । एवं उज्जो० । अपचक्खाणा०४ अवत्त० दिवड्ढचोर्द्स० । एवं ओरालि०। देवगदि०४ सव्वपदा दिवड्ढचोर्द्स० । अवत्त० खेत्त० । सेसपदा सेसाणं पगदीणं सोधम्मभंगो ।

६५५. पम्माए अपचक्खाणा०४ अवत्त० पंचचोँ६०। सेसपदा अट्टचोँ६०। स्त्यानगृद्धि तीन ऋौर अनन्तानुवन्धी चारके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राज्य चेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंका तथा शेष प्रकृतियोंके सब पदोंका भङ्ग ओघके समान है।

१५३. कृष्ण, नील और कापोतलेश्यावाल जीवोंमें ध्रव वन्धवाली प्रकृतियोंकी एक वृद्धि, एक हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीवोंने सब लोक चेंत्रका स्पर्शन किया है। दो वृद्धि और दो हानिके बन्धक जीवोंने लोकके असंस्थातवें भाग प्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। नरकगति, वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग और नरकगत्यानुपूर्वीके अवक्तव्य पदके वन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंने क्रमसे कुछ कम छह- बटे चौदह राजू, कुछ कम चारबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। नरकायु, देवायु, देवगति, देवगत्यानुपूर्वी और तीर्थङ्कर प्रकृतिके सब पदोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। शेष मङ्ग सामान्य तिर्यञ्जोंके समान है। इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेद, पुरुष वेद, पञ्चेन्द्रिय जाति, पाँच संस्थान, औदारिकञ्जाङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, उद्योत, दो विहायोगिति, त्रस, मुभग, दो स्वर और आदेयकी दो वृद्धि और दो हानिके बन्धक जीवोंने कुछ कम छहवटे चौदह राजू, कुछ कम चार बटे चौदह राजू, और कुछ कम दोबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। मिध्यात्वके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने क्रमसे कुछ कम पाँचबटे चौदह राजू, कुछ कम चारबटे चौदह राजू, कुछ

हिप्त पीतलेश्यावाले जीवोंमें मिध्यात्व के सब पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ वटे चौदह राजू और कुछ कम नौबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार उद्योतकी मुख्यतामें स्पर्शन जानना चाहिये। अप्रत्याख्यानावरण चारके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम डेढ़बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसीप्रकार औदारिकशरीरकी मुख्यतामें स्पर्शन जानना चाहिये। देवपित चतुष्कके सब पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम डेढ़बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसप्रकार औदारिकशरीरकी मुख्यतामें स्पर्शन जानना चाहिये। देवपित चतुष्कके सब पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन कोत्रके समान है। श्रेप पदोंके बन्धक जीवोंका तथा श्रेप प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन सीधर्म कस्पके समान है।

९५५. पद्मलेश्यावाले जीवोंमें अप्रध्याख्यानावरण चारके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने

देवगदि०४ तिण्णियड्डि-हाणि-अवट्टि० पंचचोर्दस०। अवत्त० खेँत्त०। ओरालि०-ओरालि०अंगो० अवत्त० पंचचो०। सेसपदा अङ्कचो०। सेसाणं सन्त्रपगदीणं सहस्सारभंगो।

्६५६. सुकाए अपचक्खाणा०४-मणुसग०-ओरालि०-ओरालि०-ऋंगो०- .....

अपाबहुअं

६५७....पर०-उस्सा०-पसत्थ०—तस०४—सम्मा-सुस्सर-आदेँ०-उच्चा० सञ्बत्थोवा संखेज्जगुणविद्व-हाणी दो वि तुल्ला। अवत्त० संखेज्जगुणा। सेसपदा ध्रुवभंगो। णवुंस०—तिण्णिगदि—चदुजादि-ओरालि०-पंचसंठा०-ओरालि०अंगो०-छस्संघ०-तिण्णि-आणु०-आदाउज्जो०-अप्पसत्थ०-थावर०४-द्भग-दुस्सर-अणादेँ० सञ्बत्थोवा संखेज्जगु-णविद्व ०-हाणी दो वि तुल्ला। अवत्त० असंखेज्जगु०। संखेज्जभागविद्व-हाणी दो वि० संखेज्ज०। सेसाणं ध्रुवभंगो। चदुआयु० ओघं।

६५८. पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्तगेसु धुविगाणं सन्वत्थोवा संखेँज्जगुणवड्ढि-हाणी। संखेज्जभागवड्ढि-हाणी दो वि० असंखेज्जगु०। असंखेजजभागवड्ढि-हाणी दो वि०

कुछ कम पाँचवटे चौदह राजू चे त्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम त्राठ-बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। देवगतिचतुष्ककी तीन वृद्धि, तीन हानि और अव-स्थित पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम पाँचवटे चौदह राजू चे त्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका भङ्ग चे त्रके समान है। औदारिकशरीर औदारिक आङ्गोपाङ्गके अव-क्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम पाँचवटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राजू चे त्रका स्पर्शन किया है। शेष सत्र प्रकृतियोंका भङ्ग सहस्रार कल्पके समान है।

६५६. शुक्रलेश्यायाले जीवोंमें अप्रत्याख्यानावरण चार, मनुष्यगति, श्रौदारिकशरीर, औदा-

रिकन्त्राङ्गोपाङ्ग .....

अस्पबहुत्व

६५७ ......परघात, उच्छुास, प्रशस्त विद्दार्थीगति, त्रस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय और उच्चगोत्रकी संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुण-हानिके वन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर सबसे स्तोक हैं। इनसे श्रवक्तव्य पदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। शेष पदोंके बन्धक जीवोंका भङ्ग ध्रुव बन्धवाली प्रकृतियोंके समान है। नपुंसकवेद, तीन गति, चार जाति, श्रीदारिक शरीर, पाँच संस्थान, श्रीदारिकशाङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, तीन आनुपूर्वी, त्रातप, उद्योत, त्रप्रशस्त विहायोगिति, स्थावर चतुष्क, दुर्भग, दुस्वर और अनादेयकी संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुण हानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर सबसे स्तोक हैं। इनसे श्रवकत्र्य पदके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर संख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यात भागवृद्धि और संख्यात भागवानिके वन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर संख्यातगुणे हैं। शेष पदोंका भङ्ग ध्रुव बन्धवाली प्रकृतियोंके समान है। चार श्रायुका भङ्ग श्रोघके समान है।

६५८. पञ्चेन्द्रिय तिर्येश्च अपर्याप्तकोंमें संख्यातगुणवृद्धि ख्रीर संख्यातगुणहानिके वन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर सबसे स्तोक हैं । इनसे संख्यात भागवृद्धि, ख्रीर संख्यात भागहानिके वन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर असंख्यातगुऐ। हैं । इनसे असंख्यात भागवृद्धि श्रीर असंख्यात भाग संखेंज्ज० । अवद्वि० असंखेंज्जगु० । सादादीणं परियत्तमाणियाणं पंचिंदियतिरिक्खभंगो ।

ह५ह. मणुसेसु पंचणा०-चदुदंसणा०-चदुसंज०-पंचंत० सन्वत्थोवा अवत्त०। असंखेंज्जगुणवड्ढी संखेंज्जगु०। असंखेंज्जगुणहाणी संखेंज्जगु०। संखेंज्जगुणवड्ढि-हाणी दो वि० असंखेंज्जगु०। संखेंज्जभागवड्ढि-हाणी दो वि० संखेंजजगु०। संखेंजजभागवड्ढि-हाणी दो वि० संखेंजजगु०। अवद्वि० असंखेंजजगु०। पंचदंस०-मिच्छत्त०-बारसक०-मय-दु० ओराछि० तेजइगादिणव० सन्वत्थोवा अवत्त०। संखेंजगुणवड्ढि-हाणी दो वि० असंव्यु०। सेसपदा णाणावरणभंगो। सादावे०-पुरिस०-जसिण०-उचा० सन्वत्थो० असंखेंजजगुणवड्ढी। असंखेंजजगुणहाणी संखेंजगु०। संखेंजगुणवड्ढि-हाणी दो वि सिरमाणि असंखेंजगुणाणि। अवत्त० संखेंजगु०। संखेंजजभागवड्ढि-हाणी दो वि सिरमाणि असंखेंजगुणाणि। अवत्त० संखेंजगु०। संखेंजजभागवड्ढि-हाणी दो वि० संखेंजज०। सेसपदा णाणावरणभंगो। वेउन्वियळक आहारदुगं ओघं आहारसरीरभंगो। सेसाणं असादादीणं सन्वपगदीणं णिरयभंगो। णवरि तित्थय०...सन्वत्थो० संखेंजजगुणं कादन्वं। मणुसपज्जत-मणुसिणीसु तं चेव। णवरि संखेंजजभागवड्ढि-हाणी दो वि० सिखेंजजभागवड्ढि-हाणी दो वि०। संखेंजजभागवड्ढि-हाणी दो वि० सिखेंजजभागवड्ढि-हाणी दो वि०। संखेंजजभागवड्ढि-हाणी दो वि०।

हानिके बन्धक जीव दोनों ही तुस्य होकर ,संख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुरो हैं। साता आदि परिवर्तनमान प्रकृतियोंका मङ्ग पञ्चेन्द्रियतिर्यक्चोंके समान है।

eye. मनुष्योंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शानावरण, चार संज्वलन ऋौर पाँच अन्तरायके च्यवक्तत्य पदके वन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे ऋसंख्यातगुणवृद्धिके वन्धक जीव संख्यात-रांग हैं । इनसे असंख्यातगुण हानिके यन्धक जीव संख्यातगुणे हैं । इनसे संख्यातगुणवृद्धि और संज्यातगणवानिके वन्धक जीव दोनों ही तुस्य होकर असंख्यातगु**रो हैं । इनसे संख्यातभागवृद्धि** ओर संख्यानभागहानिके वन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर संख्यातगुरो हैं। इनसे असंख्यात-भागवृद्धि और असंख्यात भागहानिके वन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर संख्यातगुरो हैं। इनसे अयस्यित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुरो हैं। पाँच दर्शनावरण, मिश्यात्व, बारह क्षाय, भय, जुगुल्सा, ऋोदारिकशरीर ऋौर तैजसशरीर ऋादि नौके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे संख्यातगुणवृद्धि त्थौर संख्यातगुणहानिके वन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर ऋसंख्यात-गणे हैं। शेप पदोंके बन्धक आबोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। साताबेदनीय, पुरुषवेद, यशः-कीर्ति, और उच्चगोत्रकी असंख्यानगुणवृद्धिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे असंख्यागुण हानिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातगुणवृद्धि श्रीर संख्यात गुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तस्य होकर असंख्यातगुरो हैं। इनसे अवक्तव्य, पदके बन्धक जीव संख्यातगुरो हैं। इनसे संख्यातभागवृद्धि ऋौर संख्यातभागहानिके वन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर संख्यातगुरो हैं । होप पदोंके बन्धक जीवोंका भङ्ग ज्ञानाथरणके समान है । वैक्रियिक छह और ब्राहारकद्विकका भद्ध श्रोधमें वहे गये श्राहारकशरीरके समान है। शेष श्रासाता श्रादि सब प्रकृतियोंका भङ्ग नारिक-योंके समान हैं। इतनी विशेषता हैं कि तीर्थङ्करप्रकृति ..... सबसे स्तोक हैं। इसके स्थानमें संस्यातगुणा करना चाहिये । मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें वही भङ्ग है । इतनी विशेषता है कि यहाँ असंख्यातगुरोके स्थानमें संख्यातगुणा करना चाहिये। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें भ्रव बन्धवाली प्रकृतियोंकी संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुस्य होकर सबसे

तु० संखेंज्ज० । असंखेजि०बङ्घि-हाणी दो वि तु० संखेज्ज० । अवट्टि० असंखेज्जगु० । सेसाणं पगदीणं मणुसोघभंगो । देवाणं णिरयभंगो । णवरि विसेसो णादव्यो ।

६६०. सन्त्रएइंदिय-पंचकायाणं धुनिगाणं सन्त्रत्थोवा असंखेँजजभागवड्ढि-हाणी दो वि०। अवद्वि० असंखेँजज०। सेसाणं परियत्तमाणियाणं पगदीणं सन्त्रत्थो० अवत्त०। असंखेजजभागवड्ढि-हाणी दो वि० संखेँजज०। अवद्वि० असंखेँ०। दो आयु० ओघं।

६६१. सम्बविगिलिदिएसु धुविगाणं सन्वत्थोवा संखेंज्ञभागविहु-हाणी दो वि तु०। असंखेंज्ञभागविहु-हाणी दो वि तु० संखेंज्जगु०। अविहु० असंखेंज्जगु०। सेसाणं सन्वत्थोवा अवत्त०। संखेंज्ञभागविहु-हाणी दो वि संखेंज्जगु०। असंखेंज्जभागविहु-हाणी दो वि तु० संखेंज्ज०। अविहु० असंखेंज्जगु०। आगु० मणुसअपज्जत्तभंगो।

६६२. पंचिदिएसु पंचणा०-चदुदंसणा० चदुसंज० पंचंत० सन्वत्थो० अवत्त०। असंखेंजजगुणबह्वी संखेंजजगु०। असंखेंजगुणहाणी संखेंजजगु०। संखेंजजगुणबह्वि-हाणी दो वि० असंखेंज०। संखेंजजभागबह्वि-हाणी दो वि० असं०गु०। असंखेंजभागबह्वि-हाणी

स्तोक हैं। इनसे संख्यातभागवृद्धि श्रीर संख्यातभागहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर संख्यातगुरों हैं। इनसे श्रसंख्यात भागवृद्धि और श्रसंख्यातभागहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर संख्यातगुरों हैं। इनसे श्रवस्थित पदके बन्धक जीव श्रसंख्यातगुरों हैं। शेप प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य मतुष्योंके समान है। देवोंका भङ्ग नारिकयोंके समान है। इतनी विशेषता हैं कि यहाँ जो विशेष हो वह जान लेना चाहिये।

ह्द०. सब एकेन्द्रिय और पाँच स्थावरकायिक जीवोंमें असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागवृद्धि त्रीक वेश्वक जीव वस्थक जीव वस्थक जीव असंख्यातगुणे हैं। शेष परिवर्तमान प्रकृतियोंके अवक्षव्य पदके वस्थक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागवृद्धि असंख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थित पदके वस्थक जीव असंख्यातगुणे हैं। दो आयुओंका भक्त ओषके समान है।

६६१. सब विकलेन्द्रियों में ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी संख्यातभागवृद्धि श्रीर संख्यातभागहानिके बन्धक जीव तुल्य होकर सबसे स्तोक हैं। इनसे श्रसंख्यात भागवृद्धि और श्रसंख्यातभाग हानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर संख्यातगुरे। हैं। इनसे श्रवस्थित पदके बन्धक जीव श्रसंख्यातगुरे। हैं। होष सब प्रकृतियोंके श्रवक्तत्र्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे संख्यातभागवृद्धि श्रीर संख्यातभागहानि इन दानों ही पदोंके बन्धक जीव तुल्य होकर संख्यातगुरे। हैं। इनसे असंख्यातभागवृद्धि श्रीर असंख्यातभागहानि हि। इनसे बन्धक जीव तुल्य होकर संख्यातगुरे। हैं। इनसे श्रवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुरे। हैं। श्रवसे श्रवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुरे। हैं। इनसे श्रवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुरे। हैं।

६६२. पञ्चेन्द्रियोंमें पाँच झानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्यलन स्रोर पाँच अन्तरायक स्रवक्तव्य पदके वन्धक जीव सब स्तोक हैं। इनसे असंख्यातगुणवृद्धिके बन्धक जीव संख्यातगुण है। इनसे असंख्यातगुणहानिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातगुणवृद्धि स्रोर संख्यातगुणहानि दोनों ही पदोंके बन्धक जीव तुल्य होकर असंख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातगागृहिद्ध स्रोर संख्यातभागवृद्धि स्रोर संख्यातभागवृद्धि स्रोर संख्यातभागहानि दोनों ही पदोंक बन्धक जीव तुल्य होकर स्रसंख्यातगागुणे हैं। इनसे

दो वि० संखेंजगु० । अवद्वि० असंखेंज० । पंचदंसणा०-मिन्छत्त०-बारसक०-भय-दु०-तेजइगादिणव० सन्वत्थो० अवत्त० । संखेंजगुणविद्व-हाणी दो वि० असंखेंजगु० । संखेंजगणविद्व-हाणी दो वि० असंखेंजगु० । अवद्वि० असंखेंजगणविद्व-हाणी दो वि० संखेंजगु० । अवद्वि० असंखेंजगणविद्व-हाणी दो वि० संखेंजगणविद्वी । असंखेंजगणहाणी संखेंजगु० । संखेंजगणविद्व-हाणी दो वि० असंखेंजगणविद्व-हाणी संखेंजगु० । अवद्वि० असंखेंजगु० । असंखेंजगणविद्व-हाणी दो वि० असंखेंजगणविद्व-हाणी संखेंजगु० । अवद्वि० असंखेंजगणविद्व-हाणी संखेंजगु० । अवद्वि० असंखेंजगु० । असादावे०-छण्णोक०-दोगदि-पंचजादि-पंचज

९६३. पंचिदियपञ्जत्तमे पंचणा०-चदुदंस०-चदुसंज० पंचंत० सब्बत्थो० अवत्त०। असंखेंज्ञगुणवड्ढी संखेंज्जगु०। असंखेंज्जगुणहाणी संखेंज्जगु०। संखेंज्जगुणवड्ढि-हाणी दो

असंख्यातभागवृद्धि ऋौर असंख्यातभागहानि इन दोनों ही पदोंक वन्धक जीव तुस्य होकर संख्यातगुरो हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुरो हैं। पाँच दर्शनावरण, मिध्या-त्व, बारह कषाय, भय, जुगुप्सा ऋौर तैजसशारीर छादि नौके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे संख्यातगुणवृद्धि श्रीर संख्यातगुणहानि इन दोनों ही पदोंके वन्धक जीव तुस्य होकर असंख्यातगुरो हैं। इनसे संख्यातभागवृद्धि और संख्यातभागहानि इन दोनों ही पदीके बन्धक जीव तुल्य होकर असंख्यातगुरो हैं। इनसे असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानि इन दोनों ही पर्दोंके बन्धक जीव तुल्य होकर संख्यातगुरो हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव श्रसंख्यातगुरो हैं। सातावेदनीय, पुरुषवेद, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रकी असंख्यातगुणवृद्धिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे असंख्यातगुणहानिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातगुणवृद्धि श्रौर संख्यातगुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर श्रसंख्यातगुणे हैं। इनसे अवक्तव्य पदके बन्धक जीव असंख्यातगुरो हैं। इनसे संख्यातभागवृद्धि और संख्यातभाग हानिके बन्धक जीव दोंनों ही तुल्य होकर असंख्यातगुरो हैं। इनसे असंख्यातभागवृद्धि और ऋसं-ख्यातभागहानिके बन्धक जीव दोंनों ही तुल्य होकर संख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। असातावेदनीय, छह नोकषाय, दो गति, पाँच जाति, औदारिक-शरीर, छह संस्थान, श्रीदारिकआङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, दो श्रानुपूर्वी, श्रातप, उद्योत, दो विहा-योगति, परघात, उच्छ्वास, त्रस, स्थावर ऋादि नौ युगल, ऋयशःकीर्ति ऋौर नीचगोत्रकी संख्यात-गुणवृद्धि श्रीर संख्यातगुणहानिके बन्धक जीव दोंनों ही तुस्य होकर सबसे स्तोक हैं। इससे अव-कत्र्य पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। शेष पदोंका भङ्ग निद्राके समान है। चार आयु, नरकगति, देवगति, वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, दो आनुपूर्वी, आहारकद्विक और तीर्थ-ङ्करत्रकृतिका भङ्ग श्रोधके समान है।

ृह्द. पञ्चीन्द्रयपर्याप्त जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच श्रान्तरायके त्रावक्तव्यपदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे त्रासंख्यात गुणवृद्धिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यात गुणहानिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातगुणवृद्धि

१ मुख्यतौ जादि संखेजगु० ओरा०इति पाठः।

वि तु० असंखें ज्जगु० । संखें ज्ञभागविद्व-हाणी दो वि० संखें ज्जगु० । असंखें ज्ञभागविद्व-हाणी दो वि तु० संखें ज्जगु० । अविद्वि० असंखें ज्जगु० । पंचदंसणा०-भिच्छ०-वारस० क०-भय-दु०-ते जहगादिणव० पंचिंदियओघो । असादावे०-छण्णोक० - तिण्णिगदि - दोजादि-ओरालि०-वेउच्वि०-छस्संठा-दोअंगो०-छस्संघ० तिण्णिआणु०-पर०-उस्सा०-आदाउउजो० - दोविहा०-तस थावर-वादर-पज्जत्त-पत्तेय०-थिरादिपंचयुगल० - अजस० - णीचा० सच्वत्थो० संखें ज्जगुणविद्व-हाणी दो वि तु० । अवत्त० संखें ज्जगुणविद्व । हाणी असंखें ज्जगु० । सादावे० - पुरिस० - जसगि० - उचा० सच्वत्थो० असंखें ज्जगुणविद्व । हाणी असंखें ज्जगु० । संखें ज्जगुणविद्व - हाणी दो वि तु० असंखें ज्जगु० । अवत्त० संखें ज्जगु० । उविर णिहाए भंगो । णिरयगदि-तिण्णिजादि-णिरयाणु०-सहुम-अवज्जत्त-साधारण० सच्चत्थोवा संखें ज्जगुणविद्व-हाणी । अवत्त० असंखें ज्जगु० । उविर णिहाए भंगो । चदुआयु०-आहारदुग-तित्थय० ओघं । पंचिदियअपज्ज० पंचिदियतिरिक्खअपज्जत्तभंगो । तसकाइय० पंचिदि यभंगो । पञ्जता पञ्जत्तभंगो । अपज्जत्त० अपज्जत्तभंगो ।

९६४. पंचमण०-तिष्णिवचिजो० पंचणा०अद्वारस० पंचिंदियपज्जसभंगो। चदु-दंसणा०-मिच्छ०-बारसक०-भय०-दुगुं०-देवगदि-ओरालि०-वेउव्विय०-तेजा०-क०-

श्रीर संख्यात गुणहानिके वन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर असंख्यातगुरे। हैं। इनसे संख्यात भागवृद्धि ऋौर संख्यातभागहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर संख्यातगुर्णे हैं। इनसे ऋसंख्यात भागवृद्धि और ऋसंख्यात भागहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर संख्यातगुणे हैं। इनसे त्र्यवस्थितपदके बन्धक जीव त्र्यसंख्यातगुर्णे हैं। पाँच दर्शनावरण, मिध्यात्व, वारह कषाय, भय, जुगुप्सा त्रौर तैजसशरीर आदि नौका भङ्ग पक्रोन्द्रियोंके त्रोधके समान है। असाताबेदनीय, छह नोकषाय, तीन गति, दो जाति, औदारिकशरीर, वैक्रियिकशरीर, छह संस्थान, दो ऋाङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, तीन ऋानुपूर्वी, परघात, उछवास, ऋातप, उद्योत, दो विहायोगित, त्रस, स्थावर, बादर पर्याप्त, प्रस्येक, स्थिर आदि पाँच युगल, अयशाकीति और नीचगोत्रकी संख्यात गुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुस्य होकर सबसे स्तोक हैं । इनसे अवक्तव्यपद्के बन्धक जीव संख्यातगुरो हैं । इससे आगेका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है । सातावेदनीय, पुरुष्वेद, यशः-कीर्ति श्रीर उच्चगोत्रकी श्रसंख्यात गुणवृद्धिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे श्रसंख्यातगुण-हानिके बन्धक जीव संख्यातगरो हैं। इनसे संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुस्य होकर असंख्यातगुणे हैं। इनसे अवक्तव्यपदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इससे त्रागेका भङ्ग निद्रा प्रकृतिके समान है। नरकगति, तीन जाति, नरकगत्यानुपूर्वी, सूद्रम, अपर्याप्त ऋौर साधारणकी संख्यातगुणवृद्धि. ऋौर संख्यातगुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर सबसे स्तोक हैं। इनसे अवक्तव्यपद्के बन्धक जीव ऋसंख्यातगुणे हैं। इससे आगेका भङ्ग निद्रा प्रकृतिके समान है। चार त्रायु, आहारकद्विक और तीर्थंकर प्रकृतिका भङ्ग त्रोवके समान है। पञ्चेन्द्रिय ऋपर्याप्तकोंमें पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान भङ्ग है। त्रसकायिक जीवोंमें पञ्चेन्द्रियोंके समान भक्न हैं । इनके पर्याप्तकोंमें पञ्चेन्द्रिय पर्याप्तकोंके समान भक्न है । इनके ऋपर्याप्तकोंमें पञ्चेन्द्रिय श्रपर्याप्तकोंके समान भङ्ग हैं।

६६४. पाँच मनायोगी और तीन वचनयोगी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरणादि अठारह प्रकृतियोंका भङ्ग पञ्चोन्द्रिय पर्याप्तकोंके समान भङ्ग है। चार दर्शानावरण, मिध्यास्व, बारह कषाय, भय,

वेउब्वियअंगो०-वण्ण०४-देवाणु०-अगु०४ -बाद्र-पज्जत्त-पत्तेय०-णिमि० सव्वत्थो० अवत्त । संखेँजगुणवड्टि-हाणी दो वि० तु० असंखेँज्ज० । उवरिमपदा णाणावरणमंगी । सादावे०-पुरिस०-जसगि० उचा० पंचिदियपञ्जनभंगो । असादा०-छण्णोक०-तिण्णिगदि-पंचजादि-छम्संठा०-ओरालि०अंगो०-छम्संघ०-तिण्गिआणु० आदाउज्जो०-दोविहायगदि-तस-थावर-सुदूम०-अपज्जत्त०-साधार०-थिरादिपंचयुगल-अजस०-णीचा० सन्बत्थो० संखेंज्जगुणवड्डि-हाणी दो वि०। अवत्त० संखेज्जगु०। उवरि णिद्दाए भंगो। चदुआयु०-आहारदुग-तित्थय० ओघं। वचिजोगि-असचमोसवचि० तसपज्जत्तभंगो। ओरालियमि० तिरिक्खोघं । णवरि देवगदिपंचगस्स सब्वत्थो० संखेज्जगुणवङ्गि-हाणी दो वि० त० । संखेज्जभागवड्टि-हाणी दो वि० तु० संखेज्जगु० ! असंखेज्जभागवड्टि-हाणी दो वि० तु० संखेजजगुरु । अवद्विरु संखेजजगुरु ।

९६५. वेउव्वि०-वेउव्वियमिस्सका० देवोधं। णवरि वेउव्वियका० तित्थय० णिरयोधं । आहार०-आहारमिस्सका० सन्बद्धभंगो । कम्मइगका० सन्बत्थो० मिन्छत्त० अवत्त० । अवद्विद० अर्णतगु० । सेसाणं परियत्तमाणियाणं पगदीणं सन्वत्थो० अवत्त० । अवद्भि० असंखेर्जजगु० । एवं अणाहारमे० ।

जुगुप्सा, देवगति, श्रौदारिकशरीर, वैक्रियिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, वैक्रियिकश्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, देवगध्यानुपूर्वी, अगुरुलयुचतुष्क, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक और निर्माणके अवक्तन्यपदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे संख्यातगुणवृद्धि, ऋौर संख्यातगुणहानिपदके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर ऋसंख्यातगुर्णे हैं । इससे ऋगिके पदोंका भक्न ज्ञानावरणके समान है । साना-वेदनीय, पुरुषवेद, यशःकीतिं ऋौर उच्चगोत्रका भङ्ग पञ्चोन्द्रियपर्याप्त जीवोंके समान है । ऋसाता-वेदनीय, छद्द नोकपाय, तीन गति, पाँच जाति, छद्द संस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, छद्द संद्दनन, तीन ऋानुपूर्वी, ऋातप, उद्योत, दो विहायोगित, त्रस, स्थावर, सूदम ऋपर्याप्त, साधारण, स्थिर न्नादि पाँच युगल, त्र्यशःकीर्ति श्रौर नीचगोत्रकी संख्यातगुणवृद्धि श्रौर संख्यातगुणहानिके दन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर सबसे स्तोक हैं। इनसे अवक्तव्यपदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इससे आगेका भङ्ग निद्रा प्रकृतिके समान है। चार आयु, आहारकद्विक और तीर्थकर प्रकृतिका भङ्ग त्रोघके समान है। वचनयोगी और त्रासत्यमुषा वचनयोगी जीवोंमें त्रसपर्याप्त जीवोंके समान भक्न है । त्रीदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें सामान्य तिर्यक्रोंके समान भक्न है । इतनी विशेषता है कि देवगतिपञ्चककी संख्यातमुणवृद्धि और संख्यातमुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर सबसे स्तोक हैं। इनसे संख्यातभागवृद्धि और संख्यातभागहानिक बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर संख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिके वन्धक जीव दोनों ही तुस्य होकर संख्यातगुणे हैं । इनसे ऋवस्थितपदके वन्धक जीव संख्यातगुणे हैं ।

६६५ वैक्रियिककाययोगी और वैक्रियिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें सामान्य देवोंके समान भक्क है। इतनी विशेषता है कि वैक्रियिककाययोगी जीवोंमें तीर्थंकर प्रकृतिका भक्क सामान्य नारिकयोंके समान है। ब्राहारककाययोगी ब्रौर ब्राहारक मिश्रकाययोगी जीवोंमें सर्वार्थ-सिद्धिके देवोंके समान भङ्ग है। कार्मणकाययोगी जीवोंमें मिध्यात्वके अवक्तन्यपदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे अवस्थितपदके बन्धक जीव अनन्तराणे हैं। शेव परिवर्तमान प्रकृतियोंके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे अवस्थितपदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इसी प्रकार अनाहारक जीवोंके जानना चाहिये।

६६६, इत्थिवे० पंचणा०-चदुदंस०-चरुसंज०-पंचंत० सन्बत्थो० असंखेजजगुण-वड्डी। असंखेजजगुणहाणी संखेजजगु०। संखेजजगुणवड्डि-हाणी दो वि० तु० असं०गु०। संसपदा पंचिदियपज्जत्तमंगो। पंचदंसणा०-मिच्छत्त०-बारसक०-भय०-दुर्गु०-तेजइगादिण्व० पंचिदियपज्जत्तमंगो। सादावे०-पुरिस०-जसगि०-उचा० पंचिदियपज्जत्तमंगो। असादा०-छण्णोकसा०-तिण्णिगदि-दोजादि-ओरालि०-वेउव्व०- छस्संघा-दोअंगो०- छस्संघ०-तिण्णिआणु०-आदाउज्जो०-दोविहा०-तस-थावरादिपंचयुगल-अजस०णीचा० सम्बत्थो० संस्थेजजगुणवड्डि-हाणी दो वि० तु०। अवत्त० संस्थेजजगु०। संखेजजभागवड्डि-हाणी दो वि० तु०। अवत्त० संस्थेजजगु०। संखेजजभागवड्डि-हाणी० दो वि० तु० संखेजजगु०। अवद्वि० असंखेजजगु०। चदुआयु० ओद्यं। णिरयगदि-तिण्णिजादि-णिरयाणु०-सहुम अपव्ज०-साधार० सन्वत्थो० संखेजजगुणवड्डि-हाणी दो वि०। अवत्त० असंखेजजगु०। संखेजजगु०। सावि० संखेजजगु०। संखेजजगु०। संखेजजगु०। संखेजजगुणवड्डि-हाणी दो वि० संखेजजगु०। असंखेजजगुणवड्डि-हाणी दो वि० संखेजजगु०।

६६६. स्रीवेदी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन ऋौर पाँच अन्तराय-की असंख्यातगुणवृद्धिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे असंख्यातगुणहानिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिके वन्धक जीव दोनों ही तुस्य होकर त्रसंख्यातगुणे हैं । शेष पदोंका भद्ग पल्लेन्द्रियपर्याप्त जीवोंके समान है । पाँच दर्शनावरण, मिथ्यात्व, बारह कषाय, भय, जुगुप्सा श्रोर तैजसशरीर श्रादि नौ का भङ्ग पञ्चेन्द्रियपर्याप्त जीवोंके समान हैं। सातावेदनीय, पुरुपवेद, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका भङ्ग पद्धोन्द्रियपर्याप्त जीवोंके समान है। असातावेदनीय, छह नाकपाय, तीन गति, दो जाति, औदारिकशरीर, वैक्रियिकशरीर, छह संस्थान, दो आङ्गापाङ्ग, छह संहनन, तीन आनुपूर्वी, आतप, उद्योत, दो विहायोगित, त्रस और स्थावर अ।दि पाँच युगल, अवशःकीर्ति और नीचगोत्रकी संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिके वन्धक जीव दोनों ही तुस्य होकर सबसे स्तीक हैं। इनसे अवक्तव्यपदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातभागवृद्धि अौर संख्यातभागहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर संख्यातगुणे हैं। इनसे त्रसंख्यातभागवृद्धि त्रीर त्रसंख्यातभागहानिके वन्धक जीव दोनों ही तुल्य. होकर संख्यातगुणे हैं । इनसे अवस्थितपदके बन्धक जीव असंख्यातगुर्ए हैं। चारों आयुओंका भक्क स्त्रोघके समान है। नरकगति, तीन जाति, नरकगत्यानुपूर्वी, सून्म, अपर्याप्त श्रीर साधारणकी संख्यातगुणवृद्धि श्रीर संख्यातगुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर सबसे स्तोक हैं। इनसे अवक्तव्यपदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातभागवृद्धि और संख्यातभागहानिके वन्धक जीव दोनों ही तुरुव होकर संख्यानगुणे हैं । इनसे असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर संख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थितपदके बन्धक जीव असंख्यातगणे हैं। आहा-रकद्विक और तीर्थंकर प्रकृतिका भङ्ग मनुष्यिनयोंके समान है। परधात, उच्छ्वास, बादर, पर्याप्त श्रीर प्रत्येकके श्रवक्तव्यपदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे संख्यातगुणवृद्धि और संख्यात-गुणह।निके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर संख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातभागवृद्धि श्रौर संख्यात-भागद्दानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर संख्यातराणे हैं। इनसे ऋसंख्यातभागवृद्धि ऋौर

दो वि॰ संखेज्जगु॰। अवट्टि॰ असंखेज्जगु॰। पुरिसेसु इत्थिभंगो। णवरि तित्थयरं ओघं। ६६७, णवुंसगे॰ पंचणा॰-चदुदंसणा॰-चदुसंज॰ पंचंत॰ सद्वत्थोवा असंखेज्ज-गुणवड्ढी। असंखेज्जगुणहाणी संखेज्जगु॰। सेसपदा ओघं। पंचदंसणावरणादिएगुणतीसं पगदीणं ओघं। ओरालि॰ सद्वत्थोवा संखेज्जगुणवड्ढि-हाणी दो वि॰। अवत्त॰ असं-खेजजगु॰ उवरि ओघभंगो। वेउन्वियछ॰ ओघं णिरयगदिभंगो। सेसाणं पगदीणं ओघं।

९६८. अवगदवे० पंचणा०-चदुदंसणा०-चदुसंज०-पंचंत० सन्वत्थोता अवत्त०। संखेंजजगुणवड्ढी संखेंजजगु०। संखेंजजगु०। संखेंजजगुणवड्ढी संखेंजजगु०। संखेंजजगुणवड्ढी संखेंजजगुणवाड्ढी संखेंजजगुणवाडिणी संखेंजजगुणवाणी संखेंजजगुणी संखेंज

६६६. कोधकसाए० पंचणा० चढुदंस०-चढुसंज०-पंचंत० ओघं। णवरि अवच०

असंख्यातभागहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुस्य होकर संख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थितपदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। पुरुषवेदी जीवोंमें स्त्रीवेदी जीवोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि तीर्थंकर प्रकृतिका भङ्ग ओघके समान है।

६६७. नपुंसकवेदी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरंण, चार संज्वलन और पाँच अन्तरायकी असंख्यात गुणदृक्ति वन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे असंख्यात गुणदृक्ति वन्धक जीव संख्यात गुणदृक्ति वन्धक जीव संख्यातगुण हैं। शेष पदोंका भङ्ग आंघके समान है। पाँच दर्शनावरण आदि उनतीस प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है। औदारिक शारीरकी संख्यातगुणदृद्धि और संख्यातगुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर सबसे स्तोक हैं। इनसे अवक्तव्य पदके बन्धक जीव असंख्यात गुणे हैं। इससे आगोका भङ्ग ओघके समान है। वैक्रियिक छह का भङ्ग ओघमें कहे गये नरकगितिक समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग आघके समान है।

६६८. अपगतवेदी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच अन्तराय के अवक्तव्य पदके वन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे संख्यातगुणवृद्धिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातगुणहानिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातगुणहानिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे अवंख्यातगुणहानिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे अवंख्यातगुण-वृद्धिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यातगुण-वृद्धिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यातगुण-वृद्धिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थित ज्ञाव संख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातगुणे हैं।

६६६. क्रोधकषायवाले जीवोंमं पाँच झानावरण, चार दर्शनावरण चार संज्वलन और पाँच

णित्थ । सेसाणं पि ओघं । माणे सत्तारण्णं पि अवत्त ० णित्थ । सेसाणं पि ओघं । मायाए सोलसण्णं पि अवत्त ० णित्थ । सेसाणं पि ओघं । लोभे पंचणा०-चढुदंस०-पंचंत ० अवत्त ० णित्थ । सेसपदा ओघभंगो ।

६७०. मदि०-सुद० धुनिगाणं मिच्छत्त० तिरिक्खोधं। सेसाणं ओधं। विभंगे धुवियाणं णिरयभंगो। मिच्छत्त०-देनगदि पंचिदि० ओरालिय०-वेडिव्वय०-समचदु०-वेडिव्वय०अंगो०-देनाणुपु०-पर०-उस्सास-बादर-पज्जत्त-पत्तेय० सम्बत्थोवा अवत्त०। संखेज्जगुणवृद्धि-हाणी दो वि० असंलेज्जगु०। उत्ररिमपदा धुवभंगो। सादासाद०-सत्तणोक०-तिण्णिगदि—चदुजादि—पंचसंटाण—ओरालि० अंगो०-छस्संघ०-तिण्णिआणु०-आदा०उज्जो० दोविहाय० तस-थावर-सुहुम-अपज्जत्त-साधार०-थिरादिछयुगल-दोगोद० सम्बत्थोवा संखेजजगुणवृद्धि-हाणी दो वि०। अवत्त० संखेजजगु०। उवरिमपदा धुवभंगो।

६७१. आभि०-सुद०-ओधि० पंचणा०-चदुदंसणा०-चदुसंज्ञ०-पुरिस-उच्चा०-पंचंत० सन्वत्थो० अवत्त० । असंखेजजगुणवड्ढी संखेजगु० । असंखेजगुणहाणी संखेजगु० । संखेजगुणवड्ढि-हाणी दो वि० असं०गु० । संखेजभागवड्ढि-हाणी दो वि० संखेजगु० ।

अन्तरायका भङ्ग स्रोधके समान है। इतनी विशेषणा है कि अवक्तत्य पद नहीं है। शेष प्रश्वनियोंका भङ्ग भी स्रोधके समान है। मान कपायबाले जीवोंसे सजरह प्रश्वनियोंका भी अवक्तत्व्य भङ्ग नहीं है। शेष प्रश्वनियोंका भङ्ग ओधके समान है। गाया कपायबाने जीवोंसे सोलह प्रश्वनियोंका स्रवक्तत्व्य पद नहीं है। शेष प्रश्वनियोंका भी भङ्ग स्रोधके समान है। लोभ कपायबाले जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण स्रोर पाँच स्रान्तरायका स्रवक्तव्य पद नहीं है। शेष पदोंका भङ्ग ओधके समान है।

६७०. मत्यज्ञानी और श्रुताज्ञानी जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियों और मिण्यात्वका भक्त सामान्य तिर्यक्कोंके समान है। क्षेप प्रकृतियोंका भक्त ओषके समान है। विभक्तज्ञानी जीवोंमें ध्रुव बन्धवाली प्रकृतियोंका भक्त नारिकयोंके समान है। मिण्यात्व, देवगति, प्रक्लेन्द्रिय जाति, श्रोदािकरारीर, वैक्रियिकरारीर, समचतुरक्लसंस्थान, वैक्रियिक श्राङ्गोपाङ्ग, देवगत्यानुपूर्वी, परचात, उच्छुास, वादर, पर्याप्त और प्रत्येकके श्रवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे संख्यातगुणहृद्धि और संख्यातगुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर श्रमंख्यातगुण हैं। इससे श्रागेके पदोंका भङ्ग ध्रव बन्धवाली प्रकृतियोंके समान है। सातावेदनीय, श्रमातावेदनीय. सात नोकपाय, तीनगति, चार जाति, पाँच संस्थान, श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, तीन श्रानुपूर्वी, श्रातप, उद्योत, दो विहायोगित, त्रस, स्थावर, सूद्म, अपर्याप्त, साधारण, स्थिर श्रादि छह युगल और दो गोत्रकी संख्यातगुणवृद्धि और संख्यात गुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर सबसे स्तोक हैं। इनसे श्रवक्तव्य पदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इससे श्रागेके पदोंका भङ्ग ध्रववन्धवाली प्रकृतियोंके समान है।

हण्श. आभितिवोधिकझानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संभ्वलन, पुरुपवेद, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायके अवक्तव्य पदके वन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे असंख्यातगुणहिद्धके बन्धक जीव संख्यातगुण हैं। इनसे असंख्यातगुण- हानिके बन्धक जीव संख्यातगुण हों। इनसे असंख्यातगुण- हानिके बन्धक जीव

असंखेंजभागविद्ध-हाणी संखेंजगु०। अवद्धि० असं०गु०। णिद्दा-पचला-अद्धक०-भय०-दुगुं०-दोगदि-पंचिदि०-चदुसरीर०-समचदु०-दोअंगी०-यज्ञरिस०-वण्ण०४-दोआणु०-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदे०-णिमि०-तित्थय० सन्वत्थोवा अवत्त०। संखेंजगुणविद्ध-हाणी दो वि० असं०गु०। उवरिमपदा णाणावरणभंगो। सादादिवारस० मणजोगिभंगो। देवायु० ओवं। मणुसायु० देवोवं। आहारदुगं ओवं। एवं ओधिदंस०-सम्मादि०-खइग०-वेदगसम्मा०। णविर खइगे दोआयु० मणुसि० भंगो।

१७२. मणपञ्ज० पंचणा०-चदुदंस०-चदुसंज०-पुरिस० उचा० पंचंत० ओधिभंगो । सेसाणं आभिणि०भंगो । णवरि संखैंज्जं कादव्यं । एवं संजद० ।

९७३, सामाइ०-छेदो० पंचणा०-चदुदंसणा०-लोभमंज०-उचा०-पंचंत० अवत्त० णित्थ । सेसं मणपज्जवमंगो । परिहार० आहारकाय-जोगिभंगो । णवरि आहारदुगं ओघं । सुहुमसंप० अवगदवेदभंगो । णवरि अवत्त० णित्थ । संजदासंजदे धुविगाणं सादादीणं च देवभंगो । णवरि तित्थय० इत्थिभंगो । असंजदे धुविगाणं तिरिक्खोघं । सेसाणं

दोनों ही तुल्य होकर असंख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातभागवृद्धि और संख्यातभागहानिके बन्धक जीय दोनों ही तुल्य होकर संख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर संख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थित पदके वन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। निद्रा, प्रचला, आठ कषाय, भय, जुगुप्सा, दो गति, पक्केन्द्रियजाति, चार शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, दो आङ्गोपङ्ग, वज्रऋपभनाराचसंहनन, वर्णचतुष्क, दो आनुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्तविद्दायोगिति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण और तीर्थङ्करके अवक्तव्य पदके वन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिके वन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर असंख्यातगुणे हें। इनसे आगेक पदोंका भङ्ग झानावरणके समान है। साता आदि वारह प्रकृतियोंका भङ्ग मनोयोगी जीवोंके समान है। देवायुका भङ्ग ओघके समान है। सनुष्यायुका भङ्ग समानय देवोंके समान है। आहारकद्विक्त मङ्ग श्रोघके समान है। इसी प्रकार अवधिदर्शनी, सम्यग्दष्टि, क्षायिकसम्यग्दिष्ट जीवोंमें दो आयुत्रोंका भङ्ग मनुष्यितियोंके समान है।

१७२. मनःपर्ययज्ञानी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनवरण, चार संख्वलन, पुरुपवेद, उच्चगोत्र श्रौर पाँच अन्तरायका भङ्ग श्रवधिज्ञानी जीवोंके समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग श्राभिनिवोधिकज्ञानीजीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि संख्यातगुणा करना चाहिये। इसी- प्रकार संयत जीवोंके जानना चाहिये।

६७३. सामायिकसंयत और छेदोपस्थापनासंयत जीवोंमें पाँच झानावरण, चार दर्शनावरण, लोभ संज्वलन, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायका अवक्तव्य पद नहीं है। शेष भङ्ग मनःपर्ययज्ञानी जीवोंके समान है। परिहारविशुद्धिसंयत जीवोंमें आहारककाययोगी जीवोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि आहारकद्विकका भङ्ग आविष्ठे समान है। सूद्मसाम्परायिक संयत जीवोंमें अपगतवेदी जीवोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि अवक्वव्य पद नहीं है। संयतासंयत जीवोंमें ध्रुववन्धवाली और साता आदि प्रकृतियोंका भङ्ग देवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि तीर्थकर प्रकृतिका भङ्ग स्त्रीवेदी जीवोंके समान है। असंयत जीवोंमें ध्रुववन्धवाली प्रकृतियोंका

## मृलोघं । चक्खुदंस० तसपज्जतभंगी ।

६७४. किणारेस्साए देवगदि०४ सन्वतथो० संखेजजगुणविहु-हाणी दो वि०। अवत्त० असंखेजजगु०। दोविहु-हाणी संखेजजगुणा काह्रेच्या। अविहु० असंखेजजगु०। ओरालि० सन्वत्यो० संखेजजगुणविहु-हा० दो वि०। अवत्त० असं०गु०। उविरिधुवर्मगो। तित्थय० इत्थिमंगो। णविर अवत्त० णित्थ। सेसाणं पगदीणं असंजदमंगो। एवं णील-काऊए। णविर काऊए तित्थय० णिरयमंगो। देवगदिचदुकस्स य अवत्त० संखेजजगु०।

१७५. तेऊए धुविगाणं देवमंगो । थीणिगिद्धि०३-मिच्छ०-बारसक०-देवगदि-ओरालि०-वेउन्वि-वेउन्वि०अंगो०-देवाणु०-तित्थय० सन्वत्थो० अवत्त० । संखेँजगुण-बह्धि-हाणी दो वि० असं०गु० । उविरं धुवर्मगो । सादासाद०-सत्तणोक०-दोगदि-दोजादि-छस्संठा०-ओरालि०श्रंगो०-छस्संघ०-दोआणु०-दोविहा०-आदाव० [उज्जो०-] तस-थावर०-थिरादिछयुग०-णीचागो०-उचा० सन्वत्थो० संखेँजगुणविह्धि-हाणी दो वि० । अवत्त० संखेँजजु० । सेसपदा धुवभंगो । [आहादुगं ओघं । ] एवं पम्माए वि ।

भङ्ग सामान्य तिर्यञ्चोके समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग मूल श्रोघके समान है। चज्जदर्शनवाले जीवोंमें त्रसपर्याप्तकोंके समान भङ्ग है।

हुछ कुष्णलेश्यावाले जीवोंमें देवगतिचतुष्ककी संख्यात गुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिके वन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर सबसे स्तोक हैं। इनसे अवक्तव्यपदके बन्धक जीय असंख्यातगुणे हैं। शेष दो वृद्धि और दो हानिके बन्धक जीव संख्यातगुणे कहने चाहिये। इनसे अवस्थितपदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। श्रीदारिकशरीरकी संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर सबसे स्तोक हैं। इनसे अवक्तव्यपदके बन्धक जीव असंख्यातगुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर सबसे स्तोक हैं। इनसे अवक्तव्यपदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इससे आगेका मङ्ग ध्रुववन्धवाली प्रकृतियोंके समान है। तथि इर प्रकृतिका मङ्ग खीवदी जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य पद नहीं है। शेष प्रकृतियोंका मङ्ग असंयतोंके समान है। इसीप्रकार नील और कापोतलेश्यावाले जीवोंके जानना चाहियं। इतनी विशेषता है कि कापोतलेश्यावाले जीवोंमें तथिङ्कर प्रकृतिका मङ्ग नारिकयोंके समान है तथा देवगित चतुष्कके अवक्तव्यपदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं।

हण्य. पीतलेश्यावाले जीवोंमं प्रववन्धवाली प्रकृतियोंका भङ्ग देवोंके समान हैं। स्त्यानगृद्धि तीन, मिण्यास्व, बारह कपाय, देवगति, औदारिकशरीर, वैकियिकशरीर, वैकियिकश्रांगोपांग,देवगर्यानुपूर्वी और तीथंकरके अवक्तव्यपदके वन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इससे संख्यातगुणशृद्धि और संख्यातगुणशृतिक वन्धक जीव दोनों ही तुस्य होकर असंख्यातगुण हैं। इससे आगेका भंग ध्रुव-वन्धवाली प्रकृतियोंके समान है। सातावेदनीय, असातावेदनीय, सात नोकपाय, दो गति, दो जाति, छह संस्थान, औदारिकआंगोपांग, छह संहनन, दो आनुपूर्वी, दो विहायोगित, आतप, उद्योत, त्रस, स्थावर, स्थिर आदि छह युगल, नीवगोत्र और उच्चगोत्रकी संख्यातगुणशृद्धि और संख्यात गुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुस्य होकर सबसे स्तोक हैं। अवक्तव्यपदके बन्धक जीव संख्यात गुण हैं। श्रेष पदोंका भंग ध्रुववन्धवाली प्रकृतियोंके समान है। आहारकद्विकका भङ्ग आघके समान है। इसी प्रकार पद्मलेश्यावाले जीवोंमें भी जानना चाहियं। इतनी विशेषता है कि औदारिक-

णवरि ओरालि०अंगो० देवगदिमंगो। पंचिदिय-तस० धुविगाण मंगो। णवरि तिण्णि-वेद०-समचदु०-पसत्थवि०-सुभग-सुस्सर-आर्दे०-उच्चा० थीणगिद्धिमंगो।

१७६. सुक्काए पंचणा०-चदुरंसणा०-चदुसंज०-पंचंत० सन्बत्थो० अवत्त० । असंखेंजजगुणवड्डी संखेंजजगु० । असंखेंजजगुणहाणी संखेंजजगु० । संखेंजजगुणवड्डि-हाणी
दो वि० असंखेंजजगु० । संखेंजभागवड्डि-हाणी दो वि० संखेंजजगु० । उविरं देवगदिभंगो ।
पंचदंसणा०-मिच्छ०-बारसक० भय-दुगुं०-दोगदि-पंचिंदि०-चदुसरीर०-समचदु०-दोअंगो०बज्जरिस०-वण्ण०४-दोआणु०-अगु०४-पसत्थवि०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदें०-णिमि०तित्थय० सच्वत्थोवा अवत्त० । संखेंजजगुणवड्डि-हाणी दो वि तु० असंखेंजजगु० । उवरिमपदा णाणावरणभंगो । सादावेद०-जसगि० उचा० ओधिभंगो । आसादवे०-इत्थिवे०णवुंस०-चदुणोक०-पंचसंठा०-पंचसंघ०-अप्पत्तथ०-थिराथिर-सुभासुभ-दूभग-दुस्सरअणादें०-अजस०-णीचा० आणदभंगो । पुरिसवेद० ओधिभंगो । णविर अवत्त० असादभंगो । [ आहारदुगं ओघं । ] अब्भवसिद्धिय-मिच्छा० मिद०भंगो ।

९७७. उवसमसं० पंचणा० चहुदंस०-चहुसंज० पुरिस०-उचा० पंचंत० सम्बत्थोवा अवत्त० । असंखेंज्जगुणवहि-हाणी संखेंज्जगु० । संखेंज्जगुणवही० विसे० । सेसपदा आक्रापाङ्गका अङ्ग देवगतिके समान है। पञ्जीन्द्रियजाति और त्रस प्रकृतिका सङ्ग ध्रवबन्धवाली प्रकृतियोंके समान है। इतनी विशेषता है कि तीन वेद, समचतुरहासंस्थान, प्रशस्तविहायोगित,

सुभग, सुस्वर, आदेय और उच्चगोत्रका भङ्ग स्त्यानगृद्धित्रिकके समान है।

हण्द. शुक्तलेश्यावालं जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संञ्चलन और पाँच अन्तरायके अवक्तत्र्यपदके वन्धक जीव सबसे स्ताक हैं। इनसे असंख्यातगुणदृद्धिके वन्धक जीव संख्यातगुण हैं। इनसे असंख्यातगुणदृद्धिके वन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर असंख्यातगुण हैं। इनसे संख्यातभागदृद्धि और संख्यातभागदृद्धि और संख्यातभागदृद्धिके वन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर संख्यातगुणे हैं। इससे आगेका भन्न देवगतिक समान है। पाँच दर्शनावरण, मिण्यात्व, वारह कपाय, भय, जुगुप्सा, दो गति, पक्चोन्द्रयज्ञाति, चार शरीर, समचतुरस्नसंस्थान, दो अण्जोपाङ्ग, वज्रव्यभनाराचसंहनन, वर्णचतुष्क, दो आनुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्तिवहायोगिति, प्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण और तीर्थकरके अवक्तव्यपदके वन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे संख्यातगुणदृद्धि और संख्यातगुणहानिके वन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर असंख्यातगुण हैं। इससे आगेके पदोंका भंग ज्ञानावरणके समान है। सातावेदनीय, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका भंग अवधिज्ञानी जीवोंके समान है। असातावेदनीय, स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, चार नोकपाय, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, अप्रशस्तविहायोगिति, स्थिर, अस्थिर, ग्रुभ, अग्रुभ, दुर्भग, दुर्भग, दुर्मय, अनादेय, अयशःकीर्ति और नीचगोत्रका भंग आनत करपके समान है। पुरुपवेदका भंग अवधिज्ञानी जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्यपदका भंग असातावेदनीयके समान है। आहारकिष्ठकका भंग ओघके समान है। अभव्य और मिण्यादृष्टि जीवोंमें मत्यज्ञानी जीवोंके समान मंग है।

८७७. उपशामसम्यग्द्रष्टि जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन, पुरुषवेद, उज्ञ-गोत्र और पाँच ज्ञन्तरायके अयक्तव्य पदके वन्धक जीव-सबसे स्तोक हैं । इनसे असंख्यातगुणवृद्धि और असंख्यातगुणहानिक वन्धक जीव संख्यातगुण हैं । इनसे संख्यातगुणवृद्धिके वन्धक जीव विशेष अधिक ओधिमंगो । आहारदुग-तित्थय ० ऍक्तत्थ भाणिद्व्यं । सेसाणं पगदीणं ओधिमंगो । सासणे णिरयभंगो । सम्मामिच्छा ० देव ० भंगो । सण्णीसु मणजोगिमंगो ।

६७८, असणीस धुविगाणं सन्बत्थोवा संखेज गुणविडु-हाणी दो वि तु० । संखेज जमागविडु-हाणी दो वि त असंव्यु । असंखेज मागविडु-हाणी दो वि त अणंतगु० । अविडु असंखेज गु० । सेसाणं परियत्तमाणियाणं पगदीणं सन्बत्थोवा संखेज गुणविडु-हाणी दो वि० । संखेज मागविडु-हाणी दो वि० असंखेज गु० । अवत्त० अणंतगु० । अवित्त० अणंतगु० । अवित्व । पहंदि० — आदाव-थावर० सुदुम-साधार० सन्वत्थोवा संखेज गुणविडु-हाणी दो वि० । संखेज मागविडु हाणी दो वि० । संखेज मागविडु हाणी दो वि० । असंव्यु । अवित्व धुवमंगो । मणुसगदिदुग-उचा० संखेज गुणविडु-हाणी णित्थ । सेसं च भाणिदव्यं । एवं अप्पावहुगं समत्तं ।

एवं वड्डिबंधो समत्तो अज्झवसाणसमुदाहारो

९७९. अज्झवसाणसमुदाहारे ति तत्थ इमाणि तिण्णि अणियोगदाराणि-पगदिसमुदा-हारो हिदिसमुदाहारो तिन्वमंददा ति ।

हैं। रोप पदोंका भङ्ग अवधिक्षानी जीवोंके समान है। इतनी (वशेषता है कि आहारकदिक और तीर्थङ्कर इनको एक जगह कहना चाहिये। रोप प्रकृतियोंका भङ्ग अवधिक्षानी जीवोंके समान है। सासादन-सम्यग्दृष्टि जीवोंमें नारिकयोंके समान भङ्ग है। सम्यग्मिण्यादृष्टि जीवोंमें देवोंके समान भङ्ग है। संज्ञी जीवोंमें मनोयोगी जीवोंके समान भङ्ग है।

हिंद्र श्रसं जी वों में ध्रुव्यन्ध्याली प्रकृतियों की संख्यातमुण दृद्धि श्रौर संख्यातमुण हानिके वन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर सबसे स्ताक हैं। इनसे असंख्यातमागवृद्धि श्रौर संख्यातमाग हानिके वन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर असंख्यातमुण हैं। इनसे असंख्यातमागवृद्धि श्रौर असंख्यातमाग हानिके वन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर श्रमन्तगुण हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुण हैं। शेप परिवर्तनमान प्रकृतियों की संख्यातगुण वृद्धि श्रौर संख्यातगुण हानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर सबसे स्तोक हैं। इनसे सबक्तव्य पदके बन्धक जीव अनन्तगुण हैं। इससे श्रामेक पदोंका भङ्ग झानावरण के समान हैं। इतनी विशेषता है कि चार श्रायु और वेक्रियिक छहका भङ्ग सामान्य तिर्यक्षोंके समान हैं। एकेन्द्रियजाति, श्रातप, स्थावर, सूदम और साधारण की संख्यातगुण वृद्धि और संख्यातगुण हानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर सबसे स्तोक हैं। इनसे संख्यातगाग वृद्धि और संख्यातगाग हानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर सबसे स्तोक हैं। इनसे संख्यातभाग वृद्धि और संख्यातभाग हानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर सबसे स्तोक हैं। इनसे संख्यातभाग वृद्धि और संख्यातभाग हानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर श्रम खानि श्री हो उत्था तुल्य होकर सबसे खानि श्री उत्था तुल्य होकर स्त्र श्री संख्यातगाग होनिक बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर श्रम खानि श्री हो उत्था तुल्य होकर श्रम खानि श्री है। श्री पद कहने चाहिये।

इस प्रकार अल्पवहुत्व समाप्त हुआ। इस प्रकार वृद्धिवन्ध समाप्त हुआ।

#### अध्यवसानसमुदाहार

१७६. अध्यवसानसमुदाहारका प्रकरण है। उसमें ये तीन अनुयोगद्वार होते हैं — प्रकृतिस• मुदाहार, स्थितिसमुदाहार और तीव्रमन्दता।

# पगदिसमुदाहारो

६८०, पगदिसमुदाहारे ति तत्थ इमाणि दुवे अणियोगद्दाराणि-पमाणाणुगमो अप्पाबहुरो ति ।

## पमाणाणुगमो

६८१. पमाणाणुगमो पंचणाणावरणीयाणं असंखेड्जा लोगा द्विदिवंधज्झवसाणद्वा-णाणि । एवं सन्वासिं पगदीणं याव अणाहारमे ति णादव्वं । णविर अवगदे सुहुमसंप-राह्मेसु अंतोसुहुत्तमें ताणि अज्जवसाणहाणाणि ।

एवं पमाणाणुगमी समत्ती।

## अपाबहुअं

६८२. अप्पाबहुगं दुनिहं—सत्थाणअप्पाबहुगं चेन परत्थाणअप्पाबहुगं चेन। सत्थाणअप्पाबहुगं पगदं। दुनिधो णिहेसो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण पंचणाणाधर-णीयाणं सिरसाणि अन्झनसाणहाणाणि । सन्नत्थोनाणि थीणिगिद्धि०३ हिदिबंधन्झनसा-णहाणाणि । जिहा-पचला० हिदिबंधन्झनसाणहाणाणि निसेसाहियाणि । चहुदंसणा० हिदिबंधन्झनसाणहाणाणि निसे० । सन्नत्थोना साद्स्स हिदिबंधन्झनसाणहाण० । असादस्स हिदिबंधन्झनसाणहाणाणि असंखेंन्जगुणाणि । सन्नत्थोना० हस्सरदि० हिदि-वंधन्झनसाण० । पुरिस० हिदिबं० निसे० । इत्थि० हिदिबं० असंखेंन्जगुणाणि । णवुंस०

#### प्रकृतिसमुदाहा**र**

६८०. प्रकृतिसमुदाहारका प्रकरण है। उसमें ये दो अनुयोगद्वार होते हैं—प्रमाणानुगम ऋौर अस्पबहुत्व ।

#### प्र**माणा**नुगम

६न१. प्रमाणानुगम - पाँच झानावरणीयके ऋसंख्यातलोक प्रमाणस्थितिवन्धाध्यवसान स्थान होते हैं। इसी प्रकार सभी प्रकृतियोंके अनाहारकमार्गणा तक जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि ऋषगतवेदी और सूहमसाम्परायिक संयत जीयोंमें अन्तर्मुहूर्त प्रमाण स्थिति ऋष्ययसागस्थान होते हैं। इस प्रकार प्रमाणानुगम समाप्त हुआ।

#### अल्पबहुरव

६८२. ऋल्पबहुत्व दो प्रकार का है—स्वस्थान अल्पबहुत्व और परस्थान अल्पबहुत्व। स्वस्थान अल्पबहुत्व राज्यणहैं। उसकी अपेचा निर्देश दो प्रकार हैं —ओप और आदेश। ओपसे पाँच ज्ञानावरणीयके अध्यवसानस्थान समान होते हैं। स्त्यानगृद्धित्रिकके स्थितिबन्धाध्यवसान स्थान सबसे स्तोक होते हैं। इनसे निद्रा और अचलाके स्थितिबन्धाध्यवसान स्थान विशेष अधिक होते हैं। इनसे चार दर्शनावरणके स्थितिबन्धाध्यवसान स्थान विशेष अधिक होते हैं। सातावदनीयके स्थितिबन्धाध्यवसान स्थान सबसे स्तोक होते हैं। इनसे असातावदनीयके स्थितिबन्धाध्यवसान स्थान असंख्यातगुणे होते हैं। हास्य और रित्रके स्थितिबन्धाध्यवसान स्थान असंख्यान स्थान सबसे स्तोक होते हैं। इनसे पुरुषवेदके स्थितबन्धाध्यवसान स्थान असंख्यान स्थान स्थान स्थान असंख्यान स्थान स्थान असंख्यान स्थान असंख्यान स्थान असंख्यान स्थान असंख्यान स्थान स्थान असंख्यान स्थान स्यान स्थान स्य

हिदिबं० असंखें । अरिद-सोग० हिदिबं० विसे०। भय-दुगुं० हिदिबं० विसे०। अणंताणुवंधि०४ हिदिबं० असंखें ज्ञ०। अपचक्खाणा०४ हिदिबं० विसे०। पचक्खाणा०४ हिदिबं० विसे०। कोधसंज० हिदिबं० विसे०। माणसंज० हिदिबं० विसे०। कोधसंज० हिदिबं० विसे०। माणसंज० हिदिबं० विसे०। माणसंज० हिदिबं० विसे०। लोभसंज० हिदिबं० विसे०। मच्छ० हिदिबं० असंखें ज्जगु०। सच्वत्थोवा तिरिक्ख मणुसायूणं हिदिबं०। णिरयागुग० हिदिबं० असंखें ज्जगु०। हिदिबं० विसेसा०। सच्वत्थोवा देवगदिणामाए हिदिबं०। मणुसगदिणामाए हिदिबं० असंखें ज्जगु०। णिरयगदि० हिदिबं० असंखें ज्जगु०। तिरिक्ख गदि० हिदिबं० विसे०। सच्वत्थोवा चदुरिदि० हिदिबं०। तीइदि० हिदिबं० विसे०। सच्वत्थोवा चदुरिदि० आसंखें ज्जगु०। पंचिदिय० हिदिबं० विसे०। सच्वत्थोवा० आहारसरीर० हिदिबं०। ओरालि० हिदिबं० असंखें ज्जगु०। वेउच्चिय० हिदिबं०। विसे०। तेजइगादिणव० हिदिबं० विसे०। सच्वत्थोवाणि समचदु० हिदिबं०। णग्गोद० हिदिबं० असंखें ज्जगु०। सादिय० हिदिबं० असंखें ज्जगु०। सुज्ज० हिदिबं० असंखें हिद्वं० असंखें ज्जगु०। सादिय० हिदिबं० असंखें ज्जगु०। सुज्ज० हिदिबं० असंखें

तगुणे होते हैं। इनसे अरित और शोकके स्थितिबन्धाध्यसान स्थान विशेष अधिक होते हैं। इनसे भय और जुगुष्साके स्थिति वन्धाध्यवसान स्थान विशेष अधिक होते हैं। इनसे अनन्तानुबन्धी चतुष्कके स्थितिवन्धाध्ययसान स्थान असंख्यातगुणे होते हैं। इनसे अप्रत्याख्यानावरण चतुष्कके स्थितिवन्धाध्यवसान स्थान विशेष ऋधिक होते हैं। इनसे प्रत्याख्यानावरण चतुष्कके स्थितिबन्धा-ध्यवसान स्थान विशेष अधिक होते हैं। इनसे क्रोध संज्वलनके स्थितिबन्धाध्यवसान स्थान विशेष अधिक होते हैं। इनसे मान संज्वलनके स्थितिबन्धाध्यवसान स्थान विशेष अधिक होते हैं। इनसे मायासंब्वलनके स्थितिबन्धाध्यवसान स्थान विशेष अधिक होते हैं। इनसे लोभ-संज्वलनके स्थितिवन्धाध्यसानस्थान विशेष अधिक होते हैं। इनसे मिध्यालके स्थितिबन्धाध्य-वसानस्थान असंख्यातगुणे होते हैं। तिर्यख्रायु और मनुष्यायुके स्थितिवन्धाध्यवसान स्थान सबसे स्तोक होते हैं। इनसे नरकायुके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे होते हैं। इनसे देवायुके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक होते हैं । देवगतिनामकर्मके स्थितिबन्धाध्यवसान-स्थान सबसे स्तोक होते हैं। इससे मनुष्यगतिके स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे होते हैं। इनसे नरकगतिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे होते हैं। इनसे तिर्यश्चगतिके स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक होते हैं । चतुरिन्द्रिय जातिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान सबसे स्तोक होते हैं । इनसे बीन्द्रिय जातिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक होते हैं । इनसे द्वीन्द्रिय जातिके स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक होते हैं । इनसे एकेन्द्रिय जातिके स्थितिवन्याध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे होते हैं। इनसे पञ्चेन्द्रिय जातिके स्थितिवन्धाध्यवसान-स्थान विशेष अधिक होते हैं। आहारकशरीरके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान सबसे स्तोक होते हैं । इनसे ऋौदारिकशरीरके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे होते हैं । इनसे वैक्रियिक शरीरके स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक होते हैं। इनसे तैजसशरीर आदि नौ प्रकृतियोंके स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक होते हैं । समचतुरस्रसंस्थानके स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान सबसे स्तोक होते हैं। इनसे न्यब्रोधपरिमण्डलसंस्थानके स्थितिबन्धाध्यवसान स्थान असंख्यात-गुणे होते हैं । इनसे स्वातिसंस्थानके स्थितिबन्धाध्ययसानस्थान ऋसंख्यातगुणे होते हैं । इनसे ्रदत्तकसंस्थानके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंस्थातगुणे होते हैं । इनसे वामन संस्थानके ज्जगु० । वामणसंठा० द्विदिवं० असंखेजजगु० । हुंडसं० द्विदिवं० असंखेजजगु० । सन्व-त्योवा० आहारसरीरअंगो० द्विदिवं० । ओरालिय० श्रंगो० द्विदिवं० असंखेजजगु० । वेउन्तिय० अंगो० द्विदिवं० विसे० । सन्वत्योवा० वज्जरिस० द्विदिवं० । एवं यथा संठाणं तथा संघडणं । यथा गदो तथा आणुपुन्वी । सन्तत्थोवा० पसत्थवि० द्विदिवं० । अप्पसत्थ० द्विदिवं० असंखेजगु० । सन्वत्थोवा० थावरणामाए द्विदिवं० । तस० द्विदिवं० विसे० । सन्वत्थोवा० सुदृम-अपजन्त-साधारण-थिर-सुभ-सुस्सर-आदेंज-जसिं०-उच्च० द्विदिवं० । तप्पिडपक्षाणं द्विदिवं० असंखेजगु० । पंचंतरा० द्विदिवं० सरि-साणि । एवं ओघमंगो कायजोगि-कोधादि०४-अचक्खुदं०-भवसि०-आहारगे ति ।

हट३. णेरइएस सन्वत्थोवा थीणभिद्धि०३ हिदिबं०। छदंसणा० विसे०। सादा-मादा० ओघमंगो। सन्वत्थो० पुरिस०। हस्स रदि० हिदिबं० असंखे०। [इत्थि०। देहिदवं० असंखेजि०। ] णवुंस० हिदिबं० असंखेजिगु०। अरदि-सोग० हिदिबं० विसे०। भय०-दु० हिदिबं० विसे०। अणंताणुबंधि०४ हिदिबं० असंखेजिगु०। बारसक० हिदिबं० विसे०। मिन्छत्त० हिदिबं० असंखेजिगु०। सन्वत्थो० मणुसग० हिदिबं०।

स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे होते हैं। इनने हुण्डसंस्थानके स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान स्थान असंख्यातगुणे होते हैं। आहारकशरीरआङ्गोपाङ्गके स्थितिवन्ध्यवसानस्थान सवसे स्तोक हैं। इनसे औदारिकशरीर आङ्गोपाङ्गके स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं। इनसे वैकििषकशरीर आङ्गोपाङ्गके स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं। वजऋषमनाराचसंहननके स्थितवन्धाध्यवसानस्थान सवसे स्तोक हैं। ऐसे ही विसप्रकार संस्थानोंकी अपेचा अस्पबहुत्व कह आये हैं, उसीप्रकार संहननोंकी अपेचा अस्पबहुत्व कह आये हैं, उसीप्रकार संहननोंकी अपेचा अस्पबहुत्व जानना चाहिये। तथा जिसप्रकार चारोंगतियोंकी अपेचा अस्पबहुत्व कहा है, उसीप्रकार आनुपूर्वियोंकी अपेक्षा अत्पबहुत्व जानना चाहिये। शशस्तविद्यायोगितके स्थितवन्धाध्यवसानस्थान सवसे स्तोक हैं। इनसे अप्रशस्तविद्यायोगितिके स्थितवन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं। स्थावरनामकर्मके स्थितवन्धाध्यवसान
स्थान सबसे स्तोक हैं। इनसे त्रसनामकर्मके स्थितवन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं। सूद्म,
अपर्याप्त, साधारण, स्थिर, ग्रुभ, सुस्त्रर, आदेय, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रके स्थितवन्धाध्यवसानस्थान सवसे स्तोक हैं। इनसे इनकी प्रतिपक्ष प्रकृतियोंके स्थितवन्धाध्यवसानस्थान सवसे स्तोक हैं। इसी प्रकार ओधिके समान
काययोगी, क्रोधाति चार कषायवाले, अचछःदर्शनी, भज्य और आहारक जीवोंके जानना चाहिये।

६५३. नारिकयोंमें स्त्यानगृद्धित्रिकके स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान सवसे स्तोक हैं। इनसे अह दर्शनावरणके स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं। सातावेदनीय और असाता वेदनीयका भंग त्रोपके समान है। पुरुषवेदके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान सबसे स्तोक हैं। इनसे हास्य और रितके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं। इनसे स्थितबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं। इनसे आवेदके स्थितबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं। इनसे अरित और रिकके स्थितबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं। इनसे भय और जुगुप्साके स्थितबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं। इनसे भय और जुगुप्साके स्थितवन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं। इनसे वारह कषायोंके स्थितवन्धाध्यावसानस्थान विशेष अधिक हैं। इनसे अनन्तानुबन्धी चारके स्थितबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं। इनसे वारह कषायोंके स्थितवन्धाध्यावसानस्थान विशेष अधिक हैं। इनसे मिण्यात्यके स्थितवन्धाध्यावसानस्थान त्रिकेष अधिक

तिरिक्खग० द्विदिवं० असंखेंज्जगु० । सेसाणं पगदीणं ओघं । एवं सत्तसु पुढवीसु० ।

६८४. तिरिक्खेसु दंसणावरणीय-वेदणीय-मोहणीय०णिरयमंगो । णवरि मोहणीयअवचक्खाणा०४ द्विदिबं० विसे० । अट्टकसा० द्विदिबं० विसे० । मिच्छ० द्विदिबं०
असंखेंजजाु० । सन्वत्थोवा० तिरिक्ख-मणुसायूणं द्विदिबं० । देवायु० द्विदिबं० असंखेंजजाु० । णिरयायु० द्विदिबं० असंखेंजजाु० । सन्वत्थो० देवगदि० द्विदिबं० मणुसगदि०
द्विदिबं० असंखेंजजाु० । तिरिक्खगदि० द्विदिबं० असंखेंजजाु० । णिरयगदि० द्विदिबं०
असंखेंजजाु० । सन्वत्थो० चदुरिंदि० द्विदिवं० । तीइंदि० द्विदिबं० विसे० । बेइंदि०
द्विदिवं० विसे० । एइंदि० द्विदिवं० विसे० । पंचिदि० द्विदिवं० असंखेंजजाु० ।
सन्वत्थो० ओरालि० द्विदिवं० । वेउन्वि० द्विदिवं० असंखेंजजाु० । तेजा०-क० द्विदिवं० विसे० । संठाणं संघडणं ओघं । णवरि खीलियसंघडणादो असंपत्तसेवट्ट० विसे० । सेसाणं ओघं । एवं पंचिदियतिरिक्खपज्जत्त-जोणिणीसु ।

हद्र्यं पंचिद्यितिरिक्खअपज्जत्तगेसु सञ्वत्थोवाणि सादावेद व हिदिबं । असादा व हिद्दिबं असंखें जिल्ला । सञ्चत्थोवा पुरिस व हिद्दिबं । इत्थिवे व हिद्दिबं असंखें जिल्ला । स्वत्थोवा व पुरिस व हिद्दिबं । इत्थिवे व हिद्दिबं असंखें जिल्ला । श्राप्त व हिद्दिबं असंखें जिल्ला । अरिद व सामस्थान सबसे स्तोक हैं । इनसे तिर्यञ्चगतिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं । शेष प्रकृतियोंका भंग ओवके समान है । इसी प्रकार सातों पृथिवियोंमें जानना चाहिये ।

६८४. तिर्यक्कोंमें दर्शनावरणीय, वेदनीय और मोहनीयका भंग नारिकयोंके समान है। इतनी विशेषता है कि मोहनीयमें अप्रत्याख्यानावरण चारके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष श्रधिक हैं। इनसे आठ कषायोंके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं। इनसे मिध्यात्वके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं । तिर्थक्कायु और मनुष्यायुके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान सबसे स्तोक हैं। इनसे देवायुके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं। इनसे नरकायुके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं। देवगतिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान सबसे स्तोक हैं । इनसे मनुष्यगतिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं । इनसे तिर्येक्कगतिके स्थिति-बन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं । इनसे नरकगतिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान ऋसंख्यातगुणे हैं । चतुरिन्द्रियज्ञातिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान सबसे स्तोक हैं । इनसे त्रीन्द्रियजातिके स्थिति-वन्धाध्यवसानस्थान विशेष ऋधिक हैं। इनसे द्वीन्द्रिय जातिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं। इनसे एकेन्द्रियजातिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं। इनसे पञ्चेन्द्रिय-जातिके स्थितिवन्याध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं। औदारिक शरीरके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान सवसे स्तोक हैं। इनसे वैकियिकशारीरके स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं। इनसे तैज्ञस ऋौर कार्मणशरीरके स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान विशेष ऋधिक हैं । संस्थानों और संहननोंका भक्क त्रोचके समान है। इतनी विशेषता है कि इनमें कीलकसंहननसे असम्प्राप्तास्पाटिकासंहननके स्थितिवन्याध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं। शेष प्रकृतियोंका भंग श्रोघके समान है। इसी प्रकार पञ्जेन्द्रियतिर्यञ्जपर्याप्त और पञ्जोन्द्रियतिर्यञ्जयोनिनी जीवोंमें जानना चाहिये।

६८५. पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चत्रपर्याप्त जीवोंमें सातावेदनीयके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान सबसे स्तोक हैं। इनसे असातावेदनीयके स्थितिवन्धाध्ययसानस्थान श्रसंख्यातगुणे हैं। पुरुषवेदके स्थितिवन्धाध्ययसानस्थान सबसे स्तोक हैं। इनसे स्वीवेदके स्थितिबन्धाध्ययसानस्थान सबसे स्तोक हैं। इनसे स्वीवेदके स्थितिबन्धाध्ययसानस्थान श्रहांख्यातगुणे हैं। इनसे नपुंसकवेदके

सोग० हिदिबं० विसे० । भय०-दुगुं० हिदिबं० विसे० । सोलसक० हिदिबं० असंखें-जगु० । मिच्छत्त० हिदिबं० असंखेंजगु० । सन्वत्थोवाणि मणुसगदि० हिदिबं० । तिरिक्खगदि० हिदिबं० असंखेंजगु० । सन्वत्थोवाणि पंचिदि० हिदिबं० । चटुरिंदि० हिदिबं० असंखेंजगु० । तीइंदि० हिदिबं० असंखेंजगु० । बीइंदि० हिदिबं० असंखेंजगु० । बीइंदि० हिदिबं० असंखेंजगु० । एइंदि० हिदिबं० असंखेंजगु० । संठाणं संघडणं विहायगदी ओघं । सन्वत्थो० तसणामाए हिदिबंधज्य । थावर० हिदिबं० असंखेंजगु० । सेसाणं ओघं । एवं मणुसअपज्जत्त-सन्वविगलिंदिय-पंचिंदिय-तसअपज्ज० सन्वएइंदि०-पंचकायाणं च ।

९८६. मणुसेस हेड्डिझियो ओधभंगो । गदिणामाए जादिणामाए च तिरिक्खोघं। णवरि वेउन्विय • असंखेजजगु • । सेसं तिरिक्खोघं।

९८७. देवाणं णिरयभंगो । णवरि सन्वत्थोवा० एइंदि० द्विदिवं० । पंचिदिय० द्विदिवं० । एवं तस-थावराणं । भवणवा० वाणवेत० - जोदिसि० -- सोधम्मीसाणेसु सन्वत्थो० पंचिदिय० द्विदिवं० । एइंदि० द्विदिवं० असंखें जगु० । एवं तस-थावराणं । सन्वत्थोवा असंपत्तसेवद्व० द्विदिवं० । खीलिय० विसे० । सेसाणं देवोघं । सणक्रमार-

स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान ऋसंख्यातगुणे हैं। इनसे अरित और शोकके स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं। इनसे भय और जुगुष्साके स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान विशेष ऋधिक हैं। इनसे सोलह कषायोंके स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान ऋसंख्यातगुणे हैं। इनसे मिध्यात्वके स्थितिवन्धाध्य-सानस्थान ऋसंख्यातगुणे हैं। मनुष्यगितिके स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान सबसे स्तोक हैं। इनसे तिर्यक्षगितिके स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान स्थान सबसे स्तोक हैं। इनसे चतुरिन्द्रियजाितके स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान ऋसंख्यातगुणे हैं। इनसे ब्रीन्द्रियजाितके स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान ऋसंख्यातगुणे हैं। इनसे ब्रीन्द्रियजाितके स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान ऋसंख्यातगुणे हैं। इनसे ब्रीन्द्रियजाितके स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान ऋसंख्यातगुणे हैं। इनसे एकेन्द्रियजाितके स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान ऋसंख्यातगुणे हैं। संस्थान, संख्नान और विहायोगितिका भङ्ग श्रोषके समान है। ऋसनामकर्मके स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान सबसे स्तोक हैं। इनसे स्थावरनामकर्मके स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान ऋसंख्यातगुणे हैं। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग श्रोषके समान है। इसी प्रकार मनुष्यश्रपर्याप्त, सव विकलेन्द्रिय, पक्रीन्द्रयश्रपर्याप्त, त्रसन्त्रपर्यान, सव एकेन्द्रिय और पाँच स्थावरकाियक जीवोंके जानना चाहिये।

ह्रद. मनुष्योंमें नीचेकी प्रकृतियोंका भङ्ग खोघके समान हैं। गतिनामकर्म श्रीर जाति-नामकर्मका भङ्ग सामान्य तिर्यक्कोंके समान हैं। इतनी विशेषता है कि वैक्रियिकशरीरके स्थितिबन्धा-ध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं। शेष भङ्ग सामान्य तिर्यक्कोंके समान है।

६५७. देघोंमें सामान्य नारिकयोंके समान भङ्ग हैं। इतनी विशेषता हैं कि एकेन्द्रियजातिके स्थितिबन्धाध्ययसानस्थान सबसे स्तोक हैं। इनसे पञ्चेन्द्रियजातिके स्थितिबन्धाध्ययसानस्थान विशेष अधिक हैं। इसी प्रकार प्रस और स्थायर प्रकृतियोंका अल्पबहुत्य जानना चाहिये। भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी और सौधर्मेंशानकस्पके देवोंमें पञ्चेन्द्रियजातिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान सबसे स्तोक हैं। इनसे एकेन्द्रिय जातिके स्थितिबन्धाध्ययसानस्थान असंख्यातगुणे हैं। इसी प्रकार त्रस और स्थावर प्रकृतियोंकी अपेक्षा जानना चाहिये। असम्प्राप्तस्थानिकासंहननके स्थितिबन्धाध्यवसान स्थान सबसे स्तोक हैं। इनसे कीलकसंहननके स्थितिबन्धाध्यवसान स्थान विशेष

याव ० उत्रिरिमोवज्जा पहमपुहवीमंगो । अणुद्दिस याव सन्त्रद्वेसु सन्त्रत्थो ० हस्स-रदीणं द्विदिवं ० । अरदि-सोग ० द्विदिवं ० असंखेज्जगु ० । पुरिस ०-भय ०-दुगुं ० विसे ० । बारसक ० द्विदिवं ० असं ० गु ० । सेसाणं णिरयभंगो । एवं एस भंगो आहार ०-आहारमि ०-आभि ० सुद ० – ओधि ० - मणपज्जव ० - सन्त्र संजद-ओधिदं ० - सम्मादि ० खड्ग ० – वेदगस ० - उत्तरमस ० - सासण ० - सम्मामि च्छा ० ।

हट्ट, पंचिदि०-तस०२-पंचमण०-पंचविच०-पुरिस०-चक्खुदं०-सण्णि ति मूलोघं। ओरालियका० मणुसिमंगो । ओरालियमि० तिरिक्खअपज्जत्तमंगो । णविर देवगदि०४ अत्थ । वेउन्वि० देवोघं। एवं चेव वेउन्वियमिस्स० । कम्मइ०-अणाहारगे तिरिक्ख-अपज्जत्तमंगो । विसेसो ओघेणेव साघेदन्वं । इत्थिवे० पंचिदियमंगो । किंचि विसेसो० । णवुंसगेसु ओघं । जादिणामेसु विसेसो० । अवगदवेदे ओघेण साघेदन्वं । एवं सुहुम-संपरा० । मदि०-सुद०-विमंगणाणि-अन्भवसिद्धिय-मिन्छा० ओघं । णविर सम्मत्तपगदीसु विसेसो । असंजदे ओघं । आयु० विसेसो । एवं तिण्णिले० । णविर किंचि विसेसो ।

६८६. तेऊए मोहणीयो ओघो । सेसाणं सोधम्मभंगो । एवं पम्माए वि । णवरि

श्रधिक हैं। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है। सानत्कुमार कल्पसे लंकर उपरिम-ग्रैंवयक तकके देवोंमें पहली पृथ्वीके समान भङ्ग है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें हास्य और रितके स्थितिबन्धाध्यवसान स्थान सबसे स्तोक हैं। इनसे अरित और शोकके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान श्रमांख्यातगुणे हैं। इनसे पुरुषवेद, भय और जुगुप्साके स्थिति-वन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं। इनसे बारह कपायोंके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यात-गुणे हैं। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग नारिकयोंके समान है। इसी प्रकार यह भङ्ग आहारककाययोगी आहा-रकमिश्रकाययोगी, आभिनिबोधिकझानी, श्रुतझानी, अवधिज्ञानी, मनःपर्ययज्ञानी, सब संयत, अवधि, दर्शनी, सम्यग्दृष्टि, चायिकसम्यग्दृष्टि, वेदकसम्यग्दृष्टि, उपशमसम्यग्दृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि बीवोंके जानना चाहिये।

हन्न. पञ्चेन्द्रियद्विक, त्रसद्विक, पाँच मनोयोगी, पाँच वचनयोगी, पुरुष्वेदी, चलुदर्शनी और संज्ञी जीवोंमें मूल क्रांचके समान भङ्ग है। क्रोदारिककाययोगी जीवोंमें मनुष्टियनियोंके समान भङ्ग है। क्रोदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें तिर्यक्चअपर्याप्तकोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि इनमं देवगतिचतुष्क है। वैक्रियिककाययोगी जीवोंमें सामान्य देवोंके समान भङ्ग है। इसीप्रकार वैक्रियिकमिश्रकाययोगी जीवोंके जानना चाहिये। कार्मएकाययोगी और अनाहारक जीवोंमें तिर्यक्चअपर्याप्तकोंके समान भङ्ग है। जो विशेष हो उसे आवसे साथ लेना चाहिये। स्त्रीवेदी जीवोंमें पञ्चेन्द्रियके समान भङ्ग है। किन्तु कुछ विशेषता है। नपुंसकवदी जीवोंमें अगवके समान भङ्ग है। किन्तु जातिनामककर्मकी प्रकृतियोंमें कुछ विशेषता है। अपगतवेदी जीवोंमें आयके समान साथ लेना चाहिये। इसीप्रकार सूच्मसाम्परायसंगत जीवोंके जानना चाहिये। मत्यज्ञानी, श्रताज्ञानी, विभङ्गज्ञानी, अभव्य और मिथ्यादृष्टि जीवोंमें ओवके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि सम्यक्चसम्बन्धी प्रकृतियोंमें विशेषता जाननी चाहिये। असंगतोंमें खोषके समान भङ्ग है। किन्तु चार आयुक्योंमें विशेषता जाननी चाहिये। इसीप्रकार तीन लश्यावाल जीवोंके जानना चाहिये। किन्तु इनमें कुछ विशेषता है। जाननी चाहिये। इसीप्रकार तीन लश्यावाल जीवोंके जानना चाहिये। किन्तु इनमें कुछ विशेषता है।

६५६. पीतलेश्यावाले जीवोंमें मोहनीयका भङ्ग छोयके समान है। शेप प्रकृतियोंका भङ्ग सौधर्मकरूपके समान है। इसीप्रकार पद्मलेश्यायाले जीवोंमें भी जानना चाहिये। इतनी विशेषता है सहस्सारमंगो । सुकाए ओघं । जबिर जामे विसेसो । सब्बत्थोबा० मणुसगिद० द्विदिबं० । देवगिद० द्विदिबं० विसे० । अथवा देवगिद० बंध० थोवा० । मणुसगिद० द्विदिबं० असंखेंज्जगु० । एवं सब्वणामाणं जेदच्वं । असण्णीसु मोहणीयं अपज्जत्तभंगो । चदु० आयु० तिरिक्खोघं । सेसाणं तिरिक्खोघं । एवं सत्थाणअप्पाबहुगं समत्तं

हह ०. परत्थाणअप्पाबहुगं पगदं । दुविघो णिहसो — ओघेण आदेसेण य । ओघेण सच्वत्थोवाणि तिरिक्ख-मणुसायूणं द्विदिवंधन्झवसाणद्वाणाणि । णिरयायुगस्स द्विदिवंध-ज्यवसाणद्वाणाणि असंखें ज्जगुणाणि । देवायु० द्विदिवंध० विसेसाहियाणि । आहार-सरीर० द्विदिवं० असंखें ज्जगु० । देवगदि० द्विदिवं० असंखें ज्जगु० । हस्स-रदीणं द्विदिवं० विसेसा० । पुरिस० द्विदिवं० विसे० । जस० उचा० द्विदिवं० विसे० । सादावे० द्विदिवं० असंखें ज्जगु० । मणुसगदि० द्विदिवं० विसे० । इत्थिवे० द्विदिवं० विसेसा० । णिरयगदि० द्विदिवं० असंखें ज्जगु० । णद्यंस० द्विदिवं० विसे० । अरिद-सोग० अजस० द्विदिवं० विसे० । तिरिक्खगदि-णीचागो० द्विदिवं० विसेसा० । ओरालिय० द्विदिवं० विसे० । वेजिव्वय० द्विदिवं० विसे० । तेजा० कम्म० द्विदिवं० विसे० । भय-दुगुं० द्विदिवं०

कि इनमें सहस्रारकल्पके समान भङ्ग है। शुक्रलेश्यायाले जीयोंमें छायके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि नामकर्ममें कुछ विशेषता जाननी चाहिये। मनुष्यगतिके स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान सबसे स्तोक हैं। इनसे देवगतिके स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान विशेष ऋधिक हैं। अथवा देवगिहे के स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान सबसे स्तोक हैं। इनसे मनुष्यगतिके स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं। इसीप्रकार सब नामकर्मकी प्रकृतियोंके विषयमें जानना चाहिये। असंहियोंमें मोहनी-यकर्मका भङ्ग अपर्याप्तकोंके समान है। चारों आयुत्रोंका भङ्ग सामान्य तिर्यक्कोंके समान है। चारों आयुत्रोंका भङ्ग सामान्य तिर्यक्कोंके समान हैं — तथा शेष प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य तिर्यक्कोंके समान है।

#### इस प्रकार स्वस्थान अल्पबहुत्व समाप्त हुन्ना।

हि०. परस्थान श्राल्यबहुत्वका प्रकरण है। उसकी श्रपेत्ता निर्देश दो प्रकारका है—श्रोष श्रोर श्रादेश। श्रोषसे तिर्यञ्चायु श्रोर मनुष्यायु के स्थितिबन्धाध्यवसान स्थान सबसे स्तोक हैं। इनसे तरकायुके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान श्रासंख्यातगुणे हैं। इनसे देवायुके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान श्रासंख्यातगुणे हैं। इनसे देवायुके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान श्रासंख्यातगुणे हैं। इनसे देवगितिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान श्रासंख्यातगुणे हैं। इनसे हास्य श्रोर रितके स्थितिबन्धाध्यवसान स्थान विशेष श्रिषक हैं। इनसे प्रशासनित्र श्रीषक हैं। इनसे प्रशासनित्र श्रीषक हैं। इनसे प्रशासनित्र श्रीषक हैं। इनसे सातावेदनीयके स्थितिकन्धाध्यवसानस्थान श्रीषक हैं। इनसे सातावेदनीयके स्थितिकन्धाध्यवसानस्थान श्रीषक हैं। इनसे स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष श्रीषक हैं। इनसे स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष श्रीषक हैं। इनसे स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान श्रिषक श्रीक हैं। इनसे स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान श्रीषक हैं। इनसे श्रीवक्रीवन्धाध्यवसानस्थान विशेष श्रीक हैं। इनसे श्रीवक्रीवन्धाध्यवसानस्थान विशेष श्रीक हैं। इनसे श्रीवक्रीवन्धाध्यवसानस्थान विशेष श्रीवन्धाध्यवसानस्थान विशेष श्रीवक्रीवन्धाध्यवसानस्थान विशेष श्रीवन्धाध्यवसानस्थान विशेष श्रीवन्धाध्यवसानस्थान विशेष श्रीवन्धाध्यवसानस्थान विशेष श्रीवन्धाध्यवसानस्थान विशेष श्रीवन श्रीवन्धाध्यवसानस्थान विशेष श्रीवन्धाध्यवसानस्थान विशेष श्रीवन श्रीवन श्रीवन्धाध्यवसानस्थान विशेष श्रीवन श्रीवन

विसे० । असाद० हिदिबं० असंखेज्जगु० । थीणगिद्धि०३ हिदिबं० विसे० । णिहा-पचला० हिदिबं० विसे० । पंचणाणा०-चदुदंसणा०-पंचंत० हिदिबंधज्झवसाणहाणाणि विसेसा० । अणंताणुवंधि०४ हिदिबंधज्झवसाण० असंखेजगु० । अप्पचक्खाणा०४ हिदिबं० विसे० । पचक्खाणा०४ हिदिबंधज्झवसाणहाणाणि विसेसा० । कोधसंज० हिदिबं० विसे० । माणसंज० हिदिबं० विसे० । मायासंज० हिदिबं० विसे० । लोभसंज० हिदिबंधज्झ० विसेसा० । मिन्छत्त० हिदिबंधज्झव० असंखेजगु० । एवं ओघं पंचिदिय-तस०२-पंचमण०-पंचवचि०-कायजोगि-पुरिस०-कोधादि०४-चवखुदं०-अचक्खुदं०-भवसि०-सण्णि-आहारग ति । णवरि पुरिस० कोधादिसु च मोहणीए विसेसो ओघेण साधेद०वं ।

६६१. णिरएसु सन्बत्थोवाणि दोण्णं आयुगाणं हिदिबंधज्झवसाणहाणाणि। पुरिस०-इस्स-रिद-जसगि०-उचा० हिदिबंधज्झवसाणहाणाणि असंखेज्जगु०। सादावे० हिदिबं० असंखेज्जगु०। इत्थिवे० हिदिबं० विसेसा०। मणुसगदि० हिदिबंधज्झव० विसे०। णवुंस० हिदिबंध० असंखेज्जगु०। अरिद-सोग-अजसगित्ति० हिदिबं० विसेसा०। विरिक्खगदिणीचागो० हिदिबंध० विसेसा०। भय-दुगुं०-ओरालिय-तेजा०-कम्मइय०

भय और जुगुप्साके स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं। इनसे असातावेदनीयक स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं। इनसे स्त्यानगृद्धि तीनके स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं। इनसे निद्रा और प्रचलाके स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं। इनसे पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण और पाँच ज्ञानतरायके स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं। इनसे ज्ञापत्याख्यानावरण चारके स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं। इनसे ज्ञापत्याख्यानावरण चारके स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं। इनसे प्रत्याख्यानावरण चारके स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं। इनसे कोध संख्यलनके स्थितवन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं। इनसे कोध संख्यलनके स्थितवन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं। इनसे मान संख्यलनके स्थितवन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं। इनसे माया संख्यलनके स्थितवन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं। इनसे मिथ्यात्यके स्थितवन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं। इसी प्रकार ओघके समान पञ्चिन्द्रयद्विक, असद्विक, पाँच मनोयोगी, पाँच वचनयोगी, काययोगी, पुरुषवेदी, कोधादि चार कथायवाले, चचुःदर्शनी, अच्चुःदर्शनी, भव्य, संज्ञी और आहारक जीवोंके जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि पुरुषवेदी और कोधादि चार कथायवाले जीवोंमें मोहनीयकी विशेषता श्रोषके अनुसार साध लेना चाहिये।

६६१. नारिकयोंमें दो आयुआंके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान सबसे स्तोक हैं। इनसे पुरुष-वेद, हास्य, रित, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं। इनसे सातावेदनीयके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं। इनसे स्त्रीवेदके स्थितिबन्धाध्यवसान-स्थान विशेष अधिक हैं। इनसे मनुष्यगतिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं। इनसे नपुंसकवेदके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं। इनसे अरित, शोक और अयशःकीर्तिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं। इनसे तिर्यक्रगित और नीचगोत्रके स्थितिबन्धाध्यव-सानस्थान विशेष अधिक हैं। इनसे भय, जुगुप्सा, औदारिकशरीर, तैजसशरीर और कार्मणशरीरके हिदिबंध० विसेसा०। असादा० हिदिबंध० असंखें ज्ञगुणाणि। थीणगिद्धि०३ हिदिबंध० विसेसाहियाणि। पंचणा०-छदंसणा०-पंचंत० हिदिबंधज्झवसाण० विसेसाहियाणि। अणं-ताणुबंधि०४ हिदिबंध० असंखें ज्जगु०। बारसक० हिदिबंध० विसे०। मिच्छत्त० हिदिबंध० असंखें ज्जगु०। एवं पढमाए पुढवीए। णवरि मणुसगदि० हिदिबंध० विसे०। तिरिक्खगदि० हिदिबंध० असंखें ज्जगु०। णीचागो० हिदिबंध० विसे०। णवंस० हिदिबंध० विसे०। अरदि-सोग-अजस० हिदिबंध० विसे०। उवरि णिरयोषं। एवं याव छहि ति।

६६२, सत्तमाए सञ्बत्थोवा० तिरिक्खायु० द्विदिवंध०। मणुसगदि-उचागो० द्विदिवंध० असंखेजनगु०। पुरिस०-इस्स-रदि-जसगित्ति०द्विदिवंध० असंखेजनगु०। सादावे० द्विदिवंध० असंखेजगु०। इत्थिवे० द्विदिवंध० .....

# जीवसमुदाहारो

१६३. .....असादस्स चदुट्टाणबंधगा जीवा । आमिणि० जहण्णियाए द्विदीए जीवेहिंतो तदो पलिदोवमस्स असंखें अदिभागं गंत्ण दुगुणविद्वता । एवं दुगुणविद्वता

स्थितवन्धाध्यवसानस्थान विशेष ऋधिक हैं। इनसे असातावेदनीयके स्थितवन्धाध्यवसानस्थान असांख्यातगुणे हैं। इनसे सत्यानगृद्धित्रिकके स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान विशेष ऋधिक हैं। इनसे पाँच झानावरण, छह दर्शनावरण ऋोर पाँच अन्तरायके स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान विशेष ऋधिक हैं। इनसे अन्तरायके स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान विशेष ऋधिक हैं। इनसे अधिक हैं। इनसे मिण्यात्वके स्थितवन्धाध्यवसानस्थान ऋसंख्यातगुणे हैं। इसी प्रकार पहली प्रध्वीमें जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि मनुष्यगतिके स्थितवन्धाध्यवसानस्थान विशेष ऋधिक हैं। इनसे तिर्यञ्चगतिके स्थितवन्धाध्यवसानस्थान विशेष ऋधिक हैं। इनसे तिर्यञ्चगतिके स्थितवन्धाध्यवसानस्थान विशेष ऋधिक हैं। इनसे तिर्यञ्चगतिके स्थितवन्धाध्यवसानस्थान ऋसं ख्यातगुणे हैं। इससे नीचगोत्रके स्थितवन्धाध्यवसानस्थान विशेष ऋधिक हैं। इनसे नपुंसकवेदके स्थितवन्धाध्यवसानस्थान विशेष ऋधिक हैं। इससे अरित, शोक और अयशाकीर्तिके स्थितवन्धाध्यवसानस्थान विशेष ऋधिक हैं। इससे ऋगो सामान्य नारिकयोंके समान भङ्ग है। इसी प्रकार अरुवी पृथिकी तक जानना चाहिये।

६६२. सानवीं पृथिवीमें तिर्यञ्चायुके स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान सबसे स्तोक हैं। इनसे मनुष्यगति स्रोर उच्चगोत्रके स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान स्रमंख्यातगुणे हैं। इनसे पुरुपवेद, हास्य, रित स्रोर यशःकीर्तिके स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान स्रमंख्यातगुणे हैं। इनसे सातावेदनीयके स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान स्रमंख्यातगुणे हैं। इनसे स्रीवेदके स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान

#### जीवसमुदाहार

१९३. ...... असाताके चतुःस्थानबन्धक जीत्र हैं । आभिनित्रोधज ज्ञानावरणकी जवन्यस्थितिके बन्धक जीत्रोंसे पत्योपमके असंख्यातवेंभागप्रमाण स्थान जाकर दृनी वृद्धिको

१ क्रमाङ्क ११२ ताडपणं श्रुटितम्।

दुगुणबिद्धित याव सागरोवमसदपुधत्तं । तेण परं पिलदोवमस्स असंखेर्ज्जिदिभागं गंतूण दुगुणहीणा । एवं दुगुणहीणा दुगुणहीणा याव सादस्स असादस्स य उकस्सिया द्विदि ति । उवरि मूलपगदिभंगो ।

> एवं जीवसमुदाहारे ति समत्तमणियोगद्दारं। एवं उत्तरपगदिद्विदिवंघो समत्तो। एवं द्विदिवंघो समत्तो।

पाप्त हुये हैं। इसीप्रकार सौ सागर प्रथक्त्वतक दूनी-दूनी वृद्धिको प्राप्त हुये हैं। उससे आगे पत्यके असंख्यातवेंभाग प्रमाण जाकर दुने दीन हैं। इसप्रकार सातावेदनीय और आसातावेदनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके प्राप्त होने तक दूने-दुने दीन होते गये हैं। इससे आगे भङ्ग मूलप्रकृतिबन्धके समान है।

इस प्रकार जीवसमुदाहार श्रनुयोगद्वार समाप्त हुन्ना । इस प्रकार उत्तरप्रकृतिस्थितिबन्ध समाप्त हुन्ना । इस प्रकार स्थितिबन्ध समाप्त हुन्ना ।

पारतीय ज्ञानरीड

ल्याचना : लन् 1944

र्वहेल

ज्ञान की विजुप्त, अनुपत्रकथ और अप्रकाशित सामग्री का अनुसन्धान और प्रकाशन तथा लोकहितकारी मीरिक साहित्य का निर्माण

संस्थापक

स्त. सहू ६ क्रिप्रसद दैय स्त. शीवती स्वा दैव

अञ्चल

शीनती इन्ह्र जैन

कार्यातय : 18, इन्स्टीट्यूशनल एरिया, लोदी रोड, नदी दिल्ली-110 003